Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

080167

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

080167
~~08017~~

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

080167

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

रंगबिरंगे अंगरेजी फूल ३
—कीर्तिमोहन

उष्मा प्रतिरोधक खनिज ८
—आदित्यगोपाल झिंगरन

बोगदों की निर्माण क्रिया १२
—तेजनारायण सक्सेना

डायटम १९
—महेश्वरसिंह सूद

अदृश्य द्रव में तैरती ध्वनि तरंगें २४

ब्राह्मी २९
—धर्मपाल वर्मा

जीवन ३७
—सर पिटर मेडावार

दीमक ३९
—वीरेन्द्रनाथसिंह

सर जेम्स यंग सिम्पसन ४५
—राजेन्द्रकुमार

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां ३५

विचित्र संसार ४३

विज्ञान क्लब ४९

इनाम लो ५१

तुम्हारी कलम से ५३

करो और देखो ५७

अपनी बा

पिछले पचास वर्षों में विज्ञान का अबाध से विकास हुआ है। हम पर विज्ञान अब छाग है। यह हमें जानना है कि विज्ञान द्वारा हमारे ज्ञान का परिष्कार और नियन्त्रण होता है।

मानव-इतिहास और उपलब्धियां विका की प्रक्रिया का परिणाम हैं। अन्यतम यथा का साक्षात्कार कर लेने पर ही हम अपने स्थिति और उन्नत भविष्य पर छा रही महा विनाश की आशंका से मुक्ति पा सकेंगे।

वर्तमान सभ्यता के विकास की दिश और सम्भावनाओं से यह आभास मिलता है कि निर्विवाद रूप से विज्ञान हर क्षेत्र में क्रिया शीलभूमिका निभा रहा है। सामान्य जन आज विज्ञान से चाहकर भी पृथक् नही रह सकते किन्तु खेद है कि विज्ञान का जितना विकास हो रहा है उतना वैज्ञानिक शिक्षा का नहीं।

आज वैज्ञानिकों पर जो आरोप ल जाते हैं उनमें प्रमुख यह है कि वे अपने ए महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व को नहीं समझ रहे हैं। सामान्य जन के समक्ष अपने व्यक्त करने के लिए उन्हें प्रयास कर चाहिये। यह आरोप निस्सन्देह विचारणी है, और स्वीकार करना पड़ेगा कि वैज्ञानि यद्यपि सामान्य जन के लिए ही कार्यरत परन्तु अपने को उनके समक्ष अपने कार्यों परिप्रेक्ष्य में रखने में असमर्थ हैं।

विज्ञान-लोक सदा से यथाशक्ति साम जन तक विज्ञान को व्यवस्थित रू पहुंचाता रहा है। हमारे समक्ष एक कठिन है। देश में वैज्ञानिक शिक्षा को प्रोत्सा करने के लिए हम प्रयत्नशील हैं।

वर्ष ६ अंक १२

मूल्य
एक प्रति : ७५ पैसे
वार्षिक : ९ रुपये

सम्पादक : शंकर मेहरा
प्रकाशक : मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंगबिरंगे अंग्रेजी फूल

कीर्तिमोहन

१९३९ तक यूरोप के विभिन्न देशों में फूल उद्योग प्रगति करने लगा था। १९४० से पहले ही इंग्लैण्ड में करीब ६,००० एकड़ भूमि में फूल उगाये जाने लगे थे। इनमें से अधिकांश खूबसूरत फूलों के गमले लोग घरों में सजावट करने के लिए खरीदते थे। तब से ही वहां के उद्यान विशेषज्ञ फूलों के रंग तथा आकार पर तरह-तरह के प्रयोग करते रहे हैं। उन्होंने कई फूलों की नस्लें भी सुधारी हैं; इसके अतिरिक्त कई देशों के फूलों को भी अपने देश में उगाया है। कई भारतीय फूलों को उनकी किस्म बदलकर अपने यहां उगाने में वे सफल हुए हैं। इंग्लैण्ड के चेसहण्ट, हैम्टन और वर्थिंग क्षेत्रों में फूलों पर भांति-भांति के प्रयोग हुए। उन्हें तरह-तरह से व्यावसायिक स्तर पर उगाया गया। १९४० तक इंग्लैण्ड को केवल क्राइसिन्थिमम से ही २ लाख ५० हजार पौण्ड वार्षिक की आय होने लगी थी। पूरे फूल उद्योग से इंग्लैण्ड को २० लाख पौण्ड वार्षिक की आय होती थी।

१९३९ में द्वितीय महायुद्ध के कारण इंग्लैण्ड को विवशत: फूल उगाना कम करना पड़ा। अधिक अन्न उपजाने की ओर ध्यान देना जरूरी हो गया था। १९४३ में इंग्लैण्ड में १९३९ की अपेक्षा केवल १० प्रतिशत ही फूल उगाया जाता था।

लेकिन इंग्लैंड में फूलों का महत्त्व कम नहीं हुआ। आज भी वहां के उद्यान विशेषज्ञ भांति-भांति के फूल उगाने में लगे हुए हैं। निम्नलिखित पंक्तियों इंग्लैण्ड के कुछ प्रसिद्ध फूलों से परिचय प्राप्त करेंगे।

खूबसूरत लिली

लिली बड़ी मोहक होती है। इस फूल की विभिन्न जातियां हैं जो कई रंगों में पायी जाती है। एक प्रसिद्ध जाति की लिली लिलियम लाइमलाइट (lilium limelight) कहलाती है। इस जाति का विकास अमरीका में हुआ था। इसके फूल का आकार बिगुल की तरह का होता है। आगे का मुंह काफी खुला हुआ होता है। इसका रंग मक्खन-जैसा पीला होता है। सुनहरे भूरे रंग के पुंकेसर (stamens) बाहर निकले रहते हैं।

लिलियम लाइमलाइट की अनेक उप-जातियां भी हैं। अक्सर लोग इसे घर के बाहर, बगीचे में उगाते हैं। इसके फूल मई से अक्तूबर तक खिलते हैं। पूरे इंग्लैंड में हर तरह की लिली हर स्थान पर नहीं पायी जाती। अच्छी मिट्टी और छाया-प्रकाश में इसे उगाया जाता है। कई जातियां हलकी छाया में ही उगती हैं। कुछ जातियों में तने के निचले हिस्से को सूर्य की रोशनी से बचाना जरूरी होता है।

लिली को गुटिका से उगाया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे उगाने का सबसे अच्छा मौसम शरद् है। हालांकि ग्रीष्म तक भी ठण्डे स्थानों में यह उगती पायी जाती है। यह जरूरी है कि गुटिका लगाकर उसे बालू से ढंक दिया जाय। हां, ठण्ड के दिनों में अधिक आर्द्रता से सम्भव है गुटिका न लगे।

अब लोग लिली को गमलों में भी लगाने लगे हैं। यह उद्यान संस्कृति का एक प्रकार है, और उद्यान विशेषज्ञों का मत है कि गमले में लगाने वाले पौधों में लिली सबसे उपयुक्त है।

जिन्नियास

जिन्नियास के चमकीले फूलों का सम्बन्ध डेजी परिवार से है। मैक्सिको के एक वर्ग के पौधे जिन्नियास कहलाते हैं। इंग्लैण्ड में मैक्सिको के इस पौधे की सभी जातियां नहीं, केवल एक जाति उगती है। यह जाति जिन्निया इलिगैन्स कहलाती है। लेकिन इस जाति के फूलों को ही अंगरेजी माली विभिन्न रंगों का बना देते हैं। इस तरह इंग्लैण्ड में जिन्नियास के विभिन्न रंग के फूल उगते हैं।

इंग्लैण्ड में एक और दो फूल वाले जिन्नयास उगाये जाते हैं। दो फूल वाले जिन्नियास बहुत खूबसूरत होते हैं। ये बड़े-बड़े और चमकीले रंगों वाले होते हैं; नारंगी, लाल, गुलाबी आदि रंगों में पाये जाते हैं।

जिन्नियास बहुत आसानी से उग जाते हैं। मार्च के पूर्वार्द्ध में बीज खाद में बोये जाते हैं और अंकुर फूट निकलते हैं। जब अंकुर डेढ़ इंच के हो जाते हैं, तो उन्हें गमलों में लगाया जाता है। यह ध्यान रखना बहुत जरूरी है कि मिट्टी अधिक सूख न जाय।

जब छोटे-छोटे पौधे जड़ पकड़ लेते हैं, तो उन्हें मई के अन्त तक बाहर के बगीचों में लगा दिया जाता है। अक्सर इसके बीज मई में भी बाहर के बागों में बोये जाते हैं।

स्वीट पी

आज से लगभग १३० वर्ष पूर्व एक साधु सिसली के देहाती इलाके में निरुद्देश्य-सा घूम रहा था। अचानक उसकी दृष्टि एक जंगली फूल के पौधे पर गयी। इस पौधे के फूल उस साधु को बहुत पसन्द आये और वह वहां ठहर गया। उसने बड़ी सावधानी से उस पौधे को उखाड़ लिया और जब मठ पर लौटा, तो उसने उसे जमीन में फिर लगा दिया।

धीरे-धीरे वह पौधा विकसित हुआ। उसमें ढेर-सारे खूबसूरत फूल खिल उठे। यह कहा जाता है कि वे छोटे-छोटे खूबसूरत फूल स्वीट पी के थे। आज इंग्लैण्ड में स्वीट पी बहुत लोकप्रिय है। अब उद्यान विशेषज्ञ इसे कई किस्मों में उगाने लगे हैं। इसे बोना बहुत आसान है। बागवानी से अनभिज्ञ व्यक्ति भी इस फूल को लगा सकता है। इसके बीज किसी भी तरह बोये जायें, काफी फूल खिलते हैं। और यदि पौधे को समय-समय पर ऊपर से थोड़ा काटते रहा जाय, तो और भी ज्यादा फूल खिलते हैं। अगर गरमियों में पौधे पर के सभी फूल उतार लिये जायें, तो एक-दो दिन में नये फूल खिल आते हैं।

स्वीट पी के फूल कई रंगों के होते हैं। यह पौधा बगीचे में या गमले में उगाया जा सकता है।

डेहलिया

ग्रीष्म बीतते-बीतते बागों में डेहलिया के बड़े-बड़े फूल खिल जाते हैं—कई-कई रंगों के डेहलिया के फूल !

डेहलिया के अनेक वर्ग हैं और आकार तथा रंग की दृष्टि से वे भिन्न-भिन्न होते हैं। कैक्टस डेहलिया दूसरे ही तरह का होता है। सबसे अधिक खूबसूरत और सजावट में प्रयुक्त होने वाला कैक्टस डेहलिया ही है। डेहलिया की खूबसूरती मुख्य रूप से इसके रंग में निहित है। माली जाड़े में इस पौधे की बड़ी देखरेख करते हैं। यदि देखरेख न की जाय, तो बाग में एक भी पौधा दिखायी नहीं देगा। जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डेजी परिवार का चमकीला फूल जिन्नियास

शरद् में फूल झड़ जाते हैं, तो कन्द जिन पर फूल लगे रहते हैं सम्हालकर रख लिये जाते हैं। फिर मई में ये ही कन्द लगाये जाते हैं, और डेहलिया के पौधे उगते हैं। कभी-कभी जाड़ों में भी डेहलिया के कन्द लगाये जाते हैं। पौधे इस मौसम में भी उग आते हैं। इनके लिए धूप और अच्छी मिट्टी जरूरी है।

इरिस

इरिस विश्व के प्राचीनतम फूलों में से एक है। इसका नामकरण कई हजार वर्ष पूर्व इन्द्रधनुष की यूनानी देवी के नाम पर हुआ। यह फूल खूब फैली पताकाओं की तरह का होता है। मई में यह फूलता है। यह कई रंगों का होता है। इसके रंग बहुत मोहक होते हैं। कुछ इरिस गुटिका से विकसित होती हैं, और कुछ तने को रोपने से। गुटिका से उत्पन्न इरिस में सर्वाधिक लुभावनी डच इरिस होती है। हालैण्ड के उद्यान विशेषज्ञों ने इरिस की कई किस्मों का विकास किया है। उनमें से एक लुभावनी किस्म का नाम इम्परेटर है। यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी कई रंगों में पायी जाती है। यह शरद् में बगीचों में देखी जा सकती है।

जून के आरम्भ में बागों में इसकी गुटिका लगायी जाती है। इसके लिए धूप बहुत जरूरी है; मिट्टी कैसी भी हो सकती है। इसकी गुटिका को चार इंच की गहराई तक करीब छह इंच के अन्तर पर गाड़ना जरूरी है। इसके बाद यह पौधा कई वर्षों तक फूलता रहता है।

खूबसूरती में डच इरिस से इंग्लिश इरिस खूब बढ़ी-चढ़ी है। यह जून के आरम्भ में खिलती है। स्पेनिश इरिस काफी खुशबूदार होती है।

स्नैपड्रैगन

इस अजीब से लगने वाले फूल के दो नाम हैं—ऐन्तिर्रिहिनम (*Antirrhinum*) और स्नैपड्रैगन (Snapdragon)। ऐन्तिर्रिहिनम दो ग्रीक शब्दों से मिलकर बना है जिनका अर्थ होता है 'नकाब' और 'नाप'। जिन लोगों ने इसका यह नाम रखा, वह इस कारण

विश्व का प्राचीनतम फूल इरिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि यह बहुत कुछ नकाब की तरह का होता है।

इसका स्नैपड्रेगन नाम होने का भी अर्थ है। यदि इसके ट्यूब को दबाया जाता है, तो इसका मुंह खुलता है और फिर बन्द हो जाता है। सम्भवतः लोगों ने यह प्रतीकात्मक सन्दर्भ लिया होगा कि पौराणिक कथाओं के ड्रैगन का मुंह भी इसी तरह खुलता था और बन्द होता था। वास्तव में इसका स्नैपड्रैगन नाम ही अधिक लोकप्रिय है।

स्नैपड्रैगन इंग्लैण्ड में भूमध्यसागरीय क्षेत्रों से आया। यह विश्वास किया जाता है कि किसी समय भूमध्यसागर के क्षेत्रों में स्नैपड्रैगन बहुतायत से उगते थे और वहां उनका जंगल था। मधुमक्खियां स्नैपड्रैगन के फूल की ओर आकर्षित होती हैं। वे फूल के मुंह को खोलकर उसका शहद चूस लेती हैं। फूल के ट्यूब के तल पर शहद इकट्ठी होती है। मधुमक्खी ट्यूब में उतरकर शहद चूसती है। जब वह निकलती है, तो ट्यूब अपने-आप बन्द हो जाता है।

यह बीज बोने के एक वर्ष बाद उगता है। फूल जुलाई से अक्तूबर तक खिलते हैं। कभी-कभी नवम्बर तक भी फूल देखे जा सकते हैं। यह सब जलवायु के सामान्य रहने पर निर्भर करता है। पौधा यदि बड़ा हो जाता है, तो कई वर्षों तक उस पर फूल खिलते रहते हैं। ग्रीष्म में हर ओर स्नैपड्रैगन के फूल दिखायी पड़ते हैं। अक्सर बीज जुलाई के अन्त में या अगस्त के प्रारम्भ में बोया जाता है। जब पौधा दो इंच का हो जाता है, तो इसे गमले में लगा देते हैं। यह ४५° फै. से कम तापक्रम में नहीं रखा जाता है। फरवरी में इसे बड़े गमले में लगाया जाता है। गमले में पानी तब दिया जाता है जब मिट्टी सूखने लगती है। ●

स्नैपड्रैगन इंग्लैण्ड में भूमध्यसागरीय क्षेत्रों से आया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

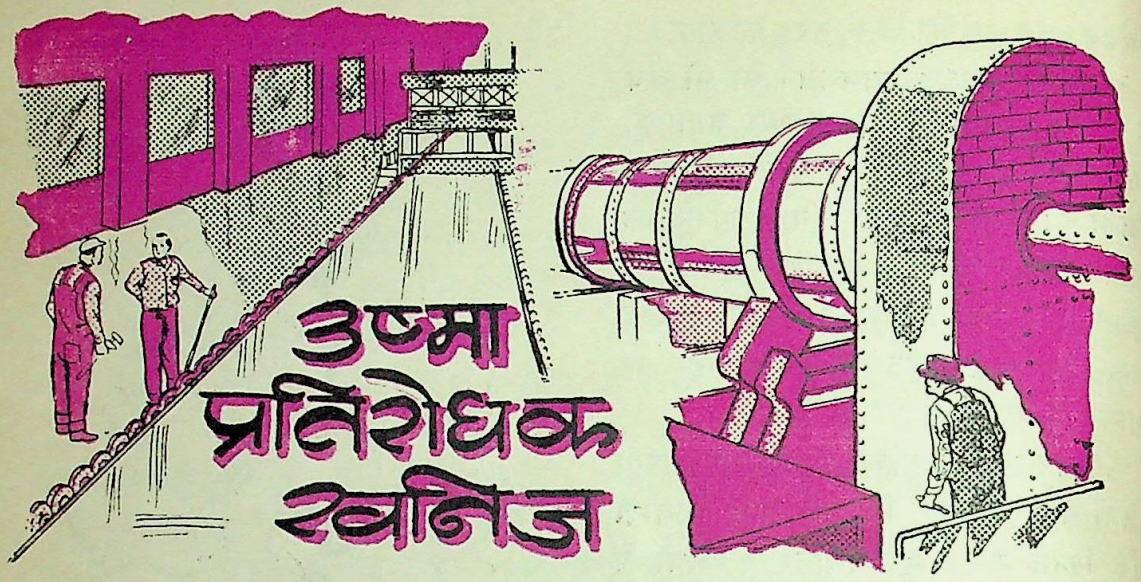

उष्मा प्रतिरोधक खनिज

आदित्यगोपाल झिंगरन, एम. एस-सी.

विज्ञान की प्रगति में उष्मा प्रतिरोधक खनिज बहुत ही सहायक सिद्ध हुए हैं। ये वे पदार्थ हैं जो साधारणतया उष्मा द्वारा प्रभावित नहीं होते और बहुत अधिक ताप तक उष्मा को सहन करने की क्षमता रखते हैं। इसके अतिरिक्त प्रबल रासायनिक प्रतिकारकों द्वारा भी प्रभावित नहीं होते, अतः इनका उपयोग विविध क्षेत्रों में होता है। निम्नलिखित पंक्तियों में ऐसे ही उष्मा प्रतिरोधक खनिजों के सम्बन्ध में कहा गया है।

मैग्नेसाइट (Magnesite)

यह मैग्नीशियम का कार्बोनेट है तथा मैग्नीशियम उत्पादन का प्रमुख स्रोत है। भारत में यह उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा जिले में तथा बम्बई के देवमोरी नामक स्थान एवं डूंगरपुर के क्षेत्रों में प्राप्त होता है। दक्षिण भारत में भी कई स्थानों पर मैग्नेसाइट मिलता है। रूस की यूराल पर्वत श्रृंखलाओं में यह बहुतायत से प्राप्त होता है। खनिज मैग्नेसाइट को १,०००° से. से १,२००° से. तक गरम करने पर इसमें विद्यमान कार्बन डाइ-आक्साइड का अधिकांश भाग निकल जाता है और मैग्नीशिया प्राप्त होता है। इसके दो मुख्य गुण होते हैं—प्रथम, यह आर्द्रता का शोषण (absorption) कर सकता है, और द्वितीय, यह वायु में से पुनः कार्बन डाइ-आक्साइड ले सकता है। इसका उपयोग सोरेल सीमेण्ट (sorel cement) के निर्माण में किया जाता है। अस्पताल तथा फैक्टरियों के फर्श तथा सार्वजनिक भवनों आदि के निर्माण में इस प्रकार के सीमेण्ट का उपयोग होता है। यह सीमेण्ट कठोरता एवं दृढ़ता प्रदान करने के अतिरिक्त अग्नि से भी रक्षा करता है। इसका उपयोग प्लास्टरों के निर्माण, दीवारों के लिए पट (boards), प्रथक्कारी पदार्थों (insulating materials) तथा रबर के विधावन (process) आदि में किया जाता है। अपघर्षी पदार्थों (abrasives) के रूप में भी इसका उपयोग किया जाता है। कास्टिक मैग्नीशिया को लगभग १६००° से. तक गरम करने पर सिण्टर मैग्नीशिया (sintered magnesia) प्राप्त होता है। इसका उपयोग भट्ठियों के लिए अग्नि प्रतिरोधी ईंटों, तांबे और सीसे के प्रद्रावण (smelting) और शोधन के लिए भट्ठियों के निर्माण तथा रासायनिक भट्ठियों में किया जाता है। विद्युत् भट्ठी में २५००° से.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक गरम करने पर मैग्नीशिया अत्यन्त स्थायी पदार्थ में परिवर्तित हो जाता है। यह स्थायी पदार्थ विशेष रूप से उष्मा प्रतिरोधक पदार्थ है और उच्च ताप तथा रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा प्रभावित नहीं होता। इन सबके अतिरिक्त मैग्नेसाइट से प्राप्त मैग्नीशियम का प्रमुख स्थान है। मिश्रधातुएं (alloys) बनाने में मैग्नीशियम का बहुत उपयोग किया जाता है। मैग्नीशियम धातु का विशेष उपयोग आतिशबाजी (fire works) तथा आगलगाऊ बम (incendiary bomb) में भी किया जाता है।

डोलोमाइट (Dolomite)

यह कैल्शियम तथा मैग्नीशियम का मिश्रित कार्बोनेट है। मैग्नेसाइट की अपेक्षा यह कहीं अधिक मात्रा में पाया जाता है। हमारे देश में सर्वोत्तम खानें उड़ीसा में हैं। मध्य प्रदेश में जबलपुर, राजस्थान में मेवाड़ तथा दक्षिण भारत के कई स्थानों पर डोलोमाइट पाया जाता है। कहीं-कहीं डोलोमाइट-मय संगमरमर की पेटिका के रूप में भी पाया जाता है। अग्नि प्रतिरोधक गुणों में यद्यपि यह मैग्नेसाइट का सामना नहीं कर सकता, परन्तु सस्ता होने के कारण इसका महत्त्व बहुत बढ़ गया है, क्योंकि भारत में इसके विस्तृत निक्षेप (deposits) विद्यमान हैं। ऊंचे ताप पर दग्ध करने पर पाये जाने वाले पदार्थ उष्मासह ईंटों के लिए जो समक्षारीय खुली भट्ठी में उपयोगी होती हैं, काम में आते हैं। उष्मा प्रतिरोधक पदार्थों के निर्माण में इसका उपयोग निरन्तर वृद्धि पर है।

कायनाइट (Kayanite)

उष्मा प्रतिरोधक पदार्थों में इस खनिज का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। संसार में यह अमरीका, केनिया तथा भारत में ही पाया जाता है। इसमें भारत के निक्षेप बहुत प्रसिद्ध हैं। कुछ ही वर्षों से इसका उपयोग अग्नि प्रतिरोधक सामग्रियों के निर्माण में किया जाने लगा है।

कायनाइट, सिलीमनाइट (sillimanite) परिवार का सदस्य है और इसकी रचना भी उसी प्रकार की है। इसमें ६३·२ प्रतिशत एल्यूमिना तथा ३६·८ प्रतिशत सिल्का होती है—($Al_2 SiO_5$)। जब यह १३५०° से. तक गरम किया जाता है, तो खनिज एल्यूमीनियम सिलीकेट में परिवर्तित हो जाता है जिसे म्यूलाइट (mullite) कहते हैं। इसी गुण के कारण इस खनिज का उपयोग कांच तथा मृत्तिका उद्योग (glass and ceramics) में अग्नि प्रतिरोधी पदार्थ के रूप में होता है। विशेष प्रकार के प्रथक्कारी पदार्थों के निर्माण में भी इसका उपयोग किया जाता है। अग्नि प्रतिरोधी सीमेण्ट, विशेष प्रकार के वैद्युतिक पोर्सलीन, रासायनिक पोर्सलीन एनेमल (enamel) तथा प्रयोगशाला में उपयोगी पोर्सलीन बनाने के भी काम में आता है। भारतीय कायनाइट की विशेषता यह है कि प्रसाधन (dressing) के अतिरिक्त इसे अन्य किसी शोधन विधि द्वारा उपयोगी बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, क्योंकि यह स्वयं काफी अंश तक विशुद्ध खनिज होता है। अतः विशुद्ध रूप में सरलता से यह उपयोग में लाया जा सकता है।

सिलीमनाइट (Sillimanite)

यह भी एक एल्यूमिनो सिल्केट कायनाइट की तरह है। बहुधा इसके साथ जरकान, कोरण्डम (corundum), एण्डालूसाइट (andalusite) आदि खनिज प्राप्त होते हैं। यह खनिज कत्थई भूरे अथवा हरे रंग का होता है तथा १५४५° से. तक स्थायी रहता है। इसके पश्चात् कायनाइट की भांति म्यूलाइट में परिवर्तित हो जाता है। यह संसार के अनेक स्थानों पर पाया जाता है, पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत में इस खनिज के प्रसिद्ध निक्षेप आसाम की खासी पहाड़ियों में, रींवा, पिपरा (मध्य प्रदेश) नामक स्थान पर पाये जाते हैं। सिलीमनाइट की मांग विदेशों में बहुत होती है, और अपने देश में बंगाल के कुछ अग्नि-प्रतिरोधी उत्पादन निर्माता इस खनिज को उपयोग में लाते हैं। मुख्य रूप से इसका उपयोग कांच की भट्ठियों के लिए उपयुक्त आकार के ब्लाक (block) बनाने में किया जाता है।

ग्रेफाइट (Graphite)

यह पदार्थ भी हीरे की भांति विशुद्ध कार्बन का एक रूप है। साधारण भाषा में जिसे लेड पेंसिल कहते हैं, उसमें लेड बिलकुल नहीं होता, ग्रेफाइट होता है जिसमें बराबर मात्रा में विशेष उत्तम मिट्टी (special fine clay) होती है, और जो १५००° से. से २०००° से. तक तपाने के बाद प्राप्त होता है। ग्रेफाइट के उत्पादन का कुछ अंश ही पेंसिल बनाने के काम में आता है, अन्यथा अधिकांश ढलाईघर (foundries) तथा ग्रेफाइट मूषा (graphite crucibles) के जो धातुकर्म (metallurgy) में उपयोगी हैं, काम में आता है।

ग्रेफाइट भारत में आन्ध्र प्रदेश में गोदावरी, विशाखापत्तनम आदि स्थानों में पाया जाता है। भारतीय उत्पादन अल्प है, अतः अन्य देशों से इसका निर्यात किया जाता है। आधुनिक परमाणु युग में इसका महत्त्व बहुत बढ़ गया है। यह परमाण्विक प्रतिक्रियावाहकों (atomic reactors) में माडरेटर (moderator) के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। चूर्णित ग्रेफाइट (puluerized graphite) का उपयोग चिकनाहट (lubricant) के लिए किया जाता है। इस कार्य के हेतु ग्रेफाइट का अकेला अथवा ग्रीज तेल या जल के साथ मिलाकर भी उपयोग होता है। ग्रेफाइट का चिकनाहट के लिए उपयोग वस्त्र मशीनों (textile machines), पियानो (piano) तथा इसी प्रकार के यन्त्रों में किया जाता है, जहां तेल अथवा ग्रीज अनुपयुक्त होता है। पेण्ट तथा रंजक व्यवसाय में भी ग्रेफाइट का उपयोग काफी मात्रा में किया जाता है। इलेक्ट्रोड, शुष्क बैटरी तथा चमकदार पाउडर (glazing powder) आदि अनेक रूपों में ग्रेफाइट का उपयोग होता है।

सिलिका (Silica)

सिलिका का उपयोग चीनी मिट्टी के बरतन तथा मृत्तिका व्यवसाय में होता है। अग्नि प्रतिरोधक पदार्थ के रूप में इसका अपना महत्त्व है। यह विशेष रूप से जबलपुर तथा सिंहभूमि में पायी जाती है। इस प्रकार की सिलिकामय बालू धातुकर्म की भट्ठियों के लिए उपयोग में आती है। अन्य प्रकार की भट्ठियों के निर्माण में सिलिकामय प्राकृतिक पदार्थों, जैसे स्फटिकों तथा स्फटिक ग्रेनुलाइटों को भी उपयोग में लाया जाता है। सिलिका के निर्माण द्वारा निर्मित ईंटों का उपयोग हर्थ भट्ठियों (hearth furnaces) में किया जाता है जिसमें ताप १६५०° से. तक पहुंच सकता है। अन्य क्षेत्रों में, जैसे कांच के कारखानों, विद्युत् भट्ठियों, गैस निर्माण संयन्त्रों, कोक कन्दुओं (coke ovens) आदि में इसका उपयोग किया जाता है।

जरकोनियम (Zirconium)

वर्तमान समय में इस धातु का महत्त्व बहुत बढ़ गया है। मुख्य जरकोनियम खनिज जिसका इस धातु के अयस्क (ore) के रूप में व्यवहार किया जाता है, जरकोनिया (zirconia) कहलाता है, जो उष्मसह गुणों के कारण बहुतायत से मूषा निर्माण में, अपवारित भ्राष्ट्र, अग्नि प्रतिरोधी ईंटों तथा उन अनेक पदार्थों के लिए उपयोग में आता है, जिन्हें बहुत उच्चताप सहन करना पड़ता है। जरकोनियम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से निर्मित मूषा २३००° से. तक का ताप सहन कर सकते हैं, और प्लेटिनम धातु को १७५५° से. पर पिघलाने के लिए प्रायः उपयोग में आते हैं। जरकोनियम ने नाभविक इन्जीनियरी अभियन्त्रीकरण (nuclear engineering) में अपने उच्च द्रवणांक, संक्षारण प्रतिरोध (corrosin resisant) आदि विशेष गुणों के कारण अपना अलग स्थान बना लिया है। जरकोनियम का उपयोग रासायनिक रोधी भट्ठियों की ईंटों तथा उच्चतापीय सीमेण्ट (high temperature cement) के निर्माण में होता है। इसके अतिरिक्त इसका उपयोग एनेमल सायाव (enamel wares), रोगन (paints), मोटरगाड़ियों के लिए एनेमल (automobile enamel), ताप व विद्युत् के लिए प्रथक्कारी के रूप में तथा अपघर्षी आदि अनेक प्रकार के पदार्थों में होता है। जरकोनियम धातु का उपयोग विद्युतीय नलियों (electric tubes), कौंध प्रकाश बल्ब (flash light bulbs), वैद्युतिक संघनकों (electric condensors), एक्स-किरण फिल्टरों (x-ray filters), बल्ब के फिलामेण्टों (filaments) तथा अनेक मिश्रधातुओं, जैसे कूपेराइट (cooperite), फैरोजरकोनियम आदि के निर्माण कार्य में होता है।

खनिज जरकान जो जरकोनियम सिल्केट है, एक बहुमूल्य पत्थर (gem) के रूप में उपयोग किया जाता है। यह रंगहीन होता है, परन्तु प्रायः भूरे अथवा लाल-नारंगी रंग का भी होता है। उष्मा के प्रभाव से इसका रंग नीला किया जा सकता है। भारत में जरकान खनिज के अनेक भण्डार हैं जो इल्मेनाइट तथा मोनाजाइट (monazite) निक्षेपों के आवश्यक अंग हैं। विहार, त्रावणकोर तथा कोयम्बटूर में बहुमूल्य जरकान चूना पत्थरों (lime stones) के साथ प्राप्त होता है।

जरकोनियम, अत्यन्त संक्षारण प्रतिरोधक होने के कारण यह आशा की जाती है कि, भविष्य में शल्य-चिकित्सा के यन्त्रों (surgical instruments) में यह बहुत उपयोगी सिद्ध होगा, हालांकि अभी जरकोनियम एक बहुमूल्य धातु है।

अग्निसह मिट्टी (Fire Clay)

इस प्रकार की मिट्टी को अग्नि मृत्तिकाओं के नाम से भी जाना जाता है। इन्हें दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—सिलिकामय अग्नि मृत्तिकाएं तथा एल्यूमीनियम अग्नि मृत्तिकाएं। दूसरे वर्ग की भट्ठियां अधिक अग्नि प्रतिरोधक होती हैं। ये भी अन्य भट्ठियों की भांति सुघट्य होती हैं परन्तु चीनी मिट्टी की अपेक्षा अधिक कठोर होती हैं। आधुनिक उद्योगों के लिए अग्नि मृत्तिकाएं आवश्यक हैं। जहां उच्च ताप उत्पन्न होते हैं, वहां इन अग्निसह भट्ठियों से बने कुछ न कुछ उत्पादन अवश्य उपयोग में लाये जाते हैं। हमारे देश में विहार तथा पश्चिमी बंगाल के निक्षेप सर्वोत्तम हैं, पर देश के अन्य सभी राज्यों में अग्नि मृत्तिकाएं पायी जाती हैं। इनसे बनी अग्नि प्रतिरोधी ईंटें बहुत उपयोगी सिद्ध हुई हैं। इनकी प्रतिरोधी शक्ति १८५०° से. तक रहती है। ●

अनोखे किस्म का भवन निर्माण

पश्चिम जरमनी के भवन विशेषज्ञों ने भवन निर्माण की एक नयी विधि का आविष्कार किया है। इस विधि के अन्तर्गत इमारतें ऊपरी सिरे से नीचे की ओर बनायी जाती हैं। हेम्बर्ग के १३ मंजिले फिनलैण्ड हाउस के निर्माण में यही विधि अपनायी जा रही है। जब इस इमारत में ऊपर का भाग लग जायेगा तब नीचे के भागों को जोड़ने का प्रबन्ध किया जायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोगदों की निर्माण क्रिया

तेजनारायण सक्सेना

किसी पर्वत, पहाड़ी या जमीन के नीचे बनाये गये समतल पथ को बोगदा (सुरंग) कहते हैं। किसी स्थान पर बोगदे की आवश्यकता तीन कारणों से महसूस की जा सकती है—

(१) सड़क के किसी भाग पर जहां घातक रूप से हिमपात होता है और यात्रियों का जानमाल खतरे में रहने के अतिरिक्त सड़क साल भर एक-सी नहीं खुली रहती है, वहां बोगदा वरदान सिद्ध होता है। कश्मीर के बनिहाल क्षेत्र में बना जवाहर बोगदा जिसका नामकरण श्री जवाहरलाल नेहरू के नाम पर हुआ था, इसी श्रेणी में आता है।

(२) किसी नदी को पार करने के लिए जब पुल बांधना व्यावहारिक न हो तब उस नदी के नीचे बोगदा बनाया जाता है। इसका एक सुन्दर उदाहरण है संयुक्त राज्य अमरीका स्थित हडसन नदी के नीचे बना हालैण्ड बोगदा जो न्यूयार्क को न्यूजर्सी से जोड़ता है।

(३) जहां पहाड़ों को काटने से उस पर की मूल्यवान सम्पत्ति को हानि पहुंचने की या जहां सड़क बनाने में अपव्यय की सम्भावना अधिक रहती है, वहां बोगदा बनाया जाता है। यह पाया गया है कि साठ फुट से अधिक गहरी कटाई की अपेक्षा बोगदे का निर्माण सस्ता पड़ता है।

बोगदे की लम्बाई तथा चौड़ाई यानी उसका आकार, उसके भीतर से गुजरने वाले वाहनों के आकार से इस प्रकार निर्धारित किया जाता है कि मजदूरों को कार्य करने के लिए पर्याप्त स्थान मिलने के अतिरिक्त भीतरी वायु के निष्कासन, सिगनलों के तार तथा जल नलिकाओं के यथास्थान लगाये जाने के लिए स्थान बच रहे। भूमि पर पड़ी जलराशि को बाहर निकालने के लिए उपयुक्त निकासों (drains) का भी प्रबन्ध रहता है। यातायात के लिए बनाये गये बोगदे ऊपर से साधारणतः महराब-जैसे अथवा अर्द्ध गोलाकार होते हैं। जल निकास के लिए बनी सुरंगें गोलाकार रखी जाती हैं।

बोगदे को मुख्यतः निम्न अंगों में बांटा जा सकता है—

(१) आदि तथा अन्त में बने दो प्रवेश द्वार (portals)।

(२) शाफ्ट (shaft) या बीच-बीच में बने कुएं, जिनके मार्ग द्वारा खुदाई की जा सकती है या मिट्टी बाहर फेंकी जा सकती है। शाफ्ट साधारणतः ऊंचाइयों पर बनाये जाते हैं ताकि बारिश में नयी समस्याएं खड़ी न हों।

बोगदों की निर्माण प्रक्रिया (operation) निम्नलिखित विधियों से सम्पन्न की जाती है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) खुदाई।

(२) लकड़ी के फ्रेम का निर्माण।

(३) वायु-संचार (ventelation) तथा जल निकास (drainage) व्यवस्था।

बोगदे के प्रवेश द्वार निश्चित करना

भूगर्भिक सर्वेक्षण के आधार पर बोगदे के दोनों प्रवेश द्वार निश्चित किये जाते हैं। फिर बोगदे के प्रस्तावित पथ पर, भूमि की ऊपरी सतह पर बोगदे की मध्यरेखा अथवा सन्दर्भ रेखा खींची जाती है। यह रेखा बोगदे के पथ को भूमि के ऊपर दर्शाती है। खुदाई शुरू करने से पूर्व बोगदे की सारी योजना नक्शे पर बनाकर उसकी एक-एक सम्भावना पर विचार कर लिया जाता है। विभिन्न स्थानों पर उसकी गहराई, लम्बाई, चौड़ाई तथा भूगर्भिक जानकारी के आधार पर शाफ्ट खोदने के स्थान तय किये जाते हैं। इसमें हवाई सर्वेक्षण द्वारा चित्र लेने से काफी आसानी रहती है। इस सन्दर्भ रेखा के सही-सही अंकन पर ही बोगदे के विभिन्न स्थानों से की गयी खुदाई ठीक स्थानों पर मिलती है। आदि से अन्त तक बोगदे की खुदाई में एक यन्त्र ट्रांजिट थ्योडोलाईट का बड़ा महत्त्व है। इसे यदि मजदूरों का दिशासूचक यन्त्र कहें, तो अनुचित न होगा।

बोगदे के पथ पर निश्चित गहराई तक शाफ्ट या कुएं खुद जाने के बाद उनमें आठ नम्बर के दो बारीक तारों द्वारा २५-२५ पौण्ड के पीतल के गोले लटकाये जाते हैं। इन गोलों को प्लम्ब बाब (plumb bob) कहते हैं। तार में कम्पन दूर करने के लिए इन गोलों को पानी से भरी बालटियों में रखा जाता है। ये दोनों तार शाफ्ट के दो सिरों पर छूने वाली मध्यरेखा के कटन बिन्दुओं पर लटके रहते हैं। इसी लिए शाफ्ट के नीचे इन दोनों तारों को जोड़ने वाली रेखा निश्चय ही ऊपर खिंची सन्दर्भ रेखा के ठीक नीचे रहती है और उसके पथ को दिखाती है। इन दो तारों की सीध में 'ट्रांजिट थ्योडोलाईट' इस तरह से रखा जाता है कि उसकी दूरबीन इन दो तारों को जोड़ने वाले खड़े समतल (vertical plane) में घूमती है। ट्रांजिट थ्योडोलाईट की कार्य प्रणाली को समझने के लिए उसके प्रमुख अवयवों को जानना जरूरी है। इनमें प्रमुख दूरबीन होती है जो अपनी आड़ी धुरी पर गीयर (gear) की सहायता से एक चिमटे के बीच इस तरह से फंसी रहती है कि सिर्फ खड़े समतल ही में घूम सके। इस चिमटे के नीचे ३६०° में बंटा एक वृत्ताकार स्केल लगा रहता है, तथा चिमटे के बाजू से भी उसी तरह का एक वृत्ताकार स्केल लगा रहता है। इस खड़े स्केल की सहायता से दूरबीन का पड़े समतल (horizontal plane) से झुकाव नापा जा सकता है। दूरबीन के वस्तु ताल (object lens) पर दो बारीक तार एक-दूसरे

ट्रांजिट थ्योडोलाईट—(१) दूरदर्शी, (२) वृत्ताकार स्केल—खड़े समतल पर, (३) नेत्र ताल, (४)-(५) स्क्रू, (६) टेलिस्कोप स्क्रू, (७) वृत्ताकार स्केल पड़े समतल पर, (८) वस्तु ताल, (९)-(१०) चिमटे की भुजाएं और (११)-(१२) स्पिरिट लेवल

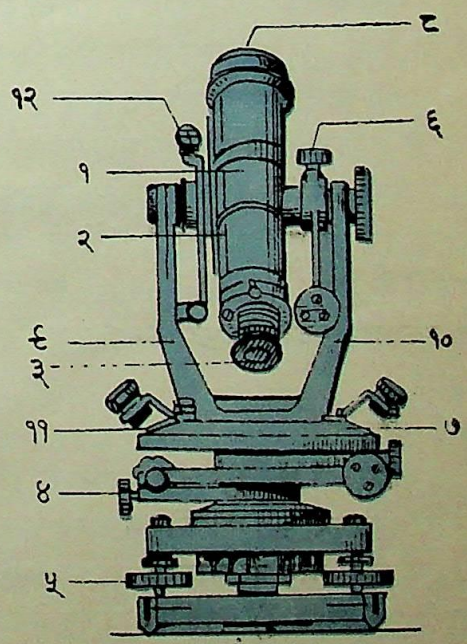

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

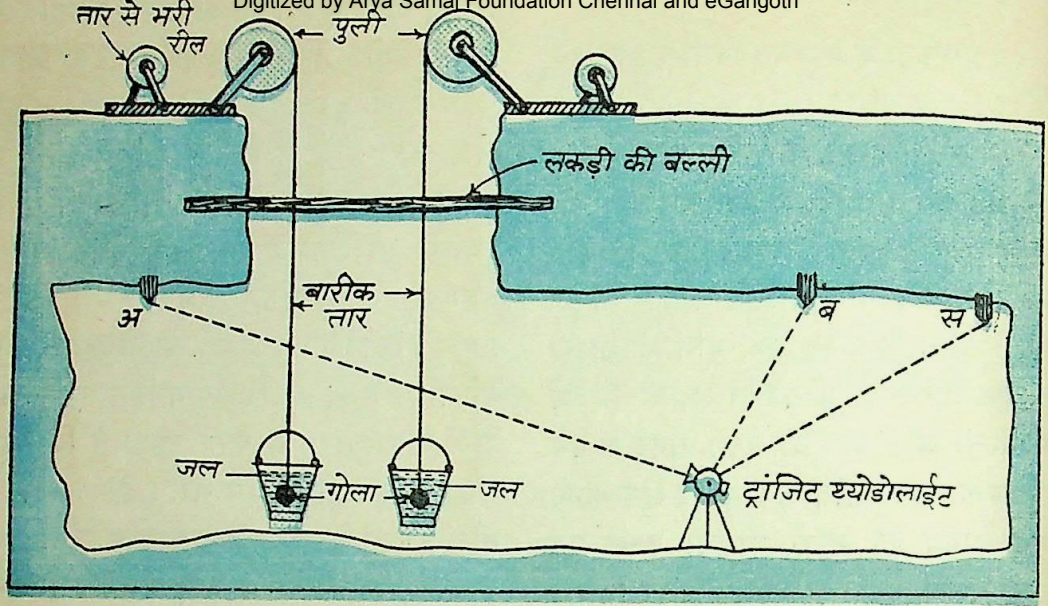

शाफ्ट द्वारा खुदाई के अग्रसर होने का कार्य। मध्य रेखा (सन्दर्भ रेखा) को प्लम्ब बाब की सहायता से धरती के नीचे उतारना

पर लम्बरूप लगे रहते हैं जिनकी मदद से उसे किसी भी बिन्दु या वस्तु पर फोक्स (focus) किया जा सकता है। यन्त्र को ठीक बड़े समतल में लाने के लिए उसमें दो स्पिरिट लेवल (spirit level) भी लगे रहते हैं। यन्त्र के ठीक बीचोबीच धागे की मदद से एक पीतल का गोला लटकता रहता है। इससे यन्त्र की स्थिति निश्चित की जा सकती है। यन्त्र एक तिपाये (tripod) पर रखा जाता है।

शाफ्ट के नीचे यन्त्र को इस तरह से रखा जाता है कि दूरबीन को उसकी धुरी पर घुमाने से वह दोनों तारों के बीच से गुजरने वाले खड़े समतल पर ही घूम सकती है। उसके अन्य समतलों के चलन (movements) को नीचे लगे स्क्रू की मदद से पूरी तरह रोक दिया जाता है।

खुदाई की प्रगति

दूरबीन को अब घुमाकर शाफ्ट के दूसरे छोर पर कुछ दूर, छत पर फोकस करने के बाद वहां एक खूंटी गाड़ दी जाती है (ऊपर के चित्र में खूंटी 'अ' स्पष्ट है)। इसके बाद दूरबीन को खड़े समतल में घुमाकर उसके वस्तुताल को दूसरी ओर लाया जाता है और खुदाई की प्रगति के साथ-साथ बोगदे की छत पर 'ब' तथा 'स' खूंटी गाड़ी जाती हैं। इसके बाद प्लम्ब बाब यानी तारों द्वारा लटकते पीतल के गोले हटा दिये जाते हैं और थ्योडोलाईट तथा छत पर गड़ी खूंटियों की मदद से खुदाई का कार्य प्रगति करता है।

बोगदे का निर्माण खुदाई, विस्फोट तथा मिट्टी बाहर ढोने (mucking) का एक चक्र है। बोगदे की खुदाई की कई विधियां हैं, जो चट्टानों के प्रकार पर निर्भर करती हैं। कठोर चट्टानों के लिए मुख्यत: निम्नलिखित विधियां काम में लायी जाती हैं—

पाइलट हेडिंग (Pilot Heading)

इसमें विभिन्न भागों की कटाई (चित्र स. पृ.) के अनुसार की जाती है। इस विधि में बोगदे का लगभग ८'×८' का हेडिंग कहा जाने वाला मध्यवर्ती ऊपरी भाग (चित्र में १) सर्वप्रथम काटा जाता है। उसके बाद बाजू के भाग (चित्र में २-२) काटे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते हैं। उसके बाद भाग ३ तथा ४ (चित्र) काटे जाते हैं। इस प्रणाली में यदि बोगदे के दो ओर से कटकर मिलने वाले हिस्से यदि कुछ यहां-वहां हट गये हों, तो उन्हें मिलाकर एक करने में अधिक कठिनाई नहीं होती है। पर इसमें समय अधिक लगता है।

हेडिंग तथा बेंचिंग (Heading and Benching)

इस विधि में ८'×६' का ऊपरी भाग लगभग १० फुट लम्बाई तक खोद लिया जाता है। इस तरह बनी आकृति में निचले भाग को बेंच तथा ऊपरी भाग को हेडिंग कहते हैं (नीचे का चित्र)। इन्हें बनाने के बाद बरमों द्वारा छेद करके इनमें विस्फोटक पदार्थ भरे जाते हैं। पहले ेंच में से फिर हेडिंग में से विस्फोटों द्वारा मिट्टी बाहर फेंक दी जाती है। दूषित वायु के हटने तथा गर्द बैठने के बाद उखड़ी हुई चट्टानें तथा मिट्टी बाहर फेंक दी जाती है।

जहां नर्म मिट्टी पायी जाती है वहां परिस्थिति के अनुसार कई विधियों से किसी एक को चुनना होता है, क्योंकि नर्म मिट्टी में कटाई का कार्य अपेक्षाकृत अधिक कठिन होता है। काम में लायी जाने वाली विधियों में से मुख्य ये हैं—(१) फोर पालिंग विधि, (२) नीडल बीम विधि, (३) अमरीकी विधि, (४) अंगरेजी विधि और (५) बेल्जियन तथा इटालियन विधि।

हेडिंग तथा बेंचिंग

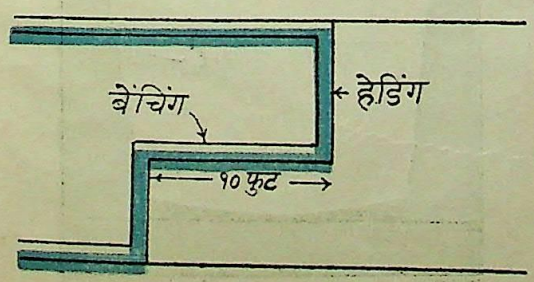

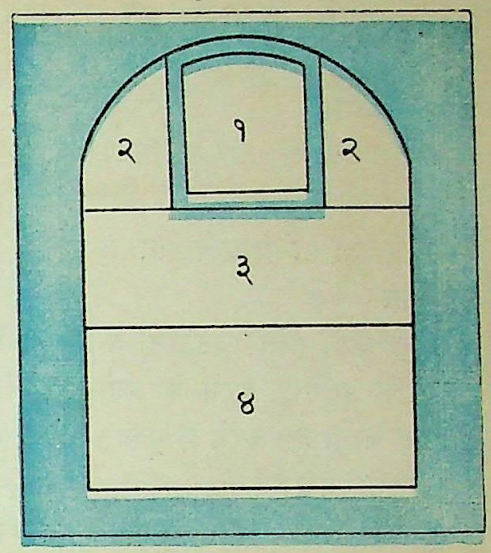

पाइलट हेडिंग

मत बदलते जा रहे हैं

शाफ्टों को बनाये रखने के सम्बन्ध में यान्त्रिकों के मत बदलते जा रहे हैं। पहले शाफ्ट स्थायी रूप से बनाये जाते थे, क्योंकि यान्त्रिकों का विचार था कि शाफ्ट वायुसंचार में सहायक होते हैं, किन्तु आधुनिक यान्त्रिक इससे असहमत हैं। अब यह कहा जाता है कि तीव्र गति से जाने वाली गाड़ी के पिछले भाग में उत्पन्न अल्पवायु शून्यता से द्रुत गति से खिंची चली आ रही वायु द्वारा अपने-आप ही वायुसंचार हो जाता है। इसका उत्तम उदाहरण है सड़कों पर द्रुत गति से जाती हुई मोटरें जिनके पीछे आपने धूल के बादलों को भागते हुए देखा होगा। शाफ्ट प्रतिकूल दिशाओं से वायुधाराएं बहाकर इस तरह अपने-आप होने वाले वायुसंचार की गति में अवरोध पैदा करते हैं। शाफ्ट से एक हानि यह भी है कि उससे भीतरी एवं बाहरी जल बहकर बोगदे के भीतर इस सीमा तक बढ़ जाता है कि उसे निकालना एक समस्या हो जाती है। इन्हीं कारणों से बोगदे का निर्माण होते ही शाफ्टों को भर दिया जाता है। इसके अतिरिक्त उपर्युक्त जानकारी से प्रभावित होकर कई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराने बोगदों में बने शाफ्टों को भर दिया गया है।

निर्माण प्रक्रियाएं

इस सन्दर्भ में प्रमुख निर्माण प्रक्रियाओं का उल्लेख आवश्यक है। निम्नलिखित पंक्तियों में कुछ प्रक्रियाएं दी गयी हैं।

बरमाछेदन

काटी जाने वाली चट्टानों तथा खुदाई की विधि के अनुसार बरमे के प्रयोग में भी अन्तर पड़ जाता है। बरमे के मुख्यतः दो अंग होते हैं, पहला 'जैक हैमर' (jack hammer) तथा दूसरा 'जम्पर' (jumper)। जम्पर उस छड़ को कहते हैं जिससे चट्टानों में छेद किये जाते हैं। एक बरमा साधारणतः ३० से ३५ वर्गफुट क्षेत्र के लिए पर्याप्त होता है।

विस्फोट

बरमाछेदन के बाद विस्फोट का महत्त्व आता है, क्योंकि सही स्थानों पर विस्फोटकों के लगाये जाने से समय तथा कार्य की बचत हो सकती है। विभिन्न बारूदों को मुख्यतः दो भागों में बांटा जा सकता है—पहला जेलैटिन तथा दूसरा डायनामाईट। इनका विस्फोट करने के लिए भी दो तरह के डेटोनेटर (detonator) काम में लाये जाते हैं। पहला सुरक्षा फ्यूज द्वारा चलित तथा दूसरा विद्युत् द्वारा चलित।

मकिंग

विस्फोट से गिरी मिट्टी को हटाना भी एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है, क्योंकि इस बेकार मिट्टी के शीघ्र हटाये जाने पर ही बोगदे की खुदाई आगे बढ़ सकती है। यह कार्य साधारणतः बोगदे के फर्श पर बिछी रेल की पांतों पर चलित ट्रालियों द्वारा सम्पन्न किया जाता है। लम्बे बोगदों में डीजल या बैटरी द्वारा चालित इंजिनों द्वारा ट्रालियों की गतिविधि में शीघ्रता लायी जाती है।

वायुसंचार

बोगदे के भीतर सुरक्षित रूप से कार्य करने के लिए दूषित वायु तथा धुएं के निष्कासन का समुचित प्रबन्ध रहता है। इसके अतिरिक्त मजदूरों को भी कार्य करने के लिए शुद्ध वायु बराबर मिलती रहनी चाहिये। वायुसंचार मुख्यतः दो विधियों से सम्पन्न किया जाता है—नैसर्गिक तथा मानवीय उपायों द्वारा।

नैसर्गिक विधि में शाफ्ट द्वारा वायुसंचार किया जाता है, क्योंकि विस्फोट के समय भीतर उत्पन्न हुई गरम गैसें हलकी होकर शाफ्ट द्वारा उठकर ऊपर निकल जाती हैं। फिर शुद्ध वायु इस रिक्तता को भरने के लिए पोर्टल से भीतर प्रवाहित हो उठती है। इस तरह वायुसंचार का एक हलका-सा चक्र चलता रहता है।

मानवीय प्रयासों में शुद्ध वायु नलिकाओं द्वारा खुदाई-स्थल के पास भेजी जाती है, तथा अन्य नलिकाओं द्वारा खुदाई-स्थल की दूषित वायु को बाहर चूस लिया जाता है। विस्फोट द्वारा उत्पन्न गर्द को कम करने के

ईंटों से भरा हुआ रक्षात्मक आवरण फर्श का ढाल। दोनों ओर से बीच को रखा जाता है

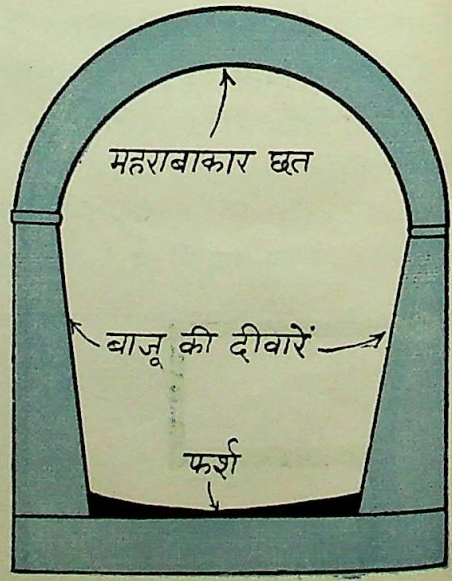

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए कटाई स्थल पर जल छिड़ककर उसे गीला कर दिया जाता है। गीली भूमि में छेद करने से बरमे के जम्पर भी जल्द खराब नहीं होते।

आवरण चढ़ाना

खुदाई के बाद भीतरी भाग पर सीमेण्ट-कंक्रीट या ईंटों अथवा पत्थरों का आवरण चढ़ा दिया जाता है। यह आवरण बोगदे को उसका सही रूप देता है तथा ऊपरी मिट्टी को पथ पर गिरने से रोकता है। जब बोगदे का उपयोग जलनिकास सुरंग के रूप में किया जाता है तब यह भीतर से प्रवाहित होने वाले जल तथा बोगदे की दीवारों के बीच घर्षण कम करके जल के मुक्त प्रवाह में सहायक होता है। यह आवरण बोगदे की छत से चूकर गिरने वाले पानी को रोकता है। यह विस्फोट अथवा बरमाछेदन के समय चलायमान हुई चट्टानों को बोगदे के भीतर नहीं धंसने देता है (पू. पृ. का चित्र)।

जलनिकास

कार्य के दौरान तथा बाद में भी बोगदे के भीतर से जल को बाहर निकालने के लिए बीच में एक नाली बना दी जाती है। इसके अतिरिक्त जलनिकास को सुचारु रूप से चलाने के लिए बोगदे के फर्श को भी दोनों ओर बाहर की तरफ हलका-सा ढाल दे दिया जाता है (ऊपर का चित्र)।

खुदाई के क्षेत्र में जलधाराओं का सामना

खुदाई के क्षेत्र में जलधाराओं का सामना होने पर एयर-लाक (air lock) की सहायता लेनी होती है। यह इस्पात का एक बेलनाकार कमरा होता है जिसके भीतर हवा बन्द करके रखी जाती है। इसके दोनों सिरों पर दो एयर टाईट द्वार होते हैं। इसे एक चौखटे द्वारा जिसे बल्कहेड (bulkhead) कहते हैं, अपने स्थान पर सहारा देकर रखा जाता है (अगले पृष्ठ का चित्र)।

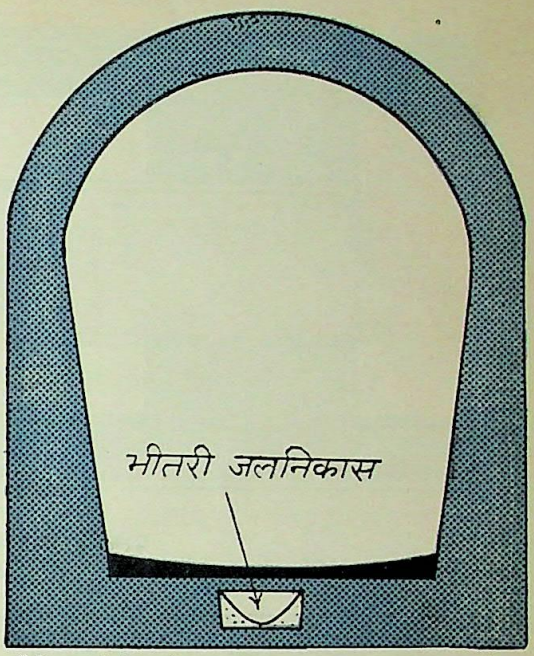

सीमेण्ट-कंक्रीट से बना रक्षात्मक आवरण। फर्श पर बिखरे जल को निकास तक भेजने के लिए दोनों ओर से ढाल बीच की ओर रखा जाता है

मजदूरों के इस उपकरण के भीतर घुसने के बाद विविध नियन्त्रणों द्वारा इस कमरे के भीतर का वायुभार आवश्यकतानुसार घटाया-बढ़ाया जा सकता है। यदि मजदूर को बाहर से सुरंग के भीतर जाना हो, तो इसका वायु-भार बढ़ाकर सुरंग के सिरे के वायुभार के बराबर कर दिया जाता है और मजदूर उस तरफ उपकरण के बाहर निकल आता है। इसके विपरीत जब मजदूर को सुरंग के बाहर निकलना होता है, तब इसका वायुभार घटा-कर बाहरी भाग के बराबर कर दिया जाता है। इस सम्बन्ध में एक विशेष बात यह है कि मजदूर को इसके बाहर या भीतर एकदम नहीं निकलना या जाना चाहिये अन्यथा वह कैशियन रोग (cassian disease) का शिकार हो सकता है। यह रोग अधिक वायु-भार में काम करने वालों को प्रायः हो जाता है। इसमें रोगियों के पेट, हाथ व पैर के जोड़ों में तीव्र पीड़ा होती है। किसी-किसी अंग को लकवा मारने का अन्देशा भी रहता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

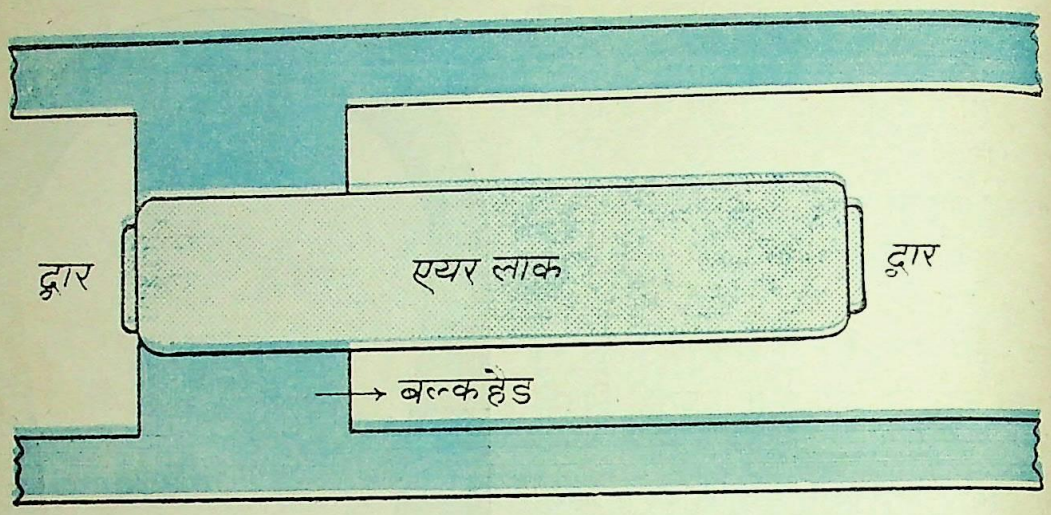

बल्कहेड में फंसा हुआ एयर लाक

रोगी की मौत भी हो सकती है। यह रोग वायुभार के अचानक परिवर्तन से होता है। वायुभार के अचानक बढ़ने से हवा की नोषजन वायु त्वचा के छिद्रों से भिदकर रक्त में मिल जाती है। यह नोषजन वायु वायुभार के अचानक घटने से रक्त से बुलबुलों के रूप में त्वचा के छिद्रों को फाड़ती हुई निकलती है। इस क्रिया में त्वचा को हानि पहुंचने के अतिरिक्त रक्तवाहिनी नलिकाओं को भी नुकसान का भय रहता है। वायुभार परिवर्तन के इस कुप्रभाव को कम करने के लिए वायुभार में परिवर्तन अत्यन्त मन्द गति से किया जाता है। इसके अतिरिक्त एयर लाक के भीतर हीलियम तथा ओषजन वायु का मिश्रण भर दिया जाता है।

अधिक उन्नत देशों में इस तरह के हर कार्य को सम्पन्न करने के लिए उपयोगी मशीनों के बन जाने से कार्य सुगमता से हो जाता है, किन्तु भारत के साथ बात ऐसी नहीं। यहां वैसी विकसित मशीनों का अभाव है, अतः अधिकतर कार्य हाथ ही से करना पड़ता है।

आग की लपटों के बीच से निकलने वाली नाव

ब्रिटेन में मोटर-संचालित एक अद्भुत नाव विकसित हुई है। इस रक्षक नाव का नाम है 'ब्रिस्टल फिनिक्स'। हाल ही में इसका परीक्षण हुआ। उस समय इसमें २० व्यक्ति बैठे थे। यह नाव छह मिनट तक १,०००° से, की लपटों में रही, लपटें २५० फुट ऊंची थीं, फिर भी न उसके यात्रियों को आंच आयी, और न ही उसमें रखा मक्खन पिघला। उन भीषण लपटों के बीच से जब नाव गुजर रही थी, उस समय उसके भीतर का ताप ७३·६° से. था।

आग के बीच से निकलते समय इस नाव का ऊपरी आवरण बन्द हो जाता है। भीतर हवा के गुब्बारों से हवा निकलती रहती है जो यात्रियों को घुटन से बचाती है और मोटर के इंजन को चालू रखती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

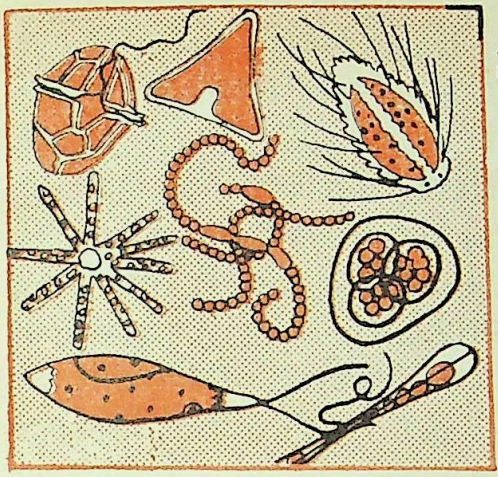

वनस्पति-जगत का परमाणु डायटम

महेश्वरसिंह सूद, एम. एस-सी. पी-एच. डी.

वर्तमान युग में परमाणु के नाम से कौन परिचित नहीं है ! भौतिक और रसायन-शास्त्र के परमाणु को तो प्रायः सभी जानते हैं, परन्तु सजीव जगत के डायटम को कुछ प्राणी-विज्ञानवेत्ता ही जानते हैं।

ये एक विचित्र, सूक्ष्म एक-कोषीय प्लवक वनस्पति हैं जो ठण्डे और गरम परिवेश में, जैसे पोखर, नदी, तालाब और खाइयों में, दस हजार फुट की ऊंचाई पर, बर्फ से ढंकी पहाड़ियों पर, गरम पानी की धाराओं में, जहां का तापक्रम ५०°से. होता है, हर प्रकार की परिस्थिति में जहां कहीं भी पानी और पर्याप्त प्रकाश होता है, पाये जाते हैं। इनके झुण्ड के झुण्ड सतह पर या नीचे तल पर फैले होते हैं और इतने घने तथा विस्तृत होते हैं कि यदि कोई बड़ा जन्तु भी इनमें फंस जाय, तो उसका निकलना असम्भव होता है। सूक्ष्मता और शक्ति की विशालता जैसी परमाणु में पायी जाती है, इसमें भी। इसी कारण वैज्ञानिकों ने इसका नाम डायटम रखा। डायटम का अर्थ होता है द्विपरमाणु, अर्थात् दो परमाणु की शक्ति वाला।

डायटम : वनस्पति, किन्तु वनस्पति से भिन्न

डायटम वनस्पति होते हुए भी अन्य सभी वनस्पतियों से कहीं अधिक भिन्नता लिये हुए है, विशेषतः इसमें जड़, तना, पत्ती आदि भागों का अभाव होता है। यह केवल एक-कोषीय होता है पर कुछेक जातियां ऐसी हैं जो शृंखलाबद्ध हो जाती हैं और इनकी लम्बी-लम्बी कतारें बनी होती हैं। डायटम की लगभग पन्द्रह हजार जातियां हैं। ये सब केवल एक जाति राइजोसोलेनिया स्टाइलीफोरमिस (*Rhizosolenia styliformis*) के अतिरिक्त जो सामान्य रूप से आंख से ही देखी जा सकती है, अति सूक्ष्म होते हैं और केवल सूक्ष्मदर्शी से ही देखे जा सकते हैं। ये आकार में ४ से ५०० माइक्रोन, अर्थात् १/६००० से १/५० इंच तक के नाप के होते हैं तथा रंग में अधिकतर हरे या भूरे होते हैं। सब पर सिलिका का आवरण (खोल) होता है। आकृति में प्रकृति के सबसे खूबसूरत नमूने होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि किसी बहुत ही कुशल पच्चीकारी करने वाले ने बहुत ही बारीकी और सुन्दरता से इनको गढ़ा है। अत्यन्त आकर्षक डिजाइनों के और वह भी अनगिनत प्रवाह के ये अधिकांशतः नौकारूपी, वृत्ताकार अथवा बहुकोणी होते हैं। अब तक अधिक से अधिक इक्कीस कोणों तक के डायटम देखे गये हैं। वैज्ञानिकों ने इनके नाम भी इनकी आकृति के अनुसार ही दिये हैं, जैसे नेवीक्यूला ग्रैन्युलेटा (*Navicula granu-*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

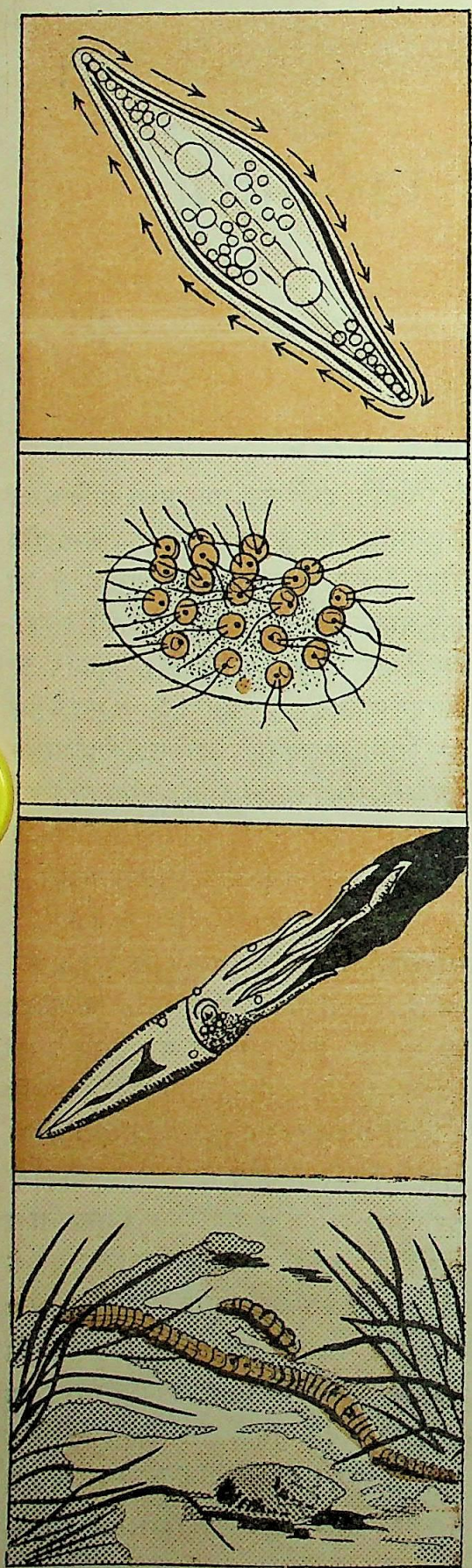

lata), प्लूरोसिग्मा एंग्यूलेटम (*Plurosigma angulatum*), नेवीक्यूला ट्यूमेरोसा (*Navicula tumerosa*), एरेक्नोइडिस्कस इटरनबर गाई (*Arachnoidiscus eternbergii*), एक्टीनोटाइक्स टिलियोपैलटा (*Actinoptychus teliopetta*), लैपिडोडिस्कस इम्पीरियलिस (*Lepidodiscus imperialis*), ट्राइसिरेशियम फेवस (*Triceratium favus*), ट्राइसिरेशियम वैराइटी क्वाडरेट (*Triceratium var. quadrate*), ट्राइसिरेशियम मोरलैण्डाई (*Triceratium morlandii*), ट्राइसिरेशियम साइक्लैमन (*Triceratium cyclamen*), सिटिक्टोडिस्कस हेक्सागोनस (*Stictodiscus hexagonus*), ओलिसक्स सीलेटस (*Auliscus coelatus*) आदि।

इन्हें देखकर ही इनके विभिन्न आकर्षक रूपों का पता चलता है। ये मुख्यत: अस्फुटिक सिलिका पदार्थ के जो क्वार्ट (quart-कांच) के सदृश पदार्थ होता है, खोल ओढ़े रहते हैं। ये खोल अत्यन्त सख्त व चमकीले होते हैं और बहुत ही खूबसूरत होते हैं। इनकी आकृति डिबियानुमा होती है।

जब कोशिका का विभाजन होने लगता है, तो डिबिया के दोनों भाग आहिस्ता-आहिस्ता अलग होने लगते हैं और तब तक खिसकते हैं जब तक कि दोनों भागों के किनारे एक-दूसरे के पास नहीं आ जाते। इससे इनके अन्दर का स्थान बढ़ जाता है और बंटा हुआ न्यूक्लीयस पृथक् होकर विपरीत किनारे पर जम जाता है। अब प्रोटोप्लाज्म बढ़ता है और नरम वाल्व भातृकोषिका में बन जाते हैं। पूर्ण बन जाने पर नयी बंटी कोशिका, अर्थात् दुहिता

भिन्न-भिन्न डायटम भिन्न-भिन्न प्रकार से गतिशील होते हैं। कोई डायटम टैंक की तरह चलता है और कोई जलयान की तरह। कुछ डायटम राकेट की तरह गतिशील होते हैं, तो कुछ अंतड़ियों के रूप में सरकते दिखायी पड़ते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

080167

कोशिका पृथक् होकर स्वतन्त्र जीवनयापन करने लगती है। इस प्रकार प्रत्येक विभाजित डायटम में एक पुराना कपाट और एक नया कपाट रहता है। इस प्रकार जो डिजाइन पितृ डायटम का होता है, सन्तति से सन्तति में पहुंचता रहता है। इस प्रकार लगातार विभाजन होने से प्रत्येक सन्तति के नाप में कुछ कमी आ जाती है जो पुनः लैंगिक उत्पादन से सामान्य होता रहता है। इस प्रकार डायटम अपना रूप व नाप सदैव बनाये रखते हैं। इनकी सतह पर बहुत बारीक-बारीक छिद्र तथा रेखाएं होती हैं जो केवल तीव्र सूक्ष्मदर्शी से ही देखी जा सकती हैं। रेखाएं सामान्य रूप से संख्या में १ इंच में १,२५,००० तक होती हैं। एक जाति प्लूरोसिग्मा एंग्यूलेटम की सतह पर तो एक इंच में ५०,००० तक रेखाएं होती हैं और ये एक-सी दूरी पर होती हैं। बहुधा वैज्ञानिक सूक्ष्मदर्शी के लेन्सों की शक्ति मापने के काम में इन्हें लाते हैं। इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी से देखने पर पता चलता है कि इनकी सतह पर बहुत ही बारीक छिद्र होते हैं जिनका व्यास १/२५,००,००० इंच होता है। ये अत्यन्त नियमित ढंग से फैले हुए होते हैं जिनसे डायटम में अत्यधिक प्राकृतिक सुन्दरता रहती है। इन छिद्रों में होकर लगातार पानी बहता है जिससे डायटम में गति आती है और फिसलते हुए झटकों के साथ गति करते हुए दिखायी देते हैं, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार जेट विमान चलते हैं। सम्भवतः इन्हीं की गति को देखकर वैज्ञानिकों ने जेट विमान के निर्माण का विचार लिया।

सजीव डायटम आक्सीजन प्रदान करते हैं

सजीव डायटम वनस्पति होने के कारण खाद्य निर्माण तो करते ही हैं, आक्सीजन भी प्रदान करते हैं जिससे आसपास का जल शुद्ध होता रहता है। यह विशेषता प्रायः जल में पायी जाने वाली सभी वनस्पतियों में होती है, परन्तु डायटम जो इतनी बड़ी संख्या में और जो वर्ष के अधिकतम काल में सक्रिय बने रहते हैं, अधिक कार्य करते हैं। डायटम की उपस्थिति से वाटर-वर्क्स के इंजीनियरों को काफी सतर्क रहना पड़ता है, क्योंकि जहां ये प्राकृतिक रूप से जल शुद्ध करते हैं, वहां अधिक संख्या में फैलकर रुकावट भी डालते हैं। जहाज आदि की सतह पर चिपककर ये उन सब वनस्पतियों को जो बदबू देती हैं, रोकते हैं, इस प्रकार दुर्गन्धनाशी की तरह कार्य करते हैं।

इन सबके शरीर के ऊपर सिलिका का आवरण होता है। इनके निर्जीव हो जाने पर यह आवरण तलहटी में बैठता जाता है। इन आवरणों में से बहुमूल्य रज एकत्र हो जाता है, जिसे डायटम रज (diatomaceous eark) कहते हैं।

डायटम रज

डायटम रज डायटमों के अवशिष्ट खोलों से बनता है जो क्वार्ट सदृश अस्फुटिक सिलिका के बने होते हैं। इस प्रकार के रज के जमाव संसार के अनेक क्षेत्रों में, जैसे जरमनी, अल्जीरिया, केन्या, केलिफोर्निया आदि देशों में पाये जाते हैं। इनमें से केलिफोर्निया के जमाव सबसे बड़े हैं और इनकी मोटाई १,००० फुट तक, मीलों तक फैली हुई है। यह जमाव कितनी सदियों में और कितने डायटमों के अवशेषों से एकत्र हुआ होगा, इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि मृत डायटम १५ या २० वर्ष में तलहटी में बैठ पाते हैं और प्रत्येक घन इंच जमाव लगभग ६०,०००,००० डायटम खोलों से हो पाता है। अनुमान लगा सकते हैं कि १०,००० फुट मोटा मीलों तक फैला हुआ रज कितने डायटमों से तथा कितने वर्षों में एकत्र हुआ होगा, और यह भी अनुमान लगा सकते हैं कि डायटम कितने विस्तार से और कितनी संख्या में होते हैं। यह रज भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई साधारण रज नहीं कि एक या दो यौगिकों से मिलकर ही बनती हो, अपितु इसके गठन में कई यौगिक निश्चित अनुपात में रहते हैं—

सिलिका (SiO_2)	८३·२०	प्रतिशत
अल्यूमिना ($Al\ O_3$)	३·८०	,,
आइरन आक्साइड (Fe_2O_3)	३·००	,,
लाइम (CaO)	०·८०	,,
मैग्नीशिया (MgO)	२·२३	,,
पोटाश (K_2O)	०·८९	,,
सोडा (Na_2O)	०·३३	,,
पानी तथा अन्य जैविक पदार्थ	५·२६	,,

डायटम रज के उपयोग

डायटम रज का भौतिक और रासायनिक गठन अपने ही ढंग का विचित्र और अनूठा होता है जिससे यह अनेक वैज्ञानिक और औद्योगिक कार्यों के लिए प्रयोग में आता है। उनमें से कुछ मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं—

(१) छानने के लिए—निस्पन्दन माध्यम (filtering medium)।

(२) ताप, शीत व ध्वनि के प्रति पृथक्कारी (insulator against heat, cold and sound)।

(३) अवशोषक (absorbent)।

(४) पूरक (filler)।

(५) इमारती सामान (building material)।

(६) अपघर्षक।

(७) ओषधि निर्माण (pharmaceutical properties)।

(८) भूमि स्तर क्रम सूचक (stratigraphic indicators)।

शुद्ध डायटम रज बाजार में फिल्टर सेल, सुपर सेल या हाईफिल सुपर सेल आदि नामों से बिकता है और यह अधिकतर तेल, चीनी, शर्बत, पेण्ट, वार्निस, शराब आदि के छानने में उपयोगी होता है। इसके द्वारा जो फिल्टर तैयार होते हैं, वे बहुत दिनों तक चलते हैं तथा बहुत ही उत्तम होते हैं। इससे विशेष प्रकार का फिल्टर तैयार होता है जिसे मेटाफिल्टर कहते हैं। इस फिल्टर में छनने की रफ्तार बहुत तेज रहती है तथा छानन भी बहुत ही साफ आता है। इसी कारण इसका प्रयोग बहुत होता है।

डायटम रज का शीत, ताप व ध्वनि के प्रति पृथक्कारी की तरह भी प्रयोग पर्याप्त मात्रा में होता है। सबसे अधिक रज जटलैण्ड (Jutland) स्थान पर इसी कार्य के लिए खोदा जाता है और यह मोलेरा (molera) के नाम से बेचा जाता है। मध्य

समुद्र की गहराई में अन्य क्षुद्र जीवों के साथ तिनके-सा डायटम (नीचे)

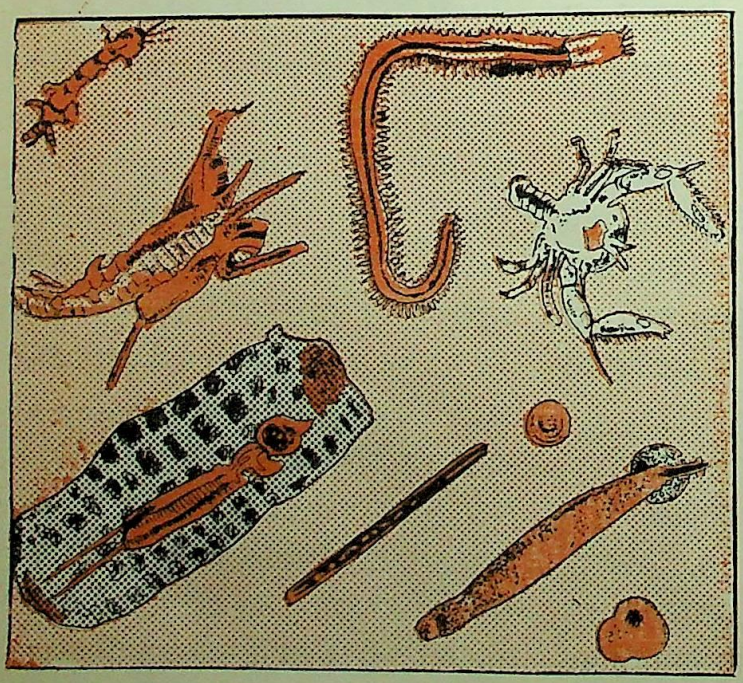

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूरोप और न्यूजीलैण्ड में भी इस रज का पृथक्-कारी की तरह प्रयोग होता है। इस रज की यह विशेषता इसको अपनी प्राकृतिक रचना से ही प्राप्त होती है। इसके बारीक-बारीक छिद्र तथा इसकी न्यून ताप प्रवाह शक्ति जो लगभग ०·०००१२७ ग्राम-कैलोरी-सेकण्ड २००°से. पर होती है, इसको अत्यधिक उष्णता व शीत के प्रति पृथक्कारी करती है। इस रज से बनी ईंटें भी ध्वनि के प्रति अत्यन्त ही पृथक्कारी होती हैं। ये टेलीफोन तथा रेडियो के प्रसारक कमरों में जहां आर्गन तथा ध्वनि दोनों ही रोक देते हैं, इस्तेमाल की जाती हैं।

वनस्पति तेल बनाने में डायटम रज का उपयोग

डायटम रज का उत्प्रेरक (catalyst) की तरह प्रयोग वनस्पति तेल बनाने के काम में किया जाता है। इसके लिए निकिल धातु के घुलनशील लवण, डायटम रज तथा सोडियम कार्बोनेट को मिलाकर उबाला जाता है और उबालने के बाद ठोस को दबाकर एक प्लेट के रूप में बना लिया जाता है। इसको सुखाकर ३००°से.तक हाइड्रोजन के वायुमण्डल में गरम किया जाता है जिससे निकल कार्बोनेट बहुत ही महीन-महीन, काले पाउडर के रूप में इससे अलग हो जाता है। फिर यह पाउडर तेल के साथ मिला दिया जाता है। जब हाइड्रोजन तेल में होकर गुजरता है, तो इसमें से हाइड्रोजन परमाणु तेल में पहुंचकर तेल को ठोस बनाते हैं। इस प्रकार वेजीटेबिल तेल जो हाइड्रोजिनेटेड तेल है, इसकी सहायता से बनता है।

डायटम रज का न्यून घनत्व (low density) तथा उच्च छिद्र-बहुलता (porosity) खास तौर पर अवशोषक की तरह प्रयोग में लाने के लिए उपयुक्त बनाती है। इसको गाढ़े धातु अम्लों तथा ब्रोमीन आदि के रखने के लिए काम में लाया जाता है। पूरक (filler) के रूप में इसका प्रयोग रबर अथवा प्लास्टिक तथा रंगों में किया जाता है।

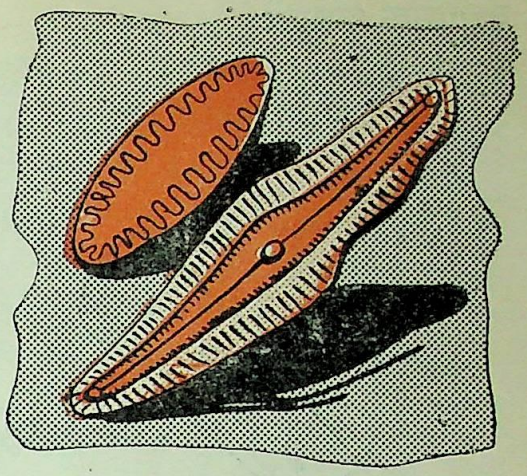

डायटम वनस्पति है किन्तु इसमें जड़, तना, पत्ती आदि का अभाव होता है

डायटम रज की ईंटें

डायटम रज का प्रयोग अधिकांशतः उन इमारतों में किया जाता है जिनका वजन हलका रखना होता है। इससे बनी हुई ईंटें मजबूत तथा हलकी होती हैं। इनका सर्वप्रथम प्रयोग टेगिया रोफिया के गिर्जे का गुम्बज बनाने में किया गया था। अपघर्षक की तरह इसका प्रयोग मेटल पालिश में किया जाता है। टूथ-पेस्टों में भी इसका इस्तेमाल पर्याप्त मात्रा में होता है।

डायटम रज का प्रयोग ओषधियों में कई प्रकार से किया जाता है, विशेषकर त्वचा पर लगाने के लिए जो मलहम बनाये जाते हैं उनमें ऐसे पदार्थों, जैसे इश्थियोल (Ichthyol), रिसोरसीन (resorcin), मरक्यूरियल्स (mercurials) आदि को मिलाकर लगाने के लिए बहुत ही उपयुक्त समझा जाता है। इसी प्रकार चेहरे पर लगाने वाले पाउडरों में भी यह प्रयुक्त होता है।

भूगर्भ-विज्ञानवेत्ताओं का विचार है कि केलिफोर्निया आदि में पृथ्वी के अन्दर का तेल इन्हीं डायटमों से बना हुआ है। डायटम बड़ी आसानी से प्रस्तर हो जाते हैं जिससे समस्त स्तरों का ठीक-ठीक ज्ञान मिलता है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अदृश्य द्रव में तैरती ध्वनि-तरंगें

दिल्ली से वे कलकत्ता जा रहे थे और वहां से उन्हें दार्जिलिंग जाना था। वे अलग-अलग इरादों से सफर कर रहे थे। मिस्टर बनर्जी एक चाय कम्पनी के मैनेजिंग डाइरेक्टर थे और वे दार्जिलिंग अपने नये दफ्तर के उद्घाटन के अवसर पर जा रहे थे। सत्यदेव दिल्ली के एक कालिज में इतिहास के प्रोफेसर थे। वे इस बार गरमी की छुट्टियों में पश्चिम बंगाल के उस मनोहारी पर्वतीय नगर को जा रहे थे। उनकी पत्नी एक सप्ताह पूर्व बच्चों के साथ मायके गयी थी और तय यह हुआ था कि सत्यदेव पहले वहां पहुंचकर फ्लैट का इन्तजाम करेंगे, फिर वे लोग वहां पहुंचेंगे। मिस्टर जोसेफ अपनी मिशनरी और चर्च के काम से जा रहे थे। डाक्टर सिन्हा ध्वनि-तरंगों पर अनुसन्धान कर रहे थे और बंगलौर से विदेश मन्त्रालय के एक अधिकारी से मिलने दिल्ली आये थे···और अब वे दार्जिलिंग जा रहे थे।

वे चारों फर्स्ट क्लास के कम्पार्टमेण्ट में साथ-साथ सफर कर रहे थे। दिल्ली से जब गाड़ी चली थी, तो कई जंकशनों के गुजरने तक वे एक-दूसरे के लिए अजनबी बने रहे थे लेकिन कानपुर पहुंचते-पहुंचते उनका आपसी अपरिचय टूटा था और बातचीत करने पर उन्हें यह जानकर थोड़ा आश्चर्य हुआ था कि वे सभी दार्जिलिंग जा रहे हैं। अजीब संयोग

मिस्टर बनर्जी ने कहा था कि गाड़ी दोपहर के बाद हावड़ा पहुंचेगी और अगली सुबह उन्हें दार्जिलिंग के लिए गाड़ी मिलेगी। उन्होंने प्रस्ताव रखा था कि वे साथ-साथ उस होटल में जिसमें अक्सर मिस्टर बनर्जी ठहरते थे ठहरें। उनके प्रस्ताव पर सभी सहमत थे।

दरअसल मिस्टर बनर्जी चाहते थे कि जब एक साथ दिल्ली से आ रहे हैं, तो एक साथ ही ठहरें ताकि उन्हें अकेलेपन की ऊब न झेलनी पड़े और इस ऊब को मिटाने के लिए बेमकसद चौरंगी पर न घूमना पड़े। इसके अलावा आगे के सफर में भी साथ बना रहेगा और ऊब पैदा करने वाली लम्बे सफर की एकान्तिकता से वे बचे रहेंगे।

हावड़ा उतरकर टैक्सी में वे लोग मिस्टर बनर्जी के साथ होटल पर आये। होटल में मिस्टर बनर्जी के नाम एक कमरा पहले से है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिजर्वथा। दिल्ली से चलने से पहले उन्होंने तार दे दिया था। वे अक्सर इसी होटल में ठहरते थे और उनका हमेशा वही कमरा होता था। यह कमरा ग्राउण्ड फ्लोर पर था। यहां आकर पता चला कि ग्राउण्ड फ्लोर पर के और कमरे पहले से ही बुक हैं, अतः ऊपर की मंजिल में सिंगल बेड के तीन कमरों का इन्तजाम हुआ। सत्यदेव, जोसेफ, डाक्टर सिन्हा ऊपर की मंजिल के कमरों में ठहरे।

रात में खाना खाने में देर हो गयी। खाना खाने के बाद सत्यदेव, जोसेफ और डाक्टर सिन्हा ने मिस्टर बनर्जी से कहा कि वे कुछ देर उनके कमरे में बैठकर इधर-उधर की बातें करेंगे। मिस्टर बनर्जी खुद भी यह चाह रहे थे।

उस समय रात के करीब ग्यारह बजे थे। एक गोल मेज के इर्दगिर्द चार कुर्सियों पर चार लोग बैठे थे। मिस्टर बनर्जी बार-बार डाक्टर सिन्हा की ओर देख रहे थे। उन्हें पीतल का वह बक्स न जाने क्यों रहस्यमय लग रहा था जिसे डाक्टर सिन्हा ने अपनी कुर्सी के पास रखा था, और बार-बार अपनी आंखें उधर घुमाकर उसे देख लेते थे।

विभिन्न विषयों पर बातें होती रहीं, फिर अचानक विषय परिवर्तन हुआ। विषय परिवर्तन करने वाले थे सत्यदेव। उन्होंने डाक्टर सिन्हा की ओर झुककर पूछा, "डाक्टर साहब, ये जो स्पेस एक्सप्लोरेशन्स हो रहे हैं, क्या पास्सिब्ल है कि आदमी कभी दूर के नक्षत्रों पर पहुंच सकेगा?"

डाक्टर सिन्हा कुछ देर चुप रहकर बोले, "क्या सम्भव है, क्या सम्भव नहीं है, यह तो समय बतायेगा। अभी वैज्ञानिकों को अन्तरिक्ष-सम्बन्धी बहुत-सी कठिनाइयों का सामना करना है। पहले तो घड़ियों के तेज-सुस्त होने की समस्या के बारे में भी कुछ निर्णय लेना पड़ेगा।"

मिस्टर बनर्जी अब तक विशेष ध्यानपूर्वक डाक्टर सिन्हा की बात नहीं सुन रहे थे। घड़ियों के बारे में सुनकर वे चौंके। उन्होंने पूछा, "डाक्टर सिन्हा, यह घड़ियों के फास्ट-स्लो होने की क्या समस्या है?"

डाक्टर सिन्हा ने बताया कि किसी गतिशील प्रणाली से सम्बन्धित घड़ी की तालबद्धता किसी स्थिर घड़ी से पृथक् ढंग की होती है। घड़ी गतिशील प्रणाली की गति बढ़ने से सुस्त हो जाती है।

सत्यदेव ने एक सिगरेट जला ली। कहा, "लेकिन अन्तरिक्ष यात्राओं और घड़ियों के तेज-सुस्त होने का आपस में क्या सम्बन्ध है?"

डाक्टर सिन्हा थोड़ा मुस्कराये। बोले, "भई, दूर के नक्षत्रों पर इन साधारण अन्तरिक्षयानों से तो जाया नहीं जायेगा। कुछ नक्षत्रों पर पहुंचने में लाखों वर्ष लग जायेंगे। वे तो फोटान-शक्ति से चलने वाले अन्तरिक्षयान होंगे जो प्रकाश की गति से चलेंगे। और यह निश्चित है कि किसी गतिशील प्रणाली की जितनी अधिक गति होगी, समय का उतना ही अधिक संकोचन होगा। अगर किसी अन्तरिक्षयान को प्रकाश का पूरा वेग मिल जाय, तो यह संकोचन सिकुड़कर शून्य रह जायेगा। यानी कोई व्यक्ति प्रति सेकण्ड १,६७,००० मील की गति से चलने वाले अन्तरिक्षयान से यात्रा करने के बाद, दस वर्ष बाद पृथ्वी पर लौटेगा, तो पायेगा कि उसकी उम्र में केवल पांच वर्ष की वृद्धि हुई है।"

डाक्टर सिन्हा थोड़ी देर चुप रहे। सत्यदेव ने सिगरेट का आखिरी कश लेकर उसे ऐश-ट्रे में डाल दिया। ऐश-ट्रे में शायद पानी था। सिगरेट सों करके बुझ गयी। डाक्टर सिन्हा ने कहा, "दरअसल उस अन्तरिक्ष यात्री के सामने यह समस्या रहेगी कि पृथ्वी पर के समय और अपने समय में सन्तुलन कैसे बनाये रखकर वह ब्रह्माण्ड के अखण्ड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल में विभिन्न प्रणालियों को समझेगा। दरअसल इस ओर आइन्स्टीन का ध्यान नहीं गया था। आज के वैज्ञानिक यह सब सोच रहे हैं।...लेकिन मेरा यह विषय नहीं है।" इतना कहकर डाक्टर सिन्हा चुप हो गये। उनके चुप होते ही जोसेफ ने उनसे पूछा, "ह्वाट इज योर टापिक आफ रिसर्च ?"

"मैं ध्वनि-तरंगों पर रिसर्च कर रहा हूं।" डाक्टर सिन्हा ने बताया, फिर मिस्टर बनर्जी की ओर देखकर पूछा, "आज की सबसे बड़ी समस्या क्या है, मिस्टर बनर्जी ?"

"इकोनामिक क्राइसिस ! और क्या हो सकती है ?"

"नो, नाट दैट। द प्राब्लम आफ डेथ। लोग क्यों मरते हैं ?"

सत्यदेव हंसा, "भई, डाक्टर, जीवन-मरण तो लगा ही रहता है। अगर लोग मरें न, तो रहेंगे कहां ? खायेंगे क्या ?"

डाक्टर सिन्हा गम्भीर होकर बोले, "एक होती है नेचुरल डेथ, और एक है अननेचुरल, ऐक्सीडेण्टल। यह अननेचुरल डेथ क्यों होती है ?"

सभी चुप थे। किसी ने कुछ नहीं कहा।

अदृश्य द्रव में तैरती ध्वनि तरंगे वायुमण्डल में हलचल मचा सकती है और प्रलय का दृश्य उपस्थित हो सकता है

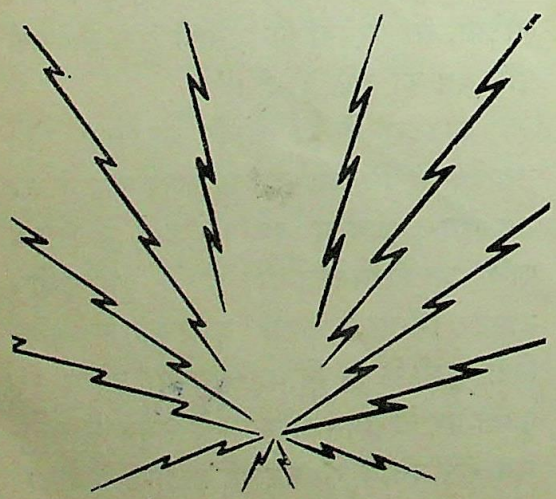

डाक्टर सिन्हा फिर बोले, "मैं इसी विष से सम्बन्धित तथ्यों की ध्वनि-तरंगों के माध्यम से खोज कर रहा हूं। मैं मानता हूं कि यह अननेचुरल डेथ ध्वनि-तरंगों से होती है। दार्जिलिंग मैं इसी सम्बन्ध में जा रहा हूं। वहां से फिर शायद तिब्बत की ओर जाऊंगा।"

थोड़ा रुककर डाक्टर सिन्हा ने फिर कहा, "पिछले दिनों मैं स्विट्जरलैण्ड गया था। वहां आल्प्स पर्वत की एक गुफा में मैंने एक फ्रांसीसी योगी से मुलाकात की। लोगों का कहना था, वह बहुत बड़ा मिस्टिक है। अक्सर वह कहा करता था कि चाहे तो वह किसी भी दिन इस पृथ्वी पर प्रलय मचा सकता है। मैंने उससे पूछा, तो उसने बताया कि उसके पास एक ट्रोमबोन है, जिसे बजाकर वह धरती पर प्रलय मचा सकता है। कैसे ? कैसे ? उसने मुझसे पूछा कि क्या मैं उसके ट्रोमबोन के प्रभाव को देखना चाहूंगा ? मेरे दिमाग में यह खयाल जरूर आया कि इस ट्रोमबोन के प्रभाव से वह पेरिस को बरबाद कर सकता है, दुनिया भर को खत्म कर सकता है। सच तो यह कि मैं यह देखना चाहता था, वह ट्रोमबोन से जो धुन निकालता है वह कैसी है और क्या वह उन धुनों की तरह ही है जिन्हें मैंने परीक्षण करके देखा है और पाया कि वे आदमियों पर विचित्र-विचित्र प्रभाव डालती रहती हैं ? मैंने उससे ट्रोमबोन बजाने के लिए कहा, तो वह फीका मुस्कराया, फिर एक बक्स में से ट्रोमबोन निकालकर गुफा से बाहर आया। वह ट्रोमबोन बहुत चमकदार था और उसे देखकर मैं कुछ सहम गया था। अभी ट्रोमबोन से धुन निकली ही थी कि मैं पूरी तरह डर गया और मैंने उसे रोक दिया।

"तो आपने ट्रोमबोन पर वह धुन नहीं सुनी ?" सत्यदेव ने पूछा।

"नहीं, क्योंकि मैं खुद वह धुन बजा सकता था और निश्चय ही उसका परिणाम क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता जो मुझसे उसने बताया था।···बहुत-सी बातें मैंने मंगोलिया के पठारी भाग में घूमने वाले साधुओं से भी सीखीं।"

"ह्वाट डिड यू लर्न देयर?" जोसेफ अपनी उत्सुकता दबाये न रह सके।

"वहां घूमने वाले साधुओं में से मुझे एक साधु ऐसा मिला जो अपनी मरजी से जिसका चाहता था उसका नाश कर देता था। वह अक्सर ऊंचे स्वर में कुछ मन्त्रों का उच्चारण किया करता था। स्वरों के उतार-चढ़ाव को वह नियन्त्रित रखता था। उसने मुझे बताया कि ब्रह्माण्ड के सभी पिण्ड अदृश्य द्रव में डूबे हुए हैं। इस अदृश्य द्रव के माध्यम से भिन्न-भिन्न तरंग लम्बाई की ध्वनि तरंगें चलती रहती हैं। यदि कुछ तरंगें किसी व्यक्ति से सम्बन्ध रखती हैं, और उसके पास भेजी गयी हैं, तो वह उन्हें ग्रहण कर लेगा। इसके बाद उसका मस्तिष्क उस तरंग के वश में हो जायेगा और वह उसके अनुसार ही काम करेगा। हो सकता है, इसी तरह की किन्हीं तरंगों के प्रभाव से एक पायलट से गलती हो जाय और हवाई जहाज गिर पड़े, या कोई बस के नीचे आ जाय। यह भी सम्भव है कि कुछ तरंगों से वायुमण्डल में हलचल पैदा हो और प्रलय का दृश्य उपस्थित हो जाय।"

मिस्टर बनर्जी ने घण्टी बजाकर बेयरे को बुलाया और चाय का आर्डर दिया। थोड़ी देर में चाय आयी। सत्यदेव ने सबके लिए प्यालों में चाय तैयार की।

चाय पीते हुए मिस्टर बनर्जी ने कहा, "माफ कीजिएगा, डाक्टर सिन्हा, इस बक्स में क्या है, आप बता सकेंगे?"

"इस बक्स में एक ट्रोमबोन है जिसे मैं हमेशा अपने साथ रखता हूं। क्या आप कोई धुन सुनना चाहेंगे?"

"नहीं, नहीं। आपने जो बातें बतायीं, उन्हें सुनकर हिम्मत नहीं हो रही है।"

लेकिन जोसेफ ने आग्रह किया, "बट आई वुड लाइक टु···हम डेकना मांगटा कि क्या होटा।"

डाक्टर सिन्हा ने चाय खत्म की। उनके चेहरे पर अद्भुत चमक थी। उन्होंने कप-सासर मेज पर रख दिया। पीतल का वह बक्स खोलकर उन्होंने ट्रोमबोन निकाल लिया। निश्चय ही वह अजीब किस्म का ट्रोमबोन था। वह बहुत चमक रहा था। उसे धीमे बजाकर डाक्टर सिन्हा ने एक धुन निकाली। धुन काफी मोहक थी। सभी लोग उस पर मुग्ध हो गये थे। डाक्टर सिन्हा का चेहरा अजीब तरह से चमक रहा था। तभी डाक्टर सिन्हा ने ट्रोमबोन पर दूसरी धुन छेड़ी। लगा कि जोसेफ छटपटाने लगे हैं। सत्यदेव और मिस्टर बनर्जी हैरानगी से एक क्षण जोसेफ की ओर, और एक क्षण डाक्टर सिन्हा की ओर देख रहे थे। थोड़ी देर में जोसेफ की छटपटाहट बन्द हो गयी और उन्होंने आंखें मूंद लीं।

ट्रोमबोन के स्वर थमे। उसी पीतल के बक्स में डाक्टर सिन्हा ने ट्रोमबोन रख दिया। जोसेफ अभी तक गहरी नींद में जैसे पड़ा हुआ था। डाक्टर सिन्हा ने बनर्जी की तरफ मुड़कर कहा, "जोसेफ इज पुट टु स्लीप। ही कुड नाट रेसिस्ट द साउण्ड वेव्स। वह अभी जागेगा। वह ठीक हो जायेगा।"

थोड़ी देर तक मौन छाया रहा। डाक्टर सिन्हा छत की ओर देखने लगे थे। उनकी दृष्टि का अनुसरण सत्यदेव और मिस्टर बनर्जी ने किया था।

कुछ देर के बाद जोसेफ ने आंखें खोलीं, "ओ गाड, आई कुड स्लीप फार ए ह्वाइल··· ओह!" फिर उन्होंने जैसे सब कुछ याद किया कि डाक्टर सिन्हा ट्रोमबोन बजा रहे थे और ट्रोमबोन सुनते-सुनते ही वे अपनी चेतना खो बैठे···वे जैसे चौंक-से गये, फिर कुछ देर में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकृतिस्थ हुए। उन्होंने अपनी जेब से कागज का एक टुकड़ा निकाला और उसे मेज पर फैला दिया। उस पर कोई सवाल हल था।

जोसेफ ने बताया कि ब्रह्माण्ड में सभी घटनाएं गणित के नियमों के अनुसार घटती हैं, और यह कहना कि ध्वनि तरंगों और अदृश्य द्रव के प्रभाव से कुछ किया जा सकता है, सही नहीं है। जोसेफ गुस्से से कांप रहे थे, "आई वाज पुट टु स्लीप। दिस फेनोमेना कैन बी एक्सप्लेण्ड इन ए साइण्टिफिक टोन, बट दिस इनविजिबल फ्लुइड···नो, नो···। सब बडमाशी है ऐब्नार्मल लोगों का। द मर्सी आफ गाड इज नाट विद देम !"

डाक्टर सिन्हा का चेहरा तमतमा आया था। उन्होंने क्रूर आंखों से जोसेफ की ओर देखा और ट्रोमबोन का बक्स खोलने के लिए झुके, तभी मिस्टर बनर्जी ने उनका हाथ पकड़ते हुए कहा, "आइए, चलें, थोड़ा छत पर टहलें। नींद तो आज रात क्या आयेगी।" और वे डाक्टर सिन्हा को छत की ओर ले गये। डाक्टर सिन्हा के हाथ में ट्रोमबोन का बक्स था, और मिस्टर बनर्जी के साथ लिफ्ट तक वे थके-थके कदमों से गये।

('दि काजेज' के आधार पर; रूपान्तर : सूर्यदेव पाण्डेय)

ब्रह्माण्ड किरणों का अध्ययन

बम्बई के टाटा इन्स्टीट्यूट में प्रसिद्ध अमरीकी वैज्ञानिक डाक्टर प्राइस ने अपने दो सहयोगी वैज्ञानिकों के साथ अनुसन्धान कार्य शुरू कर दिया है। इन वैज्ञानिकों ने हाल ही में यह खोज की कि कुछ ब्रह्माण्ड किरणों और अन्य ऊर्ज्वसित कण ठोस पदार्थों से होकर गुजरते समय स्थायी रूप से अति सूक्ष्म पथ-चिह्न छोड़ जाते हैं। वे शक्तिशाली रसायनों द्वारा अणु के आकार वाले इन सूक्ष्म पथों को इस हद तक विस्तारित करने में सफल हुए हैं कि अब उन्हें साधारण सूक्ष्मवीक्षण यन्त्र से देख पाना सम्भव हुआ है और उनका अध्ययन सरलता से किया जा सकता है। प्राइस ने अपनी खोजों में यह दिखाया है कि जड़ीभूत पथ जो करोड़ों वर्ष पूर्व उर्ज्वसति कणों द्वारा ठोस पदार्थों के बीच छोड़े गये थे, आज भी दृश्यमान हैं और उनका प्रयोग उन ठोस पदार्थों की आयु का निर्धारण करने में हो सकता है। इस खोज में उनके सहयोगियों का भी महत्त्वपूर्ण हाथ रहा है। प्राइस ने यह भी पता लगाया है कि यदि वह पदार्थ बाह्य अन्तरिक्ष में बहुत लम्बी अवधि तक रहा हो, तो उस दशा में उसमें अंकित जड़ीभूत पदार्थों की तालिका उन ब्रह्माण्ड किरणों के सम्बन्ध में जानकारी देती है जिन्होंने उस पर आघात किया।

प्राइस की धारणा है कि इन किरणों को ढूंढ़ने का एक ढंग यह है कि उल्का खण्डों में निहित जड़ीभूत पक्षों का अध्ययन किया जाय, जो करोड़ों वर्षों से ब्रह्माण्ड किरणों से सम्बन्धित आंकड़े संग्रह करते हैं। उल्का खण्डों के अध्ययन से इस बात के प्रमाण मिले हैं कि अत्यन्त भारी ब्रह्माण्ड किरणें कम संस्था में विद्यमान हैं।

बुद्धि-वर्द्धक ओषधि

अमरीका के दो प्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने बुद्धिवर्द्धक ओषधि का आविष्कार किया है। वे अपनी ओषधि को जानवरों पर प्रयुक्त कर चुके हैं। उन जानवरों ने ऐसे लक्षण दिखाये जिनसे वैज्ञानिकों को सन्तोष हुआ। अब वे मनुष्य पर परीक्षण करने वाले हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्राह्मी
अत्यन्त लाभकारी वनौषधि

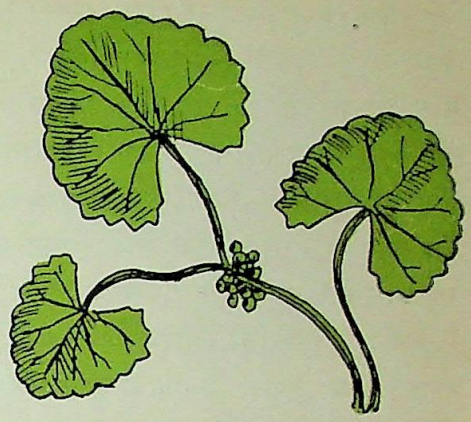

धर्मपाल वर्मा

लगता है ब्राह्मी का अपना कोई इतिहास नहीं है, किन्तु यदि इसकी शाब्दिक व्याख्या की जाय, तो इसमें एवं ब्रह्मा में समरूपता दृष्टिगोचर होती है। पौराणिक गाथाओं एवं व्याकरणवेत्ताओं के आधार पर ब्रह्मा की पुत्री ब्राह्मी है, जिसका दूसरा नाम सरस्वती भी है।

'ब्रह्म' शब्द का अर्थ है ज्ञान, विज्ञान, बुद्धि, धृति, स्मृति आदि। इससे उत्पन्न शब्द ब्राह्मी भी उपरोक्त अर्थों को धारण करते हुए शरीर में मस्तिष्क एवं चित्त को शान्त करती है।

ब्राह्मी के विभिन्न भाषाओं में विभिन्न नाम हैं—

(१) **संस्कृत**—ब्रह्मचारिणी, सरस्वती, दीर्घा।
(२) **हिन्दी**—ब्राह्मी, ब्राह्मा, मण्डूकपर्णी।
(३) **पंजाबी**—ब्रह्मी बूटी।
(४) **गुजराती**—विद्या ब्राह्मी, खडब्राह्मी।
(५) **मराठी**—ब्राह्मी, करिवणा।
(६) **बंगाली**—ब्राह्मी साक, अदबिरनी, थुलकुड़ी।
(७) **उड़िया**—कृष्णपर्णी।
(८) **अरबी**—अरतानियल हिन्द्।
(९) **फारसी**—जर नव।
(१०) **कोंकण**—ब्राह्मी, Ekpanni.
(११) **कन्नड़**—नीर ब्राह्मी।
(१२) **तेलुगु**—साम्राणि चेटु।
(१३) **तमिल**—निर ब्राह्मी, बाल्लरी किरि।
(१४) **अंगरेजी**—Indian Panny-wort.
(१५) **जरमन**—Asiatischer Wasser-nabel.
(१६) **बर्मा**—(Burmese) Plinkhubin.
(१७) **नेपाली**—ब्राह्मी।
(१८) **सिंघली**—Hingotu-Kola.
(१९) **मलयाली**—Dawoopungah-gah.
(२०) **फ्रेंच**—Bevilacque.
(२१) **लैटिन**—Hydrocotyle-asiatica. Synonum-Centella-asiatica.

ब्राह्मी का परिचय

इसकी लता भूमि पर फैलती है (sub-aerial modification of stem)। प्रत्येक गांठ पर गुच्छों में जड़े, फल, फूल, बीज लगे रहते हैं।

परिस्थान(habitat)—ब्राह्मी सभी ठण्डे स्थानों पर नदी के समीप पायी जाती है।

प्रकृति (habit)—यह क्षुप जाति का पौधा है और भूमि पर फैला रहता है।

मूल (root)—सूक्ष्म एवं सूत्रवत् होती है। इसका रंग श्वेत होता है किन्तु एक ही स्थान पर लगी ब्राह्मी जब अधिक पुरानी पड़ जाती है तब उसकी जड़ हलदी, अदरख या वच की जड़ के समान गांठदार धूसर कृष्ण हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र (leaf)—वृक्काकार (reniform) $1\frac{1}{2}'' \times 1\frac{1}{2}''$ से $2\frac{1}{2}'' \times 2\frac{1}{2}''$ लम्बा-चौड़ा, इसमें सात शिराएं होती हैं तथा एक विशेष प्रकार की गंध (गाजर से मिलती-जुलती) आती है।

पुष्प (flower)—छोटे-छोटे १·८ से १·६ इंच के ब्रुश की तरह रेशे वाले, रक्ताभश्वेत रंग वाले बसन्त ऋतु में दृष्टिगोचर होते हैं।

फल (fruit)—छोटे-छोटे पुष्प की तरह। प्राय: संख्या में एक से सात तक तथा जोड़ों (couples) में पाये जाते हैं। ग्रीष्म ऋतु में मिलते हैं।इ सका फल अजवाइन के फल के सदृश होता है।

बीज (seed)—सूक्ष्म-सूक्ष्म एक फल में एक बीज होता है।

कुल (family)—(Unibelliferaceae).

ब्राह्मी की जातियां

'केदार कल्प' ग्रन्थ के आधार पर ब्राह्मी की चार जातियां बतायी गयी हैं—(१)ब्राह्मण जाति की ब्राह्मी श्वेत पुष्प की होती है, (२) क्षत्रिय जाति की ब्राह्मी लाल पुष्प की होती है, (३) वैश्य जाति की ब्राह्मी पीले पुष्प की होती है और(४)शूद्र जाति की ब्राह्मी काले पुष्पकी होती है। किन्तु आधुनिक वनस्पति-विज्ञानवेत्ताओं के आधार पर ब्राह्मी दो प्रकार की होती है—सफेद फूल की ब्राह्मी—हरपेटिस मोनिरा (*Herpetis-monniera*) तथा दूसरी गुलाबी फूल की, इसे सेण्टेला (*Centella*) कहते हैं। आयुर्वेदिक मतानुसार जिस रोगी का वर्ण जैसा हो, उसे उसी वर्ण की ब्राह्मी का सेवन कराना चाहिये, अर्थात् ब्राह्मण रोगी को ब्राह्मण जाति की ब्राह्मी का सेवन करना चाहिये, क्योंकि यह गुणों में भी मृदु होती है, जबकि क्षत्रिय जाति की ब्राह्मी ब्राह्मण जाति की ब्राह्मी से कठोर, देर से पचने वाली, तीक्ष्ण क्रिया करने वाली, तीव्र गुणों को धारण करने वाली है।

ब्राह्मी का पौधा

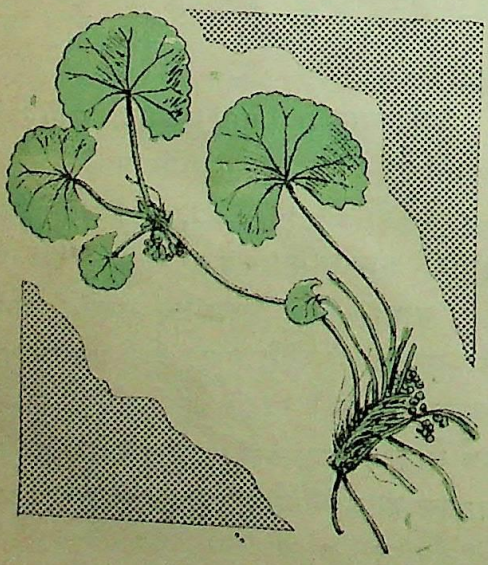

ब्राह्मी की अनुसन्धानात्मक गाथा

के. सी. ने बोस एवं एन. के. बोस १९३१ में, एम. ए. वाली एवं एम. सी. तुमिन-कट्टी ने १९३७ में, डी. एन. चक्रवर्ती ने १९४० में, नित्येन्द्रनाथ सरकार ने १९४१ में तथा पी. पी. लामसल और जी. बी. सिंह ने १९४७ में ब्राह्मी के रासायनिक विश्लेषणों पर कार्य किया और उन्होंने ब्राह्मीन (brahmine) नामक एक विषैला उपक्षार प्राप्त किया जो कुचले में पाये जाने वाले स्ट्राइशनीन (strychinine) से मिलता-जुलता है। उन्होंने इस उपक्षार का अध्ययन किया और इसे अत्यन्त तीव्र विषैला पाया। इसकी बहुत थोड़ी मात्रा ने मेंढक को १० मिनट में, चूहे को २४ घण्टे में मार डाला। इसकी बहुत थोड़ी मात्रा शरीर के रक्तभार को न्यून करती है और हृदय की पेशियों को बल देती है। श्वास क्रिया संस्थान और छोटी आंतों को इसकी सूक्ष्म मात्रा उत्तेजित करती है।

बोस ने इसके सूखे पत्तों के पाउडर का बहुत सफलता के साथ हृदय क्रिया की दुर्बलता, मानसिक कमजोरी एवं दूसरी दुर्बलताओं पर प्रयोग किया। उनके अनुसार ब्राह्मीन में कई विशेषताएं भी हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषताएं

१. यह स्ट्राइशनीन के बराबर विषैला नहीं होता है।

२. स्ट्राइशनीन के लम्बे अरसे के इस्तेमाल से जो प्रतिक्रियाएं (विषाक्तता) एवं प्रदाह उत्पन्न होते हैं वे ब्राह्मीन से नहीं होते हैं।

३. ब्राह्मीन हृदय के ऊपर सीधा पौष्टिक प्रभाव डालती है जब कि स्ट्राइशनीन हृदय के ऊपर गौण रूप से उत्तेजक प्रभाव डालती है।

ब्राह्मी का रासायनिक विश्लेषण

(१) हाइड्रोकोटाइलीन (hydrocotyline)

(२) एसियाटिकोसाइड(asiaticoside)

(३) ब्रह्मीन (brahmine)

(४) उड़नशील तैल (volatile oil)

(५) भस्म (ashes)

(६) राल (resins)

(७) वसामय सुगंधित अवयव (fatty scented contents)

(८) निर्यास (exudate)

(९) शर्करा (glucoside)

(१०) कषाय द्रव्य(bitter substances)

(११) ओजोमय (albumin)

(१२) लवण (salts)

ब्राह्मी और उसके गुणकर्म

(१) रस—तिक्त

(२) अनुरस—कषाय मधुर

(३) गुण—लघु सर

(४) वीर्य—शीत

(५) विपाक—मधुर

(६) प्रभाव—मेध्य

(७) कर्म—मेध्य, स्मरणशक्ति-वर्धक, वर्ण्य, रसायन, आयुष्य, कण्ठघ्न, प्रमेहघ्न, विषघ्न, रक्तशोधक, कफघ्न, ज्वरघ्न, हृद्य, बल्य, बाजीकरण, मूत्रल, उन्माद, अपस्मार, हिस्टीरियाआदि व्याधियों को शान्त करती है।

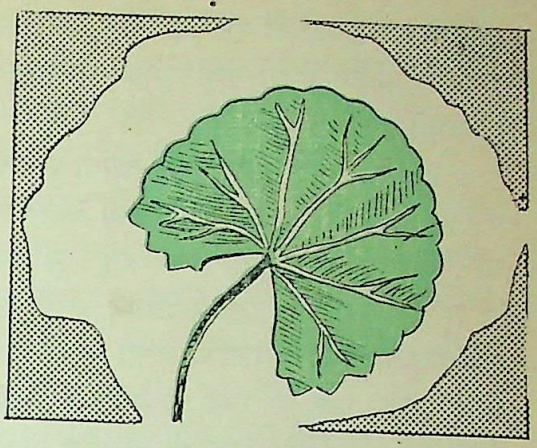

ब्राह्मी का सात शिराओं वाला पत्र

ब्राह्मी और विभिन्न रोग

सन्धि वात रोग में ब्राह्मी के पत्तों के रस को समभाग पेट्रोल में मिलाकर मालिश करने से सन्धि वात में लाभ होता है। सर्पदंश में इसके पंचांग (पत्र, मूल, फल, फूल एवं बीज) स्वरस या कल्क (लुगदी) को सर्पदंश पर लगाते हैं तथा खाने के लिए देते हैं। निद्रानाश में ब्राह्मी के दस-पन्द्रह पत्र पानी से धोकर गाय के डेढ़ पाव कच्चे दूध में अच्छी तरह घोटकर, छानकर एक सप्ताह तक सेवन करने से पुराने से पुराने निद्रानाश रोग में लाभ होता है। ज्वर में ब्राह्मी के १ से २ तोला रस में शुण्ठि चूर्ण १ से २ माशा मिलाकर देते हैं अथवा ब्राह्मी चूर्ण १ से २ माशा मधु या दूध से सेवन कराते हैं।

श्वास (दमा) में डा. के. सी. बोस ने ब्राह्मी चूर्ण की १ से २ माशा की मात्रा मधु के साथ दमे के रोगियों को दी एवं सन्तोषजनक लाभ पाया। खांसी एवं बलगम में ब्राह्मी का पंचाग उबालकर पुलटिश की शक्ल में रोगी की छाती पर फैलाकर रख देते हैं। ऐसा दिन में तीन बार करने से रोगी को शीघ्र ही लाभ होता है। बच्चों के अतिसार में ब्राह्मी का रस आधे से डेढ़ तोला रोगी के बल के अनुसार पीने के लिए दिया जाता है। फोड़े-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फुंसियों पर ब्राह्मी के रस या कल्क का लेप करने से फोड़े-फुंसियां तथा उनकी सूजन दूर हो जाती है।

डा. के. एम. नादकर्णी ने अपनी पुस्तक में उपदंश की द्वितीय एवं तृतीय अवस्था की चिकित्सा में ब्राह्मी सेवन का उल्लेख किया है। कष्टार्तव एवं नष्टार्तव में जिस स्त्री का मासिक धर्म अल्प मात्रा में कष्ट से आता हो या बिलकुल बन्द हो गया हो, ऐसी अवस्था में ब्राह्मी के कल्क को गर्भाशय ग्रीवा (cervix) में धारण कराते हैं तथा दिन में दो बार ब्राह्मी क्वाथ ४ से १० तोला पीने को देते हैं। सिर दर्द में चन्दन के लेप की तरह ब्राह्मी रस या कल्क का लेप कराते हैं। आवश्यकता पड़ने पर रस को पिलाते भी हैं। यदि कान में दर्द हो, तो ब्राह्मी के रस की एक से तीन बूंद कान में टपकाते हैं। आंख दर्द में रात में सोते समय ब्राह्मी का कल्क पलकों पर रखकर पट्टी बांधकर सो जाते हैं। प्रातः उठकर आंखें धो डालते हैं, दर्द शान्त हो जाता है। जुकाम में ब्राह्मी क्वाथ या ब्राह्मी शर्बत ४ से ६ तोला की मात्रा में लेना लाभकारी होता है। प्रमेह (disease of urogenital system) में ब्राह्मी चूर्ण, बबूल का गोंद, मिश्री, तीनों बराबर-बराबर लेकर घी में भूनकर ४ से ८ माशा की मात्रा में दूध से दिन में दो बार लेते हैं। इससे २० प्रकार के प्रमेह दूर होते हैं। प्रदर में ब्राह्मी का चूर्ण १ तोला, प्रवाल भस्म ½ तोला मिलाकर रख लेते हैं। इसकी ४ से ६ रत्ती की मात्रा को खमीरा गाजमा के साथ सेवन कराते हैं।

ब्राह्मी के एक फल में एक बीज होता है

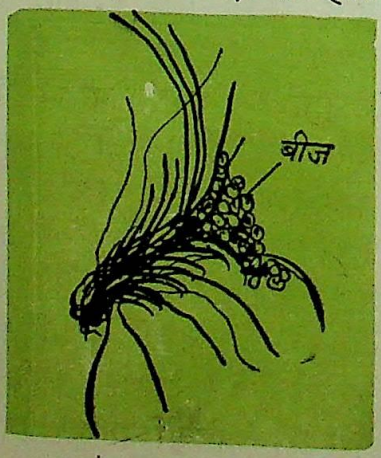

पैर में या अण्डकोष में श्लीपद हो, तो ब्राह्मी का मलहम (ointment) या रस का लेप करते हैं। यदि ज्वर हो, तो ब्राह्मी का रस दस बूंद पीने के लिए देते हैं। उन्माद में ब्राह्मी के घृत का सेवन कराते हैं। ब्राह्मी के रस या क्वाथ को १ तोला लेकर रसपर्पटी २ रत्ती मिलाकर देने से अपस्मार (epilepsy) में लाभ होता है। स्मरणशक्ति बढ़ाने के लिए ब्राह्मी पाक का दुग्ध से सेवन करते हैं, या ब्राह्मी शर्बत को जल में मिलाकर पीते हैं या ब्राह्मी के चूर्ण को समभाग मिश्री मिलाकर दूध से लेते हैं।

ब्राह्मी एवं कुछ प्रामाणिक योग

ब्राह्मी स्वरस :

घटक—१. मुख्य द्रव्य—ब्राह्मी पंचांग। २. सहायक द्रव्य—(अ) कुठ चूर्ण, (आ) मधु।

निर्माण विधि—चार तोले ब्राह्मी रस में, दो माशे कुठ चूर्ण तथा एक तोला शहद मिला लें।

मात्रा—दो तोला।

गुणकर्म—यह योग हर प्रकार के उन्माद (पागलपन) को दूर करता है।

ग्रन्थ प्रमाण—शार्ङ्धर संहिता

ब्राह्मीवटी :

घटक—१. मुख्य द्रव्य—ब्राह्मी पंचांग—५ तोला। २. सहायक द्रव्य—

(अ) स्वर्ण सिन्दूर २ तोला, (आ) वंग भस्म १ तोला, (इ) शुद्ध शिलाजीत १ तोला, (ई) मिरचें (गोल) १ तोला, (उ) पीपल १ तोला, (ऊ) वाय विडंग १ तोला, (ए) शुद्ध कस्तूरी तोला।

भावनार्थ द्रव्य—ब्राह्मी स्वरस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्माण-विधि—उपरोक्त सभी द्रव्यों को खरल में डालकर भावनार्थ द्रव्य के साथ घोटा जाता है। तत्पश्चात् दो-दो रत्ती प्रमाण की गोलियां बना ली जाती हैं।

गुण कर्म—यह ब्राह्मीवटी बुखार के बाद की दुर्बलता, जीर्ण ज्वर, दिल एवं दिमाग की कमजोरी, प्रसूति ज्वर, मंथर ज्वर तथा प्रलापक ज्वर में लाभ करती है।

मात्रा—१ से २ गोली शीतल जल अथवा दूध से लें।

ग्रन्थ प्रमाण—भैषज्य रत्नावली।

ब्राह्मी पाक :

घटक—१. मुख्य द्रव्य—ब्राह्मी कल्क १ पाव।

२. सहायक द्रव्य—

(अ) दूध ४ सेर, (आ) घी १ सेर, (इ) शक्कर ३½ पाव।

३. प्रक्षेपणार्थ द्रव्य—(क) बादाम गिरी १½ छटांक, (ख) किशमिश १½ छटांक, (ग) पिस्ता १½ छटांक, (घ) नारियल चूर्ण १½ छटांक।

निर्माण विधि—सर्वप्रथम ब्राह्मी पंचांग को पीसकर टूथपेस्ट की तरह कल्क बना लेते हैं। फिर दूध को कढ़ाई में रखकर गरम करते हैं। जब शहद की तरह गाढ़ा होने लगे, तो ब्राह्मी कल्क डालकर पलटे से हिलाते रहते हैं। ब्राह्मी के सिंकने की गंध आने लगे, तो उसमें घी तथा शक्कर डाल देते हैं। उतारने से ५ मिनट पूर्व प्रक्षेपणार्थ द्रव्य डालकर बर्फी की तरह या अण्डे की भुर्जी की तरह इसे बनाकर सेवन करते हैं।

सेवन मात्रा : एक से दो तोला दूध से।

गुण कर्म : यह रसायनों में सर्वश्रेष्ठ रसायन है। शक्तिशाली बाजीकरण है। मस्तिष्क के अनेक विकारों को दूर करते हुए यह बुद्धि, धृति, स्मृति एवं स्मरणशक्ति-वर्धक गुणों से युक्त है।

ग्रन्थ प्रमाण : स्वानुभूत योग।

ब्राह्मी के निम्न योग बाजार में प्राप्य हैं : ब्राह्मीवटी, सारस्वत चूर्ण, ब्राह्मरसायन, ब्राह्मी तैल, सारस्वतारिष्ट, ब्राह्मी घृत, ब्राह्मी पाक और ब्राह्मी शर्बत।

ब्राह्मी के विषय में गलत धारणाएं

कुछ लोगों का मिथ्या भ्रम है कि ब्राह्मी के योगों का सेवन जलधारा (बहते हुए जल, नदी-नाला इत्यादि में) एक टांग के सहारे खड़े होकर तथा मन्त्रों को पढ़ते हुए करना चाहिये, अन्यथा वयन, विरेचन, कष्ठ, प्रमेह, नेत्रशक्तिह्रास आदि कोई भी रोग हो सकता है। वे यह भी कहते हैं कि जो मनुष्य उक्त विधानपूर्वक ब्राह्मी का सेवन नहीं करते हैं, उनसे ब्रह्माजी नाराज हो जाते हैं, तथा प्रकुपित होकर श्राप दे देते हैं, जिससे मृत्यु तक हो सकती है।

गलत अथवा ठीक, किसी भी प्रकार की मन में धारणा कर लेने से मनोविज्ञान की दृष्टि से उपरोक्त धारणा के अनुसार लाभ अथवा हानि हो सकती है, किन्तु चिकित्सा-विज्ञान या रसायन-विज्ञान (विश्लेषणात्मक क्रिया) के आधार पर यह बात बिलकुल निराधार है। ब्राह्मी का सेवन कभी भी, कहीं भी, किसी भी अवस्था में किया जा सकता है। स्थान भेद से ब्राह्मी के सेवन में ब्राह्मी के क्रियाशील तत्त्व बदल जायें या शरीर-क्रिया-विज्ञान (physiology) और द्रव्य-गुण-विज्ञान (pharmacology) के सिद्धान्तों में परिवर्तन हो जाय, यह बात सम्भव नहीं है। अतएव रूढ़िवादियों का मिथ्या भ्रम विज्ञान के प्रकाश में अधिक समय तक नहीं टिक सकता।

ब्राह्मी और उसके दुष्य प्रभाव

ब्राह्मी के रासायनिक विश्लेषणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ब्राह्मी में क्रियाशील ब्राह्मीन (brahmine) पायी जाती है। अतः ब्राह्मी को यदि क्रमबद्धता से अधिक समय तक सेवन किया जाय, तो ब्राह्मीन शरीर पर अपना प्रभाव गुणों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के विपरीत डाल सकती है।

ब्राह्मी का लगातार सेवन करने से भांग, अफीम या शराब की तरह से ब्राह्मी का आदी (habitual) तो कोई नहीं बनता, किन्तु शरीर पर विपरीत क्रिया अवश्य करती है। ब्राह्मी रक्त-चाप को न्यून कर देती है। ब्राह्मी मस्तिष्क के तन्तुओं को आवश्यकता से अधिक उत्तेजित कर सकती है और परिणामस्वरूप मनुष्य में मस्तिष्कगत नाना प्रकार के मानसिक रोग उत्पन्न हो सकते हैं—(१) सिर में दर्द, (२) सिर में चक्कर आना, (३) जी मिचलाना, (४) वमन (उल्टी होना), (५) अतिसार (diarrhoea), (६) सन्थास, (७) उन्माद, (८) हिस्टीरिया आदि।

उपरोक्त रोगों से बचने के लिए यह आवश्यक है कि प्रति दो मास के बाद ब्राह्मी का सेवन एक मास तक बन्द कर दिया जाय।

ब्राह्मी में नाड़ी-मण्डल को बल देने वाले गुणों की अधिकता होने के कारण फ्रान्स तथा अल्जीरिया की सरकार ने इसकी खेती प्रारम्भ करा दी है। लंका के निवासी इस वनोषधि को ईश्वरीय वरदान समझते हैं। उनका विश्वास है कि वहां के जंगली हाथियों में सैकड़ों वर्ष तक पुजनोत्पत्ति करने की शक्ति रहती है जिसका प्रधान कारण यही ब्राह्मी है। वे जंगलों में इस वनोषधि को खूब खाते हैं। ●

ग्राहकों से निवेदन

विज्ञान-लोक की एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे है। एक वर्ष का शुल्क ९ रुपये, दो वर्ष का १६ रुपये तथा तीन वर्ष का २० रुपये (विशेष रियायत) है।

पत्र-व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें। विज्ञान-लोक जिस लिफाफे में आपके पास आता है, उसी पर आपकी ग्राहक संख्या आपके पते के ऊपर लिखी रहती है।

पता बदलने की सूचना हमें एक मास पूर्व प्राप्त होनी चाहिये। इसके लिए नया और पुराना, दोनों पते भेजें। यदि छह मास से कम के लिए पता बदलवाना हो, तो कृपया अपने डाकखाने से इसकी व्यवस्था कर लें।

नये ग्राहकों को मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा किस अंक से विज्ञान-लोक भेजा जाय, यह अवश्य लिखना चाहिये।

पुराने ग्राहक अपनी सदस्यता का नवीयन (renewal) कराते समय मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा ग्राहक संख्या लिखने की कृपा करें।

विक्रय-व्यवस्थापक * विज्ञान-लोक * हास्पिटल रोड, आगरा—३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

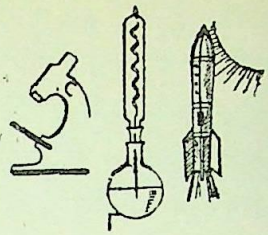

मृत्यु : एक आकस्मिक बात

विश्व प्रसिद्ध जीव-विज्ञानविद् वी. कुप्रियेविच का मत है कि मृत्यु एक आकस्मिक बात है। यह आवश्यक नहीं कि किसी जीवधारी की मृत्यु हो ही।

उनका मत है कि जीव-विज्ञानविदों का मुख्य कार्य है बुढ़ापे की प्रक्रिया का अध्ययन करना। जिस क्षण वैज्ञानिकों को इस प्रक्रिया का ज्ञान हो जायेगा, वे इस पर काबू पा लेंगे। वी. कुप्रियेविच के इस विश्वास का आधार चयापचय क्रिया का अध्ययन है। तन्तुओं, अंगों और स्नायु-प्रणाली को फिर से 'नया' बनाने वाली दवा इनसान को हजारों वर्ष तक जिन्दा रखेगी। सबसे प्रमुख आवश्यकता है कि स्नायु तन्तु 'नये' किये जायें। उन्होंने कहा कि अवश्य ही कैंसर का कारण स्नायु-प्रणाली में निहित है।

मानव-निर्मित भूगर्भ नदी का डिजाइन

उस्त-उर्त के पठार और कजाखस्तान की स्वेपी से होकर गुजरने वाली मानव-निर्मित भूगर्भ नदी का डिजाइन बनकर तैयार हो गया है। यह पानी पहुंचाने की बहुत बड़ी प्रणाली होगी जिसकी लम्बाई करीब ८०० किलोमीटर होगी। आमू दरिया और यूराल नदी से मुख्य प्रणाली निकाली जायेगी।

दन्तक्षय रोका जा सकता है

मियामी (न्यूयार्क) यूनिवर्सिटी के अनुसन्धानकर्त्ताओं ने पता लगाया है कि दांतों में सड़न और क्षय की बीमारी पैत्रिक बीमारी नहीं है, बल्कि छूत का रोग है। यह रोग अधिक चीनी और ऐसे पदार्थ खाने से होता है जिसमें इस बीमारी के जीवाणु होते हैं। ये जीवाणु छूत से एक व्यक्ति के पास से दूसरे व्यक्ति तक पहुंचते रहते हैं।

शल्यक्रिया, या शल्यक्रिया नहीं ?

यदि पिन या इसी तरह की कोई अपाच्य वस्तु मुंह के रास्ते शरीर के अन्दर चली जाय, तो साधारणतः यह सम्भव नहीं लगता कि शल्यक्रिया के बिना उसे बाहर निकाला जाय। लेकिन सोवियत डाक्टर एम. ए. मिखाइलोव ने यह सम्भव कर दिया है। उनके पास एक युवती पहुंची जिसने भूल से पिन निगल ली थी। पिन ग्रास नली में अटक गयी थी। डाक्टर ने एक खाली विद्युत-प्रकाश नली रोगी के मुंह में डालकर विशिष्ट चिमटी द्वारा पिन को बाहर खींच लिया।

डाक्टर मिखाइलोव जिस अस्पताल में काम करते हैं, वहां ऐसे बच्चे अक्सर आते हैं जो बटन, सिक्के आदि भूल से निगल जाते हैं। लेकिन चिकित्सा की इस विशिष्ट पद्धति के कारण उन्हें जरा भी तकलीफ नहीं पहुंचती।

मशीन सिनेमा देखती है

लतविया के एक आप्टिकल इंजीनियरिंग कारखाने में ऐसी मशीन का निर्माण हुआ है जो ग्राफ के रूप में सूचना पढ़कर बाद में अन्तर्राष्ट्रीय तार की भाषा में उसी सूचना को टेप कर देती है।

विश्वास किया जाता है कि यह मशीन तकनीकी रूपरेखा बनाने में सहायक हो सकती है। यह तकनीकी गतिविधियों का विश्लेषण कर सकती है और ओषधि-सम्बन्धी शोध-कार्य में मदद दे सकती है। यह मशीन ग्राफिक सूचनाएं पढ़ सकती है तथा सिनेमा की फिल्में देख सकती है।

प्रकाश सुरंग बनाता है

प्रसिद्ध रूसी भौतिकशास्त्री निकोलीई पिलिपेत्स्की का मत हैं कि लेसर किरण की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहायता से प्रकाश किसी भी पदार्थ में तागे की तरह की सुरंग बना सकता है। यह सुरंग केवल रास्ता ही नहीं होती, उसमें लेसर किरण भी विद्यमान रहती है। ऐसी सुरंग के चित्र लिये जा चुके हैं और उनके अध्ययन से पता चला है कि सुरंग के केन्द्र में एक अति क्षीण किन्तु बहुत ही स्पष्ट किरण मौजूद रहती है।

अनोखी टरबाइन

इस्राएल में टरबाइन बनाने वाली एक कम्पनी ने नये किस्म की टरबाइन तैयार की है। यह पेट्रोल, गैस, तेल, लकड़ी, रेडियो-सक्रिय आइसोटोपों, जमीन की गरमी और सूर्य की गरमी से बिजली पैदा कर सकती है। यह टरबाइन रेगिस्तान, ध्रुव क्षेत्रों तथा अफ्रीका के दूरस्थ बसे गावों आदि के लिए बड़ी उपयोगी सिद्ध होगी। योजना के अनुसार पहले दो वर्षों में इस टरबाइन की विभिन्न आकार की बारह यूनिटें तैयार की जायेंगी।

नये किस्म के मकान : पाषाण युग की ओर

आवास की समस्या को हल करने के लिए पश्चिम जरमनी में जो परीक्षण किया गया, उसने लोगों को बहुत अधिक प्रभावित किया है, पर कुछ लोगों ने उसकी आलोचना भी की है। इस नये प्रोजेक्ट का नाम है लिविंग हिल्स। यह नये प्रकार की भवन निर्माण कला है। ७५,००० की जनसंख्या वाले मार्ल हिल्स नगर में इस शिल्प के प्रति कई देशों के लोग आकर्षित हुए। इस नगर के लिविंग हिल में ४६ घर हैं जो सभी टेरेस की शक्ल वाले भवन के रूप में बनाये गये हैं। इस प्रोजेक्ट के आलोचकों ने इसे पाषाण युग का अनुकरण बताया है। लेकिन प्रशंसकों का कथन है कि इस प्रोजेक्ट से भावी पीढ़ियों को आवास की समस्या हल करने में सुविधा होगी। इसमें कमरे इस ढंग से बनाये गये हैं कि सभी कमरों में सूर्य की किरणें चमकती हैं। लेकिन कोई भी पड़ोसी दायीं-बायीं या ऊपर-नीचे की खिड़की से अन्दर नहीं देख सकता। इमारतों के नीचे भी जगह है। पुराने ढंग के एक सामान्य मकान का खर्च ३०० डालर प्रति-वर्ग मीटर पड़ता है लेकिन चार मंजिले लिविंग हिल का मूल्य एक तिहाई कम बैठता है, यानी २०० डालर। ये मकान बाद में बड़े पैमाने पर बनाये जा सकते हैं। ऐसे मकान में ग्राउण्ड फ्लोर में दूकानें भी होंगी। ●

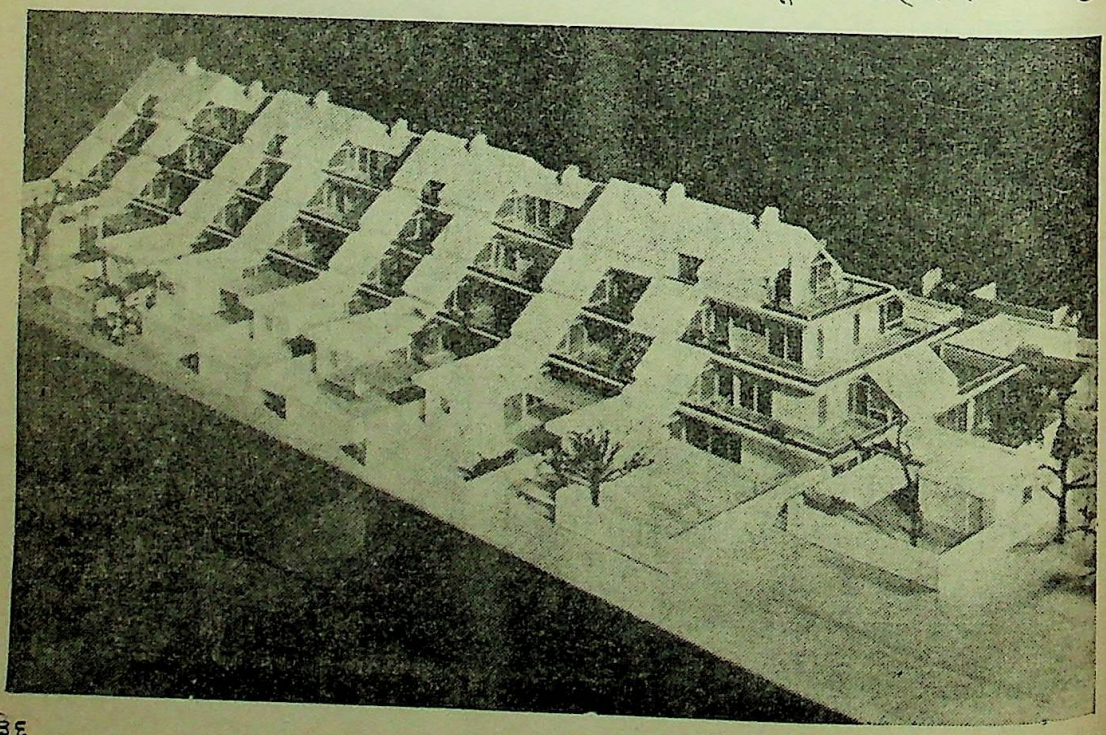

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन भौतिक आधार का संरचनात्मक सिद्धान्त

सर पिटर मेडावार

मेरी पीढ़ी के जीव-विज्ञानवेत्ता विकास के वंशगत सिद्धान्त में विश्वास करते रहे हैं। डार्विनवाद की पुनर्स्थापना द्वारा अक्षम घोषित किये जाने के बाद भी इस वंशगत सिद्धान्त ने हमारे विचारों को प्रभावित किया। विकास-क्रम-सम्बन्धी परिवर्तनों का विषय अब हम 'आबादी' के रूप में जानते हैं, वंश-वृक्ष के रूप में नहीं। विकास-क्रम आबादी की प्रजनन रचना में निरपेक्ष परिवर्तन था; प्राकृतिक छंटाव का इस कार्य में महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा।

किन्तु जो वंशगत सिद्धान्त के अनुयायी थे उनकी यह धारणा बनी कि यह सही है कि विकास-क्रम की स्थापना और कुछ नहीं, एक नये प्रकार का आनुवंशिक रूप है—एक नये प्रकार का आनुवंशिक सूत्र जो उस समय अत्यधिक लोकप्रिय था।

विकास-क्रम लगातार सक्रिय है

ये विचार आजकल पीछे पड़ गये हैं, और मुख्य रूप से आनुभविक खोजों के कारण कि प्राकृतिक 'आबादियां' बहुत विषम हैं। आज विकास-प्रक्रिया के सम्बन्ध में यह सोचना सम्भव नहीं है कि वह एक नये प्रकार का आनुवंशिक रूप है या एक नये प्रकार का जीव इस सूत्र के आधार पर अस्तित्व में आता है। विकास-क्रम लगातार सक्रिय है और किसी 'आबादी' की आनुवंशिक रचना प्रखर रूप से, गतिशील रूप से प्रोत्साहित है।

फिर भी विकास-क्रम का कोई आपेक्षित सन्दर्भ हमारे पास नहीं है, उदाहरणार्थ प्राणी जीवित रहने की समस्या को बहुत ही उलझन-पूर्ण तरीकों से हल कर लेते हैं। जीव-विज्ञान की नयी शब्दावली के अनुसार यह एक आण्विक (molecular) समस्या है, क्योंकि इसकी कार्य-विधि इस ज्ञान पर निर्भर करती है कि कैसे भौतिक-रासायनिक गुणों, क्रोमोजोम के स्वभाव अपने को विकास के अनुरूप कर लेते हैं। इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी की सहायता से यह ज्ञात हुआ है कि कोष में परतें, नलियां, थैलियां तथा अन्य छोटे-छोटे अंग होते हैं। उनका निश्चित और ठोस आकार होता है पर लगते ऐसे हैं कि केवल आकार के कारण ही दूसरे कोषों से भिन्न हैं। फिर भी आण्विक और स्थितिगत रचना में विशेष अन्तर नहीं है। संक्षेप में यह कि कोष का नियमन संरचनात्मक या स्फटकीय नियमन है। जीवन के भौतिक आधार का संरचनात्मक सिद्धान्त आधुनिक जीव-विज्ञान में सबसे बड़ी क्रान्ति है।

बाह्य उत्तेजना : एक सूत्र

१९३० में प्रायोगिक भ्रूण-विज्ञान इतना ही विकसित था जितना आज का जीव-विज्ञान;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

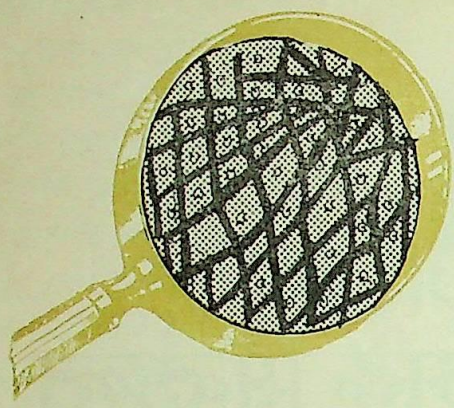

कोषों का निश्चित और ठोस आकार होता है

विद्यार्थियों को लगता था कि जीव-विज्ञान के अन्वेषणों का इससे विकास हो रहा है। हम साधारणतः समझ सकते हैं कि भ्रूण-विज्ञान ने आनुवंशिक विवेक का विकास नहीं किया, जिसकी सहायता से विकास का सिद्धान्त सामने आ सकता। आज यह विश्वसनीय नहीं है कि एक संस्थान के बाहर जिस पर उत्तेजना क्रिया करती है, प्रोटीन की प्रमुख संरचना को बता सके, यानी यह सूचना दे सके कि अमीनो अम्ल निर्देश के अनुसार एकत्र होंगे।

आण्विक विभेद के स्तर तक भ्रूण-सम्बन्धी विकास पूर्व की समर्थता को स्पष्ट करते हैं। बाह्य उत्तेजना वह सूत्र है जो यह चुनता है या सूचना को कार्य में परिणित करता है।

१९३० में जन्तु के स्वभाव का अध्ययन कुण्ठित करने वाला था। २० वर्ष के बाद ही कुण्ठा मिट गयी। १९३० में हम लोगों को यह नहीं ज्ञात हो पाया था कि क्या वैज्ञानिक विधि से स्वभाव का अध्ययन किया जा सकता है, सिवाय इसके कि कुछ प्रयोगों द्वारा या जन्तु को एक स्थिति में रखकर या एक उत्तेजना रिकार्ड करके कि इसके बाद जन्तु ने क्या किया। उस समय स्थिति में परिवर्तन होता था, जो उचित था, और इस तरह जन्तु के व्यवहार में अवश्य परिवर्तन होता था। किसी जन्तु को देखते रहने की अपेक्षा यह जरूरी था कि उसे हांका जाता। इससे कोई परिणाम तो निकलता। पक्षियों का अध्ययन करने वाले यही किया करते थे।

'बेकन की शैली' में प्रयोग

और यह भी जानना प्रासंगिक है कि जववासिकी के विद्वानों ने क्या किया। उन्होंने जन्तुओं के प्राकृतिक व्यवहार का अध्ययन किया। इस तरह वे प्राकृतिक व्यवहार संरचना के सम्बन्ध में बता सके। तभी कृत्रिम व्यवहार के सम्बन्ध में कुछ जान पाना सम्भव हुआ।

जन्तुओं के व्यवहार के अध्ययन का इतिहास 'बेकन की शैली' में प्रयोग करने की असफलताएं बताता है, यानी कृत्रिम अनुभव से हमारे आनुभविक ज्ञान की वृद्धि होती है किन्तु प्रमुख सिद्धान्त-आधार या पूर्व धारणा हाथ नहीं लगती। ●

कपड़ा : जादू

पश्चिम जरमनी के फैशन विशेषज्ञों ने एक नये किस्म का कपड़ा तैयार किया है। पोशाक के शौकीन इसकी ओर आकर्षित हुए हैं। इस कपड़े का विकास एक रसायन फर्म ने किया है। देखने में यह बकरे के नरम और लचीले चमड़े-जैसा लगता है। इस पर पानी और हवा का असर नहीं होता। तेल के दाग भी नहीं पड़ते। इसे आसानी से सी सकते हैं और धोकर लोहा कर सकते हैं। इसे कई फैशनेबल रंगों में रंगा भी जा सकता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि यह खर्चीला जरा भी नहीं है।

ज्ञातव्य है कि अमरीका और फ्रांस में इससे पूर्व कांच, लकड़ी और दूध के कपड़ों का प्रचलन हो चुका है। यह नये किस्म का कपड़ा पहले से प्रचलित सभी कपड़ों से अनोखा है—जादुई कपड़े-सा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

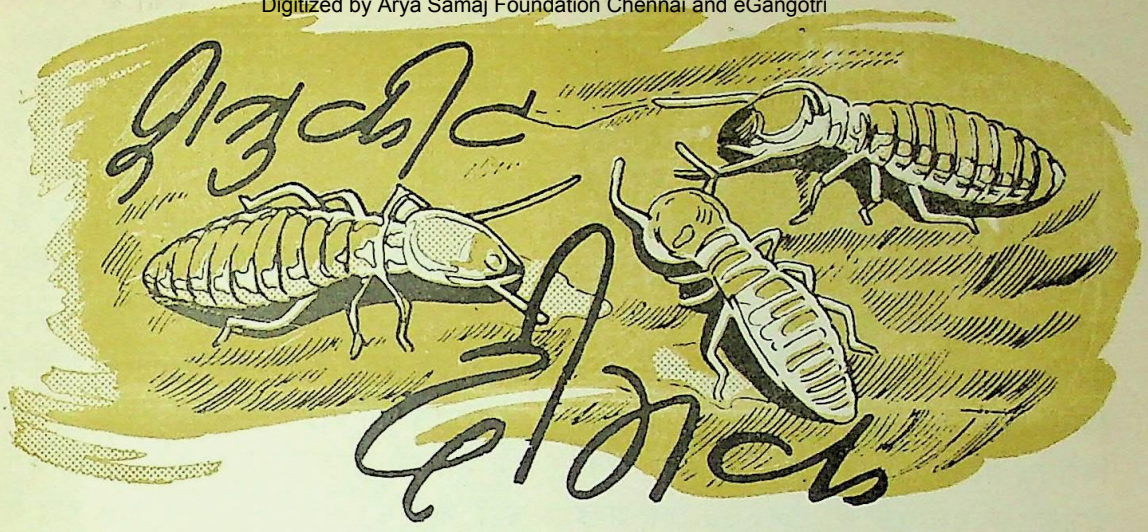

वीरेन्द्रनाथ सिंह, एम. एस-सी.

रक्षक और श्रमिक दीमकें नवजात अथवा नपुंसक जातियों के अन्तर्गत आती हैं। ये पंखहीन तथा अन्धी होती हैं। सदा प्रकाश और जलयुक्त वातावरण से दूर रहने की कोशिश करती हैं। यद्यपि ये नर-मादा होती हैं, परन्तु इनके अन्दर प्रजनन-क्रियाशीलता नहीं होती।

श्रमिक दीमक

इसका शरीर लगभग ·३ इंच लम्बा तथा कोमल होता है। रंग मटमैला-सफेद तथा सिर का भाग सुनहला चमकीला होता है। दीमकों के समूह में इसकी संख्या लगभग ८०-९० प्रतिशत तक होती है। आंखों से नीचे दो जबड़े होते हैं। जबड़ों में शूल के समान दो चिबुकास्थियां होती हैं। साधारणतः इस प्रकार का मुंह काटकर खाने वाला मुंह कहलाता है। इसी मुंह की सहायता से यह श्रमिक दीमक एक स्थान से दूसरे स्थान को पहुंचने के लिए रास्ता बनाती है, मिट्टी एकत्र करती है तथा रानी दीमक के अण्डे ढोती है। समूचे दीमक परिवार में श्रमिक दीमक ही पेड़-पौधों तथा अन्य वस्तुओं को काटकर नष्ट कर देती है। दीमकों के समूह में केवल यही जाति ऐसी है जो मानव संसार के लिए सबसे अधिक हानिकारक है।

रक्षक दीमक

यह श्रमिक दीमक से कुछ बड़ी आर बलवान होती है। इसके सिर का भाग गाढ़े कत्थई रंग का तथा जबड़े बहुत तेज होते हैं। दीमकों के समूह में इसकी संख्या २-३ प्रतिशत तक होती है। रक्षक दीमक दो प्रकार की होती है—एक बड़ी तथा बलवान जबड़े वाली या मैण्डीबुलेट टाइप (mandibulate type) तथा दूसरी सूंडवाली या नसूटी टाइप (nasuti type) जिसके सिर से एक विशेष प्रकार की सीधी, लम्बी सूंड निकली होती है। इसमें जबड़े बड़े होते हैं। दोनों प्रकार की रक्षक दीमकें अपने परिवार तथा समूह की रक्षा करती हैं। मैण्डीबुलेट टाइप दीमकें अपने जबड़े द्वारा रक्षा करती हैं तथा कभी-कभी एक विशेष प्रकार का स्राव भी करती हैं जिससे आक्रमणकारी दूर भाग जाता है। नसूटी टाइप रक्षक दीमकें अपने छत्ते या बमीठा के रास्ते को, अपने लम्बी सूंड वाले सिर से बन्द कर देती हैं। इस तरह बाहरी आक्रमण के समय अन्य दीमक-भक्षी कीटों या जन्तुओं से दीमक परिवार की रक्षा हो जाती है।

रानी दीमक

दीमकों के समूह में प्रायः केवल एक ही रानी दीमक होती है। प्रारम्भ में यह .७ इंच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लम्बी होती है परन्तु धीरे-धीरे यह १·५–३ इंच तक लम्बी हो जाती है। कुछ कीट विशेषज्ञों का अनुभव है कि यह कभी-कभी ५-६ इंच तक लम्बी हो जाती है। इसकी आयु ७-८ वर्ष तक हो सकती है। पूरी आयु की रानी दीमक का सिर का भाग बहुत ही छोटा परन्तु धड़ का भाग बहुत लम्बा-चौड़ा दिखायी पड़ता है, क्योंकि उसमें असंख्य अण्डे भरे रहते हैं। इसका एक मात्र कार्य अण्डे देना है। कीट विशेषज्ञ पटेल का अनुमान है कि एक रानी दीमक के गर्भाशय में ४८,००० तक अण्डे पाये गये हैं। रानी दीमक बहुधा भूमि के भीतर के छत्ते में बने एक विशेष कक्ष में गतिशून्य पड़ी रहती है। इसके कक्ष के पास गोमज (फफूंदी) तथा काई से भरा एक छोटा-सा उपवन होता है। इसी कक्ष में श्रमिक दीमकों द्वारा अण्डे सेये जाते हैं। भूमि के भीतर बने इस पूरे निवासस्थान को दीमक का छत्ता कहते हैं।

राजा दीमक

प्रजनन क्रिया में सहायता पहुंचाने के लिए रानी दीमक के पास केवल एक राजा दीमक होती है। दीमक के समूह की रक्षा, किसी प्रकार के श्रम से इसका कोई प्रयोजन नहीं होता।

बढ़े हुए आकार की रानी दीमक अपने अण्डों तथा सैनिक व श्रमिक दीमकों के साथ—(१) सैनिक दीमक, (२) रानी दीमक, (३) श्रमिक दीमक और (४) अण्डे

उपरोक्त चार प्रकार की दीमकों के अतिरिक्त भी कुछ पंखधारी दीमकें भूमि के भीतर बने छत्ते में रहती हैं। ये विशेष प्रकार की दीमकें होती हैं। इन्हें दीमकों की प्रजनन क्रियाशील जातियों में गिना जाता है। इनका रंग भूसे की तरह या भूरा-सफेद होता है। वर्षा ऋतु की पहली झड़ी के बाद रात में बहुधा इन्हें प्रकाश की तरफ उड़ते पाया जाता है। इनकी लम्बाई १-१·३ इंच तक होती है। इनके पंखों की नसें (venation) पूर्ण रूप से विकसित नहीं होतीं, परन्तु सामान्य रूप से पायी जाने वाली पंखधारी दीमकों के पंख में नसें अधिक विकसित होती हैं।

दीमक की जीवनी

बहुधा यह देखा गया है कि वर्ष में एक बार वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में गरम और नमी-युक्त वातावरण में भविष्य की राजा और रानी दीमकें अपनी जन्मभूमि का निवास-स्थान छोड़ देती हैं तथा रात में अधिक संख्या में प्रकाश की ओर उड़ती हैं। कुछ लोगों का कथन है कि ऐसा कभी-कभी दिन में भी होता है। इस विशेष प्रकार की उड़ान को 'वैवाहिक उड़ान' कहते हैं। कुछ देर उड़ने के बाद इनके पंख एक स्थान से टूटकर गिर जाते हैं। तदुपरान्त ही ये सहवास में प्रवृत्त होती हैं। इनकी अवस्था इस समय लगभग बीस माह होती है। सहवास के बाद ये भूमि में घुस जाती हैं तथा नया छत्ता बना लेती हैं। इस विशेष उड़ान (वैवाहिक उड़ान) तथा सहवास के समय इन्हें छिपकली जाति के जीव-जन्तु, कौवे तथा अन्य प्रकार के कीट-भक्षी पक्षी खा जाते हैं। इस कारण इनकी संख्या भी कम हो जाती है। यही कारण है कि इनकी जन्मभूमि के निवास-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान से लगभग आधे मील की दूरी तक टूटे हुए पंख पाये जाते हैं।

सहवास के बाद भविष्य के राजा और रानी दीमकें स्वयं के बनाये हुए छोटे-से छत्ते में रहने लगती हैं। कुछ समय बाद रानी दीमक पहली बार ८-१२ अण्डे देती है। धीरे-धीरे अवस्था बढ़ने के साथ रानी दीमक की अण्डे देने की क्षमता में वृद्धि होने लगती है। ऐसा भी पाया गया है कि रानी दीमक ५,००० से ८०,००० अण्डे प्रतिदिन देने लगती है। यही कारण है कि अवस्था बढ़ने के साथ-साथ रानी दीमक का शरीर (उदर भाग) बहुत बढ़ जाता है। यह गतिहीन हो जाती है। रानी दीमक द्वारा दिये गये अण्डों में से पहले श्रमिक दीमकें निकलती हैं।

रानी दीमकों के अण्डों से फिर वयस्क दीमकों की उत्पत्ति होती है। यह जिज्ञासा महत्त्वपूर्ण है कि एक ही रानी दीमक द्वारा दिये गये अण्डों से कैसे विभिन्न प्रकार की वयस्क दीमकें उत्पन्न हो जाती हैं। इसी प्रकार की जिज्ञासा चींटी तथा शहद की मक्खी के सम्बन्ध में भी हो सकती है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस बात में भोजन का महत्त्व है जो अप्राकृतिक होता है। कुछ कीट-विशेषज्ञों का मत है कि श्रमिक दीमकों द्वारा भोजन बनाया तथा खिलाया जाता है। ये ही श्रमिक दीमकें भोजन-सामग्री में अन्तर करके नवजात दीमकों को खिलाती हैं। यही कारण है कि एक प्रकार के अण्डों से विभिन्न प्रकार की वयस्क दीमकें उत्पन्न हो जाती हैं। इस प्रकार श्रमिक दीमक अपनी इच्छा और समूह की आवश्यकता के अनुसार इच्छित संख्या में विभिन्न प्रकार की वयस्क दीमकें उत्पन्न कर लेती हैं।

दीमक के छत्ते के अन्दर दीमक का भोजन

यह भोजन मुख्यतः वानस्पतिक रेशों के रूप में होता है जो श्रमिक दीमकों द्वारा चबाया

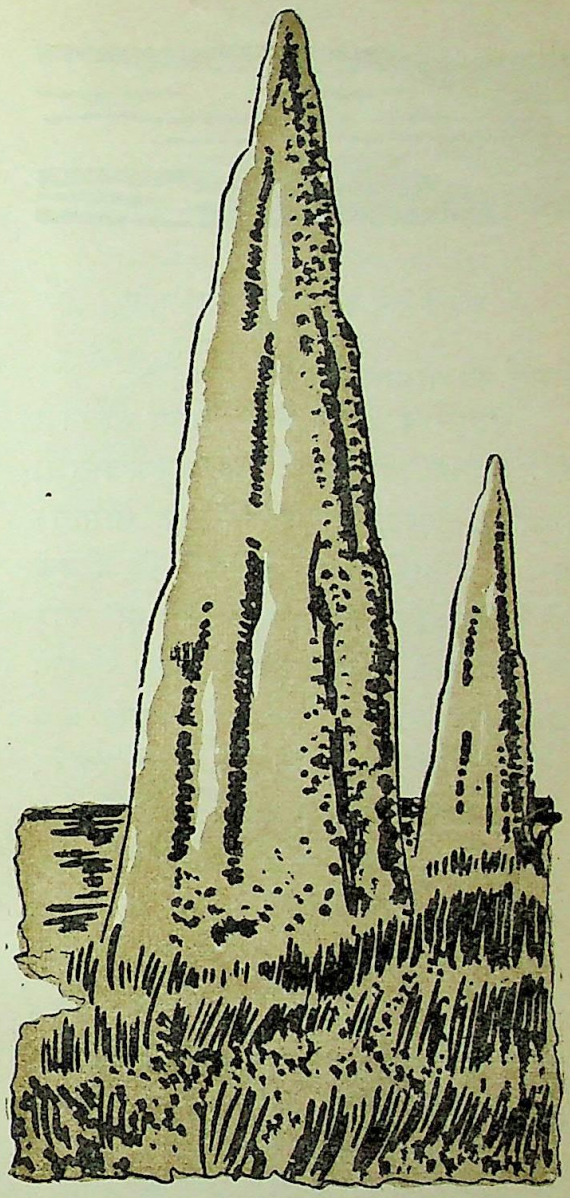

दीमकें बड़े-बड़े छत्तों में रहती हैं। ये छत्ते मिट्टी के बने होते हैं तथा जमीन से थोड़ी ऊंचाई तक उठे रहते हैं

तथा कुछ सीमा तक पचा हुआ होता है। कुछ दीमकों की उपजातियों में श्रमिक दीमक की पाचन-क्रिया नली के अगले तथा पिछले सिरे से निकला भोज्य-पदार्थ भी अन्य नवजात दीमकों को दिया जाता है। इस भोज्य-पदार्थ का विशेष पौष्टिक महत्त्व होता है। यह उल्लेख्य है कि दीमक के समूह में उत्पन्न होने वाले विभिन्न प्रकार के व्यस्क दीमकों का, दीमक के छत्ते की बनावट और अन्य कार्य-प्रणालियों का नियन्त्रण श्रमिक दीमकें करती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

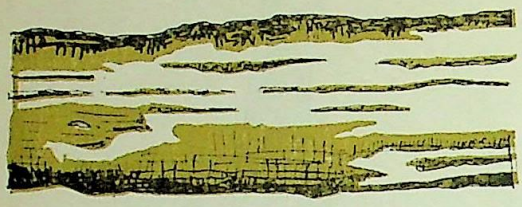

वृक्ष के तने को दीमकों द्वारा क्षति

दीमक का सामान्य भोजन

सैल्युलोज दीमक का सामान्य भोजन है जो पेड़-पौधों तथा उनसे निर्मित अनेक वस्तुओं (लकड़ी, काष्ठ, कागज आदि के सामान) में पाया जाता है। यही कारण है कि दीमकें हरे पेड़-पौधों तथा घर में रखे विभिन्न प्रकार के लकड़ी के सामान, कपड़ों तथा पुस्तकों आदि पर आक्रमण करती हैं। कुछ अन्य भोज्य पदार्थ हैं—वानस्पतिक पदार्थ, लकड़ी, पशुओं का न पचा हुआ भोजन, खादें, फफूंदी (गोमज), सूखे पौधे आदि। दीमकों की पाचन-क्रिया-नली के अन्दर एक विशेष प्रकार का प्रोटोजोआ पाया जाता है। यह सैल्यूलोज-जैसे पदार्थ को पचाने में सहायक होता है। सूक्ष्म जीव प्रोटोजोआ (पालीमैस्टीजाइना तथा हाइपरमैस्टीजाइना) एक दीमक से दूसरी दीमक में उस समय गमन करते हैं जब एक दीमक दूसरे दीमक का मल भोजन के रूप में ग्रहण करती है। फंफूदी (गोमज) भण्डार अथवा भूमि के अन्दर बने उपनिवेश में यह दीमक अपना भोजन स्वयं उगा लेती है। फफूंदी की कुछ उपजातियां इस तरह के उप-निवेश में भी पायी गयी हैं जिन्हें दीमकें भोजन के रूप में ग्रहण करतीं हैं। कीट विशेषज्ञ फुल्लर का मत है कि दीमक की कुछ उपजातियों (ओडोण्टोटरमीज स्पे. तथा ट्रीनेरवीटरमीज स्पे.) के भूमि के भीतर बने छत्ते या बमीठा में एक विशेष प्रकार का कोष्ठ बना होता है जिसमें दीमक बीजों का संग्रह करती है तथा भोजन के रूप में प्रयोग करती है। कीट विशेषज्ञ ग्रास्से का मत है कि भूमि के भीतर बने दीमकों के छत्ते में जो गोमज (फफूंदी) के भण्डार होते हैं उन्हें फफूंदी विशेषज्ञों ने एस्कोमाइसीट तथा बैसीडियोमाइसीट कहा है। ये श्रमिक दीमकों के भोजन का एक अंश होते हैं, तथा सम्भव है कि दीमकों को इनसे एक प्रकार का पौष्टिक तत्त्व (विटामिन) और वानस्पतिक नत्रजन प्राप्त होता है।

(क्रमशः)

समुद्र की सतह के नीचे जीवन और मृत्यु

मछलियां जितने अण्डे देती हैं उसकी कल्पना सरलता से नहीं की जा सकती। अगर मान लें कि प्रत्येक काड फिश का हर अण्डा विकसित होता है, तो छह वर्ष में पूरा अन्ध महासागर काड मछलियों से भर जायेगा। मादा कड फिश एक साथ पचास लाख अण्डे देती है, ओइस्टर करीब एक करोड़ दस लाख और सन फिश तीस करोड़। फिर भी समुद्र की सतह के नीचे की जिन्दगी बड़ी चमत्कारपूर्ण है। यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि कौन-सी मादा कितने अण्डे देती है, बल्कि यह कि उनमें से कितने विकसित होने के लिए बच पाते हैं।

बहुत कम समुद्री जीव, जैसे आक्टोपस अपने अण्डों की चिन्ता करते हैं। सामान्यतः मादाएं अण्डे देती हैं और स्थान परिवर्तन कर लेती हैं। अण्ड धारा में बहते हुए कितने ही जन्तुओं तक पहुँचकर उनकी क्षुधा शान्त करते हैं। कुछ अण्डे लारवा बन जाते हैं और फिर छोटी मछलियों में विकसित होते हैं, किन्तु इनका बचना भी अकस्मिक बात है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचित्र संसार

अपराधी को कविता कण्ठस्थ करने का दण्ड

आर्मस्टाड के एक न्यायाधीश ने युवा अपराधियों को अच्छे नागरिक बनाने का एक नयातरीका निकाला है। कुछ समय पूर्व उनके सामने एक ऐसे युवक को लाया गया जिस पर रद्दी माल चुराने का आरोप था, तो उन्होंने उसको महाकवि शिलर की एक लम्बी कविता कण्ठस्थ करने का दण्ड दिया।

एक पशु ताड़क को स्वाइत्जर की पुस्तक आचारशास्त्र के चालीस पृष्ठों की नकल करने का आदेश दिया गया।

न्यायाधीश की ओर से कहा गया है कि युवकों के लिए इस प्रकार का दण्ड शारीरिक दण्ड से कहीं अधिक प्रभावकारी है। ये न्यायाधीश हैं होल्शु। अब इन्हें अमरीका के न्यायाधीशों ने अपने यहां आमन्त्रित किया है।

स्त्रियों से भी अधिक बोलने वाला पुरुष

लोग स्त्रियों को सबसे तेज बोलने के लिए जगत् प्रसिद्ध मानते हैं, लेकिन एसन के ६२ वर्षीय पीटर स्पीगल ने इस धारणा का खण्डन किया है। ये राडर इलाके के रहने वाले हैं और प्रस स्टेनोग्राफर हैं। पिछले वर्ष ९ अक्तूबर से उन्होंने प्रति मिनट ९०८ अक्षर बोलकर अपना ही रिकार्ड तोड़ दिया। स्पीगल के कथनानुसार वे अपना यह रिकार्ड भी तोड़ने की क्षमता रखते हैं।

स्पीगल ने तेज बोलने की योग्यता वर्षों के कठिन परिश्रम से प्राप्त की है। इसमें वे टेपरिकार्डर की सहायता लेते हैं, क्योंकि तेज बोलने के साथ-साथ शब्दों का उच्चारण भी सही होना जरूरी है। बोलने की किसी प्रतियोगिता में शामिल होने से पहले एक कच्चा अण्डा अपने मुंह में रख लेते हैं।

पीटर स्पीगल केवल इसी अन्तर्राष्ट्रीय रिकार्ड से सन्तुष्ट नहीं हैं। वे शार्टहैण्ड का नया तरीका भी खोज रहे हैं। इस नये तरीके का एक लाभ यह है कि इसमें केवल १३ नियम हैं जबकि पुराने तरीके में २०० नियम हैं। अपने तरीके से स्पीगल शार्टहैण्ड द्वारा प्रति मिनट ४४० शब्द लिख सकते हैं।

तैरता हुआ मछली का कारखाना

हाल ही में पश्चिम जरमनी ने विश्व में अपने ढंग का नया स्टीम ट्रालर जहाज तैयार किया है जो पकड़ी हुई मछलियों को एक निश्चित आकार में तुरन्त काट देता है; उसके टुकड़े तैयार हो जाते हैं, फिर रोटी बन जाती

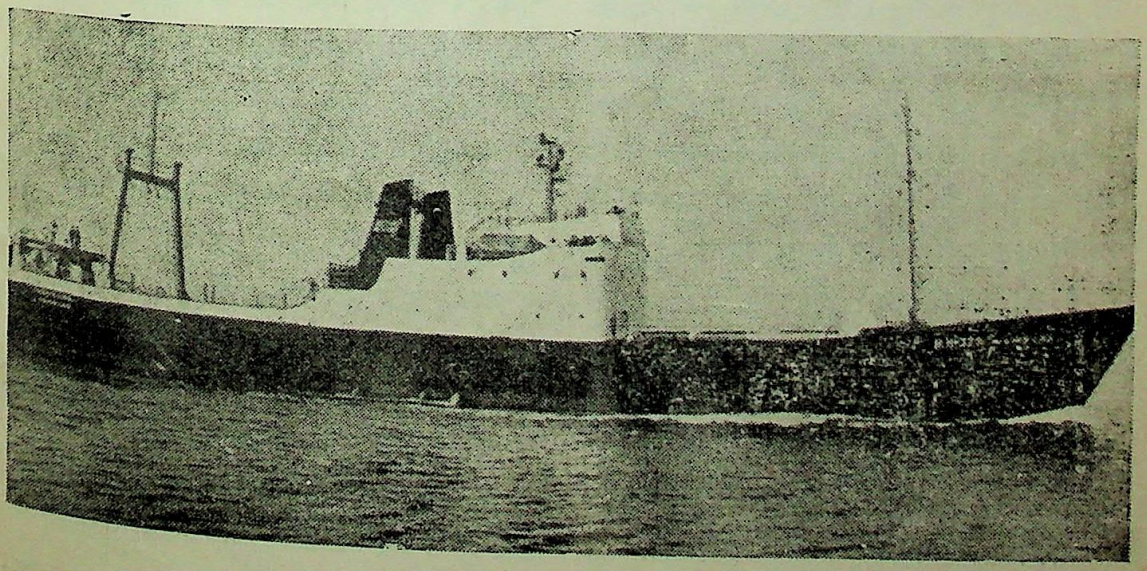

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह मछली को ठण्डा भी कर देता है—यह सब क्रिया उस समय सम्पन्न होती है जब जहाज बन्दरगाह पर पहुँचता है। २ अक्तूबर, ६५ को यह २४५ फुट लम्बा और २४०० ग्रास रजिस्टर टन स्टर्न-व्हीलर 'हेम्बर्ग' नामक जहाज पानी में उतारा गया और उसे एक जहाज कम्पनी के सिपुर्द कर दिया गया। यह जहाज अपने ५० नाविकों के साथ यात्रा पर रहता है। इस जहाज की फैक्टरी में ताजी तथा जमी हुई मछलियों को रखने की व्यवस्था है। इसमें १५० ग्राम के मांस के पैकेट थोक व खुदरा बिक्री के लिए तैयार किये जाते हैं। इसके ठण्डे कमरे ८७० क्यूबिक फुट की क्षमता के हैं। यह जहाज आधुनिक यन्त्रों, रडार यन्त्रों तथा वायरलैस से युक्त है।

एक अनोखा परीक्षण

प्राग में एक परीक्षण हुआ। चार युवक तथा दो युवतियां १२० घण्टे तक लगातार जागते रहे। यह परीक्षण जिन पर हुआ, उन्होंने बताया कि वे कम से कम २४ घण्टे तक और जागते रह सकते थे।

संसार के इस विलक्षण परीक्षण का आयोजन डाक्टर ब्लाडीमिर ब्राडेन ने किया था। वे इस परीक्षण द्वारा चिकित्सा के कुछ निष्कर्ष निकालना चाहते थे, इसलिए उन्होंने इस परीक्षण के लिए उन्हीं व्यक्तियों को चुना जिन्हें अनिद्रा की कोई बीमारी नहीं थी।

बाद के डाक्टरी परीक्षण से पता चला कि परीक्षण में भाग लेने वालों के खून में शर्करा बढ़ गया और विटामिन बी-१ तथा बी-६ की कुछ कमी हो गयी। इसके अतिरिक्त उनके रक्त में सफेद कण की संख्या बढ़ गयी।

चूहों के प्रजनन पर नियन्त्रण

इस्राएल के वैज्ञानिकों ने एक ऐसी विधि का आविष्कार किया है जिससे चूहे अधिक न पैदा हो सकें। विधि साधारण-सी है। जहां चूहे अधिक तादाद में पाये जाते हैं, वहां पर दस मिनट बाद खतरे की घण्टी बजा दी जाती है। इसका असर यह होता है कि चूहों का प्रजनन बीस प्रतिशत ही रह जाता है।

मानसून की प्रतीक्षा : संवेदनशील पक्षी

अंगरेजी के मानसून शब्द की उत्पत्ति निश्चय ही अरबी के मौसम से हुई है। मानसून आने का मतलब है वर्षा का आरम्भ—जब बादल गरजते हैं, बिजली चमकती है और बूंदें गिरती हैं।

दक्षिण भारत में ३१ मई के आसपास मानसून आता है, इसके बाद वह कलकत्ता की ओर पहुंचता है। बंगाल में जून के प्रथम सप्ताह में वर्षा होती है। तत्पश्चात् बम्बई को मानसून भिगाता है। मानसून के बम्बई पहुंचने के करीब दस दिन बाद दिल्ली में वर्षा होती है।

जुलाई के मध्य तक सारे देश में वर्षा शुरू हो जाती है।

और इसी मानसून से सम्बन्धित एक अजीब घटना ११ जून ६५ को घटी। बम्बई की नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी ने घोषणा की कि पश्चिमी किनारे पर पाइड-क्रेस्टेड कक्कू देखे गये हैं। मौसम विशेषज्ञों के अनुसार कक्कू का देखा जाना मानसून के आगमन का सूचक है। कक्कू के देखे जाने के तीन दिन बाद, १४ जून को बम्बई में दस इंच वर्षा हुई।

इवनिंग पिपिस्ट्रेला नामक चमगादड़ के लुप्त हो जाने पर भी मानसून के आगमन का संकेत मिलता है। इस बात की पुष्टि मौसम विशेषज्ञों ने की है। इस तरह के और भी पक्षी हैं जो मानसून की सही-सही जानकारी देते हैं। अमरीकी मौसम विशेषज्ञों की धारणा है कि कभी-कभी ये पक्षी आधुनिक वैज्ञानिक उपकरणों से अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर जेम्स यंग सिम्पसन

पीड़ित मानवता और क्लोरोफार्म की बोतल

राजेन्द्रकुमार

१९वीं शताब्दी के चिकित्सकों का मुख्य ध्येय था रोगी का रोग दूर करना तथा उसकी जान बचाना। लेकिन यह भी जरूरी था कि रोगी की पीड़ा दूर हो। उन दिनों का चिकित्सक अत्यन्त निर्दयी होता था। उसका निर्दयी होना जरूरी इसलिए था कि रोगी की पीड़ा महसूसकर दया-माया के भाव में बह जाने से वह उसका रोग दूर नहीं कर सकता था। उसके हाथ की अंगुलियां बहुत फुरती से चलती थीं और वह इस ओर से पूरी तरह लापरवाह रहता था कि रोगी पीड़ा में डूबा हुआ है।

यह अजीब बात है कि उन दिनों लोग दयाभाव दिखाने वाले चिकित्सक पर विश्वास नहीं करते थे, और उसका यह स्वभाव अयोग्यता माना जाता था। कोई यह नहीं देखता था कि चिकित्सक वास्तव में योग्य है या नहीं; उसकी सबसे बड़ी योग्यता थी निर्दयी होना।

आपरेशन या यन्त्रणा ?

जेम्स लिलिथगो के एक बेकरी वाले का सातवां लड़का था। मानवता की पीड़ा हरने के लिए उसका नाम युगों-युगों तक लिया जायेगा। उसने दर्द से तड़फड़ाते हुए रोगी के लिए क्लोरोफार्म उपलब्ध किया।

उस समय का आपरेशन टेबिल मध्ययुग के किसी सत्ताधारी के यन्त्रणा देने वाले कक्ष से कम न था। फर्क सिर्फ इतना था कि इस आपरेशन टेबिल पर मरीज के रोग का इलाज होता था, उसकी जान नहीं ली जाती थी। लेकिन यह सही है कि यन्त्रणा कक्ष में जो पीड़ा व्यक्ति को मिलती थी, वही पीड़ा इस आपरेशन टेबिल पर रोगी को मिलती थी।

पिछड़ी हुई शल्य चिकित्सा

जब आपरेशन टेबिल पर कोई मरीज लिटाया जाता था, तो वह महसूस करने लगता था कि उसकी चेतना छिन्न-भिन्न होती जा रही है। वह शल्य चिकित्सा के उपकरणों को बड़ी लाचार निगाहों से देखता था। उसकी आंखों में एक ही भाव रहता था, काश, यह चिकित्सक रहम दिखाता ! उस समय के शल्य चिकित्सा के उपकरण बड़े गन्दे रहते थे; वे आज के उपकरणों की तरह नहीं थे। आपरेशन करने का तरीका भी बहुत कुछ भोंडा था, क्योंकि चिकित्सा-विज्ञान तब उन्नति के पथ पर अग्रसर हुआ ही था। जब आपरेशन शुरू होता था, तो रोगी अपने हाथ-पैर नचाने लगता था। इससे उसे रोकने के लिए उसके हाथ-पैर बांध दिये जाते थे। वह दया के लिए भूखा-सा इधर-उधर पड़े आपरेशन करने के औजारों को देखता रहता था।

वह उबलते हुए तार के बुलबुलों के मिटने की आवाज सुनता था। उसे मालूम था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि आपरेशन के बाद घाव को भरने के लिए यह उबलता हुआ तार इस्तेमाल किया जायेगा। उबलते तार की अजीब-सी गन्ध में वह बेहोश हो जाना चाहता था, लेकिन ऐसा नहीं होता था। फिर भी आपरेशन पूरा होने तक वह पीड़ा से बेहोश हो जाता था।

अन्धविश्वास का वातावरण और वे दिन

शल्यचिकित्सा की ये विधियां उन दिनों सामान्य मानी जाती थीं, और जब सिम्पसन ने इनके प्रति अपनी अरुचि प्रकट की, तो एडिनबर्ग के डाक्टर और विद्यार्थियों को आश्चर्य हुआ।

सिम्पसन का जन्म ७ जून, १८११ को लिलिथगो के एक गांव बाथगेट में हुआ था। स्काटलैण्ड के पिछड़े हुए देहाती भाग में सिम्पसन ने अन्धविश्वास के वातावरण में अपने प्रारम्भिक दिन गुजारे। वह देखता कि जानवरों का बध एक साधारण-सी बात है। वह अन्धविश्वास-सम्बन्धी बहुत-से बर्बरतापूर्ण कारनामे भी देखता। यह सम्भव है कि उसके आरम्भिक जीवन की इन घटनाओं ने उसे इस सम्बन्ध में चिन्तित कर दिया हो और वह सोचने लगा हो कि दर्द को कैसे दूर किया जाय।

सिम्पसन ने पीड़ा पर विजय पायी

जब वह छोटा था, तो अपने अध्ययन के प्रति विशेष रुचि प्रकट करता था। वह स्कूल से घर आकर बेकरी की देख-भाल किया करता था। वह बहुत संवेदन-शील था। वह गांव के स्कूल का सबसे तेज विद्यार्थी था।

महत्त्वपूर्ण थीसिस

यद्यपि सिम्पसन का परिवार अधिक पैसे वाला नहीं था, लेकिन उसके परिवार वालों ने सोचा कि सिम्पसन को एक मौका दिया जाना चाहिये ताकि वह अपने प्रयत्न से अपना नाम करे। उन्होंने उसे आर्थिक सहायता देकर एडिनबर्ग विश्वविद्यालय में भेजा। उस समय सिम्पसन की अवस्था १४ वर्ष थी। उसने कला संकाय में अध्ययन आरम्भ किया। दो वर्ष बाद उसने निश्चय किया कि उसे चिकित्सा-विज्ञान का अध्ययन करना चाहिये।

२१ वर्ष की उम्र में उसने डाक्टर की डिग्री प्राप्त कर ली। डाक्टर की डिग्री के लिए उसकी थिसिस का विषय था 'डेथ एण्ड इन्फेलेमेशन'। थिसिस की चर्चा दूर-दूर तक हुई। रोग-विज्ञान के प्रोफेसर डाक्टर जान टामसन उसकी थीसिस से बहुत प्रभावित हुए और उसे अपना सहायक बनाना चाहा। उनका प्रस्ताव सिम्पसन ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। उसने टामसन की देख-रेख में बड़ी कुशलतापूर्वक काम किया। उसकी लगन को देखकर टामसन बहुत प्रभावित हुए।

रोग-विज्ञान का गहन अध्ययन

१८३७ में टामसन ने एक वर्ष की छुट्टी ली, तो उनके स्थान पर सिम्पसन कक्षा में व्याख्यान देने लगा। उस वर्ष रोग-विज्ञान का उसने गहन अध्ययन किया। यह उसके लिए महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ। उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसूतिविद्या का अध्ययन किया और अगले वर्ष इस विषय पर भाषण दिया।

एक अजीब शर्त !

एडिनबर्ग में जिन दिनों वह व्याख्याता था, उन्हीं दिनों उसने दूर के अपने एक रिश्तेदार की लड़की से मित्रता स्थापित की। उसका नाम जेस्सी ग्रिण्डले था और वह लीवरपूल के एक व्यापारी की लड़की थी। अब वह छुट्टियों में लीवरपूल जाया करता था।

१८९३ में एडिनवर्ग में धात्रीविद्या का पद रिक्त हुआ। सिम्पसन ने इस पद के लिए आवेदनपत्र भेजा। यह पद इंग्लैण्ड में प्रवक्ता का महत्त्वपूर्ण पद माना जाता था। उसके सामने एक शर्त रखी गयी कि इस पद के लिए आवेदन करने वाले का विवाहित होना जरूरी है। सिम्पसन लीवरपूल गया और एक माह बाद वह जेस्सी ग्रिण्डले के साथ विवाह करके वापस लौट आया। फिर उसने उस पद के लिए आवेदनपत्र दिया। इस बार वह चुन लिया गया।

सिम्पसन अब एक विद्वान् और प्रवक्ता था, लेकिन वास्तव में वह इस सबसे कहीं अधिक था। विज्ञान के मानवतावादी पहलू की ओर वह अधिक झुका हुआ था। उसका खयाल था कि रोगी और दर्द-भरा जीवन मानवता की विकृति का एक पहलू है। आपरेशन टेबिल पर वह रोगी को छटपटाता हुआ देखता, तो कांप-कांप उठता। वह प्रसव पीड़ा से कराहती महिलाओं को देखता और दया से भर उठता।

धात्रीविद्या का प्रवक्ता होने के बाद दिसम्बर १८४६ में उसने यह सुना कि मार्टन नामक एक अमरीकी दन्त चिकित्सक इथर के प्रयोग से बेहोशी लाकर दांत उखाड़ने में सफल हुआ है। यह उल्लेखनीय है कि १८०० में हम्फरी डैवी ने एक सुझाव दिया था कि लाफिंग गैस का प्रयोग शल्य चिकित्सा के समय रोगियों पर किया जा सकता है। इस तरह अधिक रक्तस्राव नहीं होगा, और रोगी पीड़ा भी अनुभव नहीं करेगा। पर मार्टन ने लाफिंग गैस का प्रयोग न करके इथर का प्रयोग किया था और पाया था कि रोगी गहरी नींद में सो गया है।

प्रसिद्ध शल्य चिकित्सक राबर्ट लिस्टन ने इथर का प्रयोग करके एक आपरेशन किया। सिम्पसन ने इस आपरेशन को देखा और बेहद प्रभावित हुआ। उसने यह निश्चय किया कि प्रसव में भी वह इथर का प्रयोग किया करेगा। उसने प्रयोग किया और पाया कि परिणाम आश्चर्यजनक रहा।

सिम्पसन को विरोधों का सामना करना पड़ा

लेकिन इसके साथ ही उसे उस समय के विरोधों का सामना करना पड़ा। रूढ़िवादी चिकित्सकों ने उसका प्रबल विरोध किया। स्काटलैण्ड के धर्मशास्त्रियों ने जब सिम्पसन के प्रयोग के सम्बन्ध में सुना, तो उन्होंने भी नाराजगी जाहिर की तथा बइबिल के उद्धरण देकर सिम्पसन के कार्य को गलत बताया। सिम्पसन यह जानता था कि ऐसे विरोध लम्बे समय से होते रहे हैं और १७वीं शताब्दी में तो सम्मोहन का भी विरोध किया गया था। उस समय डाक्टर अपने रोगियों को आपरेशन से पहले सम्मोहित कर लिया करते थे। इस बात पर चर्च ने यह दलील पेश की थी कि यह क्रिया अधार्मिक है, इसका बन्द होना जरूरी है, क्योंकि इसमें एक व्यक्ति अपनी इच्छा-शक्ति किसी और को सौंपा देता है। लेकिन वास्तव में बाइबिल में कोई ऐसी बात लिखी नहीं है।

सिम्पसन का तार्किक मस्तिष्क बहुत तेजी से चल रहा था। उसने बाइबिल का उदाहरण देकर ही विरोधों को काटा। आगे चलकर उसके विरोधियों की संख्या कम हो गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वह रात !

सिम्पसन ने पाया कि प्रसूति-सम्बन्धी कार्यों के लिए इथर उपयुक्त नहीं है। वह निश्चेतक दवा की तलाश में जुट गया। अपना तमाम समय वह इसी अनुसन्धान-कार्य में गुजारा करता था। दिन भर प्रयोगशाला में कार्य किया करता था, और शाम को घर आकर भी वह आराम नहीं कर पाता था। वह रात में घर पर ही तीन डाक्टर मित्रों को बुला लिया करता था और अनुसन्धान-कार्य में जुट जाया करता था। वास्तव में डाक्टरों के साथ रात की ये बैठकें साधारण नहीं होती थीं। सिम्पसन जिन दवाओं को तैयार कर चुका होता था, उसे ये डाक्टर सूंघते थे। लेकिन एक लम्बे समय तक सफलता सिम्पसन से दूर रही।

और वह ४ नवम्बर १८४७ की रात ! उसे याद था कि क्लोरोफार्म की एक बोतल के साथ एक बार उसने प्रयोग किया था, लेकिन उसकी धारणा थी कि यह भी अनुपयुक्त है। वह बोतल मिल नहीं रही थी। बड़े प्रयत्न के बाद उसने बोतल खोज निकाली। क्लोरोफार्म बोतल से गिलासों में ढाला गया। सिम्पसन के तीन डाक्टर मित्रों ने उसे सूंघना शुरू किया। थोड़ी देर बाद तीनों डाक्टर बेहोश होकर गिर पड़े।

सिम्पसन इस नयी ओषधि के प्रयोग की सफलता पर प्रसन्न हुआ। उसकी सफलता महान् थी। इसका अन्दाज इससे ही लगाया जा सकता है कि १८४७ में महारानी विक्टोरिया ने स्काटलैण्ड में उसे अपना निजी चिकित्सक नियुक्त किया और प्रसव के समय अपने ऊपर उन्होंने क्लोरोफार्म का प्रयोग करने के लिए कहा।

उसी वर्ष सिम्पसन पेरिस की 'अकादमी आफ मेडिसीन' का 'फारेन असोसियेट' चुना गया, हालांकि यह चुनाव अकादमी के नियमों के विरुद्ध था। दुनिया के दूसरे देश भी उसे सम्मानित करने के लिए उत्सुक हो उठे। यूरोप तथा अमरीका की प्रायः सभी चिकित्सा संस्थाओं का वह सदस्य निर्वाचित हुआ। उसे कई पुरस्कार भी मिले।

सिम्पसन ने मानवता की जो सेवा की, उसके प्रतिकार के लिए आने वाली शताब्दियां आभारी रहेंगी। स्त्री रोग-विज्ञान के उत्थान के सम्बन्ध में उसके प्रयत्न भुलाये नहीं जा सकते। उसने अपनी कोशिशों से इंग्लैण्ड में जगह-जगह पर अस्पताल खुलवाये और कितनी ही माताओं की रक्षा की।

शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में भी उसने कुछ सुझाव दिये जो महत्त्वपूर्ण थे। उसने धमनियों को बांधने की नयी विधि का आविष्कार किया तथा जोसेफ लिस्टर के अनुसन्धान को आगे बढ़ाया। इस सन्दर्भ में यह ज्ञातव्य है कि सिम्पसन लिस्टर की विधियों का कभी ठीक से समर्थन नहीं कर सका और यह नहीं जान पाया कि 'एण्टीसेप्टिक' का क्या महत्त्व है।

पीड़ा को जीतने के लिए क्लोरोफार्म

१८६६ में सिम्पसन को 'बैरोनेट' की उपाधि मिली। इससे पहले किसी स्काटलैण्डवासी को यह उपाधि नहीं मिली थी।

लेकिन सिम्पसन काफी दिनों तक अपनी सफलता को जी न सका। 'बैरोनेट' की उपाधि मिलने पर बधाई सन्देश आने अभी बन्द ही हुए थे कि उसके बड़े लड़के की मृत्यु हो गयी। उसके एक मास बाद ही उसकी पुत्री का भी देहान्त हो गया। इन धक्कों को सिम्पसन बर्दाश्त न कर सका। वह टूटता गया। वह अस्वस्थ रहने लगा। फिर भी वह काम करता था। काम से उसे मोह था, और उसके बिना वह जीवित नहीं रह सकता था।

...और ६ मई १८७० को सिम्पसन गहरी नींद में कभी न उठने के लिए सो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

नव वर्ष की शुभकामनाएं। यह जो वर्ष बीता है उसकी उपलब्धियों का लेखा-जोखा तुम अवश्य करोगे। तुमने क्या खोया, क्या पाया? बीता हुआ साल एक सबक, एक चेतावनी है। नया साल प्रेरणा है।

करो और देखो तथा **तुम्हारी कलम से** स्तम्भों का पिछले कुछ महीनों से नियमित प्रकाशन हो रहा है, लेकिन सदस्यों से हमें स्तर की रचनाएं नहीं मिल पा रही हैं। **तुम्हारी कलम से** के लिए जो रचनाएं आती हैं, उनमें से अधिकांश पूर्व प्रकाशित विषयों पर होती हैं। तुम्हें इस स्तम्भ के लिए उस विषय का चुनाव करना चाहिये जो सर्वथा नवीन तथा सूचनाप्रधान हो। इसके लिए जरूरी है कि तुम वैज्ञानिक साहित्य के नियमित सम्पर्क में रहो। अध्ययन की रुचि का इस दिशा में विकास निश्चय ही तुम्हारे लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

करो और देखो के लिए उसी प्रयोग का चुनाव करना चाहिये जो आसान तथा रोचक हो एवं उससे मनोरंजन हो सके।

मैं आशा करती हूं, तुम भविष्य में इन स्तम्भों के लिए रचनाएं भेजते समय विषय की नवीनता और उपयोगिता का ध्यान रखोगे।

दिसम्बर अंक के सम्बन्ध में तुम्हारे पत्रों में कुछ ये हैं—

राजेन्द्रसिंह यादव (पटना) : **अपनी बात** के अन्तर्गत हर माह किसी महत्त्वपूर्ण सन्दर्भ पर सशक्त टिप्पणी पढ़ने को मिलती है। **फालिज क्यों गिरता है?** (बी. मोहन) अत्यन्त सूचनाप्रधान तथा रोचक है। कृपया रोग-विज्ञान पर हर माह एक लेख दिया करें।'

पी. आर. सोनी (जमशेदपुर) : **वैज्ञानिक उपलब्धियां** तथा **विचित्र संसार** स्तम्भों की सामग्री का चयन उच्चकोटि का होता है। अक्सर सामयिक महत्त्व की घटनाएं तथा उपलब्धियां दी जाती हैं जिनसे कहां क्या हो रहा है, यह जानने में सहायता मिलती है।'

प्रतमलाल (चण्डीगढ़) : '**ये आसंजक पदार्थ** (आदित्यगोपाल झिंगरन) सूचना-प्रधान है। अन्य लेखों में **शत्रुकीट दीमक** (वीरेन्द्रनाथ सिंह) तथा **क्रायोजेनिक्स** (रसिक बिहारी) पसन्द आये।'

ये थे तुम्हारे पत्रों में से कुछ। तुम्हारे पत्रों की प्रतीक्षा फिर भी रहेगी। लिखो कि विज्ञान-लोक में किन-किन विषयों पर लेख पढ़ना चाहते हो।

सस्नेह तुम्हारी,
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ७० के विजेता

प्रथम पुरस्कार

राधेश्याम गुप्ता (१५८४) आगरा, गोपालसिंह वर्मा (१३३११) मेरठ, कुमारी शशि शुक्ला (१३३१८) सीतापुर।

द्वितीय पुरस्कार

हरिश्चन्द्र कश्यप (५११०) देहरादून, सतीशकुमार ठस्सू (११७१३) रायपुर।

तृतीय पुरस्कार

विपिनकिशोर कपूर (१०३२५) बरेली, पुष्पा बहन जमुनादास मठोलिया (११४२५) द्वारका।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ७२

नाम.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

दिलीपकुमार
(स. सं. १३००८)

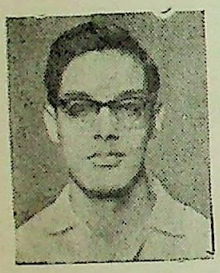

इक्तेदार
(स. सं १७०१८)

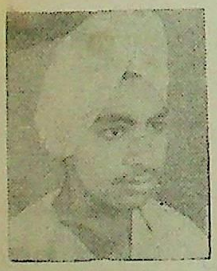

सतपालसिंह
(स. सं. १७०२४)

आनन्दकुमार
(स. सं. १७०३६)

११८३१ शेषनारायण (२२) ददोरा, ३२ नजहतपरवीन (१५) दुर्ग, ३३ केदारनाथ (१९) पानीपत, ३४ यशपाल (१९) पानीपत, ३५ चन्द्रप्रकाश (१९) मेरठ, ३६ कु. रेखा (१७) अजमेर, ३७ जितेन्द्रकुमार (२०) बीकानेर, ३८ कु. दविन्द्रोदेवी (१३) दिल्ली, ३९ कान्तिलाल (२०) भिलाई, ४० नरेन्द्रकुमार (१३) सीतापुर, ४१ साओकातराय (१६) अजमेर, ४२ सूबेदार (१८) सुल्तानपुर, ४३ अमरेशचन्द्र (१५) गोरखपुर, ४४ बृजबिहारी (१६) गोरखपुर, ४५ नन्दलाल (२०) उदयपुर, ४६ अब्दुलजुशब (१८) कांकेर, ४७ ओमप्रकाश (१६) अहमदाबाद, ४८ अशोककुमार (१६) मुरादाबाद, ४९ कमलकिशोर (१७) बुलन्दशहर, ५० रमेशबहादुर (१५) बुलन्दशहर, ५१ नन्दकिशोर (१९) मन्दसौर, ५२ घनश्याम (२१) नागपुर, ५३ सत्यनारायण (१२) नागपुर, ५४ जसवन्तसिंह (१९) लकसर, ५५ रजनीकान्त (१९) दरियापुर, ५६ नर्मदाप्रसाद (१९) उदयपुरा, ५७ सुन्दरदास (१८) फर्रुखाबाद, ५८ सुरेशकुमार (१८) पिलानी, ५९ मदनमोहन (१७) दरभंगा, ६० राघवेन्द्र (१५) शाहजहांपुर, ६१ गिरिराज (१७) चिड़ावा, ६२ सीताराम (१७) मण्डावा, ६३ प्रयागनारायण (१७) इलाहाबाद, ६४ शेखर (१७) दिल्ली, ६५ भेरूलाल (१६) चित्तौड़गढ़, ६६ धीरेन्द्रकुमार (१८) मैनपुरी, ६७ कु. कल्पना (१५) लखनऊ, ६८ भूपेन्द्रसिंह (१९) इन्दौर, ६९ श्रीकृष्ण (१८) बीकानेर, ७० राधाकृष्ण (१३) बीकानेर, ७१ शिवप्रसाद (१६) जुन्नारदेव, ७२ पदमचन्द्र (१७) दुर्ग, ७३ अवनिकुमार (१४) जमुई, ७४ कु. लीलावती (१७) सहजनवां, ७५ रामशरण (२०) मुरसान, ७६ आलोक (१७) वाराणसी, ७७ देवेन्द्रसिंह (१९) सहारनपुर, ७८ चन्द्रकान्त (१९) रायपुर, ७९ मिथिलेशकुमारी (२०) लखनऊ, ८० रमेशचन्द्र (१६) दिल्ली, ८१ विजेन्द्रकुमार (१७) अलीगढ़, ८२ कृष्णकुमार (१७) थानेसरशहर, ८३ अरविन्दकुमार (१४) अलीगढ़, ८४ सुभाषचन्द्र (१७) पन्ना, ८५ दीपकुमार (१६) नयी दिल्ली, ८६ विजय (१७) दुर्ग, ८७ शिवराजसिंह (१७) खजूरी, ८८ अरुणकुमार (१३) नरकटियागंज, ८९ रमेशचन्द्र (१८) परीक्षितगढ़, ९० रविशंकर (१५) गया, ९१ रमाकान्त (१६) रेवती, ९२ भवेन्द्र (१६) नेतरहाट, ९३ सुरेशचन्द्र (१६) उज्जैन, ९४ महेशचन्द्र (१७) सिरसा, ९५ केशवेन्द्र (१७) हटा, ९६ भुवनलाल (१८) कोरबा, ९७ परीक्षतराज (१७) मुरादनगर, ९८ श्रीनिधि (१५) ग्वालियर, ९९ बलवेन्द्रसिंह (१८) नयी दिल्ली, ११९०० हरिश्चन्द्र (१८) उदयपुरा, ११९०१ दयानन्द (२०) खजूरी, २ विजयबहादुरलाल (१६) गोरखपुर, ३ प्रभूदास (२१) राजकोट, ४ विजयकुमार (१८) डिब्रूगढ़, ५ राजेन्द्रकुमार (१८) राजनन्दगांव, ६ उमाशंकर (१८) एटा, ७ ब्रजमोहन (१५) लश्कर, ८ शान्तिलाल (२१) सियाना, ९ विवेकानन्द (१६) मेरठ, १० गंगाराम (१७) गाडखारा, ११ मदनमोहन (१६) फतेहपुरसीकरी, १२ शरदचन्द्र (१६) रामगढ़, १३ कृष्णकुमार (१८) वाराणसी, १४ हंसाकुमारी (११) कलकत्ता, १५ सुशीलकुमारी (१५) सुल्तानपुर, १६ विजयकुमार (१८) गाडखारा, १७ प्रकाशचन्द्र (१८) बिलासपुर, १८ एस. एन. एल. अग्रवाल (१५) इलाहाबाद, १९ प्रसन्नकुमार (१९) श्योरपुरकलां, २० विजेन्द्रकुमार (१८) भोपाल।

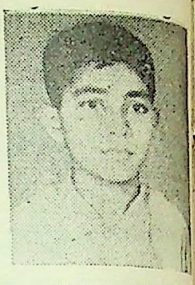

कौशलेन्द्रसिंह
(स. सं. १७०७१)

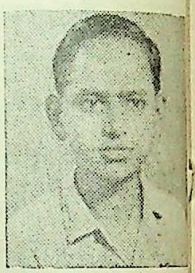

विनोदकुमार
(स. सं. १७०७५)

अनिलप्रकाश
(स. सं. १७०९३)

चेतनदास
(स. सं. १७०९६)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७२

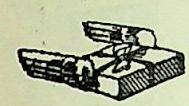

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : १५ फरवरी

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ४९ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर इस पते पर भेज दो।

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७२ का उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर १५ फरवरी तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायेगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७२ के प्रश्न

१. १८६२ में दो प्रसिद्ध बैलून-विशेषज्ञों ने कोल्मरहैम्टन से एक बैलून में उड़ान भरी। ये बैलून-विशेषज्ञ कौन थे ?

२. दो एक-केन्द्रिक वृत्तों की परिधियों का अन्तर ४४ से. मी. है। वृत्तों के बीच की दूरी क्या होगी ?

३. हाइड्रा (hydra) नामक जन्तु की लम्बाई कितनी होती है ?

४. तिलचट्टे (cockroaches) गरम जगह में रहना पसन्द करते हैं या ठण्डी जगह में ?

५. साइकिल की फ्री ह्वील (free wheel) के मुख्यतः कितने भाग होते हैं ?

६. सिनेरामा (cinerama) पद्धति से फिल्म दिखाने के लिए कितने प्रक्षेपी (projectors) प्रयुक्त होते हैं ?

७. फोटोमाइक्रोग्राफ (photomicrograph) क्या है ?

८. ब्रह्माण्ड किरणों (cosmic rays) का आविष्कार कब हुआ था ?

९. वर्णक्रम (spectrum) में पीला रंग किस तत्त्व के परमाणुओं के कारण है।

१०. मुरगी के अण्डे के आकार के पत्थर को मुहाने तक बहा ले जाने के लिए नदी के जल की गति प्रति घण्टा कम से कम क्या होनी चाहिये ?

प्रतियोगिता संख्या ७० के प्रश्नों के उत्तर

१. रेडियो दूरदर्शी की सहायता से।

२. इस सिद्धान्त के अनुसार आरम्भ में धूल का एक बादल अन्तरिक्ष में गोलाकार पथ पर घूम रहा था। इसके केन्द्र में सूर्य बना, फिर अन्य ग्रह बने।

३. २,३०,००,००० वर्ष पूर्व।

४. ८० से. मी.।

५. नाड्यूलेटेड (nodulated) मूल होती है।

६. साधारण ध्वनि-तरंगों को गमन करने के लिए कोई माध्यम अवश्य चाहिये। यही कारण है कि वे शून्य में गमन नहीं कर सकतीं।

७. अमोनिया-द्रव में।

८. भांति-भांति के मेघ समूहों में से एक का यह नाम है। पृथ्वी की सतह से १८-४० हजार फुट तक ये पाये जाते हैं।

९. केलिफोर्निया के एण्डरसन ने १९३२ में।

१०. $= 2KOH + O_2 + I_2$

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजादी की रक्षा और सीमाओं की सुरक्षा के लिए राष्ट्र गरीब अमीर सभी का सहयोग चाहता है। आइये!

१५ वर्षीय राष्ट्रीय सुरक्षा स्वर्ण-बांडों में सोना, सोने के सिक्के और सोने के जेवर देकर अपने उन जवानों के लिए कुमक और रसद की निरन्तर व्यवस्था में सहायक हों जो हाल ही में दुश्मन के मंसूबे और हौसले को चूर कर चुके हैं तथा स्वदेश की रक्षा में मोर्चों पर रात-दिन डटे हैं।

- स्वर्ण-बांडों के लिए छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी मात्रा में सोना, सिक्के और जेवर स्वीकार किये जायेंगे।
- स्वर्ण-बांडों में लगाये गये सोने पर न तो कोई आय-कर लगेगा और न स्टेट-ड्यूटी आदि।
- स्वर्ण-बांडों में जो लोग सोना देंगे उनके नाम गुप्त रखे जायेंगे।
- स्वर्ण-बांडों में लगाये गये सोने पर गोल्ड-कण्ट्रोल अथवा कस्टम्स-नियमावली लागू नहीं होगी और न उक्त नियमों के अधीन उसके सम्बन्ध में कोई कानूनी कार्रवाही की जायगी और न कोई दण्डनीय होगा।
- स्वर्ण-बांडों का भुगतान-९९५ शुद्ध सोने के रूप में अक्तूबर २७, १९८० को किया जावेगा। ऐसे बांडों के खरीदारों को २ रु. प्रति १० ग्राम सोने पर वार्षिक भुगतान देना होगा।

२७ अक्तूबर, १९६५ से स्वर्ण-बांड जारी हो गये हैं और जनवरी, १९६६ के अन्त पक चालू रहेंगे। स्टेट बैंक की प्रायः सभी शाखाओं में ये उपलब्ध हैं।

विशेष विवरण के लिए अपने जिले के जिला अधिकारियों तथा स्टेट बैंक से सम्पर्क स्थापित करें।

सूचना निदेशालाय उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन

कुलदीपकुमार भट्ट (स. सं. ८५८१)

हमारा भोजन प्रोटीन (proteins), निशास्ता (carbohydrates), चिकनाई (fats), खनिज पदार्थ (mineral salts) तथा जल (water) का एक मिश्रण है। ये ऐसी वस्तुएं हैं जिन्हें पृथक् करके देखा जा सकता है, परन्तु इनके अतिरिक्त एक ऐसा सूक्ष्म पदार्थ भी है जिसका अभाव हमारे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालता है। वह है विटामिन (vitamin)। यह हमारे शरीर का स्वास्थ्य ठीक रखता है तथा शरीर को मजबूत बनाता है। इसके अतिरिक्त मनुष्य को रोगों का सामना करने योग्य बनाता है।

प्रोटीन, निशास्ता, चिकनाई, खनिज पदार्थ तथा जल हमारे शरीर की वृद्धि के लिए प्रयोजित होते हैं, परन्तु विटामिन शरीर की खराबी, बीमारी, कमजोरी तथा टूटे-फूटे अंगों की मरम्मत करने के लिए प्रयोजित होता है। इसके अभाव से घातक बीमारियां पैदा होती हैं, जैसे जोड़ों की कठोरता और सूजन, आंखों की लाली, गले की सूजन, मसूड़ों का फूलना, दांतों का हिलना, हड्डियों का कमजोर और टेढ़ा होना, नसों का फूलना, भोजन का न पचना इत्यादि।

भोजन में कुछ रहस्यमय रसायन होते हैं जिनका हमारे स्वास्थ्य तथा शरीर के विकास पर प्रभाव पड़ता है। सर फ्रेडरिख गोलैण्ड हायकिन्स ने चूहों पर प्रयोग किया। चूहों को भोजन में शुद्ध प्रोटीन, स्टार्च, वसा, लवण और जल दिया जाता था, लेकिन उनका विकास अवरुद्ध हो गया। और जब उन्हें रोज एक चम्मच दूध दिया जाने लगा, तो वे फिर विकसित होने लगे।

अनेक वैज्ञानिकों ने मानव-स्वास्थ्य का अध्ययन करके पाया कि उन देशों में जहां लोग छिलका उतारा हुआ चावल खाते हैं, बेरी-बेरी नामक रोग से ग्रस्त हो जाते हैं। एक प्रयोग में इसी तरह का भोजन कबूतरों को दिया गया। वे भी अस्वस्थ हो गये। जब उन्हें धान दिया गया, तो वे ठीक हो गये। निश्चय ही कोई विशेष तत्त्व धान के भूसे में होता है जो स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

अक्सर यह देखा जाता है कि जो नाविक ताजे फलों और सब्जियों से वंचित रह जाते हैं, दांत और मसूड़ों की बीमारियों के शिकार हो जाते हैं। लेकिन तट पर पहुंचते ही ताजे भोजन से उनके रोग दूर हो जाते हैं। यदि नाविकों को यात्रा के समय नीबू का रस दिया जाय, तो उन्हें ये रोग नहीं होते।

अनेक कष्टसाध्य प्रयोगों और निरीक्षणों के बाद वैज्ञानिकों को विटामिनों का ज्ञान हुआ और उन्होंने यह भी पता लगाया कि ये विटामिन कैसे भोजन में मिलते हैं।

विटामिन अधिकतर ताजी सब्जियों और उनके हरे पत्तों में, अनाज के ऊपर की सतह पर, दालों के छिलकों के अन्दर, ताजा और कम उबले हुए दूध में, हरे चने, मटर, टमाटर, सन्तरे आदि में अधिक पाये जाते हैं। ये पशुओं द्वारा खाई हुई हरी घास में भी बहुतायत से पाये जाते हैं। ये ही विटामिन उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूध में भी पहुंच जाते हैं। इनकी उत्पत्ति अनिवार्यतः वनस्पति-जगत् से होती है। फिर वहां से ये पशुओं, तथा मनुष्यों के शरीर में प्रवेश कर जाते हैं।

विटामिन साधारण ताप पर पानी में घुल जाते हैं। अधिक ताप से ये नष्ट हो जाते हैं। उबालने अथवा बहुत थोड़ा घी डालकर पकाने पर इनका कुछ अंश बचा रहता है। परन्तु घी में बहुत अधिक पकाने अथवा तलने पर ये पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं। सर्वोत्तम तो यह है कि पके हुए शाक-दाल आदि पर बाद में मक्खन डालकर खाया जाय। क्षारीय पदार्थ, जैसे सोडा आदि क्षार (alkalies) से ये अति शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। होटल, बोर्डिंग, लंगर आदि स्थानों पर जहां थोड़े समय में सब्जी आदि तैयार करने के लिए रसोइये खाने का सोडा डालते हैं, वहां सब्जी तो शीघ्र गल जाती है, परन्तु स्वास्थ्य का रहस्य पूर्णतया नष्ट हो जाता है।

साग-सब्जी को सुखाने पर भी ये नष्ट हो जाते हैं। सूखी-साग-सब्जियां शरीर में एक प्रकार का चर्म रोग उत्पन्न करती हैं। प्राचीनकाल के नाविक अपने साथ सूखी सब्जियां व फल ले जाने के कारण ही स्कर्वी (scurvy) नामक चर्म रोग से ग्रस्त होते थे।

विटामिन कई प्रकार के होते हैं। निम्न-लिखित पंक्तियों में इनके सम्बन्ध में संक्षिप्त जानकारी बद्ध है।

विटामिन-ए

इसका शरीर की वृद्धि में विशेष महत्त्व है। यह शरीर के वसा वाले भागों में अधिक पाया जाता है। इसको एण्टी-रिकेटिक (anti-ricketic) भी कहते हैं, क्योंकि इसकी अनुपस्थिति से रिकेट्स (rickets) उत्पन्न हो जाती हैं, जिससे जरा-सा भार पड़ने से पीठ और टांग की अस्थियां टेढ़ी हो जाती हैं। बच्चा कमजोर और सुस्त हो जाता है। यह हरी घास, हरी सब्जी, हरे पत्तों और ताजा फलों के अतिरिक्त दूध, दही, मक्खन, मलाई, पनीर, टमाटर, गाजर, बन्दगोभी आदि में अधिक पाया जाता है।

विटामिन-बी

इसे एण्टी-न्यूरिटिक (anti-neuritic) भी कहते हैं, क्योंकि इसके अभाव से बेरी-बेरी (beri-beri) नामक रोग उत्पन्न होता है। यह रोग सदा धुले हुए अथवा मशीन से छिलके उतारे हुए चावल खाने वालों को होता है। इससे दिल, दिमाग दुर्बल हो जाते हैं, काम करने की शक्ति नहीं रहती है।

यह विटामिन गेहूं, चावल, मक्का, दाल आदि के छिलके के अतिरिक्त चना, मटर, टमाटर, अखरोट, बादाम, पिस्ता, नारियल, ताजा फल, ताजा सब्जी, अण्डा, दूध, दही, खमीरी रोटी में प्राप्य है।

विटामिन-बी २

इसे विटामिन-जी भी कहते हैं। यह दूध, बादाम, अनाज, खमीर आदि में पाया जाता है। पीलिया में इसका उपयोग लाभ-दायक है।

विटामिन-सी

इसे एण्टी-स्कारब्यूटिक (anti-scorbutic) कहते हैं। इसकी अनुपस्थिति से स्कर्वी नामक बीमारी होती है, जिससे मसूड़े फूलने लगते हैं तथा उनसे खून आने लगता है। दांत भी हिलने लगते हैं। शरीर पर खुश्की होकर सफेद-सफेद भूसी उतरती है।

यह भी ताजे शाक-सब्जियों, विशेषकर खट्टे फलों, मेवों, नीबू, माल्टा, नारंगी, टमाटर, आड़ू, मूली, गाजर, उबालने के बाद छिलका उतरा आलू, ताजा दूध-दही में अधिक पाया जाता है।

विटामिन-डी

यह हड्डियों और आंतों को मजबूत रखता है। इसका विटामिन-ए के साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह उन्हीं पदार्थों में पाया जाता है जिनमें 'ए' पाया जाता है। यह विटामिन सूर्य के प्रकाश में भी पाया जाता है। धूप में रखी हुई घास खाने वाले पशुओं के दूध में यह अधिक मात्रा में पाया जाता है। यदि धूप में बैठकर तेल की मालिश की जाय, तो शरीर के अन्दर यह विटामिन उत्पन्न होकर बल प्रदान करता है।

विटामिन-ई

इसके सम्बन्ध में अभी पूरी खोज नहीं हुई है, परन्तु यह पता लगाया गया है कि इसकी उपस्थिति पुरुषत्व और स्त्रीत्व (manhood and womanhood) के लिए आवश्यक है।

यह प्रायः गेहूं की ऊपरी सतह और दूध में पाया जाता है।

विटामिन-के

इसकी उपस्थिति से रक्त साम्यावस्था में रहता है। इसकी कमी से शीत-पित्त (aurticaria) तथा धफड़ (allergy) हो जाना और चोट लगने पर रक्त का जल्दी बन्द न होना आदि विकार हो जाते हैं।

इन विटामिनों के अतिरिक्त और भी कई प्रकार के विटामिन हैं।

सर सी. बरनार्ड स्टेले ने अपनी पुस्तक 'दी बुक आफ डिस्कवरी' में विटामिनों के बारे में इनकी सूक्ष्मता का वर्णन करते हुए कहा है : 'यदि २० गैलन दूध का समस्त विटामिन-डी निकालकर एकत्र किया जाय, तो वह एक फुलस्टाप (.) के बराबर होगा।' अजीब हैं ये विटामिन ! ●

यहां से काटिए

विज्ञान क्लब सदस्यता, विज्ञान–लोक

कृष्णा दीदी,

मुझे विज्ञान क्लब का सदस्य बना लीजिए।

जन्म-दिन _____ आयु _____

नाम _____

घर का पता _____

_____

_____

स्कूल का नाम _____

शिक्षा _____ रुचि _____

यहां से काटिए

यहां से काटिए

यहां से काटिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

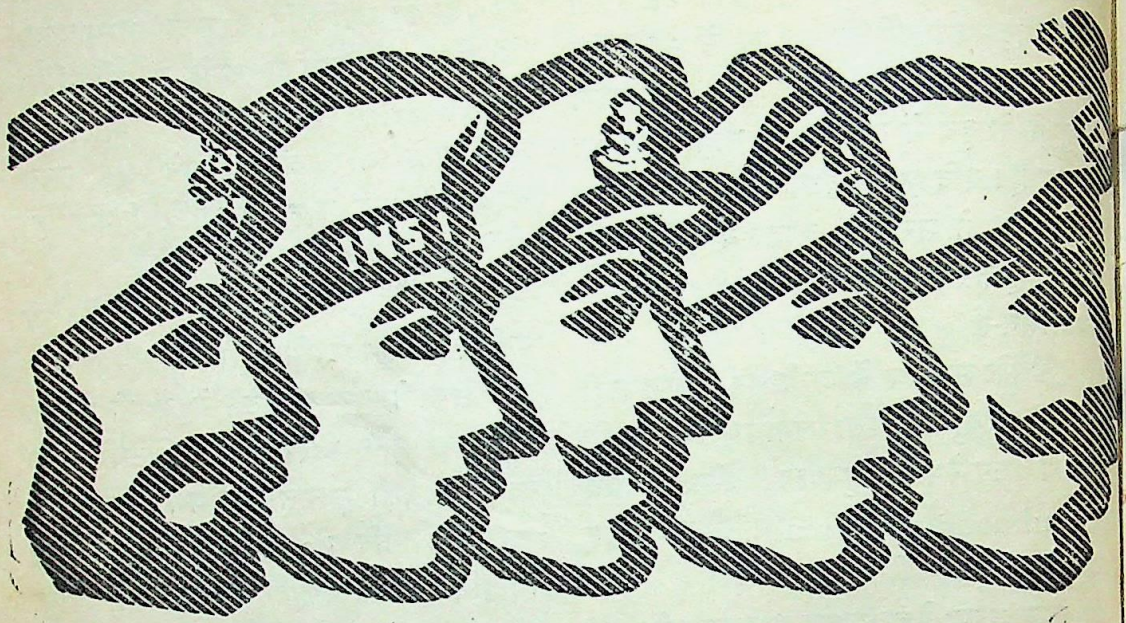

हिन्दुस्तान को अपने जवानों पर सचमुच गर्व है, नाज़ है। उन्होंने हमारी आज़ादी, इज़्ज़त, आदर्शों और जीवन की रक्षा की। उन्होंने दुश्मनों को मुंह तोड़ जवाब दिया। लड़ाई में बहुत से जवान शहीद हुए और बहुत से जख्मी। सच है, हमारे जवानों ने जी-जान से अपना फर्ज अदा किया है। हमें भी उनके हाथ मजबूत करने के लिए इतनी मेहनत करनी चाहिए, जितनी हमने आज तक कभी नहीं की।

एक महान देश हमारा
एक महान राष

DA 65/F6

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH
WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupil how to write sentences correctly. He learns by doing, and by doing *correctly*.
- Exercises are so arranged that even a slow child is sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The Work Books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I.....Price : Re. 0·80
Book II.....Price : Re. 1·00
Book III.....Price : Re. 1·20

For further enquiries please write to :

SRI RAM MEHRA & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीहारिका

कहानी मासिक

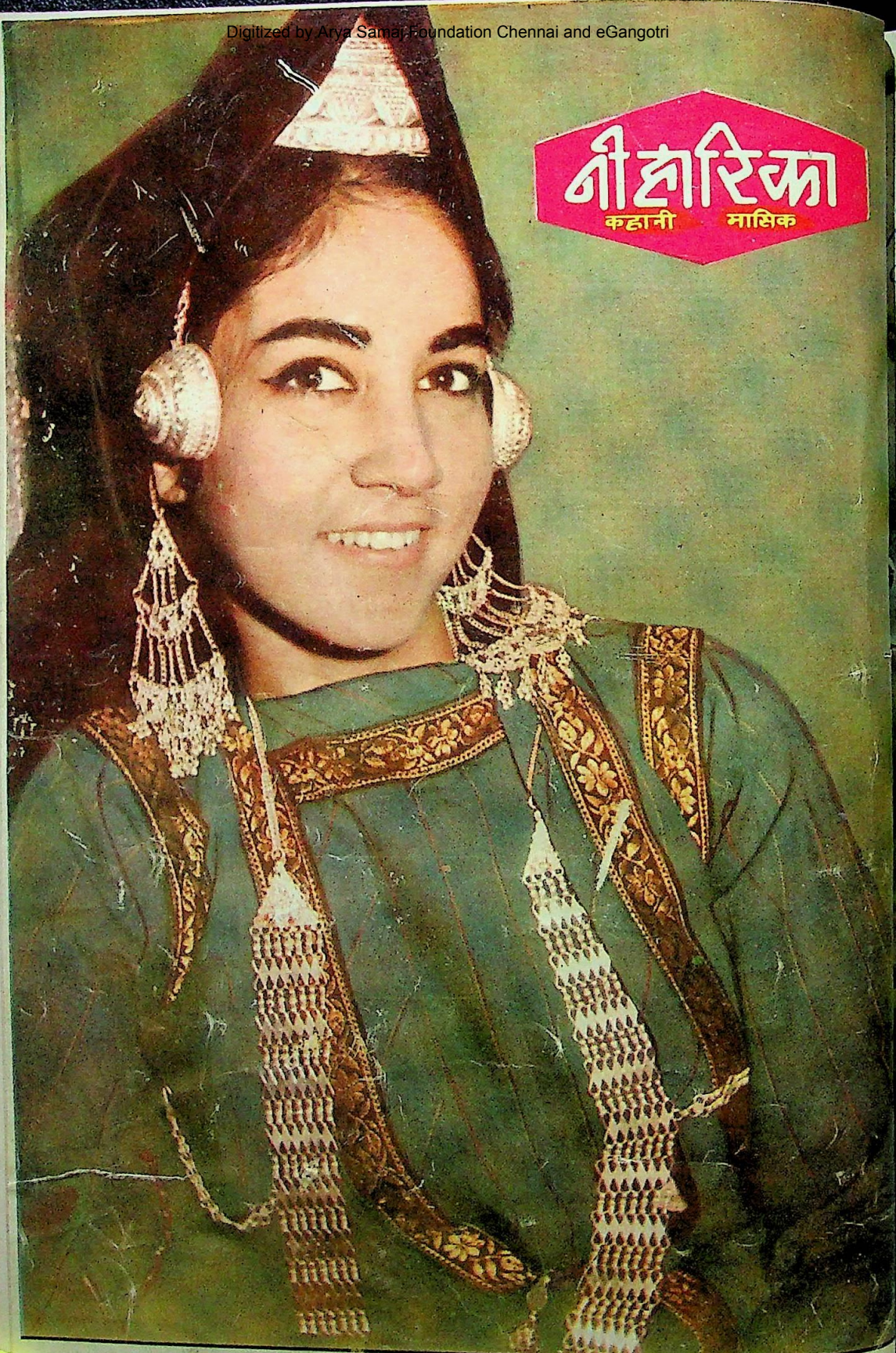

जनवरी अंक

अब सब जगह उपलब्ध है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

76253

विज्ञान-लोक

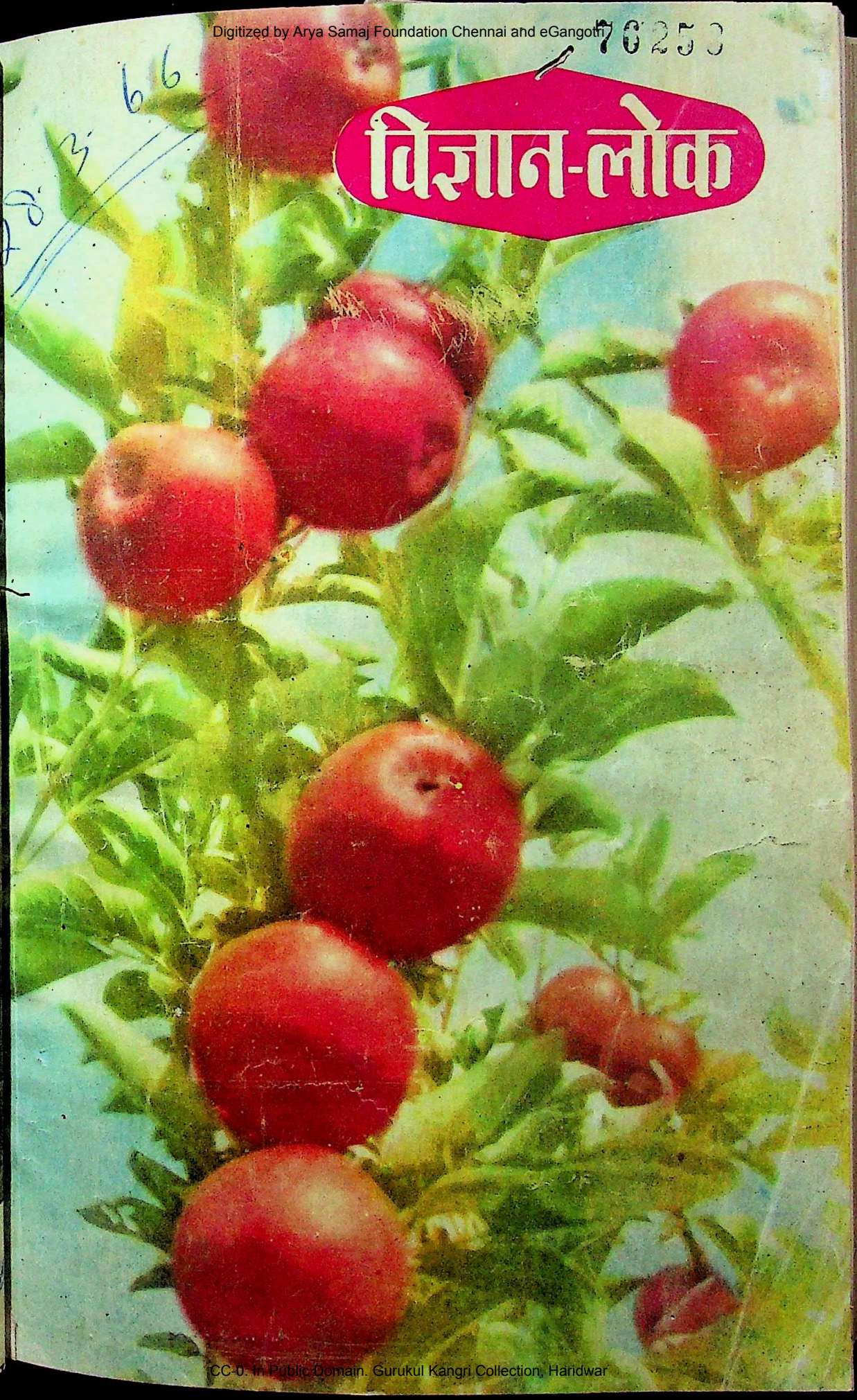

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

सेब ३
—कीर्तिमोहन

एक्सोलोटल ८
—महेश्वरसिंह सूद

पेंगुइन १२
—विश्वम्भरदत्त नौटियाल

अलोइसियो गैल्वनी १८
—राजेन्द्रकुमार

नवरसायन २२
—एच. जी. वेल्स

दीमक २९
—वीरेन्द्रनाथ सिंह

ऊर्जा भंवर ३७
—एसी. पी. मिश्र

पीड़ा ४७
वी. मोहन

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां ३४
विचित्र संसार ४५
विज्ञान क्लब ५१
इनाम लो ५४
तुम्हारी कलम से ५५
करो और देखो ५७

अपनी ब

शब्दों से वस्तुओं या गुणों को पहचा में सहायता मिलती है। लेकिन एक वैज्ञ तब कठिनाई में पड़ जाता है जब शब्द से उसका काम नहीं चलता। कि कोई 'अमीबा' का अध्ययन करना है और उसे जेली की तरह के पदार्थ का छोटा-सा भाग दे दिया जाता है। प्रमुख यह होगा कि क्या यह पदार्थ 'अमीबा

विज्ञान का शब्द भण्डार अत्यन्त मित है। वैज्ञानिक शब्दावली का प्रयोग हुए कभी-कभी यह निर्णय कर पाना होता है कि कौन-सा शब्द किस सन्दर्भ में है। 'जीवन' ऐसा ही एक शब्द है।

भाषा शब्दों की सत्ता से पृथक है की निर्भरता मुख्य रूप से वक्तव्यों पर है। वक्तव्यों का ही अर्थ होता है और वे असत्य होते हैं। 'अन्तरिक्ष' शब्द का स्वतन्त्र अर्थ नहीं जब तक कि यह वक्तव्य में प्रयुक्त नहीं होता।

वैज्ञानिक शब्दावली के अन्तर्गत के अमूर्त सत्य वक्तव्यों में होते हैं जिनका शब्दों तथा विज्ञान के प्रतीकों के कार वैज्ञानिक शब्दावली बढ़ती जा रही है जिन सत्यों का साक्षात्कार वैज्ञानिक हैं वे कल भाषा के माध्यम से व्यक्त उस भाषा के माध्यम से जो आज अज्ञा वैज्ञानिक शब्दावली बौद्धिक प्रतिमा प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है। बौद्धिक प्रति की वृद्धि के साथ-साथ वह बढ़ती रहेगी नये शब्दों से अलग रहना सम्भव नहीं

वर्ष ७ अंक २

एक प्रति : ७५ पैसे
वार्षिक : ९ रुपये

सम्पादक : शंकर मेहरा
प्रकाशक : मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

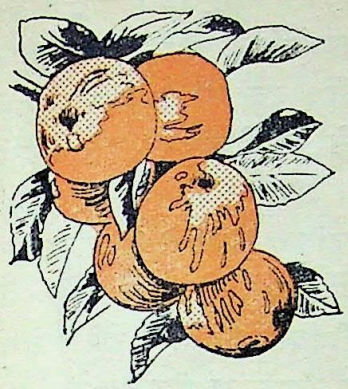

सेब

सृष्टि का आदि फल

कीर्तिमोहन

सेब का सम्बन्ध रोजासेई (*rosaceae*) नामक गुलाब परिवार से है। इसका वैज्ञानिक नाम मैलस पुमिला (*malus pumila*) है। इसके गुलाबी और सफेद फूल जंगली गुलाब के फूलों की तरह होते हैं। यह बहुत पुराना फल है। वनस्पति-विज्ञानवेत्ताओं का मत है कि प्रागैतिहासिक युग से ही मनुष्य को इसका ज्ञान रहा है। यह सम्भावना है कि सम्प्रति के सेब का विकास क्रैब-सेब (crab-apple) से हुआ, जो ब्रिटेन तथा यूरोप के विभिन्न भागों में बहुतायत से पाया जाता है। क्रैब-सेब आकार में छोटा तथा स्वाद में कड़वा होता है।

विश्व में सेब का विस्तार अन्य फलों के विस्तार से अधिक है। यह सुदूर उत्तर में पाया जाता है। पर इसके लिए समशीतोष्ण जलवायु अधिक उपयुक्त रहती है। इंग्लैण्ड की जलवायु तथा मिट्टी इसके लिए सर्वथा उपयुक्त है। वहां यह और देशों के सेबों से अच्छी किस्मों में पाया जाता है। इंग्लैण्ड में इसकी अनेक किस्मों का विकास हो चुका है, और बाहर की कितनी ही किस्में विकसित होती रहती हैं।

प्लिनी दी एल्डर का मत है कि रोमवासियों को सेब के बारे में बहुत पूर्व से ही ज्ञात था। उन्हें इसकी लगभग २२ जातियों का पता था। यूरोप में सेबों का विस्तार करने में उनका ही योग रहा। कलम बांधने का प्रचलन मध्य-युग में फ्रांस में हुआ। हेनरी अष्टम के फल-विशेषज्ञ ने भी इंग्लैण्ड में विभिन्न किस्मों के सेबों को उगाया। १६०० तक यूरोप में बहुतायत से पाये जाने वाले सेब मुख्यतः हरे रंग के होते थे।

नयी-नयी किस्में अचानक ही पैदा हो गयीं

१९वीं शताब्दी तक यह किसी को ज्ञात नहीं था कि विभिन्न प्रकार के सेबों की कैसे उत्पत्ति हुई। नयी-नयी किस्में अचानक ही पैदा हो गयीं। १८०० के करीब टामस ऐण्ड्रू नाइट ने फलों का 'कल्चर' प्रचलित किया। उसने यह पता लगाया कि यदि एक किस्म के फल का सेचन दूसरे किस्म के फल से हो, तो एक नयी ही किस्म उगती है। आज सेब की करीब दो हजार जातियां हैं, पर दूकानों में मुख्यतः बीस-तीस जातियां ही देखी जाती हैं।

मैलस पुमिला जिससे सेब की अनेक जातियां विकसित की गयी हैं, मुख्य रूप से दक्षिण-पूर्वी यूरोप तथा दक्षिण-पश्चिमी एशिया का फल है। कुछ फल विशेषज्ञों का कथन है कि इसकी उत्पत्ति काकेशस के दक्षिण में हुई। इस क्षेत्र के सेबों का निश्चय ही उस युग के लोग भोजन के रूप में प्रयोग करते रहे होंगे। यूरोप में सेब की विभिन्न किस्में आज से लगभग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो हजार वर्ष पूर्व पहुंचीं। पर इंग्लैण्ड में सेबों का मुख्य रूप से प्रचलन रोमवासियों ने किया।

नये विश्व में वहां बसने वालों द्वारा सेब पहुंचा। यह यूरोपीय किस्म का था। १७४१ से ही सेब का निर्यात न्यू इंग्लैण्ड से वेस्ट-इण्डीज को होता रहा है। दक्षिणी गोलार्द्ध की ओर व्यापार करने जाने वाले यूरोप या उत्तरी अमरीका से सेब भारत, चीन और जापान तक ले गये। विश्व के जिन देशों में सेब होता है, वहां सम्भवतः यूरोप से ही यह पहुंचा है। अमरीका में भी कई जगह सेब के वृक्ष बहुत बाद में लगाये गये हैं, उदाहरण के लिए केलीफोर्निया में १८५३ में और वाशिंगटन की याकिमा घाटी में १८७५ में सेब के वृक्ष लगाये गये।

सेब की विभिन्न किस्में कलम लगाने से या बीजांकुर रोपने से प्राप्त होती हैं

सेब की विभिन्न किस्में केवल बीज से ही विकसित नहीं होतीं। वास्तव में बीज से कुछ ही किस्में प्राप्त होती हैं, और उनमें भी विविधता नहीं होती। सेब की अनेकानेक किस्में कलम लगाने से या बीजांकुर रोपने से प्राप्त की जाती हैं। सेब की बहुत-सी उच्चकोटि की किस्में बीजांकुर रोपने से ही प्राप्त होती हैं। वास्तव में पिछले दो हजार वर्षों में सेब के बीजांकुर ही विभिन्न देशों में रोपे जाते रहे हैं, और उनका नामकरण एक नयी जाति के अन्तर्गत होता रहा है। यह अनुमान है कि केवल अमरीका में ही सेब की सात हजार जातियां हैं। अमरीका, इंग्लैण्ड, जरमनी, स्वीडेन तथा रूस में सेबों की नयी-नयी किस्में प्राप्त करने के प्रयत्न प्रारम्भ से ही होते रहे हैं।

सेब का वृक्ष और सेब—ऊपर (बायें) जोनाथन, (दायें) वाइन सैप; नीचे (बायें) डेलिशस, (दायें) ग्रैनी स्मिथ

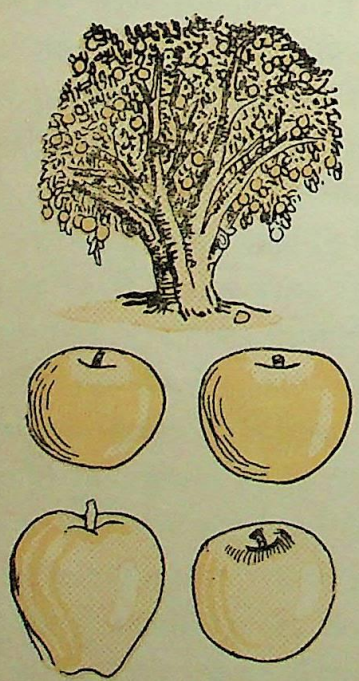

मुख्य रूप से इंग्लैण्ड में सेबों की विभिन्न जातियों का विकास यूरोप के सेबों से ही हुआ। इसके बाद उत्तरी अमरीका तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में सेब लगाये गये। वर्तमान शताब्दी में अमरीकी सेबों की अच्छी से अच्छी किस्में उपलब्ध हैं। दूसरे महायुद्ध के बाद अमरीकी सेब कनाडा, लैटिन अमरीका, रूस तथा फ्रांस में लगाये गये। इस तरह अब सेब की अनेक जातियां विश्व में फैल चुकी हैं। पर इन सभी जातियों को मुख्यतः तीन श्रेणियों में रख सकते हैं—सिडर किस्म (cider varieties)—इस जाति के सेब मुख्य रूप से इंग्लैण्ड में होते हैं। (ये तीन प्रकार के होते हैं—एक में ४५ प्रतिशत मैलिक अम्ल (malic acid) होता है, दूसरे में २ प्रतिशत टैन्निन (tannin) होता है। यह हलका कड़वापन लिये हुए होता है। तीसरे प्रकार का सेब बेहद मीठा होता है।) दूसरी जाति कूकिंग (cooking) के सेब इंग्लैण्ड या यूरोप में ही होते हैं। तीसरी जाति का सेब डेज्जर्ट (dessert) कहलाता है। यह कई प्रकार का होता है पर सभी गहरे लाल रंग के होते हैं। यह कुछ-कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकना होता है। कुछ किस्मों में शर्करा की मात्रा बहुत अधिक होती है।

अमरीका में व्यापारिक स्तर पर डेलिशस (delicious) नामक सेब उगाया जाता है। इसकी बहुत मांग है। इसी सेब की कुछ अन्य किस्में भी उगायी जाती हैं। यह सेब उद्योग का पांचवा हिस्सा होता है।

विषुवत् रेखा से ३०-६०° उत्तर और दक्षिण की जलवायु सेब के लिए उपयुक्त है। विषुवत् रेखा से ३०° से कम पर भी, ऊंचे स्थानों पर सेब उगाया जा सकता है, किन्तु यह पैदावार सीमित होगी। ४५° फै. पर यह वर्ष में करीब १,२०० घण्टे शुषुप्तावस्था में रहता है, इसलिए उपयुक्त जलवायु के अभाव में इसका 'कल्चर' हर जगह सम्भव नहीं है। उत्तरी गोलार्द्ध में ठण्ड अधिक होने के कारण इसका 'कल्चर' सम्भव नहीं होता। ४०° फै. ताप पर सेब का पौधा जीवित नहीं रह सकता। इसकी बहुत-सी किस्में इस ताप पर नष्ट हो जाती हैं। जल्द विकसित होने वाली और कठोर किस्मों के लिए भी कम से कम सूखे और कोहरारहित १०० दिन आवश्यक हैं। यदि ग्रीष्म के अन्त में और शरद के प्रारम्भ में इसे अच्छी धूप नहीं मिलती, तो फल के रंग लुभावने नहीं होते। जिन स्थानों पर सूखा पड़ता है, वहां वृक्ष के विकास तथा फलों के विकास के लिए सिंचाई भी की जाती है। वृक्ष लगाने के लिए मिट्टी से अधिक आवश्यक स्थान का उपयुक्त होना है। जमीन की सिंचाई होनी भी आवश्यक है। उत्तरी गोलार्द्ध में पर्वत श्रेणियों से दक्षिण तथा पूर्व की ओर की जलवायु इसके लिए एक सीमा तक हानिकारक नहीं है, क्योंकि इस क्षेत्र की शीत सेब का वृक्ष सह लेता है।

पकते हुए फल के लिए धूप आवश्यक है

सेब का अंकुर रोपा जाता है, तथा डेढ़ वर्ष के पौधे का कलम भी लगाया जाता है।

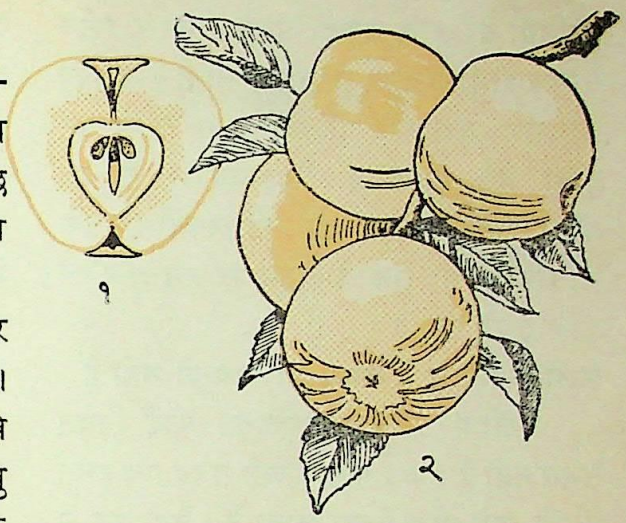

लेंस प्रिंस एलबर्ट : सेब की एक लोकप्रिय किस्म—(१) अनुप्रस्थ काट में, (२) लेंस प्रिंस एलबर्ट

वृक्ष सामान्यतः २५-२५ फुट की दूरी पर लगाये जाते हैं। कुछ किस्म के वृक्ष ४५ फुट की दूरी पर भी लगाये जाते हैं। एक कतार में अक्सर एक ही जाति के सेब लगाये जाते हैं ताकि उनकी समान सिंचाई करने में सुविधा रहे। एक जाति की केवल दो कतारें ही एक साथ रखी जाती हैं। फिर दूसरी जाति की कतारें रखी जाती हैं जिससे उनमें परपरागण हो सके। यह पूरा-पूरा प्रबन्ध किया जाता है कि पकते हुए फल को अच्छी तरह धूप मिल सके, ताकि उसका मौलिक रंग उभरे।

विश्व भर में कीटाणुनाशक ओषधियां सेब के वृक्ष पर छिड़की जाती हैं जिससे फलों को कीड़े न लग सकें। इसके फलों को काडलिंग माथ (codling moth) नामक कीड़ा अक्सर लग जाता है। ठण्डे क्षेत्रों में सीसे के आर्सनेट का छिड़काव दो बार करना आवश्यक है। गरम तथा सूखे हुए क्षेत्रों में आठ से दस बार तक भी छिड़काव किया जाता है। यदि छिड़काव न किया जाय, तो फल प्रायः नष्ट हो जाते हैं। कुछ अन्य प्रमुख हानिकारक कीट ये हैं—सैन जोसे स्केल (San Jose scale), रोजी एफिस (rosy aphis), वूली एफिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(woolly aphis), माइट (mite) की कई जातियां या लाल मकड़ा आदि। ऐपल् स्कैब नामक बीमारी बहुत खतरनाक होती है। इसका आक्रमण वृक्ष की पत्तियों तथा फलों पर होता है। गंधक के छिड़काव से ही यह बीमारी सेब के वृक्षों को नहीं लगती। इसके अतिरिक्त भी सेब के वृक्षों पर हमला करने वाले दूसरे रोग हैं।

फलों के तोड़ने में समय की पाबन्दी नहीं है

वृक्षों पर से फल तोड़ने का कोई नियत समय नहीं है। जब फल अच्छी तरह पक जाते हैं, तो उन्हें तोड़ लिया जाता है। पेड़ों पर से फल हाथ से ही तोड़े जाते हैं। उन्हें बहुत सावधानी से बचाया जाता है, ताकि जमीन पर गिरकर खराब न हों। साथ ही फूल बिलकुल नहीं छेड़े जाते, क्योंकि उनसे अगले वर्ष फल प्राप्त होता है। तोड़े जाने के बाद फल धोये जाते हैं, और इसके बाद बाहर भेजने के लिए पेटियों में भरे जाते हैं। केवल फल तोड़े हाथ से जाते हैं, उन्हें धोने तथा पेटियों में भरने का काम प्रायः हर विकसित देश में मशीनों द्वारा होता है।

ग्रीष्म में पकने वाली किस्में अधिक दिनों तक सुरक्षित नहीं रखी जा सकतीं। उन्हें पेड़ पर से उतारने के कुछ दिनों के बाद तक ही खाया जा सकता है। शरद में देर से पकने वाली किस्में छह सप्ताह से लेकर नौ माह तक सुरक्षित रखी जा सकती हैं। करीब २८.५° फै. ताप पर सेब अधिक दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इंग्लैण्ड के कुछ क्षेत्रों के फल ३६-४०° फै. पर ही रखे जाते हैं। ये इसी ताप पर रह सकते हैं। अधिकांश अमरीकी सेब ३२° फै. पर सुरक्षित रखे जाते हैं। घर में सेब को २८·५° फै. पर निश्चिन्त होकर सुरक्षित रखा जा सकता है। यदि सेब को अधिक ताप पर रखा जाता है, तो यह जल्दी पक जाता है और ढीला पड़ जाता है। इसकी मौलिक सुगन्ध भी जल्द ही नष्ट हो जाती है।

सेब का फूल (अनुप्रस्थ काट में)—(१) परागकोश, (२) वर्तिकाग्र, (३) वर्तिका, (४) पुंकेसर और (५) अण्डाशय

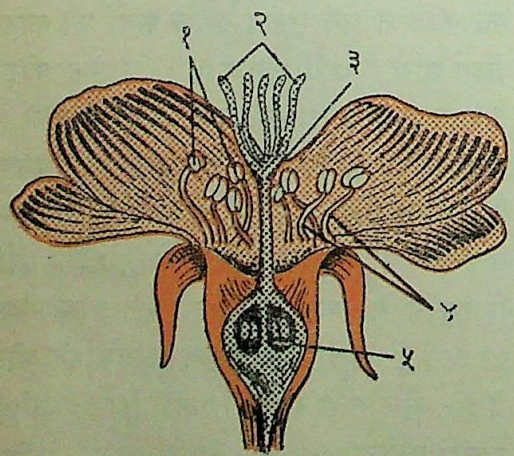

शक्ति की अधिक कैलोरी प्राप्त नहीं होती

अमरीका में इस फल की कुल उपज का ·८ भाग लोग भोजन के बाद ताजे फल के रूप में इस्तेमाल करते हैं। इससे शक्ति की अधिक कैलोरी प्राप्त नहीं होती। एक बहुत बड़े सेब से केवल १०० कैलोरी ही शक्ति प्राप्त होती है। इसमें पेक्टिन (pectin), मैलिक अम्ल (malic acid) तथा विटामिन-सी होता है। पूरी पैदावार का दसवां भाग जूस, जेली आदि के बनाने में प्रयुक्त होता है।

सेब की उपज हर वर्ष घटती-बढ़ती रहती है। इसका प्रमुख कारण यह है कि इस पर विभिन्न कीड़ों का आक्रमण होता रहता है, तथा कुछ क्षेत्रों की फसल प्रायः मारी जाती है। यूरोप में विश्व उत्पादन का ·३ भाग सेब पैदा होता है। यह उल्लेखनीय है कि यूरोप के कुछ क्षेत्र जहां सेब की उपज अधिक है, व्यापारिक उत्पादन के लिए प्रयुक्त नहीं होते। फ्रांस, इटली, स्विट्जरलैण्ड, जरमनी में इसकी अधिक पैदावार होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूगोस्लाविया, रुमानिया तथा हंगरी के भी कुछ क्षेत्रों में यह फल होता है। इंग्लैण्ड का केण्ट नामक क्षेत्र तो सेब के लिए प्रसिद्ध है ही।

उत्तरी अमरीका में भी सेब बहुतायत से होता है। वाशिंगटन का क्षेत्र सेब उत्पादन के लिए प्रमुख है। न्यूयार्क, मिशिगन, कैलीफोर्निया आदि क्षेत्रों में भी सेब उगाया जाता है।

एशिया में जापान, कोरिया तथा चीन और भारत में सेब बहुतायत से उगाया जाता है। विशेष रूप से भारत में सेब की अनेक जातियां प्रचलित हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध में आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, अर्जेण्टाइना आदि क्षेत्रों में सेब काफी पैदा होता है।

सेब की पत्तियां अण्डाकार होती हैं। पत्तियों के किनारे दन्तुरित होते हैं। वृन्त छोटा होता है तथा निचली सतह पर रोम होते हैं। फूल बसन्त में खिलते हैं, और इसी मौसम में पत्तियां भी विकसित होती हैं। पत्तियां तीन या छह के गुच्छे में एक साथ होती हैं। फूल की पंखुड़ियां बाहर से गुलाबी होती हैं तथा भीतर से सफेद। इसमें अनेक पुंकेसर तथा पांच अण्डप (carpel) होते हैं जो पुंकेसर में मिले रहते हैं।

सेब : पौराणिक सन्दर्भ

सेब के सम्बन्ध में प्राचीनतम पौराणिक वृत्तान्त उपलब्ध हैं। अनेक मिथें भी सेब के सम्बन्ध में प्रचलित हैं। हिप्पोमीनस के साथ ऐटलाण्टा अपनी दौड़ हार गया, क्योंकि वह राह में पड़े तीन सुनहले सेबों को उठाने के लिए रुका था। पेरिस ने उस देवी को सेब दिया था

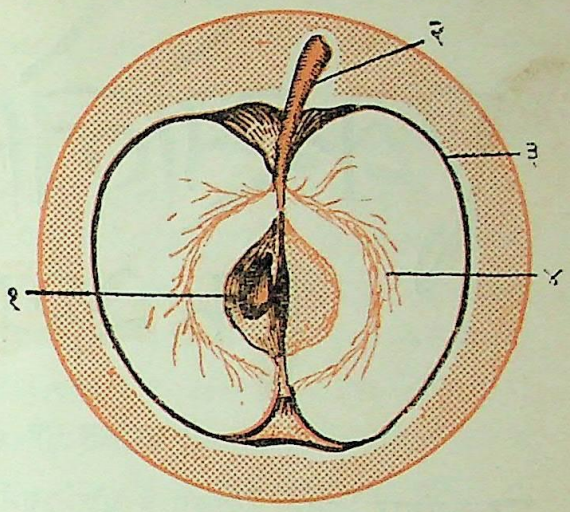

सामान्य सेब (अनुप्रस्थ काट में)—(१) बीज, (२) तना, (३) बाध्य आवरण, और (४) वसा

जिसे वह अत्यन्त रूपवती मानता था। आदम और हव्वा की कहानी में सेब का प्रमुख स्थान है। लेकिन यह सत्य है कि आदम और हव्वा के समय का सेब निश्चय ही आज के सेब की तरह नहीं रहा होगा।

एक पुरानी अंगरेजी कहावत है—'एक सेब प्रति दिन रखता है डाक्टर दूर' (an apple a day keeps the doctor away), लेकिन यह आवश्यक है कि इस कहावत में डाक्टर के साथ दन्त-चिकित्सक (dentist) भी जोड़ लिया जाना चाहिये। सेब दांतों के लिए फायदेमन्द है। इसमें कैल्शियम होता है जो दांतों को मजबूत बनाता है। दांत चमकदार भी रहते हैं। खाना खाने के बाद सेब खाना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है, लेकिन भोजन के स्थान पर सेब खाना हानिकारक है। इससे पेट में अम्लीयता बढ़ जाती है तथा व्यक्ति बदहजमी का शिकार हो जाता है। ●

अनोखा बांध

पश्चिम जरमनी के दक्षिणी राज्य बदेन बुर्टेम्बर्ग में एक अनोखा बांध बनाया गया है। इस बांध के ऊपर का भाग प्लास्टिक-जाल का बना है। इसमें रात में पानी ऊपरी भाग में स्टीम पावर प्लाण्टों की अतिरिक्त बिजली द्वारा पम्प किया जाता है। दूसरे दिन यह पानी विद्युत् खपत के चरम घण्टों में विद्युत् पैदा करता है जैसे ही बिजली की जरूरत पड़ती है, ऊपरी भाग से पानी प्रेशर पाइपों द्वारा नीचे के भाग में पहुँचाया जाता है, जिससे नीचे के प्लाण्ट के टर्बोजिनरेटरों में बिजली पैदा होने लगती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक्सोलोटल
एक ख्यातिप्राप्त जन्तु

महेश्वरसिंह सूद, एम. एस-सी., पी-एच.डी.

जन्तु-संसार कितना विचित्र है और इसमें कितनी भिन्नताएं और विषमताएं हैं, यह सब भलीभांति जानते हैं। जितना ही वैज्ञानिक इसके सम्बन्ध में जानने का प्रयास करते हैं, उतना ही अनभिज्ञ वे अपने-आपको पाते हैं। जन्तुओं की संख्या का भी अभी तक ठीक-ठीक अनुमान नहीं लग पाया है। वैज्ञानिकों ने जो गणना की है, उसके अनुसार कुल दो लाख तैंतीस हजार पांच सौ जातियां हैं। इनमें लगभग एक लाख छह हजार कीटों के अतिरिक्त अकशेरुकी हैं। छियासठ हजार कीट तथा इकसठ हजार कशेरुकी हैं। जन्तु नाप में भी भिन्न प्रकार के होते हैं। छोटे से छोटे जन्तु भी हैं, जैसे मलेरिया परजीवी, यग्लीना, पैरामीसियम आदि जो केवल अणुवीक्षण यन्त्र से ही देखे जा सकते हैं, तथा बड़े से बड़े नाप के शतुरमुर्ग ८ फुट ऊंचे तक। मानव सामान्यतः छह फुट ऊंचा होता है; हाथी ११ फुट ऊंचा; ह्वेल शार्क २० फुट तथा ब्लूह्वेल ९२ फुट लम्बी होती है। कुछ ऐसे विशालकाय जन्तु भी हैं जो कहीं अधिक ऊंचे और लम्बे हैं। इनमें डिनासर और ब्रान्तोसारस ७५ फुट तक लम्बे होते हैं। (ये जन्तु अब लुप्त हो चुके हैं।) यही नहीं कि इतनी विभिन्नता आकार और रूप में होती हैं, बल्कि कुछ एक तो ऐसे विचित्र होते हैं कि वे अपने जीवन का कुछ समय तो नर के रूप में व्यतीत करते हैं, और कुछ समय मादा के रूप में। सामन्यतः प्रौढ़ ही उत्पादन योग्य होते हैं तथा उत्पादन करते हैं। एक्सोलोटल (Axolotl) एक ऐसा लारवा है जो उत्पादन करता है। ऐसे उदाहरण बहुत ही कम हैं। इनकी यह अवस्था आपात हुई होती है। ऐसे उदाहरणों को आपात कौमारता (Neotenic) वाले कहा जाता है। ये जन्तु आरम्भ से ही वैज्ञानिकों की जिज्ञासा तथा अनुसन्धान का विषय रहे हैं।

एक्सोलोटल : प्रयोगशाला का जन्तु

एक्सोलोटल प्रकृति में बहुत ही असाधारण परिस्थितियों में ही होता है। यहां तक कि वैज्ञानिक इसको प्रयोगशाला का ही जन्तु मानने लगे हैं। इस असाधारण जन्तु पर वैज्ञानिकों ने अनेक प्रकार से प्रयोग किया है, और विशेष रूप से इसकी विशेषताओं के कारण, जैसे इस जन्तु में पुनरुत्पत्ति (regeneration) की शक्ति अद्भुत होती है। साधारणतः यह शक्ति अन्यानेक जन्तुओं में भी होती है, परन्तु बाह्य रचनाओं और आकृतियों तक ही सीमित देखी गयी है। परन्तु इस विचित्र जन्तु में तो बाह्य रचनाओं के अतिरिक्त यकृत, प्लीहा, मस्तिष्क के भागों की भी पुनरुत्पत्ति करने की क्षमता होती है और वह भी इतनी तीव्र गति से कि वैज्ञानिक अपने प्रयोगों का फल बहुत ही कम समय में जान लेते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक इसे अजनबी मानते हैं

एक्सोलोटल पर दूसरा प्रयोग भ्रूण-वैज्ञानिकों (embryologists) ने किया है। उन्होंने वर्धित होते हुए भ्रूण की कुछेक कोशिकाओं को विशेष प्रकार के रंगों से रंग दिया और फिर देखा कि उन रंगी हुई कोशिकाओं ने पूर्ण विकसित होने पर कौन-सा स्थान तथा आकृति अपनायी। तीसरा ज्ञान जो एक्सोलोटल पर प्रयोगकर जाना जा सका है, वह है कि कायान्तर (metamorphosis) जो जन्तुओं के जीवन इतिहास में होता है, किन-किन कारणों से हो पाता है। इसी के फलस्वरूप अब वैज्ञानिक निश्चित रूप से जान गये हैं कि टैडपोल (tadpole) थायराइड ग्रन्थि (thyroid gland) के हारमोन (hormone) के प्रभाव से ही मेंढक बन पाता है। इतना होने पर भी वैज्ञानिक पूर्ण रूप से यह जान नहीं पाये हैं कि यह स्वयं इस अवस्था में क्यों आ जाता है, और क्यों यह स्वयं पूर्ण रूपान्तर नहीं कर पाता है। और यदि किसी प्रकार आपात कौमारता वाले एक्सोलोटल को रूपान्तरित किया भी जाता है, तो उससे बना प्रौढ़ बिलकुल ही भिन्न होता है। इन्हीं विशेष लक्षणों के कारण तथा वैज्ञानिकों की ज्ञान-शक्ति के परे होने के कारण इसे वैज्ञानिक ख्यातिप्राप्त मानते हैं।

नाम की समस्या

एक्सोलोटल नाम वैज्ञानिकों ने बहुत ही सोच-समझकर रखा है। अंगरेजी के शब्द Axolotl का अर्थ servant of the water, अर्थात् जलसेवक होता है। यह शब्द Aztec-Indian words atl जिसका अर्थ जल (water) और xolotl सेवक (Servant) से बना है। इस प्रकार axolotl का अर्थ Servant of the water होता है। जिस प्रकार एक प्रसिद्ध व्यक्ति के उसकी विभिन्न प्रमुखताओं के आधार पर अनेक उपनाम (nick name) पड़ जाते हैं, उसी प्रकार इस जन्तु को अनेक उपनाम प्राप्त होते रहे हैं। मैक्सिको निवासी सर्वप्रथम इसको अपने खाने के लिए विभिन्न प्रकार से रखा करते थे, और कई शताब्दियों तक स्पेन की भाषा में इसके नाम चलते रहे। १८३० में सर्वप्रथम वेगलर (Wagler) नामक वैज्ञानिक ने साइरीडोन पिसीफोरमिस (siredon pisciformis) वैज्ञानिक नाम दिया। इसी समय वैज्ञानिक यह जान सके कि यह जन्तु निरुद्धवर्धन के

एक अनोखा जन्तु—काला और···

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण केवल एक लारवो ही है और इसका पूर्ण रूपान्तरिक रूप 'एम्बस्टोमा टाइग्रीनम' (Ambystoma tigrinum) होता है। यह नाम भी इसके मुंह की आकृति के कारण जो प्यालेनुमा होती है, वैज्ञानिकों ने इसे दिया है। (Ambystoma—G K Ambyx=cup और stomum=mouth) हिन्दी में इसे उलूखलमुखी कहा जा सकता है। कुछ दिनों तक भ्रम से वैज्ञानिक इसे एम्बीस्टोमा न कहकर एमब्लीस्टोमा (Amblystoma) कहते रहे। अंगरेजी के शब्द Amblys का अर्थ होता है Stupid, अर्थात् मूर्ख।

एक्सोलोटल जन्तु जगत् में अपना स्थान कशेरुकों के मध्य, उभयचारी अर्थात् जल-थलचर वर्ण (class) के यूरोडिला (urodela), अर्थात् पुच्छयुक्त वर्ग का जन्तु माना जाता है।

···सफेद एक्सोलोटल—विषमतापूर्ण

नर-मादा पृथक्-पृथक् होते हैं

एक्सोलोटल की बाह्य शरीर-रचना मछली और छिपकली के मध्य की होती है। इसमें मछली सदृश श्वास लेने के लिए तीन-तीन गलफड़े दोनों ओर होते हैं, तथा ऊपर की ओर बीचोबीच चौड़ा, पट्टीनुमा फिन होता है। यह अधिकतर काले, सफेद धब्बे-युक्त, सफेद प्यालेनुमा मुंह वाले, ६-७ इंच लम्बे, दो हाथ-पांव वाले जिनमें ४ अंगुलियां हाथों में तथा ५ उंगलियां पांवों में होती हैं, लम्बी मछली-जैसी दुम वाले तथा छिपकली-जैसे धड़ वाले होते हैं। इनके हाथ-पांव पानी में तैरने के लिए बने होते हैं। ये जमीन पर भार को वहन करने योग्य नहीं होते हैं। इनमें नर और मादा पृथक्-पृथक् होते हैं। जननकाल में स्पष्ट रूप से बाह्य आकृतियों द्वारा आसानी से नर और मादा को पहचाना जा सकता है। नर में पृष्ठ फिन मादा के मुकाबले कहीं अधिक चौड़ा होता है तथा पिछली टांगों के मध्य पीठ फूली हुई होती है। नर में अबस्कर गुहा (cloaca) के किनारे के हिस्से कूट युक्त होते हैं जबकि मादा में अबस्कर गुहा के किनारे चिकने ही होते हैं।

एक्सोलोटल आन्तरिक रचना में मछली और उभयजीवियों (amphebia) के लक्षण युक्त होते हैं। आन्तरिक रचना को देखकर यह पूर्ण रूप से निश्चित् हो जाता है कि यह जन्तु लारवावस्था में ही है जो किन्हीं अज्ञात कारणों के कारण आपात (extend) हुई होती है और जिसमें प्रौढ़ की तरह परिपक्व लैंगिक लक्षण होते हैं और उत्पादन करते हैं।

एक्सोलोटल बहुत ही ठण्डी जगह में रहना पसन्द करते हैं। सामान्य रूप से जलीय कीट तथा मत्स्य आदि पर अपना जीवन निर्वाह करते हैं। प्रयोगशाला में देखा गया है कि ये स्तनी के यकृत के टुकड़ों पर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवित रह लेते हैं, और यह भी देखा गया है कि यदि बीच-बीच में इन्हें केंचुआ या मछली खाने को दी जाय, तो ये अधिक भूख दिखाते हैं।

अनेक प्रचलित बातें

इनकी आयु अधिक से अधिक १० वर्ष देखी गयी है। केवल एक रिपोर्ट लन्दन स्थित कोवेण्ट गार्डन मार्केट से प्राप्त हुई है जिसके अनुसार सफेद जाति के एक्सोलोटल की आयु २५ वर्ष तक देखी गयी है। वास्तव में इसके स्वभाव के सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं है, क्योंकि प्रकृति में ये बहुत ही कम पाये जाते हैं, और जो कुछ भी ज्ञान इनके सम्बन्ध में प्राप्य है, वह सब प्रयोगशालाओं में पाले और रखे जाने वाले एक्सोलोटलों का है। जैसे अन्य जन्तुओं को पालने वाले अपने अनुभव के आधार पर बहुत-सी बातें निश्चितकर कहने लगते हैं कि इस प्रकार का खाना या इस प्रकार से इनका रखना ज्यादा ठीक है, उसी प्रकार इसके सम्बन्ध में अनेक बातें प्रचलित हैं। इन्हें रखने वालों ने यह अनुभव किया है कि प्रयोगशालाओं में ये बच्चे तभी देते हैं, जब इन्हें ज्यादा छेड़ा न जाय। ये अधिकतर सितम्बर से दिसम्बर तक अण्डे देते हैं, और एक अण्डसमूह में लगभग १०० अण्डे होते हैं। जहां इनमें इतनी विचित्रताएं हैं, वहां उत्पादन भी अनोखे ढंग से ही होता है। नर, मादा के सामने दुम को आगे की ओर किये

कायान्तरित रूपों में एक्सोलोटल

हुए तथा तीव्रगति से हिलाते हुए आगे-पीछे को उछलता है। यह विवाह के निमित्त आराधना होती है। नर, मादा के शरीर के किसी भी भाग को छूता नहीं है, वह उन्मत्त होकर कूदता-फांदता है, कुछ समय तक बरछी की नोंक की तरह आगे-पीछे होने के बाद नर अपनी अवस्कर गुहा (cloaca) से एक छोटा, शंकुकाकार जिलेटीन की बनी शुक्रपुटी गिरा देता है, जिसको मादा तुरन्त अपने अवस्कर गुहा में उठा लेती है। इस शुक्रपुटी में शुक्राणु होते हैं, और वे संख्या में इतने अधिक होते हैं कि एक जननकाल में जितने भी अण्डे मादा को देने होते हैं, उन सबको निषिक्त कर सकते हैं। कितना विचित्र और अनोखा ढंग है!

सिलाई करने वाला पक्षी

घर और घोंसला बनाने की दक्षता के लिए चींटियां, मधुमक्खियां तथा बया प्रसिद्ध हैं, लेकिन सोवियत संघ में एक ऐसे पक्षी का पता लगा है जो सिलाई भी कर सकता है। इस लम्बी दुम वाले पक्षी का घोंसला बड़ी-बड़ी पत्तियों वाले पेड़ों की डालों पर झूलता रहता है। यह पक्षी दो बड़ी-बड़ी मजबूत पत्तियां चुनकर उन्हें आपस में सिला देता है। चोंच का उपयोग वह सूई की तरह करता है। चोंच से वह पत्तियों में छेद कर देता है। और जमीन से चुना कोई धागा लेकर या रुई से धागा बनाकर सिलाई कर देता है। इस तरह वह पत्तियों की सिलाई करके घोंसला बनाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेंगुइन

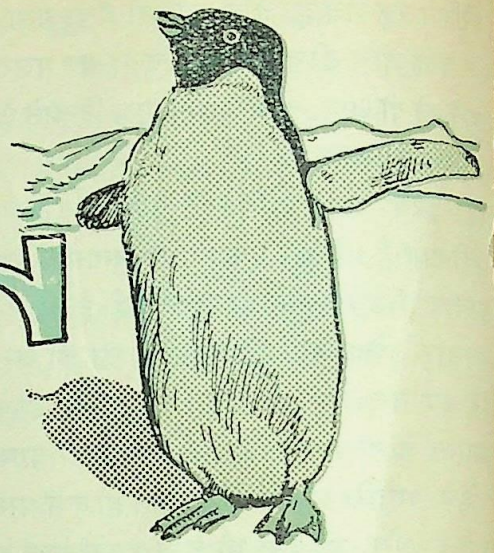

विश्वम्भरदत्त नौटियाल

मेहमानों के स्वागत सत्कार करने की हर देश की अपनी विशिष्ट नीति एवं रीति-रिवाज होते हैं। दक्षिणी ध्रुव भी इस शिष्टाचार में किसी से पीछे नहीं। आपके पहुंचने भर की देर है, यहां के निवासी, पेंगुइन पक्षी बर्फ की शिलाओं पर बड़ी शान से आपके स्वागत में प्रसन्नता एवं उत्सुकता से दलबलसहित एक लम्बी कतार में आपकी ओर चल देंगे। अपरिचित होने पर भी पास आने में न तो झिझकेंगे, न डरेंगे। बहुत करीब आकर कभी एक आंख से और कभी दूसरी आंख से आपको घूरने लगेंगे। यदि आप अपने मेजवानों की इस धृष्टता से किंचित भी नाराज हुए या उपेक्षा करने लगे, तो ये भी तैश खाकर एक लम्बी जम्हाई लेकर बर्फ की शिला पर पूंछ पटकते हुए तुरन्त ही कहीं चल देंगे। तब आपकी मर्जी है कि आप इनसे क्षमा मांगने इनके पीछे जायें, न जायें।

सागर-जल में कतार बांधे बढ़ता हुआ पेंगुइन

पेंगुइन मूलतः दक्षिणी ध्रुव का पक्षी नहीं है, किन्तु जीवन का अधिकांश समय यहीं व्यतीत करता है। प्रति वर्ष दो बार——फरवरी और सितम्बरमें—यह यहां शादी करने और अण्डे देने अवश्य आता है। जब यह इस ओर आता है, तो क्या मजाल कि अपनी कतार छोड़कर इधर-उधर चला जाय। बर्फ के शिला-खण्डों अथवा सागर के जल में भी यह कतार में ही आगे बढ़ेगा। पीछे वाले पेंगुइन अपने अगुआ के चरण-चिह्नों का अनुसरण करते हुए सीधे आगे बढ़ते जायेंगे। प्राणी-शास्त्रियों की धारणा है कि सम्भवतः दृष्टिदोष के कारण यह एक-दूसरे से सटकर चलता है, जिससे मार्ग न चूके।

पेंगुइन कुशल तैराक पक्षी है। एक दिन में कभी-कभी सैकड़ों मील तैर लेना इसके लिए आसान है। इतनी लम्बी यात्रा इसे तैरकर, चलकर, फिसलकर और कुलांचें भरकर ही तय करनी पड़ती है। तैरते-तैरते जब थक जाता है, तो बर्फ पर छाती के बल लेट जाता है। फिर सिर को उठाकर पैरों की सहायता से छाती के बल फिसलने लगता है। फिसलता भी यह इतनी तीव्र गति से है कि क्या मजाल जो कोई इसे पकड़ ले। चाहे यह तैरे, चले अथवा फिसले, किन्तु कतार न टूटने पाये, इसका ध्यान इसे हमेशा बना रहता है। यदि कहीं बीच में ही बर्फ की दरार मिल गयी, तो उसे भी यह चुटकी में लांघकर पार कर जाता है। हां, अंधेरा होते ही यह सुबह की प्रतीक्षा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में जहां कहीं भी हो, रुक जाता है।

पक्षी-जगत् में पंखों का बड़ा महत्त्व है किन्तु न्यूजीलैण्ड के राष्ट्रीय पक्षी कीवी और पेंगुइन को पंखरहित करने में ही प्रकृति ने इनका कल्याण समझा है। प्राणी-शास्त्रियों का मत है कि एक समय पेंगुइन के भी सुन्दर पंख थे और वह अच्छी तरह उड़ सकता था। किन्तु आज उड़ने लायक पंखों की जगह उसके शरीर पर कोटनुमा घने और छोटे-छोटे पंख रह गये हैं, जो सर्दी से इसकी रक्षा तो अवश्य करते हैं, किन्तु उड़ने में सहायक नहीं होते। किन्तु पंख न भी हुए तो क्या! प्रकृति ने इसे मजबूत पैर और मांसल पूंछ दे रखी है जो अतल गहराइयों वाले सागर में तैरने और बर्फ पर सरपट चलने में भारी सहायक होती है। डैने भले ही उड़ने के काम न आते हों, किन्तु सागर के अन्दर तैरते समय पतवार का काम तो देती ही है। पूंछ से यह कुर्सी का काम लेता है। फुरसत के समय उस पर बैठ जाता है।

अत्यन्त सूक्ष्म घ्राणशक्ति

पेंगुइन की आंखें प्रकृति ने बड़ी सूझबूझ और चतुराई से बनायी हैं। तैरते-तैरते यह बड़ी आसानी से आजूबाजू और ऊपर-नीचे देख लेता है जिससे सागर के पानी में अपने शत्रु और मित्र को तुरन्त ही पहचान सके। सागर के भयंकर तूफान भी इसका बाल बांका नहीं कर सकते। तूफान का अहसास होते ही सागर के गहरे पानी में चला जाता है। मूंगे तथा सागरीय घनी लताएं भी इसके मार्ग में व्यवधान नहीं डाल सकतीं। घ्राणशक्ति तो इतनी सूक्ष्म एवं तीव्र होती है कि अपने भक्ष्य की गन्ध कई मील की दूरी से ही ले लेता है।

घर-गृहस्थी की सबसे पहले मादा पेंगुइन को ही सूझती है। वही पहले दक्षिणी ध्रुव की ओर आती है। वयस्क पेंगुइन तो अपने पुराने घोंसले पर सीधा चला जाता है, अतः घोंसले बनाने की मुख्य समस्या युवक पेंगुइन की ही रहती है। चलते-चलते जिसको घोंसले के लिए उपयुक्त जगह मिल जाती है, वह वहीं अपनी घर-गृहस्थी जुटाने में लग जाता है, और बाकी आगे बढ़ते जाते हैं। कभी-कभी तो इसे सुदूर दक्षिणी-ध्रुव तक पहुंच जाना पड़ता है। घोंसले के लिए बालू वाली जगह अथवा चट्टानों के परकोट इसे विशेष पसन्द हैं, क्योंकि ऐसे स्थानों में दुश्मनों से यह अपनी तथा अण्डों और बच्चों की रक्षा आसानी से कर सकता है।

सागर के इस जीव का जीवन बड़ा ही संघर्षमय है। बिरादरी से लेकर प्रकृति तक से इसे भारी संघर्ष करना पड़ता है, किन्तु संघर्षों से जूझने के लिए यह सदैव तैयार रहता है। घोंसले को भी निरापद स्थान की अपेक्षा तूफानी प्रदेशों में बनाना अधिक पसन्द करता है, क्योंकि तूफानों से बर्फ तो उड़ जाती है, और कंकर-पत्थर इसे आसानी से मिल जाते हैं। आखिर इन्हीं कंकरों की खोज में तो यह यहां तक आने का खतरा मोल लेता है।

घोंसले की तैयारी

कुछ दिन पश्चात् नर पेंगुइन भी यहां आ धमकता है। घोंसलों का निरीक्षण करने के पश्चात् कुछ समय तक सोकर थकान मिटाता है। गृहस्थी चलाने के लिए इसका पहला काम होता है अपनी पसन्द की मादा से प्रणय-निवेदन करना और उसकी स्वीकृति पर घोंसले की तैयारी में जी-जान से लग जाना। मादा की प्रसन्नता के लिए इसे विकट परीक्षा देनी पड़ती है। कंकर का इसकी गृहस्थी से बहुत घनिष्ट सम्बन्ध होने के कारण इसे अपनी चहेती को यह विश्वास दिलाने के लिए कि विकट से विकट परिस्थिति में भी यह कंकर ला सकता है, उसे कंकर का उपहार अपनी चहेती को कंकर भेंट करने के पश्चात्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देना पड़ता है। स्वयं एक ओर अन्यमनस्क-सा खड़ा होकर पंखों को हिलाने लगता है। कभी-कभी तो गरदन के आसपास के पंखों को फैलाकर सिर उनके अन्दर छिपा लेता है। उस हालत में नर पेंगुइन एक प्रश्नवाचक

प्रकृति ने पेंगुइन को मजबूत पैर और मांसल पूंछ दे रखी है

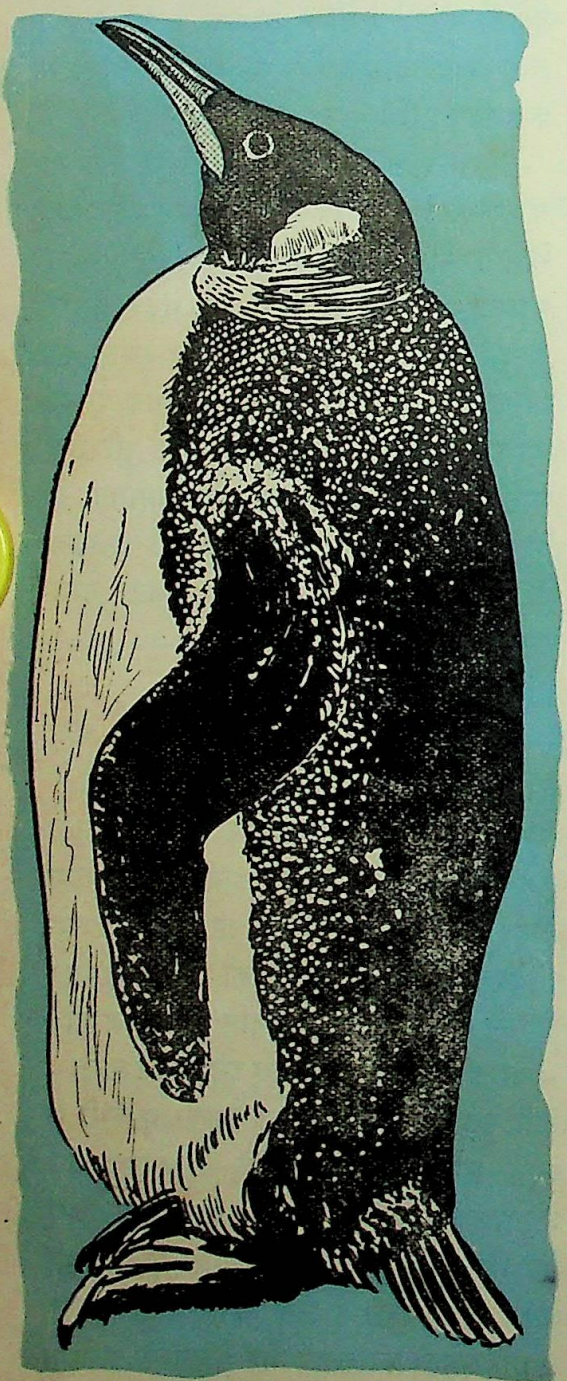

चिह्न का आकार ले लेता है। मुंह से एक विचित्र प्रकार की ध्वनि एवं सिर से विभिन्न प्रकार के प्रणय संकेत भी यह अपनी चहेती की ओर करता जाता है। यदि मादा इतनी उदार न हुई कि कंकर के बदले दिल का सौदा कर बैठे, तो वह नर को चोंच मारकर दुत्कार देती है। किन्तु नर भी बड़ा ही चालाक होता है। चोंच की मार को वह इस अपेक्षा से भी सहन कर जाता है कि कहीं मादा प्यार का बहाना तो नहीं कर रही है। इतना सब कुछ भुगत लेने पर भी यदि मादा को नर की मुहब्बत पर तरस न आया, तो वह बेचारा अपना उपहार लेकर किसी दूसरी मादा की शरण में चला जाता है। स्वीकृति मिलते ही नर मादा के पास आकर उससे धीरे-धीरे प्रणय सम्भाषण तथा विभिन्न क्रीड़ाएं करने लगता है। चोंच से चोंच मिलती है। सिर मस्ती से हवा में झूमने लगते हैं। पंख मारे खुशी के फड़फड़ाने लगते हैं, और खुशी के मारे नर बार-बार मादा को अपने अंक में भरकर उसका अलिंगन करता रहता है।

एक सुन्दर घर की कल्पना

शादी की रस्म-अदाई के पश्चात् नर पेंगुइन को घर की बड़ी चिन्ता पड़ जाती है। एक सुन्दर घर की कल्पना में वह फूला नहीं समाता। नर दूर-दूर से चिकने और गोलमोल कंकर-पत्थर लाता जायेगा और मादा कुशल शिल्पकार की तरह उन्हें संजोने में खोयी रहेगी। समय-समय पर वह नर को हिदायतें भी देती जायेगी कि किस प्रकार की सामग्री उसके रंगमहल के लिए अधिक उपयुक्त है। कभी-कभी तो पसन्द न आने पर दूर से लाये हुए पत्थरों को भी वह नर को लम्बी-सी फटकार देकर लौटा देती है और घास के सूखे तिनकों को लाने का आग्रह करती है। तब नर बेचारा अपना-सा मुंह बनाकर खून-पसीना एककर लाये हुए पत्थर को फिर कहीं दूर ले जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, किन्तु अपनी गृहणी को नाराज नहीं करता। घोंसला पूरा होते ही पति-पत्नी विभिन्न प्रकार की प्रणय-क्रीड़ाएं करने लगते हैं। तब इनका सबसे पहला काम होता है समुद्र में नहाकर थकावट मिटाना और शरीर की गन्दगी साफ करना। किन्तु नहा-धोकर फुदकते-फुदकते घर आते ही पता लगता है कि इनका चमन तो कब का उजड़ चुका है। होता यह है कि दूसरा पेंगुइन परिवार इनकी अनुपस्थिति का फायदा उठाकर इनके घोंसले की सारी सामग्री लेकर चम्पत हो जाता है। और जब वह दूसरा पेंगुइन दम्पति भी घोंसला बनाकर नहाने के लिए चल देता है, तो उसके आने तक उसका भी रंगमहल उजड़ चुका होता है। कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि नया पेंगुइन दम्पति सामान चुराने की अपेक्षा बने-बनाये घोंसले पर कब्जा कर बैठता है। ऐसी स्थिति में भीषण युद्ध छिड़ जाता है। चोंच से चोंच भिड़ जाती हैं और अंग से अंग। भयंकर शोर मचने लगता है। चार-पांच घण्टों का यह युद्ध तभी शान्त होता है, जब किसी एक की मृत्यु हो चुकती है, अथवा हार मानकर वह अन्यत्र चला जाता है। इस बार भी विजयी दम्पति नहाने के लिए जाता है, किन्तु एक साथ नहीं, बारी-बारी से।

नर बेवकूफी में पड़ोसी से उलझ पड़ता है

शादी के दो-तीन सप्ताह के अन्दर ही मादा दो-तीन दिन के अन्तर से करीब ४ इंच लम्बे और ३ इंच व्यास के सफेद अथवा हरापन लिये २-३ अण्डे देती है। यह समय पेंगुइन दम्पति के लिए बड़ी मेहनत एवं सतर्कता का होता है। कुशल गृहणी की तरह मादा भलीभांति जानती है कि अण्डों को शरीर की गरमी की निरन्तर आवश्यकता है। अतः पंखों के अन्दर गरम जगह पर रखने के उद्देश्य से मादा उन्हें हर समय चोंच से पकड़कर नीचे की ओर लटकाये रखती है। अण्डों को नर-मादा बारी-बारी से सेहते हैं। जब नर सेहता है, तो मादा नहाने, मछली पकड़ने और घूमने चली जाती है, और जब मादा सेहती है, तो नर। नर तो कभी-कभी बेवकूफी में पड़ोसी से भी उलझ पड़ता है। फलतः अण्डों को चिल्ली नामक शिकारी पक्षी ले भागता है। किन्तु मादा ऐसी भूल स्वप्न में भी नहीं करती। पिता होने की खुशी में पेंगुइन फूला नहीं समाता और विभिन्न आंगिक चेष्टाओं तथा संकेतों द्वारा सद्यः-प्रसूता मादा को समझाया करता है कि अण्डों को किस विधि से सेहना चाहिये। मादा भी इन हिदायतों को सिर-आंखों पर ले लेती है, क्योंकि वह भलीभांति जानती है कि यदि क्षण भर के लिए भी अण्डे बर्फ का स्पर्श कर लें, तो उनके अन्दर का सुग्गा जम जायेगा। चाहे कैसी ही विकट परिस्थिति क्यों न हो, किन्तु वह अण्डों को बर्फ पर कभी भी नहीं रखेगी। अण्डों की अदला-बदली के समय नर-मादा विभिन्न प्रकार की प्रणय-चेष्टाएं जी खोलकर करते रहते हैं।

निरन्तर बारह-बारह घण्टे तक अण्डे सेहने के पश्चात् चौथे सप्ताह के बाद अण्डों के भीतर से करीब ढाई-तीन औंस के भुरीले और काले रंग के सुग्गे बाहर निकलते हैं। पहले तो सुग्गे बड़े ही घिनौने और भद्दे नजर आते हैं, किन्तु कुछ दिनों के बाद खा-पीकर ये काफी आकर्षक दिखायी देते हैं। अनुकरण करने की कला इनमें जन्म से ही है। जो काम नर-मादा करते जायेंगे, ये सुग्गे भी उनकी नकल करते रहेंगे। प्रत्येक २०-२५ मिनट के बाद इन्हें खिलाने की आवश्यकता पड़ती है। अतः जब तक ये खाने में असमर्थ रहते हैं, तब-तक नर-मादा पहले तो भोजन का रस अपने मुंह में एकत्र करते हैं, और फिर सुग्गों की चोंच में अपनी चोंच डालकर सारा रस उसमें डाल देते हैं। कई दिनों तक तो बच्चों को अपनी झिल्ली के अन्दर ही छिपाये रखते हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताकि उन्हें ठण्ड न लगने पाय।

बच्चों पर कड़ा नियन्त्रण

अवस्था के साथ बच्चों का रंग भी परिवर्तित होता जाता है। गहरा-भूरा रंग धीरे-धीरे सफेद और काले रंग में बदलता जाता है। क्रमशः छाती पर सफेद और पीठ की ओर काले पंख भी आने लगते हैं। यद्यपि तीन-चार माह के बच्चे काफी सयाने हो जाते हैं, और बाहर जाने के लिए मचलने लगते हैं, लेकिन बड़े-बूढ़ों के कठोर नियन्त्रण के कारण ये अपनी इच्छा पूरी करने में असमर्थ रहते हैं। किन्तु जैसे ही नर को अपनी सन्तान की योग्यता पर भरोसा हो जाता है, मादा की सलाह से वह उन्हें बाहर जाने की अनुमति दे देता है। फिर तो ये लम्बे-लम्बे डग भरते हुए समुद्र की ओर चल देते हैं।

पानी के जीव होते हुए भी पेंगुइन के बच्चे तैरने से बहुत डरते हैं। अतः मादा इन्हें जबर्दस्ती पानी में धकेलकर तैरना सिखाती है। तैरते समय मादा एक गहरी डुबकी लगाकर सागर के अन्दर गायब हो जायगी, किन्तु दूसरे ही क्षण तुरन्त ऊपर आकर देखेगी कि बच्चे उसका अनुकरण कर रहे हैं, अथवा नहीं, अन्यथा वह बच्चों को चोंच से पकड़कर सागर के गहरे पानी में ले जायगी। यह क्रम करीब २-३ माह तक चलता रहता है।

पेंगुइन एक विशिष्ट प्रकार के रोग का शिकार हो जाता है

पेंगुइन दम्पति एक-दूसरे के प्रति बहुत वफादार एवं सहृदय रहते हैं। दो में से यदि किसी एक की मृत्यु पहले हो जाय, तो दूसरा कई दिनों तक विलाप करता रहेगा। शोकग्रस्त यह विरही जीव ६-७ दिन तक खाना-पानी, कुछ भी ग्रहण नहीं करेगा। सन्तान के प्रति भी इसका अगाध प्रेम रहता है। पक्षियों में इस प्रकार का परस्पर प्रेम अनुकरणीय है।

लम्बी, पैनी और गोलमटोल चोंच वाला यह पक्षी दक्षिण अफ्रीका, दक्षिण अमरीका आस्ट्रेलिया, दक्षिणी ध्रुव आदि विभिन्न द्वीप समूहों में बहुतायत से पाया जाता है। इसके

पेंगुइन अक्सर गहरी डुबकी लगाकर पानी में गायब हो जाते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैरों की अंगुलियां झिल्लीदार होती हैं। कान के पीछे के भाग के पीले और चितकबरे पंखों ने इसके सौदर्य को सुन्दर निखार दे दिया है। वजन भी इसका ७५—९० पौण्ड तक और ऊंचाई ३-४ फुट तक होती है।

पेंगुइन का जीवन हमेशा भयग्रस्त रहता है। समुद्री चीता और सील मछली तो पानी के अन्दर कभी-कभी इन्हें लंगड़ा ही कर देती है। चिल्ली भी इसके घोंसलों के ऊपर ही अपना घोंसला बनाती है और मौका पाते ही अण्डों और सुग्गों को चटकर जाती है। किन्तु इन दुश्मनों से भी जान बचा लेने पर दिसम्बर के आस-पास इसे एक विशेष प्रकार का रोग आ घेरता है। इस समय इसके शरीर में मोटापा आने लगता है। पंख झड़ने लगते हैं। कार्य-क्षमता और स्फूर्ति धीरे-धीरे कम होती जाती है। तैरने में बिलकुल असमर्थ हो जाता है। ऐसी अवस्था में कोढ़ी मनुष्य के समान ही यह भी समाज से बहिष्कृत समझा जाता है। बस्ती से दूर हटकर रोगी पेंगुइन अलग जा बसता है। इस समय बच्चों की दुर्गति हो जाती है। उनकी देखरेख तो हो नहीं पाती, अतः वे तुरन्त ही मर जाते हैं। वैसे पेंगुइन १०-१२ वर्ष तक जी लेता है।

पेंगुइन दक्षिणी ध्रुव के विचित्र किन्तु रहस्यमय जीव-जन्तुओं में से प्रमुख है। यह

घोंसला पूरा होते ही नर और मादा पेंगुइन विभिन्न प्रकार की प्रणय क्रीणाएं करने लगते हैं

पक्षियों का राजा भी माना जाता है। जीव-शास्त्रियों को अब तक इसकी करीब २० जालियों का पता लग चुका है। वे अब यह जानने के लिए उत्सुक हैं कि पेंगुइन में आखिर वह कौन-सी शक्ति है जिसके बल पर यह हजारों मील की समुद्री यात्रा तयकर ठीक अपने पुराने घोंसले पर पहुंच जाता है। ●

नींद-बैरोमीटर

कुछ सोवियत डाक्टरों और इन्जीनियरों ने ऐसा यन्त्र बनाया है जो बता देता है कि बेहोशी लाने वाली दवा का मरीज पर कितना असर हुआ है। इसका नाम नींद बैरोमीटर रखा गया है।

यह उल्लेखनीय है कि नींद लाने वाली दवाओं का कभी-कभी बहुत बुरा असर होता है, और कोई-कोई मरीज तो उठता ही नहीं। यह यन्त्र डाक्टर को हमेशा सूचित करता रहता है कि नींद लाने वाली दवा का रोगी पर कितना असर हुआ।

ओलों से फसल की रक्षा का नया तरीका

आर्मीनिया के ऋतु-विज्ञानविदों ने ओलों से फसल की रक्षा का एक नया और आसान तरीका खोज लिया है।

प्रति घन मीटर बादल से ६-१० तक ओले गिरते हैं। विमानभेदी तोपों के जरिये ऋतु-विज्ञान-विद् बादल में जमाव के अतिरिक्त भी स्थल बना देते हैं। परिणामस्वरूप एक विशेष वैज्ञानिक प्रक्रिया द्वारा ओले पिघलने लगते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणी-चुम्बकत्व का अनुसन्धायी

अलोइसियो गैल्वनी

राजेन्द्रकुमार

गैल्वनी धारा और गैल्वनी बैटरी से कौन परिचित नहीं है? बोलोग्ना विश्वविद्यालय का प्रोफेसर गैल्वनी प्रथम व्यक्ति था जिसने प्राणी-चुम्बकत्व की खोज की। गैल्वनी धारा के आविष्कार के लिए वह सदियों तक याद किया जायेगा। वह उन प्रारम्भिक वैज्ञानिकों में से था जिन्होंने विद्युत्-सम्बन्धी अनुसन्धानों और जिज्ञासाओं को आगे बढ़ाया।

यह कहना उचित नहीं होगा कि १८वीं शताब्दी (गैल्वनी का काल) मे ही वैज्ञानिकों ने विद्युत् की शक्ति और गुणों के महत्त्व को समझा। मिलिटस के वेल्स (ईसा पूर्व) ने कुछ ऐसे प्रयोगों की चर्चा की है जिनमें ऐम्बर (amber) के टुकड़े को रेशम से रगड़ने से वह छोटी-छोटी और हलकी वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करने लगता है। वास्तव में अंगरेजी के शब्द इलेक्ट्रिसिटी (electricity) की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के शब्द इलेक्ट्रान (electron) से हुई है, जिसका अर्थ होता है ऐम्बर। थ्योफ्रेस्टस और प्लिनी ने भी ऐसे प्रयोगों की ओर इंगित किया है जो ऐम्बर से किये जाते हैं। लेकिन यह निश्चित है कि १६५० से पूर्व अंगरेजी का शब्द इलेक्ट्रिसिटी प्रचलित नहीं था। इसके प्रचलन का श्रेय एक अंगरेज, वाल्टर शैरलटन को है जिसने पहली बार इसका प्रयोग अपनी पुस्तक 'ट्रीनरी आफ पैराडाक्सेज' में किया। फिर भी इटली के दो वैज्ञानिक, पाविया का वोल्टा और बोलोग्ना का गैल्वनी जो समकालीन थे, विद्युत्-विज्ञान का विकास करने में अत्यन्त सार्थक सिद्ध हुए। उनसे पूर्व इस क्षेत्र से सम्बन्धित जो ज्ञान उपलब्ध था, वह नगण्य था। लेकिन स्टेफेने इराक (१७२९), द फे (१७३३) तथा अन्यानेक वैज्ञानिकों के कार्यों की ओर भी दृष्टिपात करना होगा, क्योंकि इनके कार्य वोल्टा और गैल्वनी के लिए सहायक सिद्ध हुए। यह उल्लेखनीय है कि हैक्बी ने १७०० में एक ऐसा यन्त्र तैयार कर लिया था जिससे विद्युत्-स्फुलिंग लक्षित किये जाते थे।

गैल्वनी और वोल्टा के प्रयोग

गैल्वनी का जन्म बोलोग्ना में १७३७ में हुआ था। वह अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्ति का था। वह चर्च से सम्पृक्त होना चाहता था, लेकिन उसके माता-पिता ने उसे प्रोत्साहन नहीं दिया। उन्होंने उसे चिकित्सा की शिक्षा लेने की ओर प्रवृत्त किया।

गैल्वनी ने शरीर-रचना-शास्त्र का विशेष अध्ययन किया और कुछ समय पश्चात् वह बोलोग्ना के विश्वविद्यालय में इसी विषय का लेक्चरर नियुक्त हो गया। उन दिनों यह पद यूरोप में बहुत पुराना तथा प्रतिष्ठित था। गैल्वनी ने गैलीज्जि नामक चिकित्सक की पुत्री से विवाह किया। आमतौर पर जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी प्रचलित है उसके अनुसार गैल्वनी धारा की खोज का पूरा-पूरा श्रेय गैल्वनी की बीवी को है। कहा जाता है कि गैल्वनी की टेबिल पर एक विच्छेदित मेंढक पड़ा था। जब मेंढक के पैरों के सम्पर्क में एक स्कैपल आया, तो उनमें तुरन्त हरकत हुई। वह स्कैपल कुछ पहले एक विद्युत् मशीन के संसर्ग में आया था।

जब गैल्वनी अपनी टेबिल पर आया, तो उसकी बीवी ने उससे इसकी चर्चा की। वह आश्चर्यचकित रह गया। उसने इसी तरह के कुछ अन्य प्रयोग किये और पाया कि उसकी बीवी का कथन सच है। वास्तव में मेंढक के पैरों में हरकत दो धातुओं के सम्पर्क में आने के कारण हुई थी। गैल्वनी प्रयोग करता रहा। उसने एक बैटरी का आविष्कार किया जो गैल्वनी बैटरी के नाम से जानी जाती है।

पाविया में वोल्टा भौतिक-विज्ञान का प्रोफेसर था। उसने गैल्वनी के प्रयोगों का निरीक्षण किया और पाया कि वे महत्त्वपूर्ण हैं। उसने गैल्वनी को जो सहयोग दिया उसके परिणामस्वरूप वोल्टा-चित्ति प्रकाश में आयी। गैल्वनी के साथ अपने प्रयोगों में उसने पाया कि शक्तिशाली विद्युत् धातु के जोड़े से उत्पन्न की जा सकती है। उसने तांबे और जस्ते की चकती के जोड़ों को बीच में गीले कपड़े की चकती रखकर अलग-अलग रखा। चित्ति का एक सिरा जस्ते की चकती पर खत्म हुआ और दूसरा तांबे की चकती पर। जैसे ही तार से उनका सम्पर्क स्थापित किया गया, विद्युत्-धारा लगातार बहने लगी। इस तरह चित्ति से विद्युत्-प्रवाह पर एक विवाद उत्पन्न हो गया। वोल्टा का मत था कि दो भिन्न-भिन्न धातुओं के संयोग से ही ऐसा हुआ है, लेकिन एक दूसरी पद्धति के समर्थकों का खयाल था कि यह कुछ रासायनिक क्रियाओं से सम्भव हुआ।

जब गैल्वनी अपने टेबिल पर आया, तो उसकी बीवी ने वह अजीब बात उसे बतायी

वोल्टा और गैल्वनी विद्युत्-विज्ञान के अन्तर्गत एक-दूसरे के बहुत नजदीक हैं, किन्तु उनका जीवन एक-दूसरे के प्रतिरूप था। गैल्वनी का जिस शहर में जन्म हुआ था, उससे वह कभी बाहर नहीं गया था। और वोल्टा तमाम दुनिया घूमा हुआ था—स्विजट्रलैण्ड, हालैण्ड, जरमनी, फ्रांस, इंग्लैण्ड आदि। रायल सोसायटी का उसने काप्ली मेडल प्राप्त किया था। गैल्वनी को वह पद भी नहीं मिला था जो वोल्टा को मिला था। और वोल्टा केवल इटली में ही सम्मानित नहीं हुआ था, बल्कि नैपोलियन ने उसे पेरिस में बुलाया था। आस्ट्रिया के शाह ने उसे पदुआ की फिजीकल फैकल्टी का डाइरेक्टर नियुक्त किया था।

गैल्वनी का चर्चनीय प्रबन्ध

जिस समय गैल्वनी और वोल्टा कार्य कर रहे थे, उस समय विश्व के अन्य देशों के वैज्ञानिक भी इसी विषय पर शोध कर रहे थे। वान क्लिस्ट तथा मशेनब्राक ने लिडन जार का आविष्कार किया। वेन्यामीन फ्रैंकलिन आदि वैज्ञानिकों ने भी उन्हीं दिनों कुछ महत्त्वपूर्ण प्रयोग किये। फ्रैंकलिन की पतंग से सम्बन्धित कहानी प्रसिद्ध है। उसकी पतंग के सिरे पर एक नुकीला तार लगा था और हाथ में जो डोर थी, उसमें सिल्क के रिबन में लिपटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक चाबी बंधी थी। पतंग उड़ाते हुए फ्रैंकलिन ने अनुभव किया कि वह चाबी को छूकर विद्युत् स्फुलिंग का अनुभव कर रहा है। फिर उसने चाबी से एक लिडेन जार को चार्ज किया। इस तरह उसने स्थापित कर दिया कि बादल की बिजली में भी वही विद्युतीय द्रव (electrical fluid) है।

फ्रैंकलिन ने अपने प्राय: सभी प्रयोग १७५२ में किये। कुछ ही वर्षों बाद गैल्वनी ने प्राणी-चुम्बकत्व की खोज की। इस खोज के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि मेंढक में गति इसलिए हुई कि सरीसृप के कोषों में विद्युत् थी।

१९वीं शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश में सीबेक नामक एक वैज्ञानिक वोल्टा-चित्तियों पर प्रयोग कर रहा था। अपने प्रयोगों में उसने पाया कि कई धातुओं को आपस में जोड़कर और उनके जोड़ों को विभिन्न ताप पर रखकर विद्युत् उत्पन्न की जा सकती है। बाद में पेल्टिया ने अपने प्रयोग में पाया कि दो भिन्न धातुओं के जोड़ से यदि विद्युत्-धारा गुजारी जाती है, तो वह जोड़ या तो गरम हो जाता है या ठण्डा हो जाता है। उसका गरम या ठण्डा होना विद्युत्-धारा के प्रवाहित होने की दिशा पर निर्भर करता है। इन सब प्रयोगों के साथ वोल्टा और गैल्वनी की खोजों में परिष्कार हुआ और वे सामने आयीं। उन्हें अन्य वैज्ञानिकों ने मान्यता प्रदान की।

अलेसान्द्रो वोल्टा—विद्युत्-विज्ञान के अन्तर्गत यह नाम गैल्वनी के बहुत निकट है

कई वर्षों के बाद गैस्तॉप्लान्ते ने व्यावहारिक संचायक (accamulator) तैयार किया जो विभिन्न वैज्ञानिकों के प्रयत्नों के बाद वर्तमान रूप में आ सका है। संचायकों के प्रयोग विभिन्न हैं। यह निश्चित है कि इसके न होने से हम प्रकाश और विद्युत्-शक्ति से वंचित रह जायेंगे।

गैल्वनी ने अपनी खोजों पर एक प्रबन्ध प्रकाशित किया। उस प्रबन्ध की बड़ी चर्चा हुई; उससे उसे काफी प्रसिद्धि मिली। वह विद्यार्थियों को पढ़ाता रहा और अपने प्रयोगों में लगा रहा। उसे विश्वविद्यालय के प्रोफेसर का पद आकस्मिक रूप से मिला।

लेकिन वह अधिक दिनों तक उस पद पर बना न रह सका। विज्ञान के क्षेत्र में राजनीति दखल देने लगी। गैल्वनी को परिणाम के लिए तैयार होना पड़ा।

गैल्वनी के समय का यूरोप आज के यूरोप से भिन्न था। संयुक्त इटली की स्थापना के एक सौ वर्ष पूर्व का वह यूरोप था। इटली अनेक राज्यों में बंटा हुआ था। कुछ राज्य बड़े थे और कुछ छोटे। वे एक-दूसरे से ईर्ष्या करते थे। पैपल के राज्यकाल के अन्त में एक क्रान्ति सफल रही और सिसालपिन गणतन्त्र की नींव पड़ी।

गैल्वनी निराशा में डूबता गया

सभी नागरिकों से आग्रह किया गया कि वे इस नये गणतन्त्र के प्रति वफादारी की शपथ लें। गैल्वनी की धार्मिक प्रवृत्ति ने इसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरोध किया। वह पैप्सी के प्रति वफादार रहा था और उसके प्रति उसमें कोई शंका नहीं आयी थी। वह नये शासन को न्यायोचित नहीं मानता था, इसलिए उसने इनकार कर दिया।

गैल्वनी को बोलोग्ना विश्वविद्यालय का पद छोड़ना पड़ा। वह अब नितान्त व्यक्तिगत जीवन बिताने लगा और अपने भाइयों के पास रहने लगा, लेकिन मानसिक रूप से वह अस्वस्थ था। इसका प्रभाव उसके स्वास्थ्य पर पड़ा। वह महसूस कर रहा था कि एक ऊंचाई पर से वह नीचे गिरा दिया गया है। उसका पतन हो गया है। यह भावबोध उसके लिए अजीब था··· और वह लगातार निराशा में डूबता गया। वह जीवन के प्रति उदासीन हो गया।

बाद में विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने सोचा कि गैल्वनी की विज्ञान को देन उसके नये गणराज्य के प्रति वफादारी की शपथ न लेने से महत्त्वहीन नहीं हो जाती, और उन्होंने उसे पुनः उसके पद पर बुलाना चाहा। लेकिन वह अब इस दुनिया में नहीं था। १७९८ में उसकी मृत्यु हो चुकी थी।

गैल्वनी की मृत्यु के तीस वर्ष बाद तक वोल्टा जीवित रहा। उसने अनेक अनुसन्धान किये। उनमें इलेक्ट्रोफोरस अति प्रसिद्ध है। यह एक ऐसा यन्त्र है जिससे प्रेरण (induction) के माध्यम से विद्युत् प्राप्त की जाती है।

गैल्वनी और वोल्टा के अनुसन्धानों तथा परिश्रम के परिपार्श्व में अनेक प्रतिभाओं का अभ्युदय हुआ। माइकल फेराडे एक प्रसिद्ध नाम है। उस समय जब गैल्वनी की मृत्यु हुई, फेराडे की उम्र केवल सात वर्ष थी। प्रारम्भ से ही वह विद्युत्-विज्ञान के प्रति आकर्षित था। उसने प्रथम डायनमो का आविष्कार किया।

यह अवश्य है कि फेराडे ने जिस डायनमों का आविष्कार किया वह आज के किसी डायनमों से बराबरी नहीं कर सकता, लेकिन

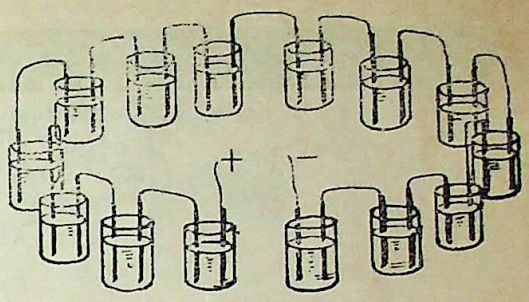

वोल्टाइक सेल

वह एक महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान था।

वोल्टा ने वोल्टा बैटरी का विकास गैल्वनी बैटरी के आधार पर किया। १८०२ में अंगरेज वैज्ञानिक हम्फरी डैवी ने इससे सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण प्रयोग किये।

नयी-नयी प्रतिभाएं सामने आयीं

यह निश्चित है कि यदि गैल्वनी और वोल्टा न होते तो टेलीग्राफ का आविष्कार शायद ही हुआ होता। वोल्टा बैटरी ने वैज्ञानिकों को इस दिशा में अनुसन्धान करने के लिए प्रेरित किया। डैनियल सेल के आविष्कार तक (१८३६) इस ओर विशेष प्रगति नहीं हुई थी। पहले के सेल बहुत जल्दी ध्रुवित (polarized) हो जाते थे और उनमें से विद्युत्-धारा निर्बाध प्राप्त नहीं की जा सकती थी, लेकिन डैनियल सेल से यह कठिनाई दूर हो गयी। ह्वीटस्टोन और कुक, दो अंगरेज वैज्ञानिकों ने ब्रिटेन में सर्वप्रथम टेलीग्राफ का प्रचलन किया। उसी समय मोर्स ने इसे अमरीका में विकसित किया। उन्हीं दिनों स्टेनहिल जरमनी में अपने टेलीग्राफ के आविष्कार में सुधार कर रहा था।

और इसके बाद ही समुद्र के अन्दर से होकर जाने वाले केबलों का आविष्कार हुआ।

गैल्वनी के कार्यों का विद्युत्-विज्ञान के विकास में महत्त्वपूर्ण योग रहा। उसका अभ्युदय अनेक प्रतिभाओं को जन्म दे सका। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवरसायन

एच. जी. वेल्स

बहुत कम ऐसे सौभाग्यशाली व्यक्ति होंगे जिन्हें अपने परिश्रम का फल शत-प्रतिशत निश्चित रूप से प्राप्त हो जाता है। अन्य लोगों के बारे में कुछ दावे के साथ मैं नहीं कह सकता, परन्तु डा. पीटर के बारे में कह सकता हूं कि उन्हें अपने अथक परिश्रम का फल मिल गया। जीवन में मैं अनेक वैज्ञानिकों को अपने कार्य में असफल होते देख चुका हूं, लेकिन डा. पीटर इस मामले में व्यतिक्रम प्रमाणित हुए।

उनके द्वारा आविष्कृत दवा मानव-समाज में एक अद्भुत क्रान्ति उत्पन्न कर सकेगी, ऐसी धारणा लोगों के मन में उत्पन्न हो गयी है। इस दवा को मैं कई बार चख चुका हूं। इसका वर्णन करना मेरे लिए बहुत ही मुश्किल है। यह दवा हमारे शरीर में जाकर स्नायुओं को अति सचेतन बना देती है। प्रचलित दवाओं में ऐसी कोई दवा अब तक आविष्कृत नहीं हुई है जो इतना सचेतन बनाने की क्षमता रखती हो।

देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में डा. पीटर के अनेक चित्र प्रकाशित हो चुके हैं। मेरी इच्छा थी कि उनका एक चित्र प्रकाशित करवाऊं, लेकिन इस दिशा में मुझे सफलता नहीं मिली। मुझे विश्वास है कि अधिकांश पाठक उस चित्र की शक्ल को नहीं भूले होंगे जिसमें उन्नत ललाट, चौड़ी भौंहों और सम्पूर्ण आकृति पर दृढ़ता की छाप स्पष्ट थी। नगर के दक्षिणी हिस्से में स्थित अपने भवन के एक प्रकोष्ठ में वे निरन्तर विस्मयजनक अन्वेषण करते रहे।

अक्सर खाली समय काटने के लिए मैं उनके यहां चला जाया करता था और हम दोनों आपस में नाना प्रकार की बातचीत किया करते थे। मैं आज भी यह बताने में असमर्थ हूं कि क्यों वे इतना मुझसे स्नेह करते थे। हमारी आपस की बातचीत उनके अन्वेषण के सम्बन्ध में होती थी। उन्हें मुझसे बातें करने में आनन्द मिलता था, इसलिए मैं यह जान सका कि उनके द्वारा आविष्कृत ओषधि का कितना महत्त्व है। जो कि यह बात ठीक है कि इस दवा की जांच वे पूर्णरूप से अपनी प्रयोगशाला में नहीं कर पाये थे। अधिकांश जांच स्कूल आफ ट्रपिकल मेडिसिन लेबोरेटरी में करते रहे।

अब यह रहस्य किसी से छिपा नहीं रह गया कि डा. पीटर स्नायुओं के ऊपर दवाओं की विभिन्न प्रतिक्रियाओं के परिणामों का अन्वेषण करने में जुटे हुए हैं। इस क्षेत्र में उनका ज्ञान असीम है, खासकर रसायन क्षेत्र में। जब तक उन्हें अपने कार्य में पूर्ण रूप से सफलता प्राप्त नहीं होती, तब तक वे उसे प्रकट नहीं करते। गत कई वर्षों से स्नायुविक उत्तेजक पदार्थ के सम्बन्ध में गवेषणा करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बाद जिस दवा का आविष्कार उन्होंने किया है, उससे वे अमर हो जायेंगे। चिकित्सा-विज्ञान उनकी इस देन के लिए सदा कृतज्ञ बना रहेगा। डा. पीटर द्वारा आविष्कृत फार्मूला-२३४ मानव जीवन के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा।

आज से एक साल पहले उन्होंने कहा था कि मैं अभी तक पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं हो पाया हूं। मेरी दवा सम्भवतः स्नायुओं को बगैर कोई नुकसान पहुंचाये केन्द्रीय-शक्ति की वृद्धि कर देती है अथवा स्नायुओं की परिवहन शक्ति को मन्द बना डालती है, किम्बा किसी हृदय-क्रिया को बढ़ा देती है। मैं अब एक ऐसी दवा का आविष्कार करना चाहता हूं जो नख से शिख तक अपने प्रभाव का विस्तार कर सके। मतलब यह कि व्यक्ति की कार्यक्षमता तीन व्यक्तियों-जैसी हो जायगी।

"लेकिन इससे लोग थकान महसूस करेंगे।" मैंने शंका प्रकट की।

"यह तो होगा ही। इससे नुकसान भी होगा। लेकिन यह सोचो कि इसका परिणाम कैसा होगा? इस दवा की एक छोटी शीशी तुम्हारे पास रहे, तो तुम साधारण मनुष्य से दूना चल सकते हो, दूना काम कर सकते हो और तुममें दूनी चिन्तनशक्ति उत्पन्न हो सकती है।"

"क्या यह सम्भव है?"

"मैं इस पर विश्वास करता हूं, इसलिए यह सम्भव है। अगर यह सम्भव न होता, तो पूरे एक साल का परिश्रम व्यर्थ न हो जाता? फासफराइट यौगिक पदार्थ से बनी इस दवा के गुणों का अनुभव कर चुका हूं। कुछ देर के लिए तुम अपने को एक राजनीतिज्ञ समझ लो। इस वक्त तुम चाहते हो कि मैं जो कुछ कहूं, उन बातों को तुरत दर्ज कर लिया जाय। इस निश्चय के पश्चात् तुम अपने प्राइवेट सेक्रेटरी को इस दवा का एक खुराक पिला देते हो। नतीजा यह होता है कि उसकी कार्यक्षमता दूनी हो जाती है। तुम जितना जल्दी बोलोगे, उससे अधिक तेज वह सब लिख डालेगा। एक रात में एक पुस्तक तैयार हो सकती है। उदाहरण के लिए एक बैरिस्टर एक विकट केस को लेकर परेशान है या एक डाक्टर किसी सीरियस रोगी के मर्ज के बारे में चिन्ता कर रहा है। अगर वे मेरी दवा की एक खुराक पी लें, तो उनकी चिन्तन-शक्ति दूनी हो जायगी।"

"तब तो यह दवा काफी कीमती होगी? एक बूंद की कीमत एक गिन्नी के बराबर होगी।"

"इसमें कोई सन्देह नहीं कि पहले-पहल इस दवा की कीमत कुछ ज्यादा होगी और जब अधिक परिमाण में तैयार की जायगी तब कीमत कम हो जायगी। सभी दिशा में इस दवा का प्रयोग करने पर हमें कुछ हानि

डाक्टर पीटर ने एक ऐसी दवा का आविष्कार किया जिसका असर अदभुत् था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठानी पड़ सकती है, पर उसकी अपेक्षा लाभ अधिक होगा। इस दवा से यही नुकसान होगा कि हमारी उम्र कुछ तेजी से बढ़ती जायगी। फिर भी जो लोग इस दवा का इस्तेमाल नहीं करेंगे, उनकी अपेक्षा दवा पीने वालों की उम्र दूनी हो जायगी।" डा. पीटर ने शान्त स्वर में कहा।

"क्या आप यह अनुभव करते हैं कि आपकी यह कल्पना एक दिन सत्य में परिणत होगी ?"

"मेरा ऐसा ही विश्वास है।" कहने के बाद डा. पीटर बाहर की ओर देखने लगे। फिर मेरी ओर एकटक देखने लगे। उनके हाथ में एक छोटी-सी शीशी थी जिसमें हरे रंग का तरल पदार्थ था। मुस्कराते हुए कहा, "मैं अपने आविष्कार से पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हूं।"

"यह दवा आपके जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण आविष्कार है।" मैंने कहा।

मृदु स्वर में डा. पीटर ने कहा, "हां, बात ठीक है।"

इस घटना के बाद कई बार मुझसे उनकी इस दवा के बारे में बातचीत हो चुकी है। प्रत्येक बार वे दवा के बारे में दृढ़ भाव से अपने विचार व्यक्त करते रहे। कभी-कभी मैं यह शक प्रकट करता रहा कि व्यावसायिक दृष्टि से इस दवा का निर्माण किया जा सकता है। उन्होंने एक बार कहा था, "मैं संसार को एक ऐसी दवा उपहार में दे जाऊंगा, जिसकी वजह से लोग मुझे कभी भूल नहीं सकेंगे। लेकिन मैं यह जरूर चाहूंगा कि दस वर्ष तक इस दवा के निर्माण में मेरा पूरा अधिकार रहे। मेरे परि म का लाभ पूंजीपति न उठा सकें, यही मेरी एकमात्र इच्छा है।"

इस दवा के बारे में धीरे-धीरे मुझे यह मालूम हो गया कि जीवन की गति को बढ़ाने के लिए यह महत्त्वपूर्ण कार्य करेगी। बुढ़ापे में क्लान्ति नहीं आयेगी। दस-ग्यारह वर्ष की उम्र में लोग जवान बन जायेंगे और पच्चीस से तीस वर्ष की उम्र में प्रौढ़ तथा तीस से चालीस वर्ष के दरम्यान बूढ़े दिखायी देंगे। लेकिन स्थविर बने नहीं रहेंगे।

उस दिन सात या आठ तारीख थी। डा. पीटर ने अत्यन्त प्रसन्नता से स्वीकार किया कि दवा का आविष्कार पूर्ण रूप से सफल हो गया है।

मैं सैलून की ओर जा रहा था। अचानक मुझे देखते ही वे दौड़े हुए आये। उस समय उनकी आकृति पर एक अवर्णनीय आनन्द तथा उत्साह की छाप थी। मेरे हाथों को अपने हाथ में लेते हुए बोले, "तैयार हो गयी और बिलकुल सफल रूप में। आओ, तुम्हें दिखाता हूं।"

"सच ?"

"हां।" चीखते हुए बोले, "मुझे स्वयं अपने ऊपर विश्वास नहीं हो रहा है।"

"स्नायुविक क्रिया को वह दूनी कर सकती है ?"

"उससे अधिक। लो जरा पीकर देख लो। हाथ कंगन को आरसी क्या ! संसार की सबसे महान् वस्तु का आविष्कार मैंने आखिर कर ही डाला।"

इसके बाद वे तेजी से मेरा हाथ पकड़े हुए अपने घर की ओर ले चले। वातावरण स्वच्छ था। हलकी बयार चल रही थी। मैंने डा. पीटर से कहा, "जरा धीरे-धीरे चलिए। आपकी बराबरी करने में मैं अपने को असमर्थ पा रहा हूं।"

"क्यों ? क्या मैं बहुत तेज चल रहा हूं ?" अपने चलने की गति को कम करते हुए उन्होंने मुझसे पूछा।

"क्या आपने दवा पी है ?"

"नहीं।" उन्होंने कहा, "दवा की शीशी की धोवन जरूर कुछ पी है। लेकिन वह तो रात की बात है। इस दवा में हजार गुना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शक्ति बढ़ाने की क्षमता उत्पन्न हो गयी है।"

ओक लकड़ी से बने दरवाजे को धकेलते हुए हम कमरे के भीतर गये। चाबी मेरे हाथ में देते हुए उन्होंने कहा, "इस दवा के बारे में प्रचार करने से पहले अच्छा है कि हम स्वयं अपने ऊपर प्रयोग करके देख लें, ताकि उसके समस्त प्रभावों की जानकारी हमें हो जाय।"

मैंने कहा, "ठीक है। मैं इसके लिए तैयार हूं।"

मेरी ओर गौर से देखते हुए बोले, "उस शीशी में तरल जो पदार्थ देख रहे हो, वही मेरे परिश्रम का फल है। तुम्हें भय तो अनुभव नहीं हो रहा है?"

मैं जरा डरपोक किस्म का आदमी हूं। पत्रकार होने के कारण कागज-कलम से लड़ना अधिक पसन्द करता हूं। लिहाजा कुछ देर के लिए डर गया। पूछा, "आप तो पी चुके हैं?"

"हां।" डाक्टर ने अकड़ते हुए कहा, "क्या मुझमें किसी प्रकार का परिवर्तन देख रहे हो? मेरी समझ से मैं पूर्ण रूप से स्वस्थ हूं?"

"लाइए, मैं भी अनुभव प्राप्त करूं। कम से कम इससे क्या हो सकता है, इसका अनुभव तो हो ही जायगा। कैसे पीना पड़ेगा?"

"पानी मिलाकर।" डाक्टर ने कहा।

डेस्क के सामने कुर्सी खींचकर बैठते हुए डाक्टर ने कहा, "दवा पीने के पहले एक बात की चेतावनी दे देना चाहूंगा। वह यह कि दवा पीते वक्त आखें बन्द कर लेना और दो मिनट बाद खोलना। डरने की जरूरत नहीं है। सब कुछ पहले की तरह देख पाओगे। अगर आंखें खुली रह गयीं, तो रेटिना में शाक लग सकता है।"

"मंजूर।"

"अब शान्त बालक की तरह बैठ जाओ। इधर-उधर हिलो मत। यह याद रखना कि दवा के पीते ही तुम्हारा दिल, फेफड़ा, मांस-पेशियां और मस्तिष्क हजार गुना से अधिक क्रियाशील हो जायेगा। लेकिन इसका अनुभव तुम्हें नहीं होगा। इस वक्त जैसा अनुभव कर रहे हो, ठीक उसी प्रकार अनुभव दवा पीने के बाद भी करते रहोगे। सिर्फ यही मालूम होगा कि संसार की समस्त कार्य-प्रणाली धीमी गति से चल रही है। बहुत धीरे-धीरे काम हो रहा है। यही है इस दवा का मुख्य प्रभाव।"

"अच्छा!" चकित भाव से मैंने कहा।

"स्वयं अपनी आंखों से यह सब देखोगे।" गिलास में पानी उड़ेलते हुए डाक्टर ने कहा, "पानी की मात्रा मैंने जरा बढ़ा दी है। अधिक मात्रा में दवा लेना ठीक नहीं है।" इसके बाद गिलासों में दवा मिलाने के बाद उन्होंने कहा, "मैंने अभी-अभी जो हिदायतें दी हैं, उन्हें भूल मत जाना। आंखें बन्द रखना और दो मिनट तक हिलना-डुलना मत। इसके बाद मैं जब आखें खोलने के लिए कहूं, तब खोलना।"

मुझे एक गिलास देकर उन्होंने अपना गिलास उठाया और परस्पर एक-दूसरे के स्वास्थ्य की कामना करते हुए हम एक सांस में सारी दवा पी गये। इसके बाद आंखें बन्द किये बैठे रहे। मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था, अपना अस्तित्व है ही नहीं। अचानक डाक्टर ने आवाज दी, तो आंखें खुल गयीं। गौर से देखने पर किसी प्रकार की नवीनता का अनुभव मुझे नहीं हुआ। मैं जहां खड़ा था, वहीं खड़ा था। सिर्फ सामने, मेज पर दो खाली गिलास पड़े थे।

डाक्टर ने पूछा, "कुछ अनुभव कर रहे हो?"

मैंने कहा, "नहीं। जरा-सा..."

"किसी प्रकार की आवाज सुनायी दे रही है?"

मैंने कहा, "जी, हां। लगता है, जैसे पानी बरस रहा है। आखिर यह कैसी आवाज है?"

"यह है विश्लेषित शब्द।" इसके बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने खिड़की की ओर इशारा करते हुए पूछा, "इस तरह का परदा कभी देखा है ?"

मैंने खिड़की की ओर देखा, परदे का एक हिस्सा ऊपर की ओर उठा हुआ है, जैसे पतले टीन का चद्दर ऊपर मोड़ दिया हो।

"अब इधर देखो।" एक गिलास उठाकर उन्होंने काफी ऊपर से छोड़ दिया। मैंने सोचा, नीचे गिरकर वह चूर-चूर हो जायगा। लेकिन मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वह गिलास ऊपर हवा में स्थिर होकर तैरने लगा। डाक्टर ने रहस्य पर प्रकाश डालते हुए कहा, "आम-तौर पर यह गिलास एक सेकण्ड में ३२ फुट की गति से नीचे की ओर मध्याकर्षण के कारण गिरा। लेकिन तुमने एक सेकण्ड के सौवें भाग के भीतर इस दृश्य को देखा। इससे यह बात आसानी से समझ सकते हो कि मेरी दवा हमारी दृष्टिशक्ति को कितना बढ़ा सकती है।"

वे उक्त गिलास के नीचे-ऊपर हाथ फेरते हुए देखने लगे कि इसके नीचे कोई आधार तो नहीं है। इसके बाद गिलास को उठाकर उन्होंने मेज पर रख दिया।

तभी मैं कुर्सी पर से उठकर खड़ा हो गया। अभी तक मैं अपने में किसी प्रकार का परिवर्तन अनुभव नहीं कर रहा था लेकिन खड़े होने के बाद ऐसा लगा, जैसे मेरे अंग-प्रत्यंग के सभी यन्त्र काफी तेजी-से काम कर रहे हैं। हृदय का स्पन्दन सेकण्ड में हजार बार है। लेकिन इन सब वजहों से मुझे किसी प्रकार की असुविधा या तकलीफ नहीं हो रही है। अचानक बाहर की ओर नजर उठते ही मैंने देखा, एक घोड़ा अपने दोनों पैर ऊपर की ओर उठाकर खड़ा है। एक व्यक्ति साइकिल पर सवार होकर स्थिर खड़ा है। सभी गति-हीन से लग रहे थे। मैंने चीखते हुए डाक्टर से पूछा, "इस दवा का असर कब तक रहेगा ?"

"भगवान जाने।" डाक्टर ने कहा, "पहली बार दवा पीकर मैं सो गया था। जब जगा तब मालूम हुआ कि दवा का असर खत्म हो चुका है। मुझे पहले-पहल भय मालूम हुआ था। पता नहीं क्या हो ? दवा का असर कई मिनट तक था और मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था, जैसे कई घण्टे तक असर रहा।"

इस कथन के बावजूद मुझे भय अनुभव नहीं हो रहा था। शायद इसलिए कि हम दो व्यक्ति थे। मैंने कहा, "चलिए, जरा बाहर की सैर कर आयें।"

"ठीक है।"

"लोग हमारे बारे में कुछ सोचेंगे तो नहीं ?"

"नहीं।" डाक्टर ने कहा, "उन्हें यह मौका नहीं मिलेगा, क्योंकि हम सबसे द्रुतगामी यान से भी तेज चलते नजर आयेंगे। अच्छा होगा कि हम सदर रास्ते की राह से न जाकर पिछवाड़े की ओर से निकलें।"

इस निश्चय के बाद हम दोनों बाहर आये। उस दिन जितनी घटनाएं हमारे साथ हुईं, आज जब उन सब बातों को सोचता हूं तो अजीब-सा लगता है। जीवन की अकल्पनीय अभिज्ञता थी। राह चलने वाले लोग अवाक होकर खड़े दिखायी दे रहे थे। घोड़ागाड़ी वगैरह सब कुछ स्थिर दिखायी दे रहे थे। मुझे ऐसा लगता था, मानो कोहकाफ की नगरी से गुजर रहा हूं। एक युवती एक युवक को देखकर मुस्करा उठी और मैंने देखा कि उसकी मुस्कान समाप्त नहीं हो रही है। एक आदमी अपनी मूंछों को ऐंठ रहा था लेकिन उसकी मूंछें अपनी जगह पर खड़ी रह गयीं। यह सब दृश्य अद्भुत और आश्चर्यजनक-सा नजर आ रहा था।

अचानक डाक्टर ने कहा, "इधर देखो।" मैंने देखा, उनकी एक अंगुली पर एक मक्खी भिनभिन कर रही थी और उसके पंख शम्बूक गति से फड़फड़ा रहे थे। बाजे बज रहे थे, पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी आवाजें हमें घड़ी की टिक्-टिक् ध्वनि की तरह सुनायी दे रही थीं। लोग खिलौनों की तरह खड़े दिखायी दे रहे थे। उछलने वाले कुत्ते शून्य में लटके हुए नजर आ रहे थे।

"काफी गरमी महसूस कर रहा हूं। जरा धीरे चलिए।" मैंने डाक्टर से अनुरोध किया।

"आओ भी।" कहते हुए डाक्टर तेजी से मुझे आगे की ओर खींचते हुए बढ़ चले। अब तक हम शहरी इलाके को पारकर देहाती क्षेत्र में आ गये थे। यहां आने पर ऐसा लगा, जैसे एक अवास्तविक वातावरण में आ गया हूं। लेकिन इन सभी घटनाओं के बीच मैं बराबर यह महसूस कर रहा था कि जिन दृश्यों को देखा, वे सब लमहे भर में हो गये। क्या यह सब सत्य था ?

अचानक डाक्टर प्रसन्नता से चीखते हुए बोले, "वह रही बुढ़िया।"

"कौन बुढ़िया।"

"मेरे घर के बगल में रहती है। इसके पास एक पालतू कुत्ता है जो मुझे देखने पर तुरन्त भोंकने लगता है।" अचानक डाक्टर को बचपना सूझा और जब तक मैं कुछ समझूं, उससे पहले ही बुढ़िया के हाथ से कुत्ते को लेकर वे आगे दौड़ गये। बेचारा कुत्ता कुछ समझ भी नहीं पाया। वे कुत्ते की गरदन पकड़े हुए थे और वह डर के कारण पत्थर की तरह सख्त बन गया था। मैंने उनसे कहा, "कृपया उसे छोड़ दीजिए। आप जिस तेजी से चल रहे हैं, इससे कपड़ों में आग लग सकती है। आपके पैण्ट का रंग बादामी हो गया है। हम प्रति सेकण्ड तीन मील की गति से दौड़ रहे हैं। वायु के घर्षण से प्रचण्ड ताप उत्पन्न हो रहा है। ओफ, बड़ी गरमी महसूस कर रहा हूं, डाक्टर। मुझे सांस लेने में तकलीफ हो रही है। देखिए, पसीने से लथपथ हो गया हूं। अब राह चलते व्यक्ति कुछ चलते-फिरते नजर आ रहे हैं। शायद दवा का प्रभाव समाप्त हो रहा है। अब कृपा करके कुत्ते को छोड़ दीजिए, वरना काट लेगा।"

"हूं।" डाक्टर ने गौर से एक बार कुत्ते की ओर देखा और फिर एक ओर उछाल दिया। वह पहले ऊपर की ओर उड़ा और फिर जहां दो व्यक्ति छाता लगाये खड़े बात-चीत कर रहे थे, वहीं जाकर गिर पड़ा। वह बेचारा छाता लिये हुए गिर पड़ा।

मैंने कहा, "दवा का असर समाप्ति की ओर है, इसी लिए गरमी लग रही है।"

डाक्टर ने कहा, "मुझे भी गरमी सता रही है। अब हम कहीं आराम कर लें तो ठीक रहेगा। अगर और कुछ देर तक हम दौड़ते रहते, तो हमारे कपड़ों में आग लग जाती। सच पूछो तो इधर मेरा ध्यान नहीं गया था।"

थोड़ी देर बाद हमें ऐसा मालूम पड़ा कि दवा का प्रभाव बिलकुल जाता रहा। तभी डाक्टर ने कहा, "राह के किनारे घास पर जल्दी सो जाओ।"

सारा शरीर तवे की तरह जल रहा था। हम जहां सोये, वहां की घास तुरन्त पीली हो गयी। घोड़ा गाड़ी पहले की तरह चलती दिखायी देने लगी। हमारे कानों में वास्तविक जगत की आवाजें निरन्तर आने लगीं।

हमें इस तरह घास पर लेटा हुआ देखकर एक बूढ़ा अवाक् रह गया। उसने अपनी नौकरानी से न जाने क्या कहा। धीरे-धीरे हमारे चारों तरफ भीड़ बढ़ने लगी। ड्यूटी पर स्थित सिपाही आ गया। यह देखकर हम भागने के लिए उठ खड़े हुए। क्षण भर विश्राम कर लेने के कारण हमारे शरीर की क्लान्ति समाप्त हो गयी थी। कुछ दूर आगे बढ़ने पर हमने देखा कि एक होटल के कर्मचारी से छाता वाला लड़ रहा था। वह कह रहा था कि कुत्ते को तूने फेंका है, वरना किसे गरज पड़ी है कि इस तरह मेरे ऊपर फेंके।

धीरे-धीरे उन सभी दृश्यों को वास्तविक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में देखने लगा, जिन्हें दवा के असर के कारण अवास्तविक समझ रहा था। लोग हमें अजीब निगाहों से देख रहे थे और हम अपने विचित्र अनुभव पर मन ही मन अनेक कल्पनाएं करते जा रहे थे।

डा. पीटर इस दवा को बाजार में बेचने के लिए देने के पहले और रिसर्च करना चाहते हैं। इस दवा का कितना असर अब भी मुझमें बाकी है, इसी से अन्दाजा लगाया जा सकता है कि इस कहानी को मैंने तीन मिनट में लिखा है। जो कोई इस दवा का सेवन करेगा, वह दिन भर परिश्रम करने के बाद भी पुनः तरोताजा होकर उससे अधिक काम कर सकेगा।

मुझे विश्वास है कि डा. पीटर की यह दवा सभ्य जगत् में एक अद्भुत क्रान्ति उत्पन्न करेगी। सिर्फ यही नहीं, डाक्टर इस दवा की उलटी दवा का भी आविष्कार करने के प्रयत्न में लगे हुए हैं, जो हमें कुछ घण्टों के लिए आत्मविस्मृति की क्षमता दे सकेगी।

डाक्टर ने मुझे बताया है कि कुछ महीनों के बाद वे अपने इस अभिनव आविष्कार को बाजार में बिकने के लिए भेज देंगे, ताकि हर साधारण आदमी इस दवा का उपयोग कर सके। यह दवा बाजार में २००, ९००, २,००० पावर वाली होगी। इसमें सन्देह नहीं कि यह दवा हमारे व्यस्त जीवन के लिए काफी उपयोगी सिद्ध होगी। आप स्वयं भी जब उपयोग करेंगे तब इन तथ्यों पर विश्वास करने लगेंगे। ●

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के प्रकाशन

क्रम संख्या	लेखक	मूल्य रु० पैसे
(क) पारिभाषिक शब्द संग्रह		
१—विज्ञान शब्दावली	वनस्पति-विज्ञान, गणित, रसायन, भौतिकी, भूगोल, भू-विज्ञान तथा प्राणी-विज्ञान की भारत सरकार द्वारा नियुक्त वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा अनुमोदित अंग्रेजी-हिन्दी शब्दावली	७.२५
(ख) पुस्तकें—		
१—शुद्धधन ज्यामित प्रवेशिका	गणेश सखाराम महाजनि	४.१५
२—भारत की वित्तीय शासन व्यवस्था	हरिगोपाल परांजपे	८.५०
३—भारतीय परम्परा	हुमायुन कबीर	२.५०
४—समीकरण सिद्धांत	श्रीराम सिन्हा	५.३५
५—समस्थानिकों के संसार में	वी० मैजन्त्सेफ	२.९०
६—अर्द्धचालक और उनके उपयोग	ए. एफ. यौफी	२.९०
७—रहस्यमय विश्व	जेम्स जीन्स	२.८०
८—माताओं और शिशुओं के रोगों की रोकथाम	ओ. मकेयेवा	४.००
९—अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध	महेशप्रसाद टंडन	८.५०
१०—उल्काएं	वी. फेडिस्की	२.६०
११—अंतर्राष्ट्रीय विधि	सांवलिया बिहारीलाल वर्मा	१४.००
१२—जापान का इतिहास	केनेट स्काट लातुरेत	७.५०
१३—कार्बोहाइड्रेट और ग्लाइकोराइड	फूलदेवसहाय वर्मा	४.८५
१४—जीवन की कहानी	रत्नसिंह गिल	४.३५
१५—बरती और मानव	शिवतोष दास	८.२५

प्राप्ति स्थान : प्रबंधक, प्रकाशन शाखा, सिविल लाइंस, दिल्ली

डी. ए. ६५/६२१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शत्रुकीट दीमक

वीरेन्द्रनाथसिंह, एम. एस-सी.

वर्षा ऋतु में रात्रि के प्रकाश के पास उड़ने वाली पंखधारी दीमकों को नष्ट कर देना चाहिये, क्योंकि ये ही दीमकें आगे चलकर राजा और रानी दीमकों में परिवर्तित हो जाती हैं तथा असंख्य दीमकों को जन्म देती हैं।

दीमकों के छत्ते, बमीठे आदि को पूर्ण रूप से नष्ट कर देना चाहिये। परन्तु इसके साथ-साथ रासायनिक नियन्त्रण विधियों का प्रयोग भी होना चाहिये। दीमक के छत्ते को नष्ट करके बराबर कर देना चाहिये तथा उस स्थान के मध्य ६-१२ इंच तक गहरा छेद कर देना चाहिये। इस छेद में कार्बन डाइ-सल्फाइड तथा क्लोरोफार्म का मिश्रण छोड़ना आवश्यक है।

दीमक के छत्ते पर साइनो गैस का प्रयोग

पेट्रोल भी छोड़ा जा सकता है, परन्तु उसका प्रभाव कम होता है। इसकी मात्रा छत्ते के आकार पर निर्भर करती है। परन्तु साधारणतः ८-१२ औंस तक की मात्रा सन्तोषजनक परिणाम देती है। यदि दीमक का छत्ता काफी बड़ा हो, तो पम्प द्वारा साइनो गैस का प्रयोग छत्ते के छिद्रों द्वारा करना चाहिये। मेथाइल ब्रोमाइड का प्रयोग भी किया जा सकता है। यह एक प्रकार की कांच की बोतलों में मिलता है। बोतल को दीमक के छत्ते में घुसेड़ दिया जाता है तथा उसके बाद उसे तोड़ दिया जाता है, जिससे विषैली गैस निकल पड़ती है। इससे दीमकें मर जाती हैं। परन्तु यह गैस अत्यन्त ही घातक विष है, अतः बहुत ही सावधानी से इसका प्रयोग करना चाहिये।

तरकारी की फसलों में जड़ों और तनों के आसपास काफी बालू बिछा देना चाहिये। इससे दीमकों का प्रकोप कुछ समय के लिए रुक जाता है।

पौधे पर चूने और गंधक के मिश्रण का लेप

पौधों के बाह्य भाग पर जो भूमि से लगे हों, चूने और गंधक के मिश्रण (लाइम-सल्फर) से लेप कर देना चाहिये। इनके निवास स्थानों के छिद्रों में गंधक तथा संखिया का विष छोड़ देना चाहिये।

सजावट के पौधों में दीमक कभी-कभी मूल, तनों और कलमों को क्षति पहुंचाती है। सिंचाई के पानी में क्रूड आयल इमलशन या फिनाइल का हलका मिश्रण मिला दिया जाना चाहिये। नरसरी या पौधाशाला को हलके लम्बाकू के काढ़े से सींचिए।

दीमकें खेतों में

फसल कट जाने के बाद खेतों में कूड़ा, ठूंठ तथा खूँटियां आदि नहीं रहने देना चाहिये। खेतों के किनारे-किनारे नाली खोद-कर उसमें गोबर तथा सूखी पत्तियां भर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीजिए। इसमें दीमकें आकर एकत्र हो जायेंगीं। इस पर मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा देनी चाहिये।

गन्ने के बीज के टुकड़ों को बोने से पहले चूने के पानी, फिनाइल अथवा कोलतार (अलकतरे) में १२ घण्टे तक भिगोकर रखना चाहिये अथवा गन्ने के बीज के टुकड़ों को ०.२ प्रतिशत डी. डी. टी. (वाटर डिसपरसिबल) घोल में डुबा देना चाहिये। इस घोल को, एक पौण्ड ५० प्रतिशत डी. डी. टी. (वाटर डिसपरसिबल चूर्ण) को २५ गैलन पानी में मिलाकर बनाया जा सकता है, अथवा गन्ने के टुकड़े के कटे हुए भाग को उपरोक्त घोल के गाढ़े लेप में भी डुबाया जा सकता है। महाराष्ट्र में यही प्रचलित है।

पानी के आभाव के कारण प्राय: पौधे सूखना प्रारम्भ कर देते हैं, जिससे दीमक के आक्रमण को प्रोत्साहन मिल जाता है। दक्षिण भारत में खेतों तथा गन्ने के बोने के बीज के टुकड़ों को बी. एच. सी. ०.१ प्रतिशत या डी. डी. टी ०·१६ प्रतिशत से छिड़काव करने की रीति प्रचलित है।

मध्य प्रदेश में सिंचाई की फसल के लिए सिंचाई की नाली में बहते हुए पानी में थोड़ा-थोड़ा क्रूड आयल इमलशन (चक्की का तेल) (५-६ सेर प्रति बीघा की मात्रा से) मिला देने की प्रथा है। इस तरह दीमक का उपद्रव कम हो जाता है।

ईख के खेतों की नाली में ५ प्रतिशत बी. एच. सी. या ५ प्रतिशत क्लोरडेन का चूर्ण १५-२० पौण्ड प्रति एकड़ की मात्रा में छिड़कना चाहिये। एल्ड्रीन के शुद्ध रसायन का चूर्ण या घोल एक पौण्ड प्रति एकड़ की मात्रा में भी प्रयोग किया जा सकता है। उत्तर प्रदेश की ईख अनुसन्धानशाला, शाहजहांपुर का उपयोगी अनुभव निम्नलिखित है—दीमकों से बचाव के लिए गन्ने की बोवाई करते समय गामा बी. एच. सी (२० प्रतिशत) के ५ पौण्ड अथवा हेप्टाक्लोर (२० प्रतिशत) के १५ पौण्ड मूल घोल को १५० गैलन पानी में मिलाकर कूड़ों में पड़े हुए पेड़ों पर छिड़कवाना चाहिये। ऐसा जनवरी से मार्च तक किया जा सकता है। यदि मई और जून में भी दीमकों का प्रकोप हो जाय, तो खेतों की शीघ्र ही सिंचाई करवा देनी चाहिये। यदि बोवाई अक्तूबर या नवम्बर में की जाय, तो बी. एच. सी. आल्ड्रीन के ५ प्रतिशत चूर्ण को क्रमश: २०, १५, १० पौण्ड प्रति एकड़ की मात्रा से बोते समय कूड़ों में डाल दिया जाना चाहिये।

अर्थोत्पादक उद्यानों में शत्रुकीट

गेहूं तथा जौ आदि की फसलों में ५ प्रतिशत बी. एच. सी. चूर्ण १०-१५ पौण्ड प्रति एकड़ की मात्रा में अथवा ३ प्रतिशत क्लोरडेन १५ पौण्ड प्रति एकड़ की मात्रा में भूमि में मिला देना चाहिये। परन्तु दक्षिण भारत में ५ प्रतिशत बी. एच. सी., क्लोरडेन या एल्ड्रीन चूर्ण को खेत की मिट्टी में बोने से पहले या बोवाई के साथ २०-२५ पौण्ड प्रति एकड़ की मात्रा में मिलाते हैं। मूंगफली की फसल में एल्ड्रीन ३० प्रतिशत के इमलशन का प्रयोग खेतों में करना चाहिये।

धान के खेतों में तथा पौधाशाला या नरसरी में एल्ड्रीन ३० प्रतिशत इमलशन का १ औंस ५ गैलन में मिलाकर २५० गैलन घोल प्रति एकड़ की मात्रा से भूमि पर छिड़काव करना चाहिये। दक्षिण भारत में टीपओका के बीज के हेतु टुकड़ों को ०·५ प्रतिशत बी. एच. सी. के ससपेंसन घोल में डुबाते हैं, या बी. एच. सी. के ०·२५ प्रतिशत घोल का छिड़काव करते हैं। नियन्त्रण की उपरोक्त विधियां खेतों की अन्य फसलों में भी उपयोगी होती हैं, जैसे कपास आदि में १ पौण्ड शुद्ध एल्ड्रीन रसायन प्रति एकड़ की मात्रा में उपयोगी होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थोत्पादक उद्यानों, जैसे चाय, काफी, सुपारी, चाय के बगीचों में एल्ड्रीन ५ प्रतिशत चूर्ण का प्रयोग ४०-६० पौण्ड प्रति एकड़ की मात्रा में करना चाहिये। नरसरी की क्यारी तैयार करने के समय भुरकाव करना चाहिये। पूरी वयस्क चाय केउद्यान की झाड़ी एवं पेड़ों में जड़ के पास भूमि में अच्छी तरह मिलाना चाहिये। जिन स्थानों पर कीटनाशक को रासायनिक खादों में मिलाया जाता है तथा उसे चाय उद्यान की भूमि के ऊपर छिड़का जाता है, वहां एल्ड्रीन के स्थान पर २ पौण्ड प्रति एकड़ की मात्रा से डी एल्ड्रीन का प्रयोग करना चाहिये। सुपारी के उद्यानों में दीमक बहुधा नवजात पौधों या नरसरी के पौधों पर आक्रमण करती है। इसके लिए पौधाशाला की भूमि को एलड्रीन इमलशन ३० प्रतिशत के घोल द्वारा २५० गैलन प्रति एकड़ की मात्रा से छिड़काव करना चाहिये। नारियल तथा ताड़ जाति के पोधों तथा वृक्षों में दीमक का आक्रमण होने पर तम्बाकू के बेकार डण्ठलों को पौधे के आसपास सिंचाई के लिए बनाये गये आलवाल (थाथे) में छोटे-छोटे टुकड़े करके गाड़ देने से दीमक का आपतन कम हो जाता है। करंज, नीम, अण्डी, पोस्ता आदि की खली की खाद देने से भी दीमक का आक्रमण घट जाता है। बगीचों तथा छोटे-छोटे बगीचों और खेतों में सिंचाई की नाली में हींग और नमक को कपड़े में बांधकर डालने से भी दीमक का आपतन कम हो जाता है।

सड़ी हुई खाद में दीमक नहीं लगती

पर्वतीय तथा मैदानी भागों में वन के वृक्षों तथा लकड़ी में दीमक का आक्रमण होता है। अमरीका के कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में एक विशेष प्रकार के विद्युत्-यन्त्र का आविष्कार लगभग १९५४ में हुआ। यह एक हलका-सा यन्त्र है जो बैटरी से चलता है।

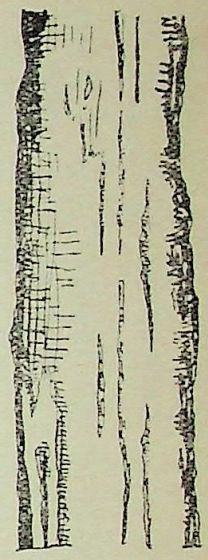

दीमकें तने में घुसकर उसे खोखला बना देती हैं। वृक्ष कमजोर पड़कर सूख जाता है, गिर पड़ता है

इसका एक भाग वृक्ष या लकड़ी में तनिक धंसा देने से कान में लगे चोंगे में एक विशेष प्रकार की ध्वनि होती है जिससे इस बात का आभास मिल जाता है कि इस वृक्ष या लकड़ी में दीमकों का निवास है। इस यन्त्र का कुल वजन ३ पौण्ड है। इसका उपयोग वृक्षों के अन्य तनाछेदक शत्रुकीटों के लिए भी किया जाता है। यह स्मरण रहे कि हिमालय पर्वत पर पायी जाने वाली दीमकों की उपजातियों के जीवन-चक्र की कोई भी अवस्था भूमि के भीतर नहीं होती है। अतः इनके आक्रमण का प्रारम्भिक पता केवल उपरोक्त यन्त्र से ही लग सकता है। वन के वृक्षों तथा लकड़ी की दीमक से रक्षा के लिए निम्नलिखित कीट-नाशक रसायनों का प्रयोग किया जाता है—कापर सल्फेट, जिंक क्लोराइड, पेण्टा क्लोरो-फेनोल, कापर नैफथेनाल।

यह एक तथ्य है कि यदि पूरी तरह सड़ी हुई खाद हो तो उसमें दीमक नहीं लगती है। अण्डी, करंज, तथा नीम की खली की खाद देने से दीमक दूर भाग जाती है। यदि इसमें भी दीमक का प्रकोप कम न हो, तो खेती की फसलों पर दी गयी किसी भी रासायनिक विधि को अपनाया जाना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

विषों के प्रयोग की विधियां

क्रम सं.	विष	अवस्था	प्रयोग की मात्रा	प्रयोग की अवधि	सावधानियां
१—	कार्बन डाइसल्फाइड	तरल या द्रव पदार्थ के रूप में कांच की बोतलों में मिलता है।	१ पौण्ड प्रति १००घन फुट स्थान के लिए	२४ घण्टे तक	१—जलती हुई दियासलाई, सिगरेट तथा अग्निसे प्रज्वलित वस्तुओं को दूर रखिए, क्योंकि ये शीघ्र अग्नि से प्रज्वलित हो उठती हैं। २—इसे सूंघिए नहीं, क्योंकि यह श्वास-क्रिया द्वारा प्रभाव करने वाला एक प्राणघातक विष है।
२—	इथीलीन डाइक्लोराइड, कार्बनटेट्रा क्लोराइड, अर्थात् (डी.डी.सी.टी.)	तरल अथवा द्रव पदार्थ के रूप में काष्ठ एवं धातु के ड्रमों में मिलता है।	२½ पौण्ड प्रति १०० घन फुट स्थान के लिए	२४ घण्टे तक	१—आग लगने का कोई भय नहीं होता है। २—यह तनिक कम घातक है परन्तु इसे भी सूंघना नहीं चाहिये। ३—बीज के लिए यह हानिप्रद नहीं है।
३—	मेथिल ब्रोमाइड	यह गैस के रूप में दबाव द्वारा कम घेरने वाले सिलिण्डरों या कांच की बोतलों में होता है।	१ पौण्ड प्रति १,००० घन फुट स्थान के लिए	४८ घण्टे तक	१—यह एक प्राणघातक विष है। इसका प्रयोग किसी योग्य व्यक्ति द्वारा ही करना चाहिये। २—इसका प्रयोग केवल विष रक्षक यन्त्र (गैसमास्क) पहनकर ही करना चाहिये। ३—यह मनुष्यों और पशुओं के लिए प्राण-घातक है। ४—यह बीज या अन्न के लिए हानिप्रद हो सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्न के भण्डारगृहों में उपरोक्त विधि से मेथिल ब्रोमाइड का प्रयोग करना चाहिये। परन्तु इससे अधिक सुरक्षित ई. डी. सी. टी. विष होता है। कार्बन डाइसलफाइड विष का भी प्रयोग कर सकते हैं। इनके प्रयोग की विधियों का संक्षिप्त विवरण पृ. पृ. पर की सारिणी से ज्ञात हो सकता है।

कागज, सूती, ऊनी, तथा जूट मिलों के भण्डार गृहों में उपरोक्त विषों का ही प्रयोग उचित होगा।

दीमक प्रतिरोधक सीमेण्ट

मानव निवास के स्थानों में काष्ठ तथा उपयोगी लकड़ी की रक्षा की समस्या अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है। केवल कीटनाशकों का बाहरी प्रयोग ही सन्तोषजनक परिणाम नहीं देता है, जब तक कि उनके निवास स्थान, जन्म-भूमि को पूर्णरूप से नष्ट न कर दिया जाय। यद्यपि यह देखा गया है कि दीमकें चूने की नींव में छिद्र करके घुसकर भवनों पर आक्रमण करती हैं, परन्तु सीमेण्ट की नींव द्वारा इनका घुसना कठिन होता है जब तक कि उसमें दरारें न पड़ जायें।

दीमकों से स्थायी रूप से सुरक्षा के लिए भवनों के निर्माण से पहले नींव के नीचे ३-६ इंच तक मोटी सीमेण्ट की परत बिछी होनी चाहिये। फर्श के नीचे भी इसी प्रकार का प्रबन्ध होना चाहिये, तथा फर्श भी सीमेण्ट का होना चाहिये। भवनों में लगे काष्ठ एवं लकड़ी की सभी वस्तुओं के नीचे भी सीमेण्ट की एक मोटी परत होनी चाहिये। यदि फिर भी दीमक का आक्रमण हो जाय तो ५ प्रतिशत तैलयुक्त डी. डी. टी. का प्रयोग करना चाहिये। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित काष्ठ रक्षकों का भी प्रयोग किया जा सकता है—कापर सल्फेट, जिंक क्लोराइड, पेण्टाक्लोरोफेनोल तथा कापर नैफथेनोल आदि।

काष्ठ या लकड़ी के खम्भे तथा चहार-दीवारियों का प्रयोग किसानों, उद्यान रक्षकों तथा भवन निर्माताओं द्वारा अधिक किया जाता है। इन पर भी दीमकों का विशेष आक्रमण होता है। इनकी सुरक्षा के हेतु भी उपरोक्त प्रकार की निर्माण-विधि का प्रयोग करना चाहिये। अस्थायी सुरक्षा के हेतु कोलतार या क्रियोसोट तैल का प्रयोग किया जा सकता। इन खम्भों को भूमि में गाड़ने से पहले ५ प्रतिशत तेलयुक्त डी. डी. टी. में अच्छी तरह भिगों देने से भी काफी दिनों तक दीमक के आक्रमण से सुरक्षा हो जाती है। कोई भी उपरोक्त विधियां स्थायी सुरक्षा नहीं देती हैं। अतः स्थायी सुरक्षा के हेतु इन खम्भों का निचला भाग एक सीमेण्ट के सांचे में गड़ा हुआ होना चाहिये, ताकि भूमि का कोई भी भाग लकड़ी या काष्ठ को न छूता हो। ऐसा ही किसी धातु से भी किया जा सकता है।

मधुमक्खियों द्वारा कपास में परागीकरण

कपास में जिन दिनों फूल लग रहे हों उन दिनों यदि मधुमक्खियां उन पर आयें तो बिना अतिरिक्त प्रयत्न के प्रति हेक्टर डेढ़ सेण्टनर उपज बढ़ जाती है। किर्गीजिया के विशेषज्ञ अनेक प्रयोगों के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि यह कपास की उपज बढ़ाने के लिए सबसे आसान तरीका है। उनका कथन है कि मधुमक्खियों द्वारा परागीकरण से रेशों में गुणगत् सुधार होता है और बिनौलों की संख्या भी बढ़ जाती है।

यह खोज विश्व में अनोखी है, और सम्भावना है कि अनेक देश इससे लाभ उठायेंगे, तथा कपास की विभिन्न किस्में प्रचलित होंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

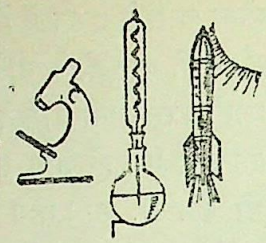

कृत्रिम मृत्यु : एक सम्भावना

यह एक वास्तविकता है कि कृत्रिम मृत्यु के ३० मिनट पश्चात् मनुष्य को पुनः जीवित किया जा सकता है। चिकित्सा-विज्ञान ने प्रायोगिक रूप से इसे सत्य प्रमाणित कर दिया है। अब यह कोशिश की जा रही है कि मानव को गहन हिमकारी स्थिति में रखकर उसकी जीवन की गति को रोक दिया जाय और एक निश्चित अवधि के पश्चात् उसका जीवन पुनः प्रारम्भ कर दिया जाय। विज्ञान का विश्वास है कि इस प्रकार के सफल परीक्षणों के पश्चात् वह दिन भी आ जायेगा जब महीनों, वर्षों और दशाब्दियों के पश्चात् मनुष्य को हिमकारी अवस्था से मुक्ति देकर जीवित किया जा सकेगा। चिकित्सा-जगत् का यह चमत्कार अनोखा होगा। इससे मनुष्य की आयु बढ़ेगी।

चिकित्सा-विज्ञान के क्षेत्र में मानव की आयु बढ़ाने की अनेक खोजें की जा रही हैं। यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है, क्या निकट भविष्य में यह सम्भव हो पायेगा कि जीवन की घड़ी को रोक दिया जाय और निश्चित समय बाद उसे पुनः प्रारम्भ कर दिया जाय? क्या मनुष्य को गहन हिमकारी स्थिति में रखकर उसे पुनः जीवित करना सम्भव होगा?

८ वर्ष पूर्व पश्चिम जरमनी के प्राणी-शास्त्री प्रो. इगले अपने एक प्रयोग में पुष्पों के पराग को कृत्रिम रूप से हिमकारी स्थिति में रखकर सुलाने में सफल हो गये थे। वे पराग कई वर्षों तक उत्पादक बने रहे।

हेम्बर्ग के इपिनडोर्फ विश्वविद्यालय अस्पताल के एनेस्टेटिक डिवीजन में प्रो. होरट्ज ने कई रोगियों को ठण्डी अवस्था में रखकर ३० मिनट बाद फिर जीवित कर दिया। जब रोगियों की बाद में नींद खुली, तो उन्हें बड़ी कठिनाई से यह विश्वास हो सका कि वे आधे घण्टे तक मृत्यु की अवस्था में रह चुके हैं।

प्रो. हरट्ज का मत है कि इस प्रक्रिया से कठिन आपरेशन करने में बड़ी सहायता मिलेगी।

चाय और काफी के चम्मच

अमरीका की अल्यूमीनियम कम्पनी ने एक ऐसा चम्मच बनाया है जिसे चाय तैयार कर देने के बाद फेंक दिया जाता है। एक कप गरम पानी में यह चम्मच थोड़ी देर तक हिलाया जाता है। इसके बाद यह फेंक दिया जाता है और कप में चाय बन जाती है। इस चम्मच में दरअसल छोटे-छोटे छेद होते हैं जिनमें चाय का मिक्सर भरा रहता है। पानी के सम्पर्क में आने पर मिक्सर बाहर निकल आता है और पानी से मिलकर चाय बन देता है।

यह उल्लेखनीय है कि अमरीका में काफी के भी चम्मच मिलते हैं।

अवरक्त दूरदर्शी का देहरादून में निर्माण

उपकरण अनुसन्धान एवं विकास संस्थान देहरादून में एक नये उपकरण अवरक्त दूरदर्शी (इन्फ्रारेड स्निपरस्कोप) का निर्माण किया गया है। इस उपकरण की सहायता से सैनिक स्वयं अदृश्य रहकर दुश्मन की गहरी स्थिति का पता लगा सकता है। इस उपकरण में अवरक्त प्रकाश का एक उद्गम स्थित होता है जो दृश्य प्रकाश किरणों के मार्ग में अवरोध उत्पन्न करता है और अदृश्य अवरक्त प्रकाश किरणें विकीर्ण करता है। इस विकिरण द्वारा प्रकाशित लक्ष्य का प्रतिबिम्ब उपकरण के दूसरे सिरे पर बिम्ब परिवर्तक नली में बनता है। इस नली में इसका अदृश्य अवरक्त बिम्ब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

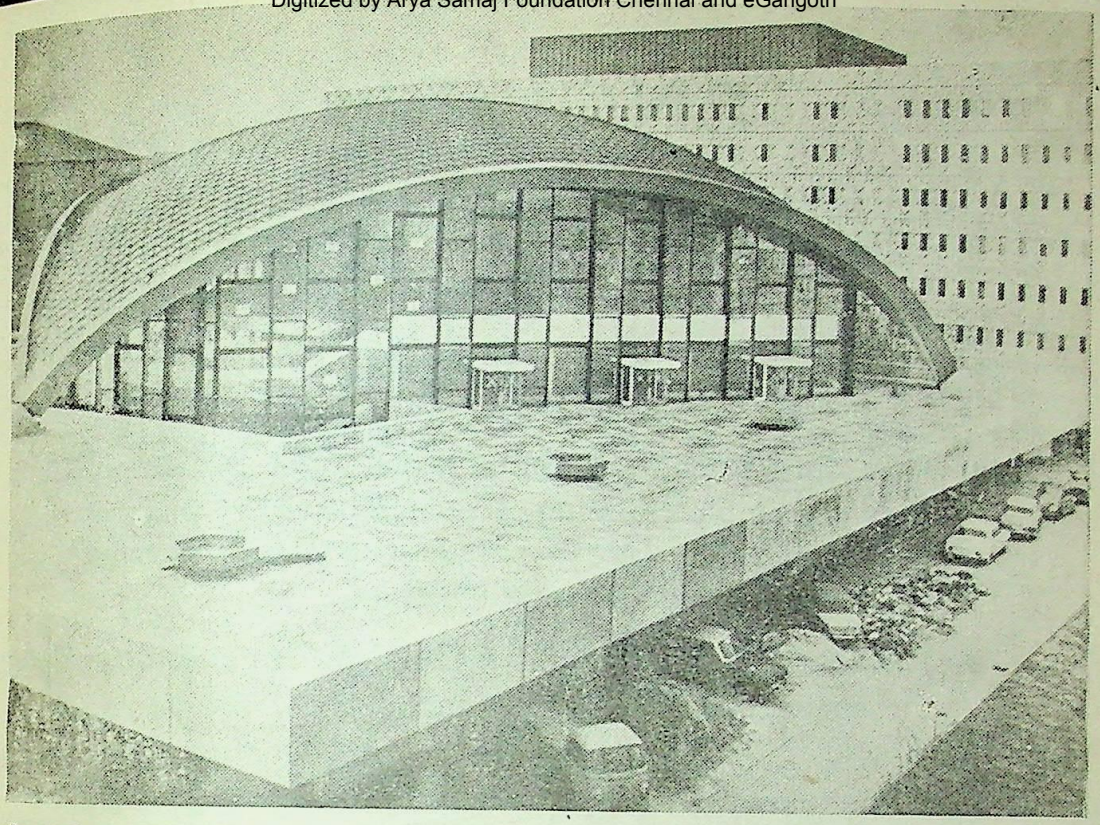

हरे रंग के दृश्य में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार सैनिक को अपने लक्ष्य की सही स्थिति की जानकारी मिल जाती है। दूरदर्शी के बाहर के क्षेत्र में सब ओर अदृश्य अवरक्त विकिरण होने के कारण सैनिक स्वयं दिखायी नहीं देता। पूरी तौर पर देशी कलपुर्जों द्वारा निर्मित इस उपकरण का भार केवल १३ औंस है। जंगलों में युद्ध के लिए यह उपकरण विशेष रूप से उपयोगी है।

दि एग-शेल आडिटोरियम

डाक्टर हेनरिच रामकोटेत और प्रोफेसर टिटहार्ट की योजना के अनुसार विश्व का आधुनिकतम थियेटर डार्टमण्ड के औद्योगिक नगर में बनाया गया है। इसका सर्वाधिक शिल्पिक आकर्षण यह है कि इसका ५४ मीटर घेरे का गुम्बद स्वतन्त्र रूप से लटका हुआ है। इसी कारण डार्टमण्ड की इस इमारत का नाम दि एग-शेल (अण्डे का खोल) पड़ गया है। इस इमारत की तुलना अण्डे से ठीक ही की गयी है, क्योंकि तीन स्तम्भों पर खड़ी की गयी इस गुम्बद की छत की मोटाई केवल ८५ मि. मी. है। इसके व्यास को देखते हुए मुरगी के अण्डे के खोल के मुकाबले बहुत कम है। अभी इस प्रकार के गुम्बद का निर्माण अभियान्त्रिकी जगत में शायद ही कहीं हुआ हो। यह गुम्बद आडिटोरियम के ऊपर फैला हुआ है। पृष्ठ-भूमि में जो भवन बना है उसमें रंगमंच, वर्क्स-रूम और प्रशासनिक कार्यालय हैं। दर्शकों की मोटरों को रोकने के लिए नीचे भूमिगत स्थान बनाया गया है।

मोटापा : रिकिट्स का कारण

छोटे-छोटे बच्चों को उनकी माताएं अधिक खुराक दे देती हैं। यह उनके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। पश्चिम बरलिन के बालरोग विशेषज्ञ डा. हांस जोचिन हार्टन्सटीन ने इस सम्बन्ध में अनेक परीक्षण किये हैं। उन्होंने आंकड़ों से यह सिद्ध किया है कि अधिक भोजन देने से बालकों की हड्डी के जोड़ मुलायम हो जाते हैं। इस रोग को रिकिट्स कहते हैं।

मोटापा ही रिकिट्स रोग का जनक होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupil how to write sentences correctly. He learns by doing, and by doing *correctly*.
- Exercises are so arranged that even a slow child is sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The Work Books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I.....Price : Re. 0·80
Book II.....Price : Re. 1·00
Book III.....Price : Re. 1·20

For further enquiries please write to :

SRI RAM MEHRA & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहस्यमय ऊर्जा भंवर

एस. पी. मिश्र, एम. एस-सी.

नाभिकीय-विज्ञान का प्रारम्भ १८९५ में हुआ, जब संयोगवश प्रो. हेनरी बेक्वेरल ने रेडियोसक्रियता का आविष्कार किया था। वैसे भी विज्ञान के अधिकांश आविष्कार संयोगवश ही हुए हैं। न्यूट्रान का आविष्कार १९३२ में हुआ, जिसका श्रेय जेम्स चैडविक को दिया गया। न्यूट्रान के विविध गुणों एवं नये तत्त्वों के आविष्कार की दिशा में प्रो. एनारेको फर्मी अपने सहायकों के साथ कार्यरत था। वह यूरेनियम पर न्यूट्रान द्वारा अनवरत प्रहारकर कृत्रिम तत्त्वों के सृजन की दिशा में सोच रहा था। बाद में उन लोगों ने ट्रांस-यूरेनियम तत्त्वों की खोज की। इन बातों की ओर दुनिया के तमाम वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित हुआ। बरलिन में प्रो. आटोहान एवं स्ट्रासमान का ध्यान विशेषरूप से आकर्षित हुआ। इन्होंने प्रो. फर्मी के प्रयोगों को दुहराया। दिसम्बर १९३८ के अन्तिम दिनों में इन लोगों ने अपने प्रयोगों के अन्तर्गत ट्रांस-यूरेनियम तत्त्वों के साथ बेरियम भी प्राप्त किया, जिसका परमाणु भार यूरेनियम के परमाणु भार से लगभग आधा है। दुनिया के सामने एक आश्चर्यजनक बात आयी—तत्त्वों के सृजन के साथ-साथ यह विखण्डन, जिसमें यूरेनियम अपने भार के लगभग आधे भार के तत्त्वों के रूप में तबदील हो रहा है। यह भी एक संयोग ही था कि इस महत्त्वपूर्ण खोज का श्रेय हान एवं स्ट्रासमान ने अर्जित किया। परन्तु वे इस नयी खोज की पूर्ण व्याख्या न दे सके। उनका ध्यान विशेषरूप से रासायनिक अध्ययनों की ओर ही आकर्षित था। यही था नाभिकीय विखण्डन का आविष्कार जो शीघ्र ही विज्ञान की महानतम खोजों की श्रेणी में आया। १९३९ में उन लोगों के कई लेख प्रकाशित हुए। डा. लिसे माइटनर जो प्रो. हान की प्रयोगशाला में काम कर चुकी थी, इन दिनों विख्यात भौतिकविद् प्रो. नील्स बोर के साथ डेनमार्क में कार्यरत थी। उसे बरलिन से प्रो. हान का पत्र मिला : '...यरेनियम पर न्यूट्रानों के प्रहार से एक विचित्र बात मालूम होती है। यूरेनियम धातु का कुछ भाग बेरियम-जैसे हलके तत्त्वों में परिवर्तित हो जाता है। मैं पूर्णतया यह समझ नहीं पा रहा हूं कि इसका क्या कारण है।...'

डा. माइटनर ने ज्यों ही यह पत्र पढ़ा, तुरन्त समझ गयी कि इस घटना का अर्थ क्या है। उसने इस घटना की चर्चा प्रो. बोर से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

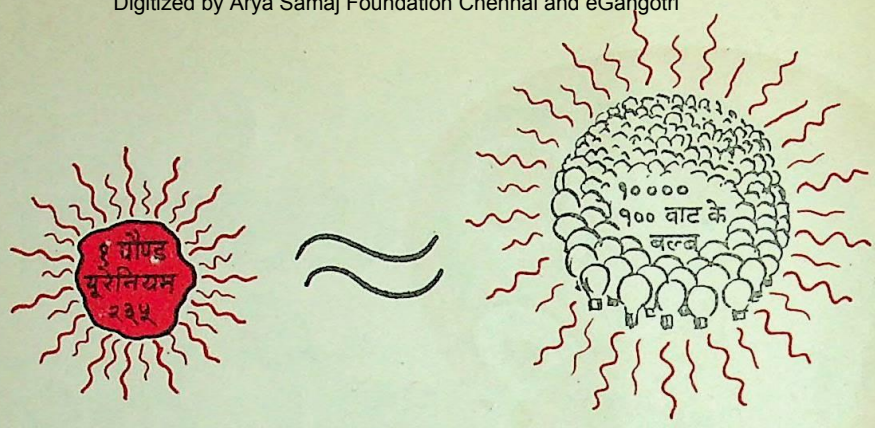

१ पौण्ड यूरेनियम-२३५ के विखण्डन से प्राप्त ऊर्जा १०० वाट के १०,००० बल्बों को १ वर्ष से अधिक समय तक जलाये रखने के लिए पर्याप्त है

की, जो उन्हीं दिनों अमरीका जाने की तैयारी कर रहा था।

कुछ दिनों बाद ही नील्स बोर अमरीका पहुंचा। न्यूयार्क में उसने प्रो. ह्वीलर से नाभिकीय विखण्डन क्रिया के आविष्कार की चर्चा की। ह्वीलर तुरन्त प्रो. फर्मी के पास गया और उसे यह सनसनीखेज बात बतायी। प्रो. फर्मी स्तब्ध रह गया। प्रो. फर्मी अपने सहायकों के साथ इस दिशा में कार्य करने लगा। ६ जनवरी १९३९ को प्रो. फर्मी ने विशिष्ट वैज्ञानिकों के सम्मुख व्याख्यान देते हुए कहा: 'नाभिकीय विख क्रिया में यूरेनियम के विखण्डन के साथ-साथ अन्य न्यूट्रान भी निकलते हैं।' और जब तक वह अपना व्याख्यान खत्म करे, श्रोता वैज्ञानिकों में लग भग आधे अपनी-अपनी प्रयोगशालाओं के लिए प्रस्थान कर चुके थे। उन्होंने व्याख्यान इस लिए नहीं छोड़ा कि उन्हें प्रो. फर्मी का व्याख्यान अच्छा नहीं लग रहा था, बल्कि वे प्रो. फर्मी द्वारा कह गये तथ्यों की सत्यता देखने के लिए व्यग्र हो गये थे।

परमाणु ऊर्जा या नाभिकीय ऊर्जा

शीघ्र ही यह भी मालूम हो गया कि तीव्र न्यूट्रानों की अपेक्षा मन्द न्यूट्रान विखण्डन क्रिया के लिए अधिक उपयुक्त हैं। नाभिकीय-विखण्डन क्रिया में काफी ऊर्जा भी मुक्त होती थी। कालान्तर में शृंखलित विखण्डन का भी आविष्कार हो गया। विखण्डन क्रिया में जो आश्चर्यजनक ऊर्जा मुक्त होती थी उसे परमाणु-ऊर्जा कहा जाने लगा। तभी द्वितीय महायुद्ध छिड़ गया। यह ऊर्जा युद्धलोलुप शक्तियों के हाथ लगी। फलस्वरूप इसका खतरनाक उपयोग शुरू हो गया। परमाणु बम का जन्म हुआ जिसकी विभीषिका में हिरोशिमा एवं नागासाकी भस्म हो गये।

२५ जनवरी १९३९ की शाम! न्यूयार्क शहर में काफी ठण्ड थी। हवा काफी तेज चल रही थी। युवक प्रो. डनिंग अपने मित्र प्रो. फर्मी के यहां भोजन करने गया। भोजन की मेज पर प्रो. फर्मी ने उसे नाभिकीय विखण्डन की सनसनीखेज खबर सुनायी थी। प्रो. डनिंग दौड़ा-दौड़ा अपनी प्रयोगशाला में गया था और यूरेनियम के नाभिकीय विखण्डन एवं उससे प्राप्त होने वाली आश्चर्यजनक ऊर्जा को देखने की कोशिश करने लगा था। २ दिसम्बर १९४२ को परमाणु बम का जन्म हो गया था, जिसका पहला परीक्षण १६ जुलाई १९४५ को न्यूमैक्सिको के रेगिस्तान में हुआ था। फिर आयी ६ अगस्त १९४५ की वह मनहूस सुबह! ८ बजकर १५ मिनट पर अचानक एक अकेला अमरीकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहाज हिरोशिमा नगर के ऊपर धुएं की लकीर छोड़ता हुआ कौंध-सा गया था। उसने एक परमाणु बम गिराया था···और परमाणु युग की रोमांचक एवं दारुण लीला आरम्भ हो गयी।

विखण्डन क्रिया से प्राप्त ऊर्जा को परमाणु-ऊर्जा कहना उपयुक्त है अथवा नाभिकीय ऊर्जा ? लगभग दो दशक पूर्व जब यह ऊर्जा प्रकाश में आयी, तो इसे परमाणु-ऊर्जा कहा गया। कालान्तर में सभी लेखों एवं व्याख्यानों में इसे इसी नाम से सम्बोधित किया जाने लगा। लेकिन वास्तव में यह ऊर्जा परमाणु के नाभिक से विमुक्त होती है। अतः इसे नाभिकीय ऊर्जा कहना अधिक उपयुक्त है। वैसे परमाणु ऊर्जा नाम ही प्रचलित है।

नाभिकीय ऊर्जा की गणना

रासायनिक क्रियाओं में जो ऊर्जा प्राप्त होती है उसे रासायनिक ऊर्जा कहते हैं। यह ऊर्जा अणुओं में परमाणुओं के अदल-बदल के परिणामस्वरूप मुक्त होती है। जब कोयले के किसी टुकड़े में स्थित कार्बन का एक परमाणु हवा में से आक्सीजन के दो परमाणुओं के साथ संयोजित होता है, तो कार्बन डाई-आक्साइड गैस बनती है। साथ ही उष्मा-ऊर्जा तथा प्रकाश-ऊर्जा मुक्त होती है। तात्पर्य कि आग जलती है, परन्तु इससे कार्बन एवं आक्सीजन के नाभिकों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यदि उन्नीसवीं शताब्दी अथवा उससे पूर्व के वैज्ञानिकों से पूछा जाता, क्या ऊर्जा का सृजन कर सकते हैं, क्या पदार्थ को ऊर्जा में परिवर्तित कर सकते हैं, तो इन प्रश्नों का एक ही उत्तर होता, नहीं।

और यदि ये ही प्रश्न विश्वविख्यात वैज्ञानिक आइन्स्टीन अथवा किसी भी वैज्ञानिक से १९४५ में पूछा जाता, तो उसका जबाव होता, हां। शक्ति और पदार्थ में सिर्फ बाहरी रूप का ही अन्तर है। भीतर से दोनों एक हैं।

नीचे की गणनाओं से नाभिकीय-ऊर्जा के आश्चर्यजनक मान का आभास हो जायगा। आइन्स्टीन के पदार्थ-ऊर्जा तुल्यता सिद्धान्त के अनुसार पदार्थ एवं ऊर्जा एक-दूसरे में परिवर्तनशील हैं। अतः यदि किसी पदार्थ में Δm की कमी आ जाती है, तो वह मात्रा अपने तुल्य मूल्य की ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है, जिसे हम निम्नलिखित सूत्र से ज्ञात कर सकते हैं : $\Delta E = \Delta m \times C^2$, जबकि ΔE=तुल्य-मूल्य की ऊर्जा, Δm=वस्तु की मात्रा में कमी, C=प्रकाश का वेग (लगभग ३×१०^{१०} सेण्टीमीटर प्रति सेकण्ड)। प्रत्येक यूरेनियम-२३५ नाभिक के विखण्डन में ०·२२३ एटामिक मास यूनिट (१ एटामिक मास यूनिट $= १/६·०२ \times १०^{२३}$ ग्राम) की कमी होती है, जो ऊर्जा में परिवर्तित होती है। मात्रा एवं ऊर्जा की इकाइयों को ध्यान में रखते हुए आइन्स्टीन के उपरोक्त सूत्र द्वारा हम निकाल सकते हैं कि $\Delta E = ०·२२३ \times ९३१ = २०८$ मिलियन इलेक्ट्रान वोल्ट्स। यह ऊर्जा एक यूरेनियम नाभिक के विखण्डन से प्राप्त होती है। इसी तरह यदि $६·०२ \times १०^{२३}$ यू.-२३५

अंगूर के आकार का नाभिकीय घनत्व का पिण्ड अपने अत्यधिक भार के कारण पृथ्वी की पपड़ी तोड़कर भीतर धंसता जायेगा

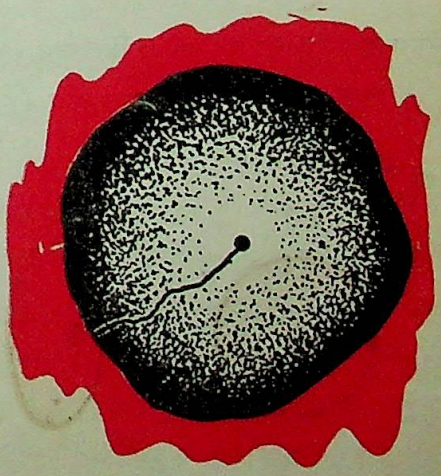

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाभिक अर्थात् एक ग्राम एटम यूरेनियम-२३५ नाभिक (१ ग्राम एटम=२३५ ग्राम यूरेनियम-२३५) विखण्डित हों, तो प्राप्त ऊर्जा का मान १·९३ × १०^{१३} वाट सेकण्ड होगा। अर्थात् १ ग्राम यूरेनियम के विखण्डन से प्राप्त ऊर्जा ८·२ × १०^{१०} वाट सेकण्ड होगी। एक पौण्ड यूरेनियम-२३५ के विखण्डन से प्राप्त ऊर्जा २०,००० टन टी.एन.टी. के विस्फोट से प्राप्त ऊर्जा के समकक्ष होगी, जो १०० वाट के दस हजार बल्बों को १ वर्ष से अधिक जलाये रखने के लिए काफी होगी।

ये कल्पनातीत तथ्य

उपरोक्त गणनाओं से विदित है कि यूरेनियम-२३५ परमाणु नाभिक में प्रचण्ड ऊर्जा मौजूद है, जिसका कुछ अंश विखण्डन क्रिया में मुक्त होता है। वैसे हर तत्त्व के परमाणु नाभिक में प्रचण्ड ऊर्जा समायी हुई है, परन्तु हम प्रत्यक्ष रूप में विखण्डित होने वाले परमाणुओं की ऊर्जा का आभास कर पाते हैं। यूरेनियम-२३५ के अलावा और भी परमाणु, जैसे प्लूटोनियम-२३९, यूरेनियम-२३३ एवं कुछ हलके तत्त्व विखण्डन क्रिया में भाग ले सकते हैं।

परमाणु नाभिक में प्रोट्रान एवं न्यूट्रान होते हैं और इलेक्ट्रान नाभिक के बाहर निश्चित् कक्षाओं में चक्कर काटते रहते हैं, अर्थात् परमाणु के अन्दर मोटेतौर पर तीन प्रकार के मूलभूत कण मौजूद हैं। प्रोट्रान पर धन विद्युत् आवेश होता है और न्यूट्रान पर कोई आवेश नहीं होता। जितने प्रोट्रान नाभिक के अन्दर होते हैं उतने ही इलेक्ट्रान कक्षाओं में होते हैं जिन पर ऋण विद्युत् आवेश होता है। प्रोट्रान एवं न्यूट्रान लगभग समान मात्रा के होते हैं तथा इलेक्ट्रान की मात्रा प्रोट्रान और न्यूट्रान की अपेक्षा नगण्य होती है (१ इलेक्ट्रान की मात्रा = १ प्रोट्रान की मात्रा का लगभग १८४५वां भाग)। तात्पर्य है, परमाणु का भार मोटेतौर पर परमाणु नाभिक में स्थित है और इस तरह नाभिक का घनत्व कल्पनातीत ही है। इस कल्पनातीत नाभिकीय घनत्व का आभास इस बात से हो जायगा कि यदि पृथ्वी की सभी वस्तुओं को इतना दबाएं कि उनका घनत्व नाभिकीय घनत्व के बराबर हो जाय, तो वे केवल कुछ घन फुट आयतन घेर सकेंगी। यदि इस दबाये हुए पदार्थ से एक अंगूर के आकार का पिण्ड काट लें, तो उसका भार लगभग साढ़े सात करोड़ टन होगा। अब आप उसे किसी प्रकार फुटबाल के मैदान के बीच में रख भी सकें, तो पृथ्वी उसे सम्हाल न सकेगी और वह पृथ्वी की पपड़ी को तोड़ता हुआ धंसता जायगा।

परमाणु नाभिक में प्रोटान एवं न्यूट्रान होते हैं। प्रोट्रानों पर धन विद्युत् आवेश होता है। न्यूट्रानों पर कोई भी आवेश नहीं होता।

यूरेनियम-२३५ का नाभिकीय विखण्डन (बोर-ह्वीलर) (१) यूरेनियम-२३५ न्यूक्लियस, (२) यौगिक नाभिक, (३) डम्बेल आकार और (४) विघटित न्यूक्लियस से ऊर्जा तथा न्यूट्रानों की मुक्ति

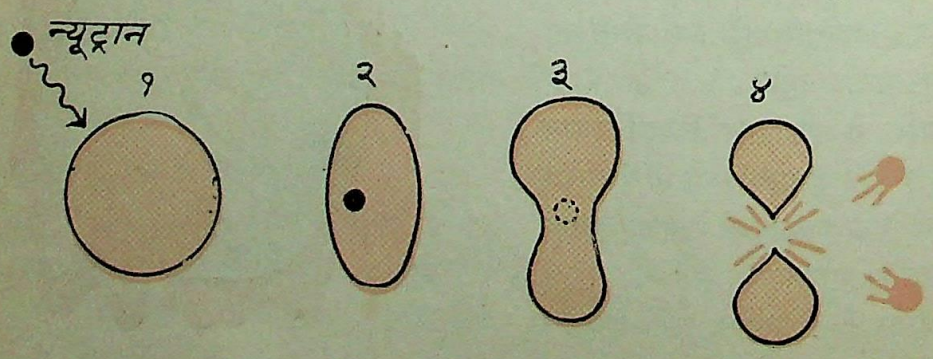

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

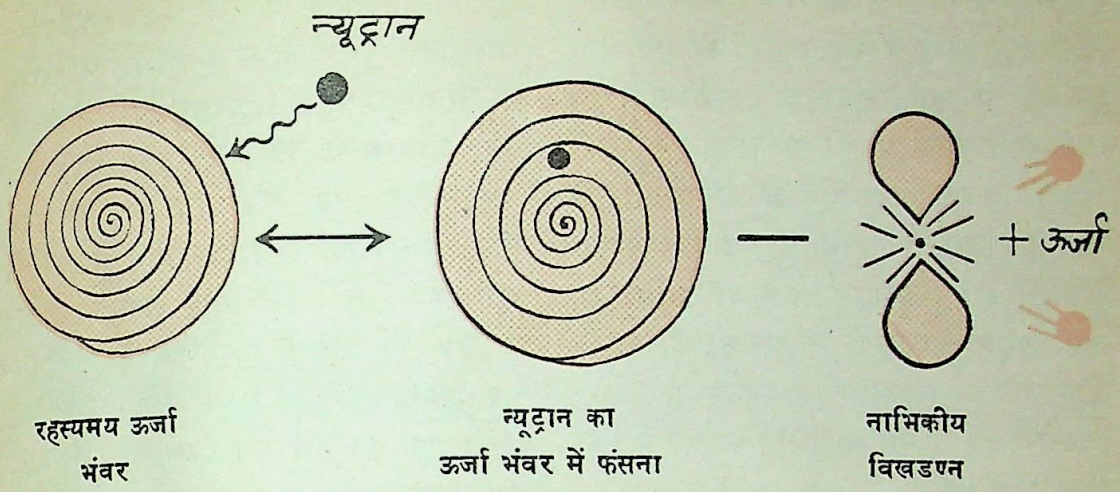

रहस्यमय ऊर्जा भंवर—नाभिकीय शक्तियां रहस्य बनी हुई हैं

हम जानते हैं कि सम विद्युत् आवेश वाली वस्तुओं को अलग धकेलने वाली शक्तियां कितनी प्रबल होती हैं। दो वस्तुएं परस्पर जितनी निकट होती हैं, उन्हें एक-दूसरे से दूर धकेलने वाली शक्तियां उतनी ही अधिक प्रबल होती हैं। जब वे एक-दूसरे से एक इंच के अन्तर पर होती हैं, तो उनमें धकेलने की एक निश्चित शक्ति होती है। जब उनमें दूरी आधा इंच रह जाती है, तो धकेलने वाली यह शक्ति चौगुनी हो जाती है। दूरी $\frac{1}{4}$ इंच होने पर यह १६ गुनी, $\frac{1}{8}$ इंच पर ६४ गुनी तथा $\frac{1}{16}$ इंच पर २५६ गुनी हो जाती है। कल्पना कर सकते हैं कि उन दो प्रोटानों के बीच धकेलने की शक्ति कितनी प्रबल होगी, जो एक नाभिक के अन्दर एक-दूसरे से १/२०,००,००,००,००,००० इंच की दूरी पर स्थित हैं। उन्हें एक-दूसरे के निकट बनाये रखने के लिए बहुत अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होगी। इस ऊर्जा को नाभिकीय बन्धन ऊर्जा कहते हैं। वैसे नाभिक के अन्दर बन्धन ऊर्जा तीन तरह की होती है—न्यूट्रान-न्यूट्रान (न-न), प्रोट्रान-प्रोट्रान (प-प) एवं प्रोट्रान-न्यूट्रान (प-न)। इन्हें नाभिकीय शक्तियां भी कहते हैं।

रहस्यमय ऊर्जा भंवर

नाभिक के अन्दर प्राय: हर बातें कल्पनातीत हैं। नाभिकीय शक्तियां अब भी हमारे सामने रहस्य बनी हैं। फिर भी इनके विषय में काफी कुछ मालूम हो सका है। इतना तो ज्ञातव्य है कि इन शक्तियों का मान बहुत ज्यादा है। अगर इन्हें किसी तरह छेड़ दिया जाय, तो इनका कुछ अंश उच्च ऊर्जा के रूप में बाहर निकल आयेगा जिसे हम नाभिकीय-ऊर्जा के रूप में प्राप्त करेंगे। ठीक यही बात हान एवं स्ट्रासमान के प्रयोग में घटित हुई थी परन्तु वे अपनी खोज को पूर्णरूपेण समझ नहीं पाया था।

यूरेनियम-२३५ नाभिकीय विखण्डन में मन्द न्यूट्रान काम आते हैं। विखण्डन क्रिया के बाद यूरेनियम-२३५ अपनी मात्रा के लगभग आधी मात्रा वाले परमाणुओं में विभक्त हो जाता है, साथ ही २-३ न्यूट्रान एवं उच्च ऊर्जा प्राप्त होती है। विखण्डन क्रिया से प्राप्त न्यूट्रान अतिरिक्त यूरेनियम-२३५ नाभिकों को विखण्डित करते जाते हैं। इस तरह शृंखलित क्रिया प्रारम्भ हो जाती है। विखण्डन क्रिया के रहस्य को समझने के लिए अनेक वैज्ञानिकों ने कोशिश की, परन्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोर-ह्वीलर सिद्धान्त विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस सिद्धान्त के अनुसार नाभिक एवं पानी की बूंद में काफी समानता बतायी गयी है। नाभिकीय शक्तिओं की पृष्ठातनाव शक्तियों (surface tension forces) से तुलना की गयी है। जिस तरह पानी की बूंद में अनगिनत जलकणों को पृष्ठतनाव शक्तियां सम्हाले हैं, उसी तरह नाभिक में नाभिकणों को नाभिकीय शक्तियां सम्हालती हैं। मन्द न्यूट्रान यूरेनियम-२३५ से समेकन क्रिया करता है फिर विखण्डित करता है।

सर्वप्रथम यूरेनियम-२३५ मन्द-न्यूट्रान से समेकन क्रिया करके यौगिक-नाभिक (Compound Nucleus) बनाता है और फिर डम्बेल आकार का हो जाता है। अन्त में डम्बेल आकार बीच से टूट जाता है और विखण्डित नाभिक, न्यूट्रान एवं उच्च ऊर्जा प्राप्त हो जाती है।

ज्ञातव्य है कि जो ऊर्जा विखण्डन क्रिया से प्राप्त होती है, वह कल्पनातीत है, रहस्यमय है और वह आती भी है उस जगह से जहां की हर बातें कल्पनातीत हैं—परमाणु नाभिक से। परमाणुनाभिक में रहस्यमय नाभिकीय शक्तियां हैं। इन शक्तियों के बारे में अभी हमें पूरा ज्ञान नहीं प्राप्त हो सका है, फिर भी जो कुछ मालूम हुआ है, उससे यह आभास होता है कि ये काफी रहस्यमय हैं। इसी रहस्य को जानने के लिए अनेक वैज्ञानिकों ने प्रयोग किये और कालान्तर में जब हान एवं स्ट्रासमान ने न्यूट्रानों से यूरेनियम परमाणुओं पर बौछार की, तो काफी कुछ रहस्योद्घाटन हुआ, परन्तु वे भी पूरी तरह न समझ पाये थे। चूंकि न्यूट्रान आवेशरहित होता है, अतः जब मन्द न्यूट्रान यूरेनियम-२३५ नाभिक से टकराता है, तो वह आसानी से समेकन क्रिया कर लेता है, अर्थात् मन्द न्यूट्रान नाभिक के रहस्यमय ऊर्जा भंवर में फंस जाता है। तदोपरान्त ऊर्जा भंवर कुछ अस्त-व्यस्त होने लगती है और नाभिक विखण्डित हो जाता है। इसमें रहस्यमय ऊर्जा भंवर का कुछ अंश उच्च विखण्डन ऊर्जा के रूप में परिणत हो जाता है। इसी ऊर्जा को लेकर तो खतरनाक खेल द्वितीय महायुद्ध के दरम्यान शुरू हुआ था। फिर वह खेल ६ अगस्त १९४५ की सुबह ८ बजकर १५ मिनट पर अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था। एक परमाणु बम हिरोशिमा नगर को ध्वस्त कर गया था। उससे उत्पन्न हृत्कम्पी विभीषिका मानवता के लिए एक चुनौती बनी हुई है।

रहस्यमय ऊर्जा का विनाशकारी उपयोग

हिरोशिमा पर जो परमाणु बम गिराया गया था, उसने पल भर में ही नगर के केन्द्रीय भाग को जलाकर राख कर दिया था। बाद में मालूम हुआ कि इस विस्फोट में ७८,१५० व्यक्ति मारे गये और १३,९८३ व्यक्तियों का पता नहीं चला। यह विनाशलीला सिर्फ एक परमाणु बम से हुई थी। अगस्त के उस दिन अमरीका की सभी प्रयोगशालाओं में वैज्ञानिक गम्भीर मुद्रा में शान्त बैठे थे। उन्होंने शायद सोचा भी न होगा कि परमाणु-ऊर्जा का उपयोग इतना विनाशकारी होगा। शायद उस दिन प्रो. बोर, प्रो. फर्मी, प्रो. आइन्स्टीन आदि वैज्ञानिकों को अत्यधिक ग्लानि हुई होगी। द्वितीय महायुद्ध के कुछ वर्षों बाद आइन्स्टीन से किसी ने पूछा भी था 'डा. आइन्स्टीन, यदि तृतीय महायुद्ध हुआ तो उसकी रूपरेखा क्या होगी ?'... डा. आइन्स्टीन ने थोड़ी देर शान्त रहने के बाद जवाब दिया था : 'महोदय, मैं तृतीय महायुद्ध की रूपरेखा तो नहीं बता सकता, परन्तु इतना अवश्य कह सकता हूं कि यदि चौथा महायुद्ध छिड़ा, तो उसमें अस्त्र, राकेट, परमाणु बम आदि के बजाय जीव-जन्तुओं की हड्डियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

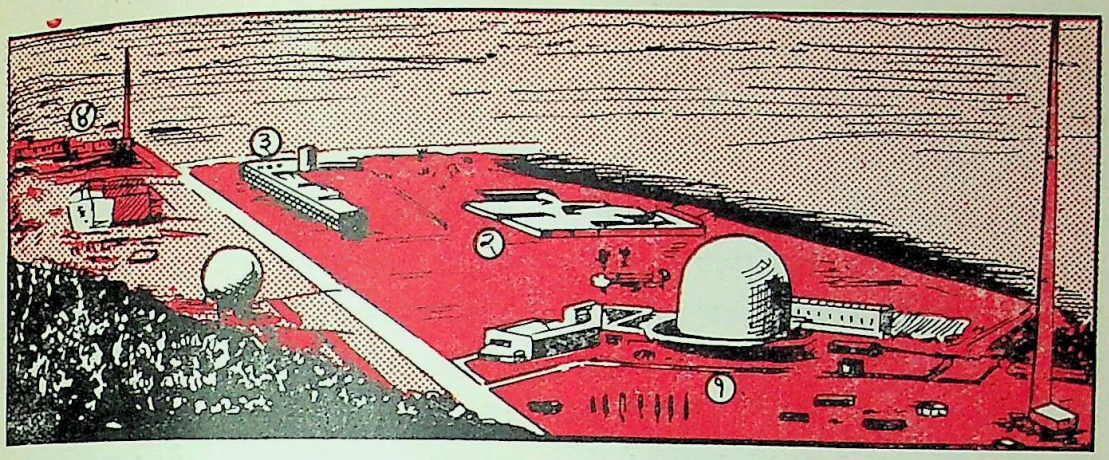

नार्थ साइट, एटामिक एनर्जी एस्टाब्लिशमेण्ट, ट्राम्बे जिसमें कनाडा-इण्डिया रिएक्टर, रेडियोलाजिकल लेबोरेटरी, प्लूटोनियम प्लाण्ट आदि की इमारतें (१) कनाडा-इण्डिया रिएक्टर, (२) रेडियोलाजिकल लेबोरेटरी, (३) माड्यूलेटर लेबोरेटरी और (४) प्लूटोनियम प्लाण्ट

के बने होंगे।' शायद डा. आइन्स्टीन का लक्ष्य इस बात की ओर था कि यदि तृतीय महायुद्ध छिड़ा, तो सब कुछ स्वाहा हो जायगा और लड़ने के लिए कुछ रह ही नहीं जायगा।

कल्याणकारी उपयोगों की ओर

विनाशकारी होने के साथ-साथ नाभिकीय ऊर्जा कल्याणकारी भी कम नहीं। जहां एक ओर अधिक से अधिक क्षमता वाले परमाणु बमों के सृजन की होड़ लगी है, वहीं रिएक्टरों, नाभिकीय जहाजों, पनडुब्बियों आदि के निर्माण की दिशा में भी होड़ लगी है। अमरीका, रूस एवं अन्य बहुत से देशों में रिएक्टरों एवं परमाण्विक बिजलीघरों की स्थापना हो चुकी है और हो रही है। साथ ही अमरीका की नाटिलस एवं थ्रेशर नाभिकीय पनडुब्बियां और रूस के लेनिन नाभिकीय जहाज आदि का निर्माण कालान्तर में हुआ है। अब तो बहुत-से नाभिकीय शक्तिचालित जहाज, पनडुब्बियां अमरीका एवं रूस में निर्मित हो चुकी हैं। भारत ने भी इस दिशा में ३ अगस्त १९५४ को कदम रखा। तदोपरान्त काफी प्रगति हुई है और होती जा रही है। सम्प्रति की प्रगति का संक्षिप्त ब्योरा निम्नलिखित प्रकार है—

(१) **अप्सरा रिएक्टर** : इसकी स्थापना ४ अगस्त १९५६ को ट्राम्बे, बम्बई में हुई जो अमरीका के प्रसिद्ध नगर ओकरिज स्थित रिएक्टर से मिलता-जुलता है। अप्सरा मुख्यतः न्यूक्लियर फिजिक्स में शोधकार्य, रिएक्टर परिचालन एवं रेडियो आइसोटोपों के उत्पादन के हेतु उपयोग में है।

(२) **कनाडा-इण्डिया रिएक्टर** : यह रिएक्टर भी ट्राम्बे, बम्बई स्थित एटामिक एनर्जी एस्टाब्लिशमेण्ट है। इसकी क्षमता ४० मेगावाट्स है। यह रिएक्टर मुख्यतः रेडियो आइसोटोपों के उत्पादन तथा नवीन प्रयोगों के लिए उपयोग में है।

(३) **जरलीना रिएक्टर** : यह भी ट्राम्बे, बम्बई में स्थित है। इस रिएक्टर में प्रोजेक्ट NUHMOC के अन्तर्गत नये-नये प्रयोग किये जाते हैं।

(४) **तारापुर परमाणु बिजलीघर** : महाराष्ट्र प्रदेश में बन रहे इस परमाणु बिजलीघर का प्रारम्भ १९५८ में हुआ था। इन दिनों यहां काम काफी तेजी से हो रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगभग ५० करोड़ की लागत से बन रहे ३८० मेगावाट्स क्षमता वाला यह बिजलीघर सम्भवतः १९६७-६८ तक पूरा हो सकेगा और दुनिया में अपनी तरह का अकेला होगा।

(५) **राजस्थान परमाणु बिजलीघर :** राणाप्रतापसागर, कोटा (राजस्थान) में भारत के दूसरे परमाणु बिजलीघर की स्थापना हुई है, जिसकी क्षमता २०० मेगावाट्स होगी। इन दिनों इस बिजलीघर को पूरा करने के लिए काम हो रहा है।

(६) **मद्रास प्रदेश परमाणु बिजलीघर :** मद्रास हवाई अड्डे के नजदीक महाबलीपुरम् में बनने वाले इस बिजलीघर की क्षमता ४०० मेगावाट्स होगी। चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत यह बिजलीघर पूरा होगा।

(७) **प्लूटोनियम प्लाण्ट :** प्रोजेक्ट फानिक्स के अन्तर्गत ट्राम्बे, बम्बई में नवनिर्मित इस प्लाण्ट का उद्घाटन प्रधानमन्त्री स्व. श्री लालबहादुर शास्त्री ने २२ जनवरी १९६५ को किया था। इस प्लाण्ट में न्यूट्रान-बिकिरीत यूरेनियम से प्लूटोनियम-२३९ अलग किया जायगा जिसका भविष्य के परमाणु बिजलीघरों में उपयोग किया जायगा।

इन सबके अलावा एटामिक एनर्जी एस्टाब्लिशमेण्ट, ट्राम्बे, बम्बई की विभिन्न शाखाओं, जाद, गुदा (बिहार) की यूरेनियम मिल एवं देश की अन्य छोटी-मोटी संस्थाओं के कार्य नाभिकीय ऊर्जा के कल्याणकारी उपयोगों के ही अंश हैं। ●

समाचार पत्र पंजीयन (केन्द्रीय) कानून, १९५६ के आठवें नियम के साथ पढ़ी जाने वाली प्रेस तथा पुस्तक-पंजीयन कानून की धारा १९ 'डी', उपधारा 'बी' के अन्तर्गत अपेक्षित **'विज्ञान-लोक'** नामक समाचार-पत्र से सम्बन्धित स्वामित्व और अन्य बातों का विवरण—

प्रपत्र ४

१.	प्रकाशन का स्थान :	आगरा
२.	प्रकाशन की आवर्तिता :	मासिक
३.	मुद्रक का नाम :	जगदीश मेहरा
	राष्ट्रीयता :	भारतीय
	पता :	हॉस्पिटल रोड, आगरा–३
४.	प्रकाशक का नाम :	जगदीश मेहरा
	राष्ट्रीयता :	भारतीय
	पता :	हॉस्पिटल रोड, आगरा–३
५.	सम्पादक का नाम :	शंकर मेहरा
	राष्ट्रीयता :	भारतीय
	पता :	हॉस्पिटल रोड, आगरा–३
६.	कुल पूंजी के एक से अधिक शेयर वाले भागीदार :	मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा–३

मैं, जगदीश मेहरा, घोषित करता हूं कि मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सही हैं।

जगदीश मेहरा

दिनांक : २८ फरवरी, १९६६ (प्रकाशक के हस्ताक्षर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचित्र संसार

५० करोड़ वर्ष प्राचीन जीवित जीवाणु

नमक की खदानों में वैज्ञानिकों को ऐसे जीवाणु प्राप्त हुए हैं, जो सम्भवतः ५० करोड़ वर्ष प्राचीन हैं। इन जीवाणुओं को यदि नमक के बीचोबीच रख दिया जाय, तो उनमें पुनः जीवन का संचार हो जाता है। प्रथम बार इन जीवाणुओं की खोज फ्रीबर्ग विश्वविद्यालय के बेलन्यूलाजी एवं वेदर फिजियोलाजी विभाग के डा. डोम्ब्रोवस्की ने नहाने के स्थलों पर नमक के चश्मों के सम्बन्ध में जांच करते समय की।

डा. डोम्ब्रोवस्की ने यह खोज तब की जब कुछ वर्ष पूर्व वे उत्तरी जरमनी की पर्मियन चूने की खदानों से उपलब्ध होने वाले नमक का अध्ययन कर रहे थे। जब उन्हें इस नयी वस्तु का पता चला, तो उन्होंने नमक के टुकड़ों में जीवाणुओं को पृथक् किया और एक घोल में डाल दिया। इससे करोड़ों वर्षों से सुषुप्त जीवाणु जीवित हो गया और नमक से मिलने वाले भोजन से उसका पोषण होने लगा। पर्मियन की ये चूने की खदानें २० करोड़ वर्ष प्राचीन हैं। डा. डाब्रोवस्की के कुछ साथियों का यह अनुमान था कि ये जीवाणु बहुत प्राचीन नहीं हैं। इस पर उन्होंने अनुसन्धान करके यह सिद्ध कर दिया कि ये जीवाणु दरअसल करोड़ों वर्ष प्राचीन हैं, जो नमक के अन्दर सुषुप्त अवस्था में पड़े रहे और मुक्ति मिलते ही पुनः जीवित हो उठे। ये जीवाणु नमक के रवों के आसपास या ऊपर न होकर उसके बीचोबीच पाये जाते हैं।

डा. डोम्ब्रोवस्की ने यह जानने के लिए कि किन अवस्थाओं में नमक के अन्दर ये जीवाणु कायम रहे, आदर्श प्रक्रिया अपनायी। नमक के घोल में मिलाकर जीवाणु सुखाया गये, तो वे मर गये। तत्पश्चात् नमक के घोल में और नमक मिलाया गया और उस गाढ़े घोल को क्रमशः सुखाया गया, तो उसके अन्दर के जीवाणु पुनः जीवित होने लगे। इससे यह परिणाम निकाला गया कि प्राचीन काल में समुद्रों के धीरे-धीरे सूखने से ये जीवाणु उस नमक में फंस गये। एक और परीक्षण से पता चला है कि कई मील नीचे खोदने पर नमक में जीवाणु नहीं मिलते, क्योंकि वहां का ताप १६०° सेण्टीग्रेड होने से कोई वस्तु जीवित नहीं रह सकती। १,००० गज नीचे तक की गहराई में नमक के अन्दर जीवाणु मिलते हैं।

स्कूल जहां मद्यपान की शिक्षा मिलती है

वियेंसवेदन में एक ऐसा स्कूल है जहां मद्यपान के सभी पहलुओं की शिक्षा देने का प्रबन्ध है। इस स्कूल के छात्रों को यह शिक्षा प्रदान की जाती है कि शराब से अधिकतम खुशी कैसे प्राप्त की जा सकती है। नगर के प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत यह पांच सप्ताह का पाठ्यक्रम चलाया जाता है। कक्षा में विभिन्न शराबों में भेद करना भी सिखाया जाता है। शराबों के नमूनों को जांचने के लिए छात्रों को थोड़ी-सी शराब दी जाती है।

चौकोर छतरियां-१९६६

आचेन नगर में जो योरोप में छतरियों के कारखानों का सबसे बड़ा केन्द्र है, वहां के छाता डिजाइनरों ने एक नये डिजाइन का छाता बनाया है। १९६६ के लिए छातों के जो नमूने तैयार किये गये हैं वे गोलाकार नहीं बल्कि चौकोर हैं। लम्बा हिप हैण्डिल जानबूझकर सादा रखा गया है और उससे ज्यामितिक प्रकार का आभास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलता है। विशेषज्ञों का विश्वास है कि इस प्रकार का छाता नवयुवतियों में अत्यधिक लोकप्रिय होगा।

टेलीविजन पर मरीज से भेंट

अस्पतालों के डाक्टरों के सामने यह परेशानी थी कि लोग मरीजों को देखने आते हैं और घण्टों बाहर प्रतीक्षा करते हैं। उधर मरीज भी अपने सम्बन्धियों को देखने के लिए तरसते रहते हैं।

मास्को के छूत की बीमारी के अस्पताल नं. ८२ के मुख्य डाक्टर वी. एरेम्यान इस समस्या से काफी दिनों से चिन्तित थे। आखिर उन्होंने हल निकाल ही लिया। अब अस्पताल में मरीजों को देखने आने वाले लोगों के लिए एक कक्ष में टेलीविजन लगा दिया गया है। इस टेलीविजन पर वे मरीज को उसके वार्ड में देख सकते हैं। इस तरह मरीज भी अपने वार्ड से अपने को देखने आये हुए अत्मीयों को देख सकता है।

विशेष समारोह : कार्निवाल समारोह

संघीय जरमनी के पश्चिमी भाग में एक विशेष प्रकार के समारोह को कार्निवाल कहा जाता है। यह अत्यन्त मनोरंजक समारोह है। इस समारोह के देश के विभिन्न भागों में अनेक नाम प्रचलित हैं। यह समारोह हर जगह खूब हंसी-खुशी और धूमधाम से मनाया जाता है। ६ जनवरी से इसकी शुरुआत होती है। इसका समापन प्रायः फरवरी के अन्तिम सप्ताह में होता है। समापन के दिन राइन, मेन और इसर नदियों के किनारे के नगरों में होने वाले कार्निवालों में उसके जुलूस में हजारों लोग भाग लेते हैं। इसमें बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों तथा सार्वजनिक जीवन के प्रमुख व्यक्तियों को हास्य-व्यंग्य का शिकार बनाया जाता है। साथ का फोटो इसी अवसर पर लिया गया है। जुलूस के अन्त में राजकुमार तथा राजकुमारी की गाड़ी होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बी. मोहन

संसार में कौन ऐसा व्यक्ति होगा जिसने कभी किसी प्रकार की पीड़ा न महसूस की हो। दिल की पीड़ा न हुई होगी, तो गुरदे की पीड़ा, गुरदे की पीड़ा न हुई होगी, तो पेट की पीड़ा, पेट की पीड़ा न हुई होगी, तो पैर की पीड़ा और अगर पैर की पीड़ा भी न हुई होगी, तो सिर की पीड़ा अवश्य हुई होगी। इन पंक्तियों में हम यह जानने का प्रयत्न करेंगे कि पीड़ा किस-किस प्रकार की होती है और हमें पीड़ा का अनुभव क्यों होता है।

शरीर के सभी अंगों और सम्पूर्ण त्वचा में संवेदी तन्तु होते हैं, जिनके द्वारा हम पीड़ा का अनुभव करते हैं। पीड़ा पैदा होने का सन्देश संवेदी नाड़ी से होकर, सुषुष्मना नाड़ी के पृष्ठ भाग से होकर सुषुष्मना नाड़ी की केन्द्रीय नलिका के आगे से घूमकर सुषुम्ना नाड़ी की दूसरी तरफ पहुंच जाता है। अब ये तन्तु एक तन्तु समूह पार्श्व स्पाइनोथैलामिक मार्ग (lotral spinothalamic tract) के रूप में ऊपर की ओर चलकर मेडुला आबलांगेटा, पान्स, मध्य मस्तिष्क से होते हुए थैलामस (नाड़ी कोशिकाओं का एक समूह) में पहुंचते हैं। और पीड़ा होने का सन्देश इन कोषों को दे दिया जाता है। पीड़ा के पैदा होने का अनुभव हमारे शरीर को तभी हो जाता है जब पीड़ा का सन्देश थैलामस तक पहुंच जाता है। किन्तु यह पीड़ा किस प्रकार की है, किस चीज द्वारा पैदा की जा रही है, इन सब बातों के लिए इस सन्देश को सेरेब्रल गोलार्द्ध तक जाने की आवश्यकता होती है। अतः पीड़ा का सन्देश थैलामस की कोशिकाओं के नाड़ी तन्तुओं से होकर सेरेब्रल गोलार्द्ध तक पहुंचता है। किन्तु एक बात ध्यान देने योग्य है कि पीड़ा शरीर के जिस तरफ के (दायें या बायें) अंग में उठी थी, पीड़ा का सन्देश उसके दूसरी तरफ वाले थैलामस और सेरेब्रल गोलार्द्ध में पहुंचता है। जब मस्तिष्क तक यह खबर पहुंचती है कि शरीर का कोई अंग पीड़ा सह रहा है, तो उसके बचाव के लिए वह कुछ उपाय सोचता है। उदाहरण के लिए मान लीजिए, आपके हाथ में कोई पिन चुभा रहा है, तो मस्तिष्क हाथ की मांसपेशियों को संकुचित होने की आज्ञा देता है। मांसपेशियां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकुंचित होती हैं और आपका हाथ झटका खाकर दूर हो जाता है।

पीड़ा शरीर के हर अंग में उठ सकती है। आंख, कान, दांत की पीड़ा से कौन नहीं परिचित होगा, किन्तु कुछ अंगों की पीड़ा अपनी अलग विशेषताएं रखती है, जिनके कारण यह आसानी से पहचाना जा सकता है कि कौन अंग पीड़ा सह रहा है।

हृदय की पीड़ा

हृदय की पीड़ा उठने का कारण हृदय मांसपेशियों को उचित पोषण न मिलना है (अर्थात् रक्त का न मिलना है) जिसे मायोकारडियल इश्चिमिया (myocardial ischaemia) के नाम से पुकारते हैं। दिल की पीड़ा को ऐंजाइना पेकटोरिस (angina pectoris) भी कहते हैं। दिल की पीड़ा जब उठती है, तो छाती के बीच की हड्डी (स्टरनम) के पीछे बहुत तीव्र पीड़ा उठती है। प्राणी को ऐसा लगता है, जैसे उसकी मौत आ गयी हो। यह पीड़ा कुछ ही क्षणों में छाती के बायें हिस्से, बायें हाथ और गरदन में बायीं तरफ फैल जाती है। यह तीव्र पीड़ा कुछ मिनट ही रहती है। यह पीड़ा

पीड़ा के सन्देश का पथ

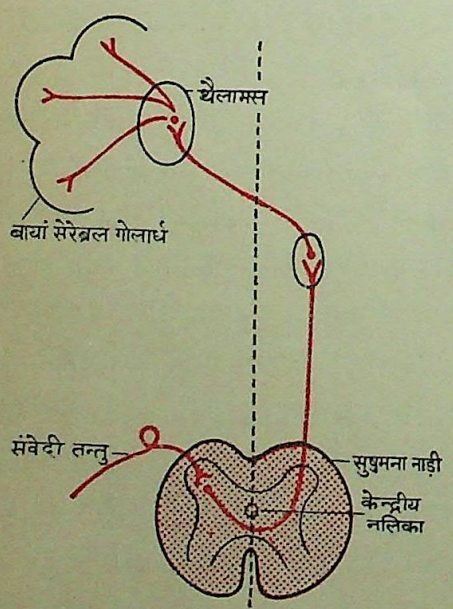

तब उठती है जब प्राणी बहुत उत्तेजना में होता है, या कोई श्रम कर रहा होता है। ठण्डे मौसम और खाना खाने के बाद पीड़ा उठने की सम्भावना अधिक रहती है। दिल की दूसरी तरह की पीड़ा जिसे मायोकारडियल इनफाक्सन (myocardial infarction) की पीड़ा से पुकारा जाता है, कई घण्टों तक रहती है और आराम करने से भी कम नहीं होती है। हृदय की पीड़ा जब उठती है तब उसके साथ पसीना भी खूब आता है।

गुरदे की पीड़ा (Renal Pain)

जब गुरदे का दर्द स्थिर (constant renal pain) होता है, तो पीठ में अन्तिम पसली के नीचे, रीढ़ की हड्डी के बगल में लगातार मध्यम गति से महसूस होता रहता है। पेट में दाहिनी ओर ऊपर के भाग (दायें हाइपोकानड्रियम) में भी यह पीड़ा महसूस हो सकती है। गुरदे की स्थिर पीड़ा चलने से बढ़ती है।

मूत्रनली की पीड़ा (ureteric colic) अत्यन्त तीव्र पीड़ा होती है। सर्वप्रथम पीड़ा पीठ में अन्तिम पसली के नीचे उठती है, और फिर वहां से फैलती हुई सामने उदर की ओर आती है। यहां से यह नीचे की ओर फैलती हुई जांघ या अण्ड तक पहुंच सकती है। पीड़ा इतनी तीव्रता से उठती है कि प्राणी अपने घुटने समेट लेता है और बेचैनी के मारे इधर-उधर करवटें बदलता रहता है। अक्सर पीड़ा के साथ ही पलटी और पसीना आता है। इस प्रकार पीड़ा के दौरे आते रहते हैं, जो अक्सर घण्टों तक रहते हैं।

मूत्रनली की पीड़ा उठने का कारण मूत्रनली के ऊपरी भाग या गुरदे की पेलविक्ष (pelvis) में पथरी (stone) का होना होता है।

एक विशेष प्रकार की पीड़ा को कालिक (colic) के नाम से पुकारा जाता है। यह पीड़ा अचानक उठती है तथा अत्यन्त तीव्र होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। यह कुछ मिनटों से लेकर कुछ घण्टों तक रह सकती है। किन्तु इस अल्पकाल में ही प्राणी बहुत बेचैन हो उठता है। पीड़ा की इस तीव्रता का कारण शरीर की किसी भी नली की मांसपेशियों का अचानक और देर तक सकुंचित रहना है। तीन प्रकार के कालिक उल्लेखनीय हैं—(१) पेट की पीड़ा (intestinal colic), (२) पित्तनली की पीड़ा (biliary colic) और (३) मूत्रनली की पीड़ा (ureteric colic)।

पेट का दर्द

यह पीड़ा अचानक उठती है और फिर धीरे-धीरे तीव्र होती जाती है। एक अवस्था आती है जब यह अत्यन्त तीव्र पीड़ा देती है। तत्पश्चात् फिर धीरे-धीरे कम पड़ती जाती है। इस प्रकार की पीड़ा कुछ मिनटों के अन्तर पर होती रहती है और प्रत्येक पीड़ा का दौरा कुछ मिनटों तक रहता है। पीड़ा पूरे पेट में महसूस होती है, किन्तु विशेष रूप से पेट के मध्य भाग के पास महसूस होती है। पीड़ा के दो दौरों के बीच में प्राणी को पीड़ा बिलकुल नहीं होती है और वह आराम से रहता है।

जब कभी आंत की नली का रास्ता बन्द हो जाता है तब इस प्रकार की पीड़ा उठती है।

वर्णन की सहजता के लिए पेट को नौ खण्डों में बांट लिया गया है

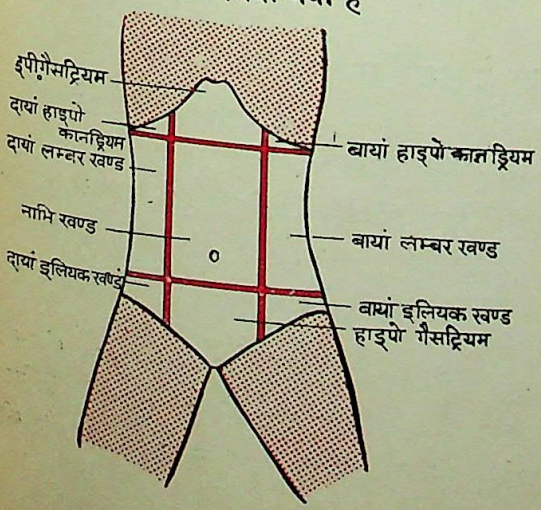

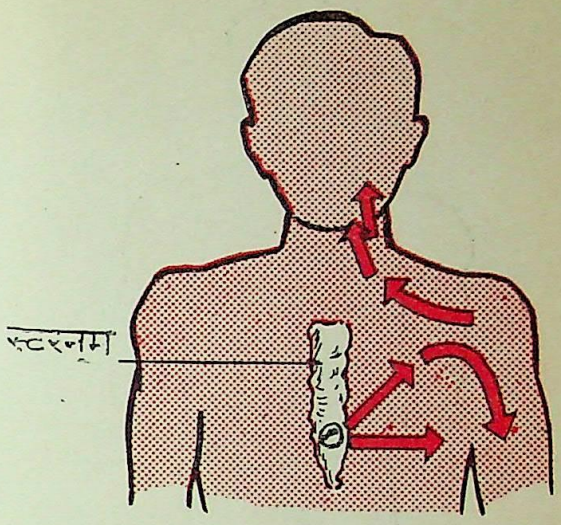

हृदय की पीड़ा का पथ

जब जेजुनम (jejunum) नली का रास्ता बन्द हो जाता है, तो पीड़ा के दौर के पहले पलटी होती है, और बाद में पीड़ा। और अगर छोटी आंत का रास्ता बन्द हो, तो शुरू में एक बार पलटी होती है और फिर काफी देर तक पलटी नहीं होती है, और बीच-बीच में पीड़ा उठती रहती है। अन्त में कसकर और अक्सर लगातार कई पलटियां हो जाती हैं।

पित्तनली की पीड़ा

यहां पीड़ा उठने का कारण पित्त नली में पथरी का होना होता है। अचानक प्राणी को इपीगैसीट्रयम और दायें हाइपोकानड्रियम भाग में तीव्र पीड़ा महसूस होती है। पीड़ा फैलकर पीठ में दोनों कंधों के बीच के भाग तक महसूस होती है। पीड़ा की तीव्रता के कारण प्राणी चारपायी पर करवटें बदलता रहता है, या यकायक कुछ देर बाद समाप्त हो जाता है। किन्तु ऐसा भी हो सकता है कि पीड़ा काफी देर तक रहे और प्राणी अपने जीने की आशा छोड़ दे। इंग्लैण्ड के निवासी सर वाल्टर स्काट के पेट में जब पित्तनली की पीड़ा उठी और कई घण्टों तक रही, तो उन्होंने अपने जीने की आशा छोड़ दी और मरने से पहले अपने घर के सभी लोगों से मिलना चाहा। उन्होंने सबको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

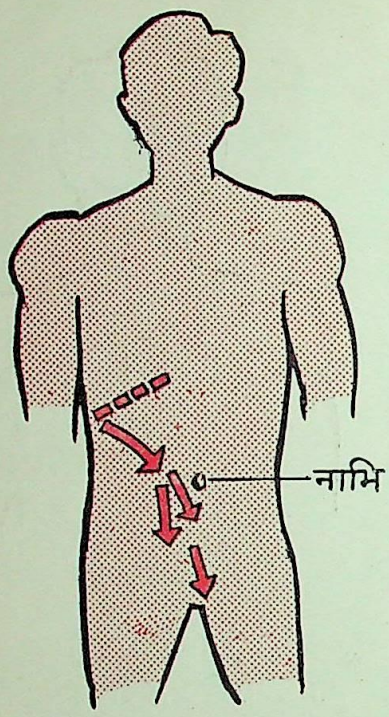

गुरदे की पीड़ा का पथ

बुलाया और सबसे विदा मांगी और करवट बदलकर अपनी मौत का इन्तजार करने लगे। दूसरे दिन वे भली प्रकार चंगे थे।

ऐपेण्डीसाइटिस की पीड़ा

जब एपेण्डिक्स (appendix) रोग से आक्रान्त होती है तब इस प्रकार की पीड़ा उठती है। पीड़ा सर्वप्रथम पूरे पेट में उठती है जो धीरे-धीरे नाभि के पास या इपीगैसट्रियम भाग में महसूस होती है। अकसर कई बार पलटियां होती हैं और २४ घण्टे के पश्चात् पीड़ा केवल दायें इलियक भाग में महसूस होती है। जब एपेण्डिक्स की नाल का रास्ता बन्द हो जाता है तब पीड़ा अचानक पूरे उदर में उठती है और कुछ घण्टे बाद पीड़ा दायें इलियक भाग में स्थिर हो जाती है।

अत्यन्त तीव्र पीड़ा में प्रसव पीड़ा का नाम लिया जाता है। यह पीड़ा प्रसव के समय उठती है। पेट की पीड़ा की तरह पीड़ा के दौरे थोड़ी-थोड़ी देर पर उठते हैं।

पीड़ा को दूर करने वाली ओषधियों को ऐनलजेसिक (Analgesic) के नाम से पुकारा जाता है। ये दवाइयां दो प्रकार की हो सकती हैं—(क) ऐण्टी-पायरेटिक (ऐनलजेसिक)—यह पीड़ा के साथ-साथ बुखार को भी समाप्त करती है। (ख) नारकोटिक ऐनलजेसिक—यह बुखार नहीं दूर करती, किन्तु अधिक मात्रा में देने पर नींद ला देती है।

प्रथम प्रकार की दवाइयों का उदाहरण एस्प्रीन है। नारकोटिक ऐनलजेसिक का उदाहरण मारफिया, कोडिन, पेथीडीन इत्यादि हैं, जो ऐण्टी-पायरेटिक ओषधियों से कई गुना अधिक प्रभावशाली होती हैं।

बाजार में आमतौर पर बिकने वाली पीड़ानाशक ओषधियों में ये ही दवाएं मिली रहती हैं।

पश्चिम प्रशान्त महासागर में खनिज पदार्थों की खोज

चार एशियायी देश—राष्ट्रवादी चीन, जापान, कोरिया और फिलिपीन्स—पश्चिम प्रशान्त महासागर के द्वीपसमूहों के आस-पास के समुद्र में मिलकर खनिज पदार्थों की खोज करेंगे।

भारत और लंका ने भी इस अभियान में दिलचस्पी प्रकट की है। वैज्ञानिकों का विश्वास है कि इस महासागर में खनिज पदार्थों की अतुल राशि है।

रेडियोसक्रिय तत्त्वों द्वारा निदान

हृदय तथा रक्त-सम्बन्धी रोगों की स्थिति का अन्दाज रेडियोसक्रिय तत्वों की रोगी को एक छोटी खुराक या रक्त-प्रवाह में इंजेक्शन लगाकर लिया जाने लगा है। पश्चिम जरमनी में हाल में निर्मित नापने वाले एक उपकरण की सहायता से व्यक्ति के गुरदे, थायराइड ग्रन्थि तथा मस्तिष्क की गांठ की स्थिति का सही अनुमान लग जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

अनेक सदस्यों ने लिखा है कि फरवरी अंक में वैज्ञानिक कहानी क्यों नहीं हमने प्रकाशित की ? यह जानकर हमें प्रसन्नता है कि पिछले कुछ अंकों में जो हमने वैज्ञानिक कहानियां प्रकाशित कीं, वे बहुत पसन्द की गयीं और तुममें उत्सुकता इतनी बढ़ गयी है कि प्रत्येक अंक में वैज्ञानिक कहानी पढ़ना चाहते हो। इस अंक की 'नवरसायन' तुम्हें बहुत-बहुत पसन्द आयेगी, यह आशा है। भविष्य में भी हमारा प्रयत्न रहेगा कि स्तर की वैज्ञानिक कहानियां देते रहें।

पिछले दिनों हमें ऐसे अनेक पत्र मिले जो विज्ञान क्लब के पुराने सदस्यों के हैं। इनमें से कुछ सेना में हैं तथा कुछ विद्यालयों में अध्यापन कार्य कर रहे हैं। उन्होंने लिखा है कि वे परिस्थितियों के कारण अचानक विज्ञान से कट गये हैं पर उनका विज्ञान-प्रेम अब भी ज्यों का त्यों है। वे विज्ञान के लिए प्रयत्नशील होना चाहते हैं, किन्तु निर्णय नहीं कर पाते कि क्या करें।

वास्तव में विज्ञान-प्रेम का बड़ा व्यापक अर्थ है। वैज्ञानिक वही नहीं है जो प्रयोगशाला में प्रयोग करता है। प्रत्येक व्यक्ति एक योग्य वैज्ञानिक है जो अपने जीवन का कुशल समीक्षक है और जिसके पास वैज्ञानिक दृष्टिकोण है।

वस्तुतः सभ्यता के विकास के साथ-साथ सामाजिक मानदण्ड बदले हैं। आज वह व्यक्ति जो अपने अस्तित्व की सुरक्षा के प्रयत्न में लगा हुआ है और उसके मन में अपने सह-अस्तित्वों के लिए स्नेह की भावना है, निस्सन्देह वैज्ञानिक है। विज्ञान वास्तव में व्यक्ति को दृष्टि की व्यापकता देता है।

··· अन्त में ··· 'तुम्हारी कलम से' तथा 'करो और देखो' स्तम्भों के लिए प्रायः एक ही विषय पर एक साथ बहुत-सी रचनाएं प्राप्त होती हैं, अतः तुम रचना भेजने से पहले यह जरूर सूचित करो कि किन-किन विषयों पर रचनाएं भेजना चाहते हो।

सस्नेह तुम्हारी,
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ७२ के विजेता

प्रथम पुरस्कार

कुलदीपकुमार भट्ट (८५८१) आगरा, जगदीशकुमार रावत (१२६२४) नयी दिल्ली।

द्वितीय पुरस्कार

राधेश्याम गुप्ता (१५८४) आगरा, रणजीतसिंह (४७२४) कानपुर, पंकजकुमार (४७७०) मुजफ्फरपुर, भारतभूषण (११७०८) हल्द्वानी, गोपालसिंह वर्मा (१३३११) मेरठ, वृजमोहन कक्कड़ (१८४९४) इलाहाबाद, सुभाषचन्द्र गुप्ता (१८४९५) इलाहाबाद।

तृतीय पुरस्कार

मिथिलेशकुमार तिवारी (५०४७) जबलपुर, इन्द्रकृष्ण भट्ट (५०९२) आगरा, परशुरामसिंह (७५९५) वाराणसी, कृष्णकुमार इन्दररूपा (८७३३) जबलपुर, सन्तकुमार जायसवाल (१०३८९) इलाहाबाद, सच्चिदानन्द श्रीवास्तव (१२५९९) पांकुड़, मनोहरदत्त रबाड़ी (१६०६३) नैनीताल, सुभाषचन्द्र वर्मा (१८४९६) हर्दा।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ७४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

गिरीश मोहन
(स. सं. १९४९)

तृप्तिरानी
(स. सं. ११६६१)

मोतीलाल
(स. सं. १२८४६)

योगेन्द्र भानु
(स. सं. १८२११)

१२१० महेन्द्रनारायण(१५)फैजाबाद, ११ बलजीत(१६)बस्तर, १२ प्रेमकुमार (१५) छिन्दवाड़ा, १३ हेमांक (११) नयी दिल्ली, १४ अलका (१३) नयी दिल्ली, १५ सुशील (११) लखनऊ, १६ राजेन्द्रकुमार (१८) इलाहाबाद, १७ रंजनप्रताप (१७) भागलपुर, १८ जगमोहन (१७) नयी दिल्ली, १९ अनिलकुमार (१३)खातौली, २० नलिनरंजन (११) मेरठ, २१ बसन्तकुमार (१६) जावरा, २२ नरेन्द्रकुमार (१७) इलाहाबाद, २३ गुलाबराव (१९) राजनन्दगांव, २४ सत्येन्द्रप्रसाद (१४) पड़रौना, २५ कुलदीपनारायण (१२) सहारनपुर, २६ अशोकनारायण (१०) सहारनपुर, २७ अशोककार्णिक (१७) उदयपुर, २८ विन्ध्याचलसिंह (१३) बढ़याचौक, २९ विजयकुमार (१९) अकोला, ३० शिवकुमार (१७) अकलतरा, ३१ लल्लनप्रसाद (२२) अमराईनबादा, ३२ वेदप्रकाश (१७) गंगापुरसिटी, ३३ प्रहलादराय (२१) श्रीमाधोपुर, ३४ सूर्यकान्त (१७) विदिशा, ३५ दिनेशचन्द्र (१७) अलिराजपुर, ३६ अरुणकुमार (१८) रायगढ़, ३७ ब्रजलता (१६) रायगढ़, ३८ जिनेशकुमार (१७) जबलपुर, ३९ पंचमदास (१७) कोंड़ागांव, ४० अरुणकुमार (१९) करगीरोड, ४१ हरभजनसिंह (१३) मुरादनगर, ४२ जान (१८) श्रीगंगानगर, ४३ लाखीराम (१७) वाराणसी, ४४ उपकुशलकुमार (२०) मेरठ, ४५ सुरेन्द्रसिंह (१७) मथुरा, ४६ राजेन्द्रप्रसाद (२१) कटनी, ४७ अच्युतानन्द (१३) नारायणपुर, ४८ मंजीतसिंह (१७) अम्बाला, ४९ अनुरागसिंह (१८) देहरादून, ५० विष्णुनिवास (१४) बरेली, ५१ सतीशकुमार (१८) मुरादाबाद, ५२ भरतचन्द्र (१५) ध्रुवा, ५३ मंगलसिंह (१७) लकसर, ५४ गुलाम नईम (१७) भिलाई, ५५ रवीन्द्रकुमार (१६) मुजफ्फरनगर, ५६ ललितकिशोरी (१८) जमशेदपुर, ५७ परीक्षितराज (१७) मुरादनगर, ५८ निर्मलकुमार (१६) जामतारा, ५९ धीरेन्द्रनाथ (१६) गोरखपुर, ६० रमेश (१६) बाखहा, ६१ सुरेशचन्द्र (१५) बड़बाह, ६२ भीमराव (१८) निमाड़, ६३ नरेशकुमार (२०) पठानकोट, ६४ विजयकुमार (१८) राउरकेला, ६५ सुरेन्द्रसिंह (१८) सतना, ६६ लल्लनप्रसाद (१६) सुल्तानपुर, ६७ सदानन्द प्रसाद (१७) झुमरीतलैया, ६८ तेजनारायण (१८) जगतपुर, ६९ नरायणस्वरूप (१६) अजमेर, ७० नरेशचन्द्र (१७) जयपुर, ७१ प्रमोदकुमार (१७) रेवाड़ी, ७२ महेशकुमार (१७) बेगमपुर, ७३ सन्तोषकुमार (१९) पिपरिया, ७४ महेशचन्द्र (१३) गोपालगंज, ७५ चन्द्रकुमारीकिरण (१८) गोपालगंज, ७६ प्रेमप्रकाश (१६) अलीगढ़, ७७ सत्यप्रकाश (१५) अलीगढ़, ७८ वीनारानी (१२) अलीगढ़, ७९ पृथ्वीबल्लभ (१६) जोधपुर, ८० राजेशबाबू (१६) आगरा, ८१ भोजराम (१९) दुर्ग, ८२ पवनकुमार (१८) दुर्ग, ८३ पूरनचन्द्र (२२) आगरा, ८४ कमल (१७) जयपुर, ८५ मनोहरलाल (१८) माधोपुर, ८६ ओमनारायण (१५) बीकानेर, ८७ दिनेशचन्द्र (१८) मिर्जापुर, ८८ सुरेन्द्रकुमार (१८) बम्बई, ८९ विष्णु (१६) विदिशा, ९० परिमलकुमार (१५) लखनऊ, ९१ मुकुलशरण (१४) गया, ९२ पुष्पा (१७) रेवाड़ी, ९३ हनुमानदयाल (१८) अजमेर, ९४ अगमचन्द्र (१५) गोरखपुर, ९५ रवीन्द्रकुमार (१७) जबलपुर, ९६ महेशचन्द (२०) कोट, ९७ घनश्यामसिंह (१६) सिलयारी, ९८ गिरधारीलाल (१४) राजनन्दगांव।

राजेन्द्रसिंह
(स. सं. १८२२३)

अमरनाथ श्रीवास्त
(स. सं. १८२३५

नरेन्द्रसिंह
(स. सं. १८२५४

शुक्र प्रधान
(स. सं. १८२६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाक व तार विभाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७४

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : १५ अप्रैल

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५१ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो :

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७४ का उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर १५ अप्रैल तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायेगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७४ के प्रश्न

१. अंगरेजी के गैस (gas) शब्द का प्रचलन किसने किया ?

२. $C_6H_{12}O_6$ से क्या अभिप्राय है ?

३. धूम्ररहित ईंधन का उपयुक्त उदाहरण क्या है ?

४. एटलस-१ उपग्रह कब और कहां से छोड़ा गया ?

५. अमरीका की परमाणु-शक्तिचालित पनडुब्बी ट्राइटन का वजन कितना है ?

६. हाइड्रोजन बम का जनक कौन है ?

७. एक व्यक्ति आधी यात्रा चलने के बाद अपनी कार की चाल दूनी कर देता है और नियत स्थान पर एक घण्टा पहले पहुंच जाता है, तो साधारण चाल से कार ले जाने पर उसे यात्रा में कितना समय लगता ?

८. वालरस (Walrus) अपना भोजन कैसे एकत्र करता है ?

९. 'ग्रेट बैरियर रीफ' कहां है ?

१०. पहली मोटर-सायकिल की रूपरेखा किसने तैयार की ?

प्रतियोगिता संख्या ७२ के प्रश्नों के उत्तर

(१) सर जेम्स ग्लैशियर और हेनरी ट्रैसी काक्सवेल।

(२) ७ सेण्टीमीटर।

(३) ३/४ इंच

(४) गरम।

(५) सिर्फ दो।

(६) तीन

(७) इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी द्वारा लिया गया जीवाणु आदि का विस्तृत चित्र।

(८) १९२५ में।

(९) सोडियम परमाणु के कारण।

(१०) ४ मील प्रति घण्टा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारी कलम से

स्नायु बैंक

निसार अहमद कुरैशी (स. सं. ७७६६)

जनसाधारण का रक्त बैंक से परिचय है। आज हमारे देश में रक्त बैंक जितना प्रशंसनीय सहयोग प्रदान कर रहा है, वास्तव में वह सराहनीय है। नेत्र बैंकों की स्थापनाकर चिकित्सकों ने अंधों के अंधियारे जीवन में ज्योतिदीप प्रज्ज्वलित कर दिया है, तथा लगातार सफलता के पथ पर अग्रसर हैं। कूपर टाउन, न्यूयार्क के इमोजीन बैसे हास्पिटल के डा.हरबर्ट, डा. डेविड तथा डा. जान ने फेफड़ा बैंकों को प्रारम्भकर फेफड़े के रोगों से ग्रसित मृतप्राय: रोगियों को नवजीवन प्राप्त करने का मार्ग खोल दिया है। मानव जीवन की निरन्तर सेवा में संलग्न इन बैंकों के पश्चात् वैज्ञानिकों ने स्नायु बैंक की स्थापना का महत्त्वपूर्ण विचार किया है।

स्नायु परिवर्तन का प्रथम बार परीक्षण

पिछले कुछ वर्षों तक एक मनुष्य की नसें दूसरे मनुष्य के शरीर में प्रयुक्त करने की बात काल्पनिक समझी जाती थी। परन्तु अब डा. कैम्पबेल ने इस कल्पनातीत तथ्य को प्रयोगों द्वारा सत्य प्रमाणित कर दिया है।

डा. कैम्पबेल न्यूयार्क विश्वविद्यालय के मेडिकल सेण्टर में स्नायु चिकित्सा के सहकारी प्राध्यापक हैं। प्रयोगशाला में ७ वर्षों के अथक परिश्रम के पश्चात् ही उन्हें स्नायु परिवर्तन करने में सफलता प्राप्त हुई है। उनकी धारणा है कि तुरन्त मरे व्यक्ति की नसों को निकालकर उनसे कटी या क्षतविक्षत नसों के बदले काम लिया जा सकता है।

२० स्नायु रोगियों में इस तरह के स्नायु-परिवर्तन किये गये, जिनमें से ८ स्नायु रोगियों की नसों का कार्य सुचारु रूप से प्रारम्भ किया गया। एक मनुष्य की नसें दूसरे मनुष्य के शरीर में लगा देने पर भी स्नायुविक गति तथा स्पन्दन की क्रियाओं में कोई विशेष अन्तर नहीं आता है। डा. कैम्पबेल ने इन ८ रोगियों के अलावा शेष रोगियों के विषय में कोई निश्चित् मत प्रकट नहीं किया है। फिलहाल उन रोगियों में दूसरे मनुष्यों की नसें लगाने से कोई उचित परिणाम ज्ञात नहीं हो रहा है। डा. कैम्पबेल का कथन है कि इन रोगियों में लगायी गयी बाहरी नसें अपना कार्य प्रारम्भ करने में कुछ अधिक समय लेंगी।

प्लास्टिक की सूक्ष्म छिद्रयुक्त थैलियों का प्रयोग

डा. कैम्पबेल ने कटी हुई नसों के अन्तर ज्ञात करने के लिए मनुष्यों में मांसपेशियों तथा नसों की स्पन्दन-क्रिया फिर से प्रारम्भ करने के भी सफल परीक्षण किये। इन्होंने इन परीक्षणों में सफल होने के कारण बतलाये हैं—प्रथम विकिरण-प्रक्रिया तथा द्वितीय प्लास्टिक की सूक्ष्म छिद्रयुक्त थैलियों का प्रयोग।

नसों को सुरक्षित रखने के लिए नसों को विकिरण प्रक्रिया द्वारा कीटाणुविहीन बनाना अनिवार्य है। विकिरण प्रक्रिया द्वारा ही नसों का आकार इस प्रकार निर्मित किया जाता है कि वे सरलता से दूसरे मनुष्य के शरीर में लग जायें। सुरक्षित स्नायुकोष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को दूसरे मनुष्य के शरीर के स्नायु संस्थान में स्थापितकर स्नायु संस्थान को स्पन्दित करने के लिए यान्त्रिक-क्रिया की सहायता लेनी पड़ती है। स्थापित की गयी नसों का कार्य सुचारु रूप से प्रारम्भ हो जाने पर यान्त्रिक क्रिया बन्द कर दी जाती है।

एक सम्भावना यह भी

डा. कैम्पबेल ने बताया है कि अभी तक केन्द्रीय स्नायु प्रणाली या रोगों से नष्ट नसों के विषय में यह विधि पूर्णतः सफल नहीं हो सकी है। इस पर परीक्षण जारी हैं, परन्तु अभी तक जो सफल परीक्षण किये गये हैं, उनसे ज्ञात होता है कि विभिन्न स्नायु बैंकों में मनुष्यों की नसों को सुरक्षित रखे जाने की व्यवस्था किये जाने के फलस्वरूप एक और महत्त्वपूर्ण चिकित्सा कार्य सफलतापूर्वक किया जा सकेगा। इन नवस्थापित स्नायु बैंकों से स्नायु शल्य-चिकित्सक सुरक्षित नसें लेकर उनका उपयोग दूसरे मनुष्य की नष्ट हुई या रोगग्रस्त नसों के बदले कर सकेंगे तथा उन्हें फिर से कार्य योग्य बना सकेंगे। इन स्नायु बैंकों की अभी प्रारम्भिक ही अवस्था है, परन्तु इनका भविष्य अत्यन्त उज्जवल है। ●

ग्राहकों से निवेदन

विज्ञान-लोक की एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे है। एक वर्ष का शुल्क ९ रुपये, दो वर्ष का १६ रुपये तथा तीन वर्ष का २० रुपये (विशेष रियायत) है।

पत्र-व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें। विज्ञान-लोक जिस लिफाफे में आपके पास आता है, उसी पर आपकी ग्राहक संख्या आपके पते के ऊपर लिखी रहती है।

पता बदलने की सूचना हमें एक मास पूर्व प्राप्त होनी चाहिये। इसके लिए नया और पुराना, दोनों पते भेजें। यदि छह मास से कम के लिए पता बदलवाना हो, तो कृपया अपने डाकखाने से इसकी व्यवस्था कर लें।

नये ग्राहकों को मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा किस अंक से विज्ञान-लोक भेजा जाय, यह अवश्य लिखना चाहिये।

पुराने ग्राहक अपनी सदस्यता का नवीयन (renewal) कराते समय मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा ग्राहक संख्या लिखने की कृपा करें।

विक्रय-व्यवस्थापक * विज्ञान-लोक * हास्पिटल रोड, आगरा–३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच्चों का सिनेमा

कुलदीप सहाय (स. सं. ११७५१)

यह सिनेमा बच्चों का अच्छा मनोरंजन कर सकता है। इसे बनाना बहुत आसान है।

आवश्यक सामग्री

गत्ते या लकड़ी का ६½ × १२ × ४इंच का डिब्बा, ११ इंच लम्बे दो मोटे तार, एक चित्र-कहानी जो कागज के दोनों ओर न हो, कागज, सूई-डोरा, गोंद और कैंची आदि।

सबसे पहले एक डिब्बा लीजिए। अब इसकी खड़ी दीवारों पर दोनों ओर किनारों से २ इंच की दूरी पर निशान बना दीजिए। अब इन निशानों पर तारों की मोटाई के बराबर या उससे बड़े दो-दो छेद दोनों दीवारों पर कर दीजिए।

अब दोनों तारों को लीजिए। इनके एक सिरे को ½ इंच का अन्त लेकर मोड़ दीजिए। अब इनको डब्बे के एक छेद में से डालकर दूसरे छेद में से निकाल लीजिए। इन दोनों तारों को दूसरे छेद पर मोड़िए। ये डब्बे में हैण्डिल की तरह लग जायेंगे।

अब चित्र कहानी या कागज लीजिए। यह आवश्यक है कि चित्र-कहानी का एक चित्र ३½ × ४ इंच से बड़ा न हो। अब चित्र की चौड़ाई के बराबर कागज की एक रील बना लीजिए। उस पर ऊपर से ६ इंच का स्थान छोड़कर चित्र काट-काटकर चिपकाते जाइए। यह भी ध्यान रहे कि चित्र-कहानी के सब चित्र आकार में समान हों। अब अन्तिम चित्र

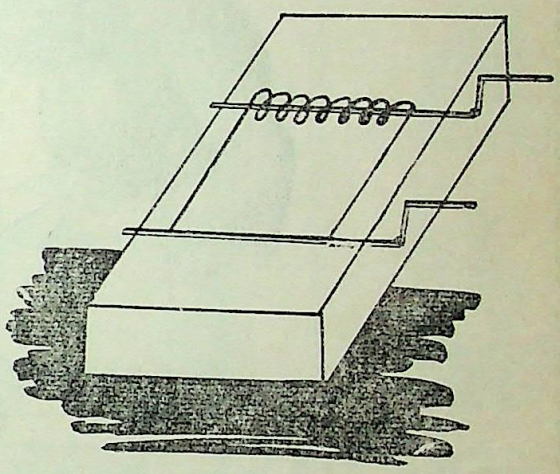

के नीचे ६ इंच का कागज छोड़कर बाकी पट्टी को कैंची से काटकर अलग कर दीजिए।

फिर रील के सबसे ऊपर छूटे कागज पर कहानी का नाम लिख दीजिए। सबसे निचले सिरे पर समाप्त लिख दीजिए।

अब डिब्बे के ऊपरी हिस्से पर ऊपर की ओर रील के एक चित्र की लम्बाई-चौड़ाई के बराबर ऊपरी सिरे से दो इंच की दूरी पर उतना हिस्सा काट दीजिए।

रील को लेकर उसके ऊपरी सिरे को ऊपर वाले तार पर चिपकाकर बांध दीजिए। अब रील को उस पर लपेटकर दूसरे सिरे को भी निचले तार से बांधकर, चिपकाकर दृढ़ कीजिए। इसके अतिरिक्त डिब्बे के ऊपरी सिरे पर के छेद पर शीशा भी लगा सकते हैं।

जब सिनेमा दिखाना हो, तो ऊपर के हैण्डिल को घुमाते जाइए। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

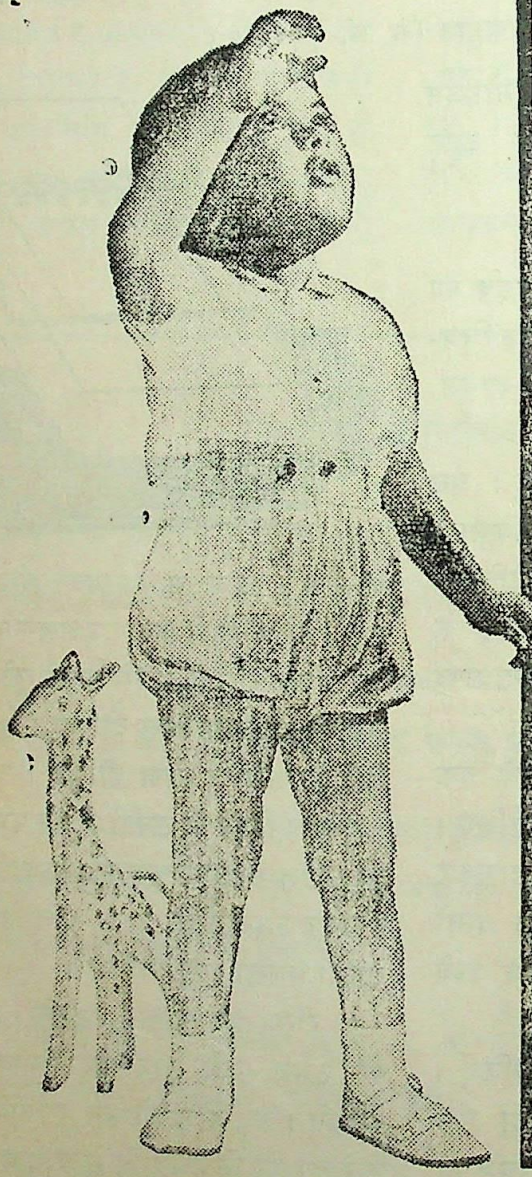

मुन्ना मेरा खिलौना माँगे नया खिलौना।

देखा आपने ? मुन्ने ने रबड़ का खिलौना फेंक दिया और वह अब नये खिलौने की ओर इशारा कर रहा है। उसका हठ दिन दूना और रात चौगुना बढ़ रहा है-और बढ़ता ही रहेगा। कल वह पाठशाला में जाएगा और परसों वह कालेज की शिक्षा के सपने देखेगा। अतः आपको इस बात का प्रबंध अभी से करना चाहिए। जिससे उसके सारे सपने साकार हो उठें।

उसके भविष्य की कोई भी योजना बनाते समय जीवन बीमे को न भूलिए। इसी से कल वह ऊँची शिक्षा पाकर और निश्शंक होकर नये जीवन में कदम रख सकेगा।

शिक्षा-वृत्ति पालिसी से उसकी ये आवश्यकताएँ पूरी होती रहेंगी और आप भी अपने बढ़ते हुए उत्तरदायित्व को निभा सकेंगे। आज ही बीमा एजेंट से मिलकर इस बात का प्रबन्ध क्यों नहीं कर लेते ?

निश्चिंत
भविष्य के लिए
जीवन बीमा

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृपया ध्यान दीजिये!

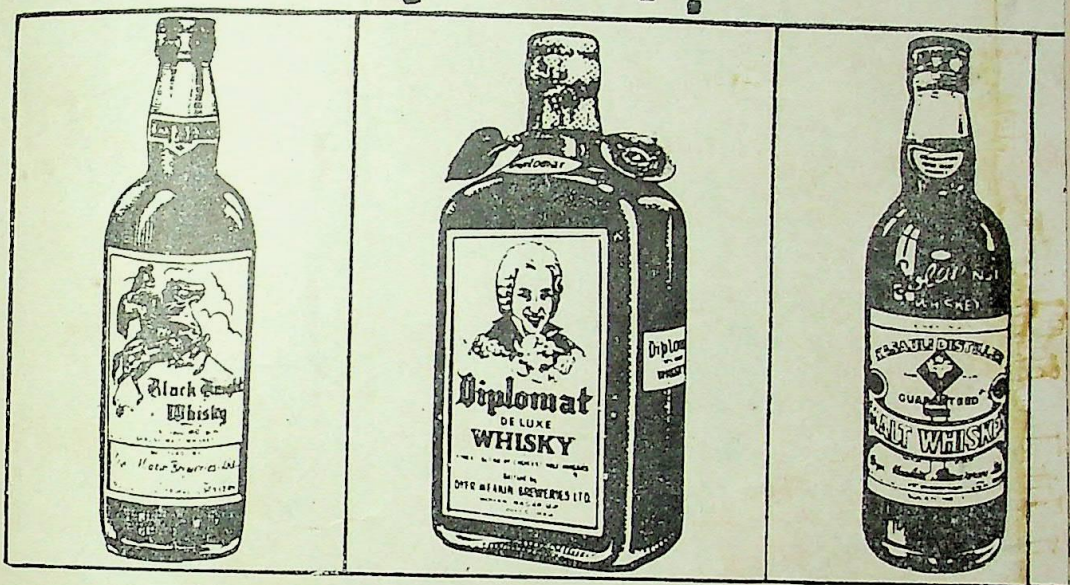

डायर मीकिन·

शुद्ध बारले माल्ट व्हिस्की

के लिये एक प्रतिष्ठित नाम

हम एशिया में माल्ट बनाने वाले सबसे बडे निर्माताओं मे से एक है। हमारी व्हिस्की आधुनिकतम मशीनो द्वारा स्काटलैंड के नियमानुसार शुद्ध बारले माल्ट से बनाई जाती है यह उतनी ही शुद्ध है, जितना आधुनिक विज्ञान इसे बना सकता है। आपका हमारे मे अमूल्य विश्वास है आप भरोसा रक्खें कि हमारी व्हिस्की की एक एक बूंद शुद्ध बारले माल्ट से बनाई गई है और हम ने प्रण किया है कि हमेशा इसी स्तर को स्थिर रखेंगे। सदैव शुद्ध बारले माल्ट व्हिस्की— **डिप्लोमेंट, ब्लैक नाइट** और **सोलन नं० १** का नाम लेकर मांगिये।

शताब्दी पुराना अनुभव विश्वास की गारण्टी है

डायर मीकिन ब्रुअरीज़ लि० स्थापित १८५५

सोलन ब्रुअरी – लखनऊ डिस्टिलरी – कसौली डिस्टिलरी
मोहन नगर ब्रुअरी ऐंड एलाइड इन्डस्ट्री (यू० पी०)

DMB-NP. 719

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

0DTH43M1

नीहारिका

कहानी मासिक

मार्च अंक

अब सब जगह उपलब्ध है

मेहरा न्यूजपेपर्स, हास्पिटल रोड, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

आयुर्वेद ३
—ओमप्रकाश गुप्ता

लेसर-रश्मियां ९
—सन्तोषकुमार श्रीवास्तव

कीटाणु-शास्त्र का विकास और प्रगति १६
—डा. हर्ष प्रियदर्शी

मोतियों की खेती २३
—रूपनरायण मोहिले

पथ्वी से टकराने वाले कण २९
—राजेन्द्रप्रसाद वार्ष्णेय

घर में बिजली की लाइन डालना ३७
—रमेशप्रसाद शर्मा

हलदी ४१
—आर. एन. सिंह

परमाणु-शक्ति ४५
—वीरेन्द्रकुमार भटनागर

विज्ञान के बढ़ते चरण··· ५१
—तेजनारायण सक्सेना

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां २७
विचित्र संसार ३५
विज्ञान क्लब ५३
इनाम लो ५६
करो और देखो ५७

अपनी बात

एक वर्ग विशेष के लिए यह धारणा प्रमुख है कि विज्ञान के विकास से कला का ह्रास हुआ है। कला विघटित होकर आधुनिक कहलायी है। कला के वास्तविक महत्त्व की पुनर्स्थापना तभी सम्भव है जब विज्ञान को प्राथमिकता न दी जाय।

उपरोक्त धारणा अत्यन्त भ्रामक है। एक सन्दर्भ में कला का ह्रास हुआ है, और इसलिए क्योंकि पिछली कुछ शताब्दियों में वह विकास-धारा से छूटी रही है। इतिहास काल के प्रारम्भ से बहुत पीछे जायें और उस युग पर दृष्टिपात करें जो सभ्यताओं के विकास का युग कहलाता है, तो पायेंगे कि विज्ञान और कला का विकास साथ-साथ हुआ। किन्तु यह एक तथ्य है कि वर्तमान शताब्दी में विज्ञान का जितना विकास हो चुका है, उतना कला का नहीं।

विज्ञान हमेशा सम्भावनाओं पर आश्रित रहा है, अतः वह निरन्तर विकासशील रहा है। कला का विकास आशातीत रूप से इसलिए प्रोत्साहित नहीं हो पाया, क्योंकि अनेक शताब्दियों तक इसे रुद्ध रहना पड़ा। विभिन्न कलाकारों की मान्यताएं तथा परम्परागत रूढ़ि और लकीरें इसका आधार बनी रहीं।

वर्तमान शताब्दी ने वैज्ञानिक संस्कृति को जन्म दिया है जो धीरे-धीरे सार्वत्रिक हो रही है। सम्प्रति काल का वह बिन्दु है जब यह अपेक्षा हो सकती है कि विज्ञान और कला के प्रति हमारी संवेदनशीलता में भेद न रह जाय, क्योंकि उद्देश्य दोनों का एक है, सत्य का अन्वेषण।

वर्ष ७ अंक ३

एक प्रति : ७५ पैसे
वार्षिक : ९ रुपये

सम्पादक : शंकर मेहरा
प्रकाशक : मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय 6.5.66

आयुर्वेद: एक सन्दर्भ

चिकित्सा-विज्ञान के विकास-क्रम का अध्ययन

ओमप्रकाश गुप्ता

विज्ञान के विकास से पूर्व का चिकित्सा-विज्ञान रोग दूर करने की उन विधियों तक ही सीमित था जो आदिम मनुष्यों में प्रचलित थीं। आदिम मनुष्य सीखने की प्रक्रिया से धीरे-धीरे गुजर रहा था, लेकिन बीमारियों और चोटों का ज्ञान उसे हो गया था। वह पीड़ा के प्रति चैतन्य था और उसकी धारणा थी कि बीमारियों में मुख्यत: व्यक्ति को पीड़ा सहनी पड़ती है। लेकिन वह युग रोगों के उपयुक्त निदान से वंचित रहा। अधिकांशत: यह माना जाता रहा कि 'अशुभ' (Evil) शक्तियों के शरीर पर प्रक्षेपण से ही रोग उत्पन्न होते हैं।

धीरे-धीरे आदिम मनुष्य सभ्य हुआ। विश्व के विभिन्न भागों में अनेक सभ्यताएं विकसित हुईं। प्रत्येक सभ्यता के अन्तर्गत एक विशिष्ट चिकित्सा-पद्धति का विकास हुआ।

मिस्र की चिकित्सा-पद्धति

प्राचीन चिकित्सा-पद्धतियों में मिस्र की चिकित्सा-पद्धति प्रमुख है। इसके अन्तर्गत जादू-टोना तथा परम्परागत क्रियाओं का समावेश था। मुख्य रूप से चिकित्सक होते थे मन्दिरों के पुजारी। तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत वे एक मुख्य चिकित्सक के अधीन थे और उसके निर्देशों का पालन करते थे। चिकित्सा-विज्ञान में वे स्वास्थ्य तथा भोजन के नियम समाविष्ट मानते थे।

प्राचीन मिस्र के इतिहास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि फिरौन राजाओं के तृतीय वंश के शासक जोसर (३००० ई.पू.) का एक व्यक्तिगत चिकित्सक था। उसका नाम इम्होटेप था। लोग उसे देवता मानने लगे थे, क्योंकि वह चिकित्सकों में अत्यन्त कुशल था। बाद के काल में उसके लिए मिस्र में मन्दिर भी बने। जार्ज एबर्स और इडविन स्मिथ पेपिरस से पता चलता है कि धीरे-धीरे मिस्र के चिकित्सकों को शरीर-शास्त्र का भी ज्ञान हो गया था; वे शल्य-चिकित्सा भी करने लगे थे।

मेसोपोटामिया की चिकित्सा-पद्धति

मेसोपोटामिया की सभ्यता के अन्तर्गत भी एक विशिष्ट चिकित्सा-पद्धति का विकास हुआ, लेकिन अन्धविश्वास से चिकित्सक मुक्त नहीं थे। उनका मत था कि 'प्रेतों' के शरीर में प्रवेश करने से रोग उत्पन्न होता है, अत: रोगों के निदान के लिए आवश्यक है कि 'प्रेतों' को शरीर में से बाहर निकाला जाय। हम्मुराबी संहिता में शल्य-चिकित्सा के कुछ वर्णन प्राप्य हैं। उनसे यह ज्ञात होता है शरीर रचना-विज्ञान से चिकित्सक अनभिज्ञ नहीं थे। विभिन्न रोगों के लिए भांति-भांति की दवाएं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी प्रचलित थीं। उनमें तारपीन, सरसो अरण्ड आदि प्रमुख थे।

पश्चिम में विकसित प्रथम चिकित्सा-पद्धति

यूनानी चिकित्सा-पद्धति पश्चिम में विकसित प्रथम वैज्ञानिक चिकित्सा-पद्धति है। ईसा पूर्व ५०० से रोम के साम्राज्य के उत्थान तक इसका विकास होता रहा। एशिया माइनर के भूमध्यसारीय क्षेत्र में यह पद्धति अत्यन्त प्रचलित रही। एथेन्स तथा यूनानी उपनिवेश सिसली और इटली भी इसके विकास के प्रमुख केन्द्र रहे। इस चिकित्सा-पद्धति की विभिन्न शाखाएं हैं। पश्चिमी एशिया माइनर के यूनानियों ने इन शाखाओं से उपचार की प्रणालियों का विकास करते हुए ईसा पूर्व सातवीं शताब्दी के आसपास एक दार्शनिक पद्धति का प्रतिपादन किया जिसके अनुसार उनकी यह चिकित्सा-पद्धति प्राकृतिक रूप से विकसित हुई। इस दार्शनिक पद्धति के प्रतिपादन में कास के चिकित्सा विद्यालय मुख्य सूत्र रहे। यह उल्लेख्य है कि कास में हिप्पोक्रीटस का जन्म हुआ था। इसे 'हेप्पोक्रीटस संग्रह' कहा गया।

ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में यूनानी

अत्यन्त उपयोगी पादप ब्राह्मी

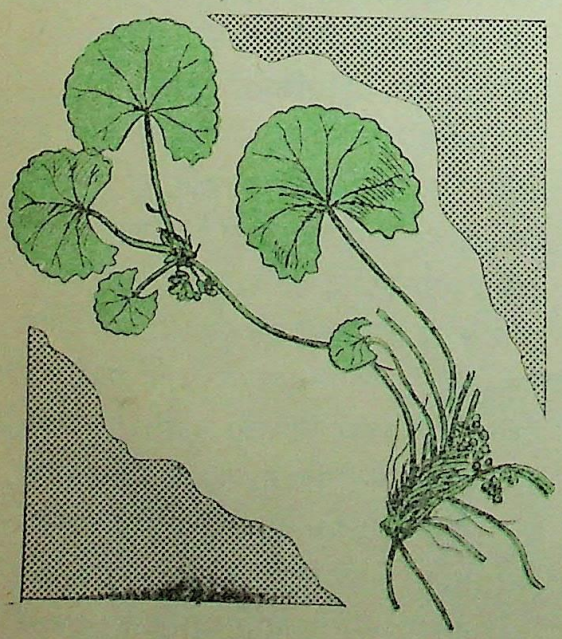

चिकित्सा-विज्ञान वैज्ञानिक चेतना का एक अंश बनकर विकसित हुआ। एक ऐसे व्यक्तित्व की छाया इस पर पड़ी जो चिकित्सा-विज्ञान के लिए अविस्मरणीय है। अरस्तू (३८४-३२२ ई. पू.) प्राचीन विज्ञान का जन्मदाता माना जाता है। उसने अपने विज्ञान के अन्तर्गत चार मूलभूत गुण स्वीकार किये हैं; ये हैं—गरमी, ठण्डक गीलापन और सूखापन। ये मिलकर चार मूलभूत स्थितियों को अस्तित्वगत करते हैं जिनसे पदार्थ की रचना होती है। इन चार मूलभूत स्थितियों को अरस्तू ने तत्त्व कहा है; ये हैं—क्षिति, वायु, अग्नि और जल। अन्य समकालीन चिकित्सकों ने अरस्तू के इस प्रतिपादन का लाभ उठाते हुए यूनानी चिकित्सा-पद्धति का विकास किया।

सिकन्दरिया विद्यालय

३२२ ई. पू. में, अरस्तु की मृत्यु के बाद सिकन्दरिया में एक बहुत बड़ा चिकित्सा-विज्ञान का विद्यालय खुला। उसके पहले दो चिकित्सक हेरोफिलस और इरासिस्त्रातुस हुए। हेरोफिलस शरीर चिना-विज्ञान का पिता माना जाता है और इरासिस्त्रातुस क्रिया-विज्ञान का।

रोम के शासन में चिकित्सा

रोम की चिकित्सा-पद्धति प्रारम्भ में एक अविकसित सभ्यता की चिकित्सा-पद्धति-जैसी थी। यूनानी चिकित्सा-पद्धति के प्रभाव के साथ ही इसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। रोम में प्रारम्भ में चिकित्सा-विज्ञान की शिक्षा लोग व्यक्तिगत रूप से लेते थे। यूनान का एस्क्लीपीडीस आरम्भिक विज्ञान-शिक्षक था। उसने हिप्पोक्रीटस के विचारों का विरोध किया।

उसके प्रयत्नों से धीरे-धीरे रोम में चिकित्सा-विज्ञान का विकास हुआ। वे पुरानी धारणाएं जो अन्धविश्वासपूर्ण थीं, दूर हुईं और चिकित्सक बौद्धिक आधार पर अपनी जिज्ञासाओं का हल ढूंढ़ने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनता के लिए चिकित्सा सेवा

रोम में प्रारम्भिक शासनकाल में जनता के लिए चिकित्सा-सेवा उपलब्ध थी। विभिन्न नगरों में डाक्टर नियुक्त थे। अस्पताल की सुविधा की पहल रोम ने ही की। यात्रियों तथा सैलानियों के लिए रोम में जगह-जगह अस्पताल बने थे।

...और पूर्व में

पूर्व की चिकित्सा-पद्धति अत्यन्त प्राचीन काल से ही विकसित थी। प्राचीनतम उल्लेख अथर्ववेद में प्राप्य है जो सम्भवत: २००० ई.पू. का है। परवर्ती साहित्य के अनुसार आयुर्वेद को धन्वन्तरि ने ब्रह्मा से प्राप्त किया था। धन्वन्तरि देवताओं के चिकित्सक थे। बाद में उनकी मर्यादा कुछ कम हुई जब वे इस पृथ्वी पर के राजा हुए। परम्परागत मन्यताओं के अनुसार सर्प के काटने से उनकी मृत्यु हुई। इस सन्दर्भ में एक कथा है जिसके अन्तर्गत धन्वन्तरि का सम्पर्क सांपों से प्रकट होता है, और ज्ञात होता है कि किस तरह प्राचीन भारतीय चिकित्सक सांप के काटे का इलाज करते थे।

वैदिक काल की चिकित्सा-पद्धति का युग ८०० ई. पू. तक रहा। वेद में प्राप्य वर्णनों से किसी वैज्ञानिक चिकित्सा-पद्धति का आभास नहीं मिलता। 'दुष्टात्माओं' के कारण ही रोग उत्पन्न होते हैं, यह उस काल के ऋषियों की धारणा थी। बुखार, सर्दी, मस्तिष्क विद्रधि, चर्म रोग आदि का उल्लेख भी मिलता है। निदान के लिए मुख्य रूप से विभिन्न प्रकार के पादपों का ही उपयोग वर्णित है। यह कह सकते हैं कि आयुर्वेद ही विश्व की प्राचीनतम प्राकृतिक चिकित्सा-पद्धति है

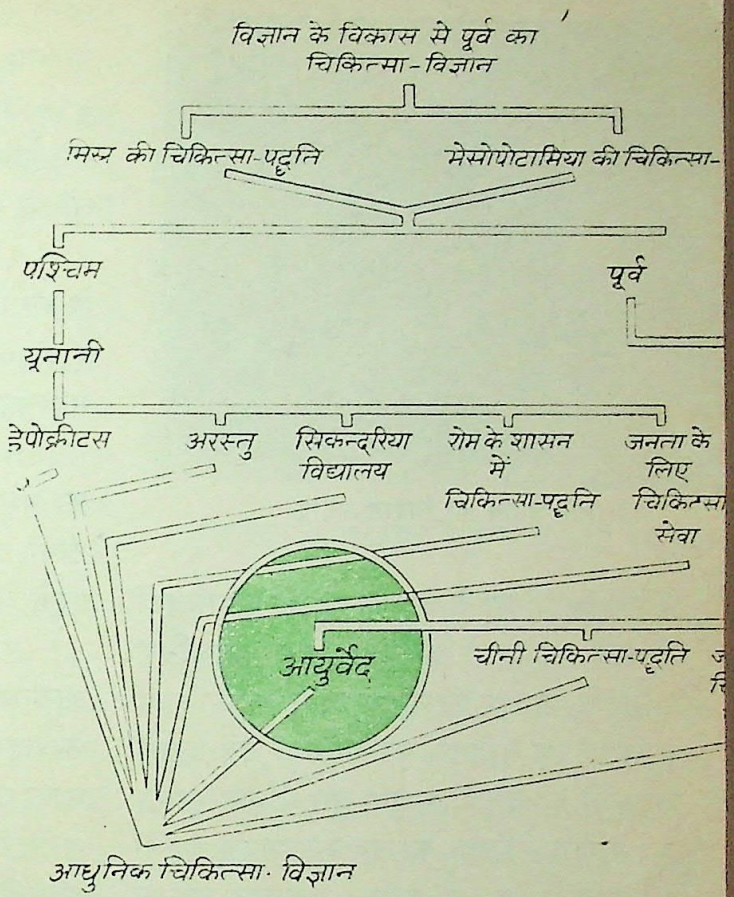

प्राचीन चिकित्सा-विज्ञान से आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान तक की प्रमुख प्रवृत्तियां

जिसके अन्तर्गत ओषधियां प्राकृतिक अवस्था में प्राप्त होती हैं। हां, अब तक आयुर्वेद में जो परिवर्तन हुए हैं उनके परिणामस्वरूप कृत्रिम रूप से भी आयुर्वेदिक औषधियां तैयार की जाने लगी हैं लेकिन वैदिक युग में मुख्यत: पादपों के प्रयोग द्वारा ही रोगों का निदान होता था।

८०० ई. पू. से १००० तक का काल आयुर्वेद के विकास की दृष्टि से स्वर्ण युग कहा जा सकता है। इस युग में चरक और सुश्रुत-जैसे मनीषियों के कार्य क्रमश: चरक संहिता और सुश्रुत संहिता के रूप में उपलब्धि बने। प्रारम्भ में तो लोगों की धारणा थी कि चरक संहिता और सुश्रुत संहिता अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ हैं। तब एक विवाद खड़ा हो गया कि भारतीय चिकित्सा-पद्धति और यूनानी चिकित्सा-पद्धति में प्राचीनतर कौन है। कुछ विद्वानों का मत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फीलपांव का निदान मदार

है कि ईसवी सन् के प्रारम्भ के कई शताब्दियों के बाद इन ग्रन्थों की रचना हुई। आधुनिक शोधों के आधार पर यह अनुमान लगाया गया है कि चरक संहिता का वर्तमान रूप पहली शताब्दी की देन है, यद्यपि मूल अधिक पुराना है। सुश्रुत संहिता का लेखन सम्भवतः पहली शताब्दी ई. पू. में हुआ। वर्तमान रूप में आते-आते सात-आठ शताब्दियां बीत गयीं। चौथी और छठी शताब्दी की कुछ पाण्डुलिपियों में सुश्रुत संहिता का उल्लेख मिलता है। बाद के युगों में चिकित्सा-सम्बन्धी जो ग्रन्थ लिखे गये वे मुख्य रूप से इन्हीं दो ग्रन्थों पर आधारित हैं।

प्राचीन भारत में एक परम्परागत निषेध था कि मृतक के शरीर पर शल्यक्रिया नहीं हो सकती। इसी कारण उस युग के चिकित्सकों का शरीर रचना-विज्ञान-सम्बन्धी ज्ञान अधूरा था। सुश्रुत ने यह निर्देश दिया है कि मृतक को एक टोकरी में रखकर सात दिन तक नदी के पानी में डुबाये रखना चाहिये। सात दिन के बाद मृतक को पानी से बाहर निकालना चाहिये। फिर उसके शरीर के भाग सरलता से पृथक किये जा सकते हैं। प्राचीन चिकित्सकों ने इस तरह अस्थियों और मांसपेशियों के सम्बन्ध में प्रचुर ज्ञान प्राप्त कर लिया था, किन्तु रक्त-संस्थान तथा स्नायु-संस्थान के सम्बन्ध में वे पूर्णतः अनभिज्ञ थे। उन्होंने ३६० अस्थियों, २१० अस्थि जोड़ों तथा ५०० मांसपेशियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर ली थी।

चरक और सुश्रुत, दोनों ने भांति-भांति के रोगों की चर्चा की है। सुश्रुत के अनुसार १,१२० प्रकार के रोग होते हैं। ज्वर को महत्त्वपूर्ण रोग उन्होंने स्वीकार किया।

आयुर्वेद में आहार और ओषधि, दोनों का महत्त्व है। ओषधि का सेवन करते हुए भी रोगी को आहार में कुछ परहेज बरतने पड़ते थे।

सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात आयुर्वेद के सम्बन्ध में यह है कि प्रारम्भ से ही इस पद्धति के अन्तर्गत वनस्पतियों को औषधीय महत्त्व का माना गया। और विशेष-विशेष वनस्पतियों का अलग विभाग निर्धारित हुआ। चरक ने ५०० औषधीय महत्त्व की वनस्पतियों का उल्लेख किया है और सुश्रुत ने ७६०। इसके अतिरिक्त दूध, धातु आदि के सेवन का भी विधान था। स्वास्थ्य के सामान्य नियमों की ओर भी चिकित्सक ध्यान देते थे। रोगी का पानी पीना और स्नान करना भी चिकित्सक के निर्देश पर निर्भर रहता था।

चिकित्सक ओषधि के रूप में विभिन्न रोगों के लिए रोगी की आयु के अनुसार पादप-ओषधि की मात्रा निश्चित करते थे। निम्न-लिखित पंक्तियों में कुछ ऐसी ही वनस्पतियों का उल्लेख करेंगे। ये आयुर्वेदिक चिकित्सा की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी हैं।

महत्त्वपूर्ण पादप

उत्तरी समशीतोष्ण कटिबन्ध के प्रमुख पादप लहसन के रस से तैयार की गयी ओषधि क्षय रोग तथा फेफड़ों की सूजन में लाभकारी होती है। कान के दर्द की भी यह अचूक ओषधि है। भारत के सभी भागों में पाये जाने वाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुड़हल की जड़ों से अनेक आयुर्वेदिक ओषधियों का निर्माण होता है। जड़ों का काढ़ा सुजाक के रोगियों को दिया जाता है। पिपरमूल की जड़ें फेफड़ों के दीर्घ स्थायी सूजन में तथा सर्प और बिच्छू के काटने से विष दूर करने में उपयोगी होती हैं।

मदार के पौधे का प्रत्येक भाग ओषधीय महत्त्व का होता है। इसकी जड़ों की छाल का रस पेचिस लाने वाली ओषधि है। अपराजिता की जड़ें पेट साफ करने वाली तथा मूत्रवर्धक होती हैं। सांप के काटने में भी इसका उपयोग होता है। करौंदा की जड़ों से आंत के कीड़े निकल जाते हैं। अबल की जड़ का उपयोग चर्मरोग में होता है।

ब्राह्मी के पत्तों के रस का उपयोग सन्धि-वात रोग में होता है। खांसी एवं बलगम में ब्राह्मी का पंचांग उबालकर पुल्टिस के रूप में रोगी की छाती पर फैलाकर रख देते हैं। ब्राह्मी से अब अनेक प्रामाणिक योग भी तैयार किये जाने लगे हैं।

औषधीय महत्त्व का विशेष रूप से उल्लेखनीय पादप केसर (मुखपृष्ठ) है। इसका फूल नील-लोहित होता है जो शरद् के बाद फूलता है। इस पादप का ज्ञान प्राचीन काल से ही विश्व की विभिन्न सभ्यताओं में रहा

अग्निवर्धक ओषधि करौंदा

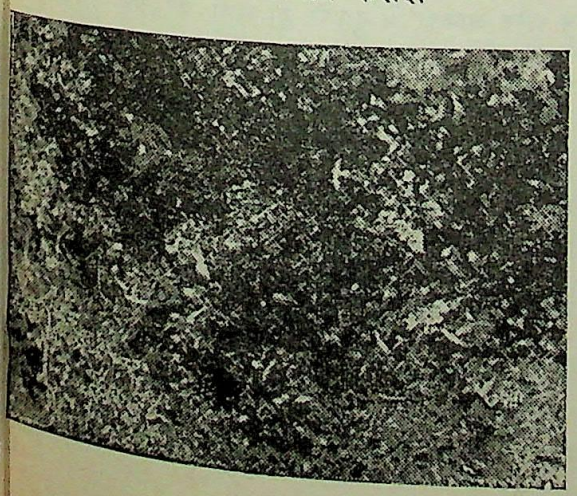

महत्त्वपूर्ण आयुर्वेदिक ओषधियों के लिए गुड़हल

है। इतिहासकारों का मत है कि चिकित्सक इसका उपयोग चिकित्सा में करते रहे हैं। ईरान और कश्मीर में यह एक लम्बे समय से उपजाया जाता रहा है। आयुर्वेद में इसका अनन्य महत्त्व है। चीनी चिकित्सा-पद्धति के अन्तर्गत भी यह औषधीय महत्त्व का पादप स्वीकार किया गया है।

चीनी चिकित्सा-पद्धति

चीनी चिकित्सा-पद्धति भी अत्यन्त प्राचीन है। ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता कि किसी अन्य चिकित्सा-पद्धति का इस पर प्रभाव पड़ा हो।

परम्परागत चीनी कथाओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि फु हसी (२९५३ ई. पू.) इसका जन्मदाता था। इसके बाद शेन नंग (२८३८-२६९८ ई. पू.) तथा हुआंग ती (२६९८-२५९८ ई. पू.) नामक राजाओं द्वारा इसका प्रसार हुआ।

चीनी चिकित्सा-पद्धति का मुख्य आधार यंग और चिन का दार्शनिक सिद्धान्त है। यंग नर स्वभाव है और प्रकाश है; यिन मादा स्वभाव है और अन्धकार है। यंग स्वर्ग का प्रतीक है और यिन पृथ्वी का। पदार्थ की ही भांति शरीर पांच तत्त्वों से बना है—काष्ठ, अग्नि, क्षिति, वायुमण्डल की धातु तथा जल;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इनसे सम्बद्ध हैं पांच ग्रह, पांच स्थितियां, पांच रंग तथा पांच ध्वनियां।

चिकित्सा-विज्ञान के इतिहासकारों की धारणा है कि चीनियों को ही सर्वप्रथम नब्ज देखने की कला का ज्ञान हुआ। चांग शी हो (२८०) ही प्रथम व्यक्ति था जिसने इस कला का विकास किया।

चीनी चिकित्सा-पद्धति में भी विभिन्न वनस्पतियों के उपयोग का विधान है। प्राचीन काल से ही चीन में अनेक जड़ी-बूटियां ज्ञात हैं। इनकी संख्या करीब १,००० है। इनके उपयोग के सम्बन्ध में समय-समय पर चिकित्सक निर्देश देते रहे हैं।

जापान की चिकित्सा-पद्धति

प्राचीन काल से ही जापान में भी एक मौलिक चिकित्सा-पद्धति का प्रचलन रहा है, किन्तु तीसरी शताब्दी में वहां चीनी चिकित्सा-पद्धति का प्रचलन हुआ। यह प्रभाव लगभग १६वीं शताब्दी तक बना रहा। इसके बाद आधुनिक चिकित्सा-पद्धति वहां व्यवहार में आयी। जापान की अपनी परम्परागत चिकित्सा-पद्धति बाहरी प्रभाव से जल्द ही समाप्त हो गयी, अतः उसके सम्बन्ध में पर्याप्त सूचनाओं का अभाव चिकित्सा-विज्ञान के इतिहासकारों के लिए रहा।

...फिर अनेक शताब्दियों तक चिकित्सा-विज्ञान परिष्कृत किया जाता रहा। नयी-नयी सम्भावनाएं उससे जुड़ती रहीं, नये-नये प्रयोग होते रहे। पिछले चार सौ वर्षों में और विशेष रूप से पिछले पचास वर्षों में चिकित्सा-विज्ञान के क्षेत्र में कल्पनातीत प्रगति हुई है।

परन्तु यह निर्विवाद मान्य है कि चिकित्सा की प्राचीन पद्धतियां अर्थहीन नहीं थीं। चिकित्सा-विज्ञान के विकास-क्रम में आयुर्वेद का प्रमुख स्थान रहा। अन्य प्राचीन चिकित्सा-पद्धतियां समय के साथ-साथ पुरानी पड़ गयीं, किन्तु आयुर्वेद—पादपों की ओषधि से चिकित्सा करने की प्रणाली—आज भी वर्तमान चिकित्सा-विज्ञान के साथ-साथ प्रगति कर रहा है। क्योंकि आयुर्वेद मुख्य रूप से प्राकृतिक ओषधियों के आधार पर विकसित हुआ, अतः इसका महत्त्व तथा प्रभाव आज भी चिकित्सा-शास्त्रियों की जिज्ञासा का विषय बना हुआ है। ●

उड़ने वाली रेलगाड़ी

फ्रांस में एक बिना पहियों की रेलगाड़ी तैयार हो गयी है जो २०० किलोमीटर की रफ्तार से चलती है।

अभी तक यह रेलगाड़ी परीक्षण की अवस्था में है। लेकिन जो वैज्ञानिक इसे तैयार करने में लगे हुए हैं, उनका विश्वास है कि इसके व्यावहारिक रूप लेने और आकार में दुगनी हो जाने पर यह ४०० किलोमीटर प्रति घण्टा की रफ्तार से चल सकेगी।

यह पटरी से कुछ ऊंचाई पर उड़ती है और पटरी के घुमाव के अनुसार घूम जाती है। इसके चलाने के लिए स्टीयरिंग की आवश्यकता नहीं होती।

वर्तमान कार्यक्रम के अनुसार इस वर्ष के अन्त तक इस रेलगाड़ी को ल्यों-ग्रनोविल और पेरिस-ओर्लियो के बीच चलाने की योजना है।

शरीर में रक्तसंचार ज्ञात करने वाला नया उपकरण : रेडियोसर्कुलोग्राफ

हंगरी में रेडियोसर्कुलोग्राफ नामक एक नये यन्त्र का विकास किया गया है। यह रेडियो-सक्रिय पदार्थों की सहायता से शरीर में रक्तसंचार के मार्ग के सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी देता है। इसके द्वारा हृदय, यकृत, गुरदों तथा शरीर के अन्य अंगों में होने वाली खराबियों का पता चलता है। रोग के सही कारणों का निर्णय करने में भी इससे सहायता मिलती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

76253

लेसर-रश्मियां

76253

सन्तोषकुमार श्रीवास्तव, एम. एस-सी.

विज्ञान की दुनिया में सदैव कोई न कोई ऐसा आविष्कार हुआ करता है जो लोगों को आश्चर्यचकित कर देता है और जिसके बारे में जानने के लिए अनेक लोग उत्सुक हो जाते हैं। ऐसे ही अनेक आविष्कारों में लेसर भी है। अनेक सूर्यों के प्रकाश की तीव्रता को भी अपने आगे झुका देने वाला यह प्रकाश-स्रोत एक ऐसा आविष्कार है जिसके बारे में आज दुनिया के हर भाग में खोज हो रही है। केवल अमरीका में ही, जब इस आविष्कार को घोषित किया गया था तो अठारह महीनों के भीतर चार सौ कम्पनियों ने इस पर खोज करनी प्रारम्भ कर दी थी। ऐसा होना स्वाभाविक भी है। लेसर एक ऐसा प्रकाश-स्रोत है जिसके उपयोगों का कोई अन्त नहीं। शल्य-चिकित्सक की मेज पर पड़े हुए जीवन और मृत्यु से लड़ते रोगी को जीवनदान देने से लेकर युद्ध में दुश्मनों को मृत्यु के मुख में पहुंचाने में लेसर का उपयोग होता है।

इस आश्चर्यजनक आविष्कार की आयु बहुत अधिक नहीं है। सर्वप्रथम १९५८ में अमरीका के शैलो और टाउंस ने लेसर के सिद्धान्त के बारे में सुझाव दिया था। इस आविष्कार पर संसार के तीन वैज्ञानिकों को नोबल पुरस्कार भी मिला। १९६० में अमरीका के वैज्ञानिक मेमैन ने संसार का पहला लेसर बनाया।

लेसर द्वारा प्रकाश का अभिवर्धन किया जाता है। अंगरेजी में इसका पूरा नाम है—'लाइट एम्प्लीफिकेशन बाई स्टीमुलेटड एमिशन आफ रेडियेशन।' इसके द्वारा एक ही तरंग का बहुत ही तीव्र प्रकाश उत्पन्न किया जाता है। अभी तक तीन प्रकार के लेसर बनाये गये हैं। उनके नाम हैं—(अ) गैस लेसर, (ब) ठोस लेसर एवं (स) अर्ध-चालक लेसर (semi-conductor laser)।

लेसर उपकरण की रचना

जिस उपकरण से लेसर रश्मियां उत्पन्न की जाती हैं उसकी रचना साधारण है, परन्तु उसके विभिन्न भागों को बनाना एक जटिल समस्या है। इस उपकरण का मुख्य अंग एक छड़ है जो लगभग चार सेण्टीमीटर लम्बी तथा आधा सेण्टीमीटर व्यास की होती है। यह रुबी नामक पदार्थ के मणिभ (crystal) को काटकर बनायी जाती है। इस छड़ के दोनों किनारों को समतल तथा एक-दूसरे के समानान्तर बनाया जाता है। दोनों सतहों पर चांदी का मुलम्मा चढ़ाया जाता है। ऐसा करने से इनमें प्रकाश को परावर्तित करने की क्षमता आ जाती है। एक सतह प्रकाश को लगभग पूरी तरह परावर्तित कर देती है और दूसरी सतह प्रकाश का केवल कुछ ही भाग परावर्तित करती है। इस छड़ के चारों ओर एक बहुत ही तीव्र प्रकाश देने वाली इलेक्ट्रानिक नलिका (electronic tube) लिपटी रहती है।

इस उपकरण से लेसर-रश्मियां उत्पन्न करने के लिए इलेक्ट्रानिक नलिका को चलाया जाता है। इसके प्रारम्भ करने के कुछ देर बाद ही छड़ के एक किनारे से बहुत ही तीव्रता वाले प्रकाश का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुंज बाहर निकलता है। यह प्रकाश गहरे लाल रंग का होता है और इसकी तरंग लम्बाई ६९४३ × १०$^{-८}$ सेण्टीमीटर होती है।

लेसर-रश्मियों की विशेषताएं

लेसर-रश्मियों की विशेषताएं ही ऐसी हैं जिनके कारण इन्होंने विज्ञान की दुनिया में धूम मचा दी है। बिजली के बल्ब अथवा जलती हुई मोमबत्ती से जो प्रकाश निकलता है, उसकी तीव्रता बहुत कम होती है। इनसे निकला हुआ प्रकाश प्रायः कला सम्बद्ध भी नहीं होता है। हम यहां सर्वप्रथम यह समझने का प्रयत्न करेंगे कि प्रकाश के लिए कला सम्बद्धता गुण से क्या अभिप्राय है। आपने कभी बाजार में चलती भीड़ ध्यान से देखी होगी। इस भीड़ में कोई नियमितता नहीं होती है। सभी के कपड़े भिन्न होते हैं। उनके चलने की विधि अलग-अलग होती है और उन सभी के उद्देश्य भी भिन्न-भिन्न होते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि ऐसी भीड़ में असम्बद्धता होती है। परन्तु आपने सड़क पर सैनिकों को भी मार्च करते देखा होगा। सभी एक रेखा में बहुत नियन्त्रण के साथ चलते हैं। सबके दायें पैर एक साथ उठते हैं और सब दायें हाथ एक साथ आगे बढ़ाते हैं। यहां तक कि उनके पैरों द्वारा उत्पन्न ध्वनि भी एक साथ होती है। यह सब बहुत नियमित ढंग से होता है। ठीक इसी प्रकार प्रकाश के स्रोत से असंख्य तरंगें एक साथ बाहर निकलती हैं। परन्तु ये तरंगें एक-दूसरे से भिन्न रूपों में प्रसारित होती हैं और इनके व्यवहार में एकता नहीं होती। प्रकाश के ऐसे स्रोत को असम्बद्ध स्रोत (incoherent source) कहते हैं। लेसर प्रकाश का एक ऐसा स्रोत है जिससे सभी तरंगें एक ही रूप में निकलती हैं। सभी तरंगों के प्रसारित होने का ढंग एक-सा होता है। लेसर का यह गुण बहुत उपयोगी है, और ऐसा होने से प्रकाश-विज्ञान की बहुत-सी समस्याओं का समाधान सरलता से हो जाता है। यह उल्लेख्य है कि लेसर-रश्मियों की तीव्रता भी बहुत अधिक होती है।

प्रकाश का वर्णपट यदि हम सूक्ष्मता से देखें, तो पायेंगे कि वह कई रंगों से मिलकर बना है। प्रत्येक रंग को एक तरंग-लम्बाई द्वारा सूचित किया जाता है। प्रकाश के साधारण स्रोत केवल एक ही रंग को प्रसारित नहीं करते हैं। उनसे निकला हुआ प्रकाश कई तरंगों से मिलकर बना होता है। परन्तु लेसर-रश्मियां एक ही तरंग की होती हैं। ऐसे प्रकाश को एक-वर्णी (monochromatic) कहते हैं।

टार्च से निकला हुआ प्रकाश यदि किसी दीवार पर डालें, तो हम देखेंगे कि उस पर प्रकाश का एक बड़ा-सा वृत्त बन गया है। यह दीवार जितनी ही दूर होती जाती है, प्रकाशित भाग का क्षेत्रफल उतना ही बढ़ता जाता है। ऐसे प्रकाश के स्रोतों से जब प्रकाश बाहर निकलता है तब वह उद्गम पर एक बड़ा कोण बनाता है। इसलिए जितनी अधिक दूरी तक प्रकाश जाता है, उसका प्रकाशित करने का घेरा उतना ही बड़ा होता जाता है। इस प्रकार प्रकाश की तीव्रता कम

(क) इलेक्ट्रानि नलिका प्रारम्भ करने से पूर्व परमाणु अपनी मूल अवस्था में रहते हैं

(ख) प्रकाश (काले तीर) परमाणुओं को उत्तेजित अवस्था में ला देता है। ये परमाणु काले बिन्दुओं द्वारा दिखाये गये हैं

(ग) परमाणु अपनी पूर्वावस्था में आ जाते हैं और लेसर-रश्मियों (रंगीन तीर) को जन्म देते हैं।

(घ) इस प्रकार उत्पन्न हुई लेसर-रश्मियां अन्य परमाणुओं से टकराकर और अधिक रश्मियां उत्पन्न करती हैं

(च) ये रश्मियां रुबी छड़ के किनारों से परावर्तित होकर समानान्तर रेखाओं में चलने लगती हैं

(छ) बहुत अधिक मात्रा हो जाने पर ये छड़ के एक किनारे से निकल जाती हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

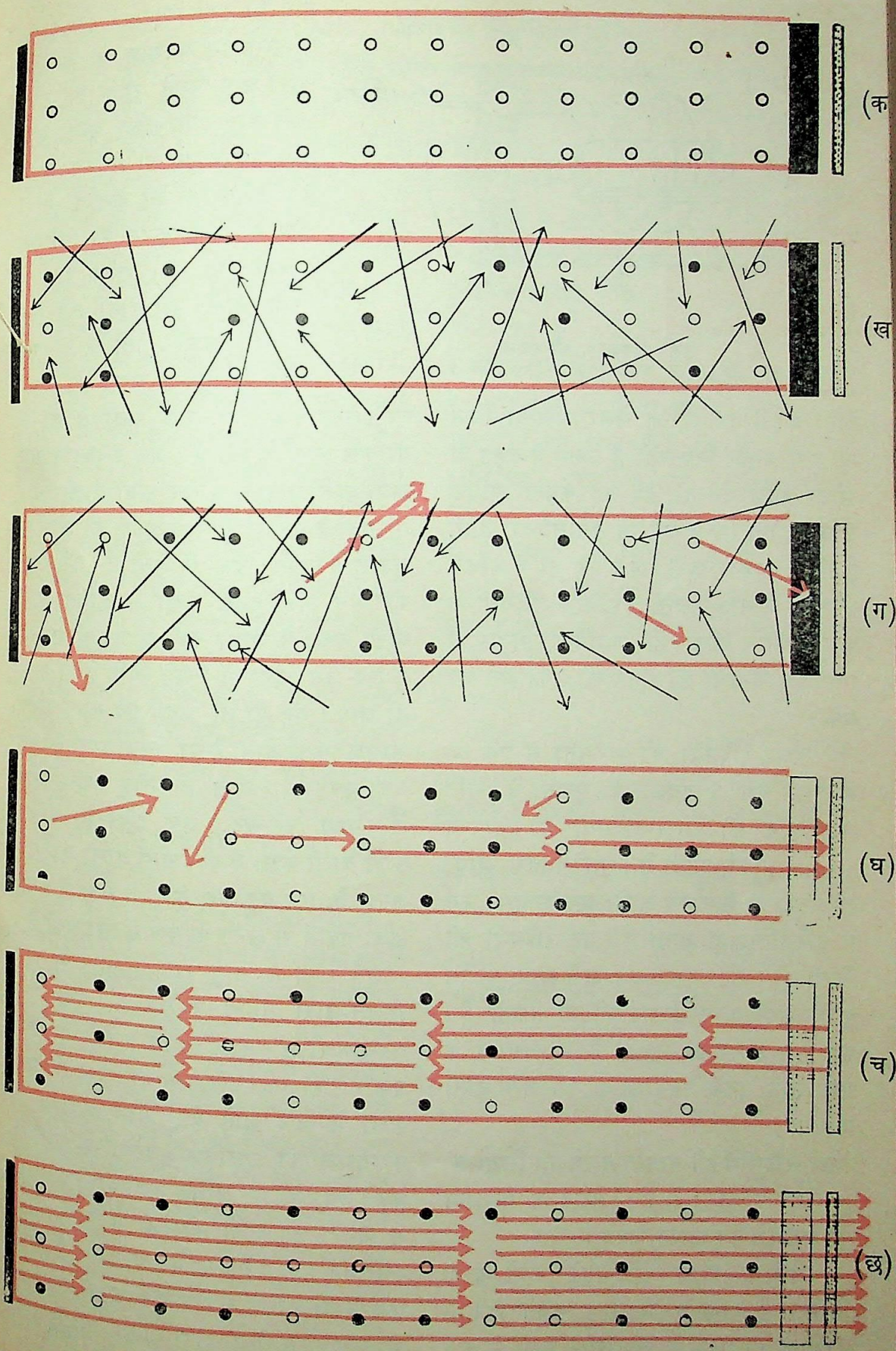

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

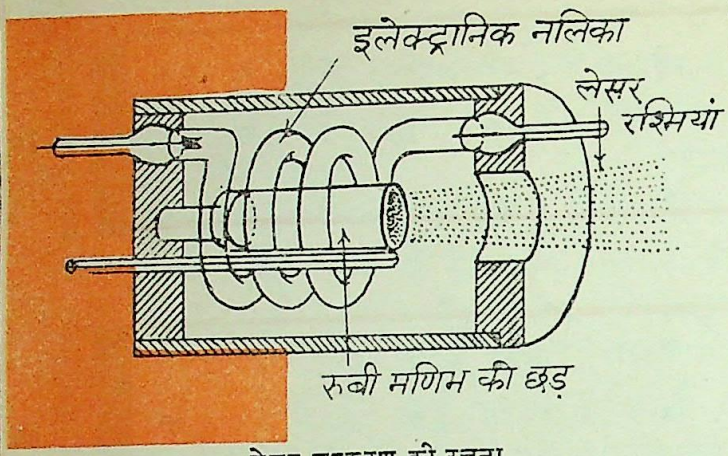

लेसर उपकरण की रचना

होती जाती है। परन्तु लेसर-रश्मियां जिस स्रोत से बाहर निकलती हैं उससे वे बहुत ही छोटा कोण बनाती हैं। यह कहना अधिक उचित होगा कि वे लगभग समानान्तर होती हैं। इस प्रकार दूरी बढ़ने पर भी वे अधिक क्षेत्रफल में नहीं फैलती हैं। लेसर-रश्मियों के इन्हीं गुणों के कारण ही वैज्ञानिक इतिहास में सर्वप्रथम चन्द्रमा की सतह को प्रकाशित कर सके।

लेसर-रश्मियों को सरलता से एक रंग से दूसरे रंग में बदला जा सकता है। यदि लाल रंग की लेसर-रश्मियों को क्वार्ट्ज (quartz) की पट्टी से प्रसारित किया जाय, तो पट्टी से निकलने वाला प्रकाश दूसरे रंग में परिवर्तित हो जाता है। इन रश्मियों को किसी भी दूसरे तरंग के प्रकाश के साथ मिश्रित करके नयी तरंग उत्पन्न की जा सकती है। इस गुण का बड़ा महत्त्व है और समय के साथ-साथ इनके उपयोगों का भी जन्म होता जायगा।

लेसर-रश्मियों को उत्पन्न करने का सिद्धान्त

इन पंक्तियों में हम लेसर के सिद्धान्त को समझने का प्रयत्न करेंगे।

प्रत्येक पदार्थ छोटे-छोटे कणों द्वारा निर्मित है, जिन्हें परमाणु कहते हैं। ये परमाणु भी बहुत से छोटे-छोटे कणों से बने होते हैं। इनमें प्रमुख हैं इलेक्ट्रान। ये इलेक्ट्रान परमाणु के केन्द्र के चारों ओर घूमते रहते हैं—ठीक उसी तरह जिस तरह पृथ्वी और अन्य उपग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं। इलेक्ट्रानों की केन्द्र के चारों ओर परिक्रमा करने की विभिन्न कक्षाएं होती हैं। प्रत्येक कक्षा में घूमने वाले इलेक्ट्रानों की एक निश्चित् ऊर्जा होती है। एक कक्षा से दूसरी कक्षा में जाने पर इलेक्ट्रान या तो कुछ ऊर्जा दे देते हैं या कुछ ऊर्जा ले लेते हैं। जब इलेक्ट्रान कम ऊर्जा वाली कक्षा से अधिक ऊर्जा वाली कक्षा में जाता है तब वह दोनों कक्षाओं की ऊर्जा के अन्तर के बराबर ऊर्जा ले लेता है। इलेक्ट्रान का कम ऊर्जा वाली कक्षा से अधिक ऊर्जा वाली कक्षा में जाना तभी सम्भव हो सकता है जब उसे बाहर से किसी विधि द्वारा ऊर्जा दी जाय। यह या तो पदार्थ को गरम करके सम्पन्न किया जाता है या उसके द्वारा विद्युत् बहा करके या बहुत ही तीव्र प्रकाश-स्रोत के मध्य रखकर। जब इलेक्ट्रान अधिक ऊर्जा वाली कक्षा से कम ऊर्जा वाली कक्षा में आता है, तब वह कुछ ऊर्जा दे देता है। यह ऊर्जा पदार्थ से तरंग के रूप में निकलती है। विद्युत् बल्ब के तन्तु (filament) में जब विद्युत्-धारा बहाते हैं तब वह पदार्थ के परमाणुओं को ऊर्जा प्रदान करती है। इस प्रकार ऊर्जा लेकर इलेक्ट्रान अधिक ऊर्जा वाली कक्षा में चले जाते हैं। ऐसी अवस्था के परमाणुओं को 'उत्तेजित-अवस्था' के परमाणु कहते हैं। इलेक्ट्रान अधिक ऊर्जा वाली कक्षाओं से कम ऊर्जा वाली कक्षाओं में बहुत शीघ्र (लगभग $१०^{-८}$ सेकण्ड में) आ जाते हैं और फलस्वरूप कुछ ऊर्जा प्रकाश के रूप में प्रसारित करते हैं। इस क्रिया द्वारा ही हमें विद्युत् बल्ब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से प्रकाश मिलता है। यह प्रकाश सभी तरंगों द्वारा निर्मित होता है। इन तरंगों की लम्बाई एक-सी नहीं होती। इनमें किसी प्रकार की एकता भी नहीं होती। प्रकाश के ऐसे स्रोत को असम्बद्ध स्रोत कहते हैं।

लेसर की विधि से प्रकाश को नियन्त्रित रूप में उत्पन्न किया जाता है। रुबी पदार्थ की छड़ बहुत ही तीव्र प्रकाश देने वाले स्रोत के मध्य रखी जाती है। तीव्र प्रकाश की ऊर्जा लेकर इलेक्ट्रान अधिक ऊर्जा वाली कक्षाओं में चले जाते हैं। इलेक्ट्रान अधिक ऊर्जा वाली कक्षाओं में बहुत कम समय के लिए रुकते हैं। यह समय लगभग $१०^{-८}$ सेकण्ड का होता है। इस अवधि में परमाणु फिर अपनी पूर्वावस्था में लौट आता है और प्रकाश की एक तरंग प्रसारित करता है। यदि इलेक्ट्रान को पूर्व कक्षा में पहुंचने से पहले ही प्रकाश द्वारा इतनी ऊर्जा दे दी जाय जो वह पूर्वावस्था में आने पर प्रसारित करता है, तो प्रकाश की दो तरंगें निकलती हैं। ये तरंगें हर दृष्टि से एक-दूसरे के समान होती हैं। इस क्रिया को उद्दीपित उत्सर्जन (stimulated emission) कहते हैं। इस प्रकार उत्पन्न हुई तरंगों को लेसर-रश्मियां कहते हैं।

ऐसी तरंगों को जो सभी रूपों में एक-दूसरे के समान होती हैं, काफी मात्रा में पाने के लिए रुबी पदार्थ की छड़ के दोनों किनारे समतल और पालिश कर दिये जाते हैं। प्रारम्भ में उत्पन्न हुई लेसर-रश्मियां किनारों से परावर्तित होती हैं और परमाणुओं से टकराकर नयी तरंगों को जन्म देती हैं। यह क्रिया बार-बार होती है और रुबी की छड़ के भीतर असंख्य समरूप तरंगें दोनों किनारों से परावर्तित होने लगती हैं। अन्त में जब लेसर-रश्मियों की मात्रा काफी हो जाती है, उन्हें अर्धपारदर्शक सतह से बाहर की ओर निकल जाने दिया जाता है। इस प्रकार लेसर-रश्मियों की एक स्पन्द (pulse) मिल जाती है।

सेना में लेसर-रश्मियों का उपयोग

सेना के कार्यों के लिए लेसर-रश्मियों को अनेक प्रकार से उपयोग में लाया जा सकता है। दुश्मन के विभिन्न क्षेत्रों की सही-सही दूरी निकालने के लिए लेसर-रश्मियों को उपयोग में लाने वाला एक दूरीमापी बनाया गया है। इसकी सहायता से दिन में ३,००० मीटर और रात में १०,००० मीटर की दूरी ५ मीटर तक सही-सही निकाली जा सकती है। अमरीका की हजेस कम्पनी ने ऐसा ही एक दूरीमापी बनाया है जिसका नाम है कोलिडार। दूरी निकालने के लिए रेडियो तरंगों का भी उपयोग होता है। इस प्रकार के दूरीमापी के लिए बहुत बड़े एण्टिना (antenna) की आवश्यकता होती है। परन्तु लेसर-रश्मियों को उपयोग में लाने वाले दूरीमापी के लिए बहुत छोटा एण्टिना काम दे जाता है।

लेसर-रश्मियों का उपयोग उपग्रहों (satellites) के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। इनकी सहायता से वे धरती के

तीव्र प्रकाश की ऊर्जा लेकर इलेक्ट्रान अधिक ऊर्जा वाली कक्षाओं में चले जाते हैं

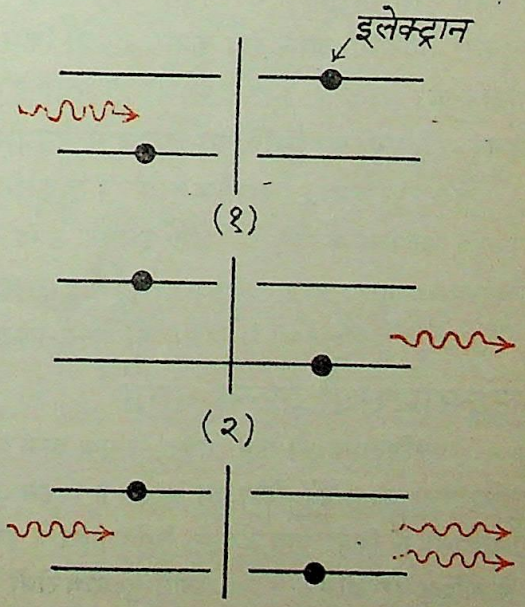

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभिन्न स्थानों को पहचान सकते हैं। लेसर-रश्मियों की ऐसी तरंगें भी उत्पन्न की जा सकती हैं जिन्हें अवरक्त रश्मियां कहते हैं। इन रश्मियों की सहायता से रात में भी दुश्मनों को देखा जा सकता है। लेसर-रश्मियों द्वारा लड़ाई के मैदान में दुश्मनों की दिशा को बहुत सही-सही ज्ञात किया जा सकता है।

स्पात की पट्टी में छेद कर देने वाली रश्मियां

लेसर-रश्मियों की ऊर्जा एक छोटे से घेरे में प्रसारित होती है, इस कारण इसमें अत्यधिक शक्ति होती है। इसके एक बड़े स्पन्द के एक वर्ग सेण्टीमीटर क्षेत्रफल में ५० रकोड़ वाट की शक्ति छिपी रहती है। यदि इस सारी शक्ति को लेंस द्वारा एक मिलीमीटर के क्षेत्रफल में घनीभूत किया जाय, तो इन रश्मियों की तीव्रता १० ^{१५} वाट प्रति वर्ग सेण्टीमीटर होगी। इतनी अधिक शक्ति एवं तीव्रता के आगे कौन-सा ऐसा पदार्थ है जो पिघल नहीं जायेगा? तभी तो ये रश्मियां कुछ क्षणों में स्पात की मोटी पट्टियों में भी छेद कर देती हैं। यह सारी शक्ति बहुत ही कम समय के लिए लगती है, अतः ताप एक ही स्थान पर संघनित रहता है। वह पदार्थ में प्रसारित नहीं होने पाता। इन गुणों के कारण लेसर-रश्मियों का वेल्डिंग (welding) में उपयोग करते हैं। इनका उपयोग आज छेद करने अथवा किसी प्रकार का आकार काटने में भी हो रहा है।

लेसर-रश्मियों का चिकित्सा-शास्त्र में उपयोग

लेसर-रश्मियां स्थानीय ताप एवं विद्युतीय प्रभाव उत्पन्न करती हैं। अतः इनका उपयोग चिकित्सा-शास्त्र में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। लेसर-रश्मियों की सहायता से नेत्रों की शल्य-क्रिया की जा सकती है। यदि रेटिना का कोई भाग अलग हो गया हो, तो उसे लेसर-रश्मियों से जोड़ा जा सकता है। केवल इन रश्मियों का एक स्पन्द ही कुछ क्षणों में यह कार्य कर देता है। इस प्रकार की शल्य-क्रिया के दो लाभ हैं— एक तो यह कि रेटिना का रोगी भाग किसी दूसरे स्थान तक हिलने से पहले ही जुड़ जाता है और दूसरा यह कि ताप पूरी आंख में फैलने नहीं पाता। इनके उपयोग के समय रोगी को मूर्छित नहीं करना पड़ता है।

संचार व्यवस्था में लेसर-रश्मियों का उपयोग

संचार व्यवस्था के लिए लेसर-रश्मियों का बहुत महत्त्वपूर्ण उपयोग हो सकता है। इनकी सहायता से एक ही सरणि (channel) में असंख्यों समाचार प्रसारित किये जा सकते हैं। इसका कारण है लेसर रश्मियों की आवृत्ति (frequency)। यह बहुत अधिक होती है। लेसर-रश्मियों की एक अंशु (beam) सारे संसार की रेडियो और टेलीविजन सरणियों को ले जा सकती है। परन्तु ये रश्मियां बरसात के मौसम अथवा कोहरे वाले मौसम में अधिक दूर तक प्रसारित नहीं हो पातीं। अतः इन्हें प्रकाश नलिकाओं द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने का विचार है।

लेसर-रश्मियों के अनेक उपयोगों के कारण ही इन पर आज सारी दुनिया में खोजें हो रही है। शायद ही कोई माह ऐसा होता है जिसमें इनके बारे में नयी घोषणा नहीं की जाती है। विश्वास है, समय यह सिद्ध कर देगा कि लेसर का आविष्कार प्रकृति को चुनौती है, कि उसके गूढ़ से गूढ़ रहस्य मनुष्य ढूंढ़ लेगा।

सूक्ष्माणुरोधी शल्य धागा

लेनिनग्राद की फर्म 'सेबेर' ने एक शल्य धागा तैयार किया है जिसकी सहायता से सूक्ष्माणुओं को मारा तथा प्रदाह को रोका जा सकता है। इस धागे का प्रयोग हृदय, उदर तथा वक्षांगों की शल्य चिकित्सा में किया गया। शल्य चिकित्सकों ने इसकी बहुत सराहना की। इस धागे का रेशा पोलिविनिल अल्कोहल पर आधारित है। इसमें सूक्ष्माणुरोधी क्रिया उपस्थित रहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

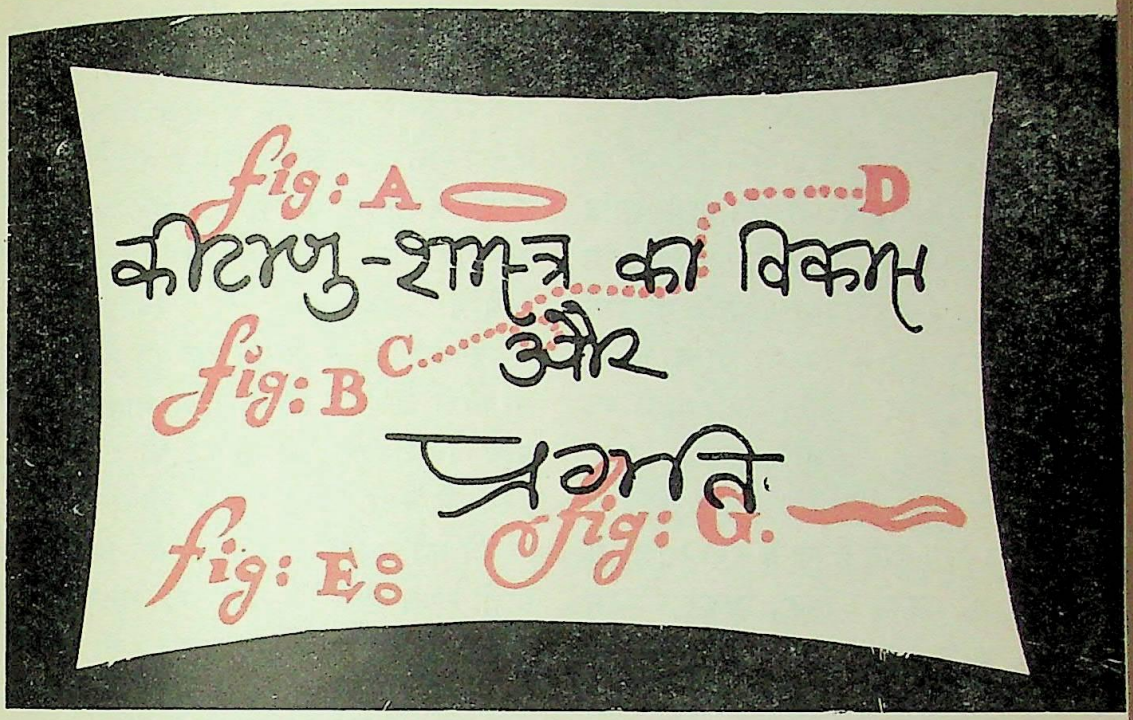

डा. हर्ष प्रियदर्शी

हम जिस हवा में सांस लेते हैं, अपनी जीवन रक्षा के लिए जिस जल को पीते हैं, उस हवा और जल में असंख्य क्षुद्र प्राणी विद्यमान हैं। ये प्राणी प्रकृति के गोपनीय तथ्यों में से एक हैं। इन क्षुद्र प्राणियों को कीटाणु कहते हैं। ये कीटाणु इतने सूक्ष्म होते हैं कि इन्हें सूई की नोंक पर सैकड़ों की संख्या में रखा जा सकता है। नंगी आंखों से इन्हें कदापि नहीं देखा जा सकता।

मानव-जन्म से करोड़ों वर्ष पूर्व हमारी धरती पर इन कीटाणुओं का जन्म हुआ था। सत्य तो यह है कि पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति इन्हीं कीटाणुओं से प्रारम्भ हुई है। अभी हाल में आस्ट्रेलिया के प्रख्यात कीटाणु-शास्त्रियों ने इनकी उम्र आंकी है। उनके अनुसार इन कीटाणुओं का जन्म २,७०,००,००,००० वर्ष पूर्व हो चुका था। इन कीटाणु-शास्त्रियों ने अपने शोध-परिणाम को पूर्वी पर्थ की सोने की खदानों में मिले कीटाणुओं के चिह्नों पर आधारित किया है। उनका शोध परिणाम चमत्कार-जैसा है।

मानव-समाज के उत्थान और विनाश के इतिहास में कीटाणुओं का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। कीटाणुओं के अस्तित्व के आविष्कार की कथा आधुनिक विज्ञान के उत्थान और उत्कर्ष की कथा है। इन क्षुद्र प्राणियों की सम्भावना तो मानव इतिहास में आज से शताब्दियों पूर्व स्वीकारी गयी थी, किन्तु इनका अवलोकन प्रथम बार १६७५ में हुआ था।

आज से लगभग चार शताब्दी पूर्व इटली के चिकित्सा वैज्ञानिक गीरोलैमो फ्रैकेस्ट्रो ने १५४६ में अपनी पुस्तक दीकाजियन में कीटाणुओं के अस्तित्व और विनाशकारी प्रभाव पर सर्वप्रथम प्रकाश डाला था। गीरोलैमो फ्रैकेस्ट्रो के मतानुसार वातावरण में रोगों के बीजाणु होते हैं, जिनका प्रजनन और विभाजन बहुत तेजी से होता है। ये ही रोगों के प्रसार एवं जन्म के कारण होते हैं। पर उसकी इस कल्पना से तात्कालिक वैज्ञानिक सहमत न हो सके और उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकमत हो गीरोलैमो को पागल करार दे दिया। वैज्ञानिकों के ऐसे निर्णय का कारण था सूक्ष्मदर्शी यन्त्र का न होना।

सतरहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में यूरोप की धरती पर सर्वप्रथम सूक्ष्मदर्शी यन्त्र का प्रादुर्भाव हुआ। इसी युग में ईसाई मठाधीश ऐथनसियस क्रियर ने १६५२ में सर्वप्रथम संयुक्त सूक्ष्मदर्शी यन्त्र का प्रयोग रोग के कारणों को जानने के लिए किया। अपने प्रयोग के परिणामों को उन्होंने एक वक्तव्य में प्रस्तुत किया। क्रियर के अनुसार प्लेग-पीड़ित रोगियों के रक्त में असंख्य क्षुद्र कृमि होते हैं जिन्हें नग्न आंखों से नहीं देखा जा सकता। किन्तु क्रियर की इस खोज से आज के वैज्ञानिक इतिहासकार सहमत नहीं है, क्योंकि संयुक्त सूक्ष्मदर्शी यन्त्र से किसी भी प्रकार इन कीटाणुओं का अस्तित्व नहीं निश्चित किया जा सकता। विज्ञान के इतिहासकारों के अनुसार क्रियर ने रक्त में उपस्थित रुधिर कणिकाओं और पीप कणिकाओं का अवलोकन किया था जिन्हें वह भ्रमवश कीटाणु समझ बैठा था।

क्रियर तक की कथा कीटाणु कथा के आरम्भिक विकास का चरण है। सही अर्थों में तो कीटाणु कथा का प्रारम्भ लिवानहुक के जन्म और प्रयोगों के साथ होता है।

यूरोप के इतिहास में १५वीं शताब्दी से १८वीं शताब्दी तक का युग धार्मिक रूढ़ियों और अन्धविश्वासों का युग रहा है। इतिहास साक्षी है कि गैलीलियो, कापरनिकस और सरविटस आदि कई महान् वैज्ञानिकों को धार्मिक रूढ़ियों और अन्धविश्वासों के बन्धनों में जकड़कर उस युग ने अमानुषिक यातनाएं दी।

जादुई आंख और लिवानहुक

रूढ़ियों और धार्मिक उपन्धविश्वासों के ऐसे ही अन्धे युग में जब वैज्ञानिक को अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करना पड़ता था, ऐण्टोनीवान लिवानहुक का जन्म हुआ था (१६३२)। लिवानहुक हवाई मिलों, नीची गलियों, ऊंची लहरों और सस्य-श्यामला धरती के देश हालैण्ड के डेल्फ्ट नामक नगर में जन्मा था। लिवानहुक का परिवार एक सम्मानित परिवार था। शराब और टोकरियों का निर्माण लिवानहुक का वंशागत धन्धा शैशवकाल में ही लिवानहुक की मां ने एक सरकारी अफसर की स्वप्न-सम्भावनाओं के साथ लिवानहुक को डेल्फ्ट की एक शिक्षा संस्था में भेजा, किन्तु बालक लिवानहुक उन स्वप्नों को महत्त्व न दे सोलह वर्ष की अल्पायु में ही स्कूल छोड़कर स्वावलम्बी बनने डेल्फ्ट के उस छोटे से नगर से अम्सटर्डम की विशाल डच नगरी को प्रस्थान कर गया। अम्सटर्डम की उस विशाल नगरी में लिवानहुक ने सब कुछ बेचने वाली एक दूकान में जीवकोपार्जन के हेतु नौकरी कर ली। यह सब कुछ बेचने वाली दूकान ही लिवानहुक की वैज्ञानिक अनुसन्धानशाला बनी। छह वर्ष तक लिवानहुक डच गृहणियों के शोरशराबों और कभी न खत्म होने वाले हुजूम के बीच अपने इसी विश्वविद्यालय में अटूट साधना में रत रहा। आज के वैज्ञानिकों की तुलना में कितना महान् था वह! अपना सब कुछ, सारा भविष्य होम करके ऐसी जगह वह अध्ययनशील रहा था, जहां आज का वैज्ञानिक एक क्षण भी बैठना नहीं पसन्द करेगा, अध्ययन और प्रयोग की तो बात अलग है।

इक्कीस वर्ष की आयु में हालैण्ड के उस महानगर अम्सटर्डम से पुनः लिवानहुक ने प्रस्थान किया अपनी जन्मनगरी डेल्फ्ट को। डेल्फ्ट पहुंचकर लिवानहुक ने स्वयं सब कुछ बेचने वाली एक दूकान खोली। लिवानहुक की इस दूकान में सूखी मछलियों से नमक लगे सूखे गोस्त और सूई से लेकर खाने की प्लेटें तक हर वस्तु बिकती थी। बीस वर्षों तक लिवानहुक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी इस प्रयोगशाला को चलाता रहा—हुजूम और शोर-शराबों के बीच। उसका अध्ययन गतिशील रहा।

अध्ययन के इन्हीं दिनों में लिवानहुक को एक सत्य की प्राप्ति हुई—तालों द्वारा उन वस्तुओं को अधिक बड़े रूप में देखा जा सकता है जिन्हें नग्न आंखों से देखना लगभग असम्भव होता है। उन दिनों के हालैण्ड में तालों की बिक्री एक साधारण बात थी। कितने ही ताल बनाने वाले कारीगर शीशों को घिसा करते थे। लिवानहुक चाहता, तो बाजार से इन तालों को सरलता से प्राप्त कर सकता था। लेकिन उसकी डगर तो कुछ और ही थी; लिवानहुक सीधी राह न चल पाया। प्रकृति और स्वभाव से सन्देहशील होने के कारण अच्छे से अच्छे कारीगरों द्वारा बनाये तालों पर भी उसे सन्देह रहता था कि ये ताल उस स्तर के नहीं बन पाये हैं जिनसे उन वस्तुओं का पर्यवेक्षण सम्भव होगा जो नग्न आंखों के लिए अदृश्य हैं। लिवानहुक के मन में इसी सन्देहात्मक प्रवृत्ति ने एक ऐसी भावना को जन्म दिया जिससे प्रेरित हो उसने स्वयं ताल प्राप्ति के लिए शीशों के अनगिन टुकड़ों को घिसना प्रारम्भ किया। हालैण्ड के सर्वोत्तम कारीगरों का शिष्यत्व उसने स्वीकारा और इस तरह शीशा घिसने के तथ्यों से वह अवगत हुआ। कीमियागरों के चौखठों पर लिवानहुक धूल फांकता रहा। वर्षों की अनवरत साधना के उपरान्त लिवानहुक ने जो प्राप्त किया वह अद्भुत था। कीमियागरी के वे तमाम धातु निर्माण के नुसखे उसकी मुट्ठियों में कैद हो गये थे। वह सोना, चांदी, तांबा, मालूम नहीं क्या-क्या बनाने में समर्थ हो गया था।

जादुई आंख और खुदा की करामात

बीस वर्षों तक अपनी कोठरी में धातु, गंध-सुगंधि और शीशों की राशि में कैद लिवानहुक अनवरत साधना में लगा रहा।

लिवानहुक ने एक महान् सत्य का उद्घाटन किया और कीटाणुओं के अनुसन्धान के लिए अमर हो गया

जगत के पहले सूक्ष्मदर्शी यन्त्र की प्राप्ति में वह संलग्न रहा। पास-पड़ोस ने उसे पागल करार दे दिया लेकिन वह सब कुछ होमकर सिर्फ अपनी लक्ष्य-प्राप्ति में लगा रहा। अंगुलियां तपती रहीं, आंखें एकाग्र होती गयीं, और तब एक दिन सहसा ही जादुई आंख मिली।

लिवानहुक देखता रहा···

शीशे की उस जादुई आंख के नीचे वह देखता रहा···खुदा की करामात···एक ऐसी दुनिया जिसे उससे पहले किसी ने नहीं देखा था। जो कुछ भी उसे मिल सका, वह उसकी जादुई आंख के दायरे में अपनी एक-एक परत खोलता गया। ह्वेल के मांस तन्तु, बैल की आंखें, अनगिन वनस्पतियों की पतली परतें—सभी चीजें उसकी जादुई आंख के दायरे में अपने रहस्य खोलती गयीं। मक्खी का सूक्ष्म मस्तिष्क, उसकी अपनी चमड़ी की गोपनीय परतों का रहस्य लिवानहुक के सम्मुख उद्घाटित होता गया। प्रकृति की असम्भावनाएं सम्भावनाओं में परिवर्तित होती गयीं, और वह 'असम्भव···असम्भव' चीखता रहा। इतना अधिक सन्देहशील था लिवानहुक कि जो कुछ वह देखता, उस पर वह स्वयं विश्वास न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर पाता। अनगिन बार वह उन्हीं देखी हुई वस्तुओं को देखता, तब कहीं वह प्रयोगों के परिणाम नोट करता। लिवानहुक की मान्यता थी कि सर्वश्रेष्ठ पर्यवेक्षक भी गलती कर सकता है, मात्र इसी लिए परिणाम घोषित करने के पूर्व अनगिन बार पर्यवेक्षण कर लेना चाहिये। तभी तो लिवानहुक कहा करता था, सूक्ष्मदर्शी का पर्यवेक्षक बनना प्रत्येक के लिए सम्भव नहीं है। कौन जानता है कि मैंने अपने जीवन के कितने अमूल्य क्षण जादुई आंख के दायरे में होम कर दिये हैं। लिवानहुक की धारणा थी कि उसके परिणाम किसी साधारण व्यक्ति के लिए नहीं है। ये परिणाम मात्र दार्शनिकों की ही उपलब्धि हो सकते हैं।

विद्रोह के नये स्वर

सतरहवीं शताब्दी के मध्य में फ्रांस, इटली, और इंग्लैंड में विद्रोहियों का एक वर्ग रूढ़ियों और परम्पराओं के विरोध में नये स्वरों को जन्म दे रहा था। इन विद्रोहियों ने अरस्तू और सुकरात की तमाम मान्यताओं को अस्वीकार कर दिया था। इनका नारा था कि हम उन तथ्यों को मात्र इसलिए नहीं स्वीकार कर सकते क्योंकि उन्हें सुकरात या अरस्तू ने सत्य माना है। हम सुकरात और अरस्तू के सत्यों को प्रयोगों की कसौटी पर कसेंगे। यदि वे तथ्य खरे उतरे, तो हम उन्हें सहर्ष स्वीकार करेंगे, अन्यथा कहेंगे कि सुकरात गलत था, अरस्तू बेबुनियाद था।

ऐसे ही विद्रोहियों के एक वर्ग ने इंग्लैंड में एक संस्था की स्थापना की थी। इस संस्था के सदस्यों ने संस्था का नाम अदृश्य शिक्षा संस्थान रखा था। इस अदृश्य शिक्षा संस्थान ने आधुनिक रसायन के जन्मदाता राबर्ट बायल और महान् भौतिक-शास्त्री एवं गणितज्ञ आइजक न्यूटन-जैसी युगान्तरकारी प्रतिभाओं को जन्म दिया था। चार्ल्स द्वितीय के सत्तारूढ़ होने पर यही शिक्षा संस्थान रायल सोसायटी आफ इंगलैण्ड का प्रेरक बना। रायल सोसायटी आफ इंगलैंड की गणना विश्व की सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक संस्थाओं में आज भी की जाती है। सारी दुनिया के वैज्ञानिक इसकी सदस्यता को गर्व की वस्तु मानते हैं। यह सोसायटी सम्पूर्ण विश्व के महानतम वैज्ञानिकों से अपना सम्पर्क स्थापित करती थी और उनके परिणामों की सत्यता और असत्यता की जांच करती थी। रायल सोसायटी का एक प्रतिनिधि रिगनायर दी ग्राफ डेल्फ्ट के उस छोटे से नगर में रहता था जहां लिवानहुक अपनी जादुई आंख के दायरे में प्रकृति के गोपनीय तथ्यों की एक-एक परत खोल रहा था।

शंकालु लिवानहुक जिसे पूरा डेल्फ्ट पागल समझता था, रिगनायर दी ग्राफ के लिए कौतुक और विस्मय का कारण बन गया था। लिवानहुक के सूक्ष्मदर्शी किसी व्यक्ति के लिए नहीं थे, किन्तु मालूम नहीं शंकालु लिवानहुक ने क्यों और कैसे रिगनायर दी ग्राफ को अपने इन यन्त्रों को देखने की आज्ञा दे दी थी। रिगनायर शायद उसकी जादुई आंखों का प्रथम दर्शक था। रिगनायर ने जो कुछ कौतुक और विस्मय लिवानहुक की जादुई आंख में से देखा था उससे वह अवाक् हो गया था। रिगनायर दी ग्राफ ने स्वयं जीवशास्त्र-सम्बन्धी कई महत्त्वपूर्ण शोध किये थे, किन्तु लिवानहुक के आविष्कार को साकार रूप में देखने के उपरान्त वह मात्र इतना ही सोच पाया था कि उसके तमाम मौलिक शोध लिवानहुक के इस एक शोध के आगे नगण्य हैं। तब एक दिन रिगनायर डी ग्राफ ने रायल सोसायटी के सम्मानित सदस्यों को लिवानहुक के इस युगान्तरकारी महान् शोध की सूचना दी थी। अपने पत्र में उसने रायल सोसायटी के सदस्यों से प्रार्थना की थी कि वे लिवानहुक से स्वयं उसके इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महत्त्वपूर्ण शोध के विषय में पत्र-व्यवहार करें।

एक महान उपलब्धि

रायल सोसायटी की प्रार्थना पर लिवानहुक ने इंग्लैण्ड को पहला पत्र लिखा। इस पत्र में साधारण डच भाषा में लिवानहुक ने अपने उन तमाम आविष्कारों के विषय का विशद् वर्णन किया था। रायल सोसायटी के प्रतिभासम्पन्न सदस्यगण लिवानहुक के वर्णनों से विस्मित हो उठे। संस्था के सम्मानित मन्त्री ने लिवानहुक को सदस्यों का धन्यवाद और अभिनन्दन प्रेषित किया। इस प्रकार लिवानहुक के आविष्कारों के प्रथम साक्षी रायल सोसायटी के सदस्य हुए।

वर्ष बीतते गये और लिवानहुक की निगाहें तेज होती गयीं। सूक्ष्मदर्शी के आविष्कार की चर्चा रंग ले चुकी थी। रायल सोसायटी आफ इंग्लैण्ड से लिवानहुक पत्रों के माध्यम से बराबर अपने महत्त्वपूर्ण शोध परिणामों का आदान-प्रदान करता रहा।

कालचक्र घूमता गया

वय की रेखाएं लिवानहुक के चेहरे पर उभरती गयीं। जराकोण गहरे होते गये। और तब एक दिन सहसा घूमता कालचक्र एक ऐसे बिन्दु पर आ गया, जिस बिन्दु से एक नया पथ खुला। वह बिन्दु चिकित्सा-विज्ञान और जीव-शास्त्र के इतिहास में सम्भावनाओं का बिन्दु था। उस बिन्दु पर आकर लिवानहुक अमर हो गया।

पागल और शंकालु लिवानहुक अनेक रहस्य अपनी जादुई आंख के दायरे में खोल देना चाहता था। रहस्यों का यह मोहबन्ध उसके रक्त की हर बूंद में समा चुका था।

लिवानहुक पागल था···इस कारण कि अपनी जादुई आंख के दायरे में अनेक रहस्यों का वह उद्घाटन करना चाहता था। लिवानहुक की जादुई आंख—

लिवानहुक को डेल्फ्ट का प्रत्येक प्राणी एक कुलीन और सभ्य पागल समझता था। लेकिन डेल्फ्ट के इस नगर में दो प्राणी ऐसे भी थे जो लिवानहुक को पागल न समझकर महान पर्यवेक्षक मानते थे—एक था रायल सोसायटी का प्रतिनिधि सिगनायर दी ग्राफ और दूसरी उसकी पुत्री मेरिया। पुत्री मेरिया अपने पिता के अटूट साधना में गिरते स्वास्थ्य का कितना ध्यान रखती थी यह महज कल्पना की बात है। मेरिया ने अपना सब कुछ अपने पिता लिवानहुक के लिए अर्पित कर दिया था।

बारिश का वह दिन

बारिश का वह दिन लिवानहुक के जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण दिन था। उस दिन लिवानहुक ने सहसा ही वर्षा-जल की एक बूंद को अपनी जादुई आंख के दायरे में रख दिया था। वर्षा जल की यह एक बूंद उसके लिए सागर हो गयी—वह सागर जिसमें असंख्य जीव थे।

लिवानहुक चीख पड़ा, 'असम्भव! असम्भव!' काम करती मेरिया भाग पड़ी उस कोठरी में जहां बूढ़ा लिवानहुक एकाग्रचित जादुई आंख के दायरे में खुदा की करामात देख रहा था। वह बोल उठा, 'देख मेरिया··· मेरी बेटी, देख! प्रभु की यह सत्ता कितनी महान है! देख, ध्यान से देख, इस एक बूंद जल में कितने जीव हैं···वे सारे गतिशील

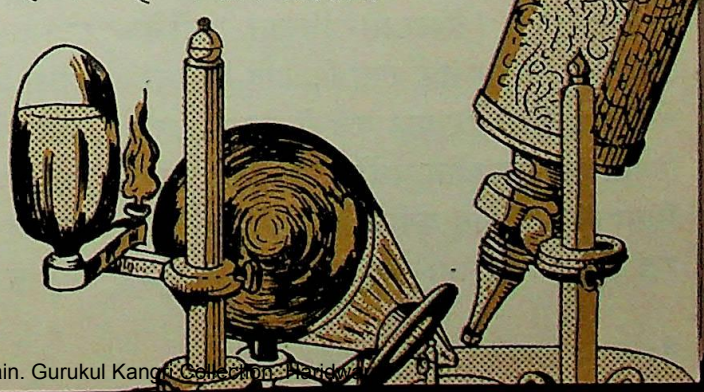

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जीवित हैं। हमारी और तुम्हारी तरह ही गतिशील हैं। नग्न आंखों से हम जो भी सूक्ष्मतम प्राणी देख सकते हैं···उनकी तुलना में ये जीव हजार गुने सूक्ष्म हैं।

'तू जानती है, मेरिया, आज मैंने प्रभुसत्ता के सूक्ष्मतम रहस्य की परत तोड़ दी है। जानती है, मेरिया, आज का दिन मेरे जीवन में कितना महान् है! आज मैंने जो कुछ भी आविष्कृत किया है, वह प्रथम आविष्कार है।'

सचमुच बारिश का वह दिन लिवानहुक के लिए इतना महान् था जिसके लिए मात्र एक वाक्य कहा जा सकता है—वह दिन जीव-शास्त्र और चिकित्सा-शास्त्र की महानतम उपलब्धि का दिन था।

बूंद और समुद्र

काश हम महसूस कर पाते उत्तेजना का वह क्षण जिसमें वर्षा-जल की एक बूंद उसके लिए सागर बन गयी थी। शायद वह क्षण उसके जीवन का महानतम क्षण था। उस क्षण में लिवानहुक खुदा की करामत पर मन्त्रमुग्ध हो गया था। एक अजीब-सी सम्मोहित अवस्था में आ गया था वह। पल भर मौन रहा, और तब उसने अपनी सम्पूर्ण चेतना के साथ पुनः-पुनः उन सूक्ष्मतम जीव-धारियों, जीवाणुओं की चेष्टाओं और गति-विधियों का अध्ययन शुरू किया।

लेकिन पहला ही सवाल इतना टेढ़ा था कि लिवानहुक गम्भीर हो गया। पर्यवेक्षण छोड़ वह सोचने लगा कि ये जीवाणु कहां से आये। क्या वर्षा जल में आकाश से साथ-साथ आये हैं, अथवा ये पहले से ही हमारी धरती पर विद्यमान थे? चेष्टा और चिन्तन, दोनों ने उसके सम्मुख एक तर्क रखा कि यदि ये वर्षा जल में आये तो हर बार जल में इनकी उप-स्थिति निश्चित् होनी चाहिये। फिर क्या था! लिवानहुक ने अपने बगीचे में शीशे के जार रख दिये जिनमें वर्षा-जल एकत्र होने लगा। अनगिन बार वह वर्षा-जल की परत को अपनी जादुई आंख के दायरे में तोड़ने लगा, लेकिन वह उन जीवाणुओं को न पा सका।

प्रयोग शुरू हुआ और लिवानहुक डेल्फ्ट के पानी के नमूनों को संचित करने लगा—गन्दी नालियों का जल, खेतों का जल, तालाबों का जल—जहां भी उसे मिला वह ले आया। हर बार उसे जल की विभिन्न किस्मों में मिले असंख्य आकार-प्रकार के जीवाणु—गतिशील और जीवित। प्रत्येक जीवाणु उसके अध्ययन का विषय बना। उन जीवाणुओं के आकार, प्रकार, प्राप्ति स्थान का वह पर्यवेक्षण करता रहा और शोध परिणामों को नोट करता रहा।

इन नये शोध परिणामों की प्रथम चर्चा उसने अपने उस पत्र में की जो उसने रायल सोसायटी के सदस्यों को लिखा था। कुछ सदस्य तो लिवानहुक की चर्चा से सहमत थे और कुछ उसकी सत्यता से असहमत थे। जो असहमत थे वे कहते थे कि लिवानहुक का यह शोध परिणाम नितान्त गलत है कि एक बूंद जल में हालैण्ड की जनसंख्या से भी अधिक जीवाणुओं को रखा जा सकता है। जीवाणुओं की यह कल्पना उस बूढ़े डच निवासी का मात्र दिवास्वप्न है। किन्तु तब तक जो कुछ भी लिवानहुक ने लिखा था वह अक्षरशः सत्य था, इसलिए सदस्यों ने यह निर्णय किया कि वे लिवानहुक से उसके सूक्ष्म-दर्शी के निर्माण का रहस्य पूछकर स्वयं ऐसे उपकरण को जन्म देंगे जिससे उसके तथा-कथित जीवाणुओं को देखा जा सके।

तब रायल सोसायटी के सम्मानित सदस्यों ने डेल्फ्ट के उस वैज्ञानिक को पत्र लिखा कि वह रायल सोसायटी के सदस्यों पर कृपा करे और सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों के निर्माण की विधि लिखे जिसके लिए सारे सदस्यगण उसका अत्यन्त आभार मानेंगे।

न चाहते हुए भी लिवानहुक ने उन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदस्यों को निर्माण की विधि के सूत्र दिये ।

गणित के इन्हीं सूत्रों के आधार पर रायल सोसायटी के सदस्यों ने राबर्ट हुक और निहमाय ग्रियु को सूक्ष्मदर्शी बनाने के लिए नियुक्त किया । १५ नवम्बर १६७७ को राबर्ट हुक ने सूक्ष्मदर्शी को लाकर रायल सोसायटी की गोष्ठी में प्रस्तुत किया और लिवानहुक के उस कथ्य की सत्यता सिद्ध कर दी कि एक बूंद जल में लाख-लाख जीवधारी रहते हैं ।

१५ नवम्बर १६७७ का वह दिन लिवानहुक के जीवन का दूसरा महत्त्वपूर्ण दिन था । उसकी साधनाओं का सत्य इसी दिन सिद्ध हुआ था । रायल सोसायटी ने लिवानहुक को इसी दिन संस्था का सम्मानित सदस्य घोषित किया था । इसी दिन रायल सोसाइटी ने सिल्क का एक चोला उपहारस्वरूप लिवानहुक को भेजा था । उस सिल्क के चोले पर 'मैं आजन्म ईमानदारी से संस्था की सेवा करूंगा' वाक्य लिखा था ।

लिवानहुक अटूट आस्था के साथ मृत्यु-पर्यन्त संस्था के प्रति ईमानदार रहा ।

इंग्लैण्ड की रायल सोसायटी ने डाक्टर मोलिनेक्स को प्रतिनिधि बनाकर इंग्लैण्ड से हालैण्ड के उस नगर डेल्फ्ट में लिवानहुक के सूक्ष्मदर्शी के अध्ययन और पर्यवेक्षण के लिए भेजा । मोलिनेक्स ने लिवानहुक से अत्यधिक दामों पर एक सूक्ष्मदर्शी का सौदा करना चाहा किन्तु लिवानहुक अपनी सम्पत्ति बेचने को तैयार न हुआ । डाक्टर मोलिनेक्स ने जब लिवानहुक की जादुई आंख में अपनी दृष्टि केन्द्रित की, तो वह चीख पड़ा, 'तुम्हारा यन्त्र अद्वितीय है, लिवानहुक ! इंग्लैण्ड तो क्या पूरे यूरोप में इस यन्त्र के समकक्ष यन्त्र नहीं है ।'

और प्रत्युत्तर में लिवानहुक ने मात्र इतना ही कहा था, 'यह तो आपकी महानता है, महोदय । मैंने तो अपनी साधना की सर्व-श्रेष्ठ उपलब्धि आपके समक्ष रख दी ।'

आखिरी पन्ने

कालचक्र चलता गया और लिवानहुक की जादुई आंख की चर्चा सम्पूर्ण यूरोप में होने लगी । चर्चा इतनी प्रबल हुई कि रूस के महान् सम्राट पीटर और इंग्लैण्ड की मलिका डेल्फ्ट के उस छोटे नगर में सैकड़ों मील का सफर करके मात्र लिवानहुक की जादुई आंख से खुदा की करामात देखने आये ।

दिग्व्यापी प्रशंसा भी लिवानहुक की उस गतिशीलता को न जीत सकी । एक के बाद एक लिवानहुक अपनी जादुई आंख के दायरे में प्रकृति के रहस्यों की परतें तोड़ता गया ।

लिवानहुक ने जीवन के अन्तिम दिनों में भी जीवाणुओं के विषय में कई महत्त्वपूर्ण शोध किये थे । उन महत्त्वपूर्ण शोधों में जीवाणुओं को उसने सर्वव्यापी सिद्ध किया था । जीवाणु अधिक ताप में जीवित नहीं रह सकते, यह शोध लिवानहुक ही ने की थी ।

नब्बे वर्ष की अवस्था में १७२३ में लिवानहुक का देहान्त हो गया । मृत्यु के अन्तिम क्षणों में लिवानहुक ने रायल सोसायटी के नाम आखिरी पत्र अपने मित्र हुगवेलियट से लिखवाया था । उस पत्र में हुगवेलियट ने उसकी ओर से लिखा था : 'सम्मानित महाशयों, अपने मित्र और महान् पर्यवेक्षक लिवानहुक की ओर से मैं आपको यह सन्देश दे रहा हूं कि लिवानहुक ने सम्पूर्ण आस्था और चेतना के साथ अपने वायदे को जीवन की अन्तिम सांसों तक निभाया···।'

विज्ञान के इतिहास के एक ज्वलन्त पृष्ठ की समाप्ति हुई । लिवानहुक की मृत्यु पर सारा यूरोप शोक-सन्तप्त हो गया था । उस दिन दुनिया के तमाम जीव-शास्त्रियों ने एक मत होकर सोचा था, अब कीटाणु कथा का अन्त हो गया, किन्तु इटली के वैज्ञानिक स्पेलेंन्जनी ने वह परम्परा पुनः कायम की । (क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupil how to write sentences correctly. He learns by doing, and by doing *correctly*.
- Exercises are so arranged that even a slow child is sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The Work Books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I.....Price : Re. 0·80
Book II.....Price : Re. 1·00
Book III.....Price : Re. 1·20

For further enquiries please write to :

SRI RAM MEHRA & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

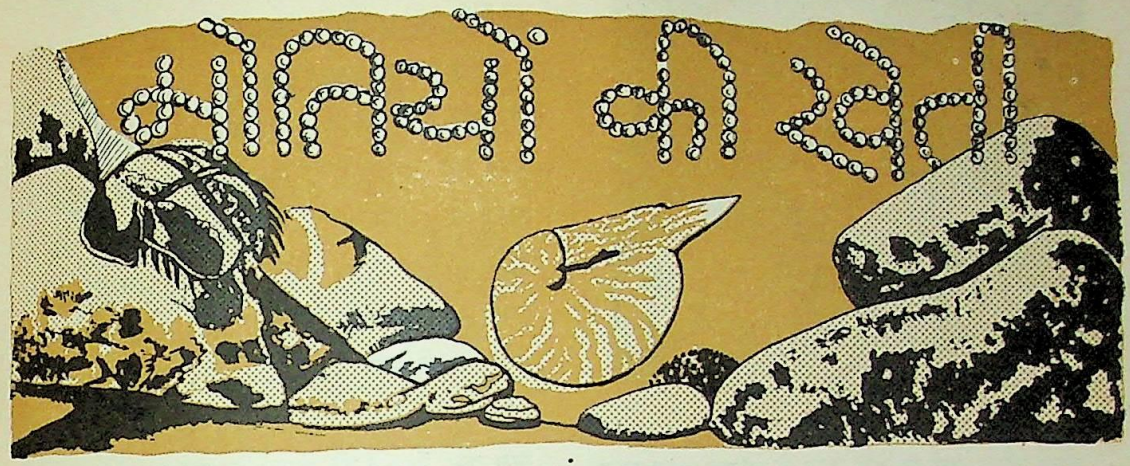

रूपनारायण मोहिले, एम. एस-सी.

समुद्र ने मनुष्य को अपनी बहुमूल्य भेंट के रूप में जो अत्यधिक सुन्दर पदार्थ दिया है, वह है मोती। मोती का रंग-रूप वास्तव में अत्यन्त मोहक होता है। झिलमिलाते इन्द्र-धनुष के सात रंगों में लिपटा हुआ गोल-गोल, दूध की तरह सफेद मोती बड़ा ही प्यारा लगता है।

मोती जितना सुन्दर होता है, उतना ही कोमल भी। तनिक-सी असावधानी से इस पर खरोंच के निशान बन जाते हैं। हीरे और अन्य बहुमूल्य पत्थरों की तरह मोती का सौन्दर्य अक्षुण्ण नहीं होता। धूल, रगड़, पसीना, गरमी, नमी आदि से मोती का रंग-रूप बिगड़ जाता है। अतः इसका सौन्दर्य बनाये रखने के लिए बड़ी सावधानी बरतनी पड़ती है।

साधारणतयः मोती का मूल्य उसके भार के अनुपात में निर्धारित किया जाता है। साथ ही रंग और आकार का भी उसके मूल्यांकन पर प्रभाव पड़ता है। काले रंग के मोती प्रायः बहुत कम मिलते हैं, अतः साधारण दूधिया मोती की अपेक्षा इनका मूल्य कई गुना अधिक होता है। अब तक प्राप्त मोतियों में सबसे बड़े मोती का व्यास दो इंच, परिधि छह इंच तथा भार तीन औंस है।

मोती का जन्म

मोती का जन्म सीप के गर्भ में होता है, और यह वहीं धीरे-धीरे पलकर बड़ा होता है। मोती वाली सीप और खाली सीप की केवल ऊपर से देखकर पहचान करना असम्भव है। मोती पाने के लिए हर सीप को खोलकर देखना पड़ता है। इस प्रकार हजारों सीपें खुल जाने के बाद ही कहीं किसी एक सीप में मोती के दर्शन होते हैं।

साधारणतया मोती वाली सीपें समुद्र-तल में ८-२० फेदम (४८-१२० फुट) की गहराई तक मिलती हैं। समुद्र में स्थित द्वीपसमूह के बीच की उथली जलधारा में मोती वाली सीपें अधिक संख्या में प्राप्त होती हैं। समुद्र के ऐसे सभी स्थानों को जहां मोती वाली सीपें मिलती हैं, सम्बन्धित सरकार द्वारा ठेकों पर उठा दिया जाता है।

मोती वाली सीपों के लिए निम्नलिखित स्थान प्रसिद्ध हैं—भारत, श्रीलंका, फारस की खाड़ी और पालीनीशियन द्वीपसमूह के समुद्री किनारे। इसके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया के उत्तरी और पश्चिमी समुद्री किनारों पर सुलू आर्चीपेलेगो द्वीपसमूह तथा दक्षिणी कैलिफोर्निया के समुद्री किनारों पर भी अच्छे किस्म के मोती मिलते हैं। दक्षिणी कैलिफोर्निया के किनारों से कभी-कभी बहुमूल्य काले रंग के मोती प्राप्त होते हैं। मीठे पानी की झीलों और स्काटलैण्ड, आयरलैण्ड, जरमनी, रूस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

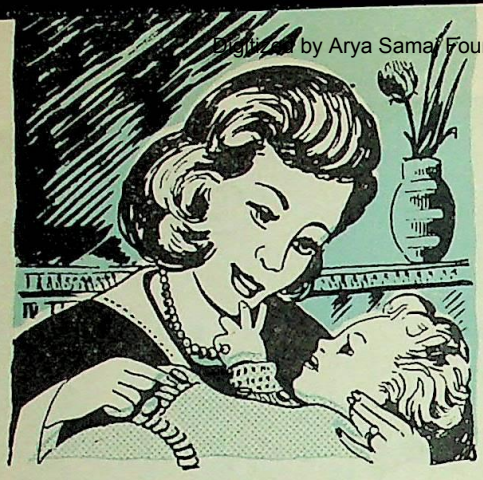

मदर आफ पर्ल से बने हार के मनके और बटन

आदि देशों की कुछ नदियों में भी छोटे आकार के मोती प्राप्त होते हैं। मिसीसिपी और उसकी सहायक नदियों में भी अच्छे और अधिक किस्म के मोती मिल जाते हैं।

गर्भवती सीपें

सदियों से बहुमूल्य मोतियों को अपने गर्भ में छिपाये असंख्य सीपें समुद्र तल पर पड़ी विश्राम करती रहती हैं। ये गर्भवती सीपें अन्य खाली सीपें की ही भांति दीख पड़ती हैं। अतः प्रत्येक को खोलकर उसके अन्दर छिपे मोती की खोज की जाती है।

समुद्र तल में सीपों के शिकार के लिए गोता लगाने वाले शिकारियों को भी अपनी जान हथेली पर रखकर ही नीचे पानी में घुसना पड़ता है। समुद्र के विशाल गर्भ में अनेक भीमकाय मछलियां, जैसे ह्वेल, शार्क, टाइगर आदि किसी भी बड़े से बड़े जीव-जन्तु को बिना चबाये ही पूरा का पूरा निगल जाने के लिए चारों ओर चक्कर काटती रहती हैं। इनके अतिरिक्त एक और भयानक समुद्री जन्तु आक्टोपस भी लम्बी-लम्बी रस्सियों की तरह दूर तक फैली अपनी भुजाओं को जलराशि में फैलाये हुए शिकार की तलाश में बैठा रहता है। जब कोई जीव इसकी भुजाओं की पकड़ में आ जाता है, तब उससे छूटकर जीवित निकल जाना असम्भव है।

सीपें शिकारी के आगमन से बेखबर रहती हैं

इन सब खतरों के होते हुए भी चतुर एवं साहसी गोताखोर पानी में उतरकर नीचे समुद्र तल को अपने पैरों से रौंदने के लिए पहुंच ही जाते हैं। इस कार्य में स्त्रियां तो पुरुषों से भी अधिक दक्ष और चतुर होती हैं। समुद्री जीव-जन्तुओं से बचने के लिए कुछ गोताखोर अपने साथ नुकीले चाकू ले जाते हैं। परन्तु आधुनिक गोताखोर एक विशेष सूट पहनकर ही नीचे उतरते हैं। इसी सूट के साथ सांस लेने के लिए रबर की एक ट्यूब नाक से जुड़ी रहती है, ताकि गोताखोर जब तक चाहे बिना किसी कष्ट या खतरे के नीचे रह सकता है। इस प्रकार एक ही बार में अधिक से अधिक सीपों का शिकार किया जा सकता है।

समुद्रतल पर सदियों से सुखपूर्वक रहने वाली इन बेचारी सीपों को शिकारियों के आगमन का पता तक नहीं लगता। समुद्र-तल पर खड़े होकर गोताखोर शिकारी नीचे पड़ी एक-एक सीप को उठाकर अपनी पीठ पर बंधी डोलची में रखता जाता है। डोलची जब सीपों से भर जाती है, तब गोताखोर पानी के ऊपर आकर अपने शिकार को नाव में लाद देता है। इस प्रकार शाम को सीपों से लदी नावें किनारे पर आ लगती हैं। यहां इन सीपों को खुले मैदान में दो-एक दिन तक धूप में सूखने के लिए फैला दिया जाता है।

समुद्र तल की शीतलता से निकलकर यहां किनारों पर धूप की गरमी में पड़े रहने के कारण सीपों के अन्दर छिपे घोंघे भुन-भुन-कर मर जाते हैं। इसके बाद सीपों के अन्दर छिपे मोतियों की तलाश का काम शुरू हो जाता है। सूखी हुई सीपों का पानी से धोकर एक स्थान पर ढेर लगा दिया जाता है। अब यहां बहुत से कसाई ढेरों में से एक-एक सीप उठाकर नुकीले चाकू से उनका मुंह खोलकर दोनों पेट चीरकर अलग-अलग करके अन्दर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छिपे मोती को देखते जाते हैं।

हजारों-लाखों सीपें और एक मोती

इस प्रकार हजारों लाखों सीपयों को चीर डालने के बाद ही कहीं किसी एक सीप में कोई एक सुन्दर-सा मोती पड़ा दीख पड़ता है। यही वह बहुमूल्य मोती है, जिसके लिए इतने घोंघों का बलिदान चढ़ा दिया जाता है।

इन्द्रधनुष के झिलमिलाते सात रंगों में लिपटे हुए दूध-जैसे सफेद मनमोहक मोती का जन्म कहां और कैसे होता है, यह बात जानकर हमें सचमुच प्रकृति के अनोखे कार्यों पर महान् आश्चर्य होता है। शत्रुओं से अपनी प्राण-रक्षा करने के लिए प्रकृति ने अपने सभी जीवों को कोई न कोई साधन अवश्य दिया है। एक बहुत छोटा और बहुत कोमल-सा मछली-परिवार का कीड़ा जिसे घोंघा कहते हैं, अपनी प्राण-रक्षा के लिए अपने ऊपर पत्थर की तरह एक कड़े कवच की रचना कर लेता है। रहने के लिए यही उसका घर है और शत्रु से बचने के लिए यही उसका दुर्ग। इसे सीप कहते हैं।

मदर आफ पर्ल : घोंघे का घर

घोंघा अपने रहने के लिए जो सीप बनाता है, यद्यपि यह ऊपर से बड़ी खुरदरी, भद्दी और सख्त होती है, परन्तु अन्दर से बहुत चिकनी, मुलायम और सुन्दर दीख पड़ती है। इसे अंगरेजी में मदर आफ पर्ल कहते हैं। यह बटन, चाकू के हैण्डल और सजावट के बहुत से सामान बनाने के काम आती है। इतनी चिकनी दीवारों वाला यह घर घोंघा अपने-आप ही बनाता है। उसके शरीर से एक चिकना तरल पदार्थ निकलता है। यह तरल पदार्थ जमकर कड़ा हो जाता है। इस तरह इसकी तह पर तह जमती जाती है और अन्त में सीप की शक्ल का एक सुन्दर-सा दुर्ग बन जाता है, जिसके अन्दर छिपा घोंघा शत्रुओं की चिन्ताओं से मुक्त होकर सुखपूर्वक जीवन-निर्वाह करता है।

वायु और पानी की आवश्यकता की पूर्ति के लिए घोंघे को कभी-कभी अपने दुर्ग के दोनों कपाट खोलने पड़ते हैं। इसी समय यदि कोई बालू का कण या अन्य कोई छोटा कीड़ा-मकोड़ा सीप के खुले हुए मुंह में घुस जाय, तो सीप शीघ्र ही अपने द्वार बन्द कर लेती है। फिर तो बालू का कण या शत्रु कीड़ा, जो भी अन्दर पहुंच जाता है, वह सदैव के लिए वहीं फंसकर रह जाता है। वह कभी भी बाहर नहीं निकल सकता। घोंघा भी अपने शत्रु की उपस्थिति अपने साथ सहन नहीं कर सकता। अतः उसके सम्पर्क से अपना बचाव करने के लिए घोंघा अपने शरीर से निकलने वाले तरल पदार्थ से उसको चारों तरफ से ढंककर एक दीवार का निर्माण करने में जुट जाता है। तरल पदार्थ की तह पर तह जमती जाती है और कुछ ही समय में वह आक्रमणकारी शत्रु अवैध प्रवेश करने के दण्ड-स्वरूप एक मोटी दीवार की गोल-गोल काल कोठरी में फंसकर वहीं समाप्त हो जाता है।

जब कभी किसी गोताखोर के हाथ पड़कर यह सीप ऊपर किनारे पर आ जाती है और इसको यहां खोला जाता है, तो एक सुन्दर-सा झिलमिलाता हुआ मोती अन्दर पड़ा हुआ

पानी की सतह से नीचे···समुद्री जन्तुओं से अपनी रक्षा के लिए गोताखोर अपने साथ चाकू ले जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीखता है। सीप के खुलते ही सूर्य की किरणें इस दूध-जैसे सफेद मोती को इन्द्रधनुष के झिलमिलाते सप्त रंगों के आवरण में ढककर मनुष्य के हाथों में सौंप देती है। बस, इसी समय मोती-जैसे सुन्दर, मनमोहक और कोमल रत्न का जन्म होता है।

मोतियों की खेती

मोतियों की खेती! साधारणतयः यह बात पढ़ने और सुनने में बहुत विचित्र-सी लगती है, परन्तु है बिलकुल सत्य। प्राकृतिक ढंग से तो मोती का जन्म समुद्र-तल पर पड़ी किसी सीप के गर्भ में होता है, और यह मोती वहीं गर्भ में पलकर धीरे-धीरे बड़ा होता है। न तो हर सीप में मोती होता है, और न ही बाहर से देखकर मोती वाली और बिना मोती वाली सीप में अन्तर बताया जा सकता है। अतः मोती बहुत कम संख्या में प्राप्त होने के कारण बहुमूल्य माने जाते हैं।

मोती अपनी सुन्दरता, कोमलता और आकार के कारण इतना जनप्रिय हो गया है कि प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप में मोती का उपयोग करने के लिए लालायित रहता है। यदि स्त्रियों को मोती के हार पसन्द हैं, तो पुरुष भी मोती-जड़ी अंगूठी पहनना चाहते हैं। परन्तु प्रश्न यह है कि इतनी बड़ी संख्या में मोती आयेंगे कहां से? अतः यह आवश्यक हो गया कि किसी न किसी तरह मोती की खेती की जाय।

मोतियों की खेती करने के लिए पेड़-पौधों की तरह मिट्टी की आवश्यकता नहीं पड़ती। यह कार्य सबसे पहले लगभग तेरहवीं सदी के आसपास पूर्वी देशों में शुरू हुआ। परन्तु पूर्णतः वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर सफलतापूर्वक मोती की खेती करने की सबसे सरल विधि १८९४ में एक जापानी युवक कोकीची मिकीमोतो ने पेटेण्ट करायी।

सीपों में गर्भाधान की कृत्रिम विधि

मिकीमोतो की विधि के अनुसार जिसे जापानी विधि भी कहते हैं, पहले किसी अच्छी-सी सीप के एक छोटे से टुकड़े के बहुत छोटे-छोटे कण बना लिये जाते हैं। इन्हें बीज कहते हैं। अब समुद्र तल पर पड़ी एक विशेष जाति 'मेलीग्रीना' की सीपों को गोताखोर ढूंढ़-ढूंढ़कर ऊपर लाते हैं। यहां किनारे पर बड़ी सावधानी के साथ इन सीपों को गर्भाधान कराया जाता है। इसके लिए हर सीप का मुंह खोलकर प्रत्येक में जबरदस्ती एक-एक बीज ठूसकर अन्दर प्रवेश करा दिया जाता है। उसके तुरन्त बाद ही सीप का मुंह बन्द करके फिर इन गर्भवती सीपों को एक डोलची में भरकर गोताखोर समुद्र-तल में किसी सुरक्षित स्थान पर छोड़ देते हैं।

कुछ वर्षों के बाद इन्हीं सीपों में अपने-आप मोती पैदा हो जाते हैं। वास्तव में जो कार्य प्राकृतिक रूप से एक-दो सीपों में कभी-कभी अचानक हो जाया करता है, वही कार्य मनुष्य द्वारा असंख्य सीपों में रोज ही होता है। अतः अपनी जरूरत के अनुसार मोतियों की संख्या प्राप्त हो सकती है। प्राकृतिक और अप्राकृतिक विधियों में केवल इतना ही अन्तर है कि सीप के खुले हुए मुंह में अचानक कोई कण न प्रवेश करके जबरदस्ती प्रवेश कराया जाता है। बाद में फिर मोती का निर्माण दोनों ही विधियों में एक-जैसा होता है। सीप के अन्दर का घोंघा इस बाहर से आये हुए कण को चारों ओर से एक तरल पदार्थ से ढंक देता है जो धीरे-धीरे जमकर मोती का रूप ले लेता है।

अनुभव के आधार पर ऐसा ज्ञात हुआ है कि इन सीपों के अन्दर जबरदस्ती प्रवेश कराते हुए बीजों पर प्रति वर्ष ०·०३ इंच मोटा मोती के पदार्थ का आवरण चढ़ता रहता है। इस गति से एक अच्छा मोती बनने में कई वर्षों का समय लग जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

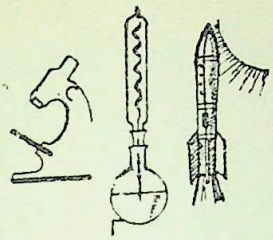

पोटैशियम सल्फेट के उत्पादन की नयी विधि

साधारण नमक बनाते समय कुछ जल बेकार ही फेंक दिया जाता है। केन्द्रीय नमक और समुद्री अनुसन्धान संस्थान, भावनगर में बिटर्न के उपयोग द्वारा पोटैशियम सल्फेट के उत्पादन की एक नयी विधि विकसित की गयी है। यह उल्लेख्य है कि पोटैशियम सल्फेट एक उपयोगी उर्वरक है। कच्छ के रन में बिटर्नों में मैग्नीशियम सल्फेट भी उपस्थित रहता है। कुछ बिटर्न इससे मुक्त भी रहते हैं। इस विधि से इन दोनों प्रकार के बिटर्नों के मिश्रण को सूर्य की उष्मा द्वारा बाष्पीकृत करके पोटैशियम सल्फेट प्राप्त किया जाता है। प्रतिदिन एक टन पोटैशियम सल्फेट उत्पन्न करने वाले प्रायोगिक संयन्त्र का पूर्ण विवरण तैयार कर लिया गया है। इस संयन्त्र द्वारा ८,००० टन पोटैशियम सल्फेट प्रति वर्ष प्राप्त होगा और लगभग २७ लाख रुपये की विदेशी मुद्रा की बचत होगी।

बिना रेफ्रीजरेशन के दूध को छह महीने तक रखा जा सकता है

किसी भी प्रकार की जलवायु में बिना रेफ्रीजरेशन का प्रयोग किये दूध को छह महीने तक ताजा रखने के लिए ब्रिटेन के वैज्ञानिकों ने एक नयी विधि का विकास किया है। इस विधि के अन्तर्गत दूध को पहले १००° से. तक गरम करते हैं, इसके पश्चात् इसे शीघ्रता से ठण्डा करते हैं। दीर्घ जीवनकाल वाले इस प्रकार के दूध से उत्पादन के लिए दो संयन्त्र तैयार किये गये हैं। अब इस प्रकार के दूध का बड़े पैमाने पर उत्पादन होने लगा है।

ऐसे दूध के स्वाद में साधारण दूध से कोई भिन्नता नहीं होती।

गरम पानी से चलने वाला रेफ्रीजरेटर

यू. एस. एस. आर. अकादमी आव साइन्सेज के साइबेरिया विभाग के उष्ण भौतिकी संस्थान में एक ऐसा रेफ्रीजरेटर बनाया गया है जो विद्युत् के स्थान पर गरम पानी से चलता है। इस रेफ्रीजरेटर का सफलतापूर्वक परीक्षण किया जा चुका है और अब उष्मा ट्रांसफारमर के रूप में इसके उपयोग किये जा रहे हैं। इस प्रकार का रेफ्रीजरेटर ऐसे स्थानों पर अत्यधिक उपयोगी प्रमाणित होगा जहां उष्ण जल के स्रोत या धात्वीय संयन्त्र है जिससे उष्ण जल निरन्तर प्राप्त हो सकता है।

नये किस्म का कैलेण्डर

रूसी संघ के नोनोसिबिर्स्क के लियोनिद साखारोवस्की ने एक नये प्रकार का कैलेण्डर तैयार किया है। सोवियत विज्ञान अकादमी की अखिल संघ ज्योतिर्विज्ञान सोसायटी के केन्द्रीय बोर्ड ने इस कैलेण्डर को स्वीकार कर लिया है तथा यह सिफारिश की है कि रूसी संघ का सार्वजनिक शिक्षा मन्त्रालय इसे बड़े पैमाने पर प्रकाशित करे।

इस कैलेण्डर में एक अंश तालिका है जो चौकोर डिब्बे में घूमती है। इसमें ३,२०० वर्षों की तिथियां जानी जा सकती हैं। इस कैलेण्डर से चन्द्रमा की ३७० वर्षों की गति का भी पता चल सकता है। इसमें एक दिन से अधिक की गलती नहीं होती।

तन्त्रिका विकार के लिए भारतीय बूटी

संसार भर से एकत्र किये गये विभिन्न पौधों पर आजकल चिकित्सा एवं सगन्ध पौधों के अखिल संघ अनुसन्धान संस्थान के ट्रांसकाकेशियाई प्रयोगात्मक स्टेशन में अनुसन्धान कार्य चल रहा है। हाल ही में भारत की अम्बरुठा नामक बूटी का पौधा उगाये जाने का सुझाव स्टेशन के स्टाफ ने दिया है। इस पौधे का उपयोग तन्त्रिका विकार की चिकित्सा में लाभदायक होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर्वतीय चरागाहों के लिए कृत्रिम वर्षा

तियेनशान पर्वत की चारागाहों में कृत्रिम वर्षा करायी जायेगी। इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि यहां जलाभाव रहता है।

सागर-तल से ढाई किलोमीटर ऊंची सुसामिर की वादी को प्रयोगों के लिए चुना गया है। आसानी से ले जाने वाले पानी के छिड़काव के यन्त्रों द्वारा वैज्ञानिक १९० हजार हेक्टर पर्वतीय चरागाह में पानी पहुंचायेंगे। उन्हें आशा है कि इससे तिगुनी घास होगी।

टेलीफोन द्वारा चित्र तथा लेखन का प्रेषण

किसी भी सामान्य टेलीफोन का जिसका प्रयोग वार्ता करने में किया जाता है, अब चित्र तथा लेखन पहुंचाने में भी किया जा सकता है। पश्चिम जरमनी की एक फर्म ने जो प्रतिलिपि लेखक तैयार किया है, उससे यह कार्य सम्भव हो सका है। अभी तक कागजात

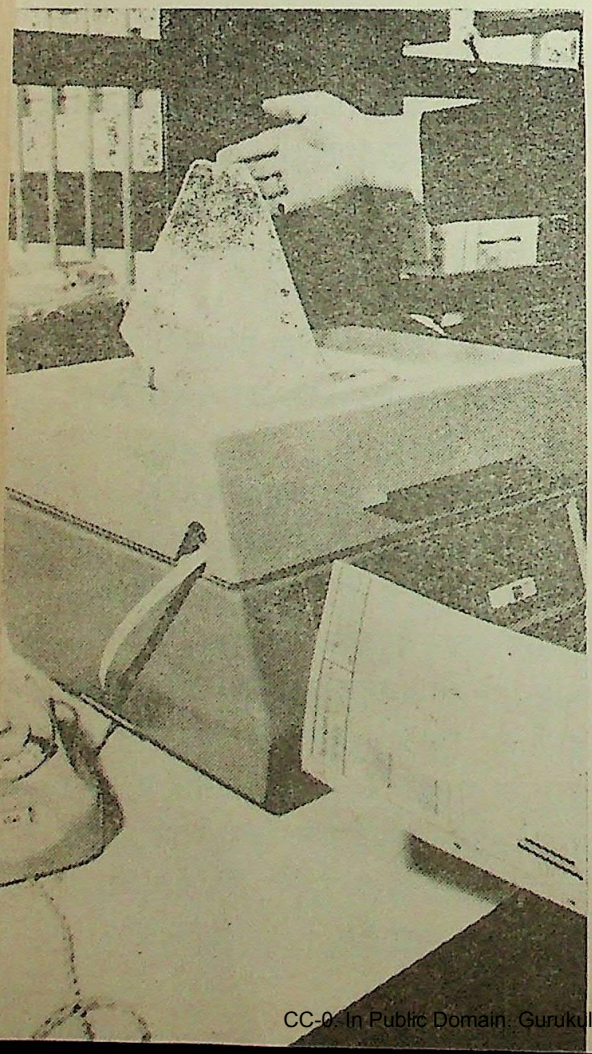

और ड्राइंग भेजने के लिए जिन मशीनों का प्रयोग किया जाता था वे बहुत महंगी थीं। पश्चिम जरमनी की डाक सेवा ने इसे अब स्वीकार किया है कि यह प्रणाली सामान्य टेलीफोन दरों पर प्रयुक्त की जा सकती है। इस प्रतिलिपि लेखक की मूल सम्बद्ध फीस '७५ डालर प्रतिमास बैठती है। इसे विदेशों से वार्ता के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकता है। पर यह आवश्यक है कि दूसरे सिरे पर भी ऐसा ही यन्त्र हो।

इस प्रतिलिपि लेखक द्वारा ७×२ इंच आकार की ड्राइंग को भेजने में केवल तीन मिनट का समय लगता है। बड़ी ड्राइंग को भेजने में अधिक समय लगता है। जटिल, कठिन तथा खर्चीली प्रक्रिया जिसमें फोटो प्राप्त करने वाले विशेष कागज की जरूरत पड़ती थी, अब खत्म कर दी गयी है। ग्रहण करने वाले सिरे पर एक स्याही की पेंसिल कागजात की प्रतिलिपि कागज पर करती जाती है। इस कागज को फाड़कर काम में लाया जाता है।

उड़ता हुआ प्लेटफार्म

अमरीका की पियासे की एयर क्राफ्ट कारपोरेशन ने एक हवाई प्लेटफार्म का निर्माण किया है जो पृथ्वी पर दौड़ सकता है, हवा में उड़ सकता है। इसकी सहायता से फौजी जवानों को किसी भी स्थान पर सरलतापूर्वक उतारा जा सकता है और वहां उनके लिए आवश्यक सामग्री पहुंचायी जा सकती है। यह यान देखने में एक जहाज के बेड़े की तरह लगता है जिसमें पायलट के बैठने के स्थान के आगे और पीछे पंखे लगे होते हैं। ये पंखे हेलीकाप्टर के पंखों की भांति क्रिया करते हैं और यान को सीधे ऊपर उठाने में सहायक होते हैं। इस यान की लम्बाई-चौड़ाई और ऊंचाई क्रमशः २४·५ फुट, ९·२ फुट और ५·९ फुट है। इस प्रकार के आधुनिक यान में पांच व्यक्ति एक साथ बैठ सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजेन्द्रप्रसाद वार्ष्णेय, एम. एस-सी.

शायद साधारणत: इस बात पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता कि पृथ्वी से पत्थर तथा धातु के टुकड़े लगातार टकराते रहते हैं। कभी-कभी तो ये टुकड़े इतने बड़े होते हैं कि सम्पूर्ण वायुमण्डल को भेदकर पृथ्वी से जा टकराते हैं। ये उल्कापिण्ड (meteorites) कहलाते हैं। अधिक प्रसिद्ध छोटे टुकड़े हैं जो वायुमण्डल के ऊपरी भाग में ९० मील की ऊंचाई पर जल जाते हैं और टूटते हुए तारे-से मालूम देते हैं। ये उल्का कहलाते हैं।

हाल ही में ऐसे कणों का पता लगा है जो इतने छोटे होते हैं कि धीमे होने से पहले इतने गरम नहीं हो पाते हैं कि बाष्पीभूत हो सकें। ये सूक्ष्म धूल के कणों के रूप में जमीन पर गिर पड़ते हैं; ये छोटे उल्कापिण्ड (micro meteorites) कहलाते हैं। इस तरह पृथ्वी पर हजारों टन द्रव्य इकट्ठा होता रहता है। अब हम यह देखेंगे कि यह द्रव्य कहां से आता है और इसे ऊपर के वायुमण्डल का परीक्षण करने के लिए कैसे काम में लाया जा सकता है।

टूटते हुए तारे (Shooting Stars)

सर्वप्रथम हम मध्यम नाप के कणों का अध्ययन करेंगे जिन्हें टूटते हुए तारे या उल्का कहते हैं, क्योंकि हम इनके विषय में उल्कापिण्ड की अपेक्षा अधिक जानते हैं। टूटते हुए तारे आकाश में कभी-कभी साफ दिखायी देते हैं, कभी-कभी बहुत संख्या में भी दिखायी देते हैं। लेकिन १८वीं सदी के अन्त में पता लगा कि यह घटना बहुत दूर से पृथ्वी के वायुमण्डल में घुसने वाले कणों के कारण होती है। तब यह महसूस किया गया कि उल्का के कण सूर्य के चारों ओर ग्रहपथ में पृथ्वी की तरह चक्कर लगा रहे हैं।

पृथ्वी १८·५ मील प्रति सेकण्ड की गति से अपने ग्रहपथ में घूमती हुई अपने साथ के कणों को झाड़ती हुई ले जाती है और इस प्रकार एक औसत दिन और रात में पृथ्वी इतना द्रव्य इकट्ठा कर लेती है कि एक द्रष्टा जो आंख से साफ अंधेरे आकाश की तरफ देख रहा है, एक घण्टे में ५ या १० टूटते हुए तारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को देख सकता है। इसकी ठीक संख्या मौसम और रात्रि के समय पर निर्भर करती है। ये उल्काएं जो पूरे वर्ष देखी जा सकती हैं, आकाश में फैली हुई दिखायी पड़ती हैं। ये कदाचनिक उल्का (sporadic meteors) कहलाती हैं। कभी-कभी उल्काओं की संख्या बहुत बढ़ जाती है और यदि उनका मार्ग देखा जाय, तो वे आकाश में एक बिन्दु से फैलती हुई दिखायी देती हैं। ये वर्षोल्का (shower meteors) कहलाती हैं। ये उस समय पैदा होती हैं जब पृथ्वी सूर्य के चारों ओर एक ही ग्रहपथ में घूमने वाले उल्कीय द्रव्य के जमाव के बीच से गुजरती है। साधारणत: वर्षोल्का कुछ रातों में ही खत्म हो जाती है, क्योंकि मलबा (debris) अन्तरिक्ष में करोड़ों मील तक बढ़ सकता है और पृथ्वी १८·५ मील प्रति सेकण्ड की चाल से घूम रही है, इसलिए यह मलवे के प्रवाह में से बहुत जल्दी गुजर जाती है। इसी लिए वर्षोल्का जल्दी ही खत्म हो जाती है। चूंकि आकाश में दिखायी देने वाली उल्काएं एक ही बिन्दु से फैलती हुई प्रतीत होती हैं, इसलिए इन्हें विकिरित करने वाली (radiant) कहते हैं। एक धारणा के अनुसार तारों के बीच विकिरणकारिता की स्थिति से वर्षोल्का का नामकरण किया जाता है। सुविख्यात पर्सीयड (perseid) वर्षोल्का को पर्सीयड वर्षोल्का इस कारण कहते हैं, क्योंकि इसका विकरणकारी परशु (Perseus) में स्थित होता है। इस प्रकार की वर्षोल्का की सभी उल्काएं अन्तरिक्ष में समानान्तर घूमती हैं।

निरीक्षण की विधियां

जब टूटने वाले तारों की वास्तविक प्रकृति का बोध हुआ, तो बहुत-से वैज्ञानिकों का ध्यान इनकी उत्पत्ति की समस्या की तरफ आकर्षित हुआ, और आज भी इस समस्या का पूर्ण समाधान प्राप्त नहीं हो पाया है। इसका कारण ठीक निरीक्षण लेने में होने वाली कठिनाई है, क्योंकि एक क्रियाशील वर्षोल्का में भी प्रत्येक उल्का बिना पूर्व सूचना के प्रकट होती है और सेकण्ड के छोटे-से हिस्से में ही समाप्त हो जाती है।

सूर्य के चारों ओर किसी कण के ग्रहपथ का पता लगाने के लिए वायुमण्डल में उल्का की उड़ान की दिशा और वेग को नापना अति आवश्यक है। २०वीं सदी तक आंखों से निरीक्षण के अलावा निरीक्षण के और तरीके नहीं थे और इस प्रकार लिये गये निरीक्षणों में, विशेषत: वेग के निरीक्षणों में बहुत त्रुटि रहती थी। तब भी वैज्ञानिकों ने बहुत महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले और उनके आधार पर यह सिद्ध किया कि कुछ प्रसिद्ध वर्षोल्काओं में उल्कापिण्ड सूर्य के चारों ओर उन्हीं वृत्तों में घूमते हैं जैसे कुछ पुच्छल तारे।

२०वीं सदी के आरम्भ में फोटोग्राफी को इस समस्या के समाधान के लिए प्रयुक्त किया गया। अगर फोटोग्राफी की प्लेट उल्का को अंकित करने में काफी सुग्राही है, तो इसकी उड्डयन की दूरी को ठीक-ठीक नापा जा सकता है। गति नापने की समस्या का समाधान एल्किन ने प्रस्तुत किया जिसने शटर (shutter) को कैमरा के सामने घुमाया जिससे ताल सेकण्ड में कई बार छिपा रहा। उल्का की चमकीली रेखा फोटोग्राफी की प्लेट पर स्पष्ट रूप से दिखायी देती है। इस वृत्त खण्ड की लम्बाई को नापकर गति की गणना की जा सकती है। वास्तव में इस प्रकार प्रयोग किया गया, अकेला कैमरा उल्का का कोणिक वेग देता है, क्योंकि इसकी ऊंचाई अज्ञात है। उल्का की वास्तविक गति नापने के लिए इस तरह के दो कैमरों को मीलों की दूरी पर साथ-साथ प्रयोग में लाना चाहिये।

सिद्धान्त के रूप में ये फोटोग्राफी के तरीके बहुत ही ठीक माप दे सकते हैं, लेकिन इसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत-से परिणामों को इकट्ठा करना अत्यन्त कठिन है, क्योंकि फोटोग्राफी का द्रव्य प्रकाश से क्रिया के लिए काफी सुग्राही नहीं होता है और सिर्फ चमकीली उल्का को ही अंकित कर सकता है। बहुत ही सुग्राही कैमरों का दृष्टि का क्षेत्र सीमित होता है। इन सब कठिनाइयों के कारण ही हारवर्ड की प्रसिद्ध निरीक्षणशाला में १९४८ तक १,००० घण्टे के एक्सपोजर में सिर्फ एक उल्का दिखायी पड़ी; इसके साथ-साथ चन्द्रमा का प्रकाश और बादल भी इसमें बाधा डालते हैं। पिछले कुछ वर्षों में सुपर स्मिट्स (super schmidts) कैमरा के आविष्कार से इन कठिनाइयों को मुख्यतः खत्म कर दिया गया है। इसमें एक विशेष तरह की सुधार करने वाली प्लेट (correctiong plate) होती है जो कैमरा के बड़े मुख्य व्यास के साथ विस्तृत दृष्टि का क्षेत्र प्रस्तुत करती है जिससे यह बहुत ही कम शक्तिशाली उल्का को भी अंकित कर सकता है।

रेडियो तरीके (Radio Methods)

सुपर स्मिट कैमरा के आविष्कार से पहले पूर्णरूप से भिन्न तरीके ने उल्का के निरीक्षण के विषय में क्रान्ति उत्पन्न कर दी थी। जब कोई उल्का वायुमण्डल में जलती है, यह प्रकाश की एक रेखा पैदा करती है जिसके द्वारा हम इसे देखते हैं। लेकिन इसके साथ-साथ यह आयनीकृत परमाणु और इलेक्ट्रानों की एकल कीर पीछे छोड़ जाती है। यह आयनीकृत द्रव्य बहुत जल्द विसरित हो जाता है और सेकण्ड के कुछ भाग में ही उदासीन स्थिति में बदल जाता है। लेकिन इससे पहले कि यह ऐसा करती है, मुक्त इलेक्ट्रान एक रेडियो तरंग की ऊर्जा को विकरित करने की सामर्थ्य रखते हैं। ये तरीके राडार से मिलतेजुलते हैं। पृथ्वी से प्रेषी छोटी-छोटी रेडियो तरंगें भेजता है। राडार में ये वायुयान से टकराकर

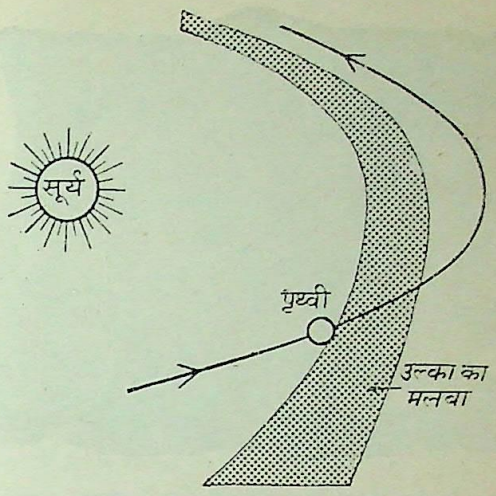

पृथ्वी के मल की धारा में से गुजरने पर उल्काबे की बौछार का उत्पादन

परावर्तित होती हैं। परावर्तित तरंगें विशेषतः एक ग्राहक द्वारा ग्रहण की जाती हैं जो ट्रांसमीटर की आवृति पर मिला हुआ होता है। वायुयान कैथोड-रे ट्यूब पर प्रतिध्वनि की तरह दिखायी देता है। उल्का के विषय में रेडियो तरंगें इलेक्ट्रानों द्वारा विकिरत होती हैं जो उल्का की लकीर में स्थित होते हैं। और उसी प्रकार की प्रतिध्वनि कैथोड-रे ट्यूब में दिखायी देती है।

यह उल्का प्रतिध्वनि बहुत ही थोड़ी देर के लिए होती है। कभी-कभी आने वाली चमकीली उल्काएं कुछ सेकण्डों में खत्म होने वाली प्रतिध्वनि देती हैं। मुख्यतः अधिकतर उल्काएं सेकण्ड के दसवें भाग में ही खत्म हो जाती हैं।

कैथोड-रे ट्यूब के भिन्न-भिन्न चित्रों को चित्रित करने के लिए फोटोग्राफी रिकार्ड के साथ विशेष प्रकार के अतिरिक्त तरीके विकसित किये गये हैं, और आज उल्का की दिशा और वेग को बिना आकाश की ओर देखे ठीक-ठीक नापा जा सकता है। इन रेडियो तरीकों से दो प्रकार के लाभ भी हैं। पहला यह कि ये आकाश की दशाओं से स्वतन्त्र होते हैं। इस प्रकार आकाश की हर परिस्थिति में,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घूमते हुए शटर के प्रयोग से कैमरे द्वारा उल्का के आगमन के फोटोग्राफ की रेखानुकृति

वायुमण्डल में उल्का के आगमन का विधिवत् निरीक्षण किया जा सकता है। दूसरा यह कि इन साधनों को इतना सुग्राही बनाया जा सकता है कि इनके द्वारा उन उल्काओं को अंकित करने में कोई कठिनाई नहीं होती है जिन्हें न आंख से देखा जा सकता है और न जिनका फोटो लिया जा सकता है।

उल्का की उत्पत्ति

उल्का की उत्पत्ति के विषय में वैज्ञानिक बहुत विवादग्रस्त रहे हैं लेकिन पिछले कुछ वर्षों में रेडियो साधनों और सुपर स्मिट कैमरे द्वारा बहुत-सी अनिश्चितताओं को समाप्त कर दिया गया है।

वर्षोल्का

वर्षोल्काओं में कुछ विशेषतः उल्लेख्य क्वाडरेण्टाइटाइड् (quadrantids), पर्सीयड्स और जेमीनाइड्स (geminids) अपने आकार में बहुत ही नियमित हैं और हर वर्ष एक ही दर से उल्का उत्पन्न करती हैं। इससे पता चलता है कि उल्का का मलबा ग्रहपथ के चारों ओर पूर्णतया विकरित होता है। इसलिए पृथ्वी मलबे का उतना भाग अपने साथ ले जाती है जितने बिन्दुओं पर यह ग्रहपथ को काटती है। दूसरी वर्षोल्काएं, जैसे टाइराइड्स (tyrids), लीओनाइड्स (leonids) और जीआकोबीनाड्स (giacobinids) बिलकुल भिन्न हैं। कभी-कभी ये उल्का के तूफान देती हैं और मध्यवर्ती वर्षों में क्रियाशीलता बहुत कम रहती है, उदाहरणतः १७९९, १८३३ और १८६६ की लीओनाइड्स मशहूर हैं और हाल ही में १९४६ के १० अक्टूबर की जीआकोबीनाइड वर्षोल्का इसी तरह की थी। दूसरी मनोरंजक वर्षोल्काएं बीलाइड्स (bielids) हैं जिन्होंने १९ वींसदी में महान् प्रदर्शन प्रस्तुत किये। इन सभी में यह सम्भव है कि मलबा ग्रहपथ के एक ही क्षेत्र में सीमित हो। सूर्य के चारों ओर घूमने वाली मलबे की धारा, ग्रहों मुख्यतः बृहस्पति के बलों द्वारा शासित होती है और इसी कारण बीलाइड वर्षोल्का का मुख्य लावा पृथ्वी के ग्रहपथ के समतल से बाहर फेंक दिया गया था।

१८६६ में जी. वी. शिपेयरली (G. V. Schiparelly) यह दिखाने में सफल हुआ कि पर्सीयड्स और लीओनाइड्स में उल्का का मलबा मुख्य रूप से सूर्य के चारों ओर उन्हीं ग्रहपथों में घूमता है जिनमें दो प्रसिद्ध पुच्छलतारे घूमते हैं। इस प्रकार कुछ उल्काओं की धारा और पुच्छलतारों में निकट सम्बन्ध स्थापित हो गया है। पर्सीयड्स और लीओनाइड्स के साथ-साथ अब यह माना जाता है कि लाइराइड्स (lyrids), बीलाइड्स इत्यादि भी ज्ञात पुच्छलतारों के साथ जुड़ी हुई हैं।

कादाचनिक उल्काएं

यद्यपि वर्षोल्का के विषय में प्रश्न रहे हैं, लेकिन यह हमेशा पाया गया है कि इनके लिए जिम्मेदार कण बन्द ग्रहपथ में घूमते हैं और क्योंकि ये सूर्य के चारों ओर घूमते हैं इसलिए मुख्यतः सौरमण्डल के सदस्य हैं। दूसरी तरफ इन उल्काओं के विषय में बहुत विवाद रहा है। इसके लिए परस्पर विरोधी धारणाएं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थीं—(१) कादाचनिक उल्काओं के ग्रहपथ भी वर्षोल्काओं की तरह के हैं, क्योंकि ये सौर-मण्डल तक ही सीमित रहती हैं, (२) कादाचनिक उल्काओं के ग्रहपथ बन्द नहीं हैं इसलिए ये उल्काएं अन्तःतारकीय अन्तरिक्ष में दर्शक के रूप में और अस्थायी रूप से सूर्य के प्रभाव में रहती हैं। इस समस्या को तय करना कठिन था, क्योंकि अतिपरबलयिक रास्ते में और बड़े दीर्घवृत्तों में घूमने वाली उल्का की गति में बहुत कम परिवर्तन होता है। आजकल यह बताया जाता है कि यह विवाद सुपर स्मिट कैमरा, रेडियो प्रतिध्वनि विधि और फोटोग्राफिक साधनों द्वारा तय कर दिया गया है जिनसे पता चलता है कि सब ग्रहपथ दीर्घवृत्तीय हैं। वास्तव में जोर्डल बैंक (Jordal Bank) में रेडियो प्रतिध्वनि द्वारा मापी गयी उल्काओं के १०,००० ग्रहपथों में एक भी ग्रहपथ अति-परबलयिक नहीं मिला। इसके विपरीत अधिकतर उल्काएं कम समय के दीर्घवृत्तीय ग्रहपथों में घूमती मिली हैं।

यद्यपि यह बात अब निश्चित हो गयी है फिर भी उल्काओं का सौरमण्डल से सम्बन्ध आज भी विवादग्रस्त है। यह समस्या कि यह द्रव्य (lava) सौरमण्डल के हाल के विघटन के कारण है या यह पूर्व द्रव्य में से कुछ है, अभी तय होने के लिए शेष है।

उल्का और ऊपर के वायुमण्डल का निरीक्षण

जैसे ही उल्का वायुमण्डल में घुसती है यह हवा के परमाणुओं से टकराती है और संघट्ट की ऊर्जा उष्मा के रूप में प्रकट होती है जो उल्का के बहुत से परमाणुओं को बाष्पीभूत करने के लिए काफी होती है। ये बाष्पीभूत परमाणु उल्का से अलग घूमते हैं और उसके रास्ते के पास के हवा के परमाणुओं से टकराते हैं।

इन्हीं टक्करों के कारण आयनीकृत और प्रकाशमय लकीर बनती है।

वह ऊंचाई जिस पर उल्का बाष्पी-भूत होती है, उल्का की गति और मात्रा पर निर्भर रहती है।

सत्तर मील की दूरी पर वायुमण्डल इतने कम घनत्व का हो जाता है कि कोई बाष्पीकरण सम्भव नहीं है। वास्तव में यह देखा गया है कि अधिकतर उल्काएं ५०-७० मील के बीच पूर्णरूप से बाष्पीभूत हो जाती हैं। इस दूरी में वायुमण्डल पूर्ण बाष्पीकरण के लिए काफी घना होता है। दूसरी ओर बड़ी-बड़ी उल्काएं ५० मील से भी नीचे बिना बाष्पी-भूत हुए आ जाती हैं। इस समय वायुमण्डल इतना घना हो जाता है कि हवा के परमाणु उल्का के सामने इकट्ठे होने लगते हैं।

इन बातों से यह स्पष्ट है कि उल्का के बाष्पीकरण के अध्ययन से प्रारम्भिक भौतिक क्रियाओं का पता लगाया जा सकता है जो इस ऊंचाई पर हो रही हैं।

ऊपरी वायुमण्डल के भौतिक गुणों का निरीक्षण

किसी निश्चित ऊंचाई पर दी गयी मात्रा और गति (उस उल्का की जिस पर बाष्पीभूत होती है) उस ऊंचाई पर हवा के घनत्व पर निर्भर रहती है। इस तरह रेडियो प्रतिध्वनि के तरीके द्वारा उल्का की गति और मात्रा नापकर ऊपरीय वायुमण्डल के घनत्व को नापा जा सकता है। इस तरीके से

उल्काएं पृथ्वी पर गिरती रहती हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

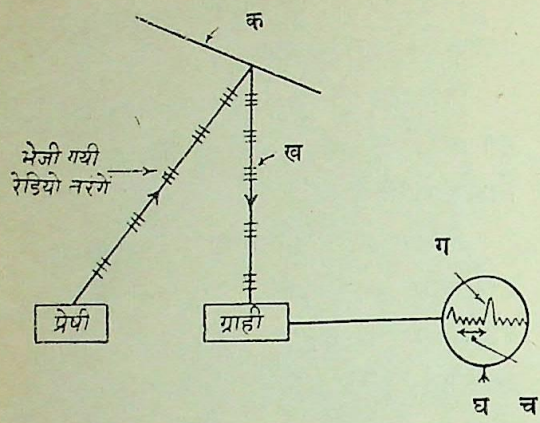

उल्का की रेखा द्वारा प्रतिध्वनि अंकन—(क) उल्का की रेखा, (ख) उल्का रेखा द्वारा विकरित रेडियो तरंगें, (ग) उल्का की प्रतिध्वनि, (घ) उल्का द्वारा तय की गयी दूरी और (च) कैथोड-रे ट्यूब

बहुत-सी उल्काओं से परावर्तन बिन्दु की ऊंचाई और गति नापी जाती है। ये निरीक्षण ५०-७० मील के क्षेत्र में भिन्न-भिन्न ऊंचाई पर हवा के घनत्व को बताते हैं। पिछले वर्षों में बहुत ऊंचाई पर बहने वाली आंधियों का आभास कभी-कभी आने वाले उल्का के बड़े तूफानों से किया गया था। हाल ही में रेडियो प्रतिध्वनि के तरीके को इन आंधियों के ठीक-ठीक और विधिवत मापन के लिए प्रथुका किया गया है।

उल्का की संख्या और मात्रा

हम जानते हैं, रेडियो तरीकों द्वारा बहुत ही सूक्ष्म उल्का का भी पता लगाया जा सकता है। निरीक्षणों द्वारा यह स्पष्ट पता लगा है कि चमकीली उल्का की अपेक्षा कम चमकीली उल्का की संख्या बहुत अधिक है। उल्का की संख्या और मात्रा में इस प्रकार का सम्बन्ध है कि उल्का के मन्द होने में मात्रा में जो कमी होती है वह उसकी संख्या में बढ़ोत्तरी द्वारा पूरी हो जाती है।

यद्यपि अकेला निरीक्षक प्रति घण्टे बहुत कम उल्का देख पाता है, लेकिन वायुमण्डल में घुसने वाली कुल उल्काओं की संख्या बहुत अधिक है। निरीक्षणों द्वारा यह पाया गया है कि आंख से दिखायी देने वाली लगभग १० करोड़ उल्काएं रोज वायुमण्डल में घुसती हैं। बहुत ही चमकीली उल्काओं की मात्रा १०० ग्राम से अधिक नहीं होती है।

उल्का की मात्रा के विषय में बहुत मतभेद है। आम दिखायी देने वाले टूटते तारे निश्चित रूप से बहुत छोटे हैं। वास्तव में बहुत-से तो बालू के कणों से भी छोटे होते हैं। यह सोचा जाता है कि बहुत ही चमकीली उल्का की मात्रा भी १०० मिलीग्राम से अधिक नहीं होती है।

यह एक मनोरंजक वास्तविकता है कि यद्यपि वर्षोल्काएं कादाचनिक उल्काओं की अपेक्षा अधिक देखने योग्य होती है, फिर भी ये इतने कम समय के लिए रहती हैं कि एक साल में कादाचनिक उल्काओं द्वारा लायी गयी मात्रा की अपेक्षा चौथाई ही मात्रा वायुमण्डल में ला पाती हैं। उदाहरणतः अगस्त में पर्साइड वर्षोल्किा सिर्फ ८२ टन लावा ही ला पाती है जब कि सैकड़ों टन कादाचनिक उल्काएं वर्ष में वायुमण्डल में घुसती हैं। और बड़ी-बड़ी कोवीनाइड वर्षोल्काएं भी जो उल्का का तूफान देती है, सिर्फ ७० टन मलबा ही पृथ्वी को दे पाती हैं। पृथ्वी पर इकट्ठा होने वाले मलबे का अधिकांश भाग उल्काओं द्वारा ही लाया जाता है।

कोलाहल-निरोधी यन्त्र

लतविया में निर्मित एक नवीन मौलिक यन्त्र द्वारा अब शोर न सुनना सम्भव हुआ है। यह यन्त्र एक छोटा-सा ट्यूब है। इसकी बाहरी सतह पर महीन छिद्रों की चार पंक्तियां खुदी हुई हैं। इस आविष्कार का प्रयोग उन यन्त्रों में किया जायेगा जिनमें से चलने पर शोर उत्पन्न होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व संसार

संगीत संग्रहालय

मास्को में शीघ्र ही एक विशेष भवन संगीत संग्रहालय के लिए बनेगा। इस संग्रहालय में ३,५०,००० वस्तुएं रहेंगी जिनमें विविध प्रकार के बाजे, पाण्डुलिपियां आदि होंगी। ये बाजे, पाण्डुलिपियां प्रसिद्ध संगीतज्ञों से सम्बन्धित होंगी। साथ ही एक बड़ा पुस्तकालय भी होगा जिसमें रेकार्ड और टेपरेकार्ड होंगे।

यह भवन पूरे एक खण्ड में होगा। वहां आने वाले सड़क पर से ही ग्लिंका के 'इवान सुसानिन' की प्रसिद्ध धुन सुन सकेंगे।

यह संगीत संग्रहालय विश्व में अनोखे ढंग का होगा।

आधुनिकतम दुर्घटना अस्पताल

लुडविगशेफन-राइन का नया दुर्घटना अस्पताल यूरोप का आदर्श अस्पताल है। इस आधुनिकतम दुर्घटना अस्पताल पर लगभग ८.७५ मिलियन डालर राशि व्यय होगी। यह १९६८ में बनकर तैयार होगा। किसी भी सामान्य अस्पताल में प्रति पलंग पर ८५,००० डालर का खर्च इस बात का संकेत है कि इसमें अत्यन्त आधुनिक तकनीकी उपकरण लगाये गये हैं तथा उच्चकोटि के वैज्ञानिक परीक्षणों का प्रबन्ध किया गया है। इस नौ मंजिल की इमारत का सबसे महत्त्वपूर्ण विभाग है जलने का इलाज करने वाला वार्ड। इसे बाहरी प्रभावों से मुक्त रखा गया है। इसमें विभिन्न बन्द संस्थानों से पहुंचा जा सकता है। इसके सभी कमरे वातानुकूलित हैं। स्थानीय छूत से रोग-विस्तार का सामना करने के लिए परा-बैंगनी किरणों का प्रयोग किया जाता है जो जले के घावों में खतरनाक हैं। इस अस्पताल में बीमारी के बाद का उपचार केन्द्र भी होगा। इसमें नहाने तथा तैरने का तालाब, जिमनास्टिक तथा स्कूल भी होगा।

परमाणु बम गिरने के स्थान पर स्नान

मैड्रिड के एक समाचार के अनुसार हाल ही में अमरीकी राजदूत बिडल ड्यूक और स्पेन के सूचना मन्त्री फ्रागा इरीबार्न ने अपनी पत्नी-बच्चों के साथ एक असाधारण स्नान किया।

दोनों सागर के उस भाग में तैरे जहां अमरीका के एक ध्वस्त यान से परमाणु बम गिर गया था।

बम फटा नहीं था, पर उसके कारण स्पेन में यह आशंका फैल गयी थी कि उस बम से जल इतना विषाक्त हो गया होगा कि उसके सम्पर्क में आने से प्राणी अपनी जान खो सकते हैं।

अमरीका के सैनिक विशेषज्ञों का यह दावा रहा है कि अमरीका के परमाणु बमों में ऐसी व्यवस्था की गयी है कि उनका विस्फोट तभी हो सकता है जब वे चाहेंगे। दुर्घटनावश गिरने वाले बम नहीं फट सकते। अमरीका के राजदूत तथा स्पेन के सूचनामन्त्री का स्नान इसी दावे की सत्यता का प्रदर्शन करने के लिए किया गया।

उक्त स्नानार्थियों को कोई हानि नहीं हुई।

सबसे बड़ी डकैती की फिल्म और कुछ दिलचस्प घटनाएं

इंग्लैण्ड की डाकगाड़ी में ८ अगस्त १९६३ को हुई सबसे बड़ी डकैती की पश्चिम जरमनी में टेलीविजन फिल्म बनायी गयी। यह फिल्म बड़ी सफल रही।

यह फिल्म तीन अंकों में तीन दिन तक दिखायी गयी और इसे देखने के लिए वहां के लोगों ने सिनेमा तथा थियेटर आदि जाना बन्द रखा जिससे सिनेमा, थियेटर आदि को उतना ही नुकसान हुआ जितने की डकैती हुई थी। यह राशि २६,३१,५०० पौण्ड से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिक थी (लगभग ३ करोड़ ३८ लाख रुपये)।

फिल्म के निर्माण में निर्माता को लगभग पांच लाख डालर खर्च करना पड़ा तथा एक वर्ष का समय लगा। इसकी कहानी पत्रकार और लेखक हेनरी कोलार्ज ने डाकुओं के सरदार भूतपूर्व मेजर ब्रूस रेनील्ड द्वारा बताये गये सही तथ्यों पर लिखी है।

फिल्म में अधिक से अधिक वास्तविकता लाने के लिए इसकी शूटिंग इंग्लैण्ड में की गयी थी।

इसमें २५ मुख्य अभिनेताओं और लगभग सवा सौ छोटे अभिनेताओं ने भाग लिया।

इसके निर्माण में सबसे दिलचस्प घटना तब घटी कि जब काफी श्रम के बाद इंग्लैण्ड में शूटिंग खत्म हुई तो इस बड़ी डकैती की फिल्म बनाने वाले खुद चोरी के शिकार हो गये। उनका बहुत-सा कीमती सामान रहस्यमय ढंग से चोरी चला गया। एक और दिलचस्प घटना यह घटी कि इस फिल्म में अभिनय करने वाले दो डाकू जिन्हें तीस-तीस वर्ष की सजा हुई थी और जिन्हें इस फिल्म के निर्माण तक की अवधि के लिए रिहा किया गया था, अचानक गायब हो गये।

डाकुओं के गायब होने के कारण सारा कथानक दोबारा लिखना पड़ा था।

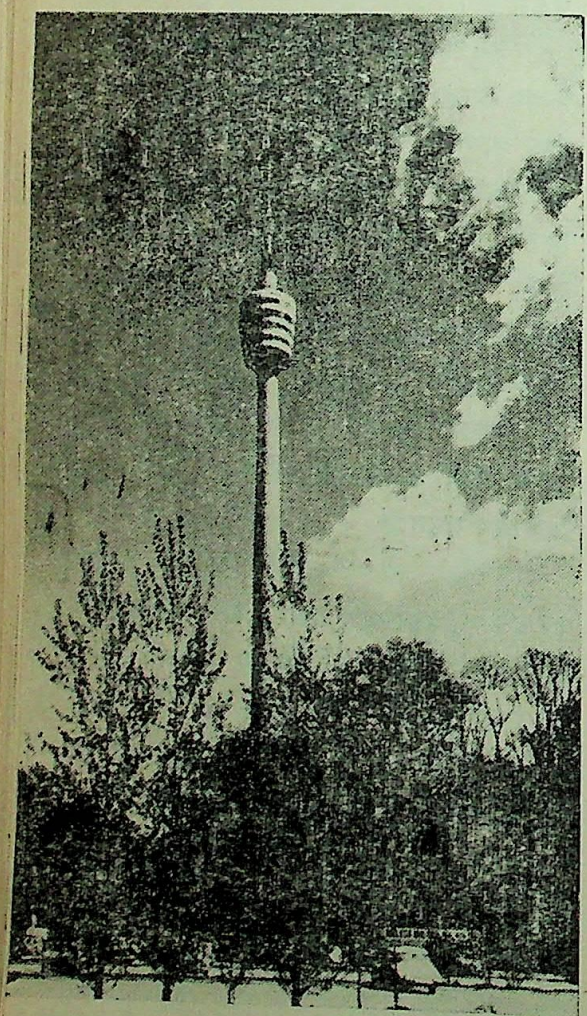

चलना-फिरना वैज्ञानिक संग्रहालय

वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के सहयोग से बिड़ला औद्योगिक तथा प्राविधिक संग्रहालय ने १७ नवम्बर १९६५ से एक चलते-फिरते संग्रहालय का आयोजन किया है। इस संग्रहालय में तीस प्रदर्शन सेट हैं जो विविध वैज्ञानिक सिद्धान्तों को भली-भांति प्रदर्शित करते हैं। इस प्रदर्शनी में सर्व-प्रथम 'हमारी परिचित विद्युत्' नामक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया है। यह बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा के सभी स्कूलों में दिखायी जायेगी। गांवों में भी इस संग्रहालय का प्रदर्शन होगा। अगली प्रदर्शनी ऊर्जा पर आधारित होगी।

टेलीविजन मीनारों के 'पिता' की १०वीं वर्षगांठ

सारे संसार में जो टेलीविजन मीनारें हैं उनके 'पिता' की दसवीं वर्ष गांठ अभी हाल ही में मनायी गयी है। दुनिया के विभिन्न देशों में १०० मीटर से अधिक ऊंचाई वाली ३५ से अधिक मीनारें हैं। स्टुटगार्ट नगर की २१७ मीटर ऊंची इस 'पिता' मीनार के ढंग पर ही सभी मीनारें निर्मित की गयी हैं। इस मीनार को देखने अब तक सारे संसार से लगभग ७२ लाख दर्शक आ चुके हैं। दस वर्षों के अन्दर इस मीनार के ऊपर एक रेस्त्रां बन गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घर में बिजली की लाइन गलना

रमेशप्रसाद शर्मा, एम. ए., बी. एस-सी.

बिजली की धारा द्वारा प्रत्येक प्रकार की सुख-सुविधा का साधन हमें अपने घर में मिलता है। बीसवीं सदी की यह अनुपम देन आपके घर के अन्दर दीवार और छत के सहारे लगे हुए तार की दुहरी लाइन द्वारा प्रवेश करती है। अंधेरे घर में उजाला करती है, रेडियो बजाती है, हीटर पर खाना पकाती है और छोटे-बड़े अनेक काम करती है।

पावर हाउस की लाइन से आने वाले दोनों तार सबसे पहले घर की देहलीज या बरामदे में लगे मीटर में से गुजरते हैं जिससे जितनी विद्युत् शक्ति प्रयोग में लाते हैं वह अंकित हो सके। मीटर में से दोनों तार मेन स्विच और फ्यूज बाक्स में से गुजरते हैं। मेन स्विच एक प्रकार का डबल पोल स्विच होता है, अतः इसे आफ कर देने के उपरान्त दोनों तारों का सम्बन्ध घर के अन्दर के सर्किट से एकदम अलग हो जाता है। यह लोहे के बने फ्यूज बाक्स के अन्दर ही होता है। इस बाक्स के दायीं ओर एक लीवर होता है जिसे नीचे गिरा देने से बाक्स खुलता है और लीवर ही मेन स्विच को आफ कर देता है। बाक्स के ढक्कन को पेच द्वारा बन्द करने और लीवर को अपनी पूर्व स्थिति में लाने पर स्विच आन हो जाता है। मेन फ्यूज बाक्स में दोनों तारों की लाइन पर मेन फ्यूज बंधे रहते हैं। यदि कभी लाइन में निश्चित् मान से अधिक प्रबल धारा बहने लगती है, तो फ्यूज तार तुरन्त ही पिघल जाता है और धारा के आगे न बहने के कारण लाइन में लगे अन्य उपकरणों को कोई नुकसान नहीं पहुंचता है।

मेन-फ्यूज बाक्स के बाद

मेन फ्यूज बाक्स से निकालकर लाइन के तार ब्रांच फ्यूज बाक्स में जाते हैं। अलग-अलग सर्किट रखने से फायदा यह होता है कि अगर फ्यूज पिघलता है, तो केवल एक ही सर्किट का, शेष सर्किट ठीक रहते हैं और उनके बल्ब और अन्य विद्युत् उपकरण काम देते रहते हैं। प्रत्येक ब्रांच सर्किट के दोनों तारों की लाइन में एक-एक फ्यूज तार लगाये जाते हैं। फ्यूज सदैव उसी एम्पियर का लगाया जाता है जितने एम्पियर की विद्युत्-धारा उस ब्रांच में बहती है। घरों में २२० वोल्ट की विद्युत्-धारा प्रवाहित होती है। एक बल्ब या विद्युत् यन्त्र के काम आने या न आने पर अन्य बल्बों या विद्युत् यन्त्रों पर असर न पड़े, इसके लिए बल्ब तथा बिजली के अन्य यन्त्र एक-दूसरे के समान्तर जोड़े जाते हैं। ऐसा करने से सभी यन्त्र एक-दूसरे से स्वतन्त्र रहते हैं। प्रत्येक विद्युत् उपकरण में विद्युत्-धारा के प्रवाहित होने या प्रवाहित होने से रोकने के लिए सिंगल पोल स्विच लगाये जाते हैं। स्विच आफ कर देने पर सर्किट टूट जाता है, अतः विद्युत्धारा का प्रवाहित होना रुक जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोर्सीलीन के बने क्लीट

स्विच आन कर देने पर विद्युत् सर्किट जुड़ जाता है और विद्युत्-धारा प्रवाहित होने लगती है। बल्बों के लिए होल्डर और रेडियो, टेबिल फैन आदि के लिए आउटलेट, जिनमें दो या तीन सूराख होते हैं, लगाये जाते हैं। टेबिल लैम्प, रेडियो या, टेबिल फैन की डोरी पर पीतल की दो या तीन पिनों वाला प्लग पिन लगाया जाता है, जो आउटलेट में फिट बैठता है।

मेन फ्यूज के लोहे के बाक्स से तांबे या लोहे का एक लम्बा तार धरती में दबी हुई एक प्लेट से जुड़ा रहता है। यह विधि ग्राउण्डिंग कहलाती है। इसके द्वारा बिजली का शाक लगने का भय नहीं रहता है।

नक्शा तैयार करना

घर के अन्दर बिजली के तार की लाइन डालने के लिए पहले एक साधारण-सा नक्शा तैयार किया जाता है। इसमें इस बात का ध्यान रखा जाता है कि घर की देहलीज से हमें तारों की लाइन किधर ले जानी है और कहां-कहां बल्ब आउटलेट फिट करने हैं। यह सब भलीभांति निश्चित हो जाने के पश्चात् गेरू और डोरी की सहायता से धरती के समानान्तर सीधी-सीधी लाइनें खींची जाती हैं। टेढ़ीमेढ़ी लाइनें बहुत ही भद्दी दिखायी देती हैं, अतः इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिये कि लाइनें पूर्णरूपेण सीधी हों। बिजली के तार अथवा केबल को जब एक कमरे से दूसरे कमरे में गुजारा जाता है, तो दीवार के अन्दर लोहे की एक नली लगायी जाती है, ताकि तार सुरक्षित रहें। इसे कण्डूत कहते हैं। कण्डूत नली के दोनों सिरों पर लकड़ी के कालर लगे रहते हैं जिनसे नली के कोर की रगड़ से तार पर लगी हुई रबर खराब न हो। नली में से तार को गुजारने का भी काम सावधानीपूर्वक करना चाहिये।

गेरू लगे धागे की सहायता से खींची हुई लाइन से थोड़ी-थोड़ी दूरी पर गिट्टक के आकार के छेद दीवार में किये जाते हैं और उन पर थोड़ा-सा सीमेण्ट लगाकर उन्हें सूराखों में इस प्रकार लगाया जाता है कि उनका अधिक चौड़ा भाग अन्दर की ओर रहे और कम चौड़ा भाग बाहर की ओर, दीवार की सतह से बिलकुल मिल जाय। अब गिट्टक के आस-पास अगर खाली जगह रह जाती है तो वह भी सीमेण्ट से भर दी जाती है। गिट्टक को कभी भी हथौड़े से ठोंकना नहीं चाहिये क्योंकि इससे गिट्टक का सिरा कमजोर हो जाता है और पेच मजबूती से नहीं पक सकता। घरों में काम आने वाले तार नंगी दशा में कभी नहीं लगाये जाते। ये सदैव ढके हुए होते हैं। इन पर रबर और रेशम का या अन्य प्रकार का कुचालक आवरण (insulating coating) चढ़ा रहता है। घरेलू काम के लिए १८ एस. जी. डब्लू. का तार (रोशनी आदि के लिए) प्रयोग में आते हैं। इसे १/१८ भी कहते हैं, जिसका मतलब होता है कि क्वाइल में १८ नम्बर का १ तार है। १/१८ के तार के अलावा ३/२२ का तार भी रोशनी आदि के काम आता है। इसका मतलब होता है कि क्वाइल में २२ नम्बर के तीन तार हैं। आजकल बिजली के तार डालने की तीन प्रमुख विधियां हैं—(१) पोर्सीलीन क्लीट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

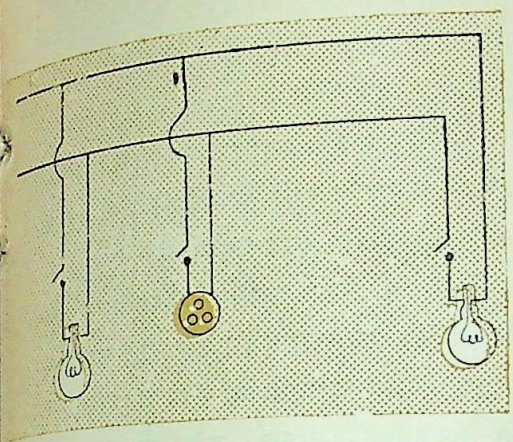

बल्ब तथा आउटलेट का समानान्तर सम्बन्ध

विधि (२) लकड़ी केसिंग विधि और (३) सी.टी.सी. वायरिंग विधि।

पोर्सीलीन क्लीट विधि

यह बिजली के तारों की लाइन बिछाने का सस्ता और विश्वस्त तरीका है। इस विधि में गिट्टकों की दूरी १० या १२ इंच से दूर नहीं होनी चाहिये। पोर्सीलीन के बने हुए क्लीटों के बीच दोनों तार एक-दूसरे के समानान्तर बिछाये जाते हैं। मुख्यतः क्लीट के दो भाग होते हैं। पहले क्लीट के नीचे वाला भाग जिसे गिट्क के ऊपर लगाया जाता है और फिर तार को खांचे में फंसाकर क्लीट का ऊपर का ढक्कन पेंच से कस दिया जाता है। इस विधि में दोष सुगमतापूर्वक पकड़े जा सकते हैं। विद्युत्-धारा के प्रवाहित होने से जो गरमी लाइन में उत्पन्न होती है, वह बड़ी आसानी से रिसती रहती है। इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि कहीं से भी तार की कोटिंग खराब होकर अर्थ न हो। इस प्रकार की वायरिंग केवल सूखे स्थान पर ही की जाती है, अधिक वर्षा वाले स्थानों पर नहीं। ऐसे स्थानों पर जहां जल्दी-जल्दी एक स्थान से दूसरे स्थान पर वायरिंग हटानी पड़ती है, यह वायरिंग अत्यन्त उपयुक्त है।

केसिंग विधि

इसके अनुसार तारें केसिंग के अन्दर समानान्तर गलियों में से गुजरती हैं और उन्हें ऊपर से कैपिंग से ढंक दिया जाता है। वायरिंग का यह भी सस्ता और सुन्दर तरीका है। दीवार और छतों पर निशान लगा लिये जाते हैं, और गिट्टकें दो-दो फुट की दूरी पर लगायी जाती हैं। पहले नक्शे के अनुसार केसिंग लगायी जाती है, फिर तारों को केसिंग के गलियारों में डालकर कैपिंग को पेच से कस दिया जाता है। कैपिंग और केसिंग के जोड़ सीधे ९० अंश पर हों, तो केसिंग के गलियारों में गोलाई कर देनी चाहिये ताकि तार के ऊपर का आवरण कटने न पाय। पृष्ठ ४० पर के चित्र में केसिंग और कैपिंग का T जोड़ दिखाया गया है। जब धन-ध्रुव और

बिजली की लाइन डालने का एक साधारण नक्शा

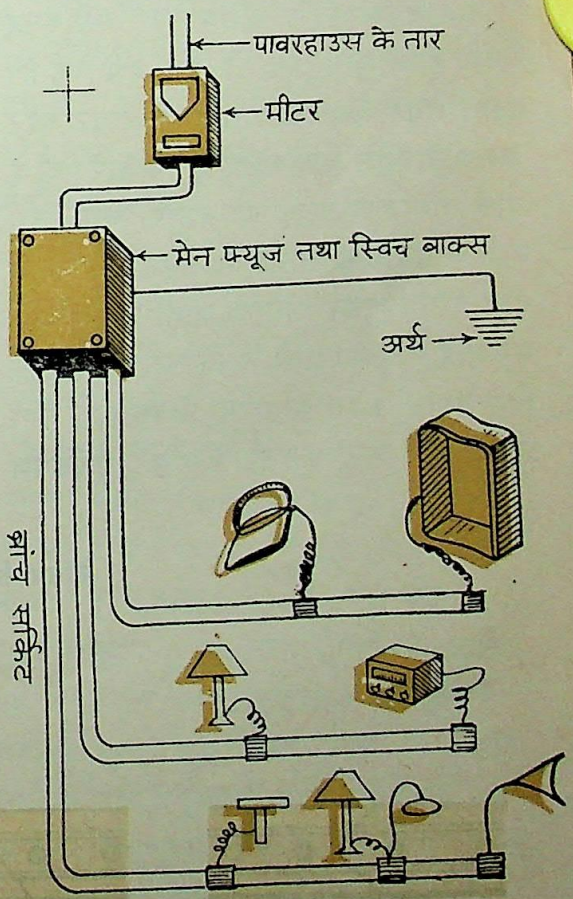

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋण-ध्रुव की तारें एक-दूसरे के ऊपर से गुजारनी हों, तो एक के ऊपर दूसरा केसिंग रखकर क्रासिंग ब्रिज बनाना चाहिये। ऊपर के टुकड़े को स्लोप अर्थात् ढालू बना दिया जाता है, ताकि कैपिंग ठीक तरह से लगायी जा सके। दीवार के कोनों पर ९० अंश का कोण लगाना चाहिये। सुन्दरता के लिए इस वायरिंग में केवल कारीगरी की आवश्यकता है। जहां तक बिजली के प्रवाह का सम्बन्ध है, यह दोषरहित विधि है, जिसका प्रयोग प्रत्येक स्थान पर हो सकता है। इसकी जांच-पड़ताल कैपिंग को खोलकर की जाती है। कैपिंग और केसिंग पर स्प्रिट वारनिश करके नमी के प्रवेश को रोका जा सकता है। गिट्टक और केसिंग के बीच चीनी का इनसूलेटर लगा देने पर भी नमी की सम्भावना समाप्त हो जाती है। इसी विधि में आग लगने का डर होता है।

सी. टी. एस. वायरिंग

आजकल जिस विधि का अधिकतर प्रयोग होता है, वह सी. टी. एस. वायरिंग है। इसमें रबर इंसूलेटेड तारों के ऊपर रबर का मोटा खोल चढ़ा रहता है। ये तारें फर्श के नीचे दीवार के अन्दर या बाहर, चाहे जिस दशा में प्रयोग में लायी जा सकती हैं। पहले पास-पास गिट्टकें लगायी जाती हैं और उन पर तार लोहे की पत्ती के बने क्लिप द्वारा कस दिये जाते हैं। इस वायरिंग में पानी या नमी प्रवेश नहीं कर सकती है। यह पूर्णरूपेण सुरक्षित है। इन तारों पर प्रयुक्त रबर किसी भी रासायनिक प्रभाव से खराब नहीं होती है और मुलायम होने के कारण बड़ी सुगमता से इधर-उधर मुड़ सकती है। ये तारें किसी भी प्रकार के रंग से रंगी जा सकती हैं, वैसे इनकी सतह साफ और सुन्दर होती है।

सी. टी. एस. विधि के लिए तार अच्छे किस्म का लेना चाहिये। इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये कि रबर का खोल तारों के इधर-उधर अच्छी तरह से चढ़ा हो। कोटिंग की रबर ऐसी हो जिस पर क्षार-अम्ल या किसी अन्य रसायन का कोई प्रभाव न हो। इस प्रकार के क्वाइल के लिए केसिंग, कण्डूत या अर्थ के तार की आवश्यकता नहीं होती। प्लास्टर, कंकरीट आदि के अन्दर दाबने में इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि कोई लोहे का टुकड़ा या कील तार में गड़ी न रह गयी हो, क्योंकि इससे हानि की आशंका रहती है। सी. टी. एस. विधि आसानी से लगायी जा सकती है और उस पर पानी, रेत, मिट्टी आदि का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। यह केबल एक कोर, दो कोर, तीन कोर का गोल या चपटा होता है। चपटी शक्ल का केबल घरेलू वायरिंग के लिए ठीक रहता है।

बिजली की लाइन डालते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि मोड़ पर तार में बट न पड़ें, क्योंकि बट पड़े हुए स्थान से तार टूट सकता है।

केसिंग विधि में जोड़

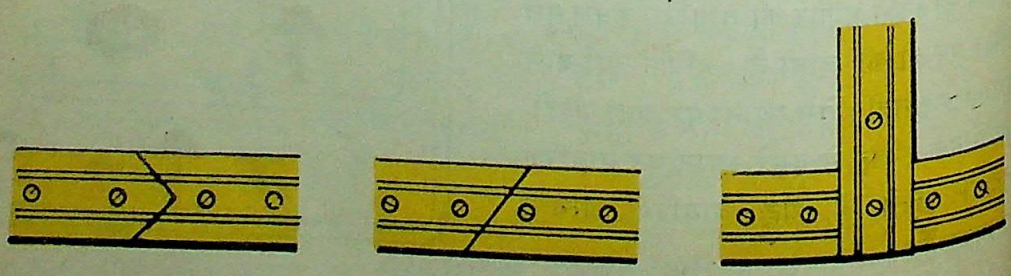

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हलदी
महत्त्वपूर्ण घरेलू ओषधि

आर. एन. सिंह, एम. एस-सी.

हमारे देश में कोई भी घर ऐसा नहीं होगा जहां हलदी का प्रयोग किसी न किसी रूप में न किया जाता हो। कहीं इसका महत्त्व पीतरंग के कारण है, तो कहीं रोगनिवारक के रूप में। कहीं यह मसाले के रूप में क्षुधा वृद्धि करती है, तो कहीं शुभसूचक होने से कामना सिद्धि करती है। घर की पाकशालाओं से लेकर वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं तक इसकी महिमा फैली है।

हलदी हमारे देश के प्रायः सभी प्रान्तों में पैदा होती है। आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा, महाराष्ट्र तथा गुजरात में सर्वाधिक, तथा केरल, मद्रास, मैसूर, बंगाल, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पंजाब में अल्प मात्रा में इसकी पैदावार होती है। निम्नलिखित तालिका से प्रत्येक प्रदेश में इसकी उपज का सानुपातिक ज्ञान प्राप्त करने में सहायता मिलेगी। ये आंकड़े एक वर्ष के हैं—

राज्य	उपज-क्षेत्र (एकड़ में)	उपज (टन में)
उड़ीसा	५४२६३	३७४७५
आन्ध्र प्रदेश	४२१५३	६३५८३
महाराष्ट्र एवं गुजरात	१८९०४	२६७८६
केरल	१११०८	१२१७१
मद्रास	७९८९	११००१
मैसूर	२७५१	२९७१
बंगाल	६००	३३१
राजस्थान	५९२	२९४
मध्य प्रदेश	५०४	१८९
उत्तर प्रदेश	२८०	५१६
पंजाब	२५	१३

इस उपज के अधिकांश भाग की खपत देश में ही होती है। केवल ८-१० प्रतिशत का निर्यात होता है जो मुख्यतः लंका, उत्तरी अमरीका, ब्रिटेन तथा अफ्रीकी देशों तक सीमित है।

हलदी की जातियां

यों तो हलदी की कई जातियां हैं, परन्तु उनमें तीन मुख्य हैं जिनके गुणों में साम्य है तथा हलदी के नाम से जानी जाती हैं। ये निम्नलिखित हैं—

(१) **सामान्य हलदी**—इसका लैटिन नाम सरकुमा लोंगा (*curcuma longa*) है तथा अंगरेजी नाम (tumeric) है। यह सितामिनासी (*scitaminaceae*) कुल की है। इसका पौधा २-३ फुट ऊंचा होता है। काण्ड सीधा तथा पत्ते १-१·५ फुट लम्बे-चौड़े होते हैं। पुष्पदण्ड ४-६ इंच लम्बा होता है जिसमें हलदी के रंग के लगभग १·५ इंच लम्बे पुष्प लगते हैं। फल लम्बा, गोलाकार और गांठदार होता है। वर्षा ऋतु में पुष्प आते हैं। इसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्द पीताभ, स्थूल और गंधयुक्त होता है।

यह कन्द ही हलदी के नाम से प्रयुक्त होता है।

(२) **आमा हलदी**—इसका लैटिन नाम सरकुमा आमाडा (*curcuma amada*) तथा कुल सितामिनासी (*scitaminaceae*) है। यह मुख्यतः बंगाल तथा मद्रास में जंगली रूप में उत्पन्न होती है। इसके कन्द गोलाकार तथा स्थूल होते हैं और उनमें कपूर या कच्चे आम की-सी गंध आती है। इसी लिए इसे आम्रगंधि हरिद्रा या कर्पूर-हरिद्रा भी कहते हैं। इसका कन्द पाचक तथा अग्निदीपक होता है और मसाले तथा अचार के रूप में प्रयुक्त होता है। घाव तथा मोच पर भी इसे बांधते हैं। कहीं-कहीं इसकी खेती भी होती है।

(३) **वन हलदी**—इसका लैटिन नाम सरकुमा अरोमेंटिका (*curcuma aromatica*) तथा कुल सितामिनासी (*scitaminaceae*) है। यह भारत में सभी जगह जंगली रूप में मिलती है। बंगाल तथा केरल में इसकी खेती भी होती है। इसका कन्द ऊपर से हलके पीले रंग का तथा भीतर रक्ताभ होता है। इसमें एक विशिष्ट गंध भी होती है। इसका प्रयोग मसाले के रूप में नहीं किया जाता, परन्तु अन्य कार्यों में हलदी के स्थान पर इसका उपयोग कर सकते हैं।

सामान्य हलदी सरकुमा लोंगा (*curcuma longa*) में भी भिन्न-भिन्न प्रदेशों तथा जलवायु में उत्पन्न होने के कारण थोड़ी विशेषता आ जाती है और इस कारण इसकी भी निम्नलिखित उपजातियां हैं—

(क) **मलाबार जाति**—यह चिकित्सा में उपयोग के लिए उत्तम मानी जाती है।

(ख) **पूना तथा बंगलौर जाति**—इसमें रंजिकद्रव्य की अधिकता होती है।

(ग) (१) **चमकीली तथा** (२) **हलकी जातियां** (brighter and lighter varieties)—ये बम्बई में प्रचलित हैं।

(घ) (१) **देशी तथा** (२) **पटना जातियां**—ये बंगाल में प्रसिद्ध हैं।

(च) (१) **चायना नाडन** (china nadan) **एवं** (२) **पेरुम नाडन** (perum nadan) **जातियां**—ये मद्रास में मिलती हैं।

(छ) (१) **जंगली तथा** (२) **मैदानी जातियां**—ये उत्पत्ति-स्थान के आधार पर मानी गयी हैं।

ये सामान्य हलदी की ही जातियां हैं और इन्हीं का प्रयोग सभी कार्यों के लिए किया जाता है। इसलिए इनके सम्बन्ध में ज्ञातव्य अन्य पहलुओं पर विचार करना आवश्यक है।

हलदी की खेती

हलदी की अच्छी उपज गरम तथा नम जलवायु में होती है। इसके लिए मुलायम दोमट जमीन जरूरी है, जहां पानी की अधिकता हो, परन्तु वह इकट्ठा न होता हो। भूमि में ऊर्वरक आदि मिलाने के बाद उसमें लगभग १६-१६ इंच के अन्तर पर क्यारियां बना लेनी चाहिये।

इन क्यारियों के ऊंचे भागों पर ६-९ इंच की दूरी पर हलदी की पुरानी फसल के कन्दों (corms) को ३ इंच गहरे गाड़ देना चाहिये। अप्रैल से जुलाई तक इसकी बोवाई होती है। ९-१० महीने में फसल तैयार हो जाती है। प्रायः फरवरी-मार्च के महीने में जब नीचे के पत्ते पीले होने लगें, तो कन्दों को खोद लेते हैं। एक एकड़ में २५,००० पौण्ड तक उपज देखी गयी है, अर्थात् लगभग से ८-१० गुनी फसल मिलती है। कभी-कभी कुछ कीटाणुओं के कारण इसके पत्ते समय से पूर्व पीले होने लगते हैं, तथा सूख भी जाते हैं। ऐसी अवस्था में उन पौधों को दूर कर देना चाहिये तथा कीटाणुनाशक दवा के घोल का छिड़काव करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हलदी की सिझाई (curing of tumeric)

कच्ची हलदी का प्रयोग बहुत कम होता है, इसलिए पहले इसे सिझाते हैं। सिझाने के लिए कच्ची हलदी को खोदकर एक स्थान पर इकट्ठा कर इसी के पत्तों से ढंककर कुछ दिनों तक रखते हैं, फिर मिट्टी या लोहे के बरतन में उबालते हैं। उबालते समय इसके २-३ इंच ऊपर तक पानी डालकर इसी की पत्तियों से ढंक देते हैं। १-५ घण्टे तक उबालने अथवा मुलायम हो जाने पर छानकर धूप में सुखा लेते हैं। ५-७ दिन तक सुखाने के पश्चात् हाथों से रगड़कर साफ कर लेते हैं। पीलापन तथा अधिक चमक लाने के लिए इसे हलदी मिले हुए इमली के घोल में डुबाते हैं या अन्य उपायों से चमकदार (polished) करते हैं।

हलदी के कन्द का मध्य भाग स्थूल होता है तथा उसमें अंगुली के आकार की शाखाएं लगी होती हैं। बड़ी-बड़ी शाखाओं को अलग कर लेते हैं, क्योंकि ये उत्तम मानी जाती हैं। इसके बाद मध्य भाग तथा छोटे-छोटे टूटे हुए टुकड़ों को भी पृथक् कर लेते हैं। कच्ची हलदी से लगभग १७-२५% सिझाई हुई हलदी प्राप्त होती है।

रासायनिक विश्लेषण

हलदी के कन्द का रासायनिक विश्लेषण करने पर आर्द्रता १३·१%, प्रोटीन ६·३%, वसा तथा स्थिर तैल ५·१%, खनिज द्रव्य ३·५%, तन्तु २·६%, कार्बोज ६९·४%, उड़नशील तैल १%, तथा इसके अतिरिक्त कैरोटिन, कर्कुमिन एवं रंजिकद्रव्य प्राप्त होते हैं।

हलदी के उपयोग

इसका बाह्य तथा आभ्यन्तर, दोनों प्रकार से चिकित्सा में प्रयोग किया जाता है। सूजन तथा दर्द के स्थानों पर, विशेषकर आघात लगने पर इसका लेप करते हैं। कच्ची हलदी का रस त्वचा पर लगाने से बाह्य कृमि मर जाते हैं तथा खाज आदि त्वचा के रोग दूर होते हैं। त्वचा के रंग को सुधारने के लिए इसे उबटन के रूप में लगाते हैं। फोड़े को पकाने के लिए इसकी पुल्टिस (poultice) और घाव को शीघ्र भरने के लिए इसके चूर्ण का मलहम लगाते हैं। आंख के शोथ में इसे हलका गरम करके सेंकते हैं। इसके धूम्र के

सामान्य हलदी में भी भिन्न-भिन्न जलवायु में उत्पन्न होने के कारण थोड़ी विशेषता आ जाती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवन से श्वास, हिचकी और मूर्च्छा में लाभ होता है।

हलदी का अन्तः प्रयोग करने पर यह रुचिवर्द्धक, क्षुधावर्द्धक, पाचक, हलकी दस्तावर तथा यकृत् से पित्त का स्राव कराती है, इसलिए इसका प्रयोग अरुचि, मन्दाग्नि, कब्ज, कामला और यकृतप्लीहा की वृद्धि में किया जाता है। दुग्ध के साथ उबालकर इसके प्रयोग से सर्दी-जुकाम तथा खांसी में लाभ होता है। श्वास-नलिकाओं के संकोचन को दूर करने से यह श्वासरोग में भी हितकर है। यह एक उत्तम रक्तशोधक मानी जाती है और इसके कुछ दिन तक प्रयोग करने से रक्तदोष से होने वाले फोड़े-फुंसियां, कुष्ठ, शीतपित्त आदि रोग सदा के लिए दूर हो जाते हैं। प्रमेह तथा पुराने बुखार में भी यह लाभप्रद है।

चिकित्सा के अतिरिक्त हलदी के अन्य व्यावसायिक उपयोग भी हैं। मसाले के रूप में यह अधिकतर प्रयोग की जाती है। ऊनी, रेशमी तथा सूती कपड़ों तथा कागज के रंगने में इसका उपयोग किया जाता है। खाद्य पदार्थ तथा ओषधि-निर्माण आदि व्यवसायों में भी इसका रंजक द्रव्य के रूप में व्यवहार करते हैं। किसी घोल की क्षारीयता (alkalinity) की जांच के लिए इससे रंगे पत्रों का ब्रिटिश फार्मेकोपिया (British Pharmacopia) में (official reagent) के रूप में समावेश किया गया है। धार्मिक दृष्टि से यह शुभसूचक मानी जाती है और विवाह आदि शुभावसरों पर इसका प्रयोग किया जाता है। ●

ग्राहकों से निवेदन

विज्ञान-लोक की एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे है। एक वर्ष का शुल्क ९ रुपये, दो वर्ष का १६ रुपये तथा तीन वर्ष का २० रुपये (विशेष रियायत) है।

पत्र-व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें। विज्ञान-लोक जिस लिफाफे में आपके पास आता है, उसी पर आपकी ग्राहक संख्या आपके पते के ऊपर लिखी रहती है।

पता बदलने की सूचना हमें एक मास पूर्व प्राप्त होनी चाहिये। इसके लिए नया और पुराना, दोनों पते भेजें। यदि छह मास से कम के लिए पता बदलवाना हो, तो कृपया अपने डाकखाने से इसकी व्यवस्था कर लें।

नये ग्राहकों को मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा किस अंक से विज्ञान-लोक भेजा जाय, यह अवश्य लिखना चाहिये।

पुराने ग्राहक अपनी सदस्यता का नवीयन (renewal) कराते समय मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा ग्राहक संख्या लिखने की कृपा करें।

विक्रय-व्यवस्थापक ※ विज्ञान-लोक ※ हास्पिटल रोड, आगरा-३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमाणु-शक्ति

वीरेन्द्रकुमार भटनागर

ज्यों-ज्यों सभ्यता बढ़ती गयी मनुष्य नये-नये शक्ति-स्रोतों की खोज करता गया। फिर भी कभी उसे सन्तोष न हुआ। यह तो मानव-स्वभाव है, पुरातन काल से नये और और नये के बारे में जानने की इच्छा बढ़ती रही है। इन्हीं नयी शक्तियों की खोज के अन्तर्गत मनुष्य को परमाणु-शक्ति का ज्ञान हुआ।

परमाणु-शक्ति ने संसार को आश्चर्य-चकित कर दिया है। नागासाकी और हिरोशिमा के परिणामों को कौन भूल सकता है? लेकिन वह तो परमाणु-शक्ति का एक दानवी रूप था। कभी यह भी समस्या थी कि इस भीषण शक्ति को किस प्रकार अधीन किया जाय। लेकिन अब वैज्ञानिकों ने उसे भी काबू में कर लिया है। आज के संसार में परमाणु-शक्ति एक वरदान और एक अभिशाप, दोनों ही रूपों में सामने आ रही है।

शक्ति का ह्रास नहीं होता

इस अपार शक्ति की तह में है क्या? यह आती कहां से है? यह शक्ति एक वैज्ञानिक नियम पर निर्धारित है और वह नियम है—संसार अमर है, अर्थात् दुनिया में कोई वस्तु नष्ट नहीं होती अपितु उसके रूप बदलते रहते हैं। उदाहणार्थ हम एक मोमबत्ती जलाते हैं, तो देखते हैं कि वह धीरे-धीरे गायब हो जाती है। यह कह सकते हैं कि मोमबत्ती जलकर नष्ट हो गयी लेकिन वास्तविकता यह है कि मोमबत्ती ने केवल रूप बदला है, नष्ट नहीं हुई है। मोमबत्ती का कुछ भाग मोम बनकर पिघल गया। कुछ भाग विभिन्न गैसों में बदल-कर वायुमण्डल में मिल गया और शेष भाग जलकर ताप और प्रकाश की शक्ति के रूप में बदल गया। मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि यदि कोई वस्तु नष्ट होती है तो नया रूप धारण कर लेती है।

इस युग में परमाणु-शक्ति का सबसे बड़ा स्रोत है यूरेनियम (uranium)। केवल कुछ ग्राम यूरेनियम में इतनी शक्ति होती है कि संसार का सब का सब पेट्रोलियम और कोयला उसकी बराबरी नहीं कर सकता। यह शक्ति है परमाणु-शक्ति (atomic-energy)। यह शक्ति कई गुना और बढ़ जाती है जब थोरियम (thorium) का ईंधन की भांति उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए यदि एक किलोग्राम यूरेनियम जलाया जाय, तो २० लाख किलोवाट प्रति घण्टा शक्ति उत्पन्न होगी, जो दो हजार टन भार के अच्छी श्रेणी के कोयले के जलने के बराबर है, अर्थात् यूरेनियम शक्ति के रूप में कोयले से बीस हजार गुना अधिक उपयोगी है। यह आश्चर्यजनक तथ्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमाणु अविभाजित रहता है

अब प्रश्न यह है कि इस भीषण शक्ति का उत्तरदायी कौन है ? उत्तरदायी है केवल परमाणु। परमाणु क्या है, इसे समझने से पहले यह समझना आवश्यक है कि संसार की प्रत्येक वस्तु विद्युतीय आवेशयुक्त सूक्ष्म कणों से बनी है। ऐसे सूक्ष्म कण से बने हुए सबसे छोटे कण को जो स्वभाव में विद्युत् आवेशरहित होता है, परमाणु कहते हैं, या दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि किसी भी पदार्थ का परमाणु वह छोटा से छोटा भाग है जिसका और भाग नहीं किया जा सकता। इस परमाणु में उस वस्तु के सभी गुण विद्यमान रहते हैं। परमाणु का एक नाभिक (nucleus) होता है जिसमें धन आवेशयुक्त कण, प्रोटान तथा निष्क्रिय विद्युतीय कण न्यूट्रान होते हैं। प्रोटान और न्यूट्रान के चारों ओर ऋण विद्युतीय सूक्ष्म कणों के बादल छाये रहते हैं जिन्हें इलेक्ट्रान कहते हैं। मोटे तौर पर एक परमाणु का भार उसके प्रोटीन और न्यूट्रान के भार के योग के बराबर होता है। यह उल्लेख्य है कि एक प्रोटोन का भार १८३७ ए. एम. यू. है जो एक न्यूट्रान से १.००७५८ ए. एम. यू. गुना अधिक होता है। (एक १ ए. एम. यू. = १.६६ × १०$^{-२४}$ ग्राम।)

जिस प्रकार सूर्य सौरमण्डल के केन्द्र में स्थिर रहता है और अन्य ग्रह उसके चारों ओर घूमते हैं, उसी प्रकार प्रोटान और न्यूट्रान के चारों ओर इलेक्ट्रान चक्कर लगाते हैं; और जिस प्रकार इन सब ग्रहों और सूर्य के मध्य एक आकर्षणशक्ति काम करती है उसी प्रकार इलेक्ट्रान और प्रोटान के बीच भी एक आकर्षणशक्ति काम करती है। यह आकर्षणशक्ति सन्तुलित रहती है प्रोटान और न्यूट्रान केन्द्र में स्थिर रहते हैं और इलेक्ट्रान उनके चक्कर लगाते हैं। इलेक्ट्रान और प्रोटान के मध्य की आकर्षणशक्ति को नाभिकीय बाइण्डिग शक्ति (nuclear binding energy) कहते हैं। भिन्न-भिन्न पदार्थों के अणुओं में यह शक्ति भिन्न-भिन्न होती है। सबसे अधिक बाइण्डिग शक्ति चांदी के परमाणु में होती है और सबसे कम यूरेनियम २३८ तत्त्व के परमाणु में होती है।

किसी भी परमाणु का विघटन (disintegration) तभी सम्भव है जब किसी प्रकार उसकी बाइण्डिग शक्ति के बराबर या उससे कुछ अधिक शक्ति उस परमाणु के केन्द्र पर लगायी जाय। प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि चांदी की नाभिकीय बाइण्डिग शक्ति लगभग ८·७ Mev और यूरेनियम-२३८ की ७·५ Mev होती है। चूंकि यूरेनियम २३८ की बाइण्डिग शक्ति कम होती है, अतः इसे ही आसानी से तोड़ा जा सकता है, और परमाणु ईंधन की भांति इसका प्रयोग कर सकते हैं।

एक महत्त्वपूर्ण क्रिया न्यूट्रान से प्रारम्भ होती है

आइंस्टीन के अनुसार शक्ति (E) किसी भी पदार्थ के विघटित भार (m) के अनुसार $E=mc^2$ समीकरण से दी जा सकती है। यहां पर c प्रकाश का शून्य (vacuum) में वेग है। यदि किसी भी परमाणु का भार किसी भी विघटन क्रिया के बाद Δm कम हो जाता है, तो इस विघटन से एक निश्चित मात्रा की शक्ति ΔE उत्पन्न होती है जो निम्न समीकरण से दी जा सकती है—

$$\Delta E = \Delta m \times c^2$$

परमाणु-क्रिया के शुरू होने से पहले परमाणु का केन्द्र पर अपने इलेक्ट्रोस्टेटिक या बाइण्डिग शक्ति के बराबर की शक्ति का होना अतिआवश्यक है। सिद्धान्तत : यह शक्ति किसी भी तत्त्व (element) के केन्द्र पर बहुत ही बेग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाले न्यूट्रान कणों से बमबारी कराने से उत्पन्न की जा सकती है। इन न्यूट्रान कणों को बहुत ही तीव्र गति से गतिमान किया जाता है। जिस उपकरण द्वारा इन्हें गति दी जाती है उसे साइक्लोट्रान (cyclotron) कहते हैं।

परमाणु-शक्ति को उत्पन्न करने के लिए एक क्रिया की आवश्यकता होती है जो शुरू में केवल एक न्यूट्रान से आरम्भ होती है। क्रिया शुरू होने के बाद काफी अधिक मात्रा में न्यूट्रान उन परमाणुओं से बाहर निकल आते हैं, जिन पर बमबारी की जाती है। यह क्रिया स्वयं ही क्रम में रहती है। सबसे पहले यह क्रिया १९३९ में देखी गयी थी। इसे नाभिकीय विखण्डन (nuclear fission) कहते हैं।

जब सैकडों तीव्र गति वाले न्यूट्रान किसी भी तत्त्व पर गिरते हैं, तो उनमें से शुरू में एक न्यूट्रान तत्त्व का परमाणु केन्द्र से बाहर निकल आता है और इस प्रकार वह दो भागों में विभाजित हो जाता है। इस विभाजन क्रिया में काफी मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न होती है जो रेडियो-सक्रिय विघटन से कई गुना अधिक होती है। लेकिन यह कोई मुख्य लाभ नहीं है। यही एक खास बात जो नाभिकीय विखण्डन में है जिससे भीषण शक्ति विखण्डन क्रिया द्वारा प्राप्त की जाती है जिसमें सैकड़ों न्यूट्रान निकल आते हैं। ये न्यूट्रान और भी काफी वेग वाले होते हैं। ये वेग वाले न्यूट्रान पास के परमाणु कणों के केन्द्र पर प्रहार करते हैं जिससे और अधिक मात्रा में न्यूट्रान निकलने शुरू हो जाते हैं। जिस मात्रा में यह प्रतिक्रिया बढ़ती जाती है उसी मात्रा में ऊर्जा भी बढ़ती जाती है।

नाभिकीय विखण्डन क्रिया और सूत्रों का जाल

अब हमें यह देखना है कि यूरेनियम २३५ से कितनी ऊर्जा उत्पन्न हो सकती है। प्रयोगों द्वारा यह देखा गया है कि नाभिकीय विखण्डन में यूरेनियम परमाणु दो भाग में विभक्त हो जाता है जिनकी भार संख्या (mass number) ९५ और १३९ है और योग २३४ है। बाकी बचे हुए दो-आण्विक-भार-इकाई (two atomic mass unit) दो न्यूट्रान स्वतन्त्र करते हैं जिन्हें निम्नलिखित सूत्र से दिखा सकते हैं—

$$_{92}U^{235} + {}_{0}n^{1} = {}_{92}U^{95} + {}_{92}U^{139} + 2n^{1}$$

यहां U^{235} का परमाणु भार (atomic mass) २३५·१२४ ए.एम.यू. तथा एक न्यूट्रान का भार १.००८९ ए.एम.यू. है, अतः नाभिक विखण्डन क्रिया से पहले कुल भार २३५·१२४ + १·००८९ = २३६·१३२९ ए.एम.यू. हुआ। यह जानना लाभदायक होगा कि इस यूरेनियम के स्थिर आइसोटोपों (isotopes) का भार जिनकी भार संख्या ९५ और १३९ है, क्रमशः ९४.९४५ और १३८.९५५ है और स्वतन्त्र हुए न्यूट्रान का भार २ × १·००८९ = २·०१७८ ए.एम.यू. है, अतः भार की कमी (सम्पूर्ण क्रिया में)—

$$\Delta m = २३६·१३२९ - २३५·९१७८$$
$$= ०·२१५१ \text{ ए. एम. यू.}$$

अतः उत्पन्न ऊर्जा—

$$\Delta E = \Delta m \times c^2$$
$$= (०·२१५१ \times १·६६ \times १०^{-२४})(३ \times १०^{१०})^{२}।$$

क्योंकि १ ए.एम.यू. = १·६६ × १०$^{-२४}$ ग्राम

और c = ३ × १०^{१०} से.मी./प्र.से.

अतः—

$$\Delta E = ०·२१५१ \times १·६६ \times १०^{-२४} \text{ ग्राम} \times ९ \times १०^{२०}$$
$$= ०·२१५१ \times १·४९ \times १०^{-३} \text{ (अर्ग)}$$
$$= ०·२१५१ \times १·४९ \times १०^{-३} \times १०^{-७} \text{ जूल}$$
$$= ०·२१५१ \times १·४९ \times १०^{-१०} \text{ जूल।}$$

चूंकि १०^{७} अर्ग = १ जूल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और १ जूल $= ६\cdot२४२ \times १०^{१८}$ ev

अतः $\Delta EZ0\cdot2151 \times १\cdot४६ \times १०^{-१०}$

$६\cdot२४२ \times १०^{१८}$ ev

$= ०\cdot२१५१ \times ६३१ \times १०^{६}$ ev

= २०० Mev (लगभग)।

वास्तविक विखण्डन क्रिया में U^{235} से उत्पन्न हुई ऊर्जा १६५ से २०० Mev होती है, अतःएक किलोग्राम U^{235} के केन्द्र से विखण्डन क्रिया में उत्पन्न हुई ऊर्जा ४.७५ × १०२६, होगी एक किलोग्राम U^{235} से उत्पन्न हुई ऊर्जा २,००,००,००० किलोवाट अवर होगी।

शृंखला प्रक्रिया को नियन्त्रित करना आवश्यक है

जब एक न्यूट्रान एक परमाणु के केन्द्र से टकराता है, तो दो न्यूट्रान स्वतन्त्र होते हैं। इन दो न्यूट्रानों से चार, और चार से आठ और आठ से सोलह। इस प्रकार न्यूट्रानों की संख्या बढ़ती जाती है।

इस क्रिया को शृंखला प्रक्रिया (chain-reaction) कहते हैं। जब शृंखला प्रक्रिया शुरू हो जाती है, तो इससे अपरिमित मात्रा की उष्मा ऊर्जा उत्पन्न होती है, और यदि यह शृंखला प्रक्रिया नियन्त्रित न की जाय, तो एक समय ऐसा आयेगा कि भीषण विस्फोट हो जायेगा (यही सिद्धान्त परमाणु बम में लागू होता है)।

यह शृंखला प्रक्रिया नियन्त्रित की जाती है ताकि एक सुनिश्चित मात्रा से अधिक उष्मा ऊर्जा न उत्पन्न हो सके। तभी इस उष्मा ऊर्जा को उपयोगी कार्य में ला सकते हैं। जब उष्मा ऊर्जा उत्पन्न हुई और भली भांति नियन्त्रित हो गयी, तो इसे विद्युत उत्पादन में भी ला सकते हैं।

यह नियन्त्रित शृंखला प्रक्रिया एक उपकरण में सम्पन्न जाती है जिसे परमाणु भट्टी (atomic reactor) कहते हैं। परमाणु भट्टी एक विशेष प्रकार की भट्टी होती है जिसमें परमाणु एक-एककर जलते हैं और मुख्यतः उष्मा ऊर्जा उत्पन्न होती हैं।

यह शक्ति ठण्डे करने वाले यन्त्रों (coolent) द्वारा ग्रहण कर ली जाती है जिसके द्वारा यह शक्ति काफी दूर तक भेजी जा सकती है।

एक परमाणु भट्टी में निम्नलिखित मुख्य भाग होते हैं—

१. ईंधन (reactor core)
२. मन्दक (moderator)
३. शीतलीकारक (coolent)
४. नियन्त्रण-छड़ें (control-rods)
५. परावर्तक (reflector)
६. रक्षक (shield)

ईंधन

ईंधन द्वारा रिऐक्टर कोर बनाये। जाते हैं जो यूरेनियम २३८ से भरपूर होते हैं। फिर भी इनके स्थान पर प्लूटोनियम (plutonium) और कृत्रिम यूरेनियम-२३३ (artificial $U^{२३३}$) का भी उपयोग कर सकते हैं।

मन्दक

शृंखला-प्रक्रिया को नियन्त्रित करने के लिए मन्दक की आवश्यकता होती है। मन्दक कम भार-संख्या वाले तत्त्वों का बना होता है जिसमें अत्याधिक मात्रा में न्यूट्रानों सोखने की क्षमता होती है। जो वस्तुएं मन्दक की भांति उपयोग में लायी जाती हैं, वे हैं—साधारण पानी, भारी पानी (heavy-water), बेरीलियम (barilium), बेरीलियम आक्साइड (barilium oxide), ग्रेफाइट (graphite), कुछ अन्य कार्बनिक पदार्थ आदि।

इन सब में सबसे अच्छा मन्दक भारी पानी (heavy water) होता है, लेकिन यह बहुत ही मंहगा पड़ता है, क्योंकि साधारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

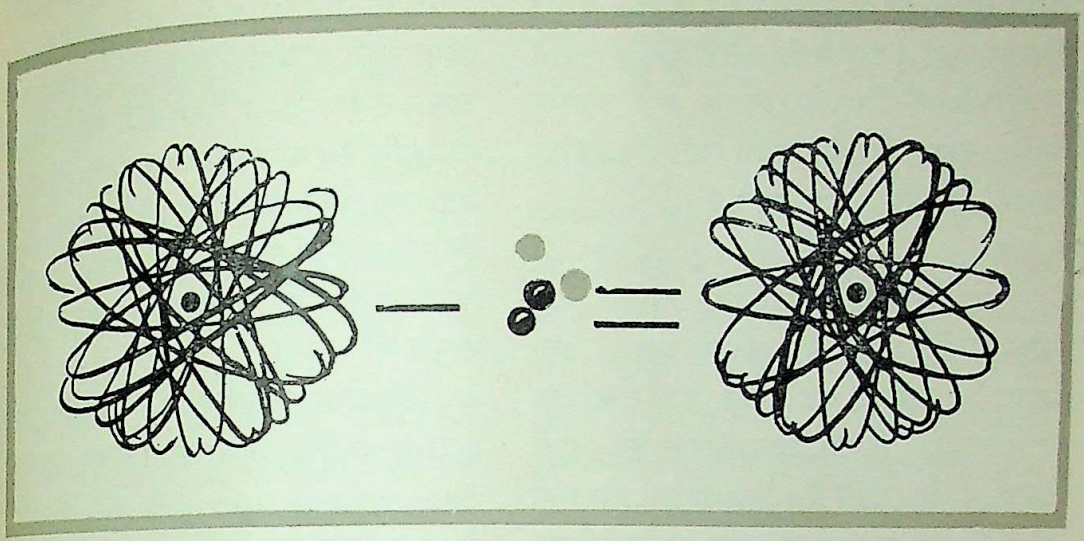

भारी नाभिक वाले परमाणुओं की रेडियो-सक्रियता का एक उदाहरण। एक अल्फा कण विसर्जित करके नाभिक अतिरिक्त भार से मुक्त हो जाते हैं (चित्र)—जब अल्फा कण—एक हीलियम नाभिक—रेडियम नाभिक से पृथक होता है, तो रेडियम (Ra) रेडन (Rn) में परिवर्तित हो जाता है

$$({}^{२२६}_{८८}\,Ra - {}^{४}_{२}He = {}^{२२२}_{८६}Rn)$$

पानी में इसका अनुपात १ : ६,००० होता है।

शीतलीकारक

शीतलीकारक का उपयोग निम्नलिखित कारण से करते हैं—विखण्डन द्वारा उत्पन्न हुई ताप उर्जा को बाष्प उत्पादक यन्त्र (boiler) तक पहुंचाने के लिए, जिससे क्रियाकारक का तापक्रम स्थिर रहे और दीवारें अत्यधिक तापक्रम पर पिघल अथवा धसक न जायें। विखण्डन से उत्पन्न-उर्जा की मात्रा शीतलीकारक द्वारा ले आयी गयी ऊर्जा के समानुपाती होती है।

आमतौर पर निम्नलिखित शीतलीकारक का उपयोग होता है—हवा, कार्बन डाई-आक्साइड गैस (Co_2), हाइड्रोजन गैस (H_2), हीलियम गैस (He), साधारण पानी, कार्बनिक द्रव पदार्थ (organic liquids), सोडियम (Na), पोटैशियम (K), पोटैशियम-सोडियम मिश्रधातु (K-Na alloy) और लेड-बिसमथ मिश्रधातु (Pb-Bi alloy) इत्यादि।

नियन्त्रण-छड़ें

नियन्त्रण-छड़ों का उपयोग नाभिकीय विखण्डन को एकदम रोकने या विखण्डन को नियन्त्रित करने के लिए किया जाता है। नियन्त्रण-छड़ें बोरोन(boron)और कैडमियम (cadmium)की बनी होती हैं। इन धातुओं में न्यूट्रान को सोखने का गुण होता है, अर्थात् इन पर गिरने वाले सभी न्यूट्रानों को ये बिना किसी अपने नुकसान के सोख लेती हैं। श्रृंखला प्रक्रिया को किसी भी गति पर इन छड़ों की स्थिति के अनुसार स्थिर रखा जा सकता है और कैडमियम या बोरोन की छड़ों को और अधिक क्रियाकारक के अन्दर खिसकाकर श्रृंखला प्रक्रिया को एकदम रोका जा सकता है।

परावर्तक

ये भी उसी पदार्थ के बने होते हैं जिनका मन्दक बना होता है। तीव्र गति वाले कण यानी न्यूट्रान अपनी तीव्र गति के कारण काफी मात्रा में शक्ति अपने में निहित रखते हैं और इनमें यह सामर्थ्य होती है कि किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी क्रियाकारक की दीवार को छेदकर बाहर निकल जायें। इन कणों को बाहर निकलने से रोकने के लिए परावर्तक का उपयोग किया जाता है। ये भट्ठी की दीवारों पर अन्दर की तरफ लगाये जाते हैं।

रक्षक

जो न्यूट्रान परावर्तक द्वारा नहीं रोके जाते उन्हें इस रक्षक द्वारा रोका जाता है। रक्षक ७ फुट मोटी, कंक्रीट की एक दीवार होती है जो क्रियाकारक को चारों तरफ से घेरे रहती है। इस दीवार द्वारा ही भट्ठी पर काम करने वाले व्यक्ति रेडियो-सक्रिय किरणों (गामा और न्यूट्रान) से बच पाते हैं। थोड़ी मात्रा में न्यूट्रान किरणों से मनुष्य की मृत्यु हो सकती है। गामा किरणें कुछ कम संघातक होती हैं, लेकिन थोड़े से ही समय में ये भी मनुष्य की मृत्यु का कारण बन सकती हैं।

विद्युत शक्ति का उत्पादन

नाभिकीय विखण्डन में जितनी ऊर्जा उत्पन्न होती है वह करीब-करीब सब की सब उष्मा ऊर्जा में बदल जाती है। यूरेनियम में उष्मा ऊर्जा उत्पन्न करने का घनत्व सैकड़ों वाट प्रति घन सेण्टीमीटर तक पहुंच सकता है। अतः अब केवल यह समस्या रह जाती है कि इस उष्मा ऊर्जा को किस प्रकार स्थानान्तरित किया जाय, और इससे किस प्रकार विद्युत् उत्पन्न की जाय।

इसका सरल तरीका है कि शीतलीकारक द्वारा लायी गयी उष्मा ऊर्जा बाष्प उत्पादकों (steam generators) में भेज दी जाती है। यह उष्मा ऊर्जा बाष्प उत्पादकों को गरम करती है और काफी मात्रा में भाप उत्पन्न होती है। इस उत्पन्न हुई भाप को बाष्प टरबाइनों (steam turbines) को चलाने के उपयोग में लाया जाता है। अब इन चलती हुई टरबाइनों से बड़े-बड़े विद्युत् उत्पादक (electric generator) आसानी से चलाये जा सकते हैं और यूरेनियम की थोड़ी मात्रा से बहुत ही अधिक विद्युत् शक्ति उत्पन्न की जा सकती है।●

बृहस्पति उपग्रहों में अस्थायी वातावरण

सोवियत खगोल-शास्त्रियों ने बृहस्पति के तीन उपग्रहों में अस्थायी वातावरण का पता लगाया है। इसकी पुष्टि पुलकोवो वेधशाला में प्राप्त वर्णक्रम चित्रों ने कर दी है।

खगोल-शास्त्रियों ने वर्णक्रम चित्रों में विशेष प्रकार की अवशोषण रेखाएं देखी हैं। इन रेखाओं के अध्ययन से पता चलता है कि खगोलीय पिण्ड में वातावरण है। इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि सूर्य के वर्णक्रम चित्रों में इस प्रकार की रेखाएं नहीं हैं।

यह पाया गया है कि ये अवशोषण रेखाएं कभी दिखायी देती हैं, कभी नहीं। इस तथ्य के आधार पर खगोल-शास्त्रियों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि बृहस्पति के उपग्रहों में वातावरण है, किन्तु अस्थायी प्रकृति का है।

नये प्रकार का रेडियो दूरदर्शी

इस ब्रह्माण्ड में ऐसे अनेक नक्षत्र हैं जो रेडियो संकेत भेजते रहते हैं। इन दूरस्थ पिण्डों का अध्ययन करने के लिए रेडियो दूरदर्शी आवश्यक होता है। रूस की यूक्रेनियन अकादमी आफ साइन्सेज के रेडियो भौतिकी संस्थान द्वारा खार्कोव नामक स्थान पर एक नये रेडियो दूरदर्शी का निर्माण किया जा रहा है।

इस दूरदर्शी का आकार अंगरेजी अक्षर टी (T) की तरह होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान के बढ़ते चरण···

तेजनारायण सक्सेना

अगर भारत में आज दूध की नदियां सूख चुकी हैं तो क्या हुआ। इस युग में एक ऐसा भी देश है जहां दूध के नल बहते हैं। वह देश है यूरोप का स्विट्जरलैण्ड।

आल्प्स पर्वत की बर्फीली चोटियों पर पनीर बनाने के लिए यह आवश्यक है कि दूध गाय से निकलने के डेढ़ घण्टे के भीतर मशीन में पहुंच जाय। इसके लिए विभिन्न साधनों का प्रयोग किया गया लेकिन उनमें समय के साथ-साथ खर्च भी अधिक लगा। अन्त में प्रयोगों के बाद प्लास्टिक के बने नल दुग्धवाहन के लिए सर्वोत्तम पाये गये। इन नलों ने दुर्गम घाटियों के बीच ट्रकों और ट्रालियों के भेजे जाने का खतरा भी मिटा दिया।

इन दुग्धवाहक नलियों को लैकटोडक्ट्स (lactoducts) कहते हैं। इनका व्यास आधा इंच होता है। इन्हें पृथ्वी के भीतर प्रायः डेढ़ फुट की गहराई में बिछाया जाता है। जहां घाटियां या नदियां रास्ते में पड़ती हैं, वहां इन्हें तार के रस्सों द्वारा लटका दिया जाता है। एक गांव में इन नलों का सत्ताईस मील लम्बा जाल बिछा है; इसके बावजूद वहां और नल बिछाये जाने की योजना है।

वातानुकूलित व्यक्ति

और नलियों में दूध बहता रहेगा···लेकिन क्या आदमी वातानुकूलित हो सकता है?

अभी तक आप घरों, कारखानों, छविगृहों आदि को ही वातानुकूलित होते देखते थे। शायद वह समय भी जल्द आ सकता है, जब हम स्वयं भी वातानुकूलित होकर यहां-वहां घूम सकेंगे! यदि ऐसा हुआ, तो इसका श्रेय निश्चय ही अमरीका के ऐकिन (Aiken) शहर की सैवाना नदी प्रयोगशाला में हो रहे अनुसन्धान को देना होगा, जहां वैज्ञानिक इस काम में लगे हैं। वे उठाये जा सकने वाले (portable) वातानुकूलक (air-conditoiner) बनाने के लिए खोज कर रहे हैं। इसे व्यक्ति अपनी भुजाओं में तावीज की तरह बांध सकेंगे, या कमरबन्द में अटका सकेंगे।

साथ ही वे एक छोटा-सा रेफ्रीजिरेटर भी बना रहे हैं। इसका सबसे बड़ा लाभ कारखानों में काम करने वाले उन मजदूरों को होगा जिन्हें उष्ण कमरों में रक्षात्मक कपड़े पहनने पड़ते हैं। अनुमान है कि यह रेफ्रीजिरेटर एक फुट लम्बा होगा और इसका भार लगभग छह औंस होगा। इसे शरीर के साथ कपड़ों के भीतर ऐसी जगह बांधा जा सकेगा, जहां यह शरीर के अवयवों के चलाने में बाधक न बने। यह यन्त्र १९३७ में एक फ्रांसीसी धातु-विशेषज्ञ द्वारा निर्मित उपकरण, 'वोर्टेक्स ट्यूब' (vortex tube) के आधार पर बनाया जा रहा है।

एक···दो···तीन!

···विज्ञान के चरण बढ़ते जा रहे हैं।

इंग्लैण्ड में हुए एक अनुसन्धान ने तैराकों की शिकायतें दूर की हैं। इस यन्त्र का प्रमुख सरकिट (circuit) हर आरम्भ स्थान पर लगे एक-एक ध्वनि यन्त्र को एक साथ चलाने के साथ-साथ तैराकों के खड़े होने के प्लेटफार्म में कम्पन पैदा करता है। पुरानी विधि के अनुसार प्रतियोगिताएं गोली दागकर शुरू की जाती रही हैं। इस नयी खोज से पुरानी प्रथा की कमियों को हटा दिया गया है। इसका सबसे अधिक लाभ उठायेंगे वे तैराक जिनकी श्रवण शक्ति कमजोर है और वे, जो बन्दूक के दागने के स्थल से दूर रहते हैं, क्योंकि यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाया गया है कि बन्दूक के पास का पहला प्रतियोगी अपने अन्तिम प्रतियोगी की तुलना में ०.०६ सेकण्ड पहले ही धमाके को सुनकर चल देता है। इससे उसे औरों की तुलना में निश्चय ही लाभ होता है।

दो प्रतियोगियों के बीच समय के इस फर्क को हटाने के लिए प्रतियोगी को पहले इलेक्ट्रानिक विधि से नियन्त्रित छड़ों को पकड़े रहना होगा। यदि प्रतियोगी समय से पहले छड़ को छोड़ देगा, तो इससे एक स्वचालित अलार्म बज उठेगा। अलार्म के बजते ही प्रतियोगी के पथ पर अपने-आप एक रस्सा गिर पड़ेगा और उसका पथ अवरुद्ध हो जायेगा। प्रतियोगिता के अन्त में तैराकों को रबर के एक हत्थे को छूना होगा जिसका सम्बन्ध धातु की एक प्लेट से होगा। धातु की प्लेट पर धक्का पड़ते ही उक्त पथ पर लगी घड़ी बन्द हो जायेगी और प्रतियोगी द्वारा लगाया गया समय घड़ी में दर्ज हो जायगा।

आरम्भ तथा समयांकन की यह विधि एक सेकण्ड के हजारवें भाग तक सही समय अंकित करती है। इसका संचालन एक मेगासाइकल क्रिस्टल आसिलेटर (one megacycle crystle oscillator) द्वारा होता है जो एक ही समय में एक साथ आठ पथों पर नियन्त्रण रख सकता है।

पाइपलाइन द्वारा यात्रियों का पार्सल !

…और दौड़ की बात अलग…

कनीक इंस्टीट्यूट, अमरीका के जे. वी. फोया एक अनोखा प्रयोग कर रहे हैं। अमरीका थलसेना से उन्हें दस लाख डालर की वित्तीय सहायता मिली है। फोआ के प्रयोगों से अब जेट-शक्ति द्वारा गतिमान डिब्बों के भीतर पहले सामान और फिर मनुष्य को भी दो हजार मील प्रति घण्टे की गति से भेजा जा सकेगा। यह गति प्रस्तावित यात्री सुपरसोनिक विमान की गति से भी अधिक है।

आजकल फोआ न्यूयार्क के पास मिली तीन मील लम्बी भूमि में ऐसी ही एक पाइप-लाइन बिछाने में व्यस्त हैं। वे सोनिक (sonic) दबाव को निष्क्रिय करने के अतिरिक्त प्रस्तावित जेट-गाड़ी के सन्तुलन तथा उसे ताप के कुप्रभावों से बचाने के उपायों पर भी खोज कर रहे हैं।

देखना है कि वे कब सफल होते हैं और इस हवा में उड़ने के स्वप्न देखते-देखते कब हवा की जगह भूमि के भीतर बिछी पाइप-लाइन में ही उड़ने में सफल हो पाते हैं। ●

मानसिक रोगों की जांच के लिए नया उपकरण

अमरीका में मानसिक रोगों की जांच के लिए एक नया उपकरण तैयार किया गया है। जिस व्यक्ति के मस्तिष्क की जांच करनी होती है, उसके मस्तिष्क में पहले सूई द्वारा रेडियो-सक्रिय पदार्थ पहुँचा दिया जाता है। उसके बाद इस यन्त्र के प्रोब को उस मनुष्य के सिर पर रखकर आगे-पीछे सरकाते हैं। ये प्रोब रेडियो-सक्रिय पदार्थों से निकलने वाले विकिरणों का पता लगाते हैं, और उनसे प्राप्त होने वाले सन्देश कागज पर बिन्दुओं के रूप में और फोटोग्राफिक फिल्म पर प्रकाश के रूप में अंकित हो जाते हैं। ये संकेत चिकित्सकों को मानसिक विकारों का पता लगाने में सहायता देते हैं।

उष्ण ब्रह्माण्ड का सिद्धान्त

सोवियत रूस के विताली गिंजवर्ग तथा लियोनिड ओर्जेनय नामक वैज्ञानिकों ने यह स्थापना की है कि हमारी पृथ्वी उतनी ठण्डी नहीं जितनी हम उसे समझते हैं। कास्मिक किरणें अन्तरिक्ष में शक्तिशाली अधिवाह प्रक्षेपित करती हैं। ये अधिवाह प्लाज्मा किरणें उत्पन्न करते हैं जो बड़ी मात्रा में उष्मा में रूपान्तरित हो जाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

निश्चय ही पिछले दिनों तुम अपनी परीक्षाओं में व्यस्त थे, फिर भी पत्र लिखने के लिए समय निकालते रहे। इस बार मिले तुम्हारे पत्रों में अधिकांश डाक्टर पीटर द्वारा आविष्कृत उस दवा के सम्बन्ध में है जिसके प्रभाव का वर्णन मार्च अंक की वैज्ञानिक कहानी **'नवरसायन'** में है। कुछ सदस्यों ने पूछा है कि यह दवा कहां मिलती है और सामान्य असर के लिए कितनी मात्रा में इसका सेवन करना चाहिये।

'नवरसायन' प्रसिद्ध कहानीकार एच.जी. वेल्स की कल्पना है। यह कहना कठिन है कि क्या कभी कोई पीटर नामक डाक्टर था और उसने ऐसी दवा का आविष्कार करना चाहा था।

यदि एच. जी. वेल्स जीवित होते तो इस प्रश्न का उत्तर दे सकते। फिर भी सम्भावना है कि उनकी और कहानियों की तरह यह भी काल्पनिक ही है। यह उल्लेख्य है कि आज वैज्ञानिक ऐसी ओषधि बनाने का यत्न कर रहे हैं जिससे व्यक्ति की कार्यक्षमता बढ़ जाय, परन्तु शरीर के विभिन्न संस्थानों तथा अवयवों पर हानिकारक प्रभाव न पड़े। शक्तिवर्द्धक ओषधियां तो प्रचलित हैं ही।

मार्च अंक तुमने बहुत पसन्द किया, यह तुम्हारे पत्रों से विदित है—

पंकजकुमार, (बिलासपुर) : **'सेब'** (कीर्तिमोहन) में विशिष्ट पद्धतियों से सेबों की जातियों के विकास का परिचय मिलता है। **'पेंगुइन'** (विश्वम्भरदत्त नौटियाल) अत्यन्त रोचक है।

आभाकुमारी मल्होत्रा (आसनसोल): **'ऊर्जा भंवर'** (एस.पी. मिश्र) परमाणु के असीम शक्ति-स्रोत की सम्भावनाओं से परिचय कराता है। **'पीड़ा'** (बी. मोहन) रोचक तथा सूचनाप्रधान है।

जीवनप्रसाद (वाराणसी): **'एक्सोलोटल'** (महेश्वरसिंह सूद) में एक अनोखे जन्तु से परिचय मिलता है। कृपया हर माह इस तरह का लेख दिया करें।

...और मुझे आशा है, इस बार गरमी की छुट्टियों का तुम विज्ञान के अध्ययन में सदुपयोग करोगे। तुम्हारे पत्रों की प्रतीक्षा रहेगी।

सस्नेह तुम्हारी,
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ७३ के विजेता

प्रथम पुरस्कार

महेन्द्र कुलश्रेष्ठ (१४०००) जमशेदपुर।

द्वितीय पुरस्कार

अम्बरीशकुमार १०५०० नयी दिल्ली, गोपालसिंह वर्मा १३३११ मेरठ।

तृतीय पुरस्कार

राधेश्याम गुप्ता १५८४ आगरा।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ७५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

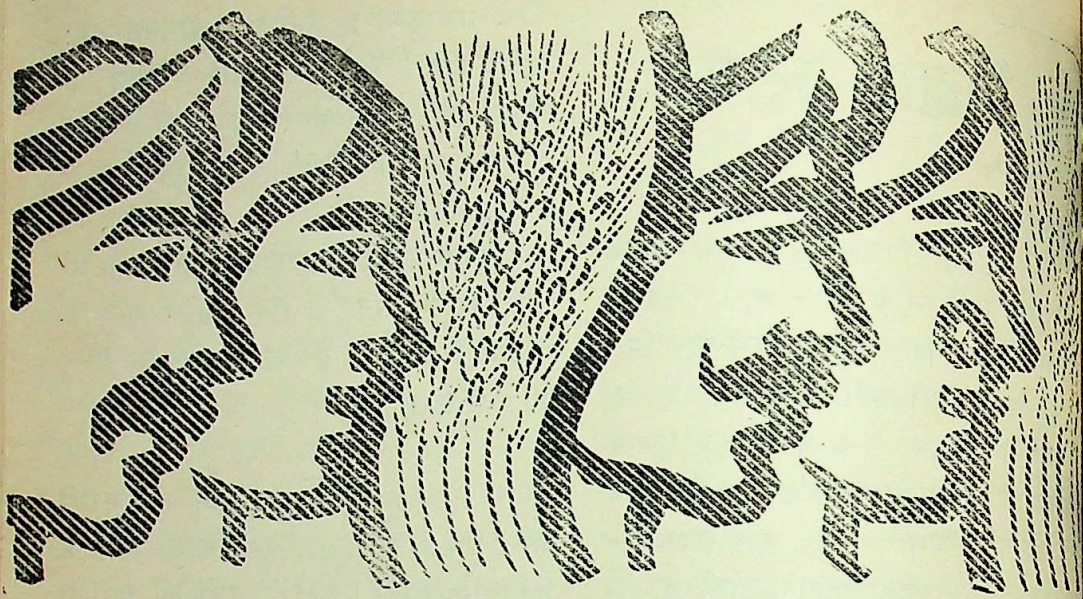

हिन्दुस्तान को अपने किसानों पर गर्व है। वे खून-पसीना एक करके फसलें पैदा करते हैं, जिससे सरहद पर तैनात सैनिकों को खाना मिलता है; कारखानों में काम करने वालों को खाना मिलता है; देश की जनता को खाना मिलता है। वे दिन रात अधिक से अधिक पैदा करने में जुटे हैं ताकि देश में ही सबके लिए अनाज पैदा हो सके। हमारे किसान समझते हैं कि जितना कम अनाज हमें विदेशों से मंगाना पड़ेगा, उतना ही अधिक धन हम देश के विकास और रक्षा पर खर्च कर सकेंगे। इस अथक मेहनत के बदले वे केवल आपका अथक परिश्रम चाहते हैं।

एक महान देश हमारा
एक महान राष्ट्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

उर्मिलाकुमारी
(स. सं. ४९३)

अनूपकुमार राय
(स. सं. १४०७९)

गफूर मुहम्मद
(स. सं. १७०७९)

सतीशचन्द्र
(स. सं. १७०८४)

१२,०९९ चन्द्रप्रकाश (१७) मन्दसौर, १२,१०० हरीसरनलाल (१८) लखनऊ, १ सुरेशकुमार (१६) रायपुर, २ देवेशप्रकाश (२०) जोया, ३ अरविन्दकुमार (१६) मुरादाबाद, ४ प्रतापचन्द्र (१६) मुरादाबाद, ५ भानुप्रकाश (१५) जावरा, ६ सुरेशचन्द्र (१६) अशोकनगर, ७ नरेन्द्रकुमार (१२) मुरादनगर, ८ पुण्यानन्द (१६) महिसौथा, ९ विवेकानन्द (१५) इन्दौर, १० श्यामप्रकाश (१२) कुरुक्षेत्र, ११ केवलकृष्ण (२२) चिलकाना, १२ रमेशचन्द्र (१७) कानपुर, १३ रमाशंकर (१४) गोरखपुर, १४ राजनबाबू (२२) आगरा, १५ ज्योतिप्रकाश (१५) पुलियाकलां, १६ तसनीमअहमद (१६) बीकानेर, १७ नरेन्द्रसिंह (१८) चकई, १८ कौशलेन्द्रकुमार (१४) पटसा, १९ कृष्णलाल (२१) रिवाड़ी, २० कम्बरहुसैन (२१) उज्जैन, २१ महेन्द्रकुमार (२४) खण्डवा, २२ युगलकिशोर (१२) गोंदीया, २३ अमलकृष्ण (१७) पटना, २४ मदनमोहन (१७) आगरा, २५ शैलेन्द्रकुमार (१८) धामपुर, २६ विष्णुप्रसाद (१४) इन्दौर, २७ नरेन्द्रकुमार (१६) गुलाबपुरा, २८ गोपालप्रसाद (१८) बटसार, २९ महेशचन्द्र (१८) इलाहाबाद, ३० कमलकुमार (१४) अल्मोड़ा, ३१ इस्माइल (१७) नागपुर, ३२ प्रभातकुमार (१६) रांची, ३३ कृष्णगोपाल (१७) कटनी, ३४ दिनेशचन्द्र (१७) कटनी, ३५ अम्बिकाप्रसाद (१६) रायगढ़, ३६ बिमलेन्द्रनाथ (१५) पटना, ३७ देवव्रतकुमार (२२) पूर्णियां, ३८ नमित (१४) पिथौरागढ़, ३९ अमित (१४) पिथौरागढ़, ४० गोविन्द (१६) सीमरण, ४१ श्यामलाल (१८) आगरा, ४२ अरविन्दकुमार (१७) सुपौल, ४३ शशिकान्ति (१६) राजनांदगांव, ४४ शंकरलाल (११) इन्दौर, ४५ जगदीशप्रसाद (१९) जगदलपुर, ४६ देवेन्द्रकिशोर (२२) पटना, ४७ ब्रजेशकुमार (१८) गोरखपुर, ४८ सन्तोषकुमारी (१७) भरतपुर, ४९ राजकुमार (१९) मुरार, ५० प्रेमसिंह (१७) जबलपुर, ५१ विनोदकुमार (१८) अम्बाला, ५२ आनन्दबीर (१८) हल्द्वानी, ५३ विजयकुमार (१७) झुमरीतलैया, ५४ विष्णुदत्त (१८) लश्कर ५५ डाह्याभाई (२२) गोंदीया, ५६ घनश्यामप्रसाद (१७) कदमा, ५७ राजेशकुमार (१५) बांदा, ५८ प्रदीपकुमार (१४) सीतापुर, ५९ महेशचन्द्र (१८) बसेड़ारानीका, ६० भानुप्रकाश (१८) गाजीपुर, ६१ हरिनारायण (१८) रांची, ६२ एस. सी. खुराना (२०) नयी दिल्ली, ६३ प्रमिला (१७) लखनऊ, ६४ नन्दकिशोर (१७) जबलपुर, ६५ बालकृष्ण (१८) आगरा, ६६ भेरुबक्ष (१८) किशनगढ़, ६७ प्रेमचन्द्र (१३) हिंगनघाट, ६८ सुभाषकुमार (१८) इलाहाबाद, ६९ विजयकुमार (१८) अण्डाल. ७० सत्यनारायण (१८) कटनी, ७१ अवधेशकुमारसिंह (१७) आगरा, ७२ विनोदकुमार (१८) फारबिसगंज, ७३ एस. के. मिश्र (१७) मेरठ, ७४ लालबहादुर (१०) पटना, ७५ जगदीशप्रसाद (१९) परबलपुर, ७६ ज्योतिप्रकाश (१६) फुलियां, ७७ राकेश (१७) गोरखपुर, ७८ प्रदीपकुमार (१६) बड़ीसादड़ी, ७९ क्रान्तिकुमार (१९) जौनपुर, ८० नीलिमाचन्द्रा (१४) जौनपुर, ८१ सोमदत्त (१४) लखनऊ, ८२ नन्दलाल (२१) उदयपुर, ८३ सुभाषचन्द्र (१६) संगरिया, ८४ सुरजीतसिंह (१२) इन्दौर, ८५ नरेन्द्रबहादुर (१९) वाराणसी, ८६ सुधा (१६) इलाहाबाद, ८७ कु. दीपशिखा (१५) इलाहाबाद।

मुहम्मद इब्राहीम
(स. सं. १८२२०)

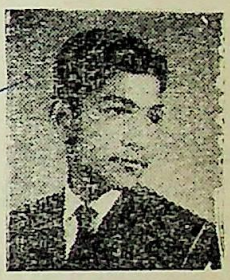

मनोजकुमार
(स. सं. १८२३६)

राजेन्द्रकुमार
(स. सं. १८२५२)

आत्मानन्द
(स. सं. १८२७४)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

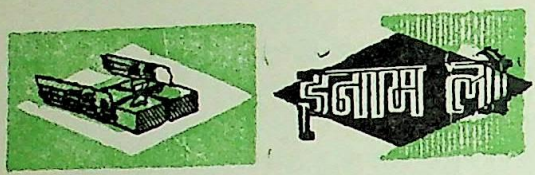

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७५

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : १५ मई

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५३ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो—

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७५ का उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर १५ मई तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायेगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७५ के प्रश्न

१. क्या प्रोट्रीन के संश्लेषण (protein synthesis) पर कुछ हारमोनों का प्रभाव पड़ता है ?

२. केल्टेक क्या है और कहां है ?

३. अर्थशाइन (earthshine) किस प्रकाश को कहते हैं ?

४. ब्रायोफाइटा (*Bryophyta*) वर्ग के पौधे एक-कोषीय होते हैं या बहु-कोषाय ?

५. सरजैण्ट-मेजर (Sergeant-major) जल में रहने वाला कौन-सा जन्तु है ?

६. प्राकृतिक रूप से हाथर्न (hawthorn) कितना ऊंचा होता है ?

७. जबर (Geber) कौन था ?

८. जिन अदृश्य अन्तरिक्षीय पिण्डों से रेडियो संकेत प्राप्त होते हैं, उनके सम्बन्ध में प्रमुख सम्भावना क्या है ?

९. वाइसराय (viceroy) नामक तितली के पंखों की आड़ी रेखाएं किस रंग की होती हैं ?

१०. संवृन्तबीजी (*angiospermic*) पौधे किन दो उप-विभागों में विभाजित किये जाते हैं ?

प्रतियोगिता संख्या ७३ के प्रश्नों के उत्तर

१. $F = G \frac{m_1, m_2}{r_2}$।

२. मरक्युरिक आक्साइड और लेंस की सहायता से।

३. $6CO_2 + 6H_2O + \text{energy}$।

४. प्रकाश का वेग पूर्णवेग है।

५. एक दिन।

६. एक सामान्य मणिभ (gem)

७. फूल।

८. लाइन वर्णक्रम, बैण्ड वर्णक्रम।

९. अल्ट्रासोनिक ध्वनि।

१०. वान ककड़ी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करो और देखो

स्टार्च प्रिण्टिंग कीजिए

अ. कु. मेहरा, (स. सं. ६९९५)

पौधे सूर्य के प्रकाश में क्लोरोफिल की सहायता से अपना भोजन तैयार करते हैं। इस क्रिया के लिए पौधे वायु से कार्बन-डाइआक्साइड सोखकर उसे आक्सीजन और स्टार्च में बदल देते हैं। आक्सीजन तो उड़ जाती है, परन्तु स्टार्च वहीं पर रह जाती है। पत्तियों में बनने वाले स्टार्च का उपयोग स्टार्च प्रिण्टिग के रूप में भी किया जा सकता है।

आवश्यक सामग्री

एक स्टार्चरहित पत्ती (इसके लिए आवश्यक है कि सूर्य निकलने से पहले ही किसी पौधे को चुन लिया जाय, या पौधे को एक-दो दिन अंधेरे में रखकर उसकी पत्तियों को स्टार्चरहित किया जा सकता है), काला कागज, क्लिप, मेथीलेटेड स्प्रिट, आयोडीन का घोल और बेनजोल का घोल।

विधि

स्टार्चरहित पत्ती पौधे से तोड़ें नहीं। उस पत्ती के दोनों ओर दो काले कागजों को जिन पर आपने अक्षर काट रखे हैं, क्लिप द्वारा बांध दें (चित्र १)।

अब उस पौधे को धूप में रख दें और शाम को उस पत्ती को तोड़कर मेथीलेटेड स्प्रिट में डाल दें। इस तरह उसका रंग उड़ जायेगा। अब उस पत्ती को आयोडीन के घोल में डाल दें। जहां-जहां सूर्य का प्रकाश गया होगा, वहां-वहां स्टार्च का रंग नीला-काला हो जायेगा। पत्ती के सेल्युलोज और प्रोटोप्लाज्म का रंग आयोडीन भूरा कर देती है। इस भूरे रंग को उड़ाने के लिए पत्ती को बेनजोल के घोल में डाल देते हैं। अब पत्ती पर स्पष्ट लिखा हुआ मिल जाता है (चित्र २)। इस स्टार्च प्रिण्टिग का उपयोग नववर्ष की बधाई के उपहारों में भी किया जा सकता है। ●

(चित्र १)

(चित्र २)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब वास्तविक सर्वश्रेष्ठ
ब्रान्डी का प्रश्न हो
तो केवल एक ही
पसन्द हो सकती है

ट्रिप्ल क्राउन

ग्रेप

ब्रान्डी

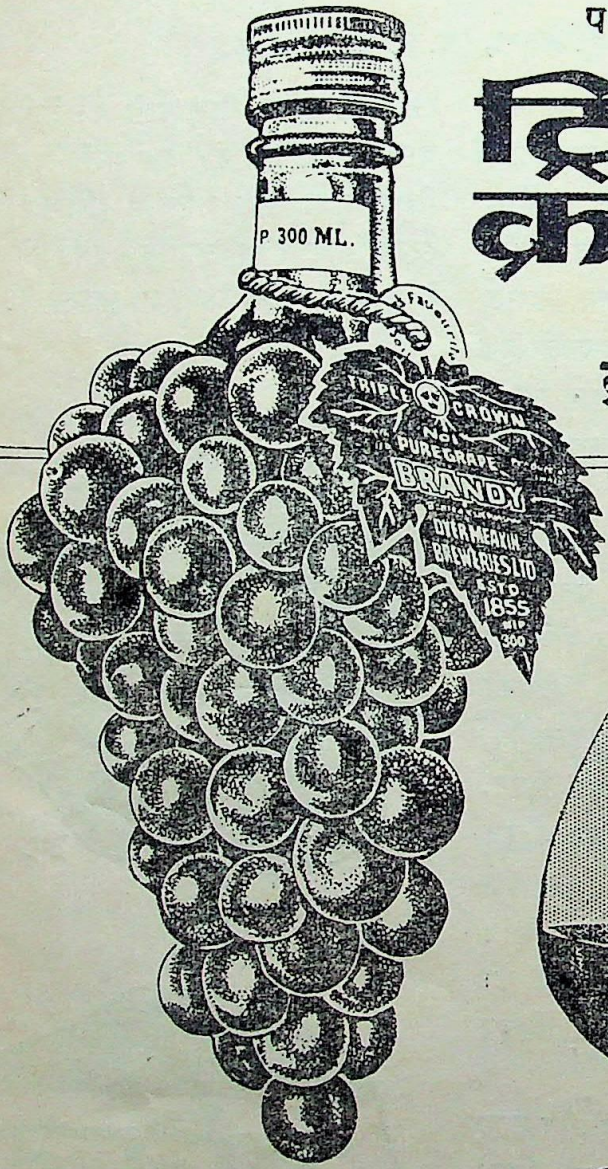

दुर्लभ ब्रान्डी
अत्यन्त दुर्लभ
बोतल में

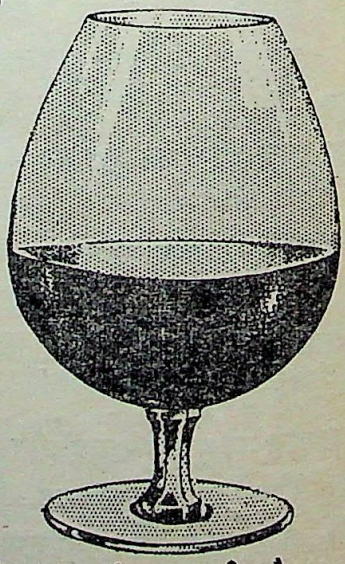

११० वर्ष से अधिक का अनुभव विश्वास की गारन्टी है

डायर मीकिन ब्रुअरीज़ लि० स्थापित १८५५

मोहन नगर, (गाज़ियाबाद) यू० पी०

सोलन ब्रुअरी — लखनऊ डिस्टिलरी — कसौली डिस्टिलरी

DMB—NP—754

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक प्रकाशन

(हाई स्कूल एवं हायर सेकेण्डरी स्कूल के विद्यार्थियों के लिए)

प्रारम्भिक भौतिकी

(मूल्य : ३·५०)

लेखक

दयाप्रसाद खण्डेलवाल

एम. एस-सी., पी-एच. डी.

देवीसिंह विष्ठ राजकीय महाविद्यालय, नैनीताल

जन्तु-विज्ञान

(मूल्य : ३·००)

वनस्पति-विज्ञान

(मूल्य : ३·००)

लेखक

आर. डी. विद्यार्थी

बी. एस-सी. (आनर्स), एम. एस-सी., एल.टी., एफ.एन.ए.

ला मार्टीनियर कालेज, लखनऊ

सामान्य-विज्ञान

(मूल्य : ६·२५)

लेखक

रामचरण मेहरोत्रा, एम. एस-सी., पी-एच. डी.

दयाप्रसाद खण्डेलवाल, एम. एस-सी., पी-एच. डी.

आर. डी. विद्यार्थी, एम. एस-सी.

प्रैक्टिकल जन्तु-विज्ञान

(मूल्य : २·००)

प्रैक्टिकल वनस्पति-विज्ञान

(मूल्य : २·००)

लेखक

आर. डी. विद्यार्थी

प्रकाशक

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Price : 60 paise April 1966 Regd. No. L 1588
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीहारिका

कहानी मासिक

अप्रैल अंक

अब सब जगह उपलब्ध है

मेहरा न्यूज़पेपर्स हास्पिटल रोड, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

11-6-66

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

बाह्य अवकाश में अन्तरिक्षयानों का मिलन — ३
—कुमारी प्रमिला

हृदय और हृदय रोग — १२
—सी. एल. सघी

रासायनिक खाद — १७
—राजेन्द्रप्रसाद वार्ष्णेय

लैंजेरो स्पैलेंजनी — २४
—डा. हर्ष प्रियदर्शी

एक फूल-सी कोमल जिन्दगी — ३३
—समरजीत कर

कार्बन का बढ़ता हुआ परिवार — ३८
—सत्यकुमार

अंगूर — ४१
—नरेन्द्र छाबड़ा

रेशम का कीड़ा — ४७
—यमुनाधर पाण्डेय

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां — ३०
विचित्र संसार — ४५
विज्ञान क्लब — ५२
इनाम लो — ५४
तुम्हारी कलम से — ५५

अपनी बात

अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक प्रोफेसर पंचानन महेश्वरी के निधन ने वनस्पति-विज्ञान को एक गत्यावरोध के अन्तर्गत कर दिया। इस क्षति की पूर्ति कठिन नहीं होगी।

प्रोफेसर महेश्वरी एक महान और सौम्य वैज्ञानिक थे। कोलाहल से दूर, एकान्त में अध्ययनरत वे सत्य के अन्वेषण में सतत प्रयत्नशील रहे। उनके समक्ष यह विचार प्रमुख नहीं था कि किसी भी जिज्ञासा को कठिन रास्तों से होकर आगे बढ़ना पड़ता है, उनके लिए बस, जिज्ञासा का महत्त्व था।

प्रोफेसर महेश्वरी माइक्रोटोमी में सिद्ध हस्त थे। आवृतबीजी पादपों के अन्तर्गत उन्होंने कई पौधों का अध्ययनकर उनके नये नये पहलुओं पर प्रकाश डाला। राष्ट्रभाषा हिन्दी के लिए उनके मन में अटूट प्रेम था।

वनस्पति-विज्ञान के क्षेत्र में उनके महान योगदान को मान्यता देने के लिए जनवरी १९५९ में भारतीय वनस्पति-विज्ञान परिषद के बीरबल साहनी स्मारक पदक से उन्हें विभूषित किया गया। इसके अतिरिक्त देश-विदेश की अनेक वैज्ञानिक संस्थाओं ने उनका सम्मान किया।

प्रोफेसर महेश्वरी शुष्क विज्ञान में डूबे रहकर भी जीवन और प्रकृति के सौन्दर्य के प्रति आकृष्ट थे।

इस गतिक प्रतिभा के आकस्मिक निधन पर हम अपनी शोकपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

वर्ष ७ — अंक ४

एक प्रति : ७५ पैसे
वार्षिक : ९ रुपये

सम्पादक : शंकर मेहरा
प्रकाशक : मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा-३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुमारी प्रमिला

अन्तरिक्ष-अनुसन्धान का मुख्य उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति है। यह कल्पना हम नहीं कर सकते कि पृथ्वी एक ऐसा फ्लास्क है जो निष्क्रिय है। पृथ्वी पर उसकी प्रत्यक्ष सीमाओं से बाहर की शक्तियों का असर पड़ता है। सूर्य के विकिरण और सौरमण्डल के अन्य ग्रह-नक्षत्रों आदि के पदार्थों से हमारी ऋतु, संचार-प्रणाली, सागर-भू-रचना प्रभावित होती है। कुछ अन्य अप्रत्यक्ष प्रभाव अभी सन्देहास्पद स्थित में है। अन्तरिक्ष-अनुसन्धान द्वारा मानव सौर प्रणाली में अपनी स्थिति जानने के लिए उत्सुक है। चन्द्रमा पर समानव अनुसन्धान द्वारा पृथ्वी के चारों ओर के परिवेश की जानकारी तो मिलेगी ही, निस्सन्देह कुछ अकल्पनयी शक्तियों के सम्बन्ध में भी ज्ञान प्राप्त होगा।

अन्तरिक्ष-अनुसन्धान ने आज मानव सभ्यता को पूर्ण रूप से प्रभावित किया है। आने वाले वर्षों में यह प्रभाव तीव्रतर होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुब्बारों के सहारे उड़ते हुए पिलाते रोजर ने इंग्लिश चैनल पार करना चाहा किन्तु अनायास ही एक भयंकर दुर्घटना का वह शिकार हो गया—(एक समकालीन रेखाचित्र की अनुकृति)

रहेगा। अन्तरिक्ष तक मानव की पहुंच ने सम्प्रति की चिन्तन-प्रकिया को बदल दिया है। विश्व राजनीति पर भी अन्तरिक्ष-अनुसन्धानों का प्रभाव स्पष्ट है। इसके अतिरिक्त विज्ञान भी अब परम्परागत बन्धन से निकलकर सर्वथा उनमुक्त हो चुका है।

'सिपियो'ज ड्रीम' की व्याख्या

यद्यपि यह सत्य है कि प्रारम्भ में अन्तरिक्ष में उड़ने की बात कल्पनाजन्य थी किन्तु जिन्होंने यह कल्पना की, निस्सन्देह वे ब्रह्मा[illegible] और सौरमण्डल के सम्बन्ध में अनभिज्ञ [illegible] थे। उस युग में जब मानव ने पृथ्वी के [illegible] मण्डल में भी उड़ना नहीं सीखा था, अन्त[illegible] में उड़ने की कल्पना विलक्षण थी।

प्राय: १६० ई. पू. में 'सिसरो [illegible] रिपब्लिक' के 'सिपियो'ज ड्रीम' नामक [illegible] ने यह व्याख्या प्रस्तुत की कि अन्त[illegible] विशाल है। उसकी विशालता के समक्ष पृ[illegible] का अस्तित्व महत्त्वहीन-सा है। 'सिपि[illegible] ड्रीम' ने उन नक्षत्रों का होना भी स्वी[illegible] किया जो कभी पृथ्वी से नहीं देखे जाते।

यूनान के लुसियन ने १६० में 'दे[illegible] हिस्टोरिया' में चन्द्रमा तक की यात्रा [illegible] वर्णन किया। किन्तु फिर अन्तरिक्ष [illegible] सम्बन्ध में भविष्य की कई शताब्दियां [illegible] रहीं।

इसके बाद विज्ञान के पुनर्जागरण [illegible] काल में तथा कापरनिकस, केपलर, न्यूट[illegible] गैलीलियो-जैसे व्यक्तित्वों की अवतारणा [illegible] पर एक बार पुन: मानव ब्रह्माण्ड के अ[illegible] नक्षत्रों की यात्रा करने के स्वप्न देखने लगा। तदुपरान्त वोल्तायर, ड्यूमा, जूल वर्न, एड[illegible] अलेन पो, एच. जी वेल्स आदि लेखकों ने अ[illegible] रिक्ष यात्रा पर काल्पनिक कहानियां लिखीं।

'द मैन विदाउट ए कण्ट्री' के प्रसि[illegible] लेखक का उपन्यास 'द ब्रिक मून' अत्यधि[illegible] प्रसिद्ध है। यह १८६९ में प्रकाशित हुआ था। 'द ब्रिक मून' पहला उपन्यास है जिसमें कि[illegible] राकेट को बाह्य अन्तरिक्ष में भेजने की वि[illegible] का वर्णन मिलता है। इस उपन्यास में अन्तरि[illegible] में स्थापित एक प्रयोगशाला का भी परि[illegible] प्राप्त होता है।

लेकिन आज ऐसी पत्रिकाओं और उपन्यासों की कमी नहीं हैं जिनमें अन्त[illegible] रिक्ष-यात्रा-विषयक कहानियां साधारण [illegible] हैं। रेडियो तथा टेलीविजन पर [illegible]

मुखपृष्ठ

जैमिनी-६ से शिर्रा और स्टैफर्ड द्वारा खींची गयी पारदर्शी—सामने जैमिनी-७ का पिछला भाग शीत निरोधक कम्बल से ढंका हुआ दिखायी दे रहा है। जैमिनी-७ की खिड़की में मुख्य चालक बोरमैन को देखा जा सकता है। जैमिनी-६ अग्रभूमि में है।

जैमिनी-७ के किनारे के बक्स के आकार के भाग में लैटरल थ्रस्ट इंजन है। यान के पिछले भाग में दिखायी पड़ने वाली धारियां यान के टीटान राकेट से अलग होते समय उस पर रह गयी थीं। सफेद भाग में रेट्रो-फायर राकेट हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के परदे पर भी अन्तरिक्ष अनुसन्धान की उपलब्धियों की चर्चा मिलेगी। लेकिन समय के उस पार की अन्तरिक्ष अनुसन्धान से सम्बन्धित सफलताओं-विफलताओं, प्रयोगों का अन्यतम महत्त्व है।

कब पहला राकेट निर्मित हुआ, इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता, लेकिन यह सत्य है, राकेट-सम्बन्धी प्रारम्भिक प्रयोग चीन में हुए। अन्तरिक्ष-यात्रा की प्राचीन कल्पनाओं और राकेट निर्माण के प्रयत्नों का घनिष्ठ सम्बन्ध है, क्योंकि राकेट ही द्वारा दूरस्थ नक्षत्रों की यात्रा करना सम्भव है।

१२३२ में काई-फुंग-फु के निकट चीनियों ने आग के उड़ते हुए तीरों से मंगोलों का आक्रमण विफल कर दिया। राकेट के प्रयोग का यह पहला लिखित ब्योरा मिलता है। १२५८ में इस तरह के राकेट यूरोप में भी प्रचलित हो गये। १३ वीं और १४ वीं शताब्दी की विवरण पुस्तिकाओं में इस तथ्य का उल्लेख प्राप्त है।

कन्ज्रव का काले चूर्ण वाला राकेट

१९ वीं शताब्दी के प्रारम्भिक चरण में सेना के लिए राकेट बनने लगे थे। तत्कालीन राकेट-विज्ञान में ब्रिटेन के सर विलियम कन्ज्रव एक महत्त्वपूर्ण नाम है।

बाद में कन्ज्रव ने काले चूर्ण वाला राकेट तैयार किया। इस नये चूर्ण से राकेट की क्षमता में वृद्धि हुई। फिर भी राकेट-विज्ञान के विकास में लगभग एक शताब्दी व्यतीत हो गयी। १९०३ में एक रूसी स्कूल के अध्यापक कांस्तान्तिन जिओल्कोवस्की ने द्रव ईंधन वाले राकेटों के सम्बन्ध में कुछ सिद्धान्त प्रकाशित किये। वास्तव में इन सिद्धान्तों का रूस से बाहर प्रचार नहीं हो पाया, और रूसियों ने भी इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया।

जिओल्कोवस्की अन्धकार में ही रहा। रुमानियन-जरमन हरमन्न ओबर्थ तथा अमरीकी राबर्ट एच. गोडार्ड अलग-अलग राकेट-विज्ञान के विकास में लगे थे। उन्होंने विकास की जिस सीमा तक राकेट-विज्ञान को पहुंचाया, वह आधुनिक युग के राकेट-विज्ञान का प्रारम्भ कहा जायेगा।

प्रो. ओबर्थ के प्रयत्न भी इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कहे जायेंगे। उसने जरमनी में राकेट-सम्बन्धी अनेक प्रयोग किये। १९२३ में उसकी महत्त्वपूर्ण कृति 'द राकेट इण्टु इण्टरप्लेनेटरी स्पेस' का प्रकाशन हुआ। इस पुस्तक में ओबर्थ ने अनेक ऐसी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने की चेष्टा की जो आज भी राकेट-विज्ञान के लिए महत्त्वपूर्ण बनी हुई हैं। ओबर्थ और गोडार्ड, दोनों ने द्रव ईंधन से चालित राकेट के सम्बन्ध में विषद् विवेचना से समकालीन वैज्ञानिकों को अवगत कराया।

१९३५-३६ तक गोडार्ड एक राकेट वैज्ञानिक के रूप में प्रसिद्धि की चरम सीमा पर पहुंच गया था। उसके सिद्धान्तों से जरमनी के वैज्ञानिक पूरी तरह परिचित थे। जरमनी में द्वितीय विश्व युद्ध में सर्व प्रथम निर्देशित क्षेप्यास्त्र बने, किन्तु यह उल्लेख्य है कि गोडार्ड ने अपना द्रव राकेट १९२६ के १७ मार्च को छोड़ा था। इस राकेट में एक बैरोमीटर, एक थर्मामीटर और एक कैमरा था।

१७वीं शताब्दी के एक रेखाचित्र की अनुकृति—वैज्ञानिकों ने आकाश में उड़ने के लिए सबसे पहले पक्षियों के पंखों की उड़ान के समय गतिशीलता का सतर्कतापूर्वक अध्ययन किया

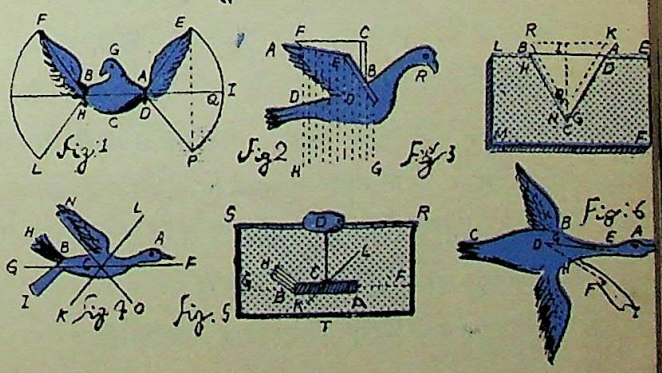

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

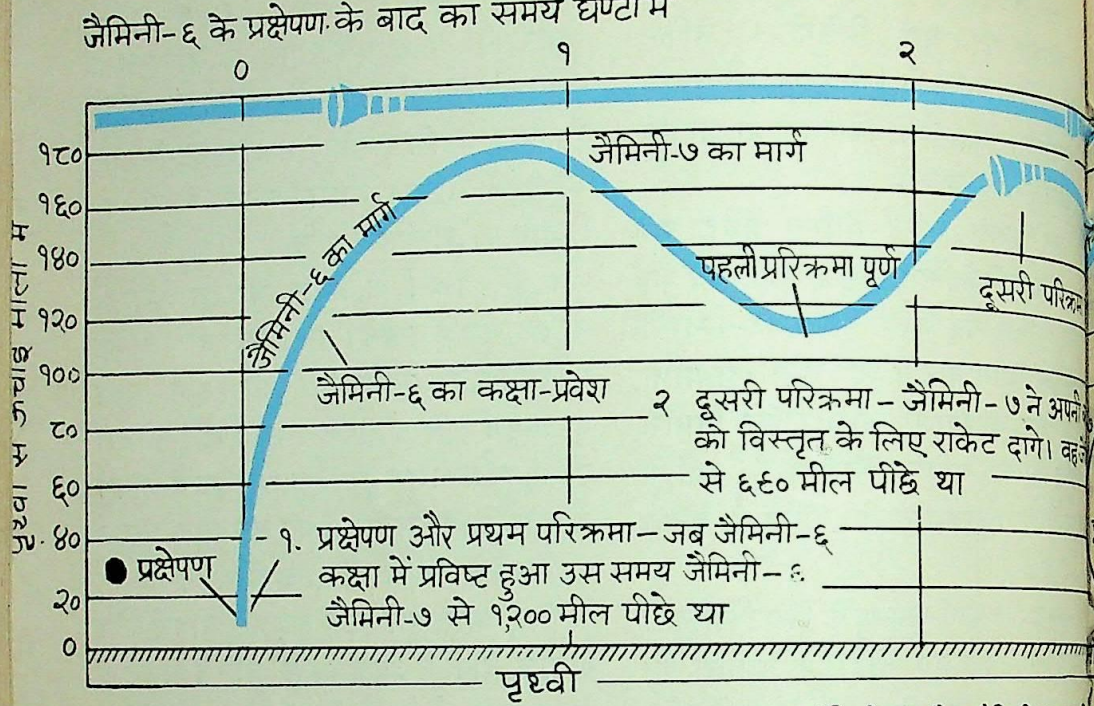

जैमिनी-७ और जैमिनी-६ अन्तरिक्ष में सम्मि

…और विश्व ने अन्तरिक्ष युग में प्रवेश किया

प्रयोगों का क्रम चलता रहा। विश्व के अनेक विकसित देशों के वैज्ञानिक अन्तरिक्ष-यात्रा की सम्भावनाओं का अध्ययन करते रहे। कई और दशाब्दियां बीत गयीं। फिर ४ अक्तूबर १९५७ को सोवियत रूस पहला मानव-निर्मित उपग्रह स्पुतनिक-१ अन्तरिक्ष में भेजने में सफल हो गया। इसके बाद ३१ जनवरी १९५८ को अमरीका ने भी अपना प्रथम उपग्रह एक्सप्लोरर-१ अन्तरिक्ष में स्थापित कर दिया। इन उपलब्धियों के साथ ही विश्व ने अन्तरिक्ष युग में प्रवेश किया।

अप्रैल १९६१ से दिसम्बर १९६५ तक लगभग पांच वर्षों में सोवियत रूस और अमरीका ने स्वतन्त्र रूप से कुल १९ अन्तरिक्ष अभियानों में भाग लिया, जिनमें से ८ सोवियत रूस के और ११ अमरीका के थे। इनमें वे अभियान साम्मिलित नहीं हैं जो असफल रहे या कन्हीं कारणों से अपूर्ण रहे।

१९६५ तक अन्तरिक्ष अभियानों में जैमिनी-७ और जैमिनी-६ यानों का अन्तरिक्ष में सम्मिलन प्रमुख था।

वैज्ञानिकों के सभी पर्यवेक्षणों तथा भू पर किये जाने वाले परीक्षणों से यह ज्ञात होता है कि चन्द्रमा प्रतिकूल और बंजर है वहां कोई भी जीव नहीं पाया जा सकता अन्तरिक्ष के पिण्ड प्रायः अज्ञात ही हैं और ऐसा कोई उपकरण बनाना सम्भव नहीं है अज्ञात पिण्डों के सम्बन्ध में जानकारी दे सके चन्द्र यात्रा की उड़ानों में बहुत से खतरे हैं फिर भी यह निश्चित् है कि चन्द्रमा पर जाने वाले प्रथम अन्तरिक्षयात्रियों से पहले विभिन्न प्रकार के उपकरणों द्वारा काफी खोज हो चुकी होगी, जिससे उड़ान के आयोजक अधिक से अधिक अनिश्चितताओं पर विजय प्राप्त करने में समर्थ होंगे।

मनुष्य यदि उन्मुक्त रूप से शून्य स्थिति में खुला हो जाये, तो उसका खून खौलकर छितरा जायेगा। अन्तरिक्षयान भीतर से पूरी तरह बन्द रहता है तथा उसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

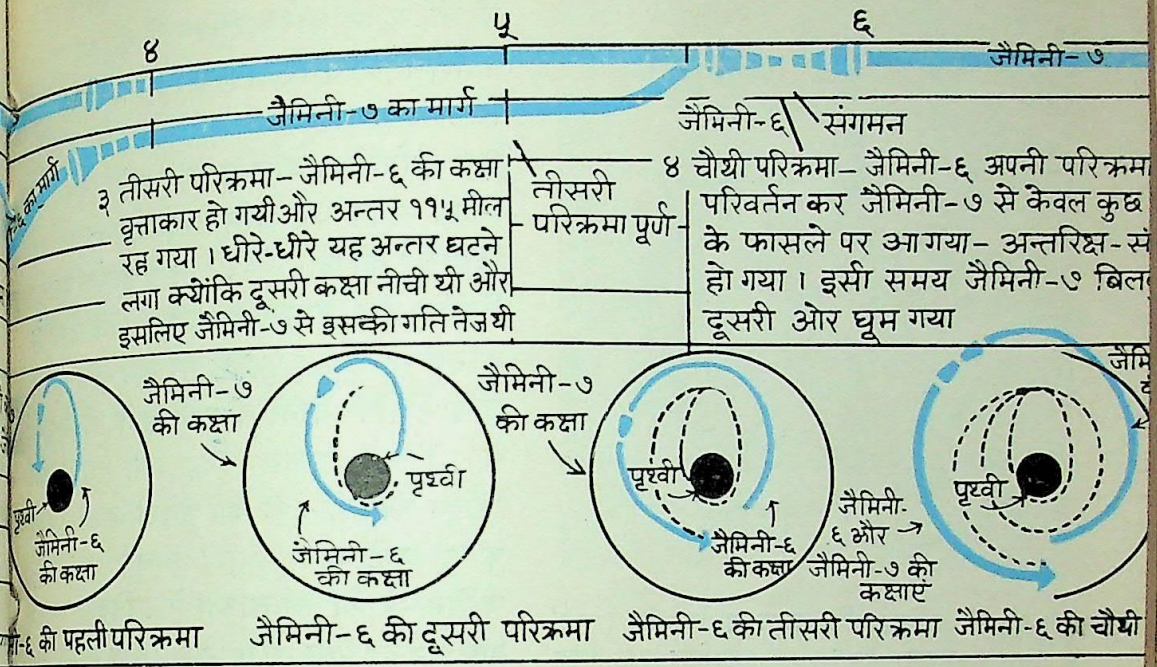

जैमिनी-६ अन्तरिक्ष में सम्मिलन की विभिन्न अवस्थाएं

लेने और आरामदेह अनुभव करने के लिए सामान्य वातावरण की व्यवस्था रहती है। अन्तरिक्षयात्री की पोशाक भी ऐसी होती है ताकि यदि अन्तरिक्षयान में छेद हो जायें या उल्कापिण्ड से वह क्षतिग्रस्त हो जाय, तो भी अन्तरिक्षयात्री पूर्ववत् सुरक्षित रह सके। अन्तरिक्षयान और विशिष्ट पोशाक की सहायता से चन्द्रमा पर की प्रचण्ड गरमी और ठण्ड से अन्तरिक्षयात्री अपनी रक्षा कर सकता है।

अमरीका ने दो जैमिनी यानों का अन्तरिक्ष में सफलतापूर्वक मिलन कराकर मानव को चन्द्रमा के और अधिक निकट पहुंचा दिया। अन्तरिक्ष अनुसन्धान की दिशा में यह प्रयास अब तक के सभी प्रयासों से कठिन था।

जैमिनी-७ और जैमिनी-६ के मिलन का कार्य अत्यधिक जटिलता पूर्ण था। जैमिनी-७ पूरे दिन चौदह दिन तक पृथ्वी के इर्दगिर्द चक्कर लगाता रहा। दो अन्तरिक्ष यानों के मिलन से यह बात सत्य के अधिक निकट पहुंच गयी कि १९७० तक मानव चन्द्रमा पर पहुंच सकता है।

४ दिसम्बर १९६५ को जैमिनी-७ यान छूटने के फौरन बाद ही मजदूर केप कैनेडी के प्रक्षेपण स्थल नं. १९ पर पहुंच गये और उन्होंने ९ दिनों के अन्दर ही जैमिनी-६ वहां से छोड़ने की आवश्यक तैयारियां प्रारम्भ कर दीं।

जैमिनी-७ की उड़ान के प्रारम्भिक चरण पूरे हुए। चालक बोरमैन (और लोवेल) ने सूचित किया कि अन्तरिक्ष यान के सभी कल-पुरजे (फुएल सेल प्रणालीसहित) सन्तोषजनक ढंग से कार्य कर रहे हैं। बिजली प्राप्त करने के लिए फुएल सेल प्रणाली हाथ से चालू की गयी।

जैमिनी-७ का प्रक्षेपण निस्सन्देह एक ऐतिहासिक महत्त्व की घटना कही जायेगी। ९ मंजिला टाइटन राकेट धुएं के विशाल पुंज के साथ प्रक्षेपण मंच से घनकोर गर्जन करता हुआ उड़ा। वह अपने दो इंजन वाले विद्युत् संयन्त्र से ४,३०,०० पौण्ड का प्रवेग उत्पन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

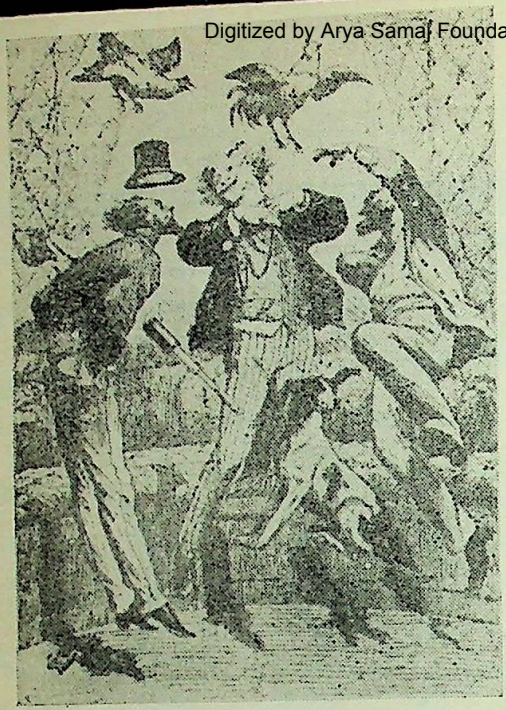

जूल वर्न की प्रसिद्ध कृति 'फ्राम द अर्थ टु द मून' के प्रथम संस्करण (१८६५) में प्रकाशित एक चित्र की फोटो अनुकृति। अन्तरिक्षयात्री भारहीनता की स्थिति में आश्चर्य कर रहे हैं

कर रहा था। भूरे रंग के आकाश के बीच उठता हुआ वह शीघ्र ही दृष्टि से ओझल हो गया। २ मिनट ३६ सेकण्ड बाद उसका द्वितीय खण्ड दग उठा और उसने जैमिनी-७ को कक्षा में स्थापित कर दिया। कक्षा में पहुंचकर चालक बोरमैन ने तत्काल ही अन्तरिक्ष यान को टाइटन से १८० अंश पर मोड़ दिया। टाइटन यान के पीछे-पीछे कक्षा में परिक्रमा कर रहा था। यान टाइटन के निकट से होकर लगभग आधे घण्टे तक उड़ता रहा।

२० मिनट तक उड़ान कर लेने के बाद बोरमैन ने बुझे हुए राकेट का इन्फ्रा-रेड माप लिया।

जैमिनी-७ की उड़ान में परीक्षण

जैमिनी-७ की उड़ान में मुख्यतः सात परीक्षण किये गये। अधिकतर परीक्षण डाक्टरी ही थे। उन परीक्षणों का मुख्य उद्देश्य यह जानना था कि लम्बे समय तक भारहीनता की स्थिति में रहने पर मनुष्य पर क्या प्रभाव पड़ता है। बोरमैन द्वारा अन्तरिक्ष और पृथ्वी के मध्य संचार-व्यवस्था कायम करने के बारे में भी पहली बार परीक्षण किया गया। इस परीक्षण में लेसर प्रकाश किरण का उपयोग किया गया।

जैमिनी-७ यान छूटने के ११ दिन बाद नियत समय पर जैमिनी-६ यान छूटा। १५ दिसम्बर को जैमिनी-६ यान के चालक वाल्टर शिर्रा (और टामस स्टैफर्ड) अपने यान को जैमिनी-७ से छह फुट से भी कम दूरी पर ले आया। दोनों यानों में एक छोटी मोटरगाड़ी से भी कम फासला रह गया था। यह मिलन जैमिनी-६ के केप कैनेडी से छोड़े जाने के ६ घण्टे बाद हुआ। मिलन के समय जैमिनी-७ का अन्तरिक्ष में परिक्रमा करते हुए १२ वां दिन था। उसकी कुल यात्रा १४ दिन की थी।

मिलन के बाद दोनों अन्तरिक्षयान चार घण्टे तक अन्तरिक्ष में एक-दूसरे के पीछे लगे रहे। एक बार जैमिनी-६ ने जैमिनी-७ के इर्दगिर्द चक्कर लगाया और इसके बाद उसके और अधिक निकट आकर उड़ने लगा। सहायक चालक निकट से की गयी उड़ान के मूवी तथा सामान्य कैमरे से चित्र लेते रहे।

भारतीय समय के अनुसार रात को १ बजकर ५ मिनट पर अन्तरिक्ष यान चालक स्टैफर्ड ने कहा: 'हम एक-दूसरे से लगभग १२० फुट की दूरी पर हैं।' संसार को पहली बार यह ज्ञात हुआ कि दोनों यान एक-दूसरे के निकट पहुंच गये हैं। उस समय दोनों अन्तरिक्ष यान हवाई से लगभग १८५ मील ऊपर थे। बाद में स्टैफर्ड ने सूचना दी कि उनमें १०० फुट का अन्तर रह गया है। इसके बाद उन्होंने पहले तो यह बताया कि वे १० फुट के फासले पर रह गये हैं, फिर उन्होंने कहा कि अब वे केवल ६ फुट दूर रह गये हैं।

यद्यपि वे १७,५०० मील प्रति घण्टे की चाल से उड़ान कर रहे थे पर शिर्रा ने मिलन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अन्तिम चरण में बड़ी कुशलता से अपने यान की गति में केवल प्रति सेकण्ड कुछ फुट का अन्तर कर लिया ताकि दोनों यानों में टक्कर होने का खतरा न रहे।

जैमिनी-६ और जैमिनी-७ ने एक-दूसरे का पीछा करते हुए जो अन्तिम ३० मिनट बिताये उस समय अंधेरा छाया हुआ था, लेकिन इनके मिलन के समय प्रशान्त महासागर में सूर्य निकल आया था।

अन्तरिक्ष में यानों के मिलन की कई और योजनाएं

जैमिनी-७ और जैमिनी-६ के इस मिलन के बाद अन्तरिक्ष में की जाने वाली विकासात्मक उड़ानों में सावधानीपूर्वक कई और मिलन किये जाने की योजना है। १९६७ के प्रारम्भ तक जैमिनी योजना के पूर्ण होने तक यह जरूरी है कि कक्षा में यानों के मिलन और संगमन की विधि का पूरी तरह विकास हो जाय। इसके बाद अमरीका की एक अपोलो योजना है जिसके अन्तर्गत चन्द्रमा पर अनुसन्धान कार्य सम्पन्न करके लोग पृथ्वी पर लौट आयेंगे। मंगल तथा अन्य ग्रहों की उड़ानों का आधार भी मिलन की यह विधि होगी।

अन्तरिक्ष में यानों का मिलन पृथ्वी पर दौड़ने वाले प्रतियोगी को पकड़ने के समान नहीं है, न ही यह किसी लड़ाकू विमान का पीछा करने के तरीके-जैसा है। तुलना की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि अन्तरिक्ष में यानों का मिलन ऐसा है जैसे किसी खिलाड़ी द्वारा भागती हुई फुटबाल का पीछा करना, और उस पर प्रहार करना। यह बात सुनने में जितनी सीधी है, वास्तव में उतना सीधा अन्तरिक्षयानों का मिलन नहीं है। यही बात जैमिनी-७ का पीछा करने वाले जैमिनी-६ के बारे में थी। मनुष्य और मशीन ने घड़ी की तरह ठीक ढंग से काम किया, इसलिए यह मिलन आसान-सा जान पड़ता है, लेकिन वास्तविकता यह नहीं है।

शिर्रा ने अन्तरिक्ष की दूसरी बार उड़ान करते हुए जैमिनी-७ के निकट पहुंचने के लिए आठ बार अपने राकेट दागे। उसके यान के साथ जितना ईंधन था उसमें से उसने आधे का प्रयोग किया।

भारतीय समय के अनुसार रात के

१६ मार्च १९२६—राकेट की उड़ान के लिए एक स्मरणीय दिन इस दिन डा. राबर्ट एच. गोडार्ड ने आर्बन मेसाच्युसेट्स से पहला द्रव-ईंधन राकेट छोड़ा था। (चित्र में) डा. गोडार्ड अपने राकेट के बगल में खड़े हैं

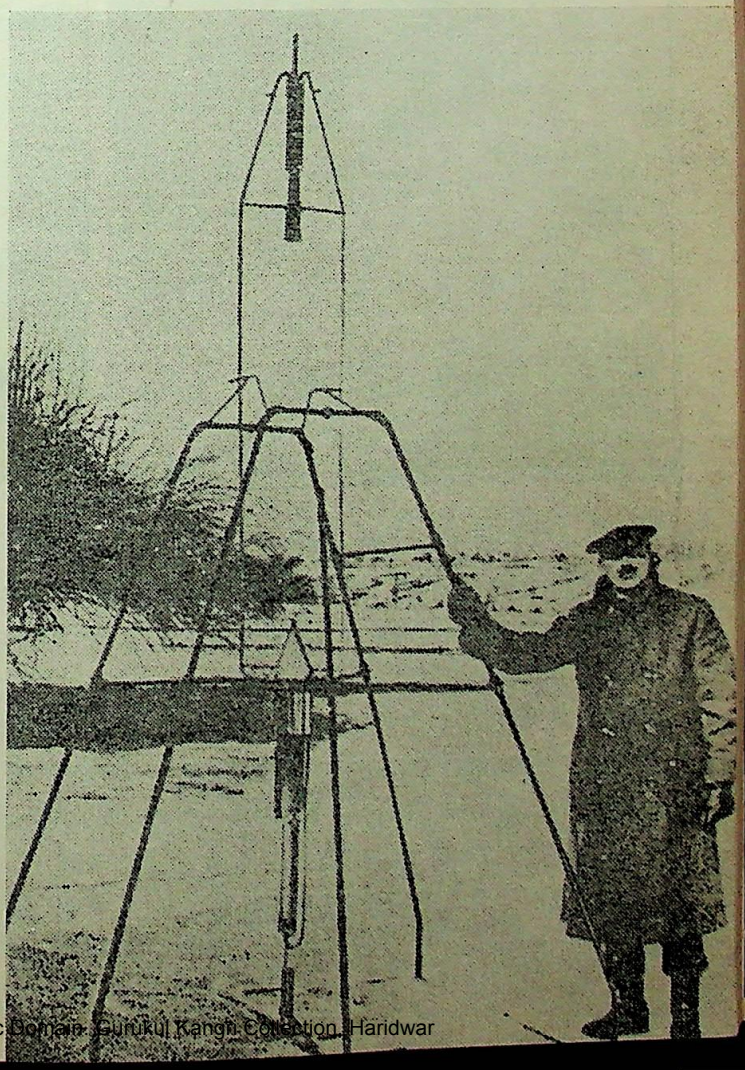

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

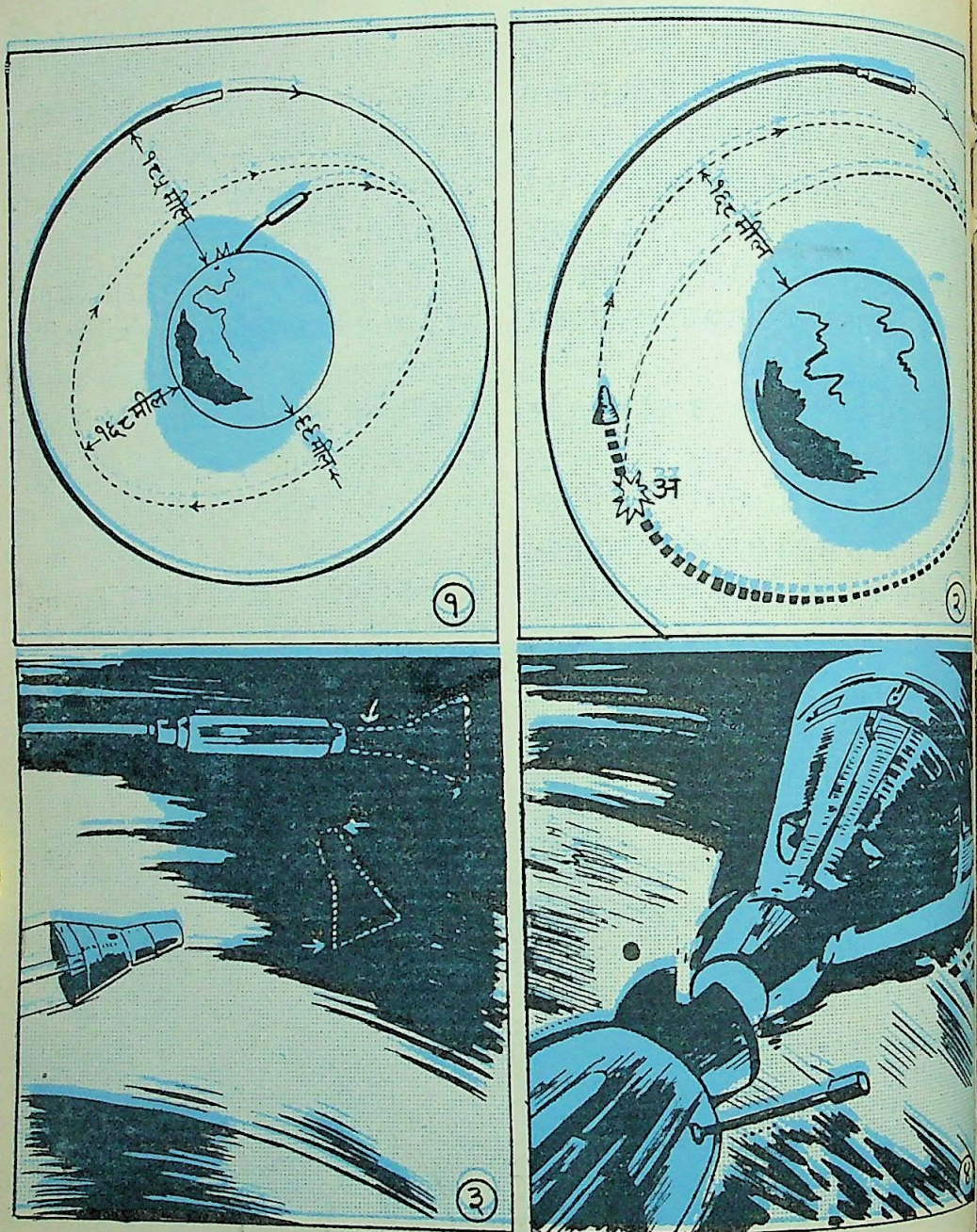

एक पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार २५ अक्तूबर १९६५ को जैमिनी-६ अन्तरिक्ष में भेजा जाने वाला था किन्तु वह योजना स्थगित हो गयी थी, क्योंकि एजेना राकेट का जैमिनी-६ यान से सम्मिलन होने वाला था, परन्तु वह परिक्रमा पथ में नहीं जा सका था। इस योजना के अनुसार—(१) एजेना एक वृत्ताकार परिक्रमा-पथ (गहरी रेखा) में भेजा जाने वाला था। यह पथ १८५ मील की ऊंचाई पर था। करीब १० मिनट बाद जैमिनी-६ यान छोड़ा जाता जो दीर्घवृत्ताकार पथ (बिन्दु रेखा) में १६८ मील अधिकतम तथा ९९ मील निम्नतम ऊंचाई पर होता। फिर अन्तरिक्षयात्री अ बिन्दु पर राकेट छोड़कर १६८ मील के वृत्ताकार पथ में आ जाते। (३) जब अन्तरिक्ष यान की दूरी ४२ मील रह जाती तो वे एक शक्तिशाली राकेट छोड़कर एजेना के सामने आ जाते। इस तरह दोनों अन्तरिक्ष यान एक ही परिक्रमा-पथ में ७,८४० मील प्रति घण्टे की गति में होते। (४) फिर अन्तरिक्षयात्री यनों के पूर्ण सम्मिलन तक एजेना के नजदीक होते जाते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८ बजकर ४५ मिनट पर शिर्रा ने पहली परिक्रमा समाप्त होने के समय जैमिनी-७ का पीछा करने के लिए अपना पहला राकेट दागा। इससे उसके यान ने अपनी कक्षा के उच्चतम स्थान में आवश्यक परिवर्तन कर लिया। उसकी स्थिति जैमिनी-७ से १७ मील नीचे और ६९० मील पीछे हो गयी। शुरू में अन्तरिक्ष यान की कक्षा १०० से लेकर १६० मील ऊंची थी। वह जैमिनी-७ से १,२०० मील पीछे था।

भारतीय समय के अनुसार रात के ९ बजकर २५ मिनट पर जब उसका यान हिन्द महासागर के ऊपर से गुजर रहा था, उसने छोटे-छोटे जैट इस्तेमाल किये ताकि उसकी कक्षा की निम्नतम ऊंचाई १३५ मील जाय। इसके बाद कई और जैट दागकर हो उसने अपनी कक्षा को और विस्तृत वर्गाकार कर लिया।

दोनों अन्तरिक्ष यानों के मध्य रडार द्वारा सम्पर्क की स्थापना सर्वप्रथम जैमिनी-६ की उड़ान के ३ घण्टे २२ मिनट बाद हुई। उसी समय दोनों अन्तरिक्ष यात्रियों के मध्य वार्ता का आरम्भ हो गया।

अन्तरिक्ष में यानों के मिलन के वे व्यग्र क्षण

जैमिनी-७ यान से १७ मील नीचे और ११५ मील पीछे रहने पर जैमिनी-६ की कक्षा पूर्णतया वृत्ताकार हो गयी। उस समय भारतीय समय के अनुसार रात के १० बजकर ४२ मिनट हुए थे और जैमिनी-६ हिन्द महासागर के ऊपर से गुजर रहा था।

भारतीय समय के अनुसार रात को १२ बजकर ३५ मिनट पर स्थिति में अन्तिम और सबसे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुआ। उस समय जैमिनी-६ अपनी तीसरी परिक्रमा में हिन्द महासागर के ऊपर से गुजर रहा था। अन्तरिक्षयान चालक शिर्रा ने अपने यान को जैमिनी-७ की कक्षा में पहुंचाने के लिए राकेट दागे। तब तक उनमें पांच मील की दूरी थी। शिर्रा ने रडार की मदद से और जैमिनी-७ की टिमटिमाती रोशनी को देखकर अपना कार्य प्रारम्भ किया। दोनों यानों की दूरी घटकर पांच मील से भी कम रह गयी। फिर यह अन्तर १·९ मील रह गया।

इसके बाद जब दोनों यान दिन की रोशनी में हवाई के ऊपर पहुंचे, तो द्वीप पर स्थित मार्गान्वेषी केन्द्र में स्टैफर्ड की आवाज सुनायी दी : 'अन्तरिक्ष में मिलन का प्रयत्न सफल हो गया है।' इस घोषणा पर सारा विश्व हर्षित हो उठा।

अन्तरिक्षयान लौट आये

जैमिनी-६ का पृथ्वी पर लौटना भी अन्तरिक्षयान चालन की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। शिर्रा जैमिनी-६ को अतलान्तक में उस स्थान पर उतार लाया जहां से उसे ले जाने वाला विमानवाहक जहाज वास्प २० मील से भी कम दूर था। शिर्रा ने पृथ्वी पर उतरने के लिए चार शक्तिशाली राकेट छोड़े। जैमिनी-७ यान उस समय अपनी १४ दिन की यात्रा का १२वां दिन लगभग पूरा कर चुका था। उसके चालक अन्तरिक्ष में सबसे अधिक समय तक रहने के पिछले सभी रिकार्ड तोड़ चुके थे।

फ्रैंक बोरमैन और जेम्स लावेल जब अपनी ऐतिहासिक अन्तरिक्ष यात्रा पर से वापस लौटे, तो उनकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी। उन्होंने अपनी यात्रा में पृथ्वी के २०६ चक्कर लगाये। उन्होंने ३३० घण्टे और ३५ मिनट की यात्रा की। इससे पहले और किसी अन्तरिक्ष-यान चालक ने इतने समय तक अन्तरिक्ष की उड़ान नहीं की थी।

पृथ्वी के वायुमण्डल में पुनः प्रवेश के समय भारी ताप के कारण जैमिनी-७ का रंग बिलकुल काला पड़ गया था। यान पैराशूट के सहारे अतलान्तक महासागर में उतरा। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

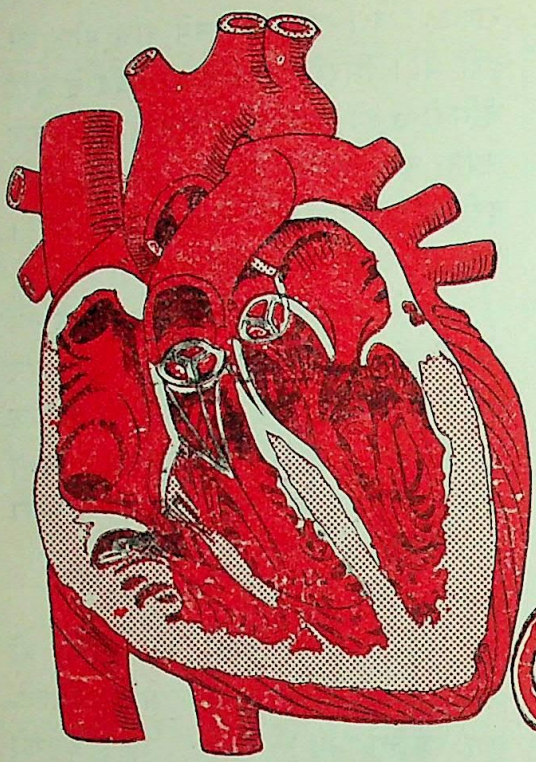

हृदय और हृदय रोग

सी. एल. संघी, एम. एस-सी.

मुट्ठी के आकार का मनुष्य का हृदय एक अद्भुत यन्त्र है। यह एक प्रकार का पम्प है जिसकी शक्ति बहुत ही विलक्षण है। हमारे शरीर में साधारणतः दस लिटर रक्त होता है, जिसे हृदय को एक मिनट में शरीर के अंगों में पम्प करना पड़ता है। इस गति से हृदय २४ घण्टे में दस हजार लिटर रक्त पम्प कर देता है। इससे भी ज्यादा कार्य, ६ से १० गुना कार्य, इसको तब करना पड़ता है जब हम कठोर परिश्रम करते हैं, अथवा मानसिक उत्तजना की स्थिति में होते हैं।

हृदय भी विश्राम करता है

इस प्रकार हृदय का अरुद्ध कार्य, जन्म के क्षण से मृत्यु तक, बराबर चलता रहता है। यह कार्य बहुत ही विलक्षण प्रतीत होता है। परन्तु ऐसी बात नहीं है। हृदय भी विश्राम करता है। हृदय के संकुचन (systole) तथा प्रसार (diastole) के बीच थोड़ा समय होता है, और यही समय हृदय के विश्राम का समय होता है। हमारी नाड़ी एक मिनट में ४० बार धड़कती है तथा नाड़ी की इस गति के हिसाब से क्षेपक प्रकोष्ठ के संकुचन का समय (contraction phase) विश्राम के समय (relaxation phase) से आधा पाया गया है अर्थात् २४ घण्टे में हमारा हृदय ८ घण्टे काम करता है और शेष १६ घण्टे इसे विश्राम के मिलते हैं।

फिर भी यह तो निश्चित है कि शरीर के अन्य सभी अंगों की अपेक्षा हृदय को अधिक कार्य करना पड़ता है। इतना अधिक कार्य करने पर भी इसमें शक्ति-संचय (reserve) की अपूर्व क्षमता पायी गयी है, यहां तक कि यह रोगग्रस्त हो जाने पर भी कई वर्षों तक कार्य करता रहता है। दूसरी ओर कुछ बीमारियां हृदय की मांसपेशियों की क्षमता इस हद तक नष्ट कर देती हैं कि इसकी गति रुक जाती है। बहुत से रोग विशेषज्ञों का मत है कि हृदय रोग नयी सभ्यता की देन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु आंकड़े इसके विपरीत हैं। हृदय तथा धमनी-शिरा के रोग तो अनादि काल से चले आ रहे हैं। यह अलग बात है कि आज के युग में ये अधिक देखने में आते हैं। तथ्य है कि इन रोगों की सही-सही जानकारी इस युग में ही सम्भव हो पायी है।

हृदय की बनावट एवं कार्य-प्रणाली

हृदय चार प्रकोष्ठों में विभाजित होता है। ऊपरी दो प्रकोष्ठ रक्त एकत्र करते हैं, तथा नीचे के दो प्रकोष्ठ पम्प करने वाले होते हैं। दायीं ओर के प्रकोष्ठों का बायीं ओर के प्रकोष्ठों से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं होता। ऊपर के दायें प्रकोष्ठ में शिराओं द्वारा लाया गया गन्दा रक्त एकत्र होता है। फिर उसे नीचे के प्रकोष्ठ में ऊपर का दायां प्रकोष्ठ भेज देता है। यहां हृदय की मांसपेशियां सिकुड़ती हैं तथा इस रक्त को फेफड़ों में धकेल देती हैं। अब आक्सीजन मिश्रित शुद्ध एवं चमकीला रक्त हृदय के ऊपर के बायें प्रकोष्ठ में वापस पहुंचता है। यहां से यह एक कपाटरूपी झिल्ली द्वारा नीचे के बायें प्रकोष्ठ में आता है। नीचे के बायें प्रकोष्ठ के संकुचन-दबाव द्वारा फिर यह धमनियों में पहुंच जाता है, और शरीर में चक्कर लगाता है।

नवजात शिशु में हृदय रोग

हृदय के कुछेक रोग तो कभी-कभी जन्म लेने से पूर्व ही लग जाते हैं। भ्रूण के विकास के प्रथम तीन महीनों में यदि कोई अनियमितता हो जाय (जैसे माता को इस (गर्भ) काल में खसरा (वाइरस जन्य संक्रामक रोग) हो जाना), तो बच्चे के हृदय का विकास ठीक से नहीं हो पाता। इसी प्रकार गर्भावस्था के प्रथम तीन मास में माता का नशीली वस्तुएं सेवन करना अथवा हानिकारक विकिरणों के प्रभाव में आना बच्चे के हृदय को रोगग्रस्त कर देता है। इस प्रकार से पैदा हुए दस बच्चों में से केवल तीन ही दस वर्ष की आयु तक जीवित रह पाते हैं और वह भी शारीरिक एवं बौद्धिक दृष्टि से हीन (retarded) बने हुए।

बालकों के हृदय रोग

व्ही.एस.डी. रोग : हृदय के निचले बायें तथा दायें पम्प करने वाले प्रकोष्ठ 'वाटर टाइट' होते हैं, जिनमें एक-दूसरे से द्रव रिस नहीं सकता। परन्तु इस व्ही.एस.डी. रोग में वहां एक छिद्र हो जाता है, जिसमें से बायें प्रकोष्ठ से लाल रक्त दायें प्रकोष्ठ में चला जाता है। इस प्रकार वह अनावश्यक रूप से फेफड़ों में फिर से पहुंच जाता है, जिससे फेफड़े तथा हृदय रक्त से लबालब भर जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप हृदय और फेफड़ों में भयानक रोग हो जाता है।

आमवातजन्य ज्वर (rheumatic fever): यह ज्वर हृदय को, विशेषकर बालकों के हृदय को कभी-कभी बहुत क्षति पहुंचा देता है। इस प्रकार के ज्वर से द्विपत्रक-द्वार (mitral valve) कठोर हो जाते हैं तथा उनके खुलने अथवा बन्द होने में अनियमितता आ जाती है। आज उन्नत देशों में इस प्रकार से रोगग्रस्त द्वारों के स्थान पर नकली द्वार लगाये जा रहे हैं।

हृदय एवं धमनी रोग

हृदय आघात (heart attack), हृदय-धमनी रोग तथा पेशीजन्य शूल (angina pectoris) आदि हृदय रोगों के बारे में तो प्रत्येक व्यक्ति ने सुना होगा, परन्तु इनके विषय में जानकारी बहुत कम लोगों को ही होती है यदि हम हृदय रोगों के कारणों को समझ लें, तो इन घातक रोगों से बहुत हद तक छुटकारा पाने में सफल हो सकते हैं। सबसे पहले हमें यह समझ लेना है कि शरीर के दूसरे अंगों की ही भांति हृदय की मांसपेशियों को भी निरन्तर पोषक तत्त्वों तथा आक्सीजन की आवश्यकता रहती है, और इसके अतिरिक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहां कप उपर्थतिजनरदार्थ (waste products) भी बराबर निष्कासित होते रहने चाहिये। ये दोनों कार्य धमनियों में चक्कर लगाते हुए रक्त द्वारा सम्पन्न होते रहते हैं। अब यदि किसी भी हृदय की धमनी में अचानक कोई रुकावट आ जाय, तो हृदय का उस धमनी से सम्बन्धित भाग रक्त से वंचित रह जायेगा, तथा वह अपना कार्य बन्द कर देगा। इस प्रकार के हृदय रोग (myocardial infarction) में छाती में दर्द होने लगता है और कभी-कभी तो हृदय की गति ही रुक जाती है। यदि मुख्य हृदय-धमनी में पूर्ण रुकावट आ जाय तब तो तुरन्त मृत्यु हो जाती है। और यदि रुकावट अपूर्ण हो, तो रक्त की प्रवाह मात्रा (supply) कम हो जाती है, जिससे विश्राम की अवस्था में तो तकलीफ नहीं मालूम पड़ती, परन्तु जैसे ही कोई कठोर कार्य करना पड़ता है या मानसिक तनाव बढ़ने पर छाती में दर्द आरम्भ हो जाता है।

धमनियों का कठोर होना

हृदय के ९० प्रतिशत रोगों में हृदय-धमनियों का कठोर होना पाया जाता है। मस्तिष्कीय आघात में भी मस्तिष्क की धमनियों का कठोर होना पाया गया है। धमनियों में कठोरता उनका लचीलापन कम होने से आरम्भ हो जाती है, जिससे धमनियों के अन्दर की दीवार पर तन्तु (fibrous plaques) जमा होते रहते हैं। ये तन्तु धीरे-धीरे बढ़ते ही रहते हैं, और धमनी कठोर से कठोरतर होती रहती है। कभी-कभी अलसररूपी फोड़े भी धमनियों में कठोरता पैदा कर देते हैं। धमनियों के कठोर हो जाने पर रक्त के संचार में रुकावट तो पड़ती ही है, क्योंकि उनका मुंह छोटा पड़ जाता है, साथ-साथ इसका दूसरा भयंकर परिणाम यह होता है कि क्षतिग्रस्त धमनी की दीवार पर रक्त का थक्का बनने लगता है, जो अपने आकार के अनुसार उस धमनी में रक्त-संचार को ही बन्द कर देता है। इस प्रकार रक्त का थक्का यदि हृदय या मस्तिष्क की धमनी में बन जाय तो परिणाम मृत्यु होती है।

धमनी काठिन्य के कारण

इस भयंकर रोग के मुख्यतः निम्नलिखित कारण होते हैं—अत्यधिक पौष्टिक भोजन, मोटापा, ऊंचा रक्तचाप, धूम्रपान, शारीरिक व्यायाम की कमी, आधुनिक जीवन की तनावपूर्ण तीव्र गति, दीर्घस्थायी नाड़ी तनाव (chronic nervous tension) तथा कुछेक रोग, जैसे मधुमेह तथा सर्पांगशोथ (myxoedema) इत्यादि। इनमें सबसे अधिक प्रभाव तो हमारे आहार का पड़ता है, जिसमें पशुजन्य चिकनाई की अधिकता ज्यादा हानिकारक पायी गयी है। कुछेक विद्वानों का यह भी मत है कि वंश-प्रभाव (heredity) भी इस प्रकार के रोगों में बहुत हद तक उत्तरदायी होता है।

आज हमारे पास धमनियों को कठोर होने से रोकने अथवा उनकी कठोरता दूर करने के कोई निश्चित उपाय नहीं हैं। परन्तु यदि हम अपने भोजन तथा शक्ति-व्यय में, शारीरिक एवं मानसिक क्रियाओं में तथा कार्यों और विश्राम में उचित सन्तुलन बनाये रखें, तो इस रोग को बहुत हद तक दूर रखा जा सकता है।

उच्च रक्तचाप

आयु के साथ-साथ रक्तचाप भी बढ़ता रहता है। परन्तु हृदय के संकुचन के समय का रक्तचाप यदि १६० एम. एम. से अधिक हो अथवा हृदय के विस्फार के समय का रक्तचाप ९० एम. एम. से अधिक हो, तो यह उच्च रक्तचाप कहलाता है, तथा चिन्ता का विषय है। उच्च रक्तचाप बायें क्षेपक-कोष्ठ (left ventricle) पर अधिक दवाब डालता है क्योंकि उसे रक्त संचार करने के लिए अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शक्ति लगाकर सिकुड़ना पड़ता है। इस प्रकार हृदय पर अधिक कार्यभार बराबर पड़ने से बायां क्षेपक कोष्ठ आकार में फैल जाता है और निर्बल हो जाता है। कभी-कभी गुरदे की सूजन अथवा अन्तः स्रावी ग्रन्थियों की बीमारियां भी उच्च रक्तचाप का कारण बन जाती हैं। मानसिक तनाव एवं चिन्ताएं भी इस रोग के प्रमुख कारणों में गिनी जा सकती हैं।

पुरुष तथा स्त्रियों में हृदय रोग

प्रत्येक आयु में स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा हृदय रोगों की संख्या कम पायी गयी है। इसके दो कारण हैं—(१) स्त्रियों में हारमोन्स का अधिक सन्तुलित मात्रा में उपस्थित होना तथा (२) उनके रहन-सहन के ढंग का अन्तर। स्त्रियों का कार्यक्षेत्र एवं वातावरण पुरुषों से भिन्न होता है, वे धूम्रपान बहुत कम करती हैं तथा पुरुषों की अपेक्षा अधिक चुस्त रहती हैं। ये ही कुछेक कारण हैं जिनसे स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा हृदय रोग कम होते हैं।

स्त्रियों के मासिक धर्म समाप्ति (menopause) के काल के बाद उनमें पुरुषों की अपेक्षा अधिक संख्या में उच्च रक्तचाप एवं कुछ अन्य शिरा-सम्बन्धी रोगों का होना पाया गया है।

आर्थिक दृष्टि से उन्नत देशों में इस शताब्दी के अर्द्ध भाग के बाद से सभी वर्गों के

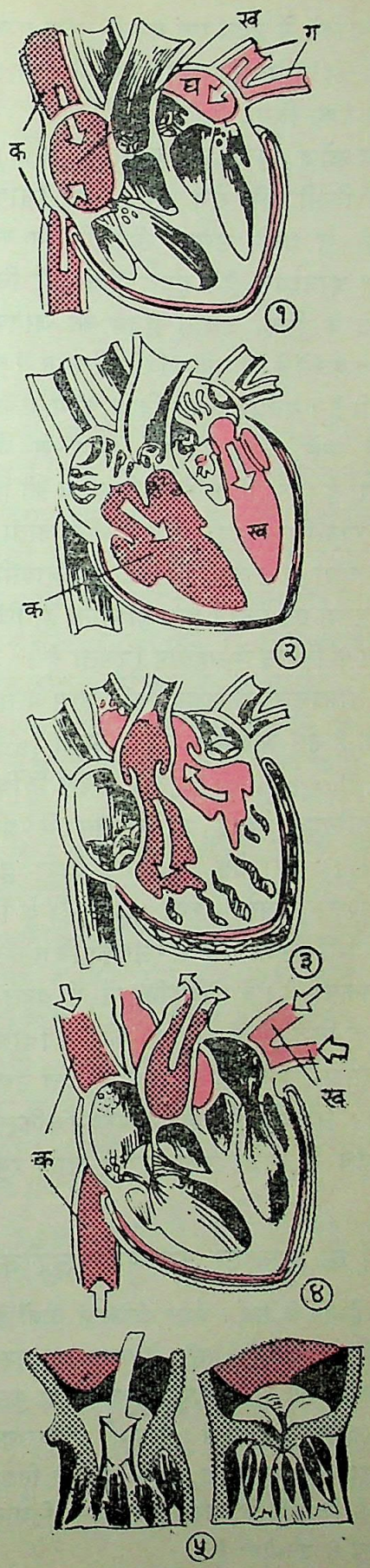

रक्त का चक्र—(१) शिराओं से रक्त ऊपरी प्रकोष्ठ में पहुँचता है—(क) शरीर से, (ख) ऊपरी दायां प्रकोष्ठ, (ग) फेफड़ों से और (घ) ऊपरी बायां प्रकोष्ठ; (२) अलिन्दों के संकुचन की शक्ति से रक्त निचले प्रकोष्ठों में पहुँचता है—(क) निचला दायां प्रकोष्ठ और (ख) निचला बायां प्रकोष्ठ; (३) निचले प्रकोष्ठ संकुचित होते हैं। अलिन्द के वाल्व बन्द हो जाते हैं, और धमनी के वाल्व खुल जाते हैं। दायें प्रकोष्ठ से रक्त फेफड़ों में जाता है और बायें से शरीर के अन्य भागों में; (४) यह चक्र चलता रहता है—(क) शरीर से और (ख) फेफड़ों से; और (५) हृदय के दोनों वाल्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्री-पुरुषों में हृदय एवं धमनी-शिरा-सम्बन्धी रोगों की अधिकता पायी गयी है, जो बहुत चिन्ता का विषय है।

हृदय खोज (Heart Exploration)

किसी भी रोग की उचित चिकित्सा करने से पहले उसका ठीक निदान करना बहुत आवश्यक है। हृदय रोगों का निदान करने के लिए, अर्थात् हृदय की जानकारी प्राप्त करने के लिए, कुछ विधियां काम में लायी जाती हैं। सर्वप्रथम जो विधि काम में लायी गयी उसे 'कैथेटराजेशन' नाम से जाना जाता है। इस विधि में ध्वनि-तरंग को किसी भी रक्त-शिरा द्वारा हृदय में भेजा जाता है। इस क्रिया द्वारा हृदय में विद्यमान आक्सीजन की मात्रा एवं दबाव ज्ञात हो जाता है, जिससे रोगों के निदान में सहयोग मिलता है।

आजकल जो उन्नत विधि काम में लायी जाती है उसे अंजीओकारडीओग्राफी (angi-ocardiography) कहते हैं। इस विधि में आयोडीनयुक्त कोई पदार्थ रक्त में प्रवेश (inject) करा देते हैं, जिसके द्वारा हृदय तथा शिराएं एक्स-किरणों (x-rays) के लिए अपारदर्शी बन जाती हैं और उनका चित्र खींचा जा सकता है। ये चित्र निदान में बहुत ही सहायक सिद्ध हुए हैं। निदान की इन विधियों द्वार शल्य-चिकित्सा के क्षेत्र में बहुत उन्नति हुई है। सदियों तक हृदय शल्य-चिकित्सक की पहुंच से बाहर रहा, परन्तु आज रक्त-प्रणाली के अन्दर से बाधाओं को दूर कर देना हृदय के अनावश्यक छिद्रों को बन्द कर देना तथा क्षतिग्रस्त वाल्वों को बदल देना कठिन कार्य नहीं रहा।

हृदय-फेफड़ा-यन्त्र

१९५३ तक हृदय के आपरेशन के समय रोगी को जिन्दा रखने के लिए कोई साधन नहीं खोजा गया था। मानव मस्तिष्क तीन मिनट से अधिक देर तक स्वच्छ रक्त के अभाव में बिना क्षति के नहीं रह सकता। निपुण से निपुण डाक्टर को भी हृदय के प्रकोष्ठों को ठीक करने के आपरेशन में आधा घण्टा से कम नहीं लगता। इस कठिनाई पर पूर्ण विजय हृदय-फेफड़ा-यन्त्र के आविष्कार के बाद प्राप्त हो पायी है।

इस यन्त्र के सिलिण्डर में रक्त की कई बोतलें पहुंचा दी जाती हैं तथा रक्त को शरीर के तापमान के बराबर गरम कर दिया जाता है। सिलिण्डर के कुछ भाग में आक्सीजन होती है। यह यन्त्र हृदय के स्थान पर मस्तिष्क एवं शरीर के सभी भागों में रक्त-संचार की व्यवस्था बनाये रखता है तथा फेफड़ों के स्थान पर आक्सीजन की अवश्यकता को भी पूर्ण करता रहता है। आपरेशन के समय जो रक्त निकल जाता है उसे तौल लेते हैं, जिससे बाद में उसकी पूर्ति की जा सके। इस प्रकार इस यन्त्र की सहायता से आज हृदय के आपरेशन बहुत सफलतापूर्वक होने सम्भव हो गये हैं।

घावों के इलाज का नया तरीका

हैम्बर्ग के सर्जन मैक्स गीबेल ने घावों के इलाज का एक नया तरीका निकाला है। वह उन्हें आपस में जोड़ देता है। सरेस के बजाय वह एक्राइकिल ईस्टर का प्रयोग करता है। यह कृत्रिम सरेस से तैयार किया गया है; जीवाणु नाशक है तथा कुछ ही सप्ताहों में घुल जाता है। इस अवधि में घाव अच्छे तौर से अच्छा हो जाता है। घाव को परम्परागत तरीके से सीने की अपेक्षा इस नयी विधि से जोड़ने का सबसे बड़ा लाभ यह है कि बाद में घाव के निशान नजर नहीं आते। वे पूरी तरह भर जाते हैं। यह उल्लेख्य है कि सीने के कारण ही घाव के निशान रह जाते हैं। चेहरे के घावों के लिए यह नया तरीका विशेष रूप से उपयोगी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

70250

रासायनिक खाद

राजेन्द्रप्रसाद वार्ष्णेय, एम. एस-सी.

यह स्पष्ट है कि आजकल विश्व की जनसंख्या बढ़ रही है। तीन शताब्दी पूर्व विश्व की जनसंख्या ५० करोड़ थी और आज यह ३ अरब से भी अधिक है; यदि वृद्धि की गति यही रही तो वर्तमान शताब्दी के अन्त तक यह ६ अरब तक पहुंच जायेगी।

मनुष्य के सामने समस्या है कि उसे खाने को अन्न चाहिये, इसलिए अन्न की पैदावार बढ़ाना आवश्यक है। इस समस्या का आंशिक हल तो सुधरी हुई तकनीकी किस्मों से हो सकता है। अब कुछ नये क्षेत्रों को भी कृषि और चरागाहों के रूप में उपयोगी बनाया जा सकता है। लेकिन इस दिशा में उपलब्धियां सीमित हैं। यद्यपि सम्पूर्ण भूमि के क्षेत्रफल का ७ प्रतिशत ही खेती के लिए प्रयोग में लाया जाता है, फिर भी शेष क्षेत्र का अधिकतर भाग अधिक गरम या अधिक ठण्डा या अन्य कारणों से खेती के उपयुक्त नहीं है। इस प्रकार न तो जंगलों को साफ करना और न बेकार जमीन पर बृहद् पैमाने पर खेती इस समस्या के समाधान का हल प्रस्तुत करती है।

अत्यधिक धन खर्च करके और सुधरी हुई विधियों से सिंचाई, नालों और अन्य प्रकार की सुविधाएं देकर बहुत-सी जमीन को उपजाऊ बनाया जा सकता है, लेकिन इस प्रकार के कार्यक्रमों की शीघ्र भारत में कोई सम्भावना नहीं है। इसलिए हमें कम दामों में और कम समय में पूर्ण होने वाले तरीकों पर विचार करना है। कम समय में कृषि उत्पादन बढ़ाने का सबसे अच्छा तरीका खेतों में रासायनिक खाद का उपयोग है। कम उपजाऊ जमीन में इसके उपयोग से बहुत ही अच्छे निष्कर्ष निकले हैं और कहीं-कहीं तो दिये गये पोषक तत्त्वों से उपजने वाले अतिरिक्त अनाज का अनुपात १ और १० है। इससे स्पष्ट है कि इस तरह के खर्च से जल्दी ही पैदावार को दूना किया जा सकता है।

आज ३ करोड़ टन से भी अधिक पोषक तत्त्व, नाइट्रोजन, फास्फेट और पोटैशियम रासायनिक खाद द्वारा विश्व भर के खेतों में एक वर्ष में दिये जाते हैं। इतनी मात्रा भी काफी नहीं है और फसल की पैदावार कम खाद के साथ घटती है। इस तरह २००० में ६ अरब जनसंख्या को १२ करोड़ टन प्राथमिक पोषक तत्त्वों की आवश्यकता पड़ेगी।

इसका अर्थ यह है कि अतिरिक्त मनुष्य को एक वर्ष में ६० पौण्ड प्राथमिक पोषक तत्त्वों की आवश्यकता पड़ेगी जो आज के १०० पौण्ड रासायनिक खाद के बराबर है। लेकिन इतने अतिरिक्त खाद का उत्पादन कठिन नहीं है। निश्चय ही आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन की विधियां अच्छी तरह ज्ञात हैं और उन्हें बड़े पैमाने पर बढ़ाया भी जा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता है, अगर काफी धन प्राप्य हो।

पौधों का दीर्घ और सूक्ष्म भोजन

एक बढ़ते हुए पौधे को १६ पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होती है जिनमें से ९ की अधिक मात्रा में और ७ की कम मात्रा में। प्रथम को गुरु पोषक तत्त्व (macronutrients) और बाद वालों को सूक्ष्म पोषक तत्त्व (micronutrients) कहते हैं। अधिकतर पौधे तीन गुरु पोषक तत्त्व, कार्बन, आक्सीजन एवं हाइड्रोजन, को वायुमण्डल से तथा अन्य तत्त्वों को जमीन से लेते हैं। मिट्टी के प्राथमिक गुरु पोषक तत्त्व नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटैशियम हैं जिन्हें खाद के बोरों पर N, P, और K या संख्या १०,१२,८ द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। प्रायः ये तीनों संख्याएं खाद में, (१) सम्पूर्ण नाइट्रोजन, (२) फास्फोरस पेण्टाआक्साइड (P_2O^5) जिसे प्रायः फास्फेट कहते हैं (३) पानी में घुलनशील पोटैशियम आक्साइड (K_2O) जिसे प्रायः पोटाश कहते हैं, की प्रतिशत मात्रा बनाती हैं।

तीन अन्य मिट्टी के गुरु पोषक तत्त्व कैल्शियम, मैगनीशियम और सल्फर हैं। इन्हें द्वितीयक गुरु पोषक तत्त्व कहते हैं। कृषि चूना, चूना पत्थर और डोलोमाइट (Dolomite) भी, जिन्हें मिट्टी की अम्लीयता दूर करने के लिए प्रयोग किया जाता है, कैल्शियम और मैग्नीशियम के स्रोत हैं। सात सूक्ष्म पोषक तत्त्व जो कभी-कभी बहुत कम मात्रा में खाद में मिलाये जाते हैं, बोरोन, तांबा, लोहा, मैंगनीज, मोलब्डनम, जिंक और क्लोरीन हैं।

पौधों का पचने वाला भोजन

पौधों की वृद्धि एक बहुत ही जटिल क्रिया है, लेकिन इतना कहा जा सकता है कि खनिज पोषक तत्त्वों का मिट्टी से पौधों में जाने का मार्ग मिट्टी के ठोस कणों का मिट्टी के पानी में और फिर वहां से जड़ों में जाना है। पोषक तत्त्वों का मिट्टी से जड़ों को स्थानान्तरण खनिज आयनों का चलना है। आयन अधिकतर मिट्टी के पानी में होते हैं लेकिन इनमें से कुछ ठोस मिट्टी के कणों के रूप में सोख लिये जाते हैं। इससे यह निकल निकलता है कि पोषक तत्त्व आयनों के रूप में या मिट्टी की क्रियाओं द्वारा आयनों में बदल जाने के योग्य होने चाहिये। इसलिए खनिज की मिट्टी में कमी ही पौधों के लिए पोषक तत्त्वों की कमी को प्रदर्शित नहीं करती है समस्या यह भी हो सकती है कि पोषक तत्त्व उस रूप में उपस्थित न हों जिसमें पौधे उन्हें ले सकें।

मुख्यतः रासायनिक खाद उद्योग में हल अक्रियाशील नाइट्रोजन को घुलनशील लवणों में बदलने के अलावा बेकार पोषक तत्त्वों के अणुओं को घुलनशील लवणों में बदलने का कार्य भी करती है, जिससे पौधे उन्हें आसानी से ले सकें।

पौधों की भूख

कृषि योग्य खेतों में खनिज पोषक तत्त्वों की आवश्यकता का अन्दाज मिट्टी से फसलों और चरागाहों के रूप में लिये गये पोषक तत्त्वों से लगाया जा सकता है। गेहूं का टन नाइट्रोजन के ४० पौण्ड, फास्फोरस के पौण्ड और पोटैशियम के ९ पौण्ड के बराबर होता है। अगर भूसा, जड़ें और अन्य कृषि की बेकार वस्तुएं मिट्टी को न लौटायी जायें तो मिट्टी में पोषक तत्त्वों की बहुत कमी हो जायगी। और अगर मिट्टी से इसी तरह उपज लेते रहें, तो मिट्टी जल्दी ही बेकार हो जायगी। इसलिए उसे किसी उपयुक्त खाद की आवश्यकता है।

खाद द्वारा उतनी ही मात्रा में पोषक तत्त्वों का देना ही काफी नहीं है जितनी उपज मिट्टी से ली जाती है। लेकिन कुछ और भी बातें हैं जिन्हें ध्यान में रखना जरूरी है। मिट्टी से पोषक तत्त्वों को पानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा लिया जाता है। मिट्टी में उपस्थित पोषक तत्त्व उस रूप में नहीं होते हैं जिसमें पौधे उन्हें ग्रहण करते हैं। इसलिए फसल मिट्टी से ७५ प्रतिशत से अधिक नाइट्रोजन और फास्फोरस नहीं ले पाती है और कभी-कभी उपयोगी फास्फोरस की मात्रा १० प्रतिशत तक ही होती है। इस हानि को ध्यान में रखते हुए भी खाद द्वारा फसल की पैदावार को बहुत बढ़ाया जा सकता है। एक कम उपजाऊ जमीन में खाद द्वारा पैदावार को दस गुना बढ़ाया जा सकता है जबकि उपजाऊ जमीन में खाद द्वारा पैदावार को दुगुना बढ़ाया जा सकता है। अधिक से अधिक उपजाऊ जमीन की उपज को तिगुना ही किया जा सकता है।

इस कम होते बदले से एक सीमा आ जाती है जब अतिरिक्त पैदावार दी गयी अतिरिक्त खाद की कीमत से कम रह जाती है। वनस्पति-विज्ञान के सिद्धान्तों में भी मिट्टी में अधिक पोषक तत्त्व पौधों को हानि पहुंचाते हैं।

आधुनिक खाद उत्पादन

आज का किसान भिन्न-भिन्न किस्म की खाद को खरीद सकता है। और वह एक पोषक तत्त्व की जरूरत महसूस करता है, तो उसे उस तत्त्व को देने वाली खाद भी मिल सकती है। उसे ऐसी खाद भी मिल सकता है जिसमें नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैशियम और अन्य पोषक तत्त्व प्रत्येक अनुपात में उपस्थित हों। खाद्य और कृषि संगठन के हाल के अनुमानों से हर वर्ष पूरे विश्व में ३·३ करोड़ टन खाद का उत्पादन होता है।

आजकल प्राथमिक उत्पादन में प्रयुक्त विधियां निम्नलिखित हैं—

नाइट्रोजन स्रोत

खाद में नाइट्रोजन का मुख्य स्रोत संश्लेषित अमोनिया है। अमोनिया को हैबर और बोश की विधि द्वारा नाइट्रोजन और हाइड्रोजन के संश्लेषण से प्राप्त किया जाता है। शुद्ध नाइट्रोजन और हाइड्रोजन का अत्यधिक मात्रा में कम दामों में उत्पादन, इसके उत्पादन में एक समस्या उत्पन्न करता है।

नाइट्रोजन को शुद्ध हवा से द्रवीकरण या आक्सीकरण द्वारा आक्सीजन को निकाल कर किया जाता है। हाइड्रोजन को कुछ पुराने कारखाने विद्युत् विश्लेषण द्वारा प्राप्त करते थे। लेकिन अधिक कीमत के कारण उनका ध्यान सस्ते स्रोतों की ओर गया। ठोस ईंधन जैसे कोयला और लिगनाइट (lignite) से हाइड्रोजन प्राप्त करने के तरीके यूरोप में इजाद किये गये हैं। अमरीका में जहां प्राकृतिक गैस बहुतायत से पायी जाती है, मीथेन से हाइड्रोजन प्राप्त की जाती है। आजकल उन

रासायनिक खादें मुख्यतः तीन प्रकार की होती हैं

रासायनिक खादें

- नाइट्रोजन देने वाली
  - अमोनियम सल्फेट
  - सोडियम नाइट्रेट
  - पोटैशियम नाइट्रेट,
- फास्फेट देने वाली सुपर फास्फेट
  - सुपर फास्फेट
- पोटाश देने वाली
  - पोटैशियम सल्फेट
  - पोटैशियम क्लोराइड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देशों में जहां प्राकृतिक गैस की कमी है, पेट्रोलियम के भागों से उत्प्रेरक द्वारा क्रिया कराके हाइड्रोजन प्राप्त की जाती है जैसे नैप्था (neptha) पर भाप की क्रिया द्वारा तथा भारी तेल (heavy oil) के आक्सीजन द्वारा आक्सीकरण से विशाल पैमाने पर हाइड्रोजन का उत्पादन होता है। भारत में प्राकृतिक गैस और पेट्रोलियम दोनों ही से हाइड्रोजन बनायी जाती है।

कुछ देशों (अमरीका आदि) में अजल अमोनिया या अमोनिया के जल में घोल को सीधे ही जमीन में अन्दर पहुंचाया जाता है। लेकिन अधिकतर कृषि अमोनिया को इसके ठोस लवणों में बदल दिया जाता है। अमोनियम नाइट्रेट इसका बहुत प्रचलित रूप है; क्योंकि इसके उत्पादन में प्रयोग किया गया नाइट्रिक अम्ल भी अमोनिया से ही बनाया जाता है।

इसी प्रकार अमोनिया और कार्बन डाइ-आक्साइड के संयोग से यूरिया बनाया जाता है। अमोनियम सल्फेट भी विशाल मात्रा में अमोनिया पर गन्धक के अम्ल की क्रिया द्वारा बनाया जाता है।

पूर्व में मुख्यतः अमोनियम क्लोराइड को खाद के रूप में प्रयोग करते हैं। इसे अमोनिया पर नमक के अम्ल या नमक की क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है।

अमोनिया खाद के ठोस होने से उसके यातायात और भूमि में प्रदान करने में आसानी रहती है। यूरिया में नाइट्रोजन की ६६ प्रतिशत मात्रा तथा अमोनियम नाइट्रेट में नाइट्रोजन की ३३·५ प्रतिशत मात्रा उन्हें खाद के रूप में बहुत उपयोगी बना देती है।

फास्फेट स्रोत

अधिकतर फास्फेट खाद खनिज भण्डारों से आती है जो मुख्यतः फ्लोरिडा, पश्चिमी अमरीका, उत्तरी अफ्रीका और रूस के कुछ भागों में पाये जाते हैं। कुछ खनिज दुनिया में विस्तृत रूप से फैले हुए हैं; लेकिन फास्फेट खनिज बालू, मिट्टी और अयस्क के कुछ फुट अन्दर पाये जाते हैं जिससे इन्हें खुरचकर या खोदकर निकाला जा सकता है। इस तरह प्राप्त खनिज में फास्फेट की मात्रा १५ प्रतिशत और शेष मिट्टी तथा बालू होती है। अधिकतर बालू और मिट्टी को विभिन्न विधियों द्वारा हटा दिया जाता है। इस प्रकार ४० प्रतिशत तक फास्फेट प्राप्त हो जाता है। यह विधि फ्लोरिडा में प्रयोग की जाती है।

उत्तरीअफ्रीका में फास्फेट की बृहद् चट्टानों को भूमिगत तरीकों द्वारा ही साफ किया जाता है, और जहाजों में भेजने से पहले पीसा और सुखाया जाता है। इन तरीकों से विभिन्न प्रकार की फास्फेट खाद बनायी जाती हैं। सबसे आम आकार में १ मिलीमीटर से भी छोटे कण हैं जिन्हें आम्लिक मिट्टी में सीधे ही डाल दिया जाता है। ये धीरे-धीरे पानी में अघुलनशील फास्फेट को ऐसे रूप में बदल देते हैं जिसे पौधे आसानी से ले सकते हैं।

दूसरा रूप सुपर फास्फेट है जिसे सल्फ़ुरिक अम्ल की क्रिया द्वारा बनाया जाता है और पीसकर दानेदार बना दिया जाता है। यह दानेदार द्रव्य बाजार में या तो फास्फेट खाद के रूप में मिलता है, जिसमें ८० प्रतिशत जल में घुलनशील फास्फोरस पेण्टाआक्साइड होता है, या किसी दूसरे खाद द्रव्य के साथ मिलाकर प्रयोग किया जाता है। विभिन्न प्रक्रियाओं में अघुलनशील ट्राईकैल्शियम फास्फेट को पानी में घुलनशील मोनोकैल्शियम फास्फेट और जिप्सम में बदला जाता है। जिप्सम का प्रभाव फास्फोरस पेण्टाआक्साइड के भाग को कम करना है इसलिए इसमें से जिप्सम को निकालना आवश्यक है। ट्राई कैल्शियम फास्फेट को बिना जिप्सम के प्राप्त करने के लिए फास्फेट चट्टान को सल्फ़ुरिक अम्ल और फास्फोरिक अम्ल के मिश्रण में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

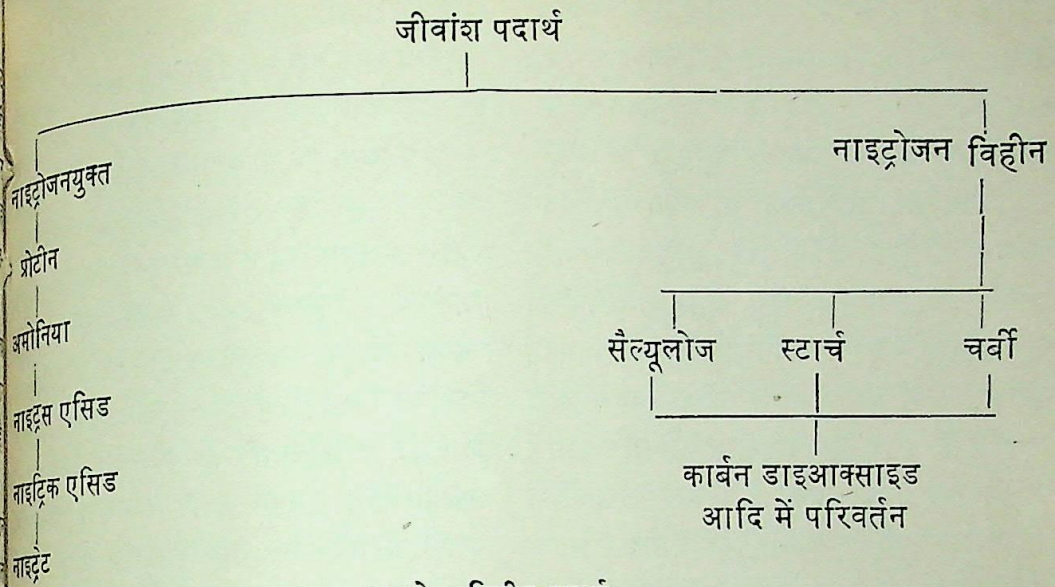

नाइट्रोजनविहीन पदार्थ

लिया जाता है जिससे जिप्सम बन जाता है और अतिरिक्त फास्फोरिक अम्ल को छानकर अलग कर लिया जाता है। इसके बाद जिप्सम को अलग कर दिया जाता है और फास्फोरिक अम्ल को गाढ़ा किया जाता है तथा पिसी हुई फास्फेट चट्टान के साथ इसे मिलाया जाता है। कुछ ही देर में यह मिश्रण जम जाता है। इसे ट्रिपल फास्फेट कहते हैं। इसमें पानी में घुलनशील फास्फोरस पेण्टाआक्साइड ४८ प्रतिशत होता है। यह साधारण सुपर फास्फेट से सस्ता होता है।

काफी मात्रा में फास्फेट खाद फास्फेट चट्टान की नाइट्रिक अम्ल और अमोनिया के साथ प्रतिक्रिया कराके बनायी जाती है। इसमें पोटाश को मिलाकर अच्छे गुणों की खाद बनायी जाती है जिसमें सभी आवश्यक पोषक तत्व मौजूद रहते हैं।

दूसरी प्रसिद्ध खाद डाइअमोनियम फास्फेट है जिसे अमोनिया को फास्फोरिक अम्ल द्वारा उदासीन करके बनाया जाता है। इसमें २० प्रतिशत नाइट्रोजन और ५० प्रतिशत पानी में घुलनशील फास्फोरस पेण्टाआक्साइड होता है। इसमें अच्छी किस्म की खाद बनाने के लिए पोटाश मिला दिया जाता है।

पोटैशियम स्रोत

दुनिया की चट्टानों और मिट्टी में पोटैशियम पर्याप्त मात्रा में उपस्थित रहता है। प्रायः इसके लवण कृषि के लिए अयोग्य अघुलनशील खनिज के रूप में होते हैं। घुलनशील पोटैशियम क्लोराइड के विशाल भण्डार सिलवाइट (Sylvite) और सिलवीनाइट (Sylvinite) अयस्कों में और मैगनीशियम के साथ कार्नेलाइट (Carnallite) और लैवेनाइट (Lavgheinite) अयस्कों में पाये जाते हैं। ऐसे भण्डार हैलाइड के रूप में सोडियम क्लोराइड के साथ मिले होते हैं जो बहुत-सी फसलों के लिए विषैले होते हैं, इसलिए हटा दिये जाने चाहिये। सिलवाइट और कार्नेलाइट के विशाल भण्डार सर्वप्रथम जरमनी में और फिर फ्रांस, पश्चिमी अमरीका और अन्य दूसरे देशों में पाये गये।

कनाडा में सिलवाइट और कार्नेलाइट के अयस्क ३,००० फुट से ४,००० फुट की गहराई में पाये गये हैं। यद्यपि ये अयस्क अमरीकी और यूरोपीय अयस्कों से बहुत गहरे हैं फिर भी अब खोदने की कठिनाइयां दूर हो गयी हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कनाडा से प्राप्त करोड़ों टन पोटाश विश्व कृषि के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध होगा।

पोटैशियम के प्रयोग के तरीके

ठोस पोटाश खनिजों को सर्वप्रथम खोदने के बाद पीसा जाता है फिर धोकर या झाग उत्प्लावन (froath flotation) विधि द्वारा अशुद्धियों को दूर कर दिया जाता है। झाग उत्प्लावन में अमीन लवण और हवा से व्यर्थ अशुद्धि के ऊपर सिलवाइट कण तैरते हैं जिन्हें अलग कर लिया जाता है। अन्य तरीकों में पोटाश को घोलकर और रवे बनाकर प्राप्त किया जाता है। इनको सुखाया जाता है और फिर अमीन से प्रतिक्रिया कराके कृषि के प्रयोग के लिए पोटाश म्यूराइट के रूप में बेचा जाता है जिसमें ६०-६२ प्रतिशत तक पोटैशियम आक्साइड होता है। अधिकतर पोटाश को नाइट्रोजन और फास्फोरस यौगिकों के साथ प्रयोग किया जाता है।

मिट्टी में पोषक तत्त्वों की कमी की पहचान

एक कृषक को अपनी मिट्टी की किस्म और उसमें पोषक तत्त्वों की कमी की पहचान होनी चाहिये जिससे वह अपने खेत में उसी प्रकार की खाद दे सके। मिट्टी में एक पोषक तत्त्व की कमी अन्य पोषक तत्त्वों के प्रभाव को कम कर देती है।

मिट्टी में नाइट्रोजन की कमी पत्तियों को पीला कर देती है और फिर बाद में नीचे से ऊपर तक की पत्तियों को सुखा देती है। पौधों में नाइट्रोजन की न्यूनता का प्रभाव पौधों की वृद्धि, फूल, पत्ती और बीज के उत्पादन पर पड़ता है। नाइट्रोजन मिट्टी के जीवाणुओं की क्रिया को भी बढ़ावा देती है। इस कमी को दूर करने के लिए मिट्टी में मुक्त अमोनिया को अजल रूप में या जल में घोल को मिट्टी में कुछ इंच नीचे पहुंचा देते हैं। बहुत-सी फसलों में एक खास अनुपात में नाइट्रेट की नाइट्रोजन और अमोनीकृत नाइट्रोजन को ठोस या द्रव रूप में देने से लाभदायक परिणाम निकले हैं।

फास्फोरस की कमी पत्तियों और तनों को हलका गुलाबी कर देती है और पौधे की वृद्धि और उत्पादन को कम कर देती है। फास्फोरस अंकुरण में सहायता देता है और जड़ के [illegible] बनने में उपादेयता प्रदान करता है। फास्फोरस की कमी को पत्तियों पर धब्बे और नीचे की पत्तियों के छल्लेदार हो जाने से पहचाना जा सकता है। इसकी कमी से तने कमजोर हो जाते हैं जिससे आंधी और वर्षा में भारी हानि की सम्भावना रहती है। पोटैशियम के प्रयोग अनाज और बीज के उत्पादन को बढ़ाता है। यह स्टार्च, शर्करा और पौधे के तेलों में भी वृद्धि करता है और पौधे की ताकत तथा बीमारी और अन्य हानियों के विरुद्ध प्रतिरोध को बढ़ाता है।

मैगनीशियम की कमी से प्राकृतिक रंग में कमी आ जाती है, और पत्तियों के सहारे सफेद रेखाओं के झुण्ड बन जाते हैं। कैल्शियम की कमी से जवान पत्तियां असमय ही मुरझा जाती हैं, बीज का अंकुरण बहुत ही कम होता है। सल्फर की कमी से पत्तियां पीली, वृद्धि कम और फल अधपके रह जाते हैं। सूक्ष्म पोषक तत्त्वों की कमी को आसानी से पहचाना नहीं जा सकता है फिर भी तरकारी और फलों की वृद्धि में बहुत हानि पहुंचाती है।

खाद के प्रयोग के विषय में ध्यान देने योग्य मुख्य बात मिट्टी की अम्लीयता है। पौधों द्वारा अनेक पोषक तत्त्वों को प्राप्त करने में प्रभावशाली अवरोध पैदा करती है। नाइट्रोजन खाद भी जैसे अमोनिया, यूरिया, अमोनिया के नाइट्रेट, आयन एक्सचेंज प्रतिक्रिया (ion exchange reaction) द्वारा मिट्टी की अम्लीयता को बढ़ा देती है। अम्लीयता को चूना, चूना पत्थर और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैल्शियम कार्बोनेट के अन्य रूपों को प्रदान करने से खत्म की जाती है। मिट्टी की किस्म भी पोषक तत्त्वों को प्राप्त करने में सहायता करती है।

खाद की नयी किस्में

रासायनिक खादों के उत्पादन में पिछले ५० वर्षों में काफी सुधार हुआ है। फिर भी खाद उद्योग को कुछ समस्याएं अब भी परेशान किये हुए हैं। सबसे बड़ी समस्या पोषक तत्त्वों की नियन्त्रित मुक्ति है जिससे बेकार की चीजों और जवान पौधों की हानि को समाप्त किया जा सकता है, आजकल अकार्बनिक यौगिकों जैसे मैगनीशियम, अमोनियम फास्फेट, संश्लेषित कार्बनिक यौगिक जैसे फार्मेमाइड पर परीक्षण किये जा रहे हैं। ये यौगिक धीरे-धीरे विघटित होते हैं। अन्य तरीकों में खाद के कणों का सल्फर और प्लास्टिक से धीमे-धीमे विस्फोटन किया जाता है।

निरीक्षक एक ऐसा रासायनिक खाद बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं जिसमें पौधे के पोषक तत्त्व कीलेट (chelate) किस्म के अणुओं में अलग कर लिये जायेंगे।

कीलेट किस्म के अणुओं में शक्तिशाली बन्धन होता है जो पोषक तत्त्वों को तेज आक्रमण से बचाता है। इस तरह पौधे का आवश्यक भोजन धीरे-धीरे एक नियन्त्रित तरीके से और रसायनिक क्रियाओं द्वारा मुक्त होता है।

अन्त में, सम्भावना एक पैकेट में बन्द दानों की है जिनमें से हर एक में एक बीज और पौधे के जीवनपर्यन्त के लिए पोषक तत्त्व रहेंगे। वे जरूरत के समय पर आवश्यक मात्रा में मुक्त होते रहेंगे।

रासायनिक जोत (Chemical Ploughing)

एक नयी कृषि-विधि जो छोटे पैमाने पर प्रयोग की जाती है, रसायनिक जोत है। इसमें यान्त्रिक विधि द्वारा फसल को मिट्टी के अन्दर गाड़ने के (जो खाद का काम करेगी) बजाय फसल के ऊपर उपयुक्त तृण मारक (herbicides) दवा फैलाकर नष्ट कर देते हैं। इस प्रकार मृतक पौधों का द्रव्य पौधों के लिए पोषक तत्त्वों का स्रोत बन जाता है। तृणमारक द्रव की अतिरिक्त मात्रा मिट्टी के कोलोयड्स (colloids) की क्रिया के कारण हानिरहित रहती है। नये बीज और खाद को मृतक पौधों के बीच में से सीधे ही अन्दर पहुंचाया जाता है। ये बीज को क्षरण (erosion), पाला और सूखा के विरुद्ध रक्षा प्रदान करते हैं।

खादों को गाढ़े द्रव या ठोस रूप में बनाने के लिए प्रयत्न किये जा रहे हैं जिससे उनके भेजने या मंगाने में कम खर्च होगा। बाद में जरूरत की जगह पर उनको हलका कर लिया जायेगा।

कृषि के आधुनिक तरीकों के उपयोग तथा रासायनिक खादों के प्रयोग करने के लिए सर्वाधिक आवश्यक कृषक का शिक्षित होना है जिससे वह उन्हें आवश्यक जगह पर उपयुक्त रूप में प्रयोग कर सके। ●

तीन मंजिल वाले हवाई जहाज

अमरीका की प्रसिद्ध वायुयान कम्पनी 'पैन-ऐम' ने ऐसे २५ बोइंग-७४७ हवाई जहाज खरीदने का फैसला किया है जो तिमंजिले होंगे। इन २५ हवाई जहाजों की कीमत लगभग ढाई अरब रुपये होगी। हर जहाज में ४९० यात्री सफर कर सकेंगे।

प्रत्येक जहाज का वजन ६ लाख ८० हजार पौण्ड होगा। यह वजन आज के बड़े से बड़े हवाई जहाज के वजन से दुगुना होगा। यह आशा की जाती है कि शीघ्र ही यात्रियों के लिए इन हवाई जहाजों की सेवाएं उपलब्ध होंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लैजेरो स्पैलेंजेनी

जीवाणुवंशजों का जन्मदाता

डा० हर्ष प्रियदर्शी

लिवानहुक की मृत्यु पर सारा यूरोप शोक-सन्तप्त हो गया। लन्दन से पेरिस तक वैज्ञानिकों के मन में एक ही प्रश्न कौंध रहा था, अब इन कीटाणुओं का अध्ययन कौन करेगा? रायल सोसाइटी के सम्मानित विद्वान चिन्तित थे। पेरिस की वैज्ञानिक अकादमी आतुर थी। लेकिन वैज्ञानिकों की इस चिन्ता और अकादमी की आतुरता को अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। लिवानहुक की परम्परा ने १७२९ में लैजेरो स्पैलेंजेनी को जन्म दिया।

जन्म और शैशव

इटली के उत्तर में स्कैण्डियानो में लैजेरो स्पैलेंजेनी का जन्म हुआ था। शैशवकाल से ही लिवानहुक का यह वारिस विचित्र व्यक्तित्व का स्वामी था। किशोर स्पैलेंजेनी अनन्त गीत पंक्तियों के मध्य मिट्टी के घरौंदों को रौंदता रहता था। मिट्टी के घरौंदों से जब उसका मन ऊब जाता, तो वह प्रारम्भ करता क्रूर प्रयोगों की एक अटूट शृंखला। लैजेरो के प्रयोगों की इस शृंखला में अनगिन इन्द्रधनुषी तितलियां, कीट-पतंग, गुबरैले अपने प्राणों का विसर्जन करते। वह तितलियों के परों को नोंचकर उड़ान के रहस्यों को जानने की चेष्टा करता, गुबरैलों की टांगों को तोड़-कर गतिशीलता की गोपनीय परतों का ज्ञान प्राप्त करने की लालसा से अभिभूत हो उठता। प्रकृति की सम्पूर्ण रहस्यमयता किशोर स्पैलेंजेनी अपने मस्तिष्क में कैद कर लेना चाहता था।

जिज्ञासा का प्रारम्भ

स्कैण्डियानो की विपुल वनराशि में असंख्य जलवल्लरियां थीं, जो प्रस्तर खण्डों में उगती थीं और सूर्य की इन्द्रधनुषी परछाइयों में कण-कण बिखेरती रहती थीं। जलवल्लरियों का यह फेनिल जल लैजेरो के लिए एक कौतुक था—कौतुक भी ऐसा जिसका रहस्य जानने के लिए वह सदा आतुर रहता था।

लिवानहुक की भांति लैजेरो को भी विज्ञान की ओर बढ़ते हुए वंश परम्परा का विरोध करना पड़ा था। स्पैलेंनजेनी के पिता एक ख्यातिप्राप्त वकील थे। उनकी इच्छा थी कि उनका पुत्र नामी वकील बने, किन्तु मिथ्या तर्कों का वह पेशा लैजेरो को अपनी ओर आकर्षित न कर सका।

लैजेरो जन्मजात वैज्ञानिक था। पिता के अथक प्रयत्नों के उपरान्त कानून के नीरस अध्यायों में अपना मन वह न रमा सका। हर शाम जब स्पैलेंजेनी को अपने पिता के साथ न्याय संहिताओं के नीरस अध्यायों को कण्ठाग्र करना पड़ता, तो वह ऊब उठता। उसकी दृष्टि तो कानून की पोथियों पर रहती, लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका तर्कशील जिज्ञासु मन कहीं दूर फेनिल जलवल्लरियों का रहस्य उद्घाटित करता रहता।

स्कैण्डियानो में एक बुजुर्ग इतालिवी जीव-वैज्ञानिक वैलीस्नीयारी रहता था, जो सारे संस्कारों और रूढ़ियों के प्रति विद्रोह कर रहा था तथा नयी प्रतिभाओं को प्रोत्साहित कर रहा था। वैलीस्नीयारी ने किशोर लैजेरो के विचारोंका आदर करना प्रारम्भ किया। कभी-कभी तो ऐसा होता कि शाम के धुंधलके में वैलीस्नीयारी लैजेरो के तमाम तर्कों और तथ्यों को इतने अधिक मनोयोग से सुनता कि लगता वह स्वयं लैजेरो से कुछ सीखना चाहता हो। इसी प्रकार दिन बीतते गये और वैली-स्नीयारी और लैजेरो के तथ्यों एवं तर्कों का आदान-प्रदान चलता रहा। एक बार वैली-स्नीयारी ने किशोर वैज्ञानिक से प्रश्न किया, "स्पैलेंजेनी ! तुम तो जन्मजात वैज्ञानिक हो, फिर क्यों नहीं अपना सम्पूर्ण समय विज्ञान के अध्ययन और मनन में समर्पित करते ?"

भारी और उदास मन से स्पैलेंजेनी ने उत्तर दिया, "माननीय ! मैं तो अपना सर्वस्व होम कर दूं, लेकिन मेरे पिता···"

"उनको मैं समझाऊंगा, लैजेरो।"

विश्वविद्यालय और वैज्ञानिक अध्ययन

इस घटना के कुछ दिनों बाद जीव-वैज्ञानिक वैलीस्नीयारी ने एक दिन वकील स्पैलेंनजेनी से लैजेरो के लिए जिरह शुरू की, "आप अपने पुत्र का समय इन व्यर्थ बातों में क्यों नष्ट कर रहे हैं। आप जानते हैं, आपका पुत्र एक दिन गैलीलियो हो सकता है। उसे वैज्ञानिक बनने दीजिए, वकालत उसके लिए रुचिकर नहीं।" लैजेरो के पिता ने सब कुछ ध्यान से सुना और तदुपरान्त एक बुद्धिमान पिता की तरह उन्होंने उसे वैज्ञानिक बनाने का निर्णय किया।

पिता का आशीर्वाद और निर्णय लेकर युवा लैजेरो ने अपने नगर से दूर रिग्गो विश्व-विद्यालय में वैज्ञानिक बनने के लिए प्रवेश लिया। रिग्गो विश्वविद्यालय में लैजेरो को मनचाहा परिवेश मिला। इन दिनों वैज्ञानिक इतिहास का वह अन्धा युग बीत चुका था, जब रायल सोसाइटी की बैठकें गुप्त स्थानों में सम्पन्न होती थीं। वह युग भूत हो चुका था जब लोग धर्म वाक्यों की आलोचना करने में भय खाते थे। तात्कालिक यूरोप में तो आलोचनाओं और शोध-प्रवृत्तियों की ऐसी आग धधक रही थी जिसमें अरस्तु, सुकरात एवं ईसा की मान्यताएं अपनी आहुति दे रही थीं। वास्तव में लैजेरो ने जिस युग में विज्ञान का अध्ययन प्रारम्भ किया था, उस युग में यूरोपीय इति-हास, तर्क और विज्ञान शताब्दियों पुरानी रूढ़ियों और अन्धविश्वासों की बेड़ियों को तोड़कर मुक्त हो रहे थे।

रिग्गो विश्वविद्यालय में लैजेरो ने यन्त्र-विज्ञान से लेकर ज्योतिष तक सभी वैज्ञानिक विद्याओं का अध्ययन आरम्भ किया। अजीब था लैजेरो। दुनिया का तमाम ज्ञान वह अपने में आत्मसात् कर लेना चाहता था। लैजेरो अपनी अध्ययन-प्रवृत्ति में लिवानहुक के प्रतिकूल था। लिवानहुक वर्षों एक ही विषय के पीछे पागल रहा था, किन्तु लैजेरो तो विचित्र व्यक्तित्व था। विज्ञान तो विज्ञान, पच्चीस वर्ष की अवस्था में उसने इतालिवी काव्य में भी विवाद उत्पन्न कर दिया। इतनी-सी आयु में उसने तमाम प्राचीन यूनानी कवियों को इतालिवी भाषा में उपलब्ध कर दिया था। काव्य का नशा उतरने पर वह पुनः विज्ञान की ओर उन्मुख हुआ। विज्ञान की ओर उन्मुख होने पर इस बार उसने अपनी चचेरी बहन लारा बेस्सी के साथ अत्यन्त सक्रिय होकर गणित का अध्ययन प्रारम्भ किया। गणित के अध्ययन के इन्हीं दिनों में स्पैलेंजेनी ने जल में पत्थरों की प्लुतगामिता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(उछाल की गति) पर एक महत्त्वपूर्ण निबन्ध लिखा था। स्पैलेंजेनी के इस निबन्ध की चर्चा विश्वविद्यालय में सर्वत्र हुई, कुछ लोगों ने उसके तर्कों का मजाक उड़ाया और कुछ लोगों ने उन्हें गम्भीरतापूर्वक समझने का प्रयत्न किया।

परम्पराओं का विद्रोह

तीस वर्ष की अवस्था में लैजेरो ने एक कैथोलिक चर्च के पादरी का पद ग्रहण कर लिया और वह आजन्म उसी पद पर बना रहा। पादरी होने के नाते उसे अन्धविश्वासी होना चाहिये था, उसे बाइबिल और यीशु के प्रति आस्थावान होना चाहिये था, किन्तु उसने सभी भ्रामक धार्मिक मान्यताओं का विरोध प्रारम्भ किया। प्रभु के अस्तित्व के सिवा उसने और कुछ स्वीकार नहीं किया। उसने जनसाधारण में घोषणा की कि यह सब पाखण्ड है।

अपने इसी विद्रोही जीवन में लैजेरो रिग्गो विश्वविद्यालय में प्राध्यापक नियुक्त हुआ। अध्यापक जीवन में वह सदैव अपने शिष्यों को गलत मान्यताओं का विरोध करना सिखाता रहा। इसी विश्वविद्यालय में लैजेरो ने लिवानहुक के कीटाणुओं पर प्रयोग प्रारम्भ किया। लैजेरो का यह प्रयोग एक ऐसे ज्वलन्त प्रश्न से सम्बन्धित था, जिसने यूरोप में विज्ञान के इतिहास में क्रान्ति उपस्थित कर दी थी।

जीवन का रहस्य

प्रश्न था जीवन के रहस्य का। प्रश्न था प्रभुसत्ता के प्रति आस्था का। यूरोप में चारों ओर ये ही प्रश्न उठ रहे थे, क्या यह सत्य है कि सम्पूर्ण सृष्टि की जीव-रचना प्रभु द्वारा केवल छह दिनों में हुई है और क्या यह भी सत्य है कि सृष्टि के तमाम जीवों की रचना प्रभु ने की है ? क्या यह सत्य है कि जीवों की रचना जीवों द्वारा नहीं होती ?

जीवन के रहस्य के इस प्रश्न को इतिहास में सम्भवतः सर्वप्रथम यूनानी दार्शनिक अरस्तु ने सुलझाने की चेष्टा की थी। अरस्तु भी स्वतोजनन सिद्धान्त से सहमत था। अरस्तु का यह प्रभाव लगभग दो हजार वर्षों तक यूरोप के जीव-विज्ञान पर छाया रहा। उसकी मृत्यु के शताब्दियों बाद वरजिल ने अपने जीव-विज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थ 'जियोरजिक्स' में भी स्वतोजनन को ही सत्य माना था। वरजिल ने तो 'जियोरजिक्स' में इस तथ्य का विशद् वर्णन किया है कि किस प्रकार मृत बछड़े की सींग से मक्खियों का जन्म होता है।

वरजिल का जन्म ई. पू. ७वीं शताब्दी में हुआ था। स्वतोजनन का यह धुंधला प्रभाव यूरोप के विज्ञान पर सोलहवीं शताब्दी तक छाया रहा। सोहलवीं शताब्दी में वान हेलमां ने तो एक ऐसे रासायनिक योग की रचना कर डाली थी जिससे सड़े हुए बोरे और गेहूं के बीजों से चूहे पैदा किये जा सकते थे। जनता भी स्वतोजनन की इस मान्यता को स्वीकार करती थी। प्रख्यात गणितज्ञ न्यूटन और जीव-वैज्ञानिक हार्वे भी स्वतोजनन में ही विश्वास करते थे। लेकिन सतरहवीं शताब्दी में फ्रैंक्सो रेड्डी नामक इतालियन जीव-वैज्ञानिक ने प्रथम बार इस स्वतोजनन के कुहासे को चीरकर जीव-विज्ञान के क्षेत्र में नयी प्रकाश-किरण को बिखेरा था। रेड्डी ने जो मूलतः प्रयोगों में विश्वास करता था, अपने प्रयोगों के आधार पर घोषणा की थी कि वे मूर्ख हैं जो यह समझते हैं कि तमाम जीवों की रचना स्वतः हुई है—प्रभु की इच्छा से। उसने यह सिद्ध कर दिया था कि सड़े हुए गोश्त से मक्खियों का जन्म नहीं होता, किन्तु मक्खियों का जन्म उनके अण्डों से होता है। रेड्डी के इस सिद्धान्त को कि जीव ही जीव को जन्म देता है, उसके प्रिय शिष्य बैलेस्नीयारी ने पूर्णतः सिद्ध कर दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैलीस्नीयारी ने मात्र इतना ही सिद्ध किया था कि जीवन के दृष्टिगत रूपों में ही प्रजनन की प्रक्रिया होती है। लेकिन लिवानहुक के कीटाणु-सम्बन्धी आविष्कारों के बाद स्वतोजनन का प्रश्न पुनः धधक उठा। स्वतोजनन में आस्था रखने वालों में चारों ओर पुनः तीव्र प्रचारकों में नीडहम और बूफोन के नाम मुख्य रूप से लिये गये। फादर नीडहम और काउण्ट बूफोन के अतिरिक्त इंग्लैण्ड के प्रख्यात प्रकृति वैज्ञानिक रास ने तो यहां तक घोषणा कर दी थी कि जो स्वतोजनन के प्राकृतिक सिद्धान्त में आस्थावान नहीं है वह यह नहीं जानता कि प्राकृतिक नियमों के विरोध में प्रश्न नहीं किये जा सकते। रास तो चूहों तक के स्वतोजनन को मानने लगा था और अपने इस मत के पक्ष में वह कहता था कि वे लोग जो स्वतोजनन में विश्वास नहीं करते, उन्हें नील नदी की घाटी में जाकर स्वयं निरीक्षण करना चाहिये जहां सदैव करोड़ों की संख्या में नदी की मिट्टी और कचरों से चूहों का जन्म होता रहता है। मालूम नहीं रास ने यह वक्तव्य किस आधार पर दिया था।

किन्तु १७५९ में नीडहम, बूफोन और रास के इन मूर्खतापूर्ण प्रलापों की लैजेरो स्पैलेंजेनी ने तीव्र आलोचना प्रारम्भ कर दी थी। लैजेरो आजन्म फादर नीडहम और काउण्ट बूफोन से जूझता रहा। वास्तव में लैजेरो की जीवन-गाथा इसी संघर्ष की कथा है।

संघर्ष-कथा

लैजेरो की संघर्ष-कथा प्रारम्भ होती है एक खामोश रात के सन्नाटे से।

रात।

रिग्गो विश्वविद्यालय भवन के समीप एक छोटे-से काटेज में, कन्दीलों की कांपती रोशनी में लेटा लैजेरो अपने अध्ययनकक्ष में एकाग्रचित्त फ्रैंक्सो रेड्डी की पुस्तक 'एक्सपेरिमेण्ट्स आन द जेनरेशन आफ इंसेक्ट्स,

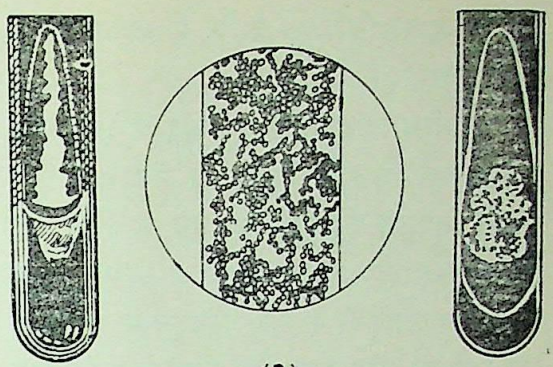

(१) (२) (३)

रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणु—(१) माइक्रोकोक्कस पायोजेनस अरिअस *(Micrococcus pyogenes aureus)*, **(२) माइक्रोस्पोरम आउदुइनि** *(Microsporum Audouini)*, **और (३) माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलासिस** *(Mycobacterium Tuberculosis)*

की सतरों पर झुका हुआ एक के बाद एक रेड्डी के तमाम प्रयोगों को आत्मसात् करता जा रहा था। अध्ययन की इसी प्रक्रिया के मध्य लैजेरो हलके से गुनगुनाता है, 'कितना महान् और कितना अद्भुत था फ्रैंक्सो, तर्क नहीं करता किन्तु सत्यता को सिद्ध करने के लिए प्रयोग-परिणाम देता है। रेड्डी का सिद्धान्त ही शाश्वत सत्य है कि जीव स्वतोजनन के सिद्धान्तों के अनुसार नहीं जन्म लेता। जीव को जीव ही जन्म देता है। स्वतोजनन एक मूर्खतापूर्ण प्रलाप है।'

रात बीतती रही, बीतती रही। फिर सुबह हुई। लैजेरो ने एक नयी सुबह की छांह में साहसिक निर्णय लिया, 'मैं···मैं सिद्ध करूंगा कि स्वतोजनन आधारहीन परिकल्पना है। मैं प्रयोगों द्वारा सिद्ध करूंगा कि कीटाणुओं को कीटाणु ही जन्म देते हैं।' लैजेरो के इस लौह निश्चय के साथ-साथ कीटाणु-शास्त्र के इतिहास का एक नया परिच्छेद खुलता है। स्वतोजनन के विरोध में जिन दिनों लैजेरो ने यह निश्चय लिया था, उन दिनों सम्पूर्ण यूरोप में वैज्ञानिकों की यह मान्यता थी कि हो सकता है, मक्खियां अण्डों से जन्मती हों,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु यह तो निश्चित है कि ये अदृश्य प्राणी स्वतः जन्मते हैं।

तमाम विरोधों के बावजूद लैजेरो अपने निश्चय से विचलित नहीं हो सका। लेकिन अपने निश्चय को सत्य रूप देने के लिए उसे कीटाणु-शास्त्र का अध्ययन प्रारम्भ करना पड़ा। कीटाणुओं के इस अध्ययन में लैजेरो ने कीटाणुओं और सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों से सम्बन्धित लम्बे प्रयोगों की शृंखला प्रारम्भ की समय बीतता गया और लैजेरो कीटाणु-विषयक ज्ञान आत्मसात् करता गया।

स्वतोजनन : एक छलावा

रिग्गो विश्वविद्यालय में बैठा हुआ लैजेरो स्पैलेंजेनी जिस समय कीटाणुओं का अध्ययन कर रहा था, उसी समय इंग्लैण्ड में एक दूसरा कैथोलिक पादरी फादर नीडहम स्वतोजनन-सम्बन्धी कीटाणु विषयक प्रयोगों द्वारा ख्याति अर्जित कर रहा था। फादर नीडहम ने प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया कि मृत मांसरस में कीटाणुओं का स्वतः जन्म होता है और अपने प्रयोगों के परिणाम को उसने रायल सोसाइटी को पत्र में लिखा। नीडहम ने अपने इस पत्र में स्वतोजनन सिद्धान्त और अपने प्रयोगों का विवरण देते हुए लिखा था कि किस प्रकार एक शीशे के फ्लास्क में उसने पहले मांसरस को एक सीमा तक गरम करने के उपरान्त कार्क से खूब कसकर बन्द कर दिया था। और जब इस गरम मांसरस में कीटाणु जीवन की तमाम सम्भावनाएं मृतप्राय हो गयी थीं, तब इस शून्य फ्लास्क को थोड़े दिनों तक उसने यों ही छोड़ दिया था, और जब इस फ्लास्क को बाद में उसने खोला, तो उस मांसरस में उसे कीटाणुओं—जीवित कीटाणुओं—की प्राप्ति हुई थी। फादर नीडहम का दावा था कि इन कीटाणुओं ने निश्चित् रूप से मृत मांसरस से जन्म लिया था। इस प्रकार फादर नीडहम ने यह सिद्ध करने की चेष्टा की थी कि जीवन मृत वस्तुओं से भी उत्पन्न हो सकता है।

फादर नीडहम के इस प्रयोग-विवरण से रायल सोसाइटी के सम्मानित विद्वान इतने प्रभावित हो गये थे कि उन्होंने एकमत होकर स्वतोजनन सिद्धान्त की सत्यता को स्वीकार कर लिया था। उन विद्वानों का कथन था कि फादर नीडहम ने कल्पना नहीं, यथार्थ और प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि जीवन स्वतः ही जन्म ले सकता है। रायल सोसाइटी के विद्वानों की दृष्टि में नीडहम महान् वैज्ञानिक सिद्ध हो चुका था, और वे उसे रायल सोसाइटी का सदस्य बनाने को तैयार हो गये थे। किन्तु दूर इटली में लैजेरो ने जब फादर नीडहम के इन प्रयोगों की चर्चा सुनी, तो उसके आक्रोश में कांप उठा और उसने घोषणा की कि फादर नीडहम ने एक खूबसूरत छलावे द्वारा मिथ्या वक्तव्य को सिद्ध करने की चेष्टा की है। सिद्ध करके दिखाऊंगा कि फादर नीडहम का कथन छलावा है, महज एक खूबसूरत प्रवंचना।

एक प्रयोग

फादर नीडहम के छलावे को लेकर लैजेरो ने अपनी प्रयोगशाला में सोचना प्रारम्भ किया। विचार और तर्क के बीच वह उलझता गया। तभी यकायक उसकी तर्कशील बुद्धि ने सुधारा कि फादर नीडहम ने निश्चय ही फ्लास्कों को न तो ठीक से सील किया होगा और न ही उन्हें उचित मात्रा में गरम किया होगा, नहीं तो क्या कारण था कि कीटाणुओं के स्वतोजनन की सम्भावना शेष रह गयी। तब लैजेरो ने अपने इस नये तर्क के साथ अपने प्रयोगों की शृंखला प्रारम्भ की।

लैजेरो ने पहले स्वच्छ फ्लास्कों के तीन सेट लिये। पहले सेट में उसने मांसरस भरा और उनके पतले मुंह को पिघलाकर सील कर दिया। दूसरे सेट में भी मांसरस भरा और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे कार्क द्वारा कसकर बन्द किया। तीसरे सेट में थोड़े-से बादाम और मटर के बीज रखकर कार्क द्वारा बन्द कर दिया। अब पहले सेट को उसने एक घण्टे तक उच्च तापक्रम पर गरम किया और दूसरे सेट को भी उसी तापक्रम पर गरम किया तथा तीसरे सेट को कुछ क्षणों तक ही गरम किया। इस क्रिया के उपरान्त उन तीनों सेटों को प्रयोगशाला की मेज पर लेबिल लगाकर यों ही कुछ दिनों तक के लिए छोड़ दिया।

इन थोड़े-से दिनों में लैजेरो पुनः लौट आया अपने जीवन के सत्य में। उसने पुनः विज्ञान पर रिग्गो विश्वविद्यालय में लम्बे-चौड़े व्याख्यान देना प्रारम्भ किया और इन व्याख्यानों में अपने शिष्यों से विद्रोही बनने का आग्रह करता रहा। उन दिनों वह जन-साधारण को भी पादरी की हैसियत से लिवानहुक के कीटाणुओं के विषय में बतलाता रहा। वह लोगों को समझाता रहा कि प्रकृति कितनी अधिक रहस्यमयी है। और तब अचानक एक दिन लैजेरो गायब हो गया।

लैजेरो प्रयोगशाला में

वीरान प्रयोगशाला की मेज पर लैजेरो की आतुर अंगुलियां उत्तेजना के साथ फ्लास्कों की सीलें तोड़ने लगीं। एक-एक फ्लास्कों की सील टूटती गयी और उनके मांसरस लैजेरो के सूक्ष्मदर्शी यन्त्र में अपने गोपनीय तथ्यों की परतों को खोलते गये।

लेकिन यह क्या···!

उत्तेजित लैजेरो एकदम से शान्त क्यों हो गया? क्या फादर नीडहम की प्रवंचना ने सत्य-रूप धारण कर लिया? किन्तु ऐसा हुआ नहीं, लैजेरो ने जिन फ्लास्कों को पिघलाकर सील किया था उन फ्लास्कों के मांसरस में एक भी कीटाणु नहीं जन्म ले सका था, किन्तु कार्क-बन्द फ्लास्कों के मांसरस और बादाम के बीजों में कीटाणुओं ने जन्म ले लिया था। अपने पर्यवेक्षण को लैजेरो ने डायरी में नोट किया और तब वह दिल खोलकर फादर नीडहम की पराजय पर हंसता रहा।

लैजेरो अभी अपनी विजय पर हंस ही रहा था कि सहसा वह एकदम मौन हो गया। उस क्षण उसके चेहरे पर चिन्तन की गहरी लकीरें उभर आयी थीं।

एक तर्क और विजयघोष

चिन्तन के इन्हीं खामोश, बहुत गहरे क्षणों में स्वयं से अब प्रश्न किया, 'क्या फादर नीडहम के फ्लास्कों में भी कीटाणु हवा के साथ-साथ आये थे?'

वह बुदबुदा उठा, 'मैंने एक महान् सत्य की प्राप्ति की है कि कीटाणु गरम, उबलते जल में भी जीवित रह सकते हैं। वे सर्वव्यापी हैं, यहां तक कि वे हवा में भी विद्यमान हैं। उन्हें मारने के लिए आवश्यक है कि एक घण्टे तक उन्हें उबाला जाय। मांसरस और बादाम के बीजों से जीवन का जन्म नहीं होता, स्वतो-जनन मिथ्या है, प्रवंचना है।'

लैजेरो के प्रयोग-परिणाम का वह दिन कीटाणु शास्त्र के इतिहास का एक महान् दिन था, हालांकि लैजेरो ने उस दिन की महानता स्वयं नहीं समझी थी।

उसने घोषित किया कि फादर नीडहम का स्वतोजनन सिद्धान्त मिथ्या है, उसका प्रयोग एक ऐसी प्रवंचना है जिसने बुद्धिजीवियों को भी मूर्ख बना दिया है। और इन तमाम व्याख्यानों के बाद लैजेरो ने अपने एक व्यंग्यपूर्ण वैज्ञानिक निबन्ध में फादर नीडहम की पराजय और प्रवंचना का उद्घोष किया।

लैजेरो स्पैलेंजेनी की इस महत्त्वपूर्ण घोषणा से यूरोपीय विज्ञान के इतिहास में पुनः एक बार जिज्ञासा की आग धधक उठी। हर ओर यही चर्चा बलवती हो गयी थी कि क्या यह सत्य है कि फादर नीडहम का स्वतोजनन महज मिथ्या और प्रवंचना है? (क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

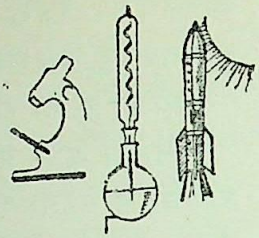

नये प्रकार का उर्वरक

केन्द्रीय ईंधन अनुसन्धान संस्थान, धनबाद में हुई खोजों के आधार पर कोयले द्वारा एक नये प्रकार का उर्वरक विकसित किया गया है जिसमें खनिज नाइट्रोजन तथा ह्यूमस के गुण मिश्रित होते हैं। स्मरणीय है कि अच्छी फसल के लिए नाइट्रोजनयुक्त उर्वरक (खाद-मिट्टी) और कार्बनिक खाद का मिश्रण सर्वोत्तम होता है। कारण यह है कि कार्बनिक खाद मिट्टी का ह्यूमस प्रदान करती है और उर्वरक का नाइट्रोजन अंश पौधों का आवश्यक भोजन नाइट्रोजन प्रदान करता है। इस प्रकार के उर्वरक का विभिन्न खाद्य पदार्थों के उत्पादन में सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा चुका है। इस उर्वरक की एक विशेषता यह है कि यह मिट्टी नियन्त्रक की भांति भी कार्य करता है। केन्द्रीय ईंधन अनुसन्धान संस्थान के इस आविष्कार में कनाडा, आस्ट्रेलिया और अमरीका के वैज्ञानिकों ने काफी रुचि दिखायी है।

भारतीय समुद्र-विज्ञान संस्थान की स्थापना

अन्तर्राष्ट्रीय महासागरीय अभियान के अन्तर्गत ५०० भारतीय और विदेशी वैज्ञानिकों के सम्मिलित प्रयास से हिन्द महासागर तथा अरब सागर में विभिन्न खनिजों की पर्याप्त मात्रा में प्राप्ति हुई है तथा इनसे सम्बन्धित अत्यन्त महत्त्वपूर्ण जानकारी है।

इस अभियान द्वारा मानसून धाराओं, सामुद्रिक धाराओं तथा रेडियो-सक्रिय अशुद्धताओं के सम्बन्ध में उपयोगी सूचना प्राप्त हुई है। इन विभिन्न सूचनाओं का देश में अध्ययन करने के लिए वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान परिषद् के अन्तर्गत भारतीय समुद्र-विज्ञान संस्थान की स्थापना की गयी है। इस संस्थान के निदेशक उपरोक्त अन्तर्राष्ट्रीय अभियान में भारतीय वैज्ञानिकों का नेतृत्व करने वाले डा. एन. के. पन्निकर हैं।

ऊतकों को जोड़ने वाली गोंद

रूसी डाक्टरों ने एक ऐसी गोंद 'मिरिन' की खोज की है जो जीवित ऊतकों को जोड़ सकती है। इस गोंद का २०० से अधिक यकृत तथा फेफड़ों के आपरेशनों में इस्तेमाल किया जा चुका है। सूचना मिली है कि दो-तीन महीनों में जब ऊतक पूरी तरह जुड़ जाते हैं तो इस गोंद के अवशेष नहीं दिखायी देते हैं। इस गोंद की खोज रूस की अकादमी आव साइन्सेज और शल्य चिकित्सा उपकरणों के प्रायोगिक संस्थान में सम्मिलित तत्वाधान में की गयी है।

पृथ्वी पर गिरने वाली आकाशीय धूल

शिकागो विश्वविद्यालय के एनरिको इंस्टीट्यूट आव न्यूक्लियर स्टडीज के शोधकर्त्ता जान एच. वार्कर (जूनियर) ने ब्रह्माण्ड-धूल-सम्बन्धी एक सिद्धान्त सामने रखा है जिसके अनुसार हमारी पृथ्वी पर प्रतिवर्ष लगभग १,००,००० टन ब्रह्माण्डीय धूल गिरती है। यह सिद्धान्त इस तथ्य पर आधारित है कि भूपृष्ठ से अधिक महासागरों के भीतर प्लैटिनम, इरीडियम और आसमियम आदि धातुओं के उद्गम प्राप्त हुए हैं। वार्कर का विचार है कि ब्रह्माण्डीय धूल के रूप में इन धातुओं की अतिरिक्त राशियां महासागरों की तली में जमा होती रहती हैं। इस सिद्धान्त को प्रतिपादित करने के लिए वार्कर ने न्यूट्रान क्रियाशीलता तकनीक का प्रयोग किया। महासागर के $१०^{६}$ भागों में उपस्थित १ भाग धात्वीय निक्षेपों तक का पता लगा सकता है। परीक्षणों एवं गणना से यह ज्ञात होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि निक्षेप प्रति १,००० वर्षों में ०·४ से ०·६ दशलक्ष ($१०^{६}$) मिलीमीटर की गति से निक्षपित होते हैं।

समुद्री घास से मानव के लिए भोजन

क्या समुद्री घास या सेवार से मनुष्य भोजन प्राप्त कर सकता है ? खाद्य-समस्या से ग्रस्त देश भी मानते हैं कि यह सम्भव नहीं है। वास्तव में समुद्री घास में प्रोटीन इतनी अधिक मात्रा में होती है कि केवल जानवर ही उसे हजम कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त उसमें भांति-भांति के खनिज होते हैं जिनका मानव के पेट पर अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ता।

फिर भी आने वाले दिनों में समुद्री घास मानव के लिए खाद्य का एक अच्छा स्रोत सिद्ध होगी। स्टुटगार्ट के कृषि वैज्ञानिक इस सम्बन्ध में आशावान है।

सम्प्रति में भी यह घास जहां खाद के रूप में प्रयुक्त की गयी है, वहां भूमि की उर्वरता बढ़ी है।

अब मानव-भोजन के लिए समुद्री घास के उपयोग किये जाने की सम्भावना हो गयी है। सौ टन सूखी समुद्री घास से ५५ टन प्रोटीन और ७ टन चिकनाई प्राप्त होती है। इन पदार्थों को किसी दिन वैज्ञानिक स्वादिष्ट खाद्य पदार्थों में बदलने में सफल हो जायेंगे, यह आशा की जाती है।

विशाल रेडियो कान और अन्तरिक्ष संगीत

पश्चिमी जरमनी की राजधानी बोन के पास शीघ्र ही एक चलता-फिरता रेडियो दूरदर्शी लगाया जाने वाला है। बोन विश्व-विद्यालय के एस्ट्रानामिकल इंस्टीट्यूट द्वारा इसका जो नमूना तैयार किया गया है उसके अनुसार इसकी शक्ल कान-जैसी लगती है। वास्तव में यह एक विशाल अन्तरिक्ष कान है। यह दूरस्थ सितारों के संकेतों को ग्रहण करेगा।

परम्परागत दूरदर्शियों द्वारा अभी दूरस्थ संकेतों को ग्रहण करना सम्भव न था।

यह नया दूरदर्शी चारों ओर घूम सकेगा। इस विशाल यन्त्र में जो एरियल लगा होगा उसका घेरा ९० मीटर या उससे अधिक होगा।

जब एरियल उच्चतम स्थान पर होगा, तो सारा उपकरण आकाश में १२० मीटर की ऊंचाई पर होगा। रेडियो दूरदर्शी के घूमने वाले भागों का ही वजन १,५०० टन से ऊपर होगा।

वैज्ञानिकों को आशा है कि इस नये उपकरण से विश्व के निर्माण तथा उसके विकास-क्रम के सम्बन्ध में आश्चर्यजनक तथ्यों का पता चलेगा। ●

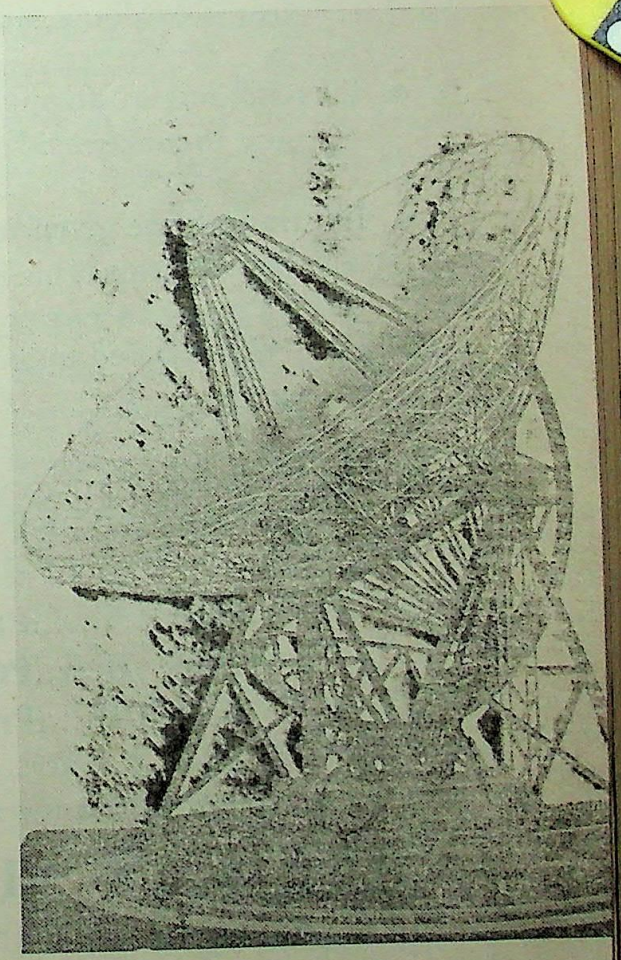

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH
WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupil how to write sentences correctly. He learns by doing, and by doing *correctly*.
- Exercises are so arranged that even a slow child is sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The Work Books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I.....Price : Re. 0·80
Book II.....Price : Re. 1·00
Book III.....Price : Re. 1·20

For further enquiries please write to :

SRI RAM MEHRA & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA-3

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक फूल-सी कोमल जिन्दगी

समरजीत कर

अब तक मैं इसी उहापोह में रहा कि इस घटना को जनसाधारण के सामने रखूं या नहीं। आज तक विदेश के तीन और दक्षिण भारत के एक प्रमुख दैनिक पत्र में एक समाचार अस्पष्ट रूप से प्रकाशित हो चुका है। उसे पढ़ने के बाद भी मैं यही सोचता रहा कि इस मामले को यहीं तक रहने दूं, तो अच्छा होगा। लेकिन भारत की राजधानी के एक प्रमुख समाचारपत्र में जब यह समाचार प्रकाशित हुआ तो जरा चिन्तित हो उठा। उक्त समाचारपत्र में छपा था : 'पृथ्वी का वायुमण्डल परमाणु भस्म से आच्छादित है। यह सारी भस्म धीरे-धीरे हमारी पृथ्वी पर गिरेगी।'

सन्तोष की बात है कि इस समाचार में यह नहीं बताया गया था कि उन भस्मों की हमारे ऊपर क्या प्रतिक्रिया होगी। जनसाधारण के लिए यह समझना बहुत ही मुश्किल है कि इसका क्या परिणाम होगा। जिन बातों को हम वैज्ञानिक आसानी से समझ लेते हैं, उन्हें प्रकाशित कराना हमारे लिए सम्भव नहीं होता। यद्यपि मैं यह जानता हूं कि डा. लारेन क्रिश्चियाना की मौत के लिए एकमात्र जिम्मेदार यही भस्म है।

लेकिन आखिर ऐसा क्यों हुआ? डा. रामस्वामी की गणना में कोई त्रुटि नहीं थी। भारत के प्रमुख परमाणु वैज्ञानिक और प्रकृतितत्त्वविद् डा. मेहता ने अपनी युगान्तरकारी पुस्तक 'एटामिक फिसन—ए निगेटिव एप्रोच टु ह्युमैनिटी' में यह स्पष्ट कर दिया है कि परमाणु के विभाजन के सम्बन्ध में अब लोगों को अधिक परेशान होने की जरूरत नहीं है।

उस समय हम लोगों ने उनकी इस राय को हलके रूप में ग्रहण किया था। वह इसलिए कि ठीक उन्हीं दिनों डा. रामस्वामी ने मलावार के पश्चिमी तट पर एक अद्भुत खान का आविष्कार किया था। उक्त खान से उन्हें एक विशेष वस्तु प्राप्त हुई थी जो ट्रांस यूरेनियम पदार्थ कुरीयाम, अमेरिकीयाम या मैनिडिलिवियाम की तरह नयी और पूर्ण रूप से तेजस्क्रिय पदार्थ रही। डा. रामस्वामी का विश्वास था कि हम इस पदार्थ से जो ईंधन प्राप्त करेंगे, वह यूरेनियम-२३५ से अधिक शक्तिशाली होगी। यह बात सबसे पहले मुझे मालूम हुई। इस सम्बन्ध में मैंने लास एंजिल्स स्थित प्रसिद्ध परमाणु वैज्ञानिक डा. लारेन अलेक्सी से चर्चा की ओर अनुरोध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया कि इस बारे में अगर अनुसन्धान कर कुछ निष्कर्ष निकाल सकें तो आभारी होऊंगा।

खेद का विषय यह रहा कि उन दिनों वे अस्वस्थ थे, इसलिए वे मेरे इस अनुरोध को स्वीकार करने में असमर्थ रहे। लेकिन उनकी पत्नी डा. लारेन क्रिश्टियाना को जब यह बात मालूम हुई, तो वे अत्यन्त उत्सुकता के साथ इस दिशा में सहयोग देने के लिए तैयार हो गयीं। डा. रामस्वामी ने उन्हें अपने यहां आमन्त्रित किया। गोकि डा. क्रिश्टियाना की उम्र अधिक नहीं थी, परन्तु उनकी रेडियो आइसोटोप-सम्बन्धी रिसर्च की मौलिकता सिद्ध हो चुकी थी। लेकिन उस समय हमें क्या मालूम था कि हम उन्हें जबरन मौत के मुंह में धकेलने जा रहे हैं।

शायद उस दिन जुलाई की १२ तारीख थी। मट्टनचेरी के तटवर्ती क्षेत्र में दो अलग-अलग तम्बुओं में डा. रामस्वामी और डा. क्रिश्टियाना उक्त नये पदार्थ को लेकर रिसर्च करने लगीं। दोपहर के वक्त डा. क्रिश्टियाना अपने तम्बू से बाहर आयीं और बोलीं, "डा. रामस्वामी द्वारा खोजा गया यह पदार्थ निस्सन्देह गवेषणा के लायक है और हम इससे अब तक अपरिचित रहे। अभी तो मैं इसकी जांच कर रही हूं, पर जल्दी ही एक ऐसा समाचार दूंगी जिससे सम्पूर्ण विश्व चौंक उठेगा।"

इतना कहकर वे तुरन्त तम्बू के भीतर चली गयीं। हम यह भी नहीं जान सके कि अब तक वे किन बातों का पता लगा चुकी हैं।

रात को आठ बजे हम सब एक जगह मिले। सभी बुरी तरह थके हुए थे। काफी मात्रा में थोरियम शोधन करने के कारण हमारी यह हालत हुई थी। तम्बू के बाहर जहां हम बैठे हुए थे, वहां सामने सागर की लहरें किनारे से आकर थपेडे खा रही थीं। आसमान साफ था आर प्रकाश क।कम।नह थी। हमें उस समय ऐसा लग रहा था जैसे हम किसी अजनबी मुल्क के निवासी हैं।

डाक्टर लारेन बोलीं, "मैं थोरियम के जिस टुकड़े को शोध रही थी, उसके भीतर से मुझे एक ऐसी वस्तु मिली जिसकी मुझे कल्पना तक नहीं थी। अब भी सोच रही हूं कि क्या यह सम्भव है?"

विस्मय से उनकी ओर देखते हुए मैंने पूछा, "आप क्या कहना चाहती हैं, समझ नहीं सका, डा. लारेन।"

सहसा उनकी आंखें चमक उठीं। बोलीं, "उसके बारे में कुछ बताने से अच्छा है कि चलकर आपको दिखा दूं।"

इसके बाद मैं, डा. रामस्वामी डा. लारेन के साथ उनके तम्बू में गये और सीधे उनके टेबिल के पास जाकर खड़े हो गये। सच पूछिए तो हम एक साथ चौंक उठे। यह तो पारस-मणि है।

गौर से देखा। हां, गैस-लैम्प के प्रकाश में देखने पर भी मुझे विश्वास है कि हमें धोखा नहीं हुआ। टेबिल के एक कोने में धातु संग्रह के बक्स में डा. रामस्वामी द्वारा आविष्कृत पदार्थ रखा था। उसमें से फूलझरी की तरह तेजस्क्रिय कणिकाएं निकल रही थीं और टेबिल के एक किनारे तेजस्क्रिय भस्म इकट्ठी हो रही थी। इस भस्म की दूषित और खतरनाक शक्ति को शोषण कर रहा था एक काला-सा पिण्ड।

मेरी और रामस्वामी की स्थिति उस समय अजीब-सी हो गयी थी।

डा. लारेन मुस्करायीं। उस मुस्कराहट में सफलता का पुट था। वे आगे बढ़कर पिण्ड के पास तक चली गयीं। कई यन्त्रों को ठीक करने के साथ ही इलेक्ट्रोमीटर को भी ठीक किया। एक शीशे के राड से पिण्ड को जरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

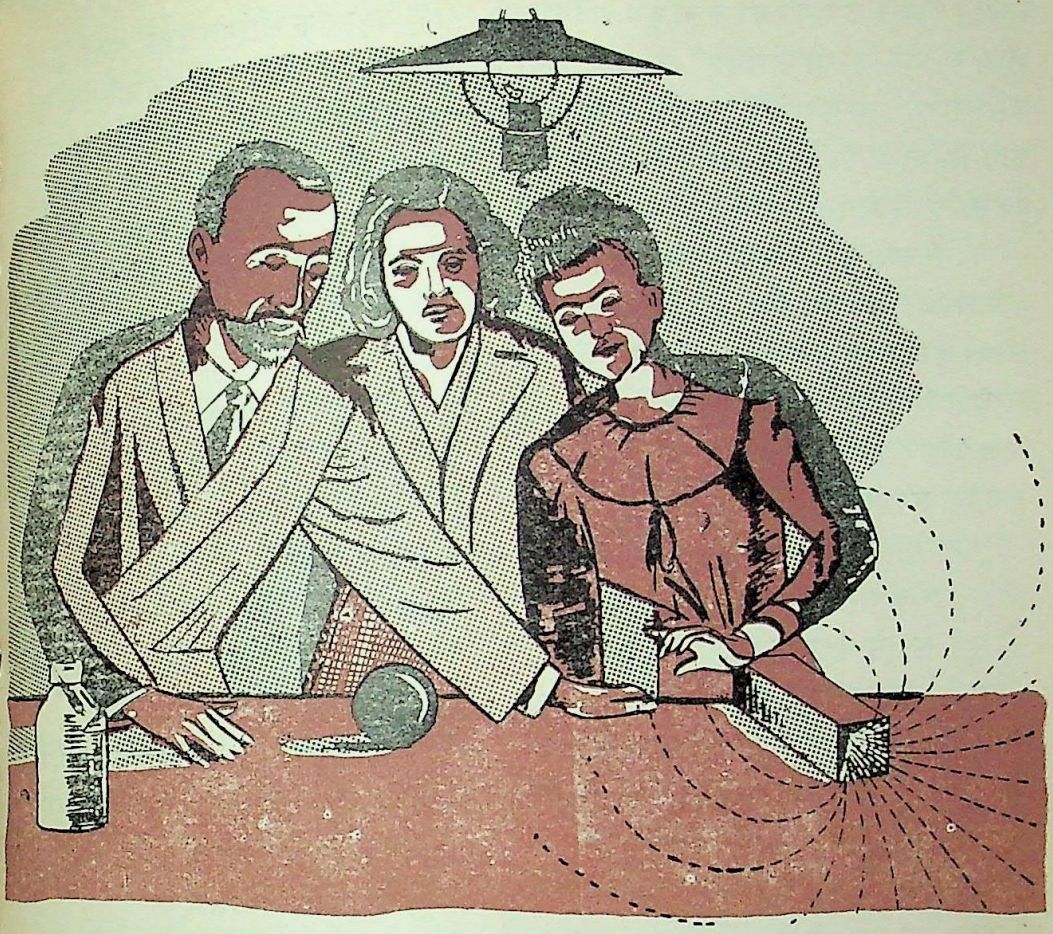

टेबिल के एक कोने में, धातु-संकट के बक्स में रामस्वामी द्वारा आविष्कृत पदार्थ रखा था। उसमें से फुलझड़ी की तरह तेजस्क्रिय कणिकाएं निकल रही थीं···

आगे उस ओर धकेल दिया, जिधर से विकरण निकल रही थी। इसके बाद मुस्कराती हुई बोलीं, "इतनी जल्दी इस निष्कर्ष तक पहुंच सकूंगी, मुझे विश्वास नहीं था।"

डा. रामस्वामी ऐसे बोले जैसे वे अजनबी बन रहे हों, "आपको यह मिला कहां से ?"

"आपके द्वारा आविष्कृत पदार्थ के बगल से। देखिए न, अपने आसपास के सभी तेजस्क्रिय भस्मों को वह किस तेजी से हजम करता जा रहा है। अभी तक हम परमाणु की अशेष शक्ति को पूर्ण रूप से अपने काम में नहीं ला सके हैं, सिर्फ इस भस्म के कारण अब तक ऐसा नहीं हो सका है। लेकिन परमाणु विभाजन के समय जो तेजस्क्रिय भस्म या विकिरण निकलेगी, वह व्यक्ति के जीवन को संकटमय बना देगी। उस संकट से मुक्ति पाने के लिए उसे हर तरह के कौशल करने पड़ रहे हैं, पर इसमें काफी व्यय और परेशानी उठानी पड़ती है। लेकिन यह काला पिण्ड हमें उस परेशानी से मुक्ति दिलाने में सहयोग देगा। डा. रामस्वामी, मेरा खयाल है कि अब हम परमाणु-शक्ति का पूर्ण रूप से उपयोग कर सकेंगे।"

शायद वे आगे कुछ और कहने जा रही थीं कि अचानक दुर्घटना हो गयी। ऐसा कुछ अचानक हो सकता है, हमें कल्पना तक नहीं थी। यद्यपि हमारा सारा शरीर ढंका हुआ था, पर डा. लारेन अपनी अंगुलियों में सोने की अंगूठी पहने थीं। सहसा वह मुड़ गयीं। इसके साथ ही प्रचण्ड विस्फोरण प्रारम्भ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ। टेबिल के ऊपर की बत्ती बुझ गयी। पूरे तम्बू में रंग-बिरंगी आभाएं चमकने लगीं। डा. लारेन छिटककर मेरे पास आकर गिर पड़ीं। मैं तथा डा. रामस्वामी उन्हें पकड़कर किसी सूरत से सागर की ओर दौड़ पड़े।

विस्फोट की आवाज सुनकर डा. लारेन की प्राइवेट सैक्रेटरी मिस हल और हमारे सभी साथी बुरी तरह घबरा उठे। वे लोग भी अपने तम्बू से निकलकर हमारे पास भाग आये। दूर खड़े होकर हमने देखा, डा. लारेन का तम्बू भयंकर रूप से जल रहा था।

लेकिन डा. लारेन ?

हम चीख-चीखकर उन्हें जगाने लगे, पर वे पूर्ण रूप से बेहोश हो गयी थीं। शहर में डाक्टर को बुलाने के लिए आदमी भेजा गया। डाक्टर आये जांच करने के बाद उन्होंने कहा, "वे बेहोश हैं। सम्भवतः उन्हें गहरा सदमा पहुंचा है।"

यह एक ऐसी दुर्घटना थी जिसकी वजह से हम जड़ बन गये थे। गलती कहां हुई, इसे हम समझ गये थे, लेकिन इस समय उसे बताना भी मुश्किल था। मन ही मन सोचने लगा, हाय भगवान! अन्त में हम लोग ही इसके शिकार बने।

इसके बाद हम बगैर किसी प्रकार का ऊहापोह किये तुरन्त अपने हेलीकाप्टर से बम्बई आये और वहां से डा. स्वामी के मलावार स्थित भवन में। यहां आकर तुरन्त हमने रेडियो फोन के माध्यम से डा. लारेन अलैक्सी से सम्पर्क स्थापित किया। बेचारे अस्वस्थ हैं। यह जानते थे कि ऐसी स्थिति में उन्हें कष्ट देना हमारे लिए उचित नहीं है। लेकिन हम कर भी क्या सकते थे। चाहे कुछ भी हो, एक नैतिक जिम्मेदारी हम पर रही।

१४ जून को चार्टर्ड प्लेन में शान्ताक्रुज हवाई अड्डे पर अलैक्सी आये। हवाई जहाज से उतरते ही वे फफककर रो पड़े। लेकिन यह वहीं तक सीमित रहा। इसके बाद अपनी प्रियतमा पत्नी को बचाने के लिए कोशिश करने लगे। सम्भवतः कोई भी डाक्टर अपनी पत्नी की सेवा इस कदर नहीं कर सकेगा। मैं और डा. रामस्वामी हर वक्त उनके पास सहायता के लिए खड़े रहे और देख रहे थे उनकी अद्भुत, विलक्षण-चिकित्सा पद्धति।

आवश्यक दवाएं और उपकरण वे अपने साथ लाये थे। दवा के साथ कार्बन-१४ आइसोटोप मिलाकर उन्होंने अपनी पत्नी के शरीर में इंजेक्ट किया। इसके बाद यन्त्र की सहायता से जांचने लगे कि दवा शरीर के किन-किन भागों तक पहुंची है और वहां कैसी प्रतिक्रिया उत्पन्न कर रही है।

एक बार मैंने धीरे से पूछा, "आप प्रत्येक बार इंजेक्शन देते समय तेजस्क्रिय कार्बन-१४ क्यों मिलाते जा रहे हैं, क्या कृपापूर्वक इस तथ्य पर प्रकाश डालेंगे ?"

मैंने यह अनुभव किया कि वे वास्तव में एक ऊंचे दर्जे के वैज्ञानिक हैं। अगर ऐसी स्थिति में किसी और से ऐसा सवाल पूछा जाता, तो वह चिढ़कर नाराज हो जाता। लेकिन उनमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ। विद्यार्थी को जिस प्रकार गुरुजी लगकर कोई विषय समझाते हैं, ठीक उसी प्रकार के स्वर में उन्होंने कहा, "मि. कर, शायद तुम्हें यह मालूम होगा कि हमारे शरीर में जो दवाएं जाती हैं, वे शरीर के भिन्न-भिन्न भागों में जाकर भिन्न-भिन्न प्रतिक्रिया उत्पन्न करती हैं। आज तक हम इस बात का अनुमान करते रहे, परन्तु आज प्रत्यक्ष देखना भी सम्भव हो गया है। क्रिश्टियाना के शरीर में जो दवाएं इंजेक्ट कर रहा हूं, उसके साथ ही कार्बन-१४ भी विभिन्न स्थानों में पहुंच रहा है। इसकी वजह से मुझे यह जानने में मदद मिल रही है कि दवा किस गति से जा रही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, वहां क्या कर रही है, कहां जा रही है। अब ये बातें तेजी से मालूम कर ले रहा हूं। वह इसलिए कि दवा के साथ जहां भी कार्बन-१४ जायगा, वहां तेजस्क्रिय हो उठेगा।"

मैं स्तब्ध रह गया।

फिर भी समस्त प्रयत्न निष्फल हो गया।

१८ जून की भोर। उस समय समस्त मलाबार हिल्स के प्राणी मीठी नींद ले रहे थे, चारों तरफ निस्तब्धता का वातावरण था। सिर्फ अरब सागर की लहरें शान्त रूप से टकरा रही थीं और इधर आपरेशन टेबिल पर डा. लारेन क्रिश्टियाना चिरनिद्रा में मग्न थीं। उनकी आकृति कागज की तरह सफेद हो गयी थी। एक अनजाने यन्त्र को लेकर डा. अलैक्सी क्रिश्टियाना के बदन पर फेरने लगे। आंखों की पलकों में पेंसिल-सरीखे टार्च की रोशनी में कुछ देर देखते रहे। इसके बाद चुपचाप खिड़की के पास जाकर खड़े हो गये।

तभी डा. रामस्वामी ने मेरे कन्धे पर हाथ रखा। हम दोनों उस कमरे से बाहर चले आये।

डा. रामस्वामी ने कहा, "सब समाप्त।"

"आखिर बात क्या हुई ?"

डा. रामस्वामी ने कहा, "प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में १ औंस का हजारवां भाग पोटैशियम-१४ नामक एक प्रकार का आइसोटोप रहता है जिसकी वजह से व्यक्ति साधारण होने पर भी तेजस्क्रिय होता है। डा. लारेन क्रिश्टियाना जिस समय तेजस्क्रिय भस्म के पास खड़ी थी, उस समय कुछ विकिरण उनकी अंगुली की अंगूठी में प्रवेशकर, सोने के परमाणुओं को विभाजित करती रही। इस विभाजन के कारण जो तेजस्क्रिय रश्मि निकली, वह उनके शरीर की पोटैशियम-१४ के साथ संघर्ष कर बैठी, इसके फलस्वरूप यह घटना हुई। कहने का मतलब यह कि इस विस्फोट के कारण एक अमूल्य जीवन से हाथ धोना पड़ा।"

"तो उस काले पिण्ड को जो कि भस्म की खतरनाक रश्मियों का शोषण कर रहा था, हम अब काम में नहीं ले सकेंगे ?"

"फिलहाल सम्भव नहीं है, क्योंकि अतिरिक्त शक्ति शोषण करने के कारण ही उसने स्वयं विस्फोट किया है।"

मुझे ऐसा लगा, जैसे एक विराट दानव हमें निगलने के लिए आगे बढ़ रहा है। उससे बचने की राह इस समय दिखायी नहीं दे रही है। ●

ध्वनि द्वारा अस्थि रोग का निदान

अमरीकी चिकित्सक अस्थि में से ध्वनि तरंगें सम्प्रेषित करके अब रोग का निदान उसकी प्रारम्भिक अवस्था में ही करने में समर्थ हैं। ओषधियों का प्रयोग करके निश्चय ही उसका बढ़ना रोका जा सकता है। इस रोग का नाम ओस्टओपोरोसिस है। इसमें अस्थियों का खनिज तत्त्व क्षरित हो जाता है। इस कारण वे कड़ी होकर चिटक सकती हैं। यह रोग आमतौर पर अधिक उम्र वाले लोगों को होता है और अक्सर कूल्हे की हड्डी टूट जाने पर या कोई अन्य गम्भीर चोट लगने पर उसका पता लग पाता है।

नयी विधि के अन्तर्गत् कुहनी को एक विशेष प्रकार के ध्वनि उत्पादक यन्त्र में रख दिया जाता है और अग्रबाहु की भीतर वाली हड्डी से होकर ध्वनि-तरंगें सम्प्रेषित की जाती हैं। ध्वनि को कलाई पर एक टोहक यन्त्र द्वारा नापा जाता है। भौतिक विज्ञान के एक प्रामाणिक सिद्धान्त के अनुसार अस्थि के घनत्व का निर्धारण अस्थि की लम्बाई के सम्बन्ध में प्रतिध्वनि के आपतन के आधार पर हो सकता है। यद्यपि यह रोग समूचे अस्थिपंजर को प्रभावित करता है, फिर भी अग्रबाहु का प्रयोग माप की आसानी के कारण होता है।

यह विधि एक्स-रे प्रविधि की अपेक्षा कई गुनी संवेदनशील है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्बन का बढ़ता इत्रा परिवार

सत्यकुमार, एम. एस-सी.

प्रकृति में संयुक्त या मुक्त अवस्था में ९२ तत्त्व पाये जाते हैं। इनके अतिरिक्त ११ तत्त्व वैज्ञानिकों ने कृत्रिम रूप से तैयार किये हैं। इनमें से अकेले कार्बन के अध्ययन के लिए अलग से कार्बनिक रसायन ! रसायन-शास्त्री सभी पदार्थों को दो वर्गों में बांटते हैं—कार्बनिक तथा अकार्बनिक, अर्थात् एक तत्त्व का अध्ययन एक ओर तथा शेष १०२ तत्त्वों का दूसरी ओर। फिर भी कार्बनिक रसायन ही अधिक महत्त्वपूर्ण है। लेकिन यह कहा जाता है कि अकार्बनिक रसायन आदिकाल से चला आ रहा है और कार्बनिक रसायन का जन्म १८२६ में हुआ। व्होलर ने अमोनियम साइनाइट को गरम करके प्रयोगशाला में यूरिया बना लिया। यूरिया पहले पशुओं के मूत्र से प्राप्त किया जाता था। इसकी गिनती जैव (organic) पदार्थों में होती थी। जैव पदार्थों के बारे में अनुमान था कि ये वनस्पति तथा प्राणी जगत से ही प्राप्त किये जा सकते हैं। प्रसिद्ध वैज्ञानिक बर्जीलियस का विचार था कि इन पदार्थों के निर्माण के लिए किसी जीवन-बल या प्राणशक्ति की आवश्यकता होती होगी। अतः ऐसे पदार्थों, जैसे यूरिया, स्टार्च, प्रोटीन, चरबी, गोंद, शक्कर, रबर, तेल इत्यादि को जैव पदार्थ कहा गया। इसलिए अंगरेजी में कार्बनिक रसायन को आर्गेनिक केमिस्ट्री (organic chemistry) कहा जाता है। सभी कार्बनिक पदार्थों में कार्बन अवश्य होता है, अतः हिन्दी नाम कार्बनिक रसायन अधिक उपयुक्त है। वैसे भी व्होलर द्वारा प्रयोगशाला में सर्वप्रथम कार्बनिक यौगिक बना लेने से प्राणशक्ति का सिद्धान्त निर्मूल सिद्ध हो गया। इस क्रान्ति के फलस्वरूप अनेक वैज्ञानिक प्रयोगशाला में जैव यौगिक बनाने में लग गये। १८४५ में कोल्बे ने कार्बन, हाइड्रोजन तथा आक्सीजन के संयोग से ऐसीटिक अम्ल बना लिया तथा १८५६ में बर्थेलो ने कार्बन एवं हाइड्रोजन से मीथेन बनायी। फिर कार्बनिक पदार्थों की बाढ़ आ गयी, जैसे—

वर्ष	ज्ञात कार्बनिक यौगिकों की संख्या
१८२६	१
१८८०	१२,०००
१९१०	१,५०,०००
१९४०	५,००,०००
१९६०	१०,००,००० से अधिक

कार्बनिक रसायन के बढ़ते हुए परिवार का नोबल पुरस्कार विजेता, केम्ब्रिज विश्वविद्यालय इंग्लैण्ड के प्रोफेसर एलेक्जेण्डर टोड के इस कथन से अनुमान लगाया जा सकता है 'यदि कोई कार्बनिक रसायनज्ञ नियमित प्रति दिन आठ घण्टे अध्ययन करे, तो केवल यूरोप और अमरीका की प्रमुख शोध पत्रिकाओं में एक वर्ष में प्रकाशित अपने विषय की सामग्री पढ़ने में उसे १८ माह लगेंगे।'

यों तो कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थों में अनेक विभिन्नताएं हैं, किन्तु कार्बनिक यौगिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की अधिक संख्या के दो कारण मुख्य हैं—एक तो कार्बन के परमाणु एक-दूसरे से मिलकर बड़ी लम्बी-लम्बी शृंखलाएं बना लेते हैं। अन्य कोई तत्त्व इतनी लम्बी शृंखला नहीं बनाता।

लम्बी-लम्बी समावयवता

दूसरा गुण है समावयवता। कभी-कभी एक ही अणुसूत्र से अनेक कार्बनिक पदार्थ प्रदर्शित कर दिये जाते हैं। इसे समावयवता कहते हैं, उदाहरणार्थ C_2H_6O सूत्र द्वारा एथिल अल्कोहल (C_2H_5OH) तथा डाई मैथिल ईथर ($CH_3.O.CH_3$), दो भिन्न यौगिक प्रदर्शित होते हैं। $C_4H_{10}O$ सूत्र द्वारा सात यौगिक तथा $C_{10}H_{13}O_3N$ द्वारा १३५ यौगिक प्रकट होते हैं। $C_{10}H_{22}O$ सूत्र ५०७ यौगिक प्रकट करता है। $C_{20}H_{42}$ सूत्र द्वारा ३६६,३१९ तथा $C_{30}H_{62}$ सूत्र द्वारा ४,११,१८,४६,७६३ यौगिक प्रदर्शित करने की सैद्धान्तिक सम्भावनाएं हैं।

कल्पना कीजिए कि बच्चे हैं। उनके पास खेलने के, मकान आदि बनाने के गुटके हैं। एक बच्चे के पास ९२ विभिन्न प्रकार के गुटके हैं पर वह उनमें से दस-बारह से अधिक एक बार में काम में नहीं लेता। दूसरे बच्चे के पास केवल चार-पांच विभिन्न प्रकार के गुटके हैं किन्तु वह उनमें से चाहे कितने ही पांच लाख, दस लाख एक बार में इस्तेमाल कर सकता है। स्पष्टतः दूसरा बच्चा अधिक नये-नये प्रकार के मकान बना सकेगा। इसी कारण कार्बनिक यौगिकों की संख्या अकार्बनिक यौगिकों से कहीं अधिक है। आदिकाल से चले आ रहे अकार्बनिक रसायन के ७५ हजार से अधिक यौगिक नहीं हैं और १८२६ में जन्मे कार्बनिक रसायन के यौगिकों की संख्या १० लाख से ऊपर है, तथा दिनोदिन बढ़ती जा रही है। कार्बनिक यौगिकों में मुख्यतः कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन होते हैं। कभी-कभी नाइट्रोजन, गन्धक तथा हेलोजन (क्लोरीन, फ्लोरीन, ब्रोमीन तथा आयोडीन) होते हैं और यदाकदा फासफोरस एवं कुछ धातु।

हमारे जीवन का कोई पहलू कार्बनिक पदार्थों के उपयोग से अछूता नहीं है। हमारी जीवन-क्रिया भी शरीर में होने वाली अनेक कार्बनिक प्रतिक्रियाओं पर निर्भर है।

हमारा भोजन मुख्यतः कार्बनिक यौगिकों का सम्मिश्रण है। दूध, घी, साग-सब्जी, स्टार्च, प्रोटीन, विटामिन, प्रकिण्व, हारमोन इत्यादि सभी कार्बनिक पदार्थ हैं। सब्जी और फलों का संरक्षण भी कार्बनिक पदार्थों द्वारा होता है। चाय, काफी, तम्बाकू, शराब इत्यादि सभी नशीले पदार्थों के विशिष्ट गुण उनमें उपस्थित कार्बनिक पदार्थों के कारण हैं।

हमारा कपड़ा, चाहे वह सूती हो, चाहे रेशमी, चाहे पटसन आदि का, कार्बनिक पदार्थों की देन है। नाइलान, रेयन, टेरीलीन, सभी आधुनिक कपड़े संश्लेषित कार्बनिक यौगिकों के रेशों द्वारा बनते हैं।

देशी जड़ी-बूटियों से लेकर सभी विलायती दवाइयों तक ओषधियां कार्बनिक पदार्थ ही हैं। मार्फीन, कोकीन, एमेटिन, एफेड्रिन इत्यादि जड़ी-बूटियों से प्राप्त कार्बनिक

ग्रेफाइट

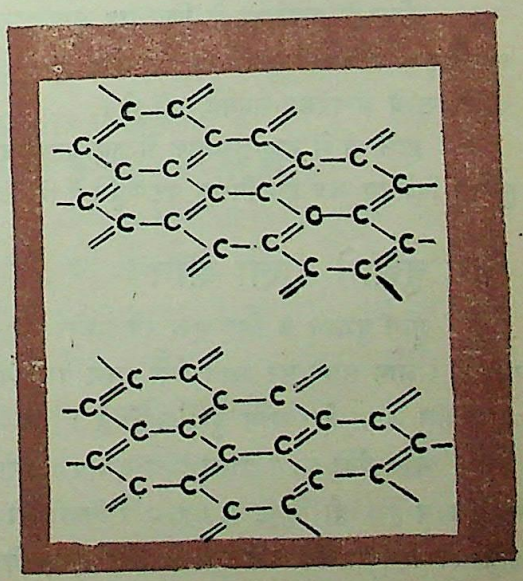

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

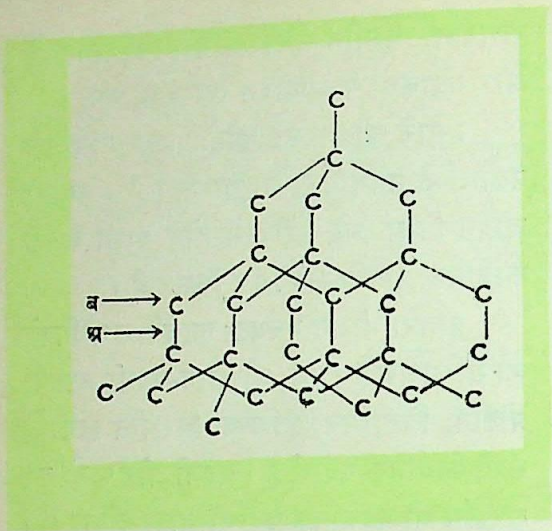

हीरा—(अ) अलगाव धरातल, (ब)संलग्नता की असम्भावना

पदार्थ हैं जो ओषधियों के लिए प्रयुक्त होते हैं। क्लोरोफार्म, आइडोफार्म, कुनैन, केमोक्वीन, एस्प्रीन, स्प्रिट, टिंचर, पेनीसीलीन, क्लोरोमाइसेटिन, स्ट्रेप्टोमाइसिटिन, सल्फेनामाइड आदि सभी जटिल कार्बनिक पदार्थ हैं। फीनोल, लाइसोल, डेटाल, डी.डी.टी. इत्यादि सभी कृमिनाशक भी कार्बनिक रसायन की देन हैं।

महत्त्वपूर्ण उद्योग भी कार्बनिक रसायन की करामात हैं। प्लास्टिक का प्रयोग कर नहीं होता? रबर को कौन नहीं जानता? चमड़ा उद्योग भी प्रधानतः कार्बनिक ही है। सभी सौन्दर्य प्रसाधन—तेल, साबुन, क्रीम नेलपालिश, लिपस्टिक, वैसलीन इत्यादि कार्बनिक यौगिकों के ही संयोग हैं। विभिन्न सुन्दर रंग, वार्निश, जूते की पालिश, वैसलीन इत्यादि कृत्रिम तथा प्राकृतिक सुगन्धित सभी कार्बनिक पदार्थ हैं। विस्फोटक पदार्थ टी.एन.टी., विस्फोटनीय जिलेटिन आदि तथा विलायक जिन पर ड्राईक्लीनिंग उद्योग आधारित है, कार्बनिक यौगिक ही हैं।

स्टार्च, शक्कर, शराब (स्प्रिट) का निर्माण कार्बनिक उद्योग से ही संम्भव है। वनस्पति घी, ईंधन-पेट्रोल तथा डीजल, कृत्रिम रेशों से तैयार किये जाने वाले कपड़ों के कारखाने, सब कार्बनिक यौगिक ही बना रहे हैं। कार्बाइड लैम्पों में जलने वाली एसिटिलीन जो धातुओं को जोड़ने में भी काम आती है, कार्बनिक पदार्थ ही है।

कार्बनिक रसायन के बढ़ते हुए महत्व से विश्वास होता है कि जीवन और मृत्यु के रहस्य को भी अन्ततोगत्वा यही सुलझायेगा।

जीवित रहने के लिए दिल की धड़कन नहीं

दिल के आपरेशन के लिए यह आवश्यक है कि जब तक आपरेशन हो रहा हो, दिल की धड़कन बन्द रहे। शल्य-चिकित्सक अब तक थोड़े ही समय के लिए दिल की धड़कन बन्द रख पाते थे जिसके कारण लम्बे आपरेशन सम्भव नहीं थे।

हाल ही में बाद-कुजनाक में हुए शल्य-चिकित्सा विशेषज्ञों के सम्मेलन में इस समस्या पर विचार हुआ। विशेषज्ञ अब इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि दिल की धड़कन को देर तक बन्द रखना सम्भव हो सकेगा।

आग बुझाने वाला झाग

आग बुझाने के लिए एक नये प्रकार का झाग जो शीघ्र ही फैल जाता है, ब्रिटेन में तैयार किया गया है। आग लगने पर झाग पैदा करने वाले यन्त्र को खोल दिया जाता है। दो मिनट में ही हर ओर झाग फैल जाता है। आग बुझ जाती है।

झाग पैदा करने वाला यन्त्र ६८,००० रुपये में मिल जाता है। इस यन्त्र द्वारा आग बुझाना बहुत सरल काम है। दो मिनट में यह यन्त्र किसी भी साधारण तिमंजिले मकान को झाग से भर सकता है। आवश्यकता पड़ने पर आग बुझाने वाले बिना किसी भय के झाग में से होकर घर में प्रवेश कर सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नरेन्द्र छाबड़ा

अंगूर एक स्वादिष्ट और पौष्टिक फल है। इस फल को खाकर ताजगी मिलती है, मस्तिष्क को शक्ति प्राप्त होती है और भूख-की तृप्ति होती है। रोगियों के लिए यह फल विशेष लाभदायक है। सभी फलों में यह एक उत्तम और महंगा फल है। इस फल की अनेक किस्में हैं; कई रंग-रूपों में यह फल पैदा होता है और खट्टे से लेकर शरबती मीठे तक इसका स्वाद होता है। यह पककर बाजार में आता है। फल-विक्रेताओं की दुकानों पर अंगूर के गुच्छे लटक रहे होते हैं और टोकरे गुच्छों से भरे पड़े होते हैं, तो ये कितने लुभावने लगते हैं और खाने को जी मचल उठता है।

पर क्या अंगूर भारत का अपना फल है? इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। संस्कृत साहित्य में जहां-तहां इस तरह के फल का उल्लेख अवश्य मिलता है, पर यह सिद्ध नहीं होता कि यह उल्लेख वस्तुतः इसी फल विशेष का है या किसी अन्य का। अनेक प्रमाण यह बताते हैं कि भारत में अंगूर का आगमन बाहर के देशों से हुआ, इस देश में अंगूर का प्रचार १३०० के आसपास ईरान और अफगानिस्तान से आने वाले मुसलमान आक्रमणकारियों द्वारा हुआ। इसका मूल उत्पत्ति स्थान अर्मीनिया (रूस) कहा जाता है, जहां से यह ईरान और अफगानिस्तान भी पहुंचा। और आज विश्व भर में अफगानिस्तान को अब इस फल की पैदावार का मुख्य केन्द्र माना जाता है। पाकिस्तान में चमन (बलोचिस्तान) नामक स्थान पर होने वाला अंगूर अपना सानी नहीं रखता। बढ़िया किस्म के अंगूरों के उल्लेख में 'चमन का अंगूर' एक विशिष्ट नाम है।

भारत में अंगूर अधिकतर अफगानिस्तान से ही मंगवाया जाता है। पाकिस्तान से भी काफी अंगूर भारत आता है, पर उम्दा किस्म का अंगूर और अंगूर की किशमिश अफगानिस्तान से ही आती है।

भारत में अंगूर की पैदावार

इसके अतिरिक्त बहुत बड़ी मात्रा में अंगूर की पैदावार भारत में भी होने लगी है। इसके उत्पादन के मुख्य राज्य हैं महाराष्ट्र, मैसूर, मद्रास और आन्ध्र प्रदेश। थोड़ी मात्रा में अंगूर कश्मीर, पंजाब और उत्तर प्रदेश में भी उगाया जाने लगा है। अनुमान है कि देश भर में कुल मिलाकर लगभग १० हजार एकड़ भूमि में अंगूर की खेती की जाती है, और एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

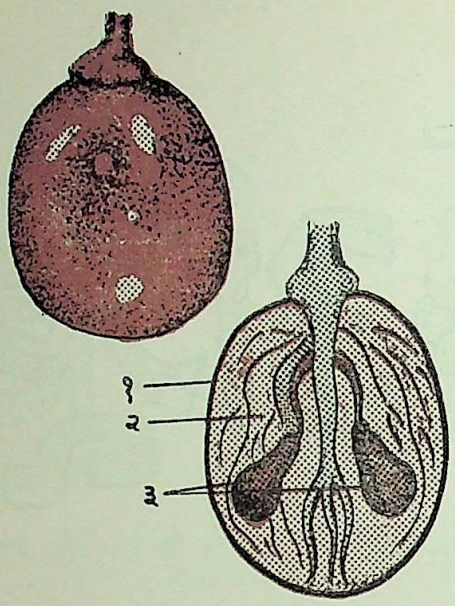

अंगूर के तीन स्पष्ट भाग (१) बाह्य आवरण, (२) शर्करा और अम्लयुक्त गूदा और (३) बीज

अंगूर-वाटिका से औसतन १५ हजार से ३० हजार रु. तक आमदनी हो जाती है।

अंगूर की बेल होती है जो बीज बोकर पौध (seedling) के रूप में तैयार की जाती है, या खड़ी बेल के टुकड़े काटकर भी लगा दिये जा सकते हैं जो धीरे-धीरे बढ़ते-बढ़ते पूरी बेल के रूप में पनपने लगते हैं। इन्हीं बेलों पर अंगूर गुच्छों में लगते हैं। पौध लगाकर या बेल से कटिंग लेकर उगाया जाय, पर अंगूर की बेलों की वाटिकाएं होती हैं। इन्हें उगाने का वैज्ञानिक ढंग होता है और बड़ी सावधानी बरतनी पड़ती है।

एक एकड़ की वाटिका से औसतन १० हजार से १५ हजार पौण्ड तक पैदावार उपलब्ध हो जाती है। परन्तु फल की मात्रा का कम-अधिक होना अंगूर की किस्म पर भी निर्भर करता है, जैसे भोकरी किस्म की १० हजार से १५ हजार पौण्ड तक पैदावार प्राप्त हो जाती है, जबकि पाचाद्राक्षी से १२ हजार पौण्ड तक प्राप्त होती है और कइयों से २०-३० हजार पौण्ड तक प्राप्त हो जाती है।

अंगूर की पैदावार के लिए विशिष्ट जलवायु

अंगूर की पैदावार के लिए गरम-शुष्क और वर्षारहित ग्रीष्म ऋतु की आवश्यकता होती है, और पाला तो इसका सबसे बड़ा शत्रु है। इसलिए भारत में उक्त राज्यों तथा पंजाब और कश्मीर का जलवायु अंगूर की पैदावार के लिए पर्याप्त उपयुक्त सिद्ध हुआ है। भारत में सर्वाधिक पैदावार महाराष्ट्र राज्य के नासिक, पूना एवं औरंगाबाद और अहमदनगर में होती है, जहां १,५०० एकड़ से अधिक भूमि में इसकी खेती की जाती है। उत्तरी भारत की अपेक्षा दक्षिण और पश्चिमी भारत का जलवायु अंगूर की पैदावार के लिए उपयुक्त सिद्ध हुआ है। उत्तरी भारत में प्राय: जून से सितम्बर तक वर्षा होती है जो अंगूर के पकने का समय है। इसलिए फल कम होते हैं और खूब मीठे नहीं। शिमला की पहाड़ियों में लगभग ३५ एकड़ भूमि में अंगूर की खेती होती है, जो शराब बनाने के काम आता है। परन्तु अफगानिस्तान से आने वाले बढ़िया किस्म के अंगूर का मुकाबला भारत का अंगूर अभी नहीं कर सकता।

अंगूर की खेती आज न केवल भारत, अफगानिस्तान और पाकिस्तान में होती है, बल्कि यूरोप के लगभग सभी देशों विशेषकर इंग्लैण्ड, अमरीका प्रायद्वीप, फिलिस्तीन में, और दक्षिण चीन, ब्राजील और फारस में इसकी पैदावार होती है।

प्रमुख किस्में

भारत में अंगूर की हर मौसम की किस्में उगायी जाती हैं, जिस कारण वर्ष भर अंगूर बिकता है। लेकिन अगस्त से अक्तूबर तक इसकी भरमार रहती है। सामान्यतः अंगूर की किस्मों को हम तीन मुख्य श्रेणियों में बांट सकते हैं जिनके अन्तर्गत सभी किस्में आती हैं। ये तीन मुख्य श्रेणियां हैं—टेबिल अंगूर, किशमिशी अंगूर और अंगूरी रस।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टेबिल अंगूर की मुख्य किस्में अनाबेशाही, भोकरी (इसे नासिक हरा भी कहते हैं), फोकदी, आन्ध्री साहेबी, काली साहेबी, गुलाबी, अनाबेशाही, कन्धारी आदि हैं। ये किस्में महाराष्ट्र राज्य और आन्ध्र प्रदेश में उगायी जाने वाली किस्में हैं। इस श्रेणी में नीला बंगलौरी तथा पाचाद्राक्षी किस्में भी मुख्य स्थान रखती हैं और मैसूर तथा मद्रास राज्यों में सफलतापूर्वक उगायी जाने लगी हैं। पंजाब में 'दाख' किस्म ही मुख्य रूप से उगायी जाती है। ये सभी देशी किस्में हैं। इन किस्मों की विस्तृत जानकारी निम्नलिखित प्रकार है।

अनाबेशाही किस्म का अंगूर अब आन्ध्र प्रदेश तथा दक्षिण भारत के कई अन्य भागों में काफी उगाया जाता है। इसके फल सफेद, अण्डाकार, पतले छिलके वाले और खूब मीठे होते हैं और खाने में सर्वोत्तम समझे जाते हैं। इसका गुच्छा मध्यम आकार का और काफी घना होता है। हैदराबाद और औरंगाबाद में इसकी उपज अधिक होती है।

भोकरी महाराष्ट्र के नासिक जिले में उगायी जाने वाली किस्म है। इस अंगूर का रंग हरा होता है, इसलिए इसे नासिक हरा का नाम भी दिया गया है। बम्बई और हैदराबाद में भी इसकी खेती होती है। इसके फल गोल, बड़े बीजों वाले और रंग हरापन लिये पीला होता है। छिलका मोटा होता है और स्वाद में भी कुछ खटास होती है। गुच्छे खूब भरे-भरे ठोस और लम्बे होते हैं।

फकड़ी (Phakdi) के फल हलके हरे और अण्डाकार होते हैं। इसका छिलका पतला तथा कुछ मुलायम और मीठा होता है। फलों का गुच्छा बड़ा और ढीला होता है। इसके चारों ओर तथा बीच में फलों की डालियां लटकी रहती हैं। यह बहुत ही कोमल किस्म का अंगूर है, अतः ज्यादा समय तक नहीं टिकता।

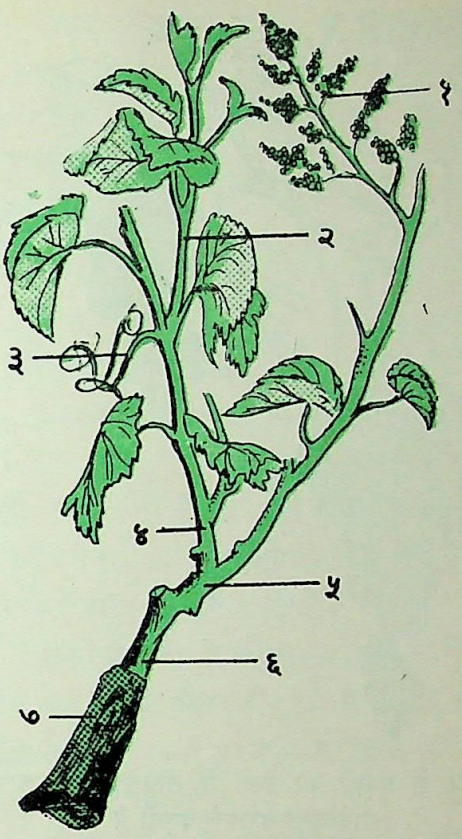

पत्तियों तथा अंगूर के गुच्छों से लदी एक डाल—(१) अंगूरों का गुच्छा, (२) नयी कोंपल, (३) तन्तु, (४) मुख्य टहनी, (५) एक-वर्षीय टहनी, (६) दो-वर्षीय टहनी और (७) बड़ी डाल

अंगूर की अन्यानेक किस्में

कन्धारी किस्म के अंगूर बैंगनी रंग के और अण्डाकार होते हैं। गुच्छे इसके मध्यम आकार के और ठोस होते हैं। इसका छिलका मोटा, गूदा मीठा और ठोस होता है। यह फल आसानी से दूर तक ले जाया जा सकता है, क्योंकि यह जल्दी खराब नहीं होता।

पाचाद्राक्षी मद्रास राज्य के मदुरै जिले में बहुतायत से उगाया जाता है। यह अंगूर गुण, रूप और पैदावार की दृष्टि से भोकरी से बहुत मिलता-जुलता है। इसके गुच्छे बड़े, खूब ठोस और मूसलाकार होते हैं। इसका रंग भी हरा होता है।

गुलाबी अंगूर एक नयी किस्म है। इसका आकार गोल, रंग बैंगनी, छिलका मोटा तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंगूर के गुच्छों को बेलों से तोड़ते समय काफी सावधानी बरतनी पड़ती है

स्वाद मीठा होता है। इसका गूदा मुलायम तथा उसमें से गुलाब की महंक आती है, इसलिए इसे गुलाबी किस्म नाम दिया गया है। इसके गुच्छे कुछ ढीले और छितरे होते हैं।

दाख मुख्यत: पंजाब में उगायी जाती है। इसका रंग बैंगनी, आकार गोल, छिलका मोटा, गुच्छे घने और स्वाद खट्टा-मीठा होता है। यह खूब फलता-फूलता है और इसके फलों का रस गाढ़ा होता है।

काली साहेबी किस्म के अंगूरों का रंग भी बैंगनी होता है। इसका छिलका बहुत ही पतला, गूदा मीठा और बीज नरम होते हैं। गुच्छा इसका बड़ा और ढीला होता है।

टेबिल अंगूरों के अतिरिक्त 'किशमिशी अंगूर' और 'अंगूरी रस' की श्रेणियों के अन्तर्गत भी कई किस्में हैं, जैसे 'सुलताना,' 'थाम्पसन बीज-रहित' आदि। इन अंगूरों को सुखाकर किशमिश बनाने के काम में लाते हैं। इन्हें अधिक समय तक रखा जा सकता है, इन्हें मुनक्का का नाम भी दिया जाता है। भारत में प्रतिवर्ष हजारों मन किशमिश और मुनक्का अफगानिस्तान और ईरान-जैसे देशों से मंगवाया जाता है। मस्कत हम्बर्ग, ब्लैक हम्बर्ग और ग्रौस कौल्मन, ये 'अंगूरी रस' श्रेणी की किस्में हैं।

इन अंगूरों से रस और शराब तथा कई अन्य पेय तैयार किये जाते हैं। सच तो यह है कि संसार भर का लगभग ८० प्रतिशत अंगूर शराब बनाने के काम आता है, शेष टेबिल अंगूर किशमिश और मुनक्का के रूप में खाया जाता है।

मस्कत हम्बर्ग, ब्लैक हम्बर्ग और ग्रौस कौल्मन यद्यपि विदेशी किस्में हैं, परन्तु पिछले ३५ वर्षों से भारत में इन्हें उगाया जा रहा है।

आमतौर पर अंगूर पकने पर ही तोड़े जाते हैं।

तोड़ने का काम सामान्यत: हाथ से किया जाता है। गुच्छे को बेलों से तोड़ते समय उनको छांटते समय और टोकरों एवं पेटियों में बन्द करते समय सावधानी बरतनी पड़ती है ताकि फलों में रगड़ न पड़े और उनकी चमक भी न जाये।

अंगूर में पोषक तत्त्व

अंगूर में शर्करा, कैल्शियम, फास्फोरस और लोहा काफी मात्रा में पाया जाता है। इसमें विटामिन-बी विशेष मात्रा में और विटामिन-सी और जी भी थोड़ी-बहुत मात्रा में होता है।

सेब के समान इसमें भी पोषक पदार्थ भरपूर मात्रा में विद्यमान हैं। इसमें कैलोरी इतनी अधिक मात्रा में पायी जाती है कि केवल आधी छटांक अंगूर खाने से शरीर को १३ यूनिट कैलोरी शक्ति मिलती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

16253

विचित्र संसार

डाक टिकट द्वारा कार जुरमाने का भुगतान

फ्रांस की राजधानी पेरिस के पुलिस अधिकारियों ने मोटर गाड़ी कहां खड़ी की जाय और कहां नहीं, इस नियम का उल्लंघन करने वालों द्वारा दण्ड भुगतान के लिए एक नयी तरकीब निकाली है।

यह उल्लेखनीय है कि फ्रांस में पुलिस अधिकारी ही कार चालक पर जुरमाना करने का अधिकार रखते हैं। नये निर्णय के अनुसार दण्डित व्यक्ति अपने ऊपर हुए जुरमाने की रकम का डाकखाने से टिकट खरीदकर उस पर मुहर लगवा लेगा और उसे जुरमाने का भुगतान माना जायेगा।

इसका एक परिणाम यह होगा कि मोटर गाड़ी का दण्डित मालिक अपने जुरमाने की रकम किसी भी डाकखाने में जमा करा सकेगा।

नकली शेक्सपियर

कहा जाता है कि गालिब के कई शेर नकली हैं। उन्हें गालिब ने कभी नहीं लिखा। किसी और ने लिखा।

लेकिन जाली लेखन का प्रचलन केवल भारत ही में नहीं, विश्व के अन्य देशों में भी है। ब्रिटेन में तो लोग इस कला में काफी माहिर हैं।

हाल ही में ब्रिटेन में एक पुस्तक 'शेक्सपियर पर महान् जालसाजियां' प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक के लेखक ने शेक्सपियर के अनुरूप उसी के नाम से कविता करने वाले एक व्यक्ति के सम्बन्ध में बताया है। नकली शेक्सपियर का नाम है विलियम हेनरी। हेनरी १८वीं शताब्दी में अत्यधिक प्रसिद्ध हो गया था। उसका नाटक 'वोर्टीग्रेन' शेक्सपियर के नाम से १७९६ में खेला गया था।

विलियम हेनरी पुराने कागज पर वैसी ही स्याही से लिखता था जैसी स्याही शेक्सपियर के काल में प्रयुक्त होती थी। वह लेखन में वैसी ही अशुद्धियां करता था जैसी शेक्सपियर करता था।

हेनरी ने एक अन्य नाटक भी शेक्सपियर के नाम से लिखा।

भारत और विषमताएं

भारत में सिंचाई की ऐसी व्यवस्था है जो संसार की महानतम जल-व्यवस्थाओं में रखी जा सकती है पर साथ ही राजस्थान में अनेक ऐसे स्थान हैं जहां लोग जल को बहुमूल्य मानते हैं और ताले में रखते हैं।

एक ओर भारत शक्ति-उत्पादन के लिए तीन अणु प्लाण्ट तैयार कर रहा है और दूसरी ओर देहाती रास्तों पर छह करोड़ से अधिक बैलगाड़ियां चलती हैं।

भारत में ऐसी भी भूमि है जहां इतना गन्ना पैदा होता है कि हवाई और जावा की पैदावार भी तुलनात्मक दृष्टि से पीछे रह जाती है, पर ऐसी भी भूमि है जहां बहुत ही कम पैदावार होती है।

नल में बहती शराब

न्यूयार्क की पुलिस ने एक मकान पर छापा मारकर एक अनधिकृत मधुशाला का पता लगाया है।

इसकी यह विलक्षणता है कि इसमें एक नल लगा था जिसे खोलने से पानी के स्थान पर शराब निकलती थी।

मधुशाला के मालिक ने अपने मकान के पिछवाड़े शराब की एक अनधिकृत भट्ठी लगा रखी थी। उस भट्ठी से ही शराब नल द्वारा ग्राहकों को मिलती थी।

संसार के सबसे तेज दौड़ने वाले व्यक्ति की शादी

संसार के सबसे तेज दौड़ने वाले व्यक्ति को एक धनिक की कन्या क्रिश्टियन डियाना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने मोह लिया। वह २८ वर्ष की है और एक व्यवसायी की पुत्री है।

डियाना की जिससे शादी तय हुई है उसका नाम आर्मिन हार्वे है। वह भी २८ वर्ष का है। उसने रोम के ओलम्पिक खेल समारोह में ९·९ सेकण्ड में १०० मीटर दौड़कर संसार के पिछले रिकार्डों को तोड़ा था।

हार्वे अब खेल में भाग नहीं ले सकता, क्योंकि एक मोटर दुर्घटना में उसकी टांग टूट गयी थी। अब वह लेखन में समय व्यतीत करता है। 'दस सेकण्ड के लिए दुनिया से विदा' उसकी पुस्तक है।

पैंसठ वर्ष पुरानी किन्तु आधुनिक रेल

वुपरटाल की झूलेदार रेल पेंशन वाली आयु की हो चुकी है, लेकिन आज भी वह विश्व की आधुनिकतम यातायात का साधन

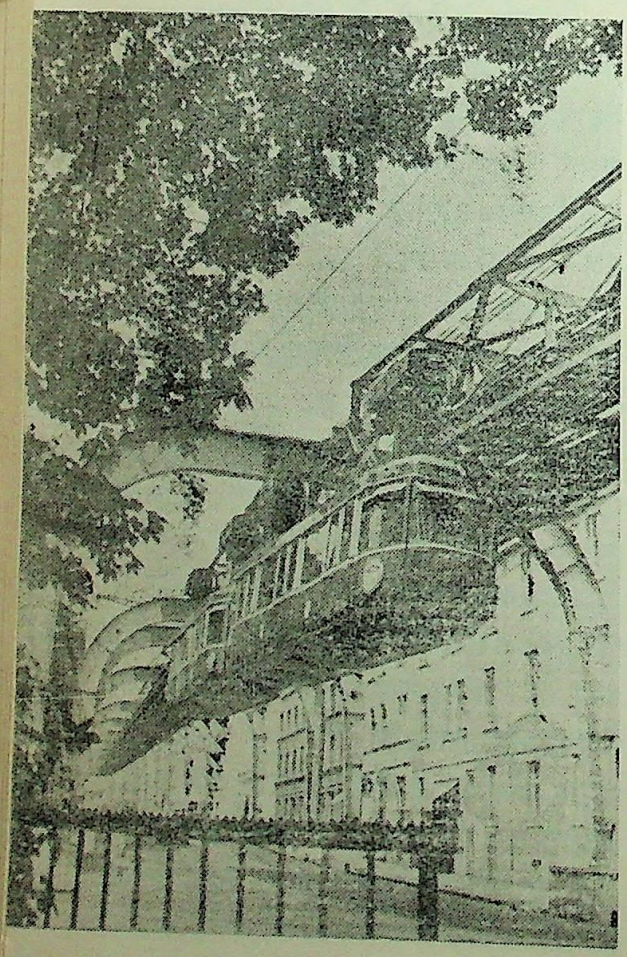

है तथा उसे और भी आधुनिकतम बनाने की योजना है।

इस मोनोरेल को इंजीनियर स्वचालित बनाना चाहते हैं ताकि यह बिना ड्राइवर के चल सके। १९०१ के बाद इस रेल द्वारा १,००,००,००,००० यात्री ले जाये जा चुके हैं, जिन्होंने इधर-उधर १३·३ कि. मी. रेल पर २२,००,००,००० कि. मी. की यात्रा की। यह फासला चन्द्रमा की ५७० यात्रा करने के बराबर है या सूर्य की डेढ़ यात्रा करने के बराबर।

इस अवधि में इस पर केवल एक घातक दुर्घटना हुई, वह भी यात्री की गलती से। दूसरी दुर्घटना एक हाथी के साथ हुई थी, पर वह बच गया था।

सारी दुनिया के विशेषज्ञ यातायात समस्या के इस हल को अनिवार्यतः अनुकरणीय मानते हैं।

बतखों की बोली बोलने वाला प्रोफेसर

बर्लिन के प्रोफेसर कोनराड लारेंस बतखों की बोली न केवल समझ लेते हैं बल्कि बोल भी लेते हैं। अपनी शिक्षा पूरी करने के लिए पिछली गरमियों में वे बवेरिया के उस स्थान में रहे जहां जंगली बतखें बहुतायत में होती हैं।

अब वे बतखों से न केवल बातें करते हैं, बल्कि बतखें उन्हें अपना मित्र मानने लगी हैं।

एक बार वे साइकिल पर अपने घर जा रहे थे। बतखें उनके चारों ओर थीं और वे उनसे बातें कर रहे थे। अचानक साइकिल से वे गिर पड़े। बतखें वहीं उन्हें घेरकर बैठ गयीं। वे तब तक वहां से नहीं हटीं जब तक वे फिर साइकिल पर सवार होकर न चल पड़े।

प्रोफेसर कोनराड लारेंस की उम्र ६० वर्ष है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेशम का कीड़ा

यमुनाधर पाण्डेय, एम. एस-सी.

विभिन्न प्रकार के कीड़े मानव को समृद्धिशाली बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। और इस दृष्टि से रेशम के कीड़े का प्रमुख स्थान है। रेशम के कीड़े से शुद्ध रेशम मिलता है जिससे बहुमूल्य वस्त्र तथा अन्य वस्तुएं बनायी जाती हैं। चीनवासियों ने ईसा से २७०० वर्ष पूर्व इस कीड़े को पहचाना। बहुत समय पश्चात् यह कीड़ा भारत में लाया गया। सम्प्रति में देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रमुख लघु उद्योगों में से रेशम उद्योग एक है। लगभग २ लाख परिवारों की जीविका इस उद्योग पर आश्रित है। देश में इस समय रेशम का उत्पादन लगभग २५ लाख पौण्ड है जिसका मूल्य १९ करोड़ रुपये होता है। रेशम के माल की खपत प्रतिवर्ष ४०-४२ लाख पौण्ड की है।

रेशम के कीड़े का पालन कलात्मक तथा वैज्ञानिक है। अतः यह आवश्यक है कि इनको पालने से पहले प्रत्येक जानकारी प्राप्त कर ली जाय, अन्यथा कीड़ों के नष्ट हो जाने पर सारा परिश्रम व्यर्थ चला जाता है। यों तो कई प्रकार के कीड़े रेशम के धागे बुनते हैं, लेकिन शहतूत का कीड़ा (बाम्बेक्स मोराई) व्यापारिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। कम उत्पादन करने वाले कीड़ों में मूंगा, टसर और इराई के रेशम के कीड़े विशेष उल्लेखनीय हैं।

कीड़ों का पालन

इस कीड़े को सफलतापूर्वक पालने के लिए स्वच्छता, तापक्रम, आर्द्रता नियन्त्रण तथा उपयुक्त भोजन की व्यवस्था का लगातार ध्यान रखना आवश्यक है। इस कीड़े को पालने के प्रायः दो उद्देश्य होते हैं—पहला अच्छी जाति के स्वस्थ अण्डे पैदा करना—इस उद्देश्य के लिए स्वस्थ कीड़ों से प्राप्त विभिन्न आयु के अण्डे भिन्न-भिन्न ताप तथा आर्द्रता पर रखे जाते हैं। इस प्रकार का पालन अधिकतर राजकीय फार्मों पर किया जाता है। इस उद्देश्य के लिए अण्डे से लेकर पतंगे तक की देखभाल करनी पड़ती है। और दूसरा, रेशम के उत्पादन के लिए। यह प्रायः प्राइवेट क्षेत्रों में किया जाता है। इसमें कोया बनने के बाद तथा प्रौढ़ निकलने के पहले कीड़े मार दिये जाते हैं और रेशम प्राप्त कर ली जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कीड़ों को पालने के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण बातें ध्यान में रखना आवश्यक हैं : (१) भोजन देना, (२) विष्ठा की सफाई, (३) पर्याप्त स्थान की व्यवस्था।

रेशम के कीड़े की इल्ली अवस्था ३०-३५ दिन की होती है और इस आयु में वह चार बार कपड़े बदलता है। आयु के अनुसार ही इनकी आवश्यकताएं बदलती हैं। नीचे-की तालिका में एक औंस अण्डों से प्राप्त कीड़ों की आवश्यकताएं दी गयी हैं—

कुछ ध्यान देने योग्य बातें

कीड़ों को आवश्यकतानुसार भोजन देना चाहिये। कम अथवा अधिक भोजन देना हानिप्रद है।

जहां तक सम्भव हो, प्रत्येक समय ताजी पत्तियां देनी चाहिये। यदि कभी ऐसा करना कठिन हो, तो पत्तियों को तोड़कर किसी मिट्टी के बरतन में रखकर ढंक देना चाहिये। बरसात के मौसम में वर्षा होने से पहले पत्तियां तोड़कर रख लेनी चाहिये। भीगी पत्तियों को कभी नहीं खिलाना चाहिये, इससे कीड़ों को बीमारी हो जाती है। इससे यह अच्छा है कि कीड़ोंको एक-दो दिन भोजन दिया ही न जाय।

एक औंस अण्डों से प्राय: ३,०००-३,२०० कीड़े प्राप्त होते हैं। इनको पालने के लिए लगभग २,०० पौण्ड पत्तियों की आवश्यकता होगी। दूसरे शब्दों में, १२ वर्ष तक की आयु वाले १५ पेड़ों की आवश्यकता होगी।

स्वस्थ तथा अच्छी जाति के अण्डों को प्रयोग में लाना चाहिये।

इस बात का भी ध्यान रखा जाय कि कीड़ों को उम्र के अनुसार ही पत्ते मिलें। कम उम्र के कीड़ों को नये निकले हुए कोमल पत्ते और अधिक उम्र वाले कीड़ों को बड़े पत्ते खिलाना चाहिये। पानी के किनारे के शहतूत के पेड़ की पत्तियां केवल बड़ी उम्र के कीड़ों को दी जायें।

एक उम्र के कीड़े दूसरी उम्र वाले कीड़ों के साथ नहीं रखने चाहिये।

कीड़े पालने के लिए प्रमुख आवश्यकताएं

पालन कक्ष : कमरा चारों तरफ से खुला और हवादार होना चाहिये। कमरे की छत घास-फूस की होनी चाहिये जिससे गरमियों में कमरा ठण्डा और सर्दियों में गरम रहे। जिस ओर से धूप आती हो, उस ओर बरामदा रखना चाहिये। कमरे का दरवाजा पश्चिम की ओर नहीं रखना चाहिये। कमरे में अथवा आस-पास कोई भी दुर्गन्धयुक्त पदार्थ नहीं रखना चाहिये।

मचान : धरती पर पालने से रेशम के कीड़ों को अन्य कीड़े-मकोड़े हानि पहुंचाते हैं, अत: धरती पर न पालकर मचानों अथवा फ्रेमों पर ही पालना हितकर है। लकड़ी के फ्रेम महंगे पड़ते हैं, कम खर्च के लिए बांस अथवा सरकण्डों की सहायता से लम्बी मचान बनाकर उनसे फ्रेम का काम ले सकते हैं। मचान बनाने के लिए समानान्तर बांस बांध देना चाहिये और छतों पर चटाइयां डाल देनी

कीड़े की आयु	दिन में कितनी बार भोजन दिया जाय	भोजन की मात्रा	विष्ठा की सफाई	पर्याप्त स्थान
पहली उमर (५ दिन)	७–८ बार	४ पौण्ड पत्तियां	२ बार	१ वर्ग गज
दूसरी उमर (४ दिन)	६–७ बार	१३ पौण्ड पत्तियां	२–३ बार	४ वर्ग गज
तीसरी उमर (६ दिन)	५–६ बार	४५ पौण्ड पत्तियां	३ बार	११ वर्ग गज
चौथी उमर (७ दिन)	५–६ बार	१२० पौण्ड पत्तियां	४ बार	३० वर्ग गज
पांचवीं उमर (१० दिन)	४ बार	७०० पौण्ड पत्तियां	१–२ बार	७५ वर्ग गज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये। एक मचान पर ८-१० ट्रे रखी जा सकती हैं।

ट्रे : ट्रे लकड़ी या गेहूं के पौधों को पतली सुतली से जोड़कर चटाई के छोटे-छोटे टुकड़ोंकी तरह बनानी चाहिये। इनका आकार चौड़ाई में दो फुट और चार फुट से अधिक नहीं होना चाहिये।

जालियां : मल तथा बची हुई पत्तियों को हटाने के लिए विभिन्न प्रकार की जालियों का प्रयोग वांछनीय है। ½-१ इंच छेद वाली जालियों का प्रयोग क्रमशः प्रारम्भिक तथा बाद की अवस्थाओं में किया जाता है।

चाकू तथा लकड़ी का तख्ता : पत्तियों को काटने के लिए।

टोकरी : पत्तियों को रखने के लिए।

कपड़े का बोरा : पत्तियों को खिलाने से पहले रखने के लिए।

आर्द्रता तथा तापमापक : कमरे की आर्द्रता तथा तापक्रम मापने के लिए।

हीटर : शीत ऋतु में तापक्रम बढ़ाने के लिए।

बुनने की ट्रे—चन्द्रकारी : परिपक्व इल्ली को ऐसे स्थान की खोज होती है, जहां बैठकर वह निश्चिन्त होकर कोया बुन सके। इस अवस्था में कीड़े भोजन करना बन्द कर देते हैं और सिर हिलाना प्रारम्भ कर देते हैं। इसके लिए बांस की १½–२इंच लम्बी डालियां खड़ी कर देनी चाहिये जिससे कीड़े उन पर चढ़कर चैन से कोया बुन सकें। डालियों को ट्रे में लगाते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि डालियां ट्रे के किनारे पर ही लगायी जायें और ट्रे के बीच का भाग खाली रहे।

डायरी : आंकड़े लिखने के लिए।

जीवन इतिहास

इस कीड़े का जीवन-चक्र तीन प्रकार का होता है कुछ जातियों की वर्ष भर में केवल एक पीढ़ी (यूनीवोल्टाइन) होती है

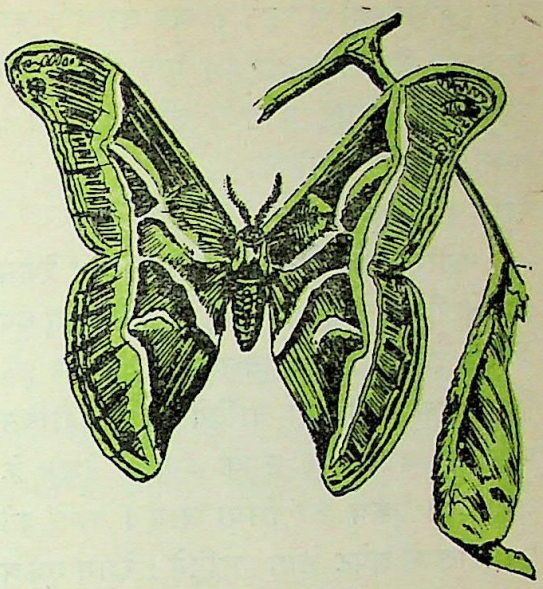

रेशम का कीड़ा और कोकून

कुछ की वर्ष में दो (बाइवोल्टाइन) तथा कुछ प्रकार की वर्ष में कई पीढ़ियां होती हैं। अन्त की दो प्रकार की जातियां संसार के गरम प्रदेशों में ही पायी जाती हैं और अपने देश में एक जाति को छोड़कर शेष सब मल्टीवोल्टाइन ही हैं।

प्रौढ़ 'पाण्डुर आश्वेत' रंग का, मध्यम आकार का, भारी शरीर वाला दुर्बल पंखधारी शलभ होता है और पंख फैलाने पर २ इंच का होता है। प्रौढ़ नर के पंखों पर भूरे रंग की धारियां होती हैं। एक मादा प्रायः ३००-४०० सफेद, दाने के आकार के अण्डे घेरा बनाकर देती है। अण्डों से प्रायः एक से डेढ़ सप्ताह में इल्ली निकल आती है। यूनीवोल्टाइन जातियों में यह अवस्था १० महीने तक रहती है। इल्ली अवस्था ३-५ सप्ताह तक रहती है। पूर्ण वयस्क इल्ली दीर्घकृत, बेलन के आकार की 'पाण्डुर पीत' रंग की ३इंच लम्बी होती है और यह अपने शरीर के चारों ओर रेशमी कोया बनाना प्रारम्भ कर देती है। एक मिनट में प्रायः ६ इंच रेशमी धागा बुनती है। १½–२ दिन धागा बुनने के बाद इस कोये के अन्दर कोशित (प्यूपा) बन जाता है। १–१½ सप्ताह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक इस अवस्था में रहने के बाद शलभ के रूप में बाहर निकल आता है। एक पीढ़ी ग्रीष्म ऋतु में ५ सप्ताह में तथा शीत ऋतु में ८ सप्ताह में पूरी होती है।

रेशम को एकत्र करना

कोशित अवस्था के दो दिन बाद रेशम पाने के लिए कोयों को कुछ घण्टे के लिए धूप में रख देना चाहिये। उबलते हुए पानी में १० मिनट तक रहने देना चाहिये जिससे जीवित प्यूपा मर जायें और उसके बाद के रेशम के धागों को एकत्र कर लिया जाय। धागों को एक रील में लपेट लेना चाहिये। रेशम एकत्र करना एक कला है जो अनुभव के बाद आसानी से सीखी जा सकती है। एक कोये से लगभग २७५ मीटर रेशम का धागा मिलता है। एक पौण्ड रेशम प्राप्त करने के लिए लगभग २५,००० कोये और १ टन शहतूत की पत्तियों की आवश्यकता होती है।

इस कच्चे रेशम को विभिन्न रसायनों द्वारा साफ किया जाता है और आवश्यकतानुसार विभिन्न रंगों से रंगा जाता है। इन धागों से रंग-बिरंगे रेशम के वस्त्र तैयार किये जाते हैं।

बीमारियां

विभिन्न प्रकार की बीमारियां रेशम के कीड़ों को हानि पहुंचाती हैं। कुछ बीमारियों के सफल उपचार अभी तक उपलब्ध नहीं हैं। अतः यह आवश्यक है कि कीड़ों का पालन बहुत सावधानीपूर्वक तथा सफाई से किया जाय। साधारणतया कीड़ों को निम्नलिखित प्रमुख बीमारियां हानि पहुंचाती हैं—

पेबरीन रोग : यह सबसे गम्भीर बीमारी है और एक प्रोटोजोआन परजीवी द्वारा फैलायी जाती है। इसका प्रकोप बहुत शीघ्र होता है। रोगग्रस्त कीड़ों के सम्पूर्ण शरीर पर छोटी-छोटी रंगीन चित्तियां पड़ जाती हैं तथा सिर एवं टांगें काली पड़ जाती हैं।

उपचार : यह छूत वाला रोग है, अतः आवश्यक है कि जैसे ही रोग के लक्षण दिखायी दें, रोगी कीड़ों को दूर ले जाकर भूमि के अन्दर गाड़ देना चाहिये।

मस्कर डीन : यह रोग फफूंदी द्वारा फैलता है। यह फफूंद इल्ली के पूरे शरीर पर फैल जाती है, कीड़ा लंगड़ाकर चलने लगता है और पीले रंग का हो जाता है। रुग्ण इल्ली पूरा कोया बुनने से पहले ही मर जाती है। कोये के ऊपर का धागा बहुत सख्त हो जाता है। रोगी कीड़े के कोये को हाथ में लेकर हिलाने से आवाज सुनायी पड़ती है।

उपचार : बीमार कीड़ों को अलग हटाकर नष्ट कर देना चाहिये तथा पालन कक्ष में गन्धक का धुआं करना चाहिये।

फ्लेचरी रोग : इस बीमारी का कारण अभी तक निश्चित रूप से मालूम नहीं हो सका है लेकिन विश्वास किया जाता है कि गीली अथवा उबली हुई पत्तियों द्वारा या कीड़ों

रेशम के कीड़े के विकास की चार अवस्थाएं—(दायें से) लारवा, प्यूपा, वयस्क कीट और अण्डे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर धूल जमने से यह बीमारी फैलती है। प्रायः इस बीमारी का प्रकोप पूर्ण वयस्क इल्लियों पर कोया बुनने की प्रारम्भिक अवस्थाओं में होता है, कीड़ा सुस्त हो जाता है और धीरे-धीरे चलता है। मरणोपरान्त कीड़े का शरीर काला हो जाता है और बहुत दुर्गन्ध देता है।

उपचार: कीड़ों को खाने के लिए स्वच्छ पत्तियां देनी चाहिये और धूल तथा पानी साफ कर देना चाहिये। कमरा साफ करते समय कीड़ों वाली ट्रे को ढंक देना चाहिये तथा स्वच्छ अण्डों को प्रयोग में लाना चाहिये। ●

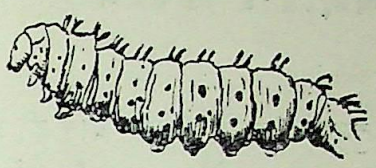

रेशम के कीड़े का लारवा

ग्राहकों से निवेदन

विज्ञान-लोक की एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे है। एक वर्ष का शुल्क ९ रुपये, दो वर्ष का १६ रुपये तथा तीन वर्ष का २० रुपये (विशेष रियायत) है।

पत्र-व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें। विज्ञान-लोक जिस लिफाफे में आपके पास आता है, उसी पर आपकी ग्राहक संख्या आपके पते के ऊपर लिखी रहती है।

पता बदलने की सूचना हमें एक मास पूर्व प्राप्त होनी चाहिये। इसके लिए नया और पुराना, दोनों पते भेजें। यदि छह मास से कम के लिए पता बदलवाना हो, तो कृपया अपने डाकखाने से इसकी व्यवस्था कर लें।

नये ग्राहकों को मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा किस अंक से विज्ञान-लोक भेजा जाय, यह अवश्य लिखना चाहिये।

पुराने ग्राहक अपनी सदस्यता का नवीयन (renewal) कराते समय मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा ग्राहक संख्या लिखने की कृपा करें।

विक्रय-व्यवस्थापक * विज्ञान-लोक * हास्पिटल रोड, आगरा—३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

तुम्हारे पत्र मिले। इस बात की प्रसन्नता है कि विज्ञान-लोक उन विद्यार्थियों की रुचि को विज्ञान की ओर मोड़ रहा है जो विज्ञान के छात्र नहीं हैं। गिरीश-मोहन (कानपुर) ने लिखा है: 'प्रारम्भ से ही मैं कला की ओर आकर्षित रहा। मैं उसे ही प्रमुख मानता रहा हूं। लेकिन जब से विज्ञान-लोक पढ़ने लगा, मैं यह सोचने पर विवश हुआ कि आज के युग में विज्ञान से अनभिज्ञ रहना ज्ञान के क्षेत्र में पिछड़े रहना है।

'विज्ञान-लोक में हर माह उच्चकोटि के वैज्ञानिक लेख होते हैं और उनमें नयी से नयी जानकारी होती है। प्रमुख बात तो यह है कि प्रायः सभी लेख अधिकारपूर्ण होते हैं, और उनका प्रस्तुतीकरण सहज और सामान्य पाठक के लिए ग्राह्य होता है। इसकी जितनी प्रशंसा की जाय कम है।'

···हमारा सदा से यह प्रयत्न रहा है कि विज्ञान-जैसे गहन विषय को उसके प्रायोगिक महत्त्व के साथ सामान्य पाठक के समक्ष उपस्थित करें और विद्यार्थियों के जीवन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करें।

प्रेमपाल अरोड़ा (बम्बई) ने एक सुझाव रखा है: **'करो और देखो** की सामग्री थोड़ी बदली जाय···बजाय प्रायोगिक विज्ञान के कुछ सामान्य रुचि के विषय भी दें।'

···वास्तव में **करो और देखो** में प्रायोगिक विज्ञान के अतिरिक्त मनोरंजक खेल आदि के बारे में समय-समय पर प्रकाशित करते ही रहते हैं और भविष्य में भी यही प्रयत्न रहेगा।

शोभा चक्रवर्ती (बम्बई) ने चाहा है: 'विज्ञान-लोक में आप नियमित रूप से अन्तरिक्ष-विज्ञान पर लेख छापें। अन्तरिक्ष उड़ानों में मेरी बड़ी दिलचस्पी है।'

हमारा यह प्रयास रहा है कि हर अंक में अन्तरिक्ष-विज्ञान पर एक लेख अवश्य हो। जैमिनी-७ और जैमिनी-६ की ऐतिहासिक उड़ान का रोचक विवरण इसी अंक में प्रस्तुत है।

···विज्ञान-लोक के अप्रैल अंक के सम्बन्ध में विश्वनाथ पाठक (अलीगढ़): अप्रैल अंक के सभी लेख सूचनाप्रधान तथा रोचक थे। **आयुर्वेद** (ओमप्रकाश गुप्ता) अत्यधिक पसन्द आया। भविष्य में यदि सम्भव हो, तो यूनानी चिकित्सा विधि पर भी लेख दें।

···और इस बार तुममें से कोई तृतीय पुरस्कार न पा सका, क्योंकि प्रथम और द्वितीय पुरस्कार के अतिरिक्त प्रायः सभी प्रतियोगियों के छह से अधिक प्रश्नों के उत्तर गलत थे। आशा करती हूं, भविष्य में तुम अधिक परिश्रम करोगे।

सस्नेह तुम्हारी
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ७४ के विजेता

प्रथम पुरस्कार

भारतभूषण, (११७०८) हल्द्वानी।

द्वितीय पुरस्कार

रमेशचन्द्र मिकाजी कानडे (८४०) नासिक, पंकजकुमार (४७७०) मुजफ्फरपुर, अम्बरीशकुमार (१०५००) नयी दिल्ली।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ७४

नाम.....

सदस्य संख्या.....**छात्र**.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

उपेन्द्रनाथ
(स. सं. ५१२)

खानचन्द्र
(स. सं. १७०२९)

मसूर अहमद
(स. सं. १७०४४)

आत्मानन्द
(स. सं. १७०५१)

१२१८८अशोक(१८) बम्बई, ८९ आनन्दप्रिया (१७) वाराणसी, ९० महेन्द्रप्रकाश (१९) जौनपुर, ९१ शिवकुमार (२१) मुजफ्फरनगर, ९२ शिवप्रसाद (१८) जौनपुर, ९३ आनन्दप्रकाश (१३) आगरा, ९४ के. महावीर (२२) सिकन्दराबाद, ९५ कान्ता (१५) प्रतापगढ़, ९६ गीता (१६) गया, ९७ सोहनराज (१९) बम्बई, ९८ महेशचन्द्र (१७) सिरसा, ९९ जोगिन्दरसिंह (२०) बम्बई, १२,२०० अशोक (१३) अम्बाला, १ कामताप्रसाद (१७) रानीपुर, २ अशोककुमार (१७) जहानाबाद, ३ ज्ञानप्रकाश (१७) मुजफ्फरनगर, ४ श्रीप्रकाश (१७) घोसाबाद, ५ हरिरामचन्द्र (१७) वाराणसी, ६ मूलसिंह (१५) झाड़ोल, ७ बालस्वरूप (१५) देहरादून, ८ नरेन्द्रदेव (१७) नजीबाबाद, ९ अम्बरीश (१८) मुजफ्फरनगर, १० कृष्णगोपाल (२०) रुड़की, ११ सुखवीरसिंह (१६) तिगांव, १२ सुशीलकुमार (१९) मोदीनगर, १३ विष्णुदयाल (२०) सफ्ती, १४ मुहम्मद हफीज अटयूबी (२८) इटारी, १५ काशीराम (२५) महाराजनगर, १६ सिद्धनाथ (२१) सकलडीहो, १७ चन्द्रकुमार (१८) इन्दौर, १८ कु. रुखसाना (१३) जगदलपुर, १९ निर्मलचन्द्र (१९) बुढ़ार, २० विनोदकुमार (१४) कलकत्ता, २१ ओमप्रकाश (१८) गुना, २२ जगदीशप्रसाद (१७) कटनी, २३ योगेन्द्रप्रकाश (१८) बुलन्दशहर, २४ सतीशचन्द्र (१६) मसूरी, २५ कु. सुषमा (१३) शाहजहांपुर, २६ ब्रिजेन्द्रकुमार (१८) मथुरा, २७ राजीव (११) नैनीताल, २८ वीरेन्द्रसिंह (१८) जगदलपुर, २९ रमेशचन्द्र (१८) परीक्षितगढ़, ३० सतीशचन्द्र (१८) देवरिया, ३१ मनमोहनसरन, (१६) आगरा, ३२ जसबीरसिंह (१६) इन्दौर, ३३ गोपालसिंह (१७) इलाहाबाद, ३४ बालकृष्ण (१९) बम्बई, ३५ विनोदकुमार (१६) सिरोंज, ३६ कु. मंजुला (१५) इन्दौर, ३७ कु. विजयकुमारी (२०) मैनपुरी, ३८ अनिल (१३) लखनऊ, ३९ हेमचन्द्र (१८) इलाहाबाद, ४० सुन्दरदास (१९) फर्रुखाबाद, ४१ प्रेमचन्द्र (१८) रेशममाजरी, ४२ राजेन्द्रसिंह (२०) मकतुलपुरा, ४३ सोमनाथ (१५) बरौली, ४४ अवधेशकुमार (१७) पटियाली, ४५ संदीपपारिख (१३) पिलानी, ४६ अवतारसिंह (१९) इन्दौर, ४७ पूरनमल (२२) तिजारा, ४८ शान्तिलाल (१८) सिरोही, ४९ एम. पी. दीक्षित (१७) भिलाई, ५० सलीमुद्दीन (२०) बैतूल, ५१ चन्दूलाल (१८) दयालबाग, ५२ अशोककुमार (१५) इलाहाबाद, ५३ ब्रजेशकुमार (१५) माड़ौ, ५४ शम्भूनाथ (१८) वाराणसी, ५५ जवाहरलाल (१८) सिकन्दराबाद, ५६ सुरेशप्रसाद (१८) मखदूमपुर, ५७ अजयकुमार (१४) गया, ५८ राजकिशोर (१८) किशनगढ़, ५९ कमलेशचन्द्र (१५) पाटोल, ६० अरुण (१८) बरौनी, ६१ जंगीलाल (१८) जफराबाद, ६२ राजनारायण (१५) मुकुन्दगढ़, ६३ चन्द्रप्रकाश (१६) इन्दरगढ़, ६४ मनोजकुमार (१९) मन्दसौर, ६५ कृष्णकान्त (१८) एटा, ६६ दिवाकर (१६) वाराणसी, ६७ कमलकुमार (१९) नौगंज, ६८ राजकुमार (१७) भोपाल, ६९ दलीपकुमार (१५) भोपाल, ७० रविकुमार (१४) गांधीनगर, ७१ सीताराम (१६) महुआवां, ७२ रतनलाल (१९) जबलपुर, ७३ राजेन्द्रसिंह (१८) बरनाला, ७४ सन्तसेवक (१९) खखरेड़ू, ७५ विनोदकुमार (१६) हथुआ, ७६ जवाहरलाल (१७) इनायतपुर, ७७ कु. सरला (१९) फैजाबाद।

महेशकुमार अंबालाल
(स. सं. १८२११)

रमेशचन्द
(स. सं. १८२३७)

रमाशंकर
(स. सं. १८२६०)

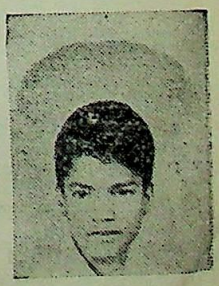

सुशीलकुमार
(स. सं. १८२७५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७६

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : ३० जून

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५३ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो—

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७६ के उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर ३० जून तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायेगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७६ के प्रश्न

१. उबले जल को पतले शीशे के जार में रखने पर जार के टूटने का भय रहता है, या मोटे शीशे के जार में रखने पर ?

२. स्मेलिंग साल्ट (smelling salt) की रासायनिक रचना क्या है ?

३. उस प्राकृतिक कोयले का क्या नाम है जो बिना धुआं किये जलता है ?

४. निम्नलिखित का रंग क्या होता है—(क) लेड आक्साइड, (ख) मरक्यूरिक आक्साइड और (ग) कैल्शियम आक्साइड।

५. वह कौन-सी धातु है जो साधारण ताप पर द्रव-अवस्था में रहती है ?

६. पिक्कार्ड (Piccard) ने किस यन्त्र का आविष्कार किया, जिसका समुद्र की गहराई नापने में उपयोग होता है ?

७. वे कौन-से कीट हैं जो अपनी ही जाति के कीटों से युद्ध करते हैं ?

८. हैलीज कामेट (Halley's comet) नामक पुच्छल तारा कितनी अवधि के बाद दिखाई पड़ता है ?

९. स्नैपड्रैगन का वैज्ञानिक नाम क्या है ?

१०. क्या लेडीबर्ड (ladybird) के शरीर पर धब्बे उसकी उम्र के साथ-साथ बढ़ते जाते हैं ?

प्रतयोगिता संख्या ७४ के उत्तर

(१) ज्यां बैप्तिस्त वां हेलमों (Jepan Batiste van Helmont)

(२) सरल कार्बोहाइड्रेट, ग्लूकोज।

(३) विद्युत्।

(४) एटलस-१ फ्लोरिडा से १८ दिसम्बर १९५८ को छोड़ा गया।

(५) ७,०५० टन।

(६) प्रो. जे. राबर्ट आप्पनहामर।

(७) चार घण्टे।

(८) अपने मुंह के आगे निकले लम्बे दांतों से।

(९) आस्ट्रेलिया के पूर्वी किनारों के परे।

(१०) गाट्लिब डाइमलर (Gottlieb Daimler)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचीन भारत में विज्ञान

विजयकुमार जैन, (स. सं. ७७८८)

विज्ञान शब्द का अर्थ क्या है ? साधारणतः हम कह सकते हैं कि विकसित ज्ञान विज्ञान है। विश्व का सर्वोत्तम उपयोग विज्ञान द्वारा ही सम्भव है। प्राचीन काल से ही भारत विश्व के अनेक देशों का नेतृत्व करता रहा है। विज्ञान के विकास में भारत की अनेक प्रतिभाओं का योग रहा। यदि हम ईसा पूर्व के अनुसन्धानों का अध्ययन करें, तो निश्चित रूप से यह कह सकते हैं कि तत्कालीन भारत ने विज्ञान के क्षेत्र में अत्यधिक प्रगति की थी।

भौतिक विज्ञान का विकास

भौतिक-विज्ञान के क्षेत्र में प्राचीन दार्शनिकों का अणुवाद-सम्बन्धी अनुसन्धान अद्वितीय था। इस अनुसन्धान में वैशेषिक दर्शन के उन्नायक कणाद का नाम उल्लेखनीय है। भौतिक पदार्थ को बतलाने के लिए उस काल में पुद्गल शब्द का प्रयोग किया गया। आधुनिक विज्ञान में भौतिक पदार्थ (matter) को मूलभूत कणों का समुदाय माना गया है। प्राचीन भारत में वैज्ञानिक इन कणों को स्कन्ध कहते थे। परमाणु के सम्बन्ध में एक प्राचीन ग्रन्थ में लिखा है कि सब स्कन्धों का जो अन्तिम खण्ड है, अर्थात् जिसका दूसरा खण्ड नहीं किया जा सकता, उसे परमाणु जानो। परमाणु अविभागी है, परमाणु नित्य है, अर्थात् परमाणु के खण्ड नहीं किये जा सकते। परमाणु को नष्ट नहीं किया जा सकता।

तत्वार्थ सूत्र के अध्याय ५ के सूत्र ३३ से लेकर सूत्र ३६ तक परमाणु-सम्बन्धी कुछ तथ्य उपलब्ध हैं। सूत्र ३३ में संघात-सम्बन्धी नियम का प्रतिपादन हुआ है—स्निग्ध एवं रुक्षत्व द्वारा ही पदार्थ के अणुओं का बन्ध होता है। एवं स्निग्ध रुक्षत्व द्वारा ही बादलों में बिजली पैदा होती है। रमण सिद्धान्त के अनुसार किसी भी पदार्थ के बन्ध के लिए दो अंश (degrees) का अन्तर होना आवश्यक है। दो से अधिक गुण वाले पदार्थ का ही बन्ध होता है। बन्ध अवस्था में अधिक गुणसहित पदार्थ अल्प गुण वाले पदार्थ को अपने रूप में आत्मसात् कर लेता है।

प्राचीन ग्रन्थों में माना गया है कि देवता तारों में निवास करते हैं, तारों की उत्कृष्ट आयु काफी लम्बी होती है। एक तारा अपनी आयु को ४ वय में पूर्ण करता है—(१) बालपन (२) प्रौढ़ता, (३) वृद्धावस्था तथा (४) मरण। यह वर्गीकरण वैज्ञानिकता से पूर्ण है। तारों का प्रारम्भ ठण्डी आकाशीय धूल के रूप में होता है। उसके पश्चात् उसकी गरमी बहुत बढ़ती है और वह चमकने लगता है। कालान्तर में उसकी चमक धीरे-धीरे कम होने लगती है, और एक समय आता है जब वह नष्ट हो जाता है।

भास्कराचार्य द्वितीय ने १२वीं शताब्दी में गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया। उनकी मान्यता थी कि पृथ्वी आकर्षण-शक्ति वाली है। इसी शक्ति से वह आकाश की वस्तुओं को खींचती है। सर्वत्र समान आकाश में वह कहां जाय। वह कभी नहीं गिर सकती है। पृथ्वी गोल है। यह भी उन्होंने बतलाया कि यदि गोल वस्तु की छोटी-सी परिधि को देखें, तो वह समतल दिखायी देती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईथर समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। इसका ज्ञान प्राचीन ऋषियों, दर्शनिकों एवं वैज्ञानिकों को था। प्राचीनकाल में इथर को धर्म द्रव्य मानते थे। धर्म द्रव्य का रूप क्या है? वह शब्द की चलने में किस प्रकार सहायता करता है? ईथर में न रंग है, न रूप है, न गंध, न स्पर्श है। वह समस्त लोक में व्याप्त है। इस लोक में जिस प्रकार जल मछली की चलने में सहायता करता है, उसी तरह ईथर जीव एवं पुद्गल की चलने में सहायता करता है।

प्राचीनकाल में रसायन-विज्ञान का उपयोग प्रमुखतः तीन क्षेत्रों में होता था—(१) आयुर्वेद, (२) धातुकर्म और (३) शिल्प-कर्म।

गुप्तकाल में धातु-विज्ञान

गुप्त काल में धातु-विज्ञान विशेष रूप से विकसित हुआ। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में धातु-शोधन, सुरा निर्माण, विष-प्रयोग की अनेक विधियों का वर्णन मिलता है। जिस प्रकार प्रथम विश्व युद्ध में शत्रु सैनिक को कष्ट पहुंचाने के लिए अश्रु गैस का उपयोग करते थे, उसी प्रकार कौटिल्य ने शत्रु सैनिकों को कष्ट पहुंचाने के लिए कुछ गैसों का निर्माण सुझाया। गुप्त काल में चांदी एवं तांबे पर सोने का पानी चढ़ाने का काम भी होता था। आधुनिक वैज्ञानिक भाषा में इसे प्लेटिंग कहते हैं।

धातु को शुद्ध करने के लिए अनेक प्रकार की मूषाओं का प्रयोग किया जाता था। उन मूषाओं का नाम मिश्रण द्वारा बने हुए वस्तु के नाम पर आधारित होता था, जैसे अस्थि तुस्थ, सीसा तुस्थ, शुष्क तुस्थ, कपाल तुस्थ आदि। ये मूषाएं क्रमशः हड्डी, सीसा, शक्कर, मिट्टी एवं गोबरयुक्त मिट्टी से बनती थीं।

प्राचीन काल के अनेक ग्रन्थों में बिमान-यात्रा का वर्णन मिलता है। रामचरित मानस में भी बिमानयात्रा का वर्णन मिलता है। महाभारत में भी कालीदास ने रघुवंशम् एवं अभिज्ञान् शाकुन्तलम् में बिमानयात्रा का वर्णन किया है।

प्राचीन भारत में टैंकों का निर्माण

आज जिस प्रकार सेना का सबसे शक्तिशाली एवं दूर तक मार करने वाला यन्त्र टैंक है, उसी प्रकार के टैंक का आज से २५०० वर्ष पहले आचार्य कश्यप ने निर्माण किया था। उस यन्त्र का नाम रथ मुशल यन्त्र था। यह यन्त्र स्वचालित था। शत्रु-पक्ष में घुसकर यह भयंकर मारकाट मचाता था। इस यन्त्र के अतिरिक्त उन्होंने एक अन्य यन्त्र का निर्माण किया था। इसका नाम महाशिला कंटक था।

ऋग्वेद में सौ-सौ डांडोंयुक्त नाव का वर्णन है। ईसा से कई शती पूर्व सिन्ध नदी के मुहानों पर पोतों का निर्माण होता था। भारतीय पोत अन्य यूरोपीय देशों में बने पोत से बड़े एवं मजबूत हुआ करते थे। भारत अन्य देशों को माल निर्यात करता था। मालवाहक पोत में आठ सौ यात्री यात्रा कर सकते थे एवं उसमें माल सुरक्षित रखने के लिए १६० कमरे होते थे।

समीकरण

सर्वप्रथम आर्यभट्ट के गणित-पाद में द्विघात समीकरण (quadratic equation) का उल्लेख मिलता है। ब्रह्मगुप्त द्वारा रचित ब्रह्म-सिद्धान्त के कुट्टाकाध्याय में एक वर्ण समीकरण, वर्ग समीकरण तथा अनेक वर्ण समीकरण की विधियां दी गयी हैं। भास्कराचार्य द्वारा लिखित लीलवाती में जो जटिल अंश दिये गये हैं वे १७ वीं शताब्दी में हल किये गये। भास्कराचार्य ने चलन-कलन (differential calculas) का एक विशेष बिधि के रूप में अविष्कार किया। भारतीय गणितज्ञ परमेय (rational) एवं परमेय (irrational) संख्याओं एवं राशियों के मान निर्धारण की विधि से पहले से ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरी तरह परिचित थे।

रेखागणित का उपयोग धार्मिक अनुष्ठान के लिए वेदी बनाने में होता है।

भारतीय गणितज्ञों में ब्रह्मगुप्त, आर्यभट्ट भास्कराचार्य, श्रीधर, शतानन्द, महावीराचार्य, नेमीचन्द्राचार्य, श्रीपत प्रमुख थे। इनके ग्रन्थ—ब्रह्मगुप्त का ब्रह्म सिद्धान्त, आर्यभट्ट का गणित पाद, भास्कराचार्य का लीलावती, श्रीधर की त्रिशतिका, शतानन्द का भास्वती करण एवं उनकी प्रसिद्ध पद्धति का नाम शतांश पद्धति, महावीराचार्य का गणित सार एवं नेमीचन्द्राचार्य का त्रिलोक सार प्रमुख है।

रसायन-विज्ञान का विकास

गुप्त काल रसायन-विज्ञान एवं खनिज पदार्थ के अनुसन्धान और विकास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहा है। कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में खनिज पदार्थ मिलने के स्थान, उस स्थान पर पाये जाने वाले पदार्थों के विशेष गुण, वहां की मिट्टी का विश्लेषण आदि के बारे में लिखा है। चांदी को किस प्रकार शुद्ध करते थे, इसका वर्णन भी अर्थशास्त्र में कौटिल्य ने किया है।

लोहे के खनिज से किस प्रकार शुद्ध धातु प्राप्त करते थे, इस बात का प्रमाण गुप्तयुगीन दिल्ली स्थित लौहस्तम्भ है। आज तक उस लौह स्तम्भ में कोई विकार पैदा नहीं हुआ है। १५ वीं शताब्दी से पूर्व यूरोप के लोग भी लोहे से परिचित नहीं थे।

निश्चय ही प्राचीन भारत में विज्ञान उन्नति के शिखर पर था।

नगर को नियन्त्रण में रखने वाला कम्प्यूटर

प्राय: बड़े-बड़े नगरों से सड़कों पर यातायात को नियन्त्रित करने के लिए जो उपकरण खड़े करने पड़ते हैं उनसे सड़कों की सुन्दरता नष्ट हो जाती है। इसके अतिरिक्त नगर के केन्द्रीय भागों में बड़े पैमाने पर सफाई का काम भी करना पड़ता है जो वित्तीय दृष्टि से उचित नहीं जान पड़ता।

बड़े नगरों में यातायात को अच्छे ढंग से नियन्त्रित करने के लिए बराबर खोज की जाती है। विश्व के कई नगरों में यातायात प्रकाश को केन्द्रीय स्टेशनों से सम्बद्ध कर दिया गया है। कुछ शहरों में टेलीविजन की व्यवस्था भी है।

किन्तु यातायात प्रणाली में बी. एस. आर-१६००० नामक कम्प्यूटर से इस दिशा में नयी प्रगति हुई है। इसकी मदद से यातायात स्वयं नियन्त्रित हो जाता है।

इस कम्प्यूटर को नगर के जिन भागों से सम्बद्ध किया जाता है, वहां से निरन्तर सूचना मिलती रहती है।

यातायात की गति तथा संख्या की जानकारी भी इससे लगातार प्राप्त होती रहती है। यह कम्प्यूटर जिन यातायात प्रकाशों को नियन्त्रित करता है, उनमें से प्रत्येक के लिए इसके द्वारा १६ बुनियादी कार्यक्रमों में से किसी एक कार्यक्रम का संचालन किया जाता है। आवश्यक सूचना प्राप्त होने पर यह कम्प्यूटर स्वयं इस बात का निर्णय करता है कि किस कार्यक्रम के अनुसार उसे कार्य करना है। उसी अनुसार वह लाल या हरी बत्तियों के संकेत देता है। इन संकेतों के बढ़ाने व घटाने का काम भी यह स्वयं ही करता है।

यदि यातायात में कहीं रुकावट आ जाती है तो यह मोटर ड्राइवरों को सूचना भेज देता है कि आगे का रास्ता बन्द है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

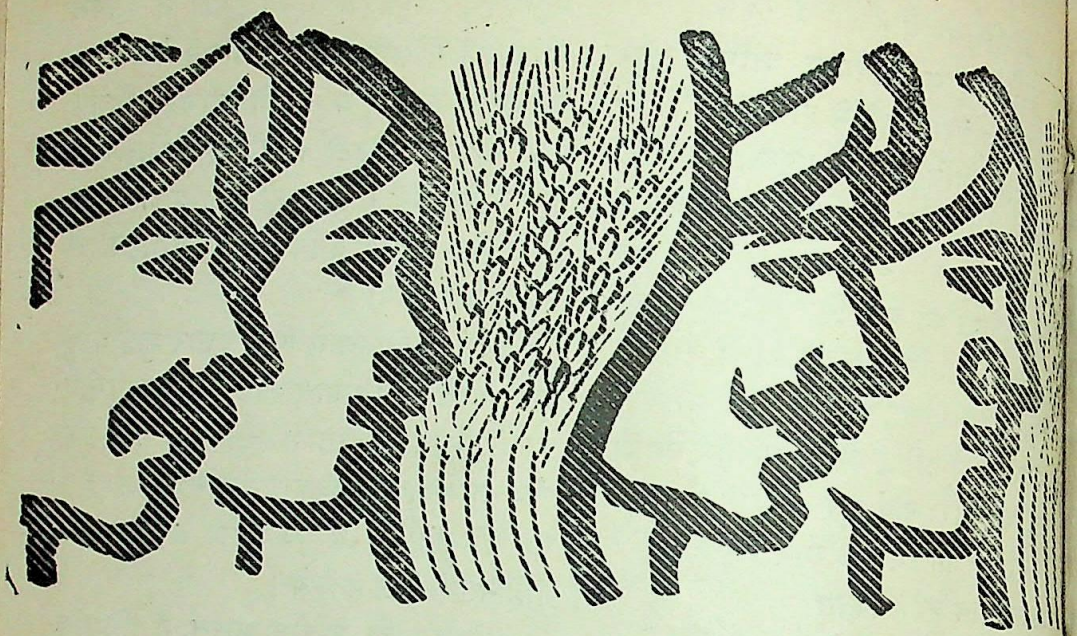

हिन्दुस्तान को अपने किसानों पर गर्व है। वे खून-पसीना एक करके फसलें पैदा करते हैं, जिससे सरहद पर तैनात सैनिकों को खाना मिलता है; कारखानों में काम करने वालों को खाना मिलता है; देश की जनता को खाना मिलता है। वे दिन रात अधिक से अधिक पैदा करने में जुटे हैं ताकि देश में ही सबके लिए अनाज पैदा हो सके। हमारे किसान समझते हैं कि जितना कम अनाज हमें विदेशों से मंगाना पड़ेगा, उतना ही अधिक धन हम देश के विकास और रक्षा पर खर्च कर सकेंगे। इस अथक मेहनत के बदले वे केवल आपका अथक परिश्रम चाहते हैं।

एक महान देश हमारा
एक महान राष्ट्र

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक प्रकाशन

(हाई स्कूल एवं हायर सेकेण्डरी स्कूल के विद्यार्थियों के लिए)

प्रारम्भिक भौतिकी

(मूल्य : ३·५०)

लेखक

दयाप्रसाद खण्डेलवाल

एम. एस-सी., पी-एच. डी.

देवीसिंह विष्ठ राजकीय महाविद्यालय, नैनीताल

जन्तु-विज्ञान

(मूल्य : ३·००)

वनस्पति-विज्ञान

(मूल्य : ३·००)

लेखक

आर. डी. विद्यार्थी

बी. एस-सी. (आनर्स), एम. एस-सी., एल.टी., एफ.एन.ए.

ला मार्टीनियर कालेज, लखनऊ

सामान्य-विज्ञान

(मूल्य : ६·२५)

लेखक

रामचरण मेहरोत्रा, एम. एस-सी., पी-एच. डी.

दयाप्रसाद खण्डेलवाल, एम. एस-सी., पी-एच. डी.

आर. डी. विद्यार्थी, एम. एस-सी.

प्रैक्टिकल जन्तु-विज्ञान

(मूल्य : २·००)

प्रैक्टिकल वनस्पति-विज्ञान

(मूल्य : २·००)

लेखक

आर. डी. विद्यार्थी

प्रकाशक

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Price : 75 paise May 1966 Regd. No. L. 1338
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीहारिका

कहानी मासिक

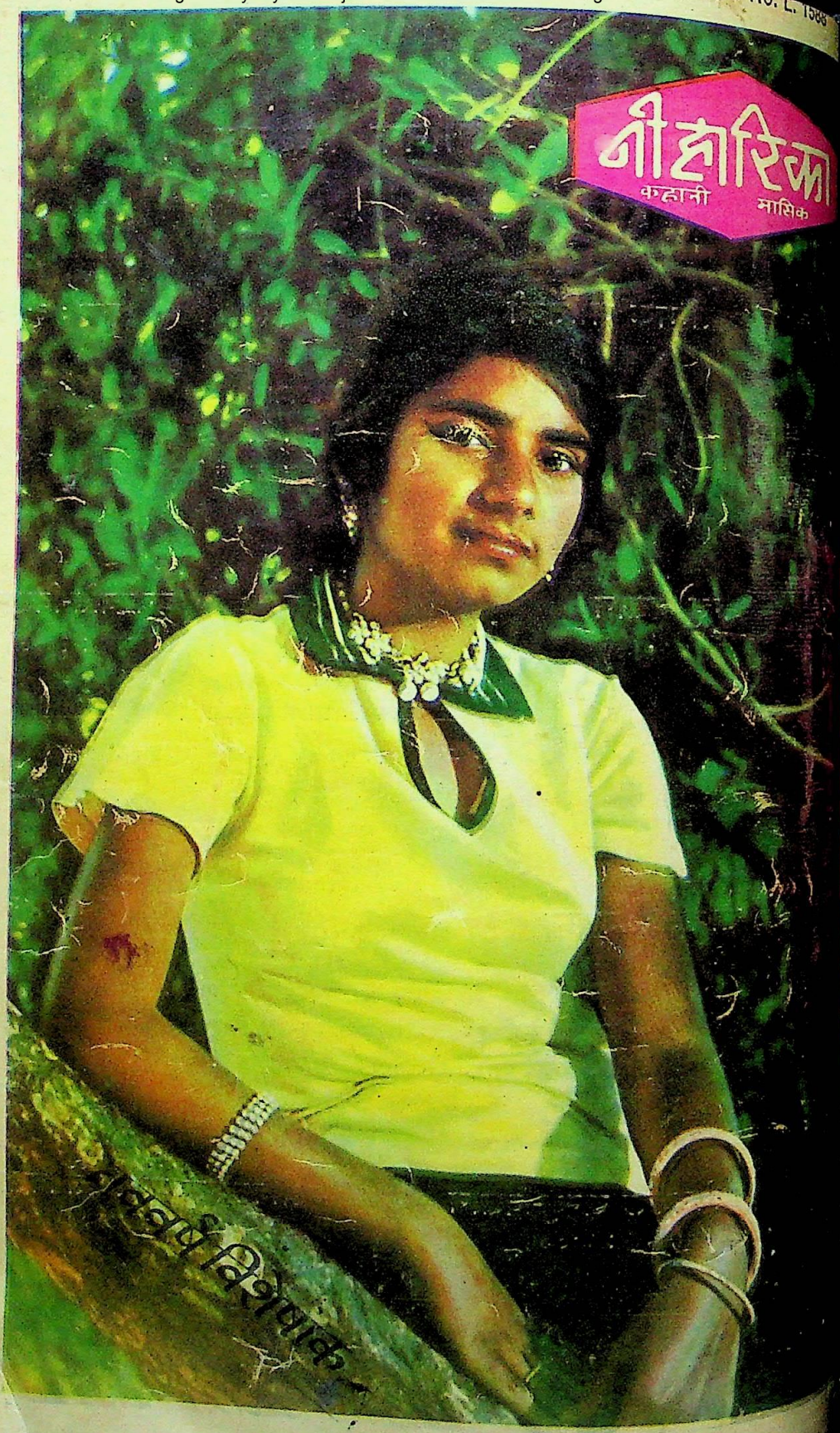

मई अंक

अब सब जगह उपलब्ध है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Foundation Chennai and eGangotri

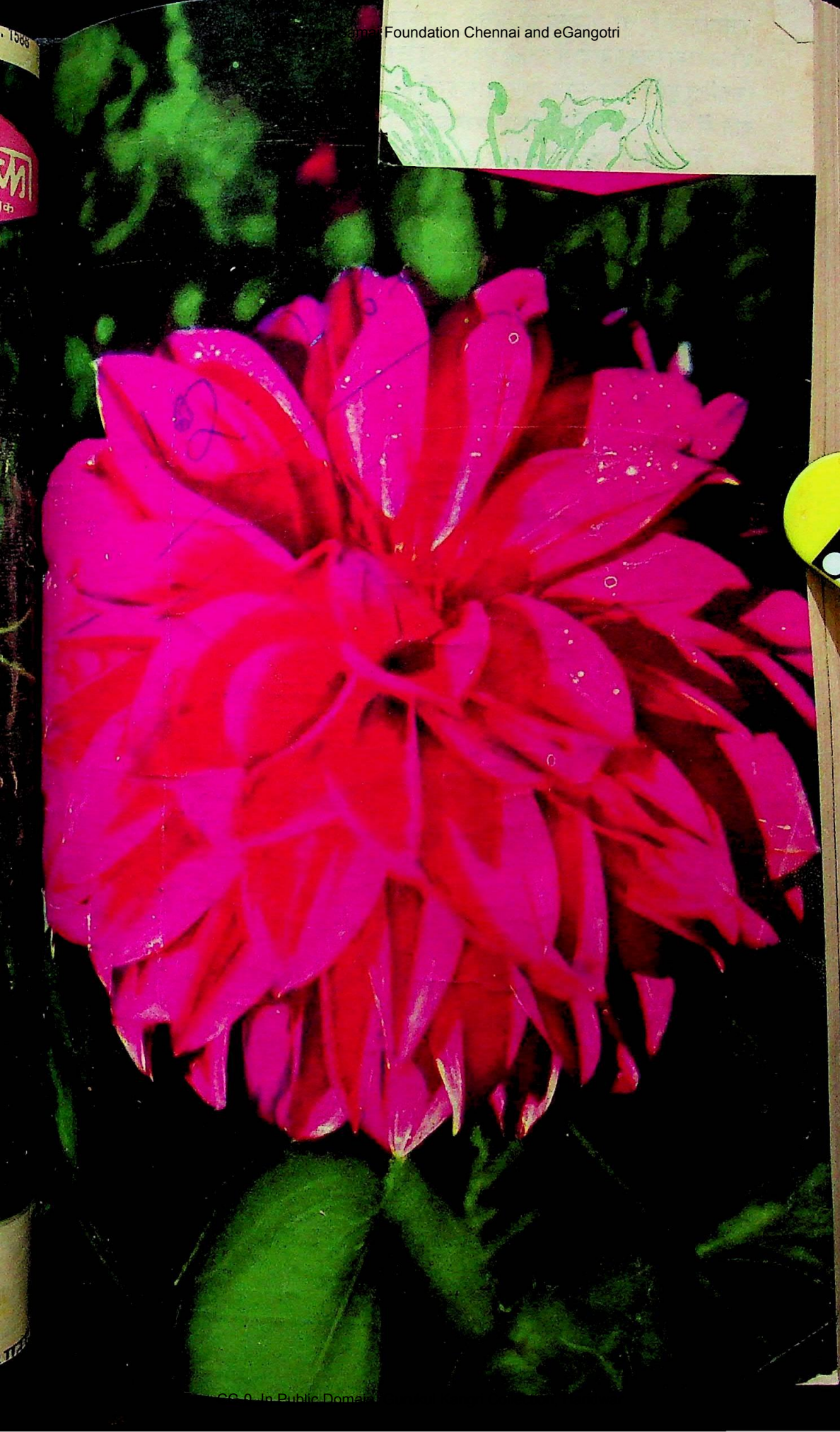

CC-0. In Public Domain.

Price : 75 paise
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

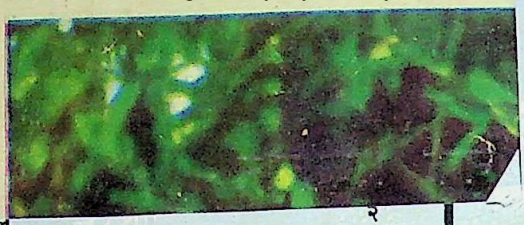

फूल २
—कीर्तिमोहन

भविष्य के लिए भोजन ८
—राजेन्द्रप्रसाद वार्ष्णेय

परमाणु-शक्ति और धातु-विज्ञान १३
—सत्यपालसिंह राजपूत

नींदघर १७
—सुप्रकाश दत्त

जीव-रसायन २२
—नरेन्द्रसिंह माथुर

ब्रह्माण्ड २७
—राजेन्द्रकुमार

लैजेरो स्पैलेंजेनो ३५
—डा. हर्ष प्रियदर्शी

पपीता ४६
—आर. एन. सिंह

स्थायी स्तम्भ

विचित्र संसार २५
वैज्ञानिक उपलब्धियां ४४
विज्ञान क्लब ५१
इनाम लो ५४
तुम्हारी कलम से ५५

अपनी बात

यह निर्विवाद स्वीकार्य जान पड़ता है कि विशुद्ध विज्ञान ही मानव को ऐश्वर्य का स्वामी नहीं बना सकता। विज्ञान के विकास के साथ-साथ पिछली अर्धशताब्दी में विनाश की सम्भावना प्रबल हुई है, और वैज्ञानिक यह सोचने पर विवश हुए हैं कि जिस अन्तिम सत्य तक वे पहुंचना चाहते हैं, क्या वह विनाश ही है? परमाणु में निहित असीम शक्ति के परिचय और अन्तर्ग्रही यात्राओं की सम्भावना द्वारा दिक्-काल के सन्दर्भ में मानव के अस्तित्व का स्पष्टीकरण हुआ है। यद्यपि विज्ञान ने भौगोलिक रूप से विश्व को एक कर दिया है किन्तु राष्ट्रीय और धार्मिक विषमता के कारण फिर भी वह अनेक हिस्सों में बंटा हुआ है। मानव इन हिस्सों से जुड़ा हुआ है और इनके मोह के कारण अपने को युद्धों में उलझा लेता है।

विज्ञान-लोक वैज्ञानिक प्रगति के सन्दर्भ में विश्व चेतना के महत्त्व को प्रस्तुत करने के लिए सदा से प्रयत्नशील रहा है। जब तक विचारों की स्वतन्त्रता नहीं है, यह सम्भव नहीं हो सकता है कि मानव संकुचितता से उबरे और सार्वत्रिक एकात्मता के भाव को गति दे।

वैज्ञानिकों की क्षमता विनाश को परिहार समझने में सहायता करने की ओर लक्षित होनी चाहिये। विशुद्ध विज्ञान के विकास के साथ-साथ उपयोगी विज्ञान का समुचित विकास आवश्यक है। युद्ध की खेदजनक आशंका से मानव जब तक मुक्त नहीं हो जाता, अपनी नियति के सम्बन्ध में आश्वस्त नहीं हो सकता।

CC-0. In Public Domai ri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फूल

पौधे में पुनरुत्पादन की रहस्यपूर्ण स्थिति

कीर्तिमोहन

पौधे का वह भाग जो फल आने से पूर्व खिल उठता है, साधारणतः फूल कहलाता है। फूल पौधे का कोमलतम भाग होता है। यह सर्वविदित तथ्य है कि उच्च कुल के पौधों में ही फूल आते हैं। फूल से जुड़ी पत्तियों-सी रचना बीज के विकास में सहायक होती है। आधुनिक वनस्पति-विज्ञान के अन्तर्गत यह वर्ग स्परमेटोफाइटा (*Spermatophyta*) नाम से जाना जाता है।

परागण के पश्चात् बीज का विकास बीजाण्ड (ovule) से होता है। बीज के विकास के लिए पुंकेसर (stamens) एक आवश्यक रचना है। पुंकेसर पर ही परागकण (pollen grains) होते हैं। अण्डप (carpels) पर बीजाण्ड विकसित होते हैं।

फूलों की तलाश में वनस्पति-शास्त्री

फूल प्रकृति की आश्चर्यजनक रचना हैं। रंग की दृष्टि से फूलों की खोज करें, तो पायेंगे कि हमें जितने रंग मालूम हैं, उन सब रंगों के फूल इस सृष्टि में हैं; और यह सम्भव है कि फूलों की खोज में कुछ नये रंगों का भी पता चले। फूल आकार में भी तरह-तरह के होते हैं। कुछ फूल इतने सुडौल होते हैं कि यह निर्णय कर पाना कठिन होता है, यह फूल आकार की दृष्टि लुभावना है या रंग की दृष्टि से। कुछ फूल दीर्घाकार, छितराये-से भांति-भांति के जन्तुओं के सदृश होते हैं। अनेक ऐसे फूल भी मिलेंगे जिनकी महक मन को अनायास मोह लेती है। इसके विपरीत कुछ सड़े हुए मांस की तरह महकते हैं। फूलों का संसार विचित्र है। अनेक फूल इतने छोटे होते हैं कि एक साधारण व्यक्ति जान भी नहीं सकता कि इस पौधे पर फूल खिले हैं, किन्तु ऐसे फूलों की तलाश वनस्पति-शास्त्री के लिए कोई कठिन बात नहीं है। शाह बलूत का फूल एक ऐसा ही उदाहरण है।

लेकिन इतनी विषमता का क्या कारण है? प्राचीन काल में लोगों का विश्वास था कि विश्व में फूलों की उत्पत्ति इसी लिए हुई कि मानव उनकी सुन्दरता को आंख भरकर देख सके। लेकिन जीव-विज्ञानवेत्ता इस धारणा का खण्डन करते हैं। उनका मत है कि लाखों-करोड़ों वर्ष पूर्व से इस पृथ्वी पर फूल हैं—तब से जब मानव अस्तित्व में नहीं आया था। यह एक सर्वमान्य वैज्ञानिक स्थापना है कि यदि कोई जन्तु या वनस्पति अपने आकार में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असाधारण है, तो निश्चय ही उसके आकार की असाधारणता बाद में उसके प्रयत्नों द्वारा विकसित हुई है और उसके लिए लाभकारी है।

रात में उड़ने वाले कीटों द्वारा परागण

पौधों की भी उत्पत्ति मानव की उत्पत्ति ही की भांति होती है। यह कह सकते हैं कि पौधे में फूल पुनरुत्पादन अंग है। फूल वाले पौधों में निषेचन (fertilization) परागकण द्वारा होता है। यदि परागण (pollination) दो भिन्न-भिन्न फूलों के परागकणों से होता है, तो यह क्रिया अधिक उपयुक्त होती है। कुछ फूलों में परागण पवन द्वारा होता है जिसमें परागकण वायु में उड़कर फूलों तक पहुंचते हैं। ऐसे फूल प्रायः बहुत ही छोटे होते हैं।

सेलेनिपेण्डियम (*selenipendium*) **दक्षिण अमरीका का एक प्रमुख आकिड है। इसकी रिबन की तरह की पंखुड़ियां करीब दो फुट लम्बी होती हैं**

परागण बहुधा कीटों द्वारा होता है। फूलों का मकरन्द मधुमक्खियों तथा तितलियों को अपनी ओर आकर्षित करता है। ये कीट फूलों के मकरन्द पर ही अपना निर्वाह करते हैं। रंग, आकर्षक रूप तथा तीव्र गंध के कारण कीटों को फूलों को ढूंढ़ने में कठिनाई नहीं होती। कुछ फूलों में परागण कुछ विशेष कीटों द्वारा ही सम्पन्न होता है। ऐसे फूल रंग, आकार तथा गन्ध में औरों से अलग होते हैं जिसके कारण विशेष कीट इनकी ओर आकर्षित होते हैं।

कुछ फूलों में परागण रात में उड़ने वाले कीटों द्वारा होता है। ये फूल बहुधा सफेद तथा तीव्र गन्ध वाले होते हैं।

जिन फूलों में निषेचन कीटों द्वारा होता है, वे बड़ी सरलता से कीटों को अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। वास्तव में ये कीट इस तरह निषेचन में सहायक होकर फूलों से अपना भोजन प्राप्त करते हैं। दलपुंज में जो ग्रन्थियां होती हैं वे मीठा और सुगन्धित रस निस्सारित करती रहती हैं। यह रस फूलों का मकरन्द कहलाता है। जब कीट मकरन्द पीना चाहता है, तो वह फूल तक उड़कर आता है। वह पंखुड़ियों को हटाकर मकरन्द तक पहुंचने का प्रयास करता है। इस प्रयास में ढेर-सारा पराग, परागकोष से उसके शरीर से चिपक जाता है। कीट मकरन्द पीकर उसी जाति के दूसरे फूल पर पहुंचता है, और फिर वहां का मकरन्द पीने के प्रयास में वह पराग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्रीकेसर (pistil) पर छोड़ देता है। इस तरह कीट फूलों से मकरन्द लेकर निषेचन में सहायता करते रहते हैं।

वंश-वृद्धि के लिए सुगन्ध का महत्त्व

फूलों में सुगन्ध का अन्यतम महत्त्व है। कहा जाता है कि प्राचीन काल में नाविक किनारा देखे बिना ही यह अन्दाजा लगा लेते थे कि वे तट के नजदीक हैं। वे किनारे से आने वाली हवा में फूलों की सुगन्ध पाकर इस बात का अन्दाजा लगाया करते थे।

लेकिन हमारा यह सोचना गलत होगा कि फूल मनुष्य लिए सुगन्ध बिखेरते हैं। वनस्पति-वैज्ञानिकों का मत है कि फूलों में सुगन्ध का प्रमुख प्रयोजन निषेचन की सम्पन्नता में सहायक होना है। निषेचन की सम्पन्नता बीज के उत्पादन के लिए आवश्यक है। इस तरह हम एक निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि फूलों में सुगन्ध का महत्त्व उनकी वंश-वृद्धि के लिए है।

फिर भी फूलों को हम अपने लिए प्रयोजित मानते हैं और उनसे सुगन्धियां प्राप्त करते हैं।

जिन इत्रों (प्राकृतिक सुगन्धियों) का हम प्रयोग करते हैं वे फूलों से निम्नलिखित दो विधियों से प्राप्त किये जाते हैं—

आसवन विधि (distillation)

इस विधि के अन्तर्गत फूल एक बड़े पात्र में रखकर या तो उबाले जाते हैं, या उन पर से भाप गुजारी जाती है। दोनों प्रक्रियाओं में वाष्प के साथ तेल निकल आता है। फिर यह वाष्प जल में ठण्डी की जाती है। जल में से इस वाष्प के गुजरने से तेल जल के ऊपर तैरने लगता है। बाद में सतह पर तैरता हुआ तेल पृथक कर लिया जाता है।

निष्कर्षण विधि (extraction)

कुछ फूलों के तेल भाप के सम्पर्क में आकर नष्ट हो जाते हैं। ऐसे फूल गरम, पिघली हुई

सृष्टि में सामान्य फूल हैं और अनोखे भी। सृष्टि के कुछ अनोखे फूल हैं—(क) ह्वाइट विलो, (White Willo), **(ख) व्रिसिया** (*Vriesia*), **और (ग) मुकुना** (*Mukuna*)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरबी में रखे जाते हैं जो इनके तेल को सोख लेती है। गुलाब तथा दूसरे कई फूलों से इत्र इसी विधि द्वारा प्राप्त किया जाता है। चमेली का इत्र तो इस विधि से भी नष्ट हो जाता है। इस फूल से इत्र एक दूसरी ही विधि से प्राप्त करते हैं। शुद्ध की हुई चरबी की सतहों के बीच फूलों को रखा जाता है। आगे की प्रक्रिया पूर्ववत, निष्कर्षण विधि ही की भांति रहती है। निष्कर्षण की दोनों ही विधियों में इत्र रासायनिक विलायकों द्वारा प्राप्त किया जाता है।

फ्रांस में व्यावसायिक स्तर पर इत्र प्राप्त करने के लिए फूल उगाये जाते हैं। टरकी और बल्गेरिया में भी इत्र का उत्पादन होता है। बहुधा गुलाब, चमेली और लवेण्डर के ही इत्र अधिकतर प्राप्त किये जाते हैं। इत्र प्राप्त करने के लिए फूल की बहुत अधिक मात्रा की जरूरत पड़ती है। इस मात्रा का एक तथ्य से अनुमान कर सकते हैं कि २५० पौण्ड गुलाब के फूलों से केवल एक औंस इत्र प्राप्त होता है।

लेकिन फूलों के अस्तित्व की सार्थकता

विश्व का सबसे बड़ा और अनोखा फूल रैफ्लिशिया अर्नोल्डी (*Ruflesia arnoldi*)

इत्र निस्सरण में नहीं है। यह तो एक सम्बन्ध है जिसे मानव ने अपने लाभ के लिए जोड़ लिया है।

सृष्टि में अनोखे फूल

सृष्टि में सामान्य फूल हैं और अनोखे फूल भी। विश्व का सबसे बड़ा फूल रैफ्लिशिया अर्नोल्डी (*Raflesia arnoldi*) है। प्रायः यह सुमात्रा के जंगलों में पाया जाता है। इसका अर्द्धव्यास लगभग एक गज होता है। एक अन्य फूल अमारफोफेलस टाइटेनम (*Amorphophallus titanum*) वास्तव में पुष्प नहीं होता। यह पुष्पक्रम (inflorescence) होता है। यह भी सुमात्रा के जंगलों में पाया जाता है। पुष्पक्रम ८·५ फुट ऊंचा होता है। सेलेनिपेण्डियम (*Selenipendium*) दक्षिण अमरीका का एक आकिड है। इसकी पंखुड़ियों की संख्या दो होती है। पंखुड़ियां रिबन के आकार की दो फुट लम्बी होती हैं। ह्वाइट विलो (White Willow) प्रकृति की संक्षिप्तता का एक विलक्षण उदाहरण है। इसके एक स्त्रीकेसर होता है और दो पुंकेसर। इसमें निषेचन पवन द्वारा होता है। व्रिसिया (*Vriesia*) देखने में मोमबत्ती की लाल लौ-सा होता है। यह मुख्यतः ब्राजील का फूल है।

मुकुना (*Mucuna*) भी अपनी विचित्रता के लिए प्रसिद्ध है। आप पौधे के सामने खड़े हैं। ढेर-सारे फूल उगे हैं। आप यह सोचेंगे, फूल नहीं तोते की चोंचें हैं।

इसी तरह के विचित्र फूलों में वाटर एरम (Water Arum), कैलसियोलारिया (*Calceolaria*), स्नो-प्लाण्ट (Snow Plant), ऐनथुरियम (*Anthurium*), बर्ड-आफ-पैराडाइज फ्लावर (Bird-of-Paradise Flower) दुवालिया (*Duvalia*), पैशन फ्लावर (Passion Flower), कैरियन फ्लावर (Carrion Flower) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक अनुसन्धानों में पौधों पर लफू लगने के सम्बन्ध में काफी-कुछ ज्ञात हुआ है। निषेचन के सम्बन्ध में भी जानकारी मिली है। साधारण शब्दों में फूल की परिभाषा इस प्रकार कर सकते हैं : 'एक फूल बहुत से अंगों का समूह है जो प्रजनन की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।' पौधे पर फूल लगना कई कारणों पर निर्भर करता है, विशेष हैं--पौधे में संचित भोजन की मात्रा, प्रकाश और ताप की स्थितियां।

फूल के विकास के लिए पौधे में संचित भोजन की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। फूल में होने वाली प्रजनन-क्रिया तथा बीज और फल के निर्माण के लिए भी भोजन की अतिरिक्त मात्रा का प्रयोजन होता है। भोजन की मात्रा नयी शक्ति देने, नये जीव द्रव्य (protoplasm) तथा कोष की दीवारों के निर्माण में खर्च हो जाती है। अतः यह निश्चित है कि पौधे का उचित विकास तब माना जायेगा जब उस पर फूल उगें, और इसके लिए आवश्यक है कि वह अपने जीवन में एक ऐसी अवस्था से गुजरे जब भविष्य की क्रियाओं के लिए वह भोजन एकत्र कर ले।

पौधे में बनने वाला हारमोन

पौधे में भोजन की आवश्यक मात्रा के संचित होते ही उस पर फूल लगने प्रारम्भ नहीं हो जाते। आधुनिक अनुसन्धानों में यह पाया गया है कि उन्हें ताप तथा प्रकाश की उचित मात्रा भी मिलनी चाहिये। यही कारण है, किसी विशेष देश के पौधे दूसरे देश में तथा भिन्न जलवायु में फल नहीं दे पाते।

यह अभी तक ज्ञात नहीं हो पाया है कि

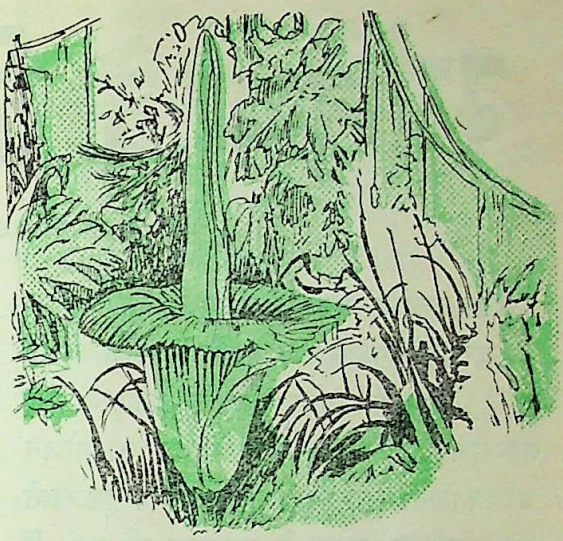

आमरफोफेलस टाइटेनम (*Amorphophallus titanum*)—एक फूल जो फूल नहीं है

ताप और प्रकाश की आवश्यक मात्रा की सहायता से फूल कैसे उगते हैं, किन्तु वैज्ञानिकों का अनुमान है कि सम्भव है, इस तरह पौधे में कोई विशेष हारमोन बनता हो और इस हारमोन के कारण ही फूल लगते हों। वैज्ञानिकों ने इस हारमोन का नाम फ्लोरिजेन (florigen) रखा है। इसकी रासायनिक संरचना अभी तक ज्ञात नहीं हो पायी है।

फूल के उद्भव तथा विकास के सम्बन्ध में यद्यपि बहुत-सी ऐसी बातों का ज्ञान हमें हो चुका है जिनके सम्बन्ध में कुछ वर्ष पूर्व तक ज्ञात नहीं था, किन्तु पौधों में पुनरुत्पादन की स्थितियां आज भी हमारे लिए रहस्यपूर्ण बनी हुई हैं। फिर भी वैज्ञानिकों की धारणा है कि पुनरुत्पादन में तथा फूल के विकास में फ्लोरिजेन हारमोन महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ●

पेड़ की छाल से नया सीमेण्ट

हमारे लिए पौधे अधिकतम उपयोगी सिद्ध होते जा रहे हैं। स्वीडन के ओरतनहोम नामक वैज्ञानिक ने पेड़ की छाल के प्रयोग द्वारा एक नयी सामग्री तैयार की है। सीमेण्ट के स्थान पर इस सामग्री का प्रयोग सफलतापूर्वक किया जा चुका है। इस छाल-कंक्रीट में थोड़ी बालू तथा सीमेण्ट मिलाने से मसाले की उष्मा तथा ध्वनि-रोधी क्षमता में वृद्धि हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भविष्य के लिए भोजन

राजेन्द्रप्रसाद वार्ष्णेय, एम. एस-सी.

बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए भोजन के उत्पादन में पिछले ५० वर्षों में काफी प्रगति हुई है। फिर भी भविष्य के लिए भोजन आज एक समस्या बना हुआ है। भविष्य का भोजन अधिकांशतः ऐसा ही होगा जैसा आज हम खाते हैं। इसलिए भोजन के उत्पादन की वृद्धि में विज्ञान का उपयोग निश्चित है। भविष्य में एक नये भोजन के आविष्कार के बजाय वर्तमान भोजन को ही सुधारा जायेगा, विश्व के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों का यह मत है।

पिछले १०० वर्षों में विज्ञान का रुख अत्यन्त सफलता के साथ भोजन की समस्या की ओर मोड़ा गया है, लेकिन भविष्य के लिए कोई नया भोजन विकसित नहीं किया गया है। वैज्ञानिक विधियों से भोजन की उत्पादन-वृद्धि तथा इसे नष्ट होने से बचाने की विधियों में काफी प्रगति हुई है। १८४० में जे. डब्लू ल्वेस के शोध कार्यों ने कृत्रिम रासायनिक खाद का अविष्कार किया जिसके परिणामस्वरूप विश्व भर में उत्पादन बढ़ा। पहली बार १८७० और १८८५ में आर्सेनिक और तांबे के यौगिक पेरिस ग्रीन और बोरडयोक्स मिश्रण का कीटाणु-नाशक और फफूंदनाशक के रूप में उपयोग हुआ, बाद में अनेक कीटाणुनाशक दवाओं ने भोजन के सम्भरण में अत्यधिक वृद्धि की है।

आज के भोजन में सुधार

विश्व के भोजन-सम्भरण के सुधार में मुख्य देन आनुवंशिकी की है। बीज के वरणात्मक प्रजनन के उपयुक्त चयन से आज बहुत कुछ सम्भव है। विश्व के उन भागों में भी गेहूं उगाया जा सकता है जहां पर मौसम शुष्क या ऋतु बहुत कम समय के लिए होती है। इस कारण वहां गेहूं की बिना सुधरी किस्म को पैदा नहीं किया जा सकता है। अकेले कनाडा में ही पश्चिमी और उत्तरी भाग के उन विशाल क्षेत्रों में नये गेहूं की बहुत अधिक और अच्छी फसलें उगती हैं जहां पहले रेगिस्तान था।

गेहूं के वैज्ञानिक प्रजनन द्वारा ऐसे गेहूं का उत्पादन ही काफी नहीं है जो कम समय की गरम ऋतु में पक जाय, बल्कि इस गेहूं में रोग के लिए भी प्रतिरोधक शक्ति होनी चाहिये। ३० वर्ष पहले सुधरी हुई किस्म की ३.५ करोड़ ब्रशेल्स गेहूं की फसल १० वर्ष के भीतर रतुये (rust) द्वारा नष्ट हो गयी थी। हालांकि स्थिति को शीघ्र ही आनुवंशिक-शास्त्रियों द्वारा रोक दिया गया जिन्होंने दो भिन्न मार्क्विस संकरो को एक नयी किस्म थेचर (thatcher) बनाने के लिए प्रयुक्त किया। यह किस्म रतुआ को रोकती थी।

भविष्य के भोजन में गेहूं तथा अन्य चीजें सम्भवतः अधिक सुधरी हुई किस्मों में होंगी। उत्पादन अधिक होगा और रोग प्रतिरोधक शक्ति भी अधिक होगी। भूसा दाने के बढ़ते हुए वजन तथा रोगों को रोकने के लिए मजबूत होगा। आधुनिक विज्ञान ने उत्तरी अमरीका में अनाज के उत्पादन को दूना कर दिया है।

प्रजनन ने भी वर्ष में दो या तीन बार अण्डे देने वाली जंगली मुरगी तथा भारत की निकम्मी मुरगी को आधुनिक मुरगी में बदल दिया है जो वर्ष में ३०० अण्डे देती है। अण्डों का आकार और पोषक तत्त्व प्रजनन द्वारा सुधरी हुई मुरगियों के अण्डों में पुरानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुरगियों की अपेक्षा अधिक हैं, इसलिए हम आशा कर सकते हैं कि इनमें और अधिक सुधार होगा और कम से कम इस तरह की मुरगियों का विश्व के अन्य भागों में फैलाव तो होगा ही। अमरीका के एक वैज्ञानिक ने बताया है कि भविष्य में मुरगियां जमीन के अन्दर रहा करेंगी और उनका भोजन द्रव रूप में होगा। जमीन के अन्दर मुरगियों के लिए अनुकूल वातावरण आसानी से बनाया जा सकता है और ऊपर की जमीन पर कृषि हो सकती है। इस प्रकार दोहरा लाभ हो सकता है। मुरगिया यदि द्रव खुराक खाना शुरू कर दें, तो अन्न की काफी बचत होगी।

मानव के लिए अत्यधिक उपयोगी प्राचीन और आज का प्रमुख भोजन गाय का दूध भी भविष्य का भोजन होगा। एक आधुनिक वैज्ञानिक तरीके के प्रजनन से प्राप्त और उपयुक्त भोजन पाने वाली गाय के दूध की मात्रा काफी अधिक होगी।

भोजन-परिरक्षण के नये तरीके

भोजन के उत्पादन की वृद्धि में विज्ञान के सफल उपयोग के साथ-साथ उतना ही महत्त्व-पूर्ण भोजन के परिरक्षण में इसका उपयोग है। यद्यपि साधन बदल गये हैं लेकिन भोजन-परिरक्षण के सिद्धान्त वही हैं। शुष्क रूप में परिरक्षण अधिक अशुद्ध तरीका है लेकिन स्प्रे शोषण, रोलर शोषण और जमाव द्वारा शोषण इत्यादि अच्छे तरीके हैं। भोजन को जमाने की विधि, पानी हटाने की विधि, और बन्द डिब्बों द्वारा भोजन को नष्ट होने से बचाने की विधि में नये सुधार किये गये हैं। गामा विकिरणों द्वारा अणुजीव को नष्ट करने के नये तरीके भी अपनाये जा रहे हैं। इस सबसे हमें जमी हुई मटर, शुष्क दूध, शुष्क अण्डे इत्यादि खाने को मिल सकते हैं।

परमाणु-विज्ञान का कृषिक उत्पादन बढ़ाने और परिरक्षण में प्रयोग भूख के विरुद्ध संघर्ष में अमूल्य सिद्ध हो सकता है। यद्यपि इस विषय में बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त हो चुका है फिर भी रेडियो समस्थानिकों का कृषि में उपयोग अभी विकास की अवस्था में है। रेडियो समस्थानिकों की बहुत कम मात्रा का पौधों, पानी, भूमि में और कीड़ों के मारने में प्रयोग उत्पादन-वृद्धि में काफी सहायक सिद्ध हुआ है।

रेडियोधर्मी पदार्थों का उपयोग : छोटे और मजबूत भूसे के पौधे

भोजन के उत्पादन की वृद्धि में रेडियो समस्थानिकों का प्रभावशाली उपयोग पौधों में उत्परिवर्तन (mutation) पैदा करने की क्षमता रखता है, उदाहरण के लिए स्वीडन में जौ की पलास (pallas) किस्म से पिछले समय में लम्बा और पतला पौधा होता था जो इतनी आसानी से झुकता था कि अनाज के दाने के वजन को भी सहन नहीं कर पाता था। फलस्वरूप वह खाद की अधिक मात्रा के लिए अनुपयुक्त था। रेडियोधर्मी पदार्थों के उपयोग से छोटे और मजबूत भूसे के पौधे पैदा होते हैं, जो आजकल स्वीडन और ब्रिटेन में प्रचलित हैं।

भारत उन १२ देशों में से है जो FAO/IAEA से संयुक्त स्कीम में विस्तृत शोध-कार्य में भाग ले रहे हैं। इनका ध्येय चावल के उत्पादन को बढ़ाना है। यह उल्लेख्य है कि चावल दुनिया की आधी जनसंख्या का आधार-भूत भोजन है। इसके अधीन उत्परिवर्तित चावल की सुधरी हुई किस्में निकाली गयी हैं।

विकिरण में अनावरण अनुर्वरता उत्पन्न कर सकता है। इस गुण का उपयोग किया जा सकता है। सारी दुनिया के बड़े हिस्से में बढ़ती हुई फसल का काफी भाग विनाशकारी कीटों द्वारा नष्ट होता है। फल की मक्खियां फल की अनेक फसलों को नष्ट कर देती हैं। स्क्रूवर्म मक्खी जो पशुओं के खुले घावों में अण्डे देकर मार सकती हैं, प्रथम विनाशकीट थी जिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

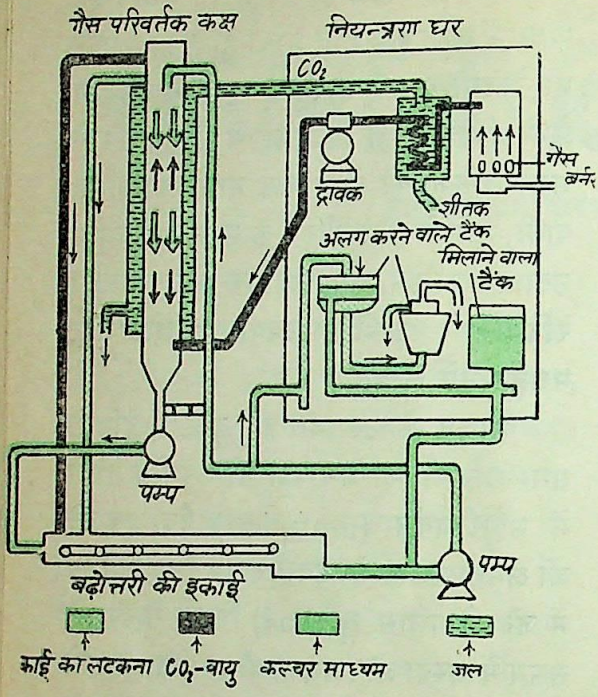

काई का उत्पादन भोजन का एक सम्भव स्रोत है। (चित्र)—जापान में परीक्षण की गयी एक योजना—यूनिट में बढ़ते हुए पौधे इसके ढक्कन से प्रकाश तथा गैस परिवर्तक टावर और खनिज कल्चर माध्यम (culture medium) **से कार्बन डाइ-आक्साइड गैस प्राप्त करते हैं**

पर उर्वरता द्वारा शोध-कार्य किया गया है। यह डा० निपलिंग के २७ वर्ष के प्रयोगों का परिणाम है। डा. निपलिंग ने करोड़ों स्क्रूवर्म मक्खियों को पकड़ा और उन्हें रेडियो-धर्मी कोबाल्ट से अनावरित कराके अनुर्वरता उत्पन्न की। इसके बाद उन्हें ऐसी जगह छोड़ दिया जहां ये बहुत अधिक संख्या में थीं। वायुयान पकड़ी हुई मक्खियों को छोड़ने के स्थान तक महीनों हर सप्ताह ले गये। एक वर्ष के भीतर अमरीका की बहुत-सी जगहों में स्क्रूवर्म मक्खियां लगभग खत्म हो गयीं।

इसी तरह के प्रयोग से अनेक फसलों को नष्ट होने से बचाया जा सकता है। विनाश-कारी कीटों द्वारा नष्ट हुई फसलों के बराबर ही भोजन की मात्रा फफूंद और बैक्टीरिया के संक्रमण से नष्ट होती है आयनीकृत विकिरण कीड़ों को तथा उन अणुजीवों को नष्ट कर सकते हैं। प्रकृति में भोजन का विघटन एनजाइम (enzymes) तथा रासायनिक क्रियायों, जैसे आक्सीकरण से होता है। विकिरण एनजाइम को नष्ट कर सकते हैं।

रेडियो समस्थानिकों का प्रयोग सर्वप्रथम भूमि की उर्वरता बढ़ाने और फसल के पोषक तत्त्वों के प्रोत्साहन में किया गया था। इस क्षेत्र में काफी सफलता प्राप्त हुई है। भविष्य में पौधों की गति और पोषक तत्त्वों को प्राप्त करने की शक्ति के विषय में अधिक ज्ञात होने पर इस दिशा में अत्यधिक प्रगति होने की सम्भावना है। इन सब सुधारों के साथ स्वचालन का विकास आवश्यक है।

कृषि व्यापार (agri-business) **की ओर**

स्वचालन ने अधिकांश व्यापारिक उद्योगों में मूलभूत रूप से क्रान्ति उत्पन्न कर दी है। भोजन उत्पादन के क्षेत्र में भी इसका उपयोग बहुत लाभकारी सिद्ध होगा। कृषि समाप्त हो जायेगी और इसका स्थान कृषि व्यापार ले लेगा। फिर किसानों द्वारा भोजन का उत्पादन, व्यापारियों द्वारा इसकी सुरक्षा तथा पैकिंग और एक तीसरे समुदाय द्वारा इसकी बिक्री नहीं होगी। ये सब क्रियाएं एक वृहद् पैमाने पर विज्ञान पर आधारित, स्वयं चलने वाले उत्पादक और वितरक व्यापार में परिवर्तित हो जायेगी। आज भी यह परिवर्तन मुरगी-पालन में पूर्ण रूप से सम्पन्न हो चुका है।

मुरगियों को पोषक तत्त्वों से सन्तुलित खुराक दी जा सकती है और उन्हें यान्त्रिक रूप से अण्डे देने के लिए अनुकूल परिस्थितियों में रखा जा सकता है। खाने के लिए चूजों का उत्पादन इसी तरह बढ़ाया जा सकता है और वैज्ञानिक तरीकों से नियन्त्रित किया जा सकता है, जिससे एक मनुष्य ४०,००० मुरगियों की देखभाल कर सकता है। चूजे के उत्पादन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिरक्षण और विक्री आदि कार्य स्वचालित यन्त्र द्वारा भी हो सकते हैं। ऐसा यन्त्र पूर्ण रूप से विज्ञान पर आधारित होगा।

इसके लिए आनुवंशिक विशेषज्ञों की आवश्यकता होगी जो यह देखेंगे कि प्रयोग करने वाले प्रजनन भण्डार में उपयुक्त शुद्ध प्रजनन से उर्वर अण्डे पैदा होते हैं या नहीं।

पोषक तत्त्व विशेषज्ञ यह गारण्टी देंगे कि मुरगियों को दिये गये भोजन में पूर्ण रूप से पोषक तत्त्व विद्यमान हैं।

भविष्य में वैज्ञानिक तरीके अधिक से अधिक उपयोग किये जायेंगे और भोजन की भिन्न-भिन्न किस्मों का उत्पादन किया जायगा। पश्चिमी देशों में इस प्रकार की विधियां प्रयोग की जा रही हैं, उदाहरण के लिए मटर की खेती में। उपयुक्त भूमि में उगायी गयी मटर में फसल को जब रसायन-शास्त्री यह परीक्षण कर लेता है कि उसमें शर्करा की सान्द्रता ठीक है और पौधे की क्रिया-विज्ञान का विशेषज्ञ उसे यन्त्रों से ठीक पका हुआ देख लेता हैं, यान्त्रिक फसल काटने वाले दिन और रात काम करके शीटिंग मशीन को स्थानान्तरित कर देते हैं जहां यह पैकेट बनाने के लिए जमायी जाती है। इस तरह समय की अत्यधिक बचत होती है।

संश्लिष्ट भोजन (synthetic food)

संश्लिष्ट भोजन क्या है ? इसके अनेक जवाब मिल सकते है। उदाहरणस्वरूप गोश्त प्रोटीन का एक अभूतपूर्व स्रोत है, क्योंकि बैल, भेड़, बकरियां और सूअर के ऊतकों में अत्यधिक मात्रा में प्रोटीन होती है जिसे वे उस घास तथा भोजन से प्राप्त करते हैं जिसे वे खाते हैं। तब क्यों न इसी प्रोटीन को सीधे ही पत्तियों से निकालकर सान्द्रित किया जाय जिससे जानवरों की अमानवीय हत्या तथा वह कष्ट जो वे हमारे लिए उठाते हैं बच जाय। यद्यपि इस दिशा में प्रयत्न निराशाजनक रहे हैं। पत्तियों की प्रोटीन निकालने, उष्मा द्वारा पत्तियों के रस से प्रोटीन का अवक्षेपण, तथा उत्पादन की वसूली के लिए आवश्यक यन्त्र बहुत महंगे हैं। इनमें ताजी पत्तियों को एक गूथने वाले यन्त्र में से गुजारा जाता है। यह एक ड्रम होता है जिसमें अनेक कूटने वाले यन्त्र होते हैं। प्राप्त पत्तियों का रस फौरन ही ७५ डिग्री सेण्टीग्रेड तक प्रोटीन को जमाने के लिए गरम किया जाता है। उत्पादन का फौरन उपयोग किया जा सकता है या परिरक्षण द्वारा किया जा सकता है, लेकिन यह प्राकृतिक रूप से प्राप्त प्रोटीन से कम स्वादिष्ट होती है।

समुद्रीय जीव-विज्ञानशास्त्री देखते हैं कि मछली प्लवक खाकर रहती है, तो क्या मानव भोजन के लिए प्लवक का उपयोग कर सकता है या नहीं ? उत्तर फिर भी नहीं होता है। अधिक मात्रा में प्लवक प्राप्त करने के लिए उपयुक्त यन्त्र बहुत कीमती तथा जटिल हैं।

साधारण पानी के यन्त्रों में काई के उत्पादन के लिए काफी प्रयत्न किये गये हैं। इस काई में कोई बेकार भूसा और जड़ नहीं होती। यद्यपि अब तक के प्रयत्न ज्यादा सफल नहीं रहे हैं, क्योंकि वास्तव में आर्थिक रूप से काई का उत्पादन इतना सरल नहीं हैं जितना कि खेत में घास का उत्पादन। और फिर दूसरी समस्या स्वाद की है। फिर भी काई के उत्पादन के लिए अनेक परीक्षण किये जा रहे हैं।

खमीर (yeast) भोजन का एक उम्दा स्रोत बताया गया है। खमीर कोषों को सुगर में बढ़ाया जा सकता है जो अतिरिक्त स्टार्च से मिल सकती है, और जब उन्हें अकार्बनिक अमोनिया के साथ मिला दिया जायगा, तो वे प्रोटीन को संश्लिष्ट कर देंगी। हाल ही में खमीर के कुछ ऐसे सैम्पल विकसित किये गये हैं, जिनमें सुगर की जगह पेट्रोलियम का प्रयोग होता है। इस प्रकार वास्तव में प्रोटीन का पूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप से अजीव-विज्ञानीय कच्चे माल से उत्पादन किया जाता है, यहां भी यद्यपि पत्ती प्रोटीन और काई प्रोटीन में आने वाली कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

भविष्य के लिए भोजन पर विज्ञान का प्रभाव देखने के लिए इस समस्या को दो भागों में बांटा जा सकता है। एक तरफ हम स्पष्ट रूप से उस प्रगति को देख सकते है, जो पश्चिमी दुनिया में हुई है। हम अन्न की उत्पादन वृद्धि तथा अनेक प्रकार के आधुनिक भोजनों को भी देखते हैं, तो यह जान पड़ता है कि यह क्रिया अनवरत रूप से जारी रहेगी और इसमें सुधार होते रहेंगे।

दूसरा पहलू जो आज चर्चनीय है, काई, पोषित मछली का आटा और पेट्रोलियम के रासायनिक परिवर्तन द्वारा वसा के उत्पादन की सम्भावना से सम्बन्ध रखता है। यह सोचा जाता है कि यह भोजन और इस किस्म के अन्य भोजन हम लोगों से कम उन्नतिशील मनुष्यों द्वारा खाये जायेंगे।

चन्द्रमा तथा ग्रहों का भौगर्भिक अध्ययन करने के लिए केन्द्र

चन्द्रमा तथा ग्रहों का भौगर्भिक अध्ययन करने के लिए अमरीका के एरीजोना प्रदेश में इस प्रकार के विश्व के प्रथम केन्द्र की स्थापना हुई है। इस अनुसन्धान केन्द्र में चन्द्रमा के मानचित्र निर्माण, ज्वालामुखी पर्वत-सम्बन्धी अन्वेषण तथा चन्द्रतल के भू-भौतिकीय अध्ययन पर विशेष रूप से कार्य हो रहा है। इस केन्द्र में दो सौ से अधिक वैज्ञानिक और प्रविध्जि कार्य कर रहे हैं। यहां अमरीका के अन्तरिक्ष-यात्रियों को चन्द्रतल के भौगर्भिक तथा भू-भौतिकीय अनुसन्धानों से सम्बन्धित विषयों में प्रशिक्षण भी प्रदान किया जाता है।

हृदय गति मापने का एक नवीन यन्त्र

रूस के वैज्ञानिकों ने हृदय गति मापने के लिए एक नवीन यन्त्र का निर्माण किया है। यह यन्त्र एक फाउण्टेनपेन के आकार का बना होता है। हृदय के समीप रखते ही यह यन्त्र हृदय कपाट तथा मांसपेशियों के सूक्ष्म परिवर्तन को भी नोट कर लेता है। यह यन्त्र ध्वनि से भी अधिक गति की आवृत्तियों को नोट करने में समर्थ है। इस यन्त्र के उपयोग द्वारा हृदय रोग का उपचार और अधिक क्षमता से होने की सम्भावना है।

९० मील प्रति घण्टा की गति से चलने वाला डीजल इंजन

स्वीडन की नोहाव कम्पनी ने एक ऐसा शक्तिशाली इंजन तैयार किया है जो ९० मील प्रति घण्टा की गति से रेलगाड़ी खींच सकता है तथा ऊंची चट्टानों को अकेला ही पार कर सकता है। पिछले इंजनों की अपेक्षा गाड़ियों को खींचने की इसकी क्षमता ६० प्रतिशत अधिक है। इस इंजन की शक्ति सामर्थ ३,३०० अश्व शक्ति है।

विश्व की प्राचीनतम चट्टान

यूराल स्थित भूगर्भीय शोध संस्थान के वैज्ञानिकों का एक दल पृथ्वी की सही आयु का पता लगाने का प्रयास कर रहा है। वैज्ञानिकों ने पोटैशियम आर्गोन विश्लेषण द्वारा यूराल पर्वत की विभिन्न प्रकार की चट्टानों की आयु का पता लगाया है।

वैज्ञानिकों की एक नयी खोज इसराइल में है जो दक्षिण यूराल में पायी गयी एक चट्टान है। इसकी आयु लगभग ४ अरब २० करोड़ वर्ष है। अब तक प्रचीनतम चट्टान केवल ३ अरब ८० करोड़ वर्ष पुरानी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमाणु-शक्ति और धातु-विज्ञान

सत्यपालसिंह राजपूत, एम. एस-सी.

बीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण में ही यह बात वैज्ञानिकों ने सिद्ध कर दी थी कि परमाणु का विभाजन करना कठिन नहीं है। उससे पहले परमाणु को पदार्थ का सबसे छोटा कण माना जाता था। रदरफोर्ड तथा विल्सन ने प्रयोगों से यह सिद्ध कर दिया कि परमाणु एक नहीं वरन कई प्रकार के सूक्ष्म कणों से मिलकर बना है। इन्हें इलेक्ट्रान, प्रोटान तथा न्यूट्रान कहते हैं। अणु-शास्त्रियों की बढ़ती हुई जिज्ञासा इसी सीमा से सन्तुष्ट नहीं हुई और उन्होंने इन सूक्ष्म कणों को भी अलग-अलग करने का निश्चय किया। अन्त में फर्मी के प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया कि इन कणों को अलग-अलग करके उन्हें अनेक प्रकार के कार्यों में लाया जा सकता है। इन्हीं प्रयोगों से फर्मी ने देखा कि यदि किसी पदार्थ को न्यूट्रान कणों द्वारा बेधा जाता है, तो उसके अन्दर अनेक नवीन परिवर्तनों में मुख्य परिवर्तन है एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ में बदलना। इस प्रकार की खोजों से यह सिद्ध हो गया है कि कीमियागरों की जो कल्पना सीसे से सोना बनाने की थी, वह सम्भव हो सकती है। न्यूट्रान कणों के बेधन से जो नये पदार्थ बनते हैं उन्हें उस मूल पदार्थ का समस्थानिक कहते हैं।

जिस समय इस प्रकार के प्रयोग किये जा रहे थे, उसी समय दम्पती क्यूरी ने यह सिद्ध कर दिया कि प्राकृतिक रेडियम तथा यूरेनियम के यौगिकों तथा तत्त्वों में से ऐसी किरणें निकलती हैं जो पास में रखी हुई फोटोग्राफिक प्लेटों को प्रभावित कर देती हैं। इन किरणों का वास्तविक विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि ये किरणें एक ही प्रकार की नहीं हैं बल्कि कई प्रकार के कणों से मिलकर बनी हैं। इन्हें अल्फा किरण, बीटा किरण तथा गामा किरण कहते हैं। इन तीनों प्रकार की किरणों के गुण एक-दूसरे से बिलकुल भिन्न हैं। वास्तव में इस प्रकार की किरणें सभी समस्थानिकों से नहीं निकलती हैं। जिन समस्थानिकों से ये किरणें निकलती हैं, उन्हें रेडियोसक्रिय समस्थानिक कहते हैं।

आज रेडियोसक्रिय समस्थानिकों के अनेक उपयोग हैं। संसार में उच्च ऊर्जा की कलों (साइक्लोट्रान, बीटाट्रोन, सिंक्रोट्रान आदि) ने अनेक असम्भव बातों को सम्भव कर दिया है। लगभग प्रत्येक तत्त्व के रेडियो समस्थानिक बनाये जा चुके हैं। रेडियोसक्रिय तत्त्वों की बढ़ती हुई संख्या से वैज्ञानिकों ने उन्हें अनेक प्रकार के शान्तिपूर्ण कार्यों में उपयोग करने का फैसला किया है। आजकल रेडियो समस्थानिक उन सभी कार्यों में प्रयुक्त हो रहे हैं जिनकी कुछ वर्ष पूर्व कल्पना भी नहीं की जा सकती थी, उदाहरण के तौर पर रेडियो समस्थानिकों का उपयोग चिकित्सा, कृषि, रासायनिक प्रतिक्रियाएं, भोजन का आरक्षण,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

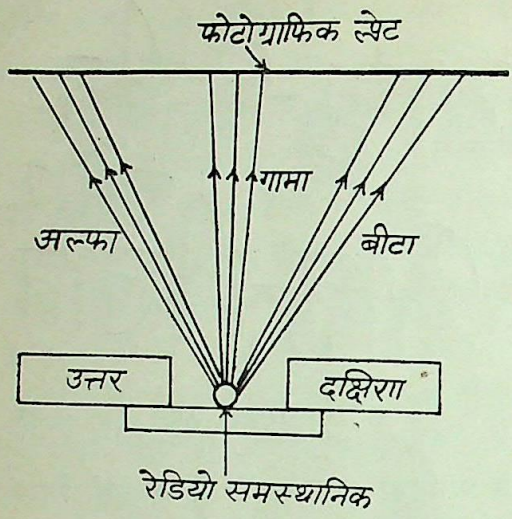

जब रेडियोसक्रिय समस्थनिक को चुम्बकीय क्षेत्र में रखा जाता है, तो उससे निकली हुई किरणें तीन भागों में बंट जाती हैं। गामा किरणें किसी भी दिशा में विस्थापित नहीं होतीं

अनेक नियन्त्रण यन्त्रों, धातु-विज्ञान आदि में हो रहा है। आर्थिक दृष्टि से रेडियोसक्रिय तत्त्वों के सभी तरीके अद्वितीय हैं, किन्तु धातु-विज्ञान तथा वनस्पति-विज्ञान के उपयोग सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। धातु-विज्ञान की लगभग सभी शोधशालाओं ने मान लिया है कि धातु में आवश्यक एवं अनावश्यक गुण भरना असम्भव नहीं है।

और भी सम्भव

रेडियो समस्थानिकों की किरणों का प्रभाव धातुओं में एक नहीं, अनेक आवश्यक तथा वांछनीय गुण ला सकता है, उदाहरणार्थ यदि किसी धातु के ऊपर न्यूट्रानों की तेज धारा पड़े, तो उसके यान्त्रिक गुणों में अनेक परिवर्तन हो जाते हैं। धातुओं की क्षमता एवं कठोरता बढ़ जाती। उनकी भंजनशीलता घट जाती है तथा प्रत्यास्थता-सम्बन्धी सभी गुण बढ़ जाते हैं।

दशा परिवर्तन

नाभिकीय क्रियाकारक (nuclear reactor) के तेज विकिरण से बहुरूपीय दशा-परिवर्तन बड़ी आसानी से हो जाता है, उदाहरणस्वरूप यूरेनियम तथा मोलिब्डेनियम का मिश्रधातु जो साधारण तरीकों से समावयवी होने में काफी समय लेता है, क्रियाकारक के विकिरण की धारा से जल्दी समावयवी हो जाता है। यह बात यूरेनियम के अन्य मिश्र धातुओं के लिए भी सत्य सिद्ध हुई है। वास्तव में धातुओं की जो अवस्था साधारण तापक्रम पर होती है, वह विकिरण की धारा में दूसरी अस्थायी अवस्था में परिवर्तित हो जाती है। स्टेनलेस स्टील भी यदि विशाल मशीनों के तेज विकिरण कणों द्वारा प्रभावित किया जाय, तो उसके अन्दर अनेक विशेषताएं पैदा हो जाती हैं। इस प्रकार की क्रिया से सम्पन्न इस्पात साधारण स्टेनलेस स्टील की अपेक्षा नाशवान क्रियायों के लिए अधिक क्षमताशील है। विकिरण से प्रभावित टिन का रंग सफेद से भूरा हो जाता है।

विद्युत् तथा उष्मा चालकता

विकीर्णित धातुओं की उष्मा तथा विद्युत् चालकता, दोनों ही काफी मात्रा में कम हो जाती हैं। चालकता का घटना अर्थात् प्रतिरोधकता का बढ़ना अणु-सिद्धान्त के अनुसार समझा जा सकता है। जब विकिरण की तेज धार पड़ती है, तो उससे धातु के अन्दर जो इलेक्ट्रान तथा फोटान होते हैं, वे तितरबितर हो जाते हैं, जिनके तितरबितर हो जाने से धातु की चालकता काफी घट जाती है। धातु की चालकता के घट जाने से धातु को अनेक सुविधा तथा उपयुक्त कार्यों में लाने में सहायता मिलती है।

सतह की परत भी बदल जाती है

जब तेज विकिरण की धार धातु की सतह पर पड़ती है, तो उसकी सतह पर बाहरी प्रक्रियाओं का प्रभाव बिलकुल परिवर्तित हो जाता है। यह परिवर्तन या तो क्रियाकारी गैस या द्रव में हो सकता है, और उसकी सतह के अणुओं में भी। कुछ क्रियाएं जो साधारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धातु पर सम्भव नहीं होती हैं, वे भी हो सकती हैं। विकिरण से धातु का नाशवान क्रियाओं में नष्ट होना घट-बढ़ सकता है। घटना-बढ़ना अवस्था तथा विधि दोनों ही पर निर्भर करता है, उदाहरणार्थ वायुमण्डल में स्वत: अमोनिया तथा शोरे के तेजाब (HNO_3) के बनने से धातुओं की ऊपरी सतह का क्षय हो जाता है।

विकिरिण से धातुओं के अन्त: प्रस्युन्दन (self diffusion) में भी काफी अन्तर आ जाता है। यदि किसी धातु में उसी धातु के रेडियोसक्रिय समस्थानिक को मिला दिया जाय तो इस प्रकार के मिश्रण से उस धातु में भी अनेक विशेष गुण आ जाते हैं। इस प्रकार के मिश्रण अनेक शोधकार्यों में काम आते हैं।

रेडियो समस्थानिकों का उपयोग

रेडियो समस्थानिकों का धातु-विज्ञान में प्रथम प्रयोग १९२२ में हैवसी ने जरमनी में किया था। उसने लोहे में रेडियो लोहा (Fe·57) मिलाया था। इस मिश्रण से उसने देखा कि मिश्र धातु के गुण मूल धातु से काफी भिन्न हैं। मिश्र धातु का सबसे मुख्य गुण यह होता है कि वह गैसों को अपने अन्दर शोषित करने में सर्वदा असमर्थ होती है। परिणामस्वरूप वह गैसों के लिए कम क्षय-कारी होती है। रेडियो-कार्बन से बनी स्टील भी साधारण स्टील की अपेक्षा अधिक सुदृढ़ होती है। इस प्रकार के धातु यौगिक अनेक धात्वीय क्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन करने के काम भी आते हैं। धातु के अन्दर अन्य अशुद्धियों की खोज करना, धात्वीय चादरों की समावयता की जांच तथा उसमें निकृष्ट भाग की खोज, चद्दरों की मोटाई निकालना तथा मिश्र धातु का संयोजन काफी शुद्धतापूर्वक निकालना, ये सभी कार्य रेडियो समस्थानिकों की सहायता से अधिकतम शुद्धतापूर्वक सम्पन्न होते हैं। धातु भट्ठियों में द्रव धातु के तल की माप करना अन्य विधियों से सर्वदा असम्भव है, क्योंकि भट्ठी का तापक्रम तथा उसकी अपारदर्शिता, दोनों ही अन्य विधियों के लिए उचित नहीं हैं। रेडियो समस्थानिकों को प्रयोग में लाने वाली तलमापक मशीन उनकी ऊंचाई मिलीमीटर की शुद्धता तक नाप सकती है।

और भी सम्भावनाएं

रेडियो समस्थानिकों को धातु में मिला-कर मिश्र धातु से इंजनों में प्रयुक्त होने वाले पिस्टनों तथा जोड़ों की घर्षण-क्षमता काफी बढ़ायी जा सकती है। उनकी घर्षण-क्षमता का नाप भी सरलता से ज्ञात किया जा सकता है। धातु-जोड़ों (welding) के सही या गलत होने की जांच रेडियो समस्थानिकों की सहायता से आसानी से की जा सकती है। जोड़ों की भंजनशीलता तथा उनमें दोनों सिरों के अणुओं के समावयवी होने का अध्ययन रेडियो समस्थानिक विधियों द्वारा ही किया जा सकता है।

जो भी कार्य पहले काफी परेशानी के साथ यान्त्रिक विधियों द्वारा होते थे, वे आज-कल रेडियो तत्त्वों द्वारा स्वचालित यन्त्रों से होते हैं। धातु-विज्ञान के क्षेत्र में ठीक-ठीक मोटाई की चद्दरों को बनाने के लिए स्वचालित,

चद्दर की मोटाई नापने के यन्त्र की कार्यविधि—इसमें एक रेडियो समस्थानिक प्रयुक्त होता है। यन्त्र की शुद्धता ·०१% तक होती है

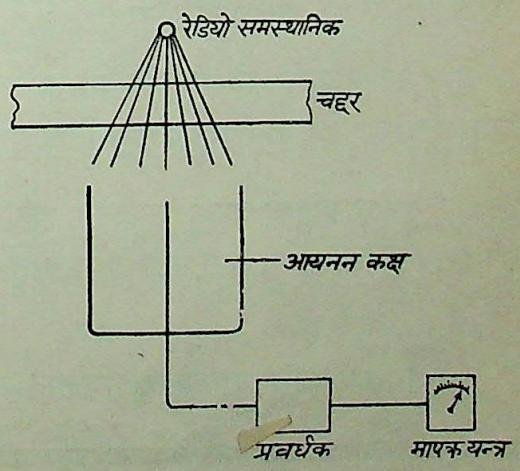

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

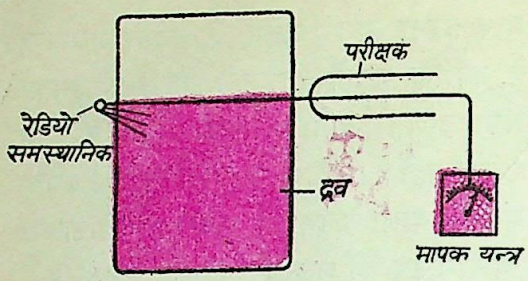

रेडियो समस्थानिकों को प्रयोग में लाने वाली तल मापक मशीन की कार्य-विधि—यह मशीन भट्ठियों, मोटे सिलिण्डरों आदि में द्रव धातु के तल देखने के काम आती है

स्वनियन्त्रित यन्त्रों का प्रयोग होता है। ये यन्त्र यदि चद्दर की मोटाई में जरा भी परिवर्तन हो जाय, तो फौरन बता देते हैं तथा मशीन को उसी तरह कार्य करने के लिए निर्देश देते हैं, ताकि उन चद्दरों की मोटाई उसी आकार की रहे। इसके अलावा अनेक विधियों में नियन्त्रण के कार्य भी रेडियो समस्थानिकों द्वारा किये जाते हैं। सिगरेट, कागज टिन के उद्योग में उनके स्वरूप-नियन्त्रण (quality control) में रेडियो समस्थानिकों का विशेष महत्व है।

वास्तव में आज हम कितना भी कहें, यह बात मान्य होगी कि रेडियो समस्थानिकों के उपयोग से धातु-विज्ञान की अनेक ऐसी बातें सरल हो गयीं जिन्हें कुछ वर्ष पूर्व सोचा तक नहीं जा सकता था। शान्तिप्रिय उपयोगों की दिशा में रेडियो समस्थानिकों का धातु-विज्ञान के क्षेत्र में सबसे अधिक योगदान है। मानव की नाभिकीय शस्त्रों की होड़ यदि शान्तिमय उपयोगों के लिए शुरू हो जाय, तो परमाणु-शक्ति का उपयोग विनाश कार्यों की अपेक्षा मानव-हित के कार्यों में होने लगेगा। यह निस्सन्देह मानवता के लिए एक शुभ लक्षण होगा।

ग्राहकों से निवेदन

विज्ञान-लोक की एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे है। एक वर्ष का शुल्क ९ रुपये, दो वर्ष का १६ रुपये तथा तीन वर्ष का २० रुपये (विशेष रियायत) है।

पत्र-व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें। विज्ञान-लोक जिस लिफाफे में आपके पास आता है, उसी पर आपकी ग्राहक संख्या आपके पते के ऊपर लिखी रहती है।

पता बदलने की सूचना हमें एक मास पूर्व प्राप्त होनी चाहिये। इसके लिए नया और पुराना, दोनों पते भेजें। यदि छह मास से कम के लिए पता बदलवाना हो, तो कृपया अपने डाकखाने से इसकी व्यवस्था कर लें।

नये ग्राहकों को मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा किस अंक से विज्ञान-लोक भेजा जाय, यह अवश्य लिखना चाहिये।

पुराने ग्राहक अपनी सदस्यता का नवीयन (renewal) कराते समय मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा ग्राहक संख्या लिखने की कृपा करें।

विक्रय-व्यवस्थापक * विज्ञान-लोक * हास्पिटल रोड, आगरा-३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नींदघर

सुप्रकाश दत्त

डाक्टर की राय सुनकर अरुणा स्तम्भित रह गयी। कैंसर ? कैंसर रोग तो बड़े-बूढ़ों को होता है। मेरी उम्र तो साठ तक नहीं पहुंची है। कम से कम चालीस वर्ष के बाद यह स्थिति आती तो ठीक था। तभी डाक्टर ने पुनः कहा, "यद्यपि मैं सन्देह की स्थिति में नहीं हूं, फिर भी मैं अनुरोध करूंगा कि आप बायोप्सी करवा लीजिए और एक बार डाक्टर प्रधान को दिखा लीजिए। मैं डाक्टर प्रधान को सूचना दे दूंगा। लेकिन मेरा खयाल है कि वे आपको अच्छी तरह से जानते हैं, क्योंकि उन्हें प्राचीन साहित्य से काफी प्रेम है। दूसरी ओर आप प्राचीन साहित्य में डाक्टरेट प्राप्त कर चुकी हैं। आपके लेखो को वे बड़े ध्यान-पूर्वक पढ़ते हैं।" इतना कहकर डाक्टर हंस पड़ा।

अरुणा भी हंस पड़ी। इसके बाद वह अपने पति के साथ उनकी डिस्पेंसरी से बाहर निकल आयी।

वे फिर डाक्टर प्रधान के पास गये।

डाक्टर प्रधान बड़े तपाक से मिले। इसके बाद बोले, "आपसे मुलाकात करने की इच्छा बहुत दिनों से थी, पर इस रूप में नहीं। अगर हम दूसरे रूप में मिलते, तो अधिक प्रसन्नता होती। बहरहाल, बायोप्सी रिपोर्ट से सारा सन्देह दूर हो गया। समझ में नहीं आता कि आप लोग अपने स्वास्थ्य की जांच वर्ष में एक बार क्यों नहीं करवाते। इससे यह लाभ होता कि इस बीमारी का पता बहुत पहले चल जाता और उपचार करने में आसानी होती। इस समय स्थिति ऐसी हो गयी है कि न तो शल्य-चिकित्सा से कोई लाभ होगा और न रेडियेशन से ही।"

"और कोई उपाय नहीं है ?" अरुणा के पति अन्यमित्र ने पूछा।

"इस तरह के कैंसरों पर हर तरह के रसायनों का प्रयोग चल रहा है, पर सभी परीक्षामूलक स्थिति में हैं। आगे उनका क्या रूप होगा, यह बताना मुश्किल है। मुमकिन है, आगे उनका नतीजा अच्छा निकले, पर इस समय हम इस स्थिति में नहीं हैं कि इस रोग पर विजय पा सकें। सन्देह के वातावरण में रहने के बजाय अगर हम निश्चयमूलक जानकारी प्राप्त करें तो अच्छा रहेगा।"

इतना कहने के पश्चात् डाक्टर चुप हो गये और कुछ देर तक इन दोनों को गौर से देखते रहे। फिर बोले, "माफ कीजिएगा, मैं जरा स्पष्टवादी हूं। इसी लिए बहुत से सहयोगी मुझे नापसन्द करते हैं।"

अरुणा ने पूछा, "यह अच्छी बात है। बड़ी कृपा होगी अगर आप यह साफ तौर से मुझे बता दें कि इस तरह मैं अधिक से अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कितने दिनों तक जीवित रह सकूंगी ? सन्देहजक स्थिति की बनिस्पत अगर सही बात मालूम हो जाय, तो एक चिन्ता से मुक्त हो जाऊंगी।"

डाक्टर ने कहा, "मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूं कि मैं जरा स्पष्टवादी व्यक्ति हूं। मैं यही प्रयत्न करता हूं कि रोगी अपने रोग के बारे में सही जानकारी प्राप्त कर ले। प्रायः चिकित्सक इस राय से सहमत नहीं हैं। मुझे बहुत ही दुःख के साथ सूचित करना पड़ रहा है। यद्यपि मैं जानता हूं कि साहित्य को आपसे काफी आशाएं हैं। लेकिन आप अधिक से अधिक छह माह तक जीवित रह सकेंगी।"

अन्य मित्र ने कहा, "तो इसका अर्थ यह हुआ कि इस रोग से घुट-घुटकर मरें या आत्महत्या कर लें।"

डाक्टर ने कहा, "एक और मार्ग है, नींदघर में लम्बी नींद लेना।"

"यह क्या बला है ?" अरुणा पूछ बैठी।

डाक्टर ने कहा, "कोई खास बला नहीं है। शायद आप यह जानती होंगी कि संसार में ऐसे अनेक पशु हैं जो जाड़े के दिनों में सिर्फ सोते रहते हैं अर्थात् जाड़ा सोकर गुजार देते हैं। उस समय उनकी शारीरिक क्रिया बन्द रहती है, परन्तु वे जीवित रहते हैं। मानव को भी प्रचण्ड सरदी में नींदघर में सुला दिया जाता है। आप यहां पांच-दस साल के लिए निश्चिन्त होकर समाधि ले सकती हैं। शरीरिक क्रिया बन्द रहने पर कैंसरग्रस्त कोषों की वृद्धि नहीं होगी और उनके विभाजन की क्रिया भी बन्द रहेगी। कहने का मतलब है, इस समय आपके रोग की जो स्थिति है, उसमें वृद्धि नहीं होगी। तब तक आशा की जाती है कि चिकित्सा के क्षेत्र में इतनी प्रगति हो जायगी जिससे आपके कैंसर को ठीक किया जा सकेगा। उस वक्त जब जी चाहे आपको हम जगाकर आपरेशन कर सकेंगे। अगर आप राजी हों, तो मैं आपके लिए वहां प्रबन्ध करवा दूं। यह भी देखा गया है कि बहुत दिनों तक नींदघर में रहने के कारण बीमारी अपने-आप ठीक हो जाती है। अगर ऐसा हो जाय तब फिर क्या कहना !"

अरुणा और अन्य मित्र काफी देर तक चुपचाप बैठे रहे। अन्य मित्र ने इस सन्नाटे को भंग करते हुए कहा, "अरुणा मेरे जीवन में पन्द्रह वर्ष पहले आयी है। तब से लेकर अब तक हम एक-दूसरे से अलग नहीं हुए हैं। डाक्टर साहब, क्या मेरे लिए भी वहां एक सीट रिजर्व नहीं करवा सकते ?"

"मुख्यतः वहां ऐसे लोगों को ही रखा जाता है जिनकी बीमारी सख्त होती है और भविष्य में चिकित्सा-क्षेत्र में प्रगति होने पर उन्हें स्वस्थ बनाया जा सकता है। लेकिन इधर ऐसा प्रबन्ध भी किया गया है कि कुछ स्वस्थ व्यक्तियों को भी जांच के तौर पर रखा जाय।"

"अगर हम दोनों को वहां एक स्थान मिल सकें तब तो हम जायेंगे, वरना नहीं।" अरुणा बोली।

"लेकिन मुश्किल यह है कि जो अधिकार आपके लिए प्राप्त हो सकता है, वह आपके पति के लिए नहीं हो सकता। फिर भी जांच करने के बहाने मैं इन्हें भी वहां भेज सकता हूं, क्योंकि मुझे यह मालूम है कि अन्य मित्र महोदय अतीन्द्रिय-मनोविद्या में दक्ष हैं। शीत-निद्रा में व्यक्ति की मानसिक स्थिति कैसी होती है, इस विषय पर अभी तक किसी ने रिसर्च प्रारम्भ नहीं किया है। लिहाजा आपके पति महोदय को वहां भेजने में मुझे कोई कठिनाई नहीं होगी। इस सम्बन्ध में जो कुछ व्यय करना पड़ेगा, उसकी जिम्मेदारी मुझ पर रहेगी। लेकिन आपको एक कष्ट करना पड़ेगा। आज्ञा लेने के लिए एक बार दिल्ली जाना पड़ेगा। नींदघर श्रीनगर से कुछ दूर एक पहाड़ी क्षेत्र में बनाया गया है। नींदघर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

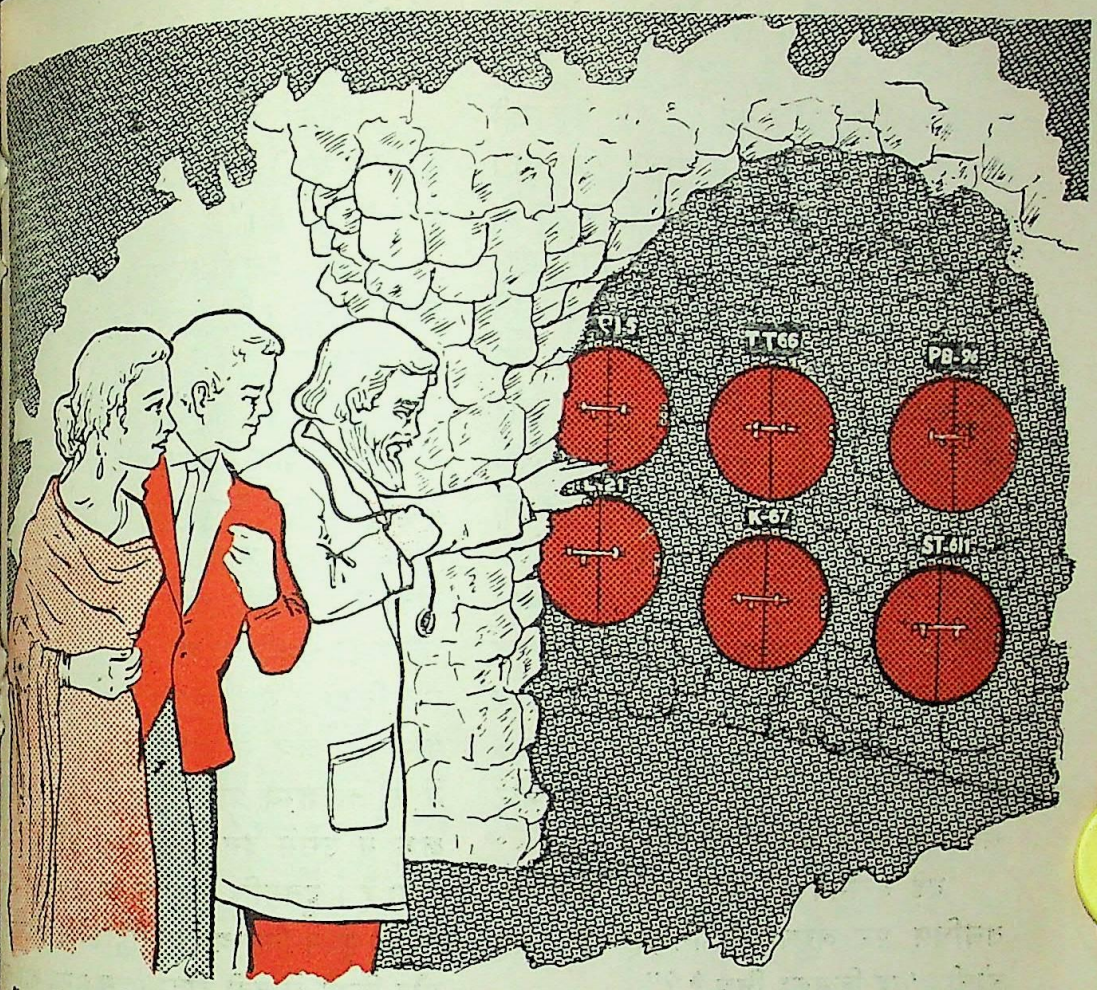

नींदघर कितना बृहद् है, यह बाहर से नहीं समझा जा सकता। पत्थर की गुफाएं काट-काटकरअनेक कोठरियां बनायी गयी हैं

के अध्यक्ष डा. माधव मुलगांवकर मेरे गुरु हैं। नींदघर के संस्थापक एवं संचालक वे स्वयं हैं। मुझे विश्वास है कि उनसे मुलाकात करने के बाद आपको प्रसन्नता होगी।" यहां कुछ देर के लिए डाक्टर चुप हो गये, फिर बोले, "मेरी हार्दिक कामना है कि आप वहां से स्वस्थ होकर लौटें। मुमकिन है कि तब तक मैं न रहूं।"

दो दिन में अपना सब काम निपटा लेने के बाद अरुणा अपने पति के साथ दिल्ली से आज्ञा-पत्र लेती हुई श्रीनगर पहुंच गयी। वहां आधे घण्टे के भीतर नींदघर पहुंच गयी।

नींद घर के ऋषितुल्य वृद्ध अध्यक्ष मुलगांवकर से परिचय हो जाने के बाद वे बोले, "चलिए, आप लोगों को नींदघर दिखा लाऊं।"

नींद घर कितना बृहद् है, यह बाहर से नहीं समझा जा सकता। भीतर प्रवेश करने के बाद इन दोनों ने देखा, पत्थर की गुफाएं काट-काटकर अनेक कोठरियां बनायी गयी हैं। सभी कमरे प्लास्टिक के हैं। विशाल शीशे के भीतर छोटी-छोटी कोठरियां हैं। प्रत्येक कोठरी में एक-एक व्यक्ति मृत्यु और जीवन के त्रिशंकु प्रदेश में प्रलम्बित है।

"क्यों, बेटी, तुम्हें डर तो नहीं लग रहा है?" स्नेह-भरे स्वर में मुलगांवकर ने पूछा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"माफ करना, बेटी, तुम्हें 'तुम' सम्बोधन से सम्बोधित कर रहा हूं, इसके लिए बुरा न मानोगी। जिन लोगों को तुम यहां देख रही हो, एक दिन इन्हें भी भय मालूम हुआ था। ये सभी जीवन को वापस पाना चाहते हैं, जीवन को मांगना चाहते हैं, इसी लिए यहां जीवन में विश्राम करने आये हैं, विदा लेने नहीं। यह सामने जो वृद्ध सोया है, यह यहां तीस साल यानी प्रारम्भ से है। तुम्हारा और इसका रोग एक ही प्रकार का है। तुम दोनों को एक साथ छुट्टी मिलेगी। दूर उधर जो बच्चा सोया हुआ है, उसके हृदय में एक ऐसी खराबी थी जिसका कोई इलाज नहीं था। आजकल इलाज सम्भव हो गया है। आज बीस साल से वह यहां है। दो सप्ताह बाद उसे यहां से छुट्टी दे दी जायगी। शीत एक दिन मानव के लिए मौत का कारण थी और आज हमें वह जीवन दान दे रही है।"

बड़े बरामदे को पार करते समय एक तलचित्र पर अरुणा की निगाह पड़ी। वह बोली, "यह किसका चित्र है?"

डा. मुलगांवकर ने कहा, 'ये हैं अलबर्ट फन एण्टीहाउजेन—उन्नीसवीं शताब्दी के महान वैज्ञानिक, जिनके अन्वेषण का परिणाम है यह नींदघर।"

अन्य मित्र ने कहा, "मैं पैरासाइकोलाजिस्ट हूं, पदार्थ-विज्ञान के बारे में मेरी जानकारी नहीं है।"

मुलगांवकर ने हंसते हुए कहा, "एण्टीहाउजेन स्वयं भी यह बात नहीं जानते थे कि एक दिन उनकी गवेषणा नींदघर का रूप ले लेगी। वे अपनी गवेषणा को 'हवुण्डार केलटे' कहते थे, अर्थात् जाड़े का जादू। तत्कालीन वैज्ञानिकों को उनकी इस खोज में किसी प्रकार की विशेषता नहीं मिली थी। उनकी खोज बहुत दिनों बाद उपयोग में आयी। एक प्रकार से हम यह कह सकते हैं कि सेमी कण्डक्टर (वैद्युतिक अर्द्धपरिवाही) के व्यापक व्यवहार के पश्चात् इसे अमल में लाया गया।"

"इसका अर्थ यह हुआ कि आपके द्वारा प्रयोग से एण्टीहाउजेन की गवेषणा का विशेष सम्बन्ध नहीं है।"

"नहीं, इसकी कल्पना तक नहीं की जा सकती। मूल कृतित्व एण्टीहाउजेन का है, हम इसे स्वीकार करते हैं। उन्होंने इस बात का पता लगाया था कि कोई भी विद्युतवाही एक चुम्बक क्षेत्र में लम्ब भाव से रखकर उसके भीतर से विद्युत्-प्रवाह किया जाय, तो दोनों के लम्ब भाव में उष्णता का तारतम्य होता है। एण्टीहाउजेन के विचार से यही 'हवुण्डार केलटे' का रूप। आगे चलकर हम वैज्ञानिकों ने यह अनुभव किया कि साधारण परिवाही क्षेत्र से प्राप्त होने वाली उष्णता में जो तारतम्य प्राप्त होता है, अर्द्धपरिवाही क्षेत्र में उससे दस लाख गुना अधिक प्राप्त होता है। द्रुतगति से शीत का उत्पादन और उसका सूक्ष्म नियन्त्रण एण्टीहाउजेन के अलावा और किसी से नहीं होता। इस समय जाड़े का जादू कितने ढंग से और कितने क्षेत्रों में उपयोग किया जा रहा है, अगर यह बताने लगूं, तो एक विश्वकोश बन जायगा। उसकी इस समय आवश्यकता भी नहीं है। यह रहा तुम लोगों का कमरा।"

अन्यमित्र ने कहा, "जीवन में हम दोनों एक-दूसरे से कभी अलग नहीं हुए। डाक्टर साहब, मुझे आशा है कि आपने हम दोनों के लिए एक साथ प्रबन्ध किया होगा।"

डा. मुलगांवकर ने कहा, "हां, ऐसा ही प्रबन्ध किया है। आप लोग मेरे साथ आइए।"

वे एक ओर से आगे बढ़ने लगे। उनके पीछे-पीछे अरुणा और अन्य मित्र चलने लगे। चलते-चलते अरुणा सोचने लगी 'क्या मैं फिर इस सुन्दर पृथ्वी को देख पाऊंगी? जीवन इतना सुन्दर है, इसकी अनुभूति इसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी नहीं हुई थी। रह-रहकर उसके मन में यह बात प्रतिध्वनित होने लगी, 'मैं सुन्दर जगत में जीना चाहती हूं, मरना नहीं।'

सहसा अपने को संयत करती हुई वह सोचने लगी, 'डाक्टर का कहना है, रोग असाध्य नहीं है। चिकित्सा-क्षेत्र में तेजी से प्रगति हो रही है। बहुत जल्द इसकी व्यवस्था हो जायगी। फिर मुझे किस बात का डर? मेरे साथ मेरे देवता भी तो हैं।' अपने पति के प्रति एक स्निग्ध प्रीति से उसका हृदय परिपूर्ण हो उठा।

डाक्टर साहब सहसा एक कमरे के पास आकर रुक गये। इसके बाद दरवाजा खोलते हुए बोले, "तुम्हारी शैय्या सोहागरात की तरह अमर हो और यह अल्पस्थायी हो—मेरी यही हार्दिक कामना है।"

अरुण और अन्य मित्र कमरे के भीतर जाकर अगल-बगल लेट गये। एक बार विदा के स्वरूप हाथ हिलाने के बाद डाक्टर ने दरवाजा बन्द कर दिया। इसके बाद स्विच को आन कर दिया।

प्रचण्ड शीत का अनुभव होते ही अरुणा ने अपना हाथ अन्य मित्र की ओर बढ़ाया। दोनों के हाथ आपस में मिले और उसके साथ ही दोनों बेहोश हो गये।

एक प्रयोग प्रारम्भ हो गया था। ●

चोर-डाकू पकड़ने वाले उपकरण

हैनोवर के वोरेल नामक एक इंजीनियर ने ऐसे उपकरण अविष्कृत किये हैं जिनसे चोरों और डाकुओं को परेशान किया जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति रास्ते में डाकुओं के हाथ आ जाय और वे उससे कहें कि वह तलाशी दे, तो एक विशेष उपकरण के पास होने पर यदि वह डाकुओं के कहने पर हाथ ऊपर उठाता है, तो उसका कोई नुकसान नहीं होगा। हाथ ऊपर उठाते ही यह उपकरण एक तेज अलार्म घड़ी की भांति बोल उठता है और आसपास व्यक्तियों तथा पुलिस को सचेत कर देता है।

वारेल ने एक रडार भी तैयार किया है। यह उपकरण एक फुट से छोटा होता है और रात भर सम्पत्ति पर पहरा देता रहता है। कोई व्यक्ति इसके १६ गज के पास आ जाय, तो इसकी घण्टी स्वतः ही बजने लगती है।

इस रडार के साथ यदि एक डायल लगा दिया जाय और फिर उसे एक तार से टेलीफोन से जोड़ दिया जाय, तो स्वतः पुलिस को टेलीफोन द्वारा यह खबर मिल जायेगी कि अमुक घर में चोर घुस आया है।

अल्ट्रासोनिक तरंग द्वारा आंखों की बीमारियों का इलाज

अल्ट्रासोनिक तरंग की एक उच्च बारम्बारता और कम तीव्रता वाली किरण के माध्यम से आंखों की जटिल बीमारियों का पता लगाना सम्भव हो गया है। यह किरण आंखों में पड़ गये बारीक कांच आदि के टुकड़ों का भी जिनका पता एक्स-रे परीक्षणों द्वारा नहीं लग सकता, पता लगाने में सफल रहती है।

यह विधि हानिकारक नहीं है।

स्टीयरिंग ह्वील के बिना कार

२९ वर्षीय इबेरहार्ड फ्रांज ने अपने दोनों हाथ एक दुर्घटना में खो दिये थे। हेडिलबर्ग की एक फर्म ने उसके लिए ऐसी सुविधापूर्ण कार का निर्माण कर दिया है जिसमें स्टीयरिंग ह्वील नहीं है। चलाने की सभी प्रक्रियाएं पैरों से ही सम्पन्न हो जाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीव-रसायन

विकास की भूमिका

नरेन्द्रसिंह माथुर

क्या रासायनिक सिद्धान्तों की सहायता से पृथ्वी पर उत्पन्न जीवन की व्याख्या की जा सकती है ? यह प्रश्न अत्यधिक उलझन-पूर्ण है। प्रायः सौ वर्ष पूर्व वैज्ञानिकों की यह धारणा थी कि जीवन स्वतोजनन का परिणाम है। न्यूटन, हारवे, दकार्त-जैसे वैज्ञानिक भी इस प्रचलित धारणा के समक्ष मौन रहे। उन्होंने कोई प्रश्न नहीं किया। तत्कालीन वैज्ञानिक इस बात पर सहमत थे कि जीव-धारियों से प्राप्त कार्बनिक पदार्थों तथा अन्य पदार्थों में अन्तर होता है, क्योंकि इन पदार्थों का निर्माण केवल जीवनी-शक्ति ही कर सकती है।

१९३० तक रासायनिक विश्लेषण का प्रचलन

किन्तु आज हमारे ज्ञान की सीमा विस्तृत हो चुकी है। १९२८ में व्होलर यूरिया का प्रयोगशाला में संश्लेषण प्राप्त करने में सफल हो गया। तत्पश्चात १८५६ में ब्रेथालाट ने फार्मिक अम्ल तथा एथीलीन का निर्माण किया, फिर अल्कोहल का भी। पहले ये जैविक पदार्थ माने जाते थे, किन्तु ब्रेथालाट ने प्रमाणित कर दिया कि जिस तरह रसायन-विज्ञान के अन्तर्गत अकार्बनिक पदार्थों का अध्ययन होता है, उसी प्रकार इन कार्बनिक पदार्थों का भी अध्ययन किया जा सकता है।

१८५९ में डार्विन के 'ओरिजिन आव स्पेसीज' के प्रकाशन के पश्चात् निम्न श्रेणी के जीवों से अत्यधिक विकसित जीवन के विकास का प्रश्न विवादास्पद बन गया। इसी मध्य शताब्दी में पाश्चर ने स्वतोजनन की अवहेलना की।

फिर भी वैज्ञानिकों ने रासायनिक सिद्धान्तों का प्रयोग जीव-विज्ञान-सम्बन्धी समस्याओं के समाधान के लिए किया। इस तरह एक नया विषय जीव-रसायन अस्तित्व में आया। फिर यह विकास की कई अवस्थाओं से गुजरता रहा। पहली अवस्था बहुत पुरानी कही जायेगी। यह उतनी ही पुरानी है जितना कार्बनिक रसायन। विकास की इस अवस्था के अन्तर्गत वैज्ञानिकों ने उन पदार्थों का अध्ययन किया जिनसे जीवन का निर्माण हुआ है। १८०० से पूर्व ही यूरिया, टारटैरिक अम्ल, आक्जैलिक अम्ल, यूरिक अम्ल, लैक्टिक अम्ल और ग्लूकोज का विभाजन विशुद्ध यौगिक के रूप में हो चुका था। १८२६ में शेव्रूल ने वसा की संरचना फैटी अम्ल के रूप में ज्ञात कर ली थी, और ग्लीसरीन की भी। कार्बनिक रसायन के अन्तर्गत अमीनो अम्ल जो प्रोटीन के निर्माता तत्त्व हैं, १८१० से ज्ञात रहे हैं। १९०१ में हापकिंस और कोल ने ट्राइप्टोफेन की खोज की, फिर भी प्रोटीन की विषम संरचना के सम्बन्ध में अधिक जानकारी नहीं प्राप्त हो सकी थी। १९२१ में हापकिंस ने शरीर, मांस और जिगर में ग्लुटाथिओन की महत्त्वपूर्ण खोज की। १९२६ में डच जीव-रसायनज्ञ जैनसन और डोनेथ ने विटामिन-बी का निर्माण किया। लेकिन यह उल्लेखनीय है कि जावा में बेरी-बेरी रोग का अध्ययन करते हुए नीदरलैंड के चिकित्सक आइक ने विटामिन-बी के अस्तित्व की ओर पहले ही इंगित किया था।

१९३० तक जीव-रसायन के अन्तर्गत रासायनिक विश्लेषण भलीभांति प्रचलित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। आगे चलकर रासायनिक विश्लेषण के आधार पर ही अनेक नये तथ्यों का उद्घाटन हुआ।

आज जीव-रसायन का पूर्ण विकास हो चुका है। प्रोटीन आज जीवनी-शक्ति के रूप में रहस्यपूर्ण नहीं है। रसाष्नज्ञ अब जीवद्रव्य की भौतिक संरचना से अनभिज्ञ नहीं हैं। पौधों में प्राकृतिक रूप से निर्मित होने वाला सेल्युलोज भी अब रहस्यपूर्ण नहीं है। और यह सब सम्भव हो पाया है इसलिए कि रसायन-शास्त्री और जीव-विज्ञानवेत्ता साथ-साथ अपने प्रयत्नों को नये-नये अनुसन्धानों के लिए प्रयोजित करते रहे हैं, और जीव-रसायन नामक विज्ञान की एक नयी शाखा के विकास में संलग्न रहे हैं।

१७८५ में लेवोशियर ने अपने प्रयोगों द्वारा यह मान्यता स्थापित की कि यदि पदार्थ की एक निश्चित मात्रा जलायी जाय या जन्तु के शरीर में उसका आक्सीकरण हो, तो शक्ति की एक निश्चित मात्रा प्राप्त होगी। उसने एक क्रान्तिकारी स्थापना दी : 'जीवन एक रासायनिक क्रिया है।' गे लुसा ने १८१५ में किण्वन की रासायनिक क्रिया का एक अनुभाविक सूत्र दिया :

$$(C_6H_{12}O_6 \rightarrow 2CO_2 + 2C_2H_5OH)$$

(ग्लूकोज) (कार्बन + अल्कोहल डाईआक्साइड)

फिर जैविक शक्ति की प्रकृति लगभग डेढ़ सौ वर्षों तक वैज्ञानिकों के अध्ययन का विषय बनी रही। केवल बीस-पच्चीस वर्ष पूर्व

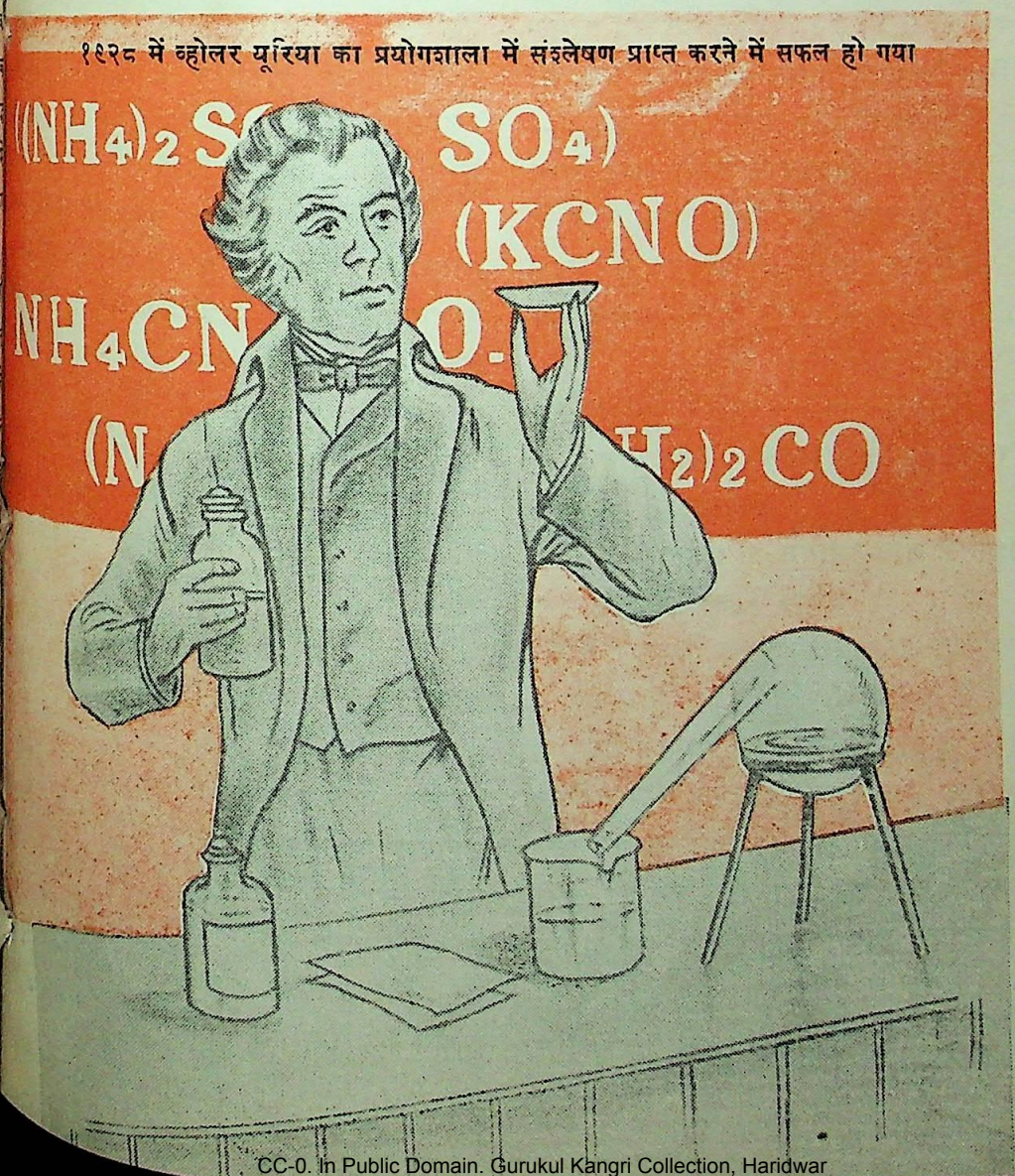

१९२८ में व्होलर यूरिया का प्रयोगशाला में संश्लेषण प्राप्त करने में सफल हो गया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही वे रासायनिक क्रियाएं अच्छी तरह समझी जा सकी थीं जिनकी सहायता से जीवित कोष शक्ति प्राप्त करता है।

एक जीवित कोष में जो क्रियाएं होती हैं उनके पार्श्व में रासायनिक शक्ति प्रमुख रहती है। यदि मुक्त शक्ति न हो, तो फिर जीवन भी नहीं होगा।

जीवनी-शक्ति की प्राचीन धारणा विशेष महत्त्व की नहीं है। हम कोषों के सम्बन्ध में काफी ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं और उनकी कार्यविधि से अनभिज्ञ नहीं हैं। कोष दो विधियों से शक्ति प्राप्त करता है—या तो भोजन के विभाजन द्वारा या उसके जलने से—पहली विधि किण्वन कहलाती है और दूसरी श्वसन। श्वसन बिलकुल आक्सीकरण की भांति है। १९३७ तक उस रासायनिक क्रिया पर पर्याप्त प्रकाश पड़ चुका था जो गे लुसा की धारणा का प्रमुख अंग थी। जैविक रूप से किण्वन के कोषों द्वारा निम्न प्राप्ति (ग्लूकोज का मुक्त आक्सीजन के प्रभाव में टूटता) और आक्सीकरण की उच्च प्राप्ति के मध्य जीव-रासायनिक सम्बन्ध की स्थापना हो गयी थी।

$$(C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \rightarrow 6CO_2 + 6H_2O)$$

(ग्लूकोज) + (आक्सीजन) (कार्बन डाई-आक्साइड) + (जल)

आधुनिक जीव-रसायन का प्रणेता

शीघ्र ही जैविक शक्ति-मुक्ति से सम्बन्धित अनेक रासायनिक विवरण वैज्ञानिकों ने एकत्र कर लिये। पर इसमें कम से कम दस वर्ष तो लगे ही। १९४८ तक मेयराफ ने करीब एक दर्जन एक-दूसरे से सम्बन्धित रासायनिक क्रियाओं का विवरण उपलब्ध कर लिया था। इन क्रियाओं में हम यह पाते हैं कि जैविक स्तर पर कोष किस तरह शक्ति प्राप्त करते हैं। लेकिन आधुनिक जीव-रसायन का प्रणेता मेयराफ का समकालीन प्रो. सर हैंस क्रेब्स कहा जायेगा। उसकी मान्यता के अनुसार हमारे श्वास की वायु भोजन में उपस्थित ईंधन की जलने में सहायता करती है। लेकिन भोजन में उपस्थित ईंधन के जलने से लपटें और धुआं पैदा नहीं होता।

क्रब चक्र रासायनिक परिवर्तनों का एक क्रम है जिसके अन्तर्गत प्राकृतिक रूप में परिवर्तन होते रहते हैं, और सामान्य तापक्रम पर शक्ति मुक्त होती रहती है।

एक महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान

लेकिन हाल ही में जीव-रसायन के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण अनुसन्धान हुआ। यह है हेक्सोज-मोनोफास्फेट चक्र। यह क्रब चक्र से किसी भी तरह कम अर्थपूर्ण नहीं है। यह एक अन्य प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत जैविक शक्ति प्राप्त होती है। विश्लेषणात्मक रसायन-शास्त्र, पेपर क्रोमोटोग्राफी आदि आधुनिक वैज्ञानिक विधियों की सहायता से जो प्रयोग हो रहे हैं, उनसे कुछ नये ही तथ्य सामने आ रहे हैं। यद्यपि आधुनिक अनुसन्धान बहुत उलझे हुए हैं लेकिन ज्ञान के नये क्षेत्रों को प्रकाशित करने वाले हैं। अब हमें यह मालूम हो गया है कि कुछ तत्त्व आक्सीडेटिव ग्लाइकोलैसिस (oxidative glycolysis) में भाग लेते हैं। इस सम्बन्ध में पहले हमारी बिलकुल जानकारी नहीं थी।

आज हम पाते हैं कि रसायन-शास्त्री जीव-विज्ञान में गहरी दिलचस्पी ले रहे हैं। उन्होंने जीवों में शक्ति के मुक्त होने के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण व्याख्या दी है। जीव-रसायन विकास की ओर अग्रसर है। यह सम्भावना अर्थहीन नहीं है कि किसी दिन जीव-रसायनज्ञ जीवन और मृत्यु के रहस्य को खोलकर रख देंगे, और प्रयोगशाला में कृत्रिम रूप से मानव का विकास कर लेंगे। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

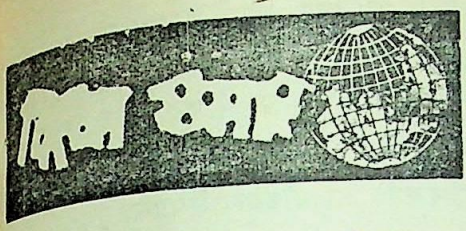

रूस की पुलिस : निष्क्रियता का आरोप

यद्यपि रूस की पुलिस अपनी दक्षता के लिए प्रसिद्ध है, पर रूस के पत्र 'सोवियट-स्काया रोसिया' ने आरोप लगाया है कि वह न तो अपराधों का पता लगा पाती है और न पता लगाना ही चाहती है।

उक्त पत्र ने यह भी कहा है कि जिन अपराधों का पता लगाने में वह अक्षम या अनिच्छुक होती है, उन्हें अपने कागजों में दर्ज भी नहीं करती। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि अधिकारी चाहते हैं, पुलिस कम से कम ९५ प्रतिशत अपराधों का पता लगाये और अपराधियों को दण्ड दिलवाये। इसी लिए पुलिस अपनी खानापूरी को अधिकारियों की इच्छा के अनुकूल रखने के लिए वैसे मामले को दर्ज ही नहीं करती जिनका पता लगाने में वह अपने को सक्षम नहीं पाती।

पैसा उगलने वाली मशीन

हेनोवर में पैसा उगलने वाली मशीन का प्रदर्शन हो रहा है। यह मशीन बैंक में हिसाब रखने वालों की सुविधा के लिए बनायी गयी है। आवश्यकता पड़ने पर, बैंक बन्द होने के बाद रात के समय भी लोग बैंक से पैसा निकाल सकते हैं।

यह मशीन बैंक के बरामदे में लगी होगी। बैंक में जिनका हिसाब है उनके पास हिसाब-सम्बन्धी एक छेददार कार्ड होगा। इस कार्ड को इसमें डालना होगा। यह मशीन स्वतः अपने मुंह से पैसा निकाल देगी।

यह उल्लेखनीय है कि इस मशीन से अधिक से अधिक एक निश्चित रकम ही निकाली जा सकती है।

कुत्ते का भी भरोसा नहीं

कुछ दिन पूर्व पूर्वी जरमनी के सैनिकों का एक कुत्ता सीमा पारकर पश्चिम जरमनी में चला गया था।

पूर्वी जरमनी के वे सैनिक जो पूर्वी और पश्चिम जरमनी की साम्प्रतिक विभाजन रेखा पर पहरा दिया करते हैं, अपने पास ऐसे कुत्ते रखते हैं जो पश्चिम जरमनी को भाग जाने वाले लोगों का पीछा करने के लिए प्रशिक्षित किये गये हैं। यह कुत्ता भी उन्हीं में से था

पश्चिम जरमनी के अधिकारियों ने अनेक बार इस कुत्ते को उनके स्वामियों के पास लौटाने की कोशिश की लेकिन पूर्वी जरमनी के अधिकारियों ने इसे इसलिए नहीं वापस लिया कि उनका खयाल था, यह कुत्ता भी अब तक पूंजीवाद के प्रभाव में आ गया होगा।

१९७२ का ओलम्पिक शहर म्युनिच

म्युनिच में सम्पन्न होने वाले ओलम्पिक खेलों के लिए होटलों की बाढ़-सी आ जायगी। इसमें सबसे विशाल होटल परियोजना एक ऐसे होटल समूह की है जिसके अन्तर्गत नगर के मध्य से केवल तीन किलोमीटर दूर बोगन-हासेन जिले में २,६०० पलंग वाले होटल का निर्माण किया जायेगा। २०,००० व्यक्तियों के कार्यालय, १,३०० फ्लैट, दुकानें, भूमिगत गैरेज, पार्क, स्कूल, चर्च आदि का भी निर्माण किया जायेगा। एरेबेला कम्पार्टमेण्ट होटल जो अमेरीकी बोर्डिंग हाउसेज प्रणाली पर बनाया जायेगा, एक चमत्कार-सा होगा। इससे यह सम्भव हो सकेगा कि इस २१ मंजिले होटल में १,४०० से १,६०० व्यक्तियों तक के लिए इसके ८५० फ्लैटों में से एक फ्लैट एक सप्ताह, एक मास या दो वर्ष तक कमरे की सेवा या उससे रहित किया जा सकेगा। इससे निस्सन्देह उन यात्रियों को लाभ पहुंचेगा जो म्युनिच में अधिक समय तक रहना चाहते हैं।

इस एरेबेला होटल के सामने और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्गों से जुड़ा हुआ पश्चिम जरमनी का सबसे बड़ा होटल बवेरिया बनाया जा रहा है। उसके एक भाग में कांफ्रेंस हाल रहेगा। बड़े हाल में १,५०० लोग बैठ सकेंगे।

प्रत्येक होटल के लिए दुकान, रेस्तरां, कैफे और बार का प्रबन्ध निचली मंजिल में किया गया है। इसके अतिरिक्त अन्य आधुनिक सुख-सुविधाएं भी उपलब्ध रहेंगी।

१९७२ के ओलम्पिक शहर म्युनिच में इमारतों का निर्माण भी तीव्रता से हो रहा है। यूरोप का सबसे ऊंचा टेलीविजन टावर (९५० फुट) इस वर्ष पूरी ऊंचाई तक पहुंचकर तैयार हो जायेगा। म्युनिच के साढ़े ग्यारह किलोमीटर के प्रथम भूमिगत भाग में सातवां हिस्सा शीघ्र ही तैयार हो जायेगा। पतझर में नये उपनगर के प्रथम खण्ड के तैयार हो जाने की आशा है। नगर के मध्य में मोटर यातायात और पैदल यात्रियों के लिए भूमिगत सुरंगें बनायी जायेंगी। रेलवे लाइन भी जमीन के अन्दर बिछायी जायेगी। नगर के इस भाग में यातायात पर पाबन्दी रहेगी।

जरमनी का बीरबल स्पिगल

भारत के बीरबल ही की भांति पश्चिम जरमनी में भी मध्य युग में एक बीरबल पैदा हुआ था। उसका नाम था टिल इयूलेन स्पिगल।

उसका देहान्त उत्तरी जरमनी के मोलिन में ६१६ वर्ष पूर्व हुआ था। १४ वीं शताब्दी का कोई भी समकालीन उसकी साहसिक कहानियों और लतीफों का मुकाबला नहीं कर सकता। कहानियों की उसकी अनगिनत पुस्तकें हैं। आज भी प्रति वर्ष संसार भर से ७०,००० पर्यटक सेण्ट निकोलस के चर्च में बनी उसकी कब्र पर श्रद्धांजलि अर्पित करने आते हैं।

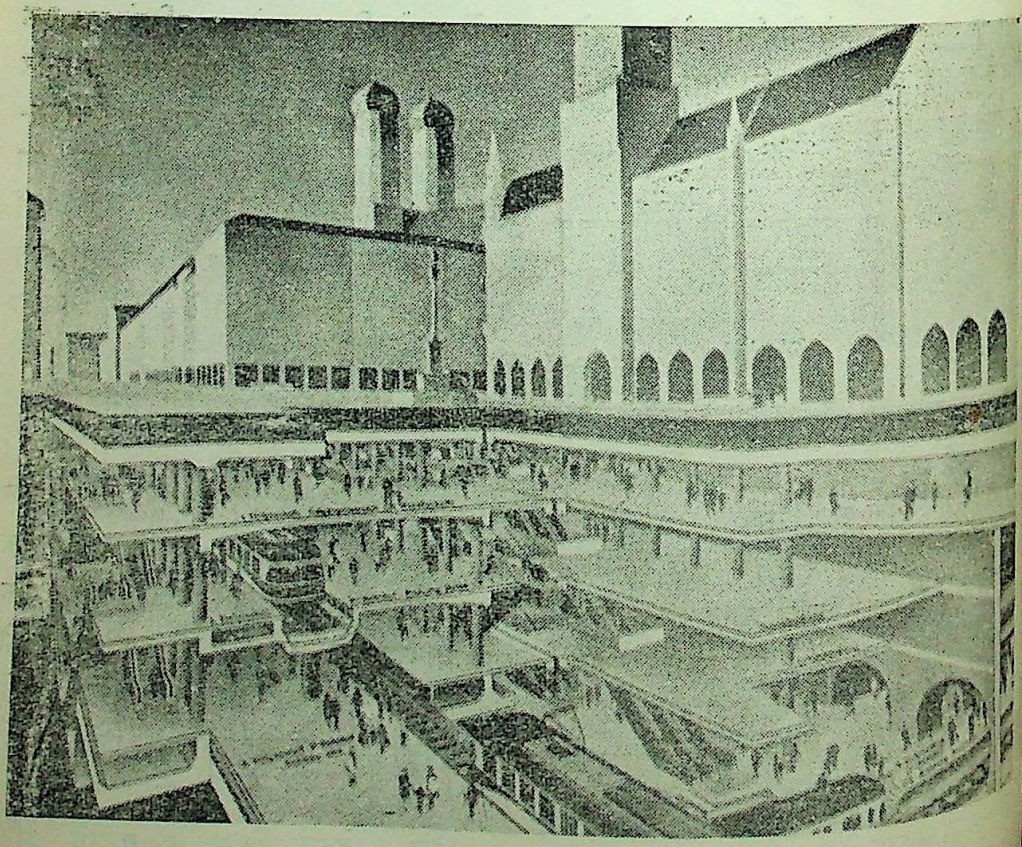

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजेन्द्रकुमार

शताब्दियों से वैज्ञानिक ब्रह्माण्ड की प्रकृति के सम्बन्ध में जिज्ञासु रहे हैं। उन्होंने अलग-अलग रूपों में ब्रह्माण्ड की कल्पना की और तत्सम्बन्धी सम्भावनाओं को प्रस्तुत किया। इन सम्भावनाओं में प्रमुख है आपेक्षिकता के सिद्धान्त की ब्रह्माण्ड-सम्बन्धी अभिकल्पना। यह विषय आपेक्षिकीय अन्तरिक्ष-विज्ञान के अन्तर्गत आता है। इससे पहले कि हम उस ब्रह्माण्ड को समझें जिसमें हमारा अस्तित्व है, हम ब्रह्माण्ड की उन स्थितियों के सम्बन्ध में जानेंगे जिनके अस्तित्वमय होने की सम्भावना है। सर्वप्रथम हम उस सम्भावित विश्व की कल्पना करेंगे जो एक आयाम (one dimension) और दो आयाम (two dimensions) में हो सकता है।

एक आयाम का विश्व

मान सकते हैं कि एक आयाम वाले विश्व में एक व्यक्ति रहता है। यह एक आयाम वाला विश्व एक सीधी रेखा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, और व्यक्ति इस तक ही सीमित है। वह अगलबगल या ऊपर-नीचे नहीं जा सकता। वह केवल आगे-पीछे चल सकता है। चूंकि व्यक्ति एक परिमित रेखा तक सीमित है जिसे नापा जा सकता है, इसलिए उसका विश्व परिमित है। और जबकि इस रेखा में अन्त के दो बिन्दु ऐसे हैं जहां से व्यक्ति आगे नहीं जा सकता, तो निश्चय ही उसका विश्व परिबद्ध भी है।

यदि एक व्यक्ति एक वृत्त की परिसीमा पर चल सकता है, तो भी वह केवल आगे-पीछे ही घूम सकेगा। लेकिन फिर भी इस तरह वह असीमित दूरी तय कर सकता है। वह बिना किसी बाधा के कभी न रुककर चलता रह सकता है। ऐसी अवस्था में उसका विश्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

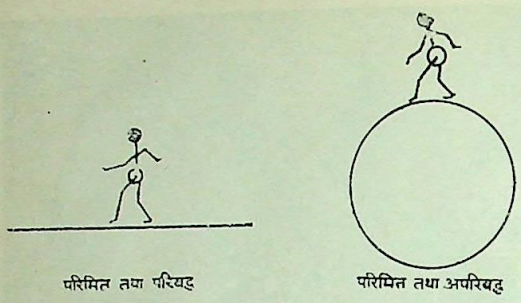

एक आयाम के (one dimensional) **विश्व**

अपरिबद्ध है, किन्तु क्योंकि वृत्त की लम्बाई सीमित है और वह नापी जा सकती है, इसलिए उसका विश्व परिमित है। अतः एक व्यक्ति जो एक वृत्त की परिसीमा में रहता है, एक आयाम के विश्व में रहता है, जो परिमित तथा अपरिबद्ध है।

यदि उस व्यक्ति का विश्व एक अपरिमित सीधी रेखा है या अपरिमित त्रिज्या वाला वृत्त है, तो इस स्थिति में उसका एक आयाम का विश्व अपरिमित तथा अपरिबद्ध होगा।

दो आयाम का विश्व

दो आयाम के विश्व में यदि एक व्यक्ति किसी वर्गाकार धरातल पर है, तो वह आगे-पीछे और इधर-उधर घूम सकता। लेकिन वह धरातल से अलग नहीं घूम सकता। क्योंकि वर्ग का क्षेत्रफल मापा जा सकता है, इसलिए उसका विश्व परिमित होगा। और क्योंकि वह वर्ग के किनारों से होता हुआ लगातार चलता नहीं रह सकता, इसलिए उसका विश्व परिबद्ध भी है। इस स्थिति में उसका दो आयाम का विश्व परिमित और परिबद्ध है।

यदि व्यक्ति गोलाकार धरातल पर है, तो इस स्थिति में उसका विश्व परिमित तथा अपरिबद्ध होगा—और यदि वह किसी असीमित लम्बाई-चौड़ाई के धरातल पर है, तो निस्सन्देह उसका विश्व अपरिमित तथा अपरिबद्ध होगा (लेकिन हम किसी चपटे विश्व की कल्पना नहीं कर सकते। यह कल्पना सैद्धान्तिक रूप से अनुपयुक्त होगी)।

तीन आयाम का विश्व

तीन आयाम के विश्व का उदाहरण [illegible] हो सकता है कि व्यक्ति शून्य में अकेला है। यदि वह किसी गोलाकार वस्तु के बीच [illegible] शून्य में रखा जाता है, तो उसका विश्व परिमित तथा परिबद्ध होगा। परिमित इसलिए कि गोलाकार स्थान का आयतन परिमित है और परिबद्ध इसलिए कि वह एक सीधी रेखा में लगातार आगे बढ़ता नहीं रह सकता। गोलाकार दीवारें उसे रोक लेंगी। लेकिन तीन आयाम के इस विश्व में वह ऊपर-नीचे और इधर-उधर घूम सकता है।

तीन आयाम के परिमित और अपरिबद्ध विश्व की कल्पना इस उदाहरण से कर सकते हैं कि व्यक्ति ऐसे शून्य में अपने पूरे परिवार के साथ रह रहा है जिसमें कोई भौतिक अवरोध नहीं है। यह भी कल्पना कर सकते हैं कि व्यक्ति बहुत-से व्यक्तियों के समूह के साथ है और कोई भी व्यक्ति उस समूह से पृथक् नहीं हो सकता, क्योंकि उस समूह की गुरुत्वाकर्षणशक्ति सभी व्यक्तियों को प्रभावित करेगी। और यह भी मान सकते हैं कि गुरुत्वाकर्षण के अधिक प्रभाव के कारण प्रकाश किरणें व्यक्ति-समूह से अलग नहीं हो सकेंगी। यदि कोई व्यक्ति समूह से पृथक् शून्य में देखता है, तो निश्चिय ही दृष्टि की रेखा मुड़कर समूह की ओर आ जायेगी और व्यक्ति समूह के आगे कुछ देख नहीं पायेगा। सभी व्यक्ति अपने सामने अपने समूह के केन्द्र को देखेंगे। व्यक्ति किसी भौतिक अवरोध के प्रति चैतन्य

दो आयाम के (Two-dimensional) **विश्व**

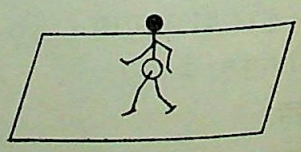

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं होंगे, क्योंकि वे एक अपरिबद्ध विश्व में रहते हैं। लेकिन उनका विश्व परिमित है, क्योंकि समूह का आकार परिमित है, और समूह ही विश्व है।

तीन आयाम के अपरिमित और अपरिबद्ध विश्व का उदाहरण यह हो सकता है कि व्यक्ति अपरिमित शून्य में विचरण करने के लिए स्वतन्त्र है और उस पर किसी गुरुत्वीय द्रव्य-मान का प्रभाव नहीं पड़ता, न ही किसी अन्य शक्ति से वह प्रभावित होता है। इस स्थिति में यदि व्यक्ति के अतिरिक्त व्यक्तियों का समूह भी हो, तो भी विश्व अपरिमित और अपरिबद्ध होगा।

न्यूटन का ब्रह्माण्ड

ब्रह्माण्ड के स्वरूप की न्यूटन की व्याख्या उल्लेखनीय है। उसने गुरुत्वाकर्षण के नियमों के अन्तर्गत ब्रह्माण्ड का स्वरूप निर्धारित किया। उसकी धारणा थी कि ब्रह्माण्ड के केन्द्र में सभी नक्षत्र और आकाशगंगाएं एकत्र हैं। शेष भाग शून्य है। दूसरे शब्दों में यह कि अनन्त शून्य में ब्रह्माण्ड एक प्रायद्वीप की भांति है। उपरोक्त पंक्तियों में विश्व के अस्तित्व की जिन सम्भावनाओं का उल्लेख किया जा चुका है, उनके अनुसार न्यूटन का ब्रह्माण्ड परिमित और परिबद्ध था।

केवल दार्शनिक आधार पर ही न्यूटन के सिद्धान्तों का विरोध हुआ। यह एक तथ्य है कि नक्षत्रों से प्रकाश और शक्ति सदैव विकरित होती रहती है। यदि न्यूटन की ब्रह्माण्ड-सम्बन्धी धारणा स्वीकार्य हो, तो इसका अर्थ यह हुआ कि नक्षत्रों से विकरित प्रकाश और शक्ति अनन्त शून्य में चली जायेगी और लौटेगी नहीं। तब यह बात प्रत्यक्ष हो जाती है कि ब्रह्माण्ड की शक्ति का इसी तरह ह्रास होता रहेगा और एक दिन ब्रह्माण्ड का अन्त हो जायेगा। बौद्धिक स्तर पर यह भी स्वीकार करना न्यूटन के

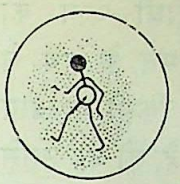

परिमित तथा परिबद्ध

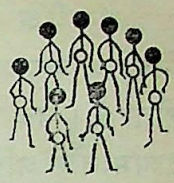

परिमित तथा अपरिबद्ध

तीन आयाम के (three dimensional) विश्व

समकालीन बुद्धिजीवियों को असम्भव लगा कि नक्षत्रों और आकाशगंगाओं के परे महत् शून्य है जिसका प्रयोजन और विस्तार अज्ञेय है।

आपेक्षिकता के सामान्य सिद्धान्तों के आधार पर आइन्स्टीन ने यह प्रमाणित किया कि न्यूटन के ब्रह्माण्ड का अस्तित्व असम्भव है, और कम से कम कुछ गणितीय कारणों से। उसने यह प्रतिपादित किया कि ऐसे ब्रह्माण्ड में पदार्थ का औसत घनत्व निश्चय ही शून्य के निकट होगा। न्यूटन के सिद्धान्तों का आधार था कि प्रकाश सीधी रेखा में चलता है। किन्तु सामान्यतः यह सिद्धान्त रूप में सत्य है कि प्रकाश किरणें पिण्डों के गुरुत्वाकर्षण के कारण मुड़ जाती हैं। आपेक्षिकता के सामान्य सिद्धान्त के आधार पर आइन्स्टीन एक निष्कर्ष तक पहुंचा कि हमारा ब्रह्माण्ड परिमित और अपरिबद्ध है।

हमारा ब्रह्माण्ड : परिमित और अपरिबद्ध

हमारा ब्रह्माण्ड एक-दो आयाम वाले परिमित और अपरिबद्ध विश्व के धरातल की भांति है। एक पिण्ड के धरातल पर यदि हम सीधी रेखा में चलें, तो चलते हुए वहीं लौट आयेंगे जहां से हमने चलना प्रारम्भ किया था। पृथ्वी पर की सीधी रेखा पृथ्वी की सतह पर चलती है। पृथ्वी की सतह वृत्ताकार है, लेकिन साधारणतः इसे हम नहीं जान सकते, क्योंकि झुकाव बहुत थोड़ा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तरिक्ष में किसी सीधी रेखा का निर्धारण प्रकाश-किरण के गमन के पथ से होता है। जब प्रकाश-किरण किसी गुरुत्वीय द्रव्यमान से अधिक दूर होती है, तो वह उससे प्रभावित नहीं होती, किन्तु यदि निकट में पदार्थ की मात्रा हो, तो वह उससे अवश्य प्रभावित होगी। उधर ही झुक जायेगी। यही कारण है कि अन्तरिक्ष को भी वक्र माना गया है। लेकिन अन्तरिक्ष की यह बक्रता सामान्यतः बक्रता नहीं है। केवल यह कि गुरुत्वीय द्रव्य-मान की ओर प्रकाश-किरण झुक जाती है।

गुरुत्वीय द्रव्यमान का प्रकाश किरणों को अपनी ओर आकर्षित कर लेने का गुण यह व्याख्या प्रस्तुत करता है कि हमारा ब्रह्माण्ड अपरिबद्ध है। साधारणतः प्रकाश किरणें अन्तरिक्ष में एक सीधी रेखा में चलती हैं, लेकिन जहां गुरुत्वीय द्रव्यमान होते हैं, वहां वे आकर्षित हो जाती हैं। यदि कोई प्रकाश-किरण लगातार गुरुत्वीय-द्रव्यमानों की ओर आकर्षित होकर अन्तरिक्ष में यात्रा करती रहे, तो निस्सन्देह वह पूरी तरह मुड़कर वहीं पहुंचेगी जहां से उसने यात्रा प्रारम्भ की थी। यह ठीक उसी तरह है कि एक व्यक्ति पृथ्वी पर एक बिन्दु से चलता है और लौटकर वहीं आ जाता है। एक अन्तरिक्ष यात्री भी ब्रह्माण्ड में घूमता हुआ अपनी यात्रा प्रारम्भ करने के स्थान पर आ जायेगा। उसकी यात्रा एक बहुत बड़े वृत्त में होगी। अन्तरिक्ष में एक सीधी रेखा एक प्रकाश किरण का मार्ग है जो सीधी हो सकती है, या झुकी हुई या दोनों।

क्या हमारे ब्रह्माण्ड का कोई अन्तिम सिरा है ?

ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में यदि आइन्स्टीन की धारणा मान्य है, तो एक व्यक्ति जो पृथ्वी से चलकर अन्तरिक्ष में लगातार यात्रा करता है, पुनः पृथ्वी पर लौट आयेगा। और चूंकि वह इस तरह लगातार अन्तरिक्ष में विचरण करता रह सकता है, इसलिए ब्रह्माण्ड अपरिबद्ध है।

किन्तु ब्रह्माण्ड अपरिमित नहीं है। यदि एक व्यक्ति पृथ्वी के किसी स्थान से अन्तरिक्ष में यात्रा प्रारम्भ करता है, और लौटकर फिर उसी स्थान पर आ जाता है, तो उसकी यात्रा का पथ सरलता से मापा जा सकता है।

ब्रह्माण्ड का एक भौतिक चित्र यह हो सकता है—अन्तरिक्ष के असीम विस्तार में नक्षत्र और आकाशगंगाएं हैं और ये समान सघनता में फैली हुई हैं। हमारे ब्रह्माण्ड का कोई अन्तिम सिरा नहीं है, क्योंकि कहीं से अन्तरिक्ष में चलें, फिर वहीं आ जाते हैं। वास्तव में ब्रह्माण्ड अपने आप में अन्तिम है।

आइन्स्टीन के ब्रह्माण्ड को चित्र की सहायता से सरलता से समझ सकते हैं। केन्द्र में पृथ्वी है। लेकिन यह अनिवार्यतः सत्य नहीं है कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड के केन्द्र में है। (वास्तव में ब्रह्माण्ड का कोई केन्द्र नहीं हो सकता, क्योंकि दो आयाम की गोलाकार सतह पर किसी केन्द्र का प्रश्न नहीं उठता।) यदि केन्द्रीय पृथ्वी से व्यक्ति अन्तरिक्ष रेखा पर यात्रा करे, तो वह निरन्तर दूर होता जायगा। गोलाकार सतह पर यह उसी भांति है कि एक व्यक्ति यात्रा प्रारम्भ करने के बिन्दु से लगातार अलग होता जाता है। वह बिन्दु यात्रा की अधिकतम दूरी होगी जहां से यात्रा आरम्भ करने की दिशा की विपरीत दिशा प्रारम्भ होती है। और यदि व्यक्ति यात्रा करता ही रहे, तो अन्ततः पायेगा कि पृथ्वी की ही ओर वह बढ़ रहा है। (चित्र में अन्तरिक्ष रेखाएं क्रमशः दूसरी पृथ्वी की ओर झुकी दिखायी गयी हैं।) अलग-अलग प्रत्येक पृथ्वी केन्द्र में हमारी पृथ्वी को प्रदर्शित करती है, लेकिन उस अन्तरिक्ष यात्री को ब्रह्माण्ड की प्रकृति का पता नहीं है, प्रत्येक पृथ्वी अपनी पृथ्वी के अनुरूप ही लगेगी और जब वह अपनी पृथ्वी पर आ जायगा, तो उसका भ्रम दूर होगा। दो आयाम के विश्व में अन्तरिक्ष यात्री यात्रा प्रारम्भ करने का स्थान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने सामने देखता है, जबकि वह यह जानता है, वह स्थान पीछे छोड़ आया है। अगर वह अपने विश्व की प्रकृति समझ नहीं पाता, तो उसे लगेगा कि यात्रा प्रारम्भ करने के स्थान के अनुरूप ही कोई स्थान वह देख रहा है।

पृथ्वी से अधिकतम दूरी ब्रह्माण्ड की त्रिज्या हो सकती है। गोलाकार सतह के सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि किसी भी बिन्दु से अधिकतम दूरी व्यासतः अभिमुख बिन्दु है। इन दो बिन्दुओं के बीच की दूरी मुख्यतः त्रिज्या पर निर्भर करती है। इसका पृथ्वी पर उपयुक्ततम उदाहरण उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी-ध्रुव की दूरी हो सकती है। चित्र में ब्रह्माण्ड की त्रिज्या एक बड़े वृत्त की त्रिज्या है। ब्रह्माण्ड के चार आयाम हैं—तीन दिक् के और एक काल का। वह मूलतत्त्व जिससे ब्रह्माण्ड का जन्म होता है, शून्य दिक् है। यह शून्य काल से सम्पृक्त है।

ब्रह्माण्ड का अर्द्धव्यास : एक अभिकल्पना

आइन्स्टीन की धारणा थी कि असीम मण्डलाकार ब्रह्माण्ड एक विद्युत्-अणु से अधिक स्पष्ट रूप में नहीं देखा जा सकता, लेकिन विद्युत-अणु के अस्तित्व की भांति इसके अस्तित्व को गणित के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है। ब्रह्माण्ड के अर्द्धव्यास का अनुमान लगाने के लिए यह आवश्यक है कि इसकी वक्रता निश्चित की जाय। चूंकि दिक् की वक्रता उसके अन्दर निहित पदार्थों से निश्चित होती है, अतः ब्रह्माण्ड से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान ब्रह्माण्ड के पदार्थ की औसत सघानता ज्ञात करने से ही सम्भव है।

हब्ल के अन्तरिक्ष-सम्बन्धी निष्कर्षों के अनुसार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में प्रत्येक घन सेंटीमीटर दिक् में ०००००००००००००००००००००००००००००१ ग्राम पदार्थ है। आइन्स्टीन के समीकरणों में प्रयुक्त होकर यह संख्या ब्रह्माण्ड की वक्रता के सम्बन्ध में

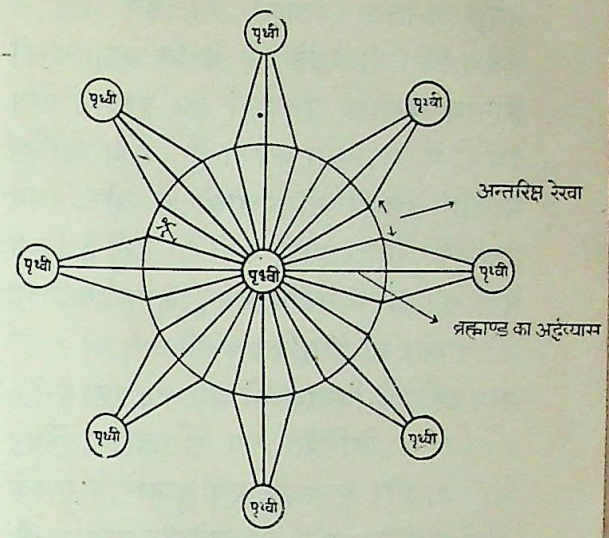

हमारे ब्रह्माण्ड का एक सम्भावित प्रस्तुतीकरण

महत्त्वपूर्ण जानकारी देती है और इससे यह भी ज्ञात होता है कि ब्रह्माण्ड का अर्द्धव्यास २,१ ०,००,००,००,००,००,००,००,००,००,००० मील है।

आइन्स्टीन का ब्रह्माण्ड अपरिमित नहीं है किन्तु अत्यन्त विशाल है। इसकी विशालता का अनुमान इससे ही लगा सकते हैं कि सूर्य की एक किरण यदि १,८६,००० मील प्रति सेकण्ड की गति से ब्रह्माण्ड की परिक्रमा करे, तो फिर उसे अपने चलने के स्थान तक पहुंचने में २० अरब वर्ष से कुछ अधिक समय लगेगा।

सापेक्षता के सामान्य सिद्धान्त के अनुसार ब्रह्माण्ड परिमित तथा अपरिबद्ध है। किन्तु क्या यह सत्य है या सत्य नहीं है? हो सकता है इस प्रश्न का उत्तर देना कभी न सम्भव हो, लेकिन यह अनुमान कर सकते हैं कि बहुत-बहुत वर्षों के बाद एक वैज्ञानिक जब पृथ्वी पर से अन्तरिक्ष में देखेगा, तो सम्भवतः उसे अपनी पृथ्वी भी दिखायी देगी, क्योंकि पृथ्वी से चलकर प्रकाश उस समय तक पृथ्वी पर लौट चुका होगा।

किन्तु आइन्स्टीन का ब्रह्माण्ड स्थिर है। आइन्स्टीन द्वारा विश्व-विज्ञान के उद्घाटन के बाद ही विरोधी सिद्धान्त सामने आये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तरिक्ष-विज्ञानवेताओं को इस बात के लक्षण दिखायी पड़ने लगे थे कि ब्रह्माण्ड की अन्तिम सीमाओं पर जहां तक दूरदर्शी यन्त्र देखने में सहायता करता हैं, बाह्य ज्योतिर्मालाएं हमारी सौरप्रणाली से और स्वयं एक-दूसरे से दूर होती चली जा रही हैं। इस तरह की गतिविधि निश्चय ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की वक्रता को प्रभावित करेगी।

क्या ब्रह्माण्ड विनाश की ओर बढ़ रहा है ?

अतः निश्चित रूप से ब्रह्माण्ड स्थिर नहीं है, और सम्भवतः एक गुब्बारे के रूप में फैल रहा है। और यह धब्बेदार गुब्बारा है, लेकिन धब्बे नहीं फैल रहे हैं। हम भौतिक विस्तार को अनुभव नहीं कर सकते, क्योंकि जिस गुब्बारे की कल्पना हमने की है, उस पर धब्बे सिले हुए-से हैं। बीच का क्षेत्र बढ़ जाता है लेकिन धब्बे नहीं। पदार्थीय वस्तुएं अपना विस्तार स्थिर रखती हैं, किन्तु उनके बीच का दिक् विस्तृत होता जाता है।

चूंकि सभी दूर की ज्योतिर्मालाएं हमसे और एक-दूसरे से दूर होती जा रही हैं, इसलिए यह भी अनुमान लगाया जा सकता है कि वे किसी समय एक राशि के रूप में रही होंगी। ज्योतिर्मालाओं के अध्ययन से यह प्रकट होता है कि प्रायः २० अरब वर्ष पूर्व वे इस सिकुड़े हुए ब्रह्माण्ड के केन्द्र से अलग हुई होंगी और अपनी पृथक-पृथक यात्रा पर चल पड़ी होंगी। वास्तव में जिस गति से दूरस्थ ज्योतिर्मालाएं शून्य में विलीन होती जा रही हैं, वह अकल्पनीय है।

डा. आर. सी. टोलमैन का ब्रह्माण्डीय विस्तार के सम्बन्ध में सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण है। उनकी धारणा है कि ब्रह्माण्डीय विस्तार सम्भवतः एक अस्थायी अवस्था है और सम्भव है, कुछ काल बाद सिकुड़न की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाय।

किन्तु आइन्स्टीन की धारणा और है। उसने यह स्वीकार किया है कि ब्रह्माण्ड की वक्रता उसके अन्दर निहित पदार्थ पर निर्भर करती है। यह सत्य है कि ब्रह्माण्ड में कहीं पदार्थ का परिमाण निरन्तर बदलता रहता है किन्तु यह परिवर्तन केवल एक दिशा में—क्षय की दिशा में—होता लगता है। प्रकृति के सभी तत्त्वों की एक प्रमुख अभिव्यक्ति यह है कि ब्रह्माण्ड का सारतत्त्व और शक्ति अथाह शून्य में छितरायी जा रही है। पदार्थ निरन्तर प्रकाश किरण में परिवर्तित होता जा रहा है। सौरशक्ति शून्य दिक् में खोती जा रही है।

इसका अर्थ यह हुआ कि ब्रह्माण्ड निरन्तर विनाश (ताप-मृत्यु) की ओर बढ़ रहा है। कुछ अरब वर्षों के बाद ब्रह्माण्ड की सभी वर्तमान कार्य-प्रणालियां रुक जायेंगी, तब न प्रकाश का अस्तित्व रहेगा, न जीवन का—मात्र नित्य स्थिरता रह जायेगी। उस समय काल भी समाप्त हो जायेगा। इस परिणाम से बचने का सम्भवतः कोई उपाय नहीं है।

क्या ब्रह्माण्ड में कहीं पुनर्निर्माण हो रहा है

तो भी कुछ सिद्धान्तवादियों की यह प्रबल धारणा है कि ब्रह्माण्ड कहीं अपना पुनर्निर्माण कर रहा है। वे आइन्स्टीन के राशि और शक्ति की समानता-सम्बन्धी सिद्धान्त का उपयोग अपनी धारणा की पुष्टि के लिए करते हैं। उनका विश्वास है कि दिक् में विस्तृत विकिरण पदार्थ के कणों के निर्माण में संलग्न हैं और कालान्तर में वे अन्तरिक्ष की प्रणालियां का रूप ले लेंगे। इस तरह ब्रह्माण्ड अनन्त काल तक चलता रहेगा।

फिर भी एक समस्या शेष रहती है। एक अमर ब्रह्माण्ड की कल्पना कर लेने के बाद भी इसके आरम्भिक उद्भव की समस्या शेष रहती है। तब इसका उद्भव-काल अनन्त तक चला जाता है। वैज्ञानिकों ने गणित की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहायता से ज्योतिर्मालाओं से लेकर परमाणु में निहित तत्त्वों के बारे में जो ज्ञान प्राप्त किया है उसके अनुसार भी यह धारणा प्रमुख रहती है कि आरम्भ में कोई एक वस्तु अवश्य रही होगी--वह वस्तु ब्रह्माण्डीय तत्त्व भी हो सकती है।

और बाइबिल का यह उद्धरण भी कम महत्वपूर्ण नहीं है: 'सृष्टि के प्रारम्भ में प्रकाश था।' निश्चय ही प्रकाश रहा होगा। किन्तु यह प्रकाश उच्च शक्ति की एक्स और गामा किरणों का रहा होगा। साधारण पदार्थ के परमाणु बहुत ही कम रहे होंगे और प्रकाश की शक्ति से इधर-उधर बिखर गये होंगे। इस धारणा के आधार पर हब्बल ने यह मान्यता दी कि ब्रह्माण्ड पहले संकुचित था, बाद में उसका प्रसार होने लगा। बेल्जियन वैज्ञानिक जार्ज्स लेमाइत्र ही सर्वप्रथम सापेक्षता सिद्धान्त-सम्मत व्याख्या नीहारिकाओं की बढ़ती हुई प्रणाली के सम्बन्ध में दे पाया।

आइन्स्टीन ने एक नयी व्याख्या दी कि ब्रह्माण्ड स्थिर है और गोलाकार है। किन्तु एक रूसी गणितज्ञ फ्रिडमैन ने यह घोषित किया कि आइन्स्टीन गलती से यह स्थापना दे गया, क्योंकि उसने एक स्थल पर गणित-सम्बन्धी भूल कर दी थी। फ्रिडमैन ने संकुचन और प्रसारण वाले ब्रह्माण्डों के एक वर्ग का अस्तित्व स्थापित किया।

लेकिन आज तक वैज्ञानिक किसी एक निश्चित धारणा को अपना नहीं सके हैं, और बहुत आशा है, भविष्य में ब्रह्माण्ड की एक नयी ही व्याख्या से हमारा परिचय हो।

बुध की धुरी की दीर्घवृत्तात्मकता और एक निश्चित झुकाव

आइन्स्टीन ने गणितीय आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि नक्षत्र तथा अन्य खगोलीय पदार्थ अपने आस-पास के आकाशमण्डल में निजी तत्त्व बिखेरते हैं, और गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र में किसी वस्तु का मार्ग इस क्षेत्र की ज्यामितीय अवस्था द्वारा निर्धारित होता है। आइन्स्टीन के गुरुत्वाकर्षण-सम्बन्धी नियम मुख्यतः दिक्-काल अखण्डता के क्षेत्रीय तत्त्वों की व्याख्या देते हैं। इन नियमों का एक भाग गुरुत्वाकर्षण-सम्पन्न वस्तु की राशि का उसके परिवेश के ढांचे से सम्बन्ध व्यक्त करता है। ऐसे नियमों के अतिरिक्त अन्य नियम गतिशील वस्तुओं के भागों की व्याख्या करते हैं।

फिर भी यह कहना उचित नहीं होगा कि आइन्स्टीन के गुरुत्वाकर्षण-सम्बन्धी सिद्धान्त केवल गणितीय उलझन हैं। इनका आधार वे गूढ़ धारणाएं है जो ब्रह्माण्ड से सम्बन्धित हैं। इन धारणाओं में एक है—ब्रह्माण्ड में स्वतन्त्र पदार्थ स्वतन्त्र दिक् और काल में स्थित नहीं है। वास्तव में यह एक ऐसी अखण्डता है जिसका परिवर्तन एवं विकृति सम्भव है।

यद्यपि आइन्स्टीन के गुरुत्वाकर्षण सम्बन्धी सिद्धान्त उसी परिणाम तक पहुंचते हैं जिस तक न्यूटन के सिद्धान्त, फिर भी आइन्स्टीन के सिद्धान्तों द्वारा कुछ नये तथ्यों का उद्घाटन हुआ है।

आइन्स्टीन के सिद्धान्तों ने बुध ग्रह के अपने मार्ग से हर वर्ष हट जाने के सम्बन्ध में जो व्याख्या की है, वह विशेष महत्त्व की है।

अन्य ग्रहों की तुलना में बुध ग्रह सूर्य के सबसे निकट है। यह अपेक्षाकृत बहुत छोटा ग्रह है और कक्षा में चक्कर काटता है। आइन्स्टीन के सिद्धान्तों की स्थापना है, सूर्य के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र की समानता और बुध की तीव्र गति में अन्तर है। इसी कारण बुध की धुरी की दीर्घवृत्तात्मकता ३०,०० ००० वर्षों में एक चक्कर के हिसाब से सूर्य के चारों ओर एक निश्चित झुकाव के लिए बाध्य हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupil how to write sentences correctly. He learns by doing, and by doing *correctly*.
- Exercises are so arranged that even a slow child is sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The Work Books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I.....Price : Re. 0·80
Book II.....Price : Re. 1·00
Book III.....Price : Re. 1·20

For further enquiries please write to :

SRI RAM MEHRA & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA-3

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा. हर्ष प्रियदर्शी

फादर नीडहम महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति था। वह उन तमाम तौर-तरीकों से भलीभांति परिचित था जो असत्य को भी सत्य रूप देने में समर्थ होते हैं। एक ओर जहां लैजेरो की घोषणा बलवती हो रही थी, वहीं दूसरी ओर फादर नीडहम अपने स्वतोजनन को पुनर्जीवित करने के लिए कुछ नये तरीकों पर विचार कर रहा था। नीडहम ने अभी अपनी पराजय स्वीकार नहीं की थी। लैजेरो के प्रयोगों को मिथ्या सिद्ध करने के लिए फादर नीडहम ने इंग्लैंड से पेरिस को प्रयाण किया। पेरिस उन दिनों यूरोपीय विज्ञान का केन्द्र बन रहा था। पेरिस आकर फादर नीडहम ने काउण्ट बूफोन से मित्रता की। काउण्ट बूफोन ने फ्रेंच में न्यूटन के गणित-सम्बन्धी सिद्धान्तों का अनुवाद किया था। वह पेरिस के धनाढ्य व्यक्तियों में से था जो स्वयं को महान प्रतिभाशाली मानते थे। फादर नीडहम और काउण्ट बूफोन ने स्वतोजनन के सिद्धान्त को पुनर्जीवित करने की व्यर्थ चेष्टा प्रारम्भ की।

इन व्यर्थ चेष्टाओं का प्रारम्भ काउण्ट बूफोन के महल से हुआ था। घटना यों हैं—एक शाम कन्दील की रोशनी में फादर नीडहम ने काउण्ट बूफोन से प्रश्न किया, 'लार्ड! वह कौन-सी वस्तु है जिसने मृत मांसरस से कीटाणुओं को उत्पन्न किया था, जिसे मैंने इतना अधिक गरम किया था।'

फादर नीडहम के इस प्रश्न का कल्पनाशील काउण्ट ने नजाकत से उत्तर दिया, 'फादर नीडहम! आपने तो एक महान गुरुतर सिद्धान्त का आविष्कार कर डाला है। आपके इस आविष्कार से जीवन-रहस्य की शक्ति का उद्घाटन हो गया है। आपके उस मांसरस में एक शक्ति थी, जीवनी शक्ति, जिसे आपने प्रयोगों द्वारा प्रदर्शित कर दिया है। यही वह शक्ति है जो जीवन और अन्य तमाम वस्तुओं की रचना करती है।'

'तब तो हमें इस जीवनी शक्ति का नामकरण करना चाहिये। मेरी समझ से हमें इसे वनस्पतीय शक्ति कहना चाहिये।'

और तब इस नाम से सहमत होकर काउण्ट बूफोन ने प्रयोग नहीं लेखनी के बूते पर वनस्पतीय शक्ति एवं स्वतोजनन सिद्धान्त की महानता का धूम-धड़ाके से प्रचार प्रारम्भ किया। प्रचार तीव्रवेगा नदी की तरह बह निकला और एक बार फिर यूरोपीय विज्ञान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

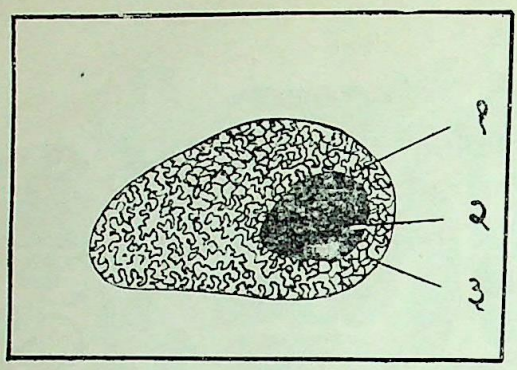

एक सामान्य जीवाणु का रेखाचित्र—(१) जीव द्रव्य (protoplasm), (२) **केन्द्रीय संरचना और** (३) **संरक्षक झिल्ली** (protective membrane)

पर स्वतोजनन सिद्धान्त हावी हो गया। लेकिन दूर इटली में बैठे लैजेरो स्पैलेंनजनी ने पुनः 'स्वतोजनन सिद्धान्त' को पूर्णतया मृत्युशील बनाने के लिए अपने शस्त्रों की धार तेज करने लगा था। इधर लैजेरो पुनः अपनी प्रयोगशाला में उतर रहा था, उधर, दूसरी ओर यूरोपीय जीव-विज्ञान पुनः एक कुहासे में लिपटता जा रहा था।

कुहासे की चादर

कुहासा—वनस्पतीय शक्ति सिद्धान्त का अविच्छिन्न कुहासा यूरोपीय वैज्ञानिकोंकी बुद्धि पर छाता जा रहा था। फादर नीडहम और काउण्ट बूफोन के वनस्पतीय शक्ति सिद्धान्तों को लेकर अजीब किम्वदन्तियां फैल रही थीं। लोग तो यहां तक मानने लगे थे कि फादर नीडहम गायों को मानवों में और मक्खियों को हाथियों में परिवर्तित कर देगा। एक ओर जहां यूरोपीय जन-जीवन और वैज्ञानिकों में वनस्पतीय शक्ति सिद्धान्त का अन्धकारमय कुहासा ज्ञान के सूर्य को ढंकने की चेष्टा कर रहा था, वहीं दूसरी ओर कुहासे में काउण्ट बूफोन और फादर नीडहम वनस्पतीय शक्ति को सिद्ध करने के लिए तर्क और भ्रमपूर्ण वक्तव्य दे रहे थे। फादर नीडहम ने तो अपने एक वक्तव्य में यहां तक कह डाला था कि यही वह शक्ति है जिसने 'आदम' की पसलियों से [illegible] की सर्जना की थी। यही वह महत्त्वपूर्ण [illegible] है जिसने चीन के 'कृमिवृक्ष' को जन्म दि[illegible] और इसी शक्ति के कारण चीन का यह 'कृ[illegible] वृक्ष' शिशिर में कृमि रूप में रहता है [illegible] ग्रीष्म आते ही वृक्ष रूप में परिवर्तित हो जा[illegible] है। फादर नीडहम के इन वक्तव्यों [illegible] विचारों को तात्कालिक ईसाई मठों का [illegible] समर्थन प्राप्त हो गया था; कारण था [illegible] विश्वासी धर्म।

विज्ञान के दैदीप्यमान शाश्वत सूर्य [illegible] वनस्पतीय शक्ति-सिद्धान्त का अन्धकार[illegible] कुहासा घिरता जा रहा था कि तभी लैजे[illegible] स्पैलेंजनी ने महसूस किया, यदि शीघ्र [illegible] इस कुहासे को अविच्छिन्न न किया गया, [illegible] युग-युगान्तरों के लिए यूरोपीय जीव-विज्ञा[illegible] अन्धकार और अज्ञान की काली परतों में लु[illegible] हो जायेगा। अभी स्पैलेंजेनी दर्द और आ[illegible] में तिलमिला ही रहा था कि सहसा उसे फा[illegible] नीडहम का एक व्यंग्यात्मक पत्र प्राप्त हुआ[illegible] इस पत्र में फादर नीडहम ने लैजेरो को लि[illegible] था : 'लैजेरो ! तुम्हारे प्रयोग जिन्होंने महत्[illegible] पूर्ण स्वतोजनन सिद्धान्त को क्षति पहुंचा[illegible] है, अर्थहीन हैं, क्योंकि जिन सील किये मांसर[illegible] भरे फ्लास्कों को तुमने एक घण्टे तक ग[illegible] किया था, उन फ्लास्कों में अधिक ताप [illegible] वनस्पतीय शक्ति को दुर्बल कर दिया जि[illegible] कारण वनस्पति-शक्ति के स्वतोजनन [illegible] का ह्रास हो गया और यही कारण है [illegible] तुम्हारे प्रयोगों में मांसरस से कीटाणुओं [illegible]

बीजाणुक जनन (sporulation) **द्वारा जीवा[illegible] में पुनरुत्पादन**

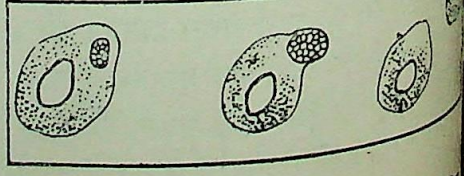

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

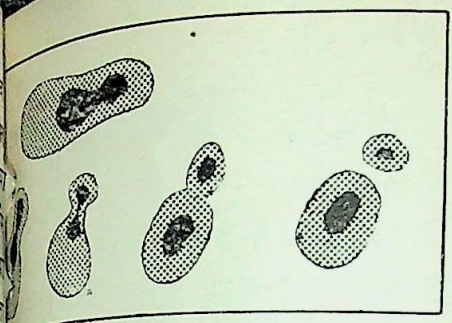

विभंजन (fission) द्वारा जीवाणु में पुनरुपादन—(ऊपर) विभंजन की पहली स्थिति, (नीचे) विभंजन की विभिन्न स्थितियां

जन्म नहीं हो सका। स्पैलेंजेनी, तुम्हारा प्रयोग महज एक प्रवंचना है जिसने एक महान सत्य का विनाश किया है।'

एक नया युद्ध

लैजेरो इस पत्र की प्राप्ति के उपरान्त इतना अधिक उत्साहित हो उठा, जैसे वह एक लम्बे अरसे से इस पत्र की प्रतीक्षा कर रहा था। पत्र-प्राप्ति पर लैजेरो पुनः अपनी प्रयोगशाला में लौट आया। क्षण भर को वह भूल गया कि वह रिग्गो विश्वविद्यालय का सम्मानित प्राध्यापक है जिसकी प्रतिभा का और मनमोहक वाणी का विद्यार्थीगण आदर करते हैं। वह भूल गया कि वह एक कैथोलिक पादरी है जिसे धर्म की आस्थाओं पर लम्बे-चौड़े व्याख्यान देने चाहिये। वह भूल गया कि उसे प्रभुसत्ता का विरोध नहीं करना चाहिये। उसे तो सिर्फ एक वस्तु याद रह गयी थी और वह थी फादर नीडहम की वनस्पतीय शक्ति-सिद्धान्त की प्रवंचना और काउण्ट बूफोन का मनमोहक जाल जिसने वैज्ञानिकों को भ्रमित कर दिया था।

प्रयोगशाला में लौटने पर जो पहली बात लैजेरो ने सोची वह थी: 'नीडहम कहता है कि अधिक ताप ने फ्लास्कों के मांसरस और बादाम के बीजों की वनस्पतीय शक्ति को समाप्त कर दिया, इसी कारणवश मेरे प्रयोगों के सील किये फ्लास्कों में स्वतोजनन सम्भव नहीं हो सका। ठीक, मैं अब प्रयोगों द्वारा स्वयं देखूंगा कि इस वनस्पतीय शक्ति को समाप्त करने के लिए ताप का कितना परिमाण आवश्यक है।' इतना तर्क कर लेने पर उसने अपने प्रयोग को प्रारम्भ किया।

इस बार लैजेरो ने अनेक फ्लास्कों को कई श्रेणियों में विभाजित किया। प्रत्येक श्रेणी में उसने तीन-तीन फ्लास्कों को रखा और प्रत्येक श्रेणी में बादाम के बीज भर दिये। अब उसने इन फ्लास्कों की एक श्रेणी को सिर्फ एक मिनट, दूसरी श्रेणी को पांच मिनट, तीसरी को पन्द्रह, चौथी को आध घण्टे और पांचवीं को एक घण्टे तक उबाला। इन फ्लास्कों को उसने कार्क द्वारा ही सील किया और इन पर लेबिल लगाकर ताप देने के समय को लिख लिया। इतना कुछ कर लेने पर लैजेरो ने इन फ्लास्कों को कुछ दिनों के लिए शान्त पड़ा रहने दिया और स्वयं जंगलों में आखेट के लिए निकल गया। अपने विश्राम और आखेट के इन कुछ रूमानी दिनों में उसने मेढ़कों की प्रजनन-क्रिया का विशद् अध्ययन किया।

विश्राम और आखेट के रूमानी दिनों के बाद विश्वविद्यालय में लौटने पर लैजेरो पुनः अपनी प्रयोगशाला में लौट आया जहां उसने फ्लास्कों की विभिन्न श्रेणियों को शान्त छोड़ दिया था। प्रयोगशाला के गर्द-भरे वातावरण में लौटने पर उसने पुनः स्वतः ही तर्क करना प्रारम्भ किया कि यदि नीडहम सत्य है, तो इन श्रेणियों में कुछ ऐसी श्रेणियां भी होनी

कशाभिका (flagella) वाला जीवाणु

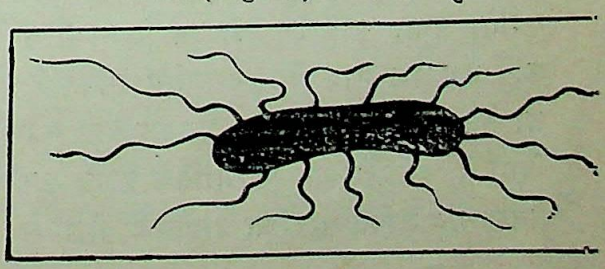

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये जिनमें स्वतोजनन नहीं होना चाहिये। लेकिन उसके विस्मय और कौतुक की कोई सीमा न रही जब पर्यवेक्षण करने पर उसने यह पाया कि जिन फ्लासकों को उसने एक घण्टे और दो घण्टे तक उबाला था, उन फ्लास्कों में एक मिनट तक उबाले गये फ्लास्कों की अपेक्षा अधिक कीटाणुओं ने जन्म ले लिया है। अपने इस पर्यवेक्षण को उस दिन लैजेरो ने अपनी डायरी में नोट किया : वनस्पतीय शक्ति-सिद्धान्त मूर्खता, महान मूर्खता है। जब तक इन फ्लास्कों को महज कार्कों द्वारा सील करके उबाला जायेगा, इनमें कीटाणुओं का जन्म होता रहेगा, क्योंकि ये कीटाणु तो हवा के साथ-साथ कार्क के रन्ध्रों द्वारा फ्लास्क में चले आते हैं और फ्लास्क में आकर अपना प्रजनन करते हैं, इसी लिए हमें फ्लास्कों में इनकी अनगिनत संख्याएं प्राप्त हो जाती हैं।

अपने पर्यवेक्षण की सफलता पर लैजेरो क्षणभर को हंसा लेकिन फिर एक बार उसे संशय ने घेर लिया और वह मन ही मन सोचने लगा कि शायद फादर नीडहम की वनस्पतीय शक्ति में अंश मात्र सत्यता हो। इस विचार के साथ ही उसके मन में एक नितान्त नये ढंग के प्रयोग का नक्शा बनने लगा। इस बार उसने बादाम के कुछ बीजों को एक साफ फ्लास्क में लेकर फ्लास्क को एक 'काफी रोस्टर' में रखकर घण्टों बादाम के बीजों को भूनता रहा। भूनते-भूनते जब बीज काले पड़ गये तब लैजेरो ने इस फ्लास्क में थोड़ा-सा आसुत जल (distilled water) छोड़ा। जल छोड़ते समय वह धीरे-धीरे बुद-बुदाता रहा, 'यदि इन बादाम के बीजों में कहीं भी, अंश मात्र भी वनस्पतीय शक्ति है, तो मैंने निश्चित ही उसे भूनकर मृत कर दिया है, इसलिए यह स्वाभाविक है कि इन वनस्पतीय शक्ति से रहित बादाम के बीजों से जीवाणु जीवन का जन्म किसी भी शर्त पर नहीं होना चाहिये।'

एक दिन।

दो दिन।

तीन दिन।...

वह प्रयोग के बाद सात दिनों तक गुम-सुम, खामोश बैठा रहा। सात खामोश दिनों के बाद लैजेरो की तन्द्रा टूटी। तन्द्रा टूटने पर वह सीधे अपनी प्रयोगशाला में भागा। प्रयोग-शाला में आने पर एक बार फिर लैजेरो की उत्सुक अंगुलियों ने भूने गये बादाम के बीजों वाले फ्लास्कों की गोपनीयता को अपनी जादुई आंखों के दायरे में तोड़ना शुरू किया। भूने हुए बादाम के बीजों ने भी कीटाणुओं को जन्म दे दिया था।

विजय घोष

और तब लैजेरो ने यूरोपीय विज्ञान के इतिहास में अपने विजयी प्रयोग-परिणाम की घोषणा की। उसने घोषणा की कि फादर नीडहम का वनस्पतीय शक्ति सिद्धान्त मिथ्या है। वनस्पतीय शक्ति सिद्धान्त महज एक प्रवंचना है, महज एक धार्मिक अन्धविश्वास है जिसे काउण्ट बूफोन की कल्पनाशील और रुमानी लेखनी ने शब्दजाल द्वारा सत्य सिद्ध करने की व्यर्थ चेष्टा की है। लैजेरो की लौह वाणी गूंज उठी: 'दुनिया में प्रत्येक जीव का जन्म केवल जीवित जीवन द्वारा ही सम्भव है; स्वतोजनन सिद्धान्त एक दार्शनिक का दिवा स्वप्न है, वैज्ञानिक का सत्य नहीं।' लैजेरो स्पैलेंजनी की इस महत्त्वपूर्ण घोषणा के उपरान्त यूरोपीय जीव-वैज्ञानिक एक बार पुनः सोचने लगे कि फादर नीडहम का वनस्पतीय शक्ति सिद्धान्त मात्र एक धार्मिक प्रवंचना है।

इस महत्त्वपूर्ण प्रयोग के उपरान्त लैजेरो ने एक बार चैन की सांस ली और पूर्ण विश्राम के लिए वह अपने गांव स्कैण्डियानों लौट गया। लेकिन जैसे विश्राम तो उसके भाग्य में ही नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

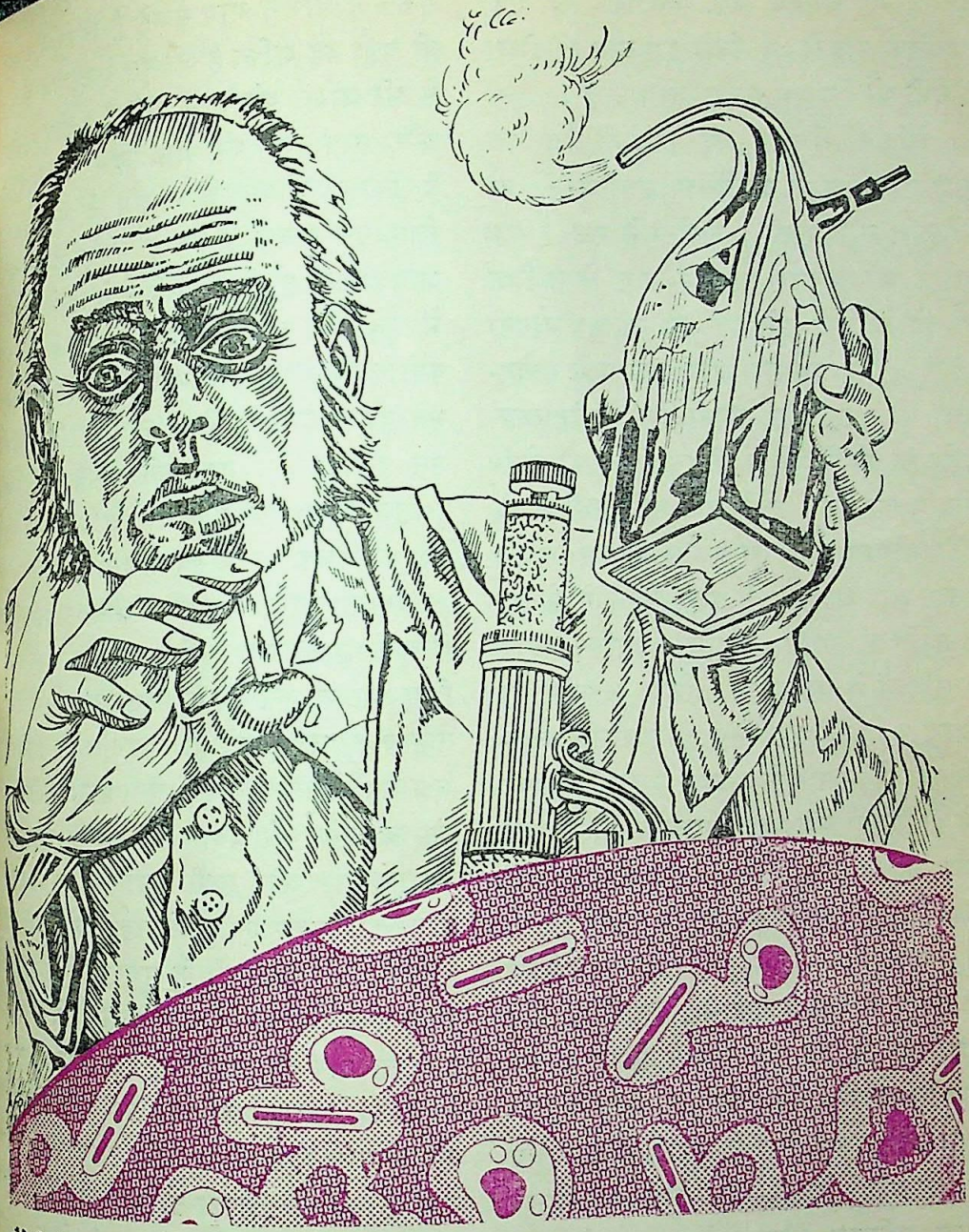

लैजेरो ने स्वतोजनन और वनस्पतीय शक्ति के सिद्धान्त के मिथ्या उलझाव को समाप्त कर दिया

लिखा था। घर आकर उसने मानवीय पाचन-प्रणाली का घोर अध्ययन प्रारम्भ किया। पाचन-प्रणाली के अध्ययन के इन्हीं दिनों में लैजेरो ने पाचन-सम्बन्धी कई भयंकर प्रयोगों को स्वयं अपने ही शरीर पर करना प्रारम्भ कर दिया था। इन घातक प्रयोगों का उसके स्वास्थ्य पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि उसे बाध्य होकर इन प्रयोगों को बन्द करना पड़ा। पाचन-सम्बन्धी अध्ययनों के इन्हीं दिनों में लैजेरो की प्रतिभा एक आयाम पर आकर रुक गयी जहां उसे विवश होकर सोचना पड़ा कि आखिर जीवन का प्रादुर्भाव क्यों और कैसे हुआ ?

विद्रोह

जीवन अस्तित्व में कैसे आया ? यह ऐसा प्रश्न था जिसके विषय में लैजेरो को जिज्ञासु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं होना चाहिये था, क्योंकि वह एक कैथोलिक पादरी था, जिसे इस बात की दीक्षा दी गयी थी कि प्रभु सर्वशक्तिमान है।

लेकिन लैजेरो की विद्रोही वैज्ञानिक बुद्धि बाइबिल के दार्शनिक उपाख्यानों को स्वीकृति न दे सकी। लैजेरो ने उन तमाम गुनाहों को करना प्रारम्भ कर दिया जिन गुनाहों के लिए उसे नर्क की यातना भोगनी पड़ती। वह प्रभुसत्ता और आस्था में सन्देहशील हो उठा और अपनी इसी सन्देहात्मक उत्तेजना की स्थिति में जीवन रहस्य की गोपनीयता को लेकर उसने छोटे-मोटे सभी जीवों की गर्भाधान क्रिया पर प्रयोग प्रारम्भ किये। प्रयोग और अध्ययन के इन्हीं दिनों में लैजेरो ने यूरोप के तमाम तर्कशील वैज्ञानिकों और दार्शनिकों से पत्रव्यवहार किया। फ्रांस का विख्यात विद्रोही दार्शनिक और प्रकृति वैज्ञानिक वाल्तेयर पत्रों के माध्यम से ही लैजेरो का मित्र और समर्थक बना। वाल्तेयर की मित्रता और समर्थन से लैजेरो इतना अधिक उत्साहित हुआ कि उसने यूरोप में एक नये आन्दोलन को ही जन्म दे दिया। इस नये विद्रोही आन्दोलन का यूरोप के तमाम तर्कशील वैज्ञानिकों और दार्शनिकों ने जमकर समर्थन किया। इन आन्दोलनकारियों ने लैजेरो को नेता घोषित किया और तब लैजेरो ने यूरोप के मानचित्र पर एक आग फूंक दी—एक ऐसी आग जिसमें तमाम रूढ़िगत और धार्मिक अन्धविश्वास झुलसने लगे।

एक युद्ध और

लेकिन फ्रांस का वह रईसजादा काउण्ट बूफोन इस आग की लपटों को न सह सका। उसने पुनः फादर नीडहम को उत्तेजित किया। परिणाम यह हुआ कि एक बार पुनः फादर नीडहम ने स्पैलेंजनी के प्रयोगों को मिथ्या घोषित करते हुए कहा कि वनस्पतीय शक्ति एक अदृश्य शक्ति है जिसे न तो आप देख सकते हैं और न माप सकते हैं किन्तु निश्चय ही यही वह शक्ति है जो मृत बादाम के बीजों से भी जीवन को जन्म देती है। तीव्र उष्मा और ताप को भी यह सहन कर सकती है किन्तु जीवन को जन्म दे सके इसके लिए इसे लचकदार वायु की सहायता की आवश्यकता होती है। लैजेरो ने अपने प्रयोगों में हवा की लचक को ही मार डाला है, क्योंकि जिन फ्लास्कों में एक घण्टे तक उसने भूने हुए बादाम के बीजों को गरम किया था, उन फ्लास्कों में हवा की लचक का गुण पूर्णतया समाप्त हो गया था। अधिक ताप का हवा की लचक पर घातक प्रभाव होता है।

स्वतोजनन सिद्धान्त और वनस्पतीय शक्ति सिद्धान्त के इस नये षड्यन्त्र को सदैव के लिए समाप्त कर देने के लिए इस बार लैजेरो ने हवा की लचक को ही लेकर अपने भविष्य के प्रयोगों के सम्बन्ध में सोचना प्रारम्भ किया। इस बार के नये प्रयोग में लैजेरो फ्लास्कों की एक साफ और सूखी कतार में बादाम के बीजों को भरकर एक घण्टे तक उबालता रहा और तब इन फ्लास्कों के मुंह को पिघलाकर उसने इन्हें सील कर दिया। सील करने के बाद इन फ्लास्कों को लैजरो ने एक सप्ताह तक यों ही प्रयोगशाला की मेज पर छोड़ दिया। एक सप्ताह के उपरान्त जब उसने भी पहले फ्लास्क की सील तोड़ी तो उसे हिस ऽऽऽस की एक आवाज सुनायी पड़ी। ध्वनि के उत्पन्न होने पर लैजेरो ने एक निष्कर्ष निकाला कि या तो हवा मेरे फ्लास्क में जा रही है अथवा उससे आ रही है। अपने इस निष्कर्ष को उसने नोट किया। अब उसने एक कन्दील जलायी और कन्दील की शिखा एक दूसरे सील किये फ्लास्क के मुंह के पास रखकर फ्लास्क की सील तोड़ी। परिणाम यह हुआ कि कन्दील की लौ फ्लास्क के मुंह की ओर झुक गयी। लौ का फ्लास्क की ओर चला जाना स्पष्ट रूप से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस तथ्य का साक्षी है कि अन्दर की हवा की लचक कम है। लेकिन इसका तो अर्थ यही होता है कि फादर नीडहम सत्य है। क्षण भर को लैजेरो को लगा कि उसके चारों ओर का वातावरण एक धूमिल कुहासे से भर गया है, और वह स्वंय ही अपने प्रयोगों और तर्कों पर अवाक् हो गया। लेकिन पुनः लैजेरो का वैज्ञानिक मन सन्देहशील हो उठा और वह प्रयोगशाला के गर्द-भरे सन्नाटे में चीख पड़ा ...नहीं...नहीं...नहीं...।

यह प्रयोग लैजेरो को काफी महंगा पड़ा। परिणाम पर पहुंचकर लैजेरो लगभग विक्षिप्त-सा हो गया था। उसके मन पर फादर नीडहम की दानवाकृति छा गयी थी। वह महसूस करने लगा था कि वह अपने मस्तिष्क का सन्तुलन खोता जा रहा है। इस विक्षिप्तावस्था से बचने के लिए लैजेरो ने होमर और दान्ते दोनों के काव्य में अपना मन रमाना चाहा किन्तु सम्भव न हो सका। और तब इन्हीं मनहूस दिनों में एक रात के दम तोड़ते सन्नाटे में एक अद्भुत घटना घटी। हुआ यों कि लैजेरो के मन में सहसा ही एक तर्क दमकती दामिनी-सा कौंध पड़ा : 'कन्दील की लौ-फ्लास्क की सील तोड़ने पर फ्लास्क के मुंह की ओर ही क्यों झुकती है, इस प्रश्न का मुझे हल निकालना चाहिये। क्या यह सम्भव नहीं है कि कन्दील की इस क्रिया का हवा की लचक से कोई सम्बन्ध न हो, वरन इस क्रिया का और ही कोई कारण हो ?' इस स्वतः उत्पन्न तर्क के साथ ही लैजेरो सीधा अपनी प्रयोग-शाला में भागा।

प्रयोगशाला में लौटने पर वह तर्क की शृंखला में आगे और तर्कों को रखने लगा। उसने पुनः तर्क किया : 'जिन फ्लास्कों को प्रयोगों में मैं उपयोग करता रहा हूं, उन फ्लास्कों के मुंह तो काफी चौड़े हैं इसलिए उनको सील करने में ताप की अत्यधिक मात्रा की आवश्यकता पड़ती है। और ताप की इस अधिक मात्रा से सम्भव है, फ्लास्क के अन्दर की हवा गरम होकर बाहर निकल जाती हो, इसलिए जब मैं फ्लास्क की सील तोड़ता हूं, तो अन्दर की रिक्तता की पूर्ति के लिए बाहर की हवा तीव्र वेग से अन्दर जाती है, जिसके कारण मुंह पर जलती हुई कन्दील की लौ भी अन्दर की ओर ही झुक जाती है। कन्दील की लौ की इस क्रिया से हवा की लचक का कोई सम्बन्ध नहीं है, और यह महज एक मूर्खतापूर्ण विचार है कि अन्दर की हवा की लचक फ्लास्क में पानी उबालने से समाप्त हो जाती है। लेकिन प्रश्न तो यह है कि इस मूर्खता को मैं सिद्ध कैसे करूं ?'

लैजेरो का तर्क उसके सम्मुख तैरता रहा और वह विचारता रहा प्रयोगों की तमाम नयी सम्भावनाओं को। सहसा ही सम्भावनाओं का सूर्य उसके उर्वर मस्तिष्क में उदय हुआ। इस बार उसने एक दूसरा ही फ्लास्क लिया। इस फ्लास्क में मृत बादाम के बीजों को लिया और उबालने के पूर्व इस फ्लास्क की

विभिन्न प्रकार के जीवाणु (१) विब्रो, (२) बैसिलस, (३) कोक्कस, और (४) सिप्रिल्लम

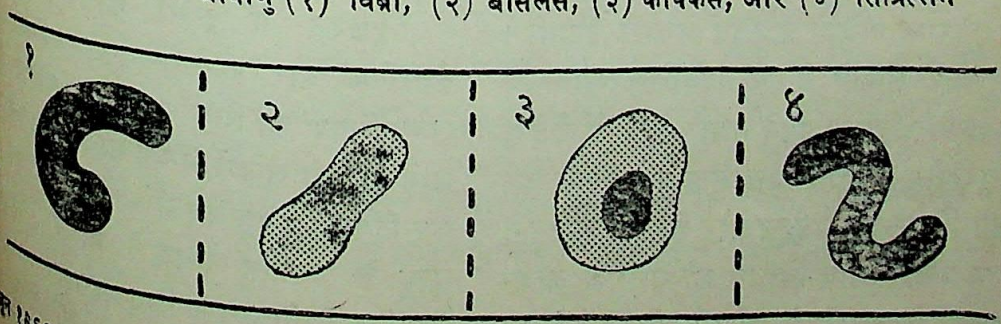

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रीवा को एक तेज किन्तु पतली-लौ की सहायता से पिघलाकर सील कर दिया। सील हुए फ्लास्क की ग्रीवा में एक छिद्र लैजेरो ने छोड़ दिया जिससे फ्लास्क की अन्तर्वर्ती हवा का बाह्य हवा के साथ सम्बन्ध बना रह सके। अब लैजेरो इस छिद्र वाले फ्लास्क को एक उबलते पानी की देगची में रखकर एक घण्टे तक उबालता रहा। फ्लास्क को उबाल लेने पर उसने गरम फ्लास्क को उठाकर प्रयोग-शाला की मेज पर लेबिल लगाकर कुछ दिनों तक शान्त पड़ा रहने दिया। थोड़े दिनों के उपरान्त लैजेरो ने छिद्र वाले फ्लास्क के मुंह के पास एक कन्दील जलाकर उसकी सील तोड़ी। सील टूटने पर लैजेरो को वही पुरानी ध्वनि सुनायी दी, किन्तु इस बार कन्दील की लौ फ्लास्क के मुंह की ओर नहीं झुकी। इस प्रयोग को लैजेरो ने बार-बार दुहराया, किन्तु हर बार उसे उसका मनचाहा परिणाम प्राप्त हुआ। प्रयोग के परिणाम पर उसने निष्कर्ष निकाला कि ताप से हवा की लचक का गुण नहीं समाप्त हो सकता। और तब अन्तिम बार लैजेरो ने एक लौह घोषणा की कि फादर नीडहम एक छलावे में है। उसका स्वतोजनन मिथ्या है। वनस्पतीय शक्ति सिद्धान्त मात्र दिवास्वप्न है। और इस बार फादर नीडहम और काउण्ट बुफोन ने लैजेरो का कोई प्रतिवाद नहीं किया।

विजय

स्वतोजनन और वनस्पतीय शक्ति-सिद्धान्त के मिथ्या उलझाव को समाप्त करने के उपरान्त लैजेरो ने स्वयं लेखनी उठायी। इस बार लेखनी ने एक प्रज्वलित अग्नि को ही जन्म दे दिया। अपने तमाम लेखों में लैजेरो ने यूरोपीय विज्ञान के सम्मुख यह स्पष्ट कर दिया कि फादर नीडहम और काउण्ट बूफोन ने किस प्रकार जीव-विज्ञान को धार्मिक अन्ध-विश्वास के कुहासे में लपेटने की यर्थ चेष्टा की थी। अपने एक लेख में तो लैजेरो ने यहां तक लिखा कि, काश! यदि उसने इस नवजात जीव-विज्ञान की रक्षा न की होती, तो यह निश्चित था कि यह फादर नीडहम और काउण्ट बूफोन के घातक प्रहारों से अब तक मर चुका होता।

वनस्पतीय शक्ति-सिद्धान्त के समाप्त तक लैजेरो स्पैलेंजनी की ख्याति यूरोपीय वैज्ञानिक क्षेत्र में पूर्णतया स्थापित हो गयी थी। यूरोप के तमाम विश्वविद्यालयों में उसकी चर्चा बलवती हो गयी थी। जरमनी के फ्रेडरिक महान् ने उसे बर्लिन अकादमी का सम्मानित सदस्य घोषित किया। आस्ट्रिया के राजा और महारानी थेस्ट्रा ने उससे पेविया विश्वविद्यालय में विज्ञान के प्राध्यापक पद को स्वीकार करने के लिए व्यक्तिगत रूप से प्रार्थना की। आस्ट्रिया राज्य की इस विनती को लैजेरो ने स्वीकारकर पेविया विश्वविद्याल में अध्यापन का कार्य शुरू किया। पेविया विश्वविद्यालय में आकर लैजेरो ने कीटाणु जीवन को लेकर कई महत्त्वपूर्ण प्रयोग किये और अनगिनत वैज्ञानिक यात्राएं कीं। वह दूर टर्की और बालकन पेनिनसुला तक गया। पेविया विश्वविद्यालय में ही लैजेरो ने जीवाणुओं की प्रजनन-प्रक्रिया की खोज की और जीवाणु-जीवन विषयक एक महत्त्वपूर्ण तथ्य भी खोजा कि कितने ही जीवाणु ऐसे भी हैं, जो बिना वायु के जीवित रह सकते हैं।

महान समापन

१७९९ में इटली का एक महान वैज्ञानिक और कीटाणु-शास्त्री सहसा ही 'रक्ताधिक्य' का शिकार हो गया। बीमार हो जाने पर भी लैजेरो ने यह मानने से इनकार कर दिया था, वह अब शक्तिहीन हो गया है। मृत्यु के भयावह क्षणों में भी इस महान वैज्ञानिक ने विज्ञान के लिए बहुत कुछ किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह आज अकल्पनीय है। मृत्युशैय्या पर लेटे हुए लैजेरो ने जो अन्तिम इच्छा अपने मित्रों से प्रकट की थी, वह आज भी विज्ञान के इतिहास में एक साहसिक विरासत के रूप में जीवित है।

अंतिम समय लैजेरो ने अपने मित्रों से कहा था, 'मुझे मालूम हो चुका है कि मेरे मूत्राशय में कोई भयंकर रोग है। जब मैं मर जाऊं, तो मेरे मूत्राशय को मेरे शरीर से निकल-कर उसका अध्ययन करने की चेष्टा करना, और शायद इस चेष्टा में तुम लोगों का मानवीय मूत्राशय-विषयक रोगों के सम्बन्ध में कोई नयी उपलब्धि से परिचय हो।' इतना महान था लैजेरो! (क्रमशः)

एक-कोषीय रहस्यमय जीव : जीवाणु

जमीन से उठायी गयी चाय के चमच्च भर धूल में क्या असंख्य छोटे-छोटे जीवों के होने की कल्पना की जा सकती है? लेकिन यह सत्य है कि धूल की इतनी मात्रा में करीब १५ करोड़ जीवाणु होते हैं। जीवाणु एक शक्तिशाली सूक्ष्मदर्शी द्वारा ही देखे जा सकते हैं। ऐसे दूरदर्शी की क्षमता कम से कम मूल आकार को एक हजार गुना परिवर्द्धित करने की अवश्य होनी चाहिये।

दूरदर्शी में जीवाणुओं को देखें, तो पायेंगे कि वे भिन्न-भिन्न आकार के हैं। कुछ तिनके की तरह लम्बे हैं, कुछ गोल, कुछ झुकाव लिये हुए और कुछ स्प्रिंगदार। यह सत्य नहीं है कि सभी जीवाणु हमारे शत्रु होते हैं। निस्सन्देह कुछ बहुत घातक रोग फैलाने वाले होते हैं, लेकिन कुछ ऐसे भी हैं जिनसे हमें लाभ होता है।

वनस्पति जगत में वे पौधे अत्यधिक विकसित माने जाते हैं जिनका निर्माण असंख्य कोषों से हुआ है। पौधे की निम्नतर श्रेणियों का अध्ययन करें, तो पायेंगे कि कुछ ऐसी भी वनस्पतियां हैं जो एक-कोषीय हैं। जीवाणु भी ऐसी ही वनस्पति हैं।

जीवाणु की रचना एक जीवित कोष की रचना की भांति होती है। इसका भी निर्माण जीवद्रव्य (protoplasm) से होता है। जीवद्रव्य में एक केन्द्रीय रचना कोष के नाभिक की भांति होती है। इसका बाहरी भाग एक पतली झिल्ली से ढंका होता है जो सेल्युलोज से निर्मित होती है।

मानव भोजन के पाचन में पाचन-संस्थान सक्रिय रहता है। जो वानस्पतिक भोजन मानव ग्रहण करता है, उसमें अन्य पदार्थों के अतिरिक्त सेल्युलोज भी रहता है। यह कार्बोहाइड्रेटों में से एक है। जन्तु सेल्युलोज को पचाने में असमर्थ होते हैं, लेकिन उनके पाचन-संस्थान में ऐसे अनेक जीवाणु होते हैं जो सेल्युलोज को पचा देते हैं। इनमें से लगभग सत्तर जातियां मानव की बड़ी आंत में होती हैं, जिनके अन्तर्गत कई करोड़ जीवाणु होते हैं। यद्यपि मानव-भोजन में सेल्युलोज का विशेष महत्त्व नहीं है, किन्तु फलों के छिलकों में कुछ महत्त्वपूर्ण पदार्थ भी होते हैं जो पोषण के लिए अत्यन्त आवश्यक होते हैं। इन्हें आंत सोख लेती है। बाद में जीवाणु इन पर आक्रमण करते हैं, और इनका पाचन सम्पन्न करते हैं।

जीवाणु वनस्पति में भी सक्रिय रहते हैं। करोड़ों वर्ष पूर्व से इस पृथ्वी पर पौधे हैं। कितने ही उगे और नष्ट हो गये। यदि सभी पौधों का अवशेष पृथ्वी पर रह पाता, तो निस्सन्देह पृथ्वी का हर भाग मृत पौधों से ढंका होता।

पौधा जब सूख जाता है, तो उस पर भी जीवाणु-आक्रमण कर देते हैं और उनके कार्बनिक पदार्थों का अपघटन करते हैं। इस तरह वे कार्बन डाइआक्साइड और नाइट्रेट का निर्माण करते हैं जो पौधों के लिए परमावश्यक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

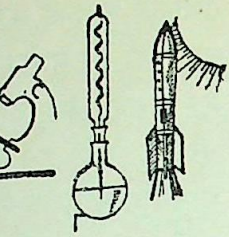

खनिज मृत्तिका का वर्णक्रमीय अध्ययन

केन्द्रीय कांच और सिरामिक अनुसन्धान संस्थान, कलकत्ता में विकसित पोटैशियम ब्रोमाइड चक्र विधि द्वारा प्राप्त अवरक्त अवशोषण वर्णक्रम के अध्ययन द्वारा मृत्तिका खनिजों तथा अभ्रक संरचना खनिजों का विस्तृत परीक्षण किया गया। इस अध्ययन के परिणामस्वरूप विभिन्न खनिजों में भेद करना अत्यन्त सरल हो गया है। अब प्रकाशीय गुणधर्म तथा एक्स-किरण विवर्तन चित्र में समानता होने के कारण सिलिमनाइट और वर्णक्रम द्वारा यह भेद सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

अग्निसह ईंटों का निर्माण

अग्निसह मिट्टी की ईंटें बनाने तथा उनके गुणों आदि का विस्तृत अध्ययन करने के लिए बिहार, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, मद्रास, राजस्थान, उड़ीसा से प्राप्त चौदह नमूनों की मिट्टी का अध्ययन किया गया। इस सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप यह देखा गया कि उच्च अग्निसह क्षमता की तथा सुघट्ट कच्ची मिट्टी के उचित सम्मिश्रण द्वारा उच्च अग्निसह ईंटों का उत्पादन किया जा सकता है।

फोटो मुद्रण में अल्यूमीनियम का उपयोग

दृढ़ता एव हलके भार के कारण उपकरणों के विभिन्न भागों के निर्माण में अल्यूमीनियम का उपयोग दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। विशेष विधि एनोडिक आक्सीडेशन के प्रयोग से अल्यूमीनियम को संक्षारण एवं खरोंचों से बचाया जा सकता है। इस प्रकार का अनोडीकृत तल छिद्रयुक्त होता है और फोटो मुद्रण के सर्वथा उपयुक्त होता है। इस तरह से फोटो मुद्रण के लिए कई विधियां विकसित की गयी हैं। इनमें से एक विधि देहरादून के उपकरण अनुसन्धान एवं विकास प्रयोगशाला में भी विकसित की गयी है जिसका उपयोग प्रतिरक्षा कार्यों के लिए किया जा रहा है। इस विधि के अन्तर्गत तल पर सिल्वर नाइट्रेट और फेरिक आक्सलेट नामक रासायनिक पदार्थों की एक तह चढ़ायी जाती है। फोटो के निगेटिव पर इसकी प्रतिक्रिया द्वारा फेरिक पदार्थ फेरस में परिवर्तित हो जाता है। यह अम्लीय टाटरेट की उपस्थिति में सिल्वर नाइट्रेट को रजत अवकृत कर देता है। इस प्रकार सफेद पार्श्व में भूरे रंग का चित्र प्राप्त होता है।

टेलीफोन पर बात करने वाले का चित्र

अब ब्रिटेन में ऐसे टेलीफोन लगने वाले हैं जिनके द्वारा साधारण नागरिक भी बात करते समय एक-दूसरे का चित्र देख सकेंगे।

इसके लिए विशेष प्रकार के कक्ष तैयार किये जायेंगे। इनमें टेलीफोन पर नम्बर घुमाते ही अन्धेरा हो जाया करेगा, ताकि जिस व्यक्ति से बात-चीत करनी है उसका स्पष्ट चित्र डायल पर आ सके।

अब से पहले भी ब्रिटेन में ऐसे टेलीफोन थे, किन्तु उनके विषय में यह शिकायत थी कि चित्र स्पष्ट नहीं होते।

रेलों में स्वचालित रोक-व्यवस्था

इस वर्ष अप्रैल से जापान की सभी रेलगाड़ियों में स्वतः रुक जाने की व्यवस्था कर दी गयी है। इस स्वचालित रोक-व्यवस्था के अन्तर्गत सिगनल प्राप्त होने पर ड्राइवर के डब्बे के अन्दर अपने-आप अलार्म बज उठता है और लाल रोशनी हो जाती है। अगर ड्राइवर ब्रेक न लगाये और गाड़ी रोकने का बटन न दबाये, तो भी गाड़ी पांच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेकण्ड के अन्दर अपने-आप रुक जाती है। इस व्यवस्था से दुर्घटनाओं की आशंका बहुत ही कम हो गयी है।

स्वचालित रोक-व्यवस्था अन्य देशों की रेलगाड़ियों में भी है लेकिन शायद जापान ही ऐसा देश है जहां २७,००० किलोमीटर लम्बी लाइनों पर चलने वाली सभी रेलों में यह व्यवस्था की जा चुकी है।

विकसित देशों में जिनमें जापान भी है रेलगाड़ियों की बढ़ती हुई रफ्तार और यातायात में वृद्धि के कारण रेलचालकों को हर समय सावधानी बरतनी पड़ती थी। विशेषज्ञों का मत है कि स्वचालित व्यवस्था से ड्राइवरों के दिमाग में तनाव नहीं रहता है।

सौ मील की ऊंचाई पर झूलती प्रयोगशाला

अमरीकी वैज्ञानिकों ने एक ऐसी प्रयोगशाला तैयार की है जो पृथ्वी से सौ मील ऊपर भू-उपग्रह में रखी जायेगी। इस प्रयोगशाला की सहायता से यह पता लगाया जायेगा कि पृथ्वी के गर्भ में कहां और कितनी गहराई में, कितनी मात्रा में कौन-से खनिज पदार्थ हैं। निस्सन्देह इससे विकासरत देशों को बड़ा लाभ होगा।

वैज्ञानिकों की धारणा है कि भविष्य में ऐसी ही प्रयोगशालाएं चन्द्रमा तथा दूसरे ग्रहों में विद्यमान खनिज पदार्थों का भी पता लगा सकेंगी।

टेप रिकार्ड पर सुरक्षित एक्स-रे

अलर्गन में एक ऐसी विधि विकसित की गयी है जिसके अन्तर्गत जटिल एक्स-रे जांच-पड़ताल को टेलीविजन के परदे पर दिखाया जा सकता है और उसे भविष्य में दिखाने के लिए टेप रिकार्ड पर सुरक्षित भी रखा जा सकता है। इस नयी विधि के विकास से रोगी और विशेष रूप से डाक्टर को कोई खतरा नहीं रहेगा, क्योंकि डाक्टर टेलीविजन के परदे पर एक्स-रे का परीक्षण कर सकेगा और दूर से नियन्त्रण द्वारा एक्स-रे उपकरण का निर्देशन कर सकेगा।

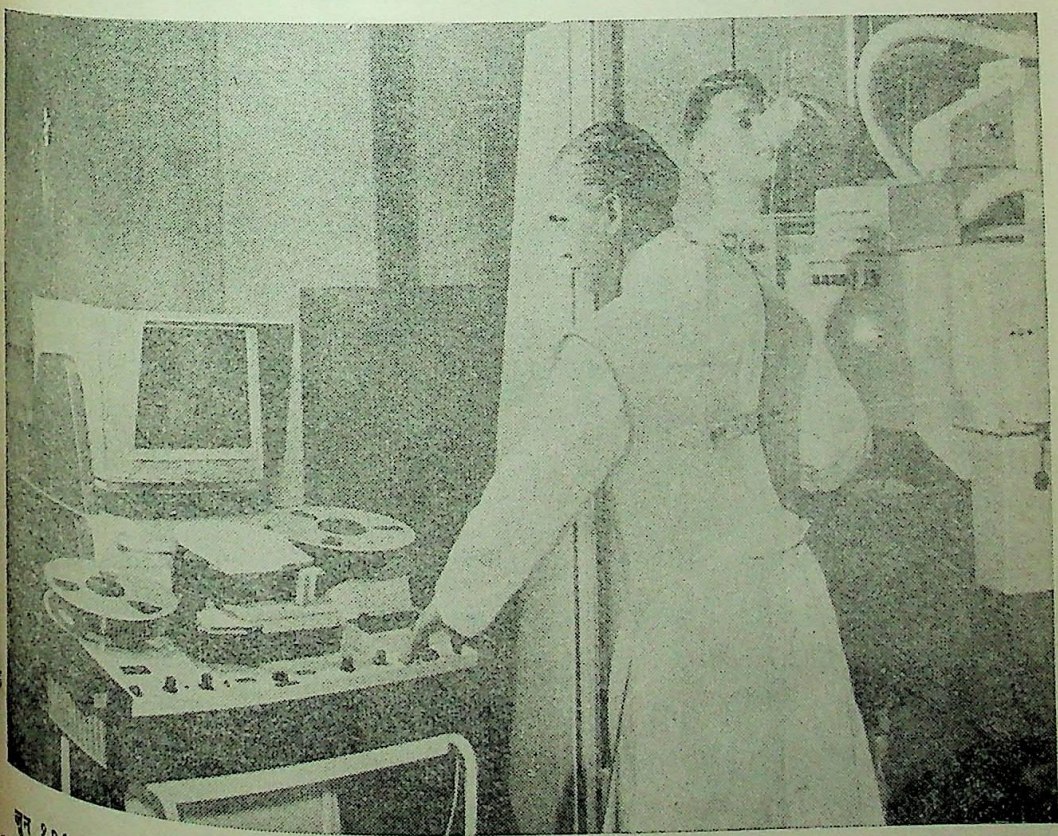

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पपीता

दक्षिण अमरीका का आदिवासी

आर. एन. सिंह, एम. एस-सी.

हमारे देश में बहुत-सी ऐसी चीजें हैं जो प्रारम्भिक रूप से विदेशी हैं परन्तु वे यहां इतनी सामान्य हो गयी हैं कि उन्हें विदेशी कहने में हिचक होती है। पपीता भी उनमें से एक है। यह वास्तव में दक्षिणी अमरीका का आदिवासी है, परन्तु अब सभी पूर्वी देशों में सर्वसुलभ हो गया है। भारतवर्ष में तो यह स्वाभाविक रूप से उत्पन्न किया जाने लगा है, और इसके लिए किसी विशेष प्रयत्न और परिस्थिति की आवश्यकता नहीं होती।

पपीता बड़ी शीघ्रता से बढ़ने वाला तथा शीघ्र फल देने वाला बड़ा क्षुप है। लगाने के एक वर्ष के अन्दर ही इसमें फल लगने लगते हैं, और फल भी इतनी अधिक मात्रा में लगते हैं कि बीच-बीच के फलों को तोड़ देना पड़ता है जिससे शेष फलों का अच्छी तरह विकास हो सके। फल इतने उपयोगी होते हैं कि आजकल प्रायः सभी घरों में इसके एक-दो पोधे दिखायी देते हैं। पपीते का एक लम्बा, सीधा तना होता है जिसके ऊपरी भाग पर लम्बे-चौड़े पत्र लगे रहते हैं। देखने में यह पाम (Palm) की तरह लगता है, परन्तु इसे पाम कहना भूल है। इसका तना मुलायम तथा अन्दर से खोखला होता है। इसकी ऊपरी सतह पर पत्तियों के चिह्न स्पष्ट दीखते हैं।

पपीता के पुष्प प्रायः एकलिंगी होते हैं तथा स्त्रीपुष्प और पुंपुष्प अलग-अलग वृक्षों पर होते हैं। स्त्रीपुष्पधारी वृक्ष पर ही फल लगते हैं, परन्तु दोनों प्रकार के वृक्ष एक स्थान पर रहें तभी स्त्रीवृक्ष में फल लग सकते हैं। कभी-कभी ऐसे भी वृक्ष मिलते हैं जिन पर स्त्रीपुष्प तथा पुंपुष्प साथ-साथ लगते हैं, परन्तु यह देखा जाता है कि ऐसे द्विलिंगी वृक्ष भी बाद में एकलिंगी वृक्ष के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। पुष्प हलके पीले रंग के होते हैं। पुंपुष्प लम्बे-लम्बे, झुके हुए डण्ठलों पर गुच्छों में लगे रहते हैं जबकि स्त्रीपुष्प आकार में कड़े तथा तने पर सटे हुए एक-एक, पृथक्-पृथक् निकलते हैं।

पपीता केरिकेसी (*Caricaceae*) कुल का एक वृक्ष है। मुख्य रूप से इसकी तीन जातियां प्राप्त होती हैं—

पर्वतीय पपीता

इसका लैटिन नाम केरिका कैण्डमरसेंसिस (*Carica Candamarcensis*) है। यह प्रायः पर्वतीय प्रदेशों में ४,५०० से ७,००० फुट तक की ऊंचाई पर मिलता है। लंका तथा दक्षिण भारत के नीलगिरि पर्वत पर अधिकतर होता है। यह ठण्डी तथा तेज हवा के झोंकों को सह लेता है। इसके वृक्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८-१० फुट तक ऊंचे होते हैं। इसमें साल भर फल लगता है। फल अधिक बड़े नहीं होते तथा कुछ खट्टे होते हैं।

क्षुद्र पपीता या पपीता

इसका लैटिन नाम कैरिका क्वरसिफोलिया (*Carica Quercifolia*) है। इसका वृक्ष ५-६ फीट ऊंचा क्षुप होता है। फल केवल बहुत छोटे, लगभग १-२ इंच लम्बे होते हैं परन्तु इनमें पपेन (Papain) नामक तत्त्व की मात्रा अधिक होती है। यह भी अधिक ठण्ड को सहन कर लेता है।

सामान्य पपीता

इसका लैटिन नाम कैरिका पपाया (*Carica Papaya*) है। यही जाति सर्वसुलभ तथा उत्तम है। इसके पौधे १०-२५ फुट तक ऊंचे होते हैं। पत्र १-२ फुट लम्बे तथा ८ भागों में विभक्त होते हैं। फलों का आकार-प्रकार भिन्न-भिन्न होता है जो प्रायः देश, काल, जलवायु और भूमि आदि की अवस्था पर निर्भर करता है। फल प्रायः गोलाकार या लम्बगोल होते हैं: कभी-कभी तो २० पौण्ड तक के फल देखे गये हैं। फलों के ऊपर का छिलका पतला तथा हरे रंग का होता है जो पकने पर पीताभ हो जाता है। इसके अन्दर पीताभ, मुलायम गूदा होता है। मध्य का भाग खोखला होता है जिसमें मटर के बराबर के काले-काले, चिकने गोल बीज भरे रहते हैं।

बीजरहित पपीता : एक अन्य जाति

पपीते की एक बीजरहित जाति का भी उल्लेख मिलता है, परन्तु इसका प्रसार (propagation) बहुत कष्टसाध्य है, अतः अधिक प्रचलित नहीं है।

पपीते की खेती

पपीते की उपयोगिता को देखते हुए अब इसकी बड़े स्तर पर उपज की जाने लगी है। पपीते के लिए वह भूमि उत्तम है, जहां पर पानी बरसता हो परन्तु रुकता न हो। यह शुष्क हवा के झोंके तो सह सकता है, परन्तु ठण्डी और तेज हवा से इसे हानि पहुंचती है। इसे कीटाणुओं से कोई अधिक भय नहीं रहता परन्तु पशु-पक्षियों से इसे बचाना पड़ता है। कीटाणु अधिक नमी के कारण लगते हैं। यदि कीटाणु लग जायें, तो पेड़ को काटकर तुरन्त निकाल देना चाहिये। इन बातों पर ध्यान देने से अच्छी उपज होती है।

इसके बीजों से ही इसकी खेती की जाती है। नर्सरी में इसके बीजों से पहले छोटे-छोटे पौधे तैयार करते हैं। ९-१२ इंच के पौधे हो जाने पर उन्हें फिर खेतों में रोपते हैं। रोपते समय प्रत्येक पौधे के चारों तरफ ८-१० फुट का अन्तर रखना चाहिये। प्रायः एक-डेढ़ वर्ष

पपीते का सामान्य वृक्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में फल आने लगते हैं। ये पौधे १५-२५ वर्ष तक जीवित रहते हैं ? परन्तु ४-५ वर्ष बाद इनमें फल देने की शक्ति नहीं रहती। फलों का रंग जब पीताभ होने लगे, तभी तोड़ लेना चाहिये।

फलों के तोड़ने, पैक करने तथा एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजने में पर्याप्त सावधानी से काम लेने पर इन्हें अधिक दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

रासायनिक विश्लेषण

पपीते का प्रत्येक भाग किसी न किसी काम आता है। इसलिए इसके प्रत्येक अंग का रासायनिक परीक्षण तथा विश्लेषणकर वैज्ञानिकों ने इसकी उपयोगिता सिद्ध करने का प्रयास किया है। विश्लेषण के परिणाम निम्नलिखित हैं—

फलों में

आर्द्रता ८९·६, प्रोटीन ०.५, कार्बोहाइड्रेट ९·५, ईथर एक्सट्रैक्ट ०·१, खनिज लवण ०·४, कैल्शियम ०·०१, फासफोरस ०·०१, लौह ०.४ मि. ग्राम प्रति १०० ग्राम तथा अल्पमात्रा में पेक्टिन, मैलिक अम्ल, टारटारिक अम्ल एवं साइट्रिक अम्ल के लवण तथा विटामिन।

पपीते का स्त्री पुष्प

बीजों में

प्रोटीन २४.३, कार्बोहाइड्रेट १५.२, वसाअम्ल २५.३, तन्तु १७, भस्म ८.८, उड़नशील तैल ०·०९ मि. ग्राम प्रति १०० ग्राम तथा थोड़ी मात्रा में कैरिसिन (Caricin), माइरोसिन (Myrosine) और कार्पेसिमिन (Carpasemine) नामक तत्त्व।

क्षीर (Latex) में

जल ७५, खर सदृश पदार्थ ४·५, पेक्टिन सदृश पदार्थ ७, मैलिक अम्ल ०·४४, पपेन ५·३, वसा २·४, रेजिन २·४ प्रतिशत तथा अल्प मात्रा में काइमोपपेन (Chymopapain), पाचक रस (enzyme) आदि।

पत्रों में

कार्पोसाइड (Carposide), कार्पेन (Carpaine) तथा विटामिन-सी और ई।

मूल में

सिनग्रिन (Singrin) तथा माइरोसिन (Myrosine) सदृश तत्त्व।

सर्वोत्तम पपेन

उपरोक्त सभी पदार्थों में अत्यधिक उपयोगी पपेन है। इसी के कारण पपीते का प्रयोग आहार, चिकित्सा तथा अन्य व्यावसायिक कार्यों में किया जाता है। यद्यपि यह तत्त्व सभी अंगों में अल्पमात्रा में मिलता है, किन्तु इसकी सर्वाधिक मात्रा फलों से निकलने वाले दुग्ध में होती है, जो लगभग २०% तक मिलता है। अपक्व तथा पूर्ण अविकसित फलों में दुग्ध अधिक निकलता है। इस अवस्था में फलों में चीरा लगाकर दूध एकत्र कर लेते हैं। एक पेड़ से प्रतिवर्ष २५० ग्राम तक पपेन मिलता है। यह ग्रीष्म वर्षों में अधिक मिलता है।

दुग्ध को एकत्र करने के पश्चात् शीघ्रातिशीघ्र सुखा लेना चाहिये। कभी अधिक दिन तक सुरक्षित रखने के लिए १० प्रतिशत लवण का घोल या १ प्रतिशत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फार्मल्डिहाइड (Formaldehyde) का घोल इसमें मिलाकर रखते हैं। इस रूप में या शुद्ध पपेन निकालकर प्रयोग किया जाता है। बाजार में प्राप्त होने वाला पपेन हलके भूरे रंग का एक चूर्ण होता है। आजकल इसके दो प्रकार बाजार में उपलब्ध होते हैं—(१) सूर्यतापी (sun-dried) : सूर्य के ताप से सुखाया हुआ, और (२) यन्त्रतापी (oven-dried) : यन्त्र द्वारा सुखाया हुआ। यन्त्रतापी पपेन हलका पीताभ (cream colour) होता है तथा इसकी कार्यशक्ति भी अपेक्षाकृत अधिक होती है।

पपेन के उपयोग

पपेन एक शक्तिशाली प्रोटीन-पाचक पदार्थ है, इस कारण इसका प्रयोग अजीर्ण, मन्दाग्नि, भूख न लगना तथा अन्य पाचन-सम्बन्धी विकारों में किया जाता है। इसके योग से बने कई पाचक मिश्रण, लिवर टानिक (liver tonic) तथा अन्य दवाएं मिलती हैं। मांस तन्तुओं को यह मुलायम बना देता है, इसलिए मांस पकाते समय उसमें पपेन या पपीते का दुग्ध या इसके कच्चे फल के टुकड़े डाल देते हैं। इससे मांस शीघ्र पक जाता है। पपेन को पानी में घोलकर कुल्ला करने से गले का शोथ दूर हो जाता है, तथा बढ़े हुए टांसिल (tonsil) में लाभ होता है। इसके अतिरिक्त इसका प्रयोग कुछ रोगों में घावों को भरने के लिए तथा जले-कटे स्थानों पर चिह्नों (scars) को मिटाने के लिए भी किया जाता है।

इन चिकित्सोपयोगों के अतिरिक्त पपेन का सर्वाधिक प्रयोग अर्धपाचित मांस, यकृत् तथा केसिन आदि आहार-पदार्थों के निर्माण में किया जाता है। निर्यात किये गये पपेन का अधिकांश इसी काम आता है! रेशम में से उसकी अशुद्धियां दूर करने में भी इसका प्रयोग होता है। ऊनी कपड़े भी इससे सिद्ध होकर

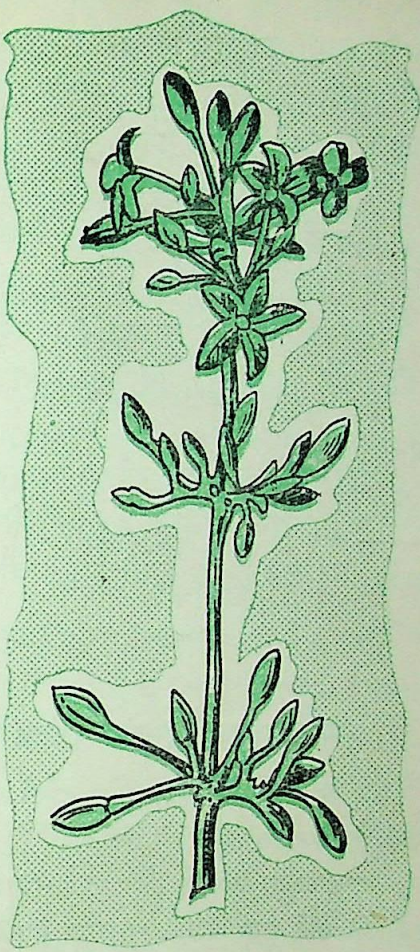

पपीते का पुष्प

मुलायम हो जाते हैं और उनमें सिकुड़न नहीं होती। चमड़े के सिझाने (tanning) के व्यवसाय में भी इसका पर्याप्त उपयोग होता है। इसके अतिरिक्त दन्तमंजन (tooth-paste) तथा त्वचा पर के दाग मिटाने की कुछ ओषधियों के निर्माण में भी इसका उपयोग होता है।

पपीते के अन्य उपयोग

पपीते का पका फल बहुत स्वादिष्ट और पुष्टिकारक होता है। इसके खाने से पाचन-क्रिया सुधरती है तथा भूख बढ़ती है। खाने के अलावा पके फलों का प्रयोग स्वादिष्ट पेय बनाने तथा फ्लेक्स (flakes) तैयार करने में भी किया जाता है। कच्चे फलों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभिन्न प्रकार की सब्जियां तथा अचार बनते हैं, तथा यह हलका दस्तावर और गर्भाशय पौष्टिक होता है। कच्चे फलों से निकला हुआ दुग्ध पपेन बनाने के काम तो आता ही है, इसके अतिरिक्त चेहरे की झांईं तथा चमड़े पर के निशान मिटाने के लिए इसका लेप करते हैं। यह आंत के कृमियों को भी मारता है। पपीते के बीज भी कृमिघ्न, तथा तृष्णाशामक होते हैं।

पपीते की पत्तियों का पुल्टिस बनाकर लगाने से वातिकशूल दूर होता है तथा श्लीपद (filaria) की सूजन कम होती हैं। प्राचीन-काल में पश्चिमी द्वीपसमूह के निग्रो [illegible] पत्तियों से अपने कपड़े साफ किया [illegible] थे। पपीते की छाल रस्सी बटने के [illegible] आती है। इस प्रकार पपीते का हर भाग [illegible] न किसी रूप में लाभकारी है।

सारांश यह है कि आहार, ओषधि [illegible] व्यवसाय आदि विविध रूपों में उपयो[illegible] पपीता आज घर-घर का फल बन गया है। इसकी उपज की सरलता तथा पैदावार [illegible] प्रचुरता ने इसके प्रसार में और भी सहाय[illegible] दी है। गांव हो या शहर, धनी हो या नि[illegible] बाल हो या वृद्ध, सभी इसका उप[illegible] किसी न किसी रूप में अवश्य करते हैं।

टेलीविजन पर शरीर के भीतरी अवयवों का प्रदर्शन

अब यह सम्भव हो गया है कि मानव शरीर के भीतरी अवयव तथा उनकी प्रत्येक क्रिया [illegible] टेलीविजन पर प्रदर्शित किया जा सके।

एक छोटा-सा जुपिटर लैम्प और लेंस ट्यूब के एक सिरे पर लगा दिया जाता है और रोगी [illegible] अंगुली जितने मोटे ट्यूब को निगल जाता है। इस तरह ट्यूब उसके पेट तक पहुँच जाता है।

परीक्षण कक्ष में एक बड़ा टेलीविजन परदा लगा रहता है। रोगी के पेट में जो क्रियाएं [illegible] रहती हैं, वे सरलता से परदे पर देखी जा सकती है। आधा पचा भोजन, ऐंठन वाले जोड़, श्लेष्म [illegible] आदि सभी क्रियाएं स्पष्ट रूप में परदे पर देखी जा सकती है। यह परीक्षण मुख्यतः इमेज ट्रांस[illegible] केवल प्रणाली पर आधारित है जो पश्चिम जरमनी में अर्लेंगन अस्पताल में किया गया।

तन्त्रिकान्त्र के रोगियों का संगीत द्वारा उपचार

क्रीमियस के एक स्वास्थ्य केन्द्र में स्नायु-सम्बन्धी रोगों का उपचार करने के लिए संगीत [illegible] प्रयोग किया जा रहा है। संगीत उपचार के साथ-साथ ओषधियों का भी प्रयोग किया जाता है। [illegible] विधि से अपेक्षाकृत कम समय में रोगियों को रोग से मुक्ति मिल जाती है। संगीत द्वारा अब तक [illegible] रोगियों की चिकित्सा की जा चुकी है। उनमें से अधिकांश को अनिद्रा आदि रोगों से मु[illegible] मिल गयी।

यह उल्लेखनीय है कि डाक्टर केवल शास्त्रीय संगीत का ही उपयोग करते हैं।

इन्जिन साफ करने के लिए अखरोट के छिलकों का प्रयोग

दक्षिण जरमनी की एक कार फैक्टरी कार के इन्जिनों के सिलिण्डरों के सिरों की सफाई [illegible] पालिश करने में अखरोट के छिलकों का प्रयोग करती है। पहले यह सफाई सैण्ड ब्लास्टिंग प्रक्रिया [illegible] की जाती थी, लेकिन इस रेत से नुकसान अधिक हुआ। अब अखरोट के अलावा खूबानी का छिलका [illegible] प्रयोग में लाया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

तुम्हारे ढेर-सारे पत्रों में अधिकांश में यह शिकायत है कि विज्ञान-क्लब की सदस्यत के लिए कूपन भरकर तुमने भेजा किन्तु सदस्यों की सूची में अब तक नाम नहीं आया।

जिनका कूपन पूरा-पूरा भरा हुआ मिलता है, उन्हें सदस्य बना लिया जाता है। कोई नाम पहले या बाद में प्रकाशित करना सम्भव नहीं होता, क्योंकि नये सदस्यों के नाम उनकी सदस्यता के क्रम में प्रकाशित होते हैं। हां, नये सदस्यों में जिनकी फोटो प्रकाशित कर देते हैं, फोटो के साथ उनका नाम और सदस्यता क्रम भी प्रकाशित करते हैं।

इधर **'करो और देखो'** तथा **'तुम्हारी कलम से'** शीर्षक स्तम्भों के लिए जो रचनाएं प्राप्त हुईं, उनमें अधिकांश स्तर की नहीं रहीं। **'करो और देखो'** के लिए ऐसी रचना होनी चाहिये जो प्रायोगिक महत्त्व की हो एवं प्रयोग नये तथा रुचिकर हों। साथ ही उनमें नवीनता होनी चाहिये और वे आसानी से किये जा सकें। रचना की शब्द-संख्या ८००-१,००० तक होनी चाहिये।

'तुम्हारी कलम से' स्तम्भ के अन्तर्गत विज्ञान-सम्बन्धी रचनाएं प्रकाशित होती हैं। विषय कुछ भी हो सकता है किन्तु उसका नया तथा सूचनाप्रधान होना आवश्यक है। शब्द संख्या १,०००-१,२५० तक होनी चाहिये।

मई अंक तुम्हें बहुत पसन्द आया, यह प्रसन्नता का विषय है।...

तरुणकुमार कलकत्ता : **'बाह्य अवकाश में अन्तरिक्षयानों का मिलन'** (कुमारी प्रमिला) में हाल की अन्तरिक्ष उड़ानों तथा तत्सम्बन्धी वैज्ञानिक प्रगति के विषय में पर्याप्त जानकारी मिलती है। अन्तरिक्ष अनुसन्धान का संक्षिप्त इतिहास विषय को और अधिक रोचक बनाता है। अन्य लेखों में **'हृदय और हृदय रोग'** (सी. एल. संधी.), **'कार्बन का बढ़ता हुआ परिवार'** (सत्यकुमार) तथा **'रेशम का कीड़ा'** (यमुनाधर पाण्डेय) पसन्द आये।

करोड़ीप्रसाद (नयी दिल्ली) : मई अंक की वैज्ञानिक कहानी **'एक फूल-सी कोमल जिन्दगी'** (समरजीत कर) में नवीनता मिली।

शोभा चक्रवर्ती (कलकत्ता) : **'बाह्य अवकाश में अन्तरिक्षयानों का मिलन'** (कुमारी प्रमिला) अत्यन्त रोचक लगा। कृपया समय-समय पर अन्तरिक्ष अनुसन्धानों से सम्बन्धित लेख दिया करें।

नित्यानन्द यादव (मुंगेर) : **'रासायनिक खाद'** (राजेन्द्रप्रसाद वार्ष्णेय) विशेष रूप से उपयोगी लगा। कहानी **'एक फूल-सी कोमल जिन्दगी'** (समरजीत कर) रोचक है। **'अंगूर'** (नरेन्द्र छाबड़ा) सूचनाप्रधान है।

...और जून अंक भी तुम पसन्द करोगे।

सस्नेह तुम्हारी,

कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ७५ के विजेता

प्रथम पुरस्कार

सुधा १२९८३) चन्दौसी।

द्वितीय पुरस्कार

योगेन्द्रनन्दन (१३६६३) मेरठ।

तृतीय पुरस्कार

रामेश्वर (१८७०१) कलकत्ता।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ७७

नाम.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

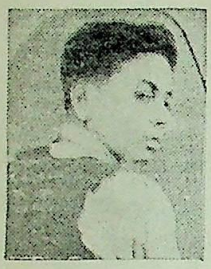

अशोककुमार
(स. सं. १२३७०)

छगनलाल
(स. सं. १७०१४)

कान्तिकुमार
(स. सं. १८२२२)

रमेशचन्द्र
(स. सं. १८२३६)

१२२७८ बलवीर बहादुर (१७) पटना, ७९ शशिभूषण चौधरी (१५) समस्तीपुर, ८० सादानन्द गिरिधर (१८) रेवारी, ८१ ब्रह्मप्रकाश इन्दारिया (१५) चूरु, ८२ रामेश्वरप्रसाद सांखला (१८) अजमेर, ८३ राजेन्द्रसिंह विष्ठ (१६) पिथोरागढ़, ८४ शिवमूर्तिदेव (२२) बलभद्रपुर, ८५ राजाराम पाराशर गौड़ (१६) पदमनगर, ८६ ज्ञानेन्द्रलाल श्रीवास्तव (१७) आजमगढ़, ८७ कृष्ण-मोहन कोरमारकर (२०) सन्ताल परगना, ८८ जगमोहनलाल खण्डेलिया (१९) दिल्ली, ८९ अवधेशकुमार सक्सेना (११) लखनऊ, ९० गोविन्द त्रिपाठी (१५) वाराणसी, ९१ त्रिभुवनदास गुप्ता (१६) सीहोर, ९२ विनीता पहलवान (१३) सीहोर, ९३ मंजुलता जैन (१४) फलना, ९४ सुभाषचन्द्र ओच्छवलाल परील (२१) गुजरात, ९५ सत्येन्द्रकुमार चौधरी (१७) पाकर, ९६ अम्बुजकुमार (१७) मेरठ सिटी, ९७ साधना रस्तोगी (१७) मेरठ, ९८ सन्तोषकुमार संलट (१९) सागर, ९९ भरतलाल नेमा (१७) सागर, १२,३०० सुराजकुमार (९) बण्डा, १ प्रभातकुमार (१७) शिवपुरी, २ विजयकुमार (१६) शिवपुरी, ३ प्रकाशकुमार (१२) शिवपुरी, ४ प्रभातकुमार (१५) मेहसी, ५ करुणाकर (८) सुन्दरगढ़, ६ केदारनाथ (१६) सुन्दरगढ़, ७ अभिमन्यु (२०) सुन्दरगढ़, ८ महेन्द्रकुमार (१०) सुन्दरगढ़, ९ प्रफुल्लकुमार (२३) किंजीर्मा, १० नरेशकुमार (१८) सुन्दरगढ़, ११ प्रभातचन्द्र (१७) धार, १२ नाथूराम (२०) इटावा, १३ भारतभूषण (१७) सहारनपुर, १४ प्रमिन्दरसिंह (१८) जबलपुर, १५ अनिलकुमार (१८) मुंगेर, १६ अशोककुमार (१६) मुंगेर, १७ बलवन्तराम (१५) संगरिया, १८ हरजीतसिंह (१८) सहारनपुर, १९ कैलाशनारायण (१८) इलाहाबाद, २० विजयकुमार (१७) लखनऊ, २१ अरुणकुमार (१४) गया, २२ जहीरलहसन (१९) देवरिया, २३ चक्रवर्तीकुमार (१८) अयोध्या, २४ पुष्पेन्द्रकुमार (१६) एटा, २५ योगेन्द्रकुमार (१७) सादुलपुर, २६ अरहन्तकुमार (१८) पुरकाजी, २७ विजय-कुमार (१६) बिहारशरीफ, २८ यशपालसिंह (२१) शामली, २९ कृष्णकान्त (२०) भरथना, ३० रवीन्द्रकुमार (१०) विदिशा, ३१ राजेन्द्रकुमार (१८) टीकमगढ़, ३२ प्रकाशनारायण (१९) इन्दौर, ३३ कुलदीपकुमार (१६) भोपाल, ३४ आशुतोषकुमार (१६) गोरखपुर, ३५ राजेन्द्रप्रसाद (१५) चुनार, ३६ काशमीरीलाल (१८) सिरसा, ३७ हरीश (१८) कानपुर, ३८ इसहाक (१७) बण्डा, ३९ आशा (१७) वाराणसी, ४० ओमप्रकाश (१५) पटना, ४१ सतीशकुमार (१८) दिल्ली, ४२ अलोक (१४) पहारू, ४३ विपिनकुमार (१२) बढ़ौनिया, ४४ सज्जनराज (१७) बम्बई, ४५ विनोदकुमार (१६) बस्ती, ४६ शान्ति-रंजन (१२) नेतरहाट, ४७ रामरतन (१९) हावड़ा, ४८ वीरेन्द्र-कुमार (१८) फरीदाबाद, ४९ भगवानप्रसाद (२०) मण्डलेश्वर, ५० देशबन्धु (१६) सहारनपुर, ५१ उदयनारायण (१४) लश्कर, ५२ विभूतिनारायण (१४) पटना, ५३ परागकुमार (१८) बिलासपुर, ५४ जगदीशचन्द्र (१९) आगरा, ५५ कृष्णकुमार (१८) शिमला, ५६ गजेन्द्रसिंह (२२) विजयगढ़, ५७ दुलालचन्द्र (१९) गोरखपुर, ५८ हैदरअली (१७) जुगसलाई।

श्यामसुन्दर
(स. सं. १८२४०

वेदप्रकाश
(स. सं. १८२४

अमृत राजेन्द्र
(स. सं. १८२४

देवेन्द्रकुमार
(स. सं. १८२४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका धन

पंजाब नेशनल बैंक में

संपूर्णत: सुरक्षित है !

PR-PNB-6526 Ad/1 H

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७७

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : १० अगस्त

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५१ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो—

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७७ के उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर १० अगस्त तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायेगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७७ के प्रश्न

(१) कौन-सा जानवर मधुमक्खियों को खा जाता है ?

(२) पालतू तोते कितने वर्षों तक जीवित रहते हैं ?

(३) एक पौण्ड रेडियम प्राप्त करने के लिए कितने कच्चे माल की आवश्यकता पड़ेगी ?

(४) कौन सी वनस्पति तेजी से बढ़ती है ?

(५) विश्व में सूर्य किस स्थान पर हरे रंग का दिखायी पड़ता है ?

(६) सबसे बड़े माथ (moth) का क्या नाम है ?

(७) मनुष्य ने सर्वप्रथम चन्द्रमा से कब सम्पर्क स्थापित किया ?

(८) क्या जानवरों के दांतों में भी दर्द उठता है ?

(९) क्लोरोफार्म का आविष्कार किसने किया ?

(१०) स्नैपड्रैगन (snapdragon) क्या है ?

प्रतियोगिता संख्या ७५ के प्रश्नों के उत्तर

(१) हां, प्रोटीन संश्लेषण पर हारमोनों का प्रभाव पड़ता है।

(२) कैलीफोर्निया इंस्टीट्यूट आव टेकनोलोजी।

(३) वह प्रकाश जो सूर्य से पृथ्वी पर आता है और फिर परावर्तित होकर चन्द्रमा पर जाता है, और फिर चन्द्रमा से परावर्तित होकर पृथ्वी पर आता है।

(४) बहु-कोषीय होते हैं।

(५) मत्सय है।

(६) लगभग ४० फुट।

(७) अरब किमियागर (७६० ई.)।

(८) वे या तो मृत नक्षत्र हैं या उनसे नये नक्षत्र उत्पन्न होंगे।

(९) काले रंग का।

(१०) द्विबीजपत्री (dicotyledonous), एक बीजपत्री (monocotyledonous)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चलचित्र में ध्वनि-संयोजन

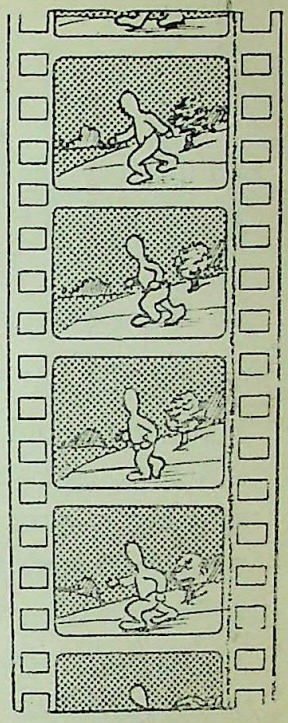

ओमप्रकाश गुप्त (स. सं. ४०४४)

आजकल ध्वनि-चलचित्र मनोरंजन का प्रमुख साधन माना जाता है। इसका प्रचलन इतना अधिक है कि प्रत्येक व्यक्ति इसके बारे में अधिक से अधिक जानकारी रखता है। परन्तु कुछ विषय ऐसे हैं जिन्हें शायद सभी पूर्णरूप से नहीं जानते। इन्हीं में से एक है चलचित्र में ध्वनि-संयोजन। जब फिल्म का टुकड़ा हाथ में लेकर देखते हैं, तो पाते हैं कि एक तरफ उसके आड़ी-तिरछी-सी रेखा है। इसी रेखा में चलचित्र में ध्वनि-संयोजन का रहस्य छिपा है।

ध्वनि-संयोजन की विधियां

ध्वनि-संयोजन की मुख्यत: दो विधियां प्रयोग में लायी जाती हैं—(१) परिवर्तनशील घनत्व विधि और (२) परिवर्तनशील क्षेत्रफल विधि।

परिवर्तनशील घनत्व विधि

जिस ध्वनि को संयोजित करना होता है उसे माइक्रोफोन (microphone) म से प्राप्त करते हैं (चित्र १), और उसे स्टेप-अप-ट्रांन्स-फारमर (step-up-transformer) से होते हुए एक विशेष नियोन लैम्प (neon lamp) में भेजते हैं। ध्वनि-कम्पन माइक्रोफोन में ठीक उसी प्रकार का विद्युत्-कम्पन उत्पन्न करता है जो बाद में एक्साइटर लैम्प में भेज दिया जाता है। यह कम्पन लैम्प के प्रकाश की तीव्रता में प्रकम्पन उत्पन्न करता है। इस प्रकार ध्वनि कम्पन को प्रकाश कम्पन में सरलता पूर्वक बदल दिया जाता है। इस लैम्प केप्रकाश को एक दीवार ब के पतले छिद्र (slit) ब में प्रवेश कराया जाता है। इस छिद्र की चौड़ाई ·००६ इंच होती है। प्रकाश इस छिद्र से निकलने के बाद दूसरी तरफ गतिशील फिल्म पर पड़ता है। इस प्रकार फिल्म अ पर चांदी के परत की मोटाई भिन्न-भिन्न पड़ती है। इसकी मोटाई आपतित प्रकाश की तीव्रता पर निर्भर करती है।

परिवर्तनशील घनत्व विधि में एक उप-विधि काम में लायी जाती है जिसे 'लाइट वाल्व' विधि कहते हैं। इस विधि में माइक्रो-फोन के विद्युत् को एम्प्लीफायर (amplifier) द्वारा एम्प्लीफाइड (amplified) कर लिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

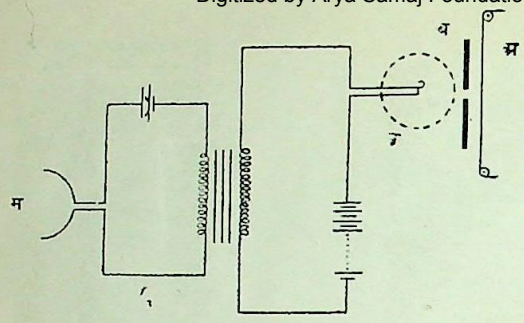

(चित्र १) परिवर्तनशील घनत्व विधि

जाता है और फिर इसे वर्गाकार डूरेलुमिन रीबन (duralumin ribbon) के दरार क में प्रवेश कराया जाता है (चित्र२)। यह एक पतले छिद्र के तुरन्त सामने रखी रहती है। इस दरार की ऊपरी और निचली भुजाएं छिद्र के किनारे से ·००२ इंच की दूरी पर रहती हैं। छिद्र के प्रकाश को एक ताल द्वारा फिल्म च पर केन्द्रित कर लिया जाता है। इस केन्द्रित प्रकाश की मोटाई ·००१ इंच होती है। दरार क को एक शक्तिशाली विद्युत्-चुम्बक के क्षेत्र में रखा जाता है। यह चित्र में स्थायी-चुम्बक ख से प्रदर्शित किया गया है।

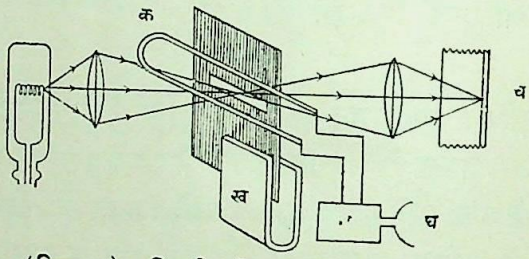

(चित्र २) परिवर्तनशील घनत्व विधि की एक उप-विधि—लाइट वाल्व विधि

जब रीबन क के विद्युत् को बढ़ाया जाता है, तो इसकी भुजाएं ऊपर की तरफ चलती हैं और इस प्रकार छिद्र की चौड़ाई बड़ी हो जाती है। विद्युत् की कमी छिद्र को छोटा कर देती है। इस प्रकार फिल्म पर आपतित होने वाले प्रकाश की तीव्रता माइक्रोफोन घ में उत्पन्न विद्युत् के साथ घटती-बढ़ती है। फलस्वरूप फिल्म पर ध्वनि-रेखा में परिवर्तनशील घनत्व की पट्टियां बन जाती हैं।

परिवर्तनशील क्षेत्रफल विधि

इस विधि में ध्वनि-कम्पन को माइक्रोफोन द्वारा प्राप्त किया जाता है और प्राप्त विद्युत्-कम्पन को आइनथोवेन स्ट्रिंग-आसीलोग्राफ (einthoven string-oscillograph) में भेज दिया जाता है। इस आसीलोग्राफ में एक दर्पण होता है। यह चित्र ३ से स्पष्ट है। इस दर्पण में माइक्रोफोन का विद्युत्-कम्पन प्रकम्पन उत्पन्न करता है। अब किसी लैम्प के प्रकाश को उत्तल ताल द्वारा इस दर्पण पर केन्द्रित किया जाता है। प्राप्त परावर्तित प्रकाश को एक छिद्र से होते हुए गतिशील फिल्म पर डाला जाता है। छिद्र और फिल्म दोनों लम्बवत् रखे रहते हैं। आसीलोग्राफ का विद्युत्-कम्पन छिद्र के परिवर्तनशील भाग को दीप्तिमान कर देता है। इस प्रकार वह क्षेत्र जिस पर चांदी की परत होती है, आपतित ध्वनि-कम्पन के अनुसार बदलता रहता है। फिल्म में यह परिवर्तनशील क्षेत्र एक-रेखीय भी हो सकता है तथा द्वि-रेखीय भी। चित्र-रेखांकन में यह प्रदर्शित किया गया है।

नियम के अनुसार ध्वनि-संयोजन अलग ही कक्ष में सम्पन्न होता है। यह कक्ष उस स्टूडियो से दूर रहता है जहां पर चित्र लिया जाता है। वास्तव में चित्र एवं ध्वनि-संयोजन

(चित्र ३) परिवर्तनशील क्षेत्रफल विधि

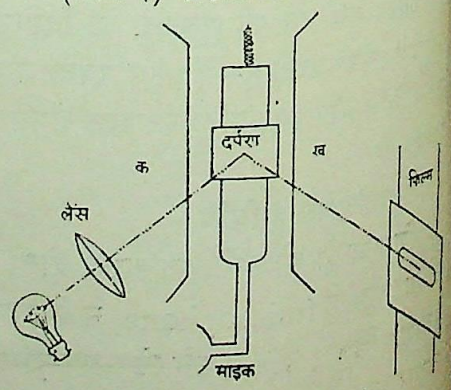

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ-साथ किये जाते हैं। इसमें दो फिल्में ली जाती हैं—एक चित्रलेने के लिए और दूसरी ध्वनि-संयोजन के लिए। दोनों एक साथ ही चलायी जाती हैं। प्रामाणिक गति १८ इंच प्रति सेकेण्ड है। ये दोनों फिल्में फिर साफ कर ली जाती हैं। इन दो फिल्मों से एक तीसरी फिल्म प्राप्त की जाती है। इस फिल्म में ध्वनि-रेखा चित्र के ठीक बगल में होती है। यह फिल्म उपरोक्त दो फिल्मों का पाजिटिव होती है। इस फिल्म को एक एक्सपोजिंग ऐपेरेटस में चलाया जाता है। इस फिल्म पर पहले चित्र और बाद में ध्वनि-रेखा उतारी जाती है। फिल्म के दूसरी ओर का भाग एक अपारदर्शक कागज से ढंका रहता है। इस फिल्म को साफ कर लिया जाता है। अब यह प्रयोग के लिए उपलब्ध है। चित्र-प्रदर्शन की औसत गति २४ चित्र प्रति सेकण्ड है। सामान्यतः यही गति व्यवहार में लायी जाती है। ●

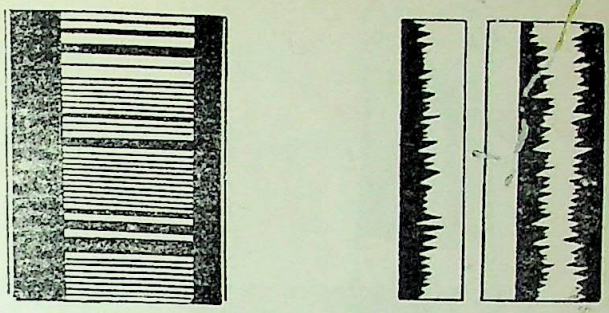

अ ब स

(चित्र ४) ध्वनि-चित्र—(अ) परिवर्तनशील घनत्व विधि, (ब) परिवर्तनशील क्षेत्रफल विधि (एक रेखीय), और (स) परिवर्तनशील क्षेत्रफल विधि (द्विरेखीय)

यहां से काटिए

विज्ञान क्लब सदस्यता, विज्ञान-लोक

कृष्णा दीदी,

मुझे विज्ञान क्लब का सदस्य बना लीजिए।

जन्म-दिन _____ आयु _____

नाम _____

घर का पता _____

_____

_____

स्कूल का नाम _____

शिक्षा _____ रुचि _____

यहां से काटिए

यहां से काटिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज ही

ब्रुअरी की तरोताज़ा

बीयर से आनन्द उठाइये

इसका स्वाद अत्यन्त रुचिकर है। बीयर अच्छी चीज़ों के स्वाद को और भी अधिक अच्छा बना देती है। यह स्वाद में परिपूर्ण आज का स्वल्पाहार है।

गोल्डन ईगल

लागर बीयर

डायर मीकिन ब्रुअरीज लि० स्थापित १८५५

मोहन नगर, (गाज़ियाबाद) यू० पी०

सोलन ब्रुअरी — लखनऊ डिस्टिलरी — कसौली डिस्टिलरी

११० वर्ष से अधिक का अनुभव विश्वास की गारन्टी है।

DMB-NA-8

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक प्रकाशन

(हाई स्कूल एवं हायर सेकेण्डरी स्कूल के विद्यार्थियों के लिए)

प्रारम्भिक भौतिकी (मूल्य : ३·५०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Price : 75 paise June 1966 Regd. No. L 1588
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीहारिका

कहानी मासिक

आज ही

ब्रुअरी की तरोताज़ा

बीयर से आनन्द उठाइये

इसका स्वाद अत्यन्त रुचिकर है। बीयर अच्छी चीजों के स्वाद को और भी अधिक अच्छा बना देती है। यह स्वाद में परिपूर्ण आज का स्वल्पाहार है।

गोल्डन ईगल

लागर बीयर

डायर मीकिन ब्रुअरीज़ लि० स्थापित १८५५

मोहन नगर, (गाज़ियाबाद) यू० पी०

सोलन ब्रुअरी — लखनऊ डिस्टिलरी — कसौली डिस्टिलरी

११० वर्ष से अधिक का अनुभव विश्वास की गारन्टी है।

जुलाई अंक

अब सब जगह उपलब्ध है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

समुद्र-तल के नीचे जीवन ३
—कुमारी प्रमिला

उर्वरक ९
—सत्यकुमार

लुई पाश्चर २०
—डा. हर्ष प्रियदर्शी

एक अजनबी ग्रह की यात्रा २८
—निरंजन पाल

आयनमण्डल ३९
—कुलदीप चड्ढा

केसर की नयी खेती ५०
—रतनकुमार टण्डन

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां ३८

विचित्र संसार ४७

विज्ञान क्लब ५४

इनाम लो ५६

तुम्हारी कलम से ५७

वर्ष ७

इसे एक आवश्यकता के रूप में स्वीकार करना पड़ेगा कि हमारे देश में वैज्ञानिक अनुसन्धान और प्रगति का आन्दोलन चले। लेकिन भारतीय वैज्ञानिकों को सतर्क रहना होगा, ताकि ऐसे किसी आन्दोलन में उनकी भूमिका किन्हीं पश्चिमी आन्दोलनों का अनुकरण न करे, क्योंकि हमारे देश के समक्ष कुछ मूलभूत समस्याएं हैं, और इन्हें प्राथमिकता दी जानी चाहिये।

अब हमारा देश पूर्व औद्योगीकरण की स्थिति से औद्योगीकरण की स्थिति में आ चुका है। हमारे सामने इस समय विदेशी मुद्रा की समस्या है। किन्तु उपयोगी वैज्ञानिक अनुसन्धान देश को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में बहुत कुछ कर सकते हैं।

यह खेद का विषय है कि हमारे देश में वैज्ञानिक, अनुसन्धानात्मक प्रयास सीमित रूप में ही उद्योगों में एक सहायक की भांति प्रयोजित होता है। अनुमान है कि प्रति १५,००० भारतीय वैज्ञानिकों में मात्र ५०० वैज्ञानिक औद्योगिक अनुसन्धानों में जुटे हैं।

हमारे देश में प्रयोगों के लिए पर्याप्त उपकरण नहीं हैं। किन्तु उपकरणों के लिए हमें पूरी तरह विदेशों पर निर्भर नहीं रहना चाहिये। विदेशों से वे ही उपकरण मंगाये जायें जिनसे सैद्धान्तिक दृष्टि से वैज्ञानिक अनभिज्ञ हैं।

निश्चय ही स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात आज तक भारत में विज्ञान ने काफी प्रगति की है और किसी भी विकासित देश से कम वैज्ञानिक और प्रयोगशालाएं यहां नहीं हैं। किन्तु यह पूरी शक्ति संगठित रूप में क्रियात्मक दिशा में नियोजित होनी चाहिये।

अंक ६

एक प्रति : ७५ पैसे
वार्षिक : ९ रुपये

सम्पादक : शंकर मेहरा
प्रकाशक : मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा-३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुद्र-तल के नीचे जीवन

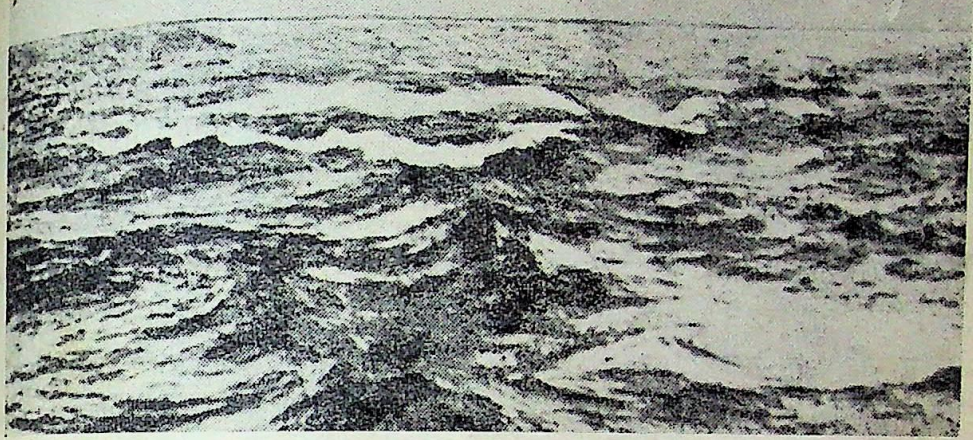

कुमारी प्रमिला

पृथ्वी पर जीवन का सर्वप्रथम अभ्युदय समुद्र-जल में हुआ। समुद्र ने उन्हीं अनगिन जातियों को जन्म नहीं दिया जो जल में ही रहीं। समुद्र ने उन जन्तुओं को भी जन्म दिया जो किनारे, भूमि पर आकर विकास करने लगे और जिनकी जातियां धीरे-धीरे मैदानों, जंगलों और रेगिस्तानों में पहुंच गयीं।

लेकिन समुद्र अस्तित्व में कैसे आया? हम नहीं जानते कि पृथ्वी के निर्माण के समय की स्थितियां क्या थीं। निश्चय ही पृथ्वी द्रव रूप में रही होगी। उस समय इस पर कोई समुद्र नहीं रहा होगा। तब यह बहुत गरम थी। इसकी गरमी का अनुमान इस बात से कर सकते हैं कि ऊंचे से ऊंचे द्रवणांक की धातुएं भी उस समय द्रव रूप में थीं। धीरे-धीरे पृथ्वी ठण्डी होती गयी। फिर सूर्य के आकर्षणशक्ति के प्रभाव से इसका एक भाग इससे अलग होकर शून्य में चला गया और इसकी परिक्रमा करने लगा। यह चन्द्रमा का जन्म था। अनुमान के आधार पर कहा जा सकता है कि यह घटना प्रायः तीस खरब वर्ष पूर्व घटी होगी।

प्रशान्त महासागर का जन्म

किन्तु जब चन्द्रमा का जन्म हुआ उस समय पृथ्वी के समुद्र अस्तित्वमय नहीं थे। आज जहां प्रशान्त महासागर है, वहां विशालकाय गड्ढा जरूर था, क्योंकि पृथ्वी का वह भाग उपग्रह बन चुका था। पृथ्वी धीरे-धीरे ठण्डी हो रही थी और इसके चारों ओर घने मेघ थे। इन मेघों में असीम जल था। लेकिन फिर भी पृथ्वी कल्पनातीत रूप से गरम थी। इसी लिए वर्षा नहीं हो सकी। मेघ क्रमशः और घने होते गये। उनका घनापन इतना अधिक रहा होगा कि पृथ्वी पर सूर्य की किरणें नहीं पहुंचती रही होंगी, और हर ओर अन्धकार छाया रहता होगा।

धीरे-धीरे पृथ्वी ठण्डी होती गयी, फिर मेघ बरस पड़े। वह वर्षा विचित्र थी। शताब्दियों तक वर्षा होती रही। अरबों वर्ष तक पृथ्वी के ऊपरी धरातल में होने वाले परिवर्तनों के कारण उस स्थान के अतिरिक्त जहां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से चन्द्रमा का जन्म हुआ था, अनेक गड्ढे बन चुके थे। वर्षा का जल इन गड्ढों में भरता रहा। अब समुद्र आकार ले रहे थे।

आरम्भिक समुद्र के जल में निश्चय ही केवल नमक रहा होगा। लेकिन दीर्घ वर्षाकाल में पृथ्वी की चट्टानों से घुलकर अनेक तत्त्व भी अनन्त सागर में पहुंचते रहे। समय के साथ-साथ समुद्र और कड़वा होता गया।

यह कहना कठिन है कि समुद्र-जल से जीवद्रव्य (protoplasm) की उत्पत्ति कैसे हुई और उस जीवद्रव्य से जीवन इतना विकास कैसे कर सका। निश्चय ही तब हलके गरम जल में आवश्यक तत्त्वों तथा दबाव और सूर्य के प्रकाश के होने पर ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गयी हो जिससे जीवन अस्तित्व में आया हो। फिर भी यह तो मान्य है कि जीवन का सर्वप्रथम विकास निर्जीव पदार्थों से हुआ। वे परिस्थितियां वास्तव में क्या थीं, इसका केवल अनुमान लगाया जा सकता है, क्योंकि रसायनज्ञों को प्रयोगशाला में जीवन के कृत्रिम विकास में पूर्ण सफलता अभी तक नहीं मिली है।

जीवन-विकास से पूर्व रासायनिक संयोग की क्रियाओं की सम्भावना

प्रथम जीवित कोष के निर्माण से अरबों वर्ष पूर्व से जीवन अस्तित्व में आने के लिए प्रयत्नशील रहा होगा। रासायनिक संयोग की विभिन्न क्रियाएं होती रही होंगी। जीव विज्ञानवेत्ताओं ने अपने अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला है कि एक-कोषीय जीवन के विकास से पूर्व भी जीवन विकास की किन्हीं प्रक्रियाएं

समुद्र-जल में उद्भूत जीव आकस्मिक रूप से हरीतिमा (chlorophyll) का विकास कर सके... और वनस्पति-जगत पृथ्वी पर आया। लेकिन एक अन्य जीवन-वर्ग वनस्पतियों का भक्षण करने लगा। यह जन्तु-जगत के विकास का कारण बना

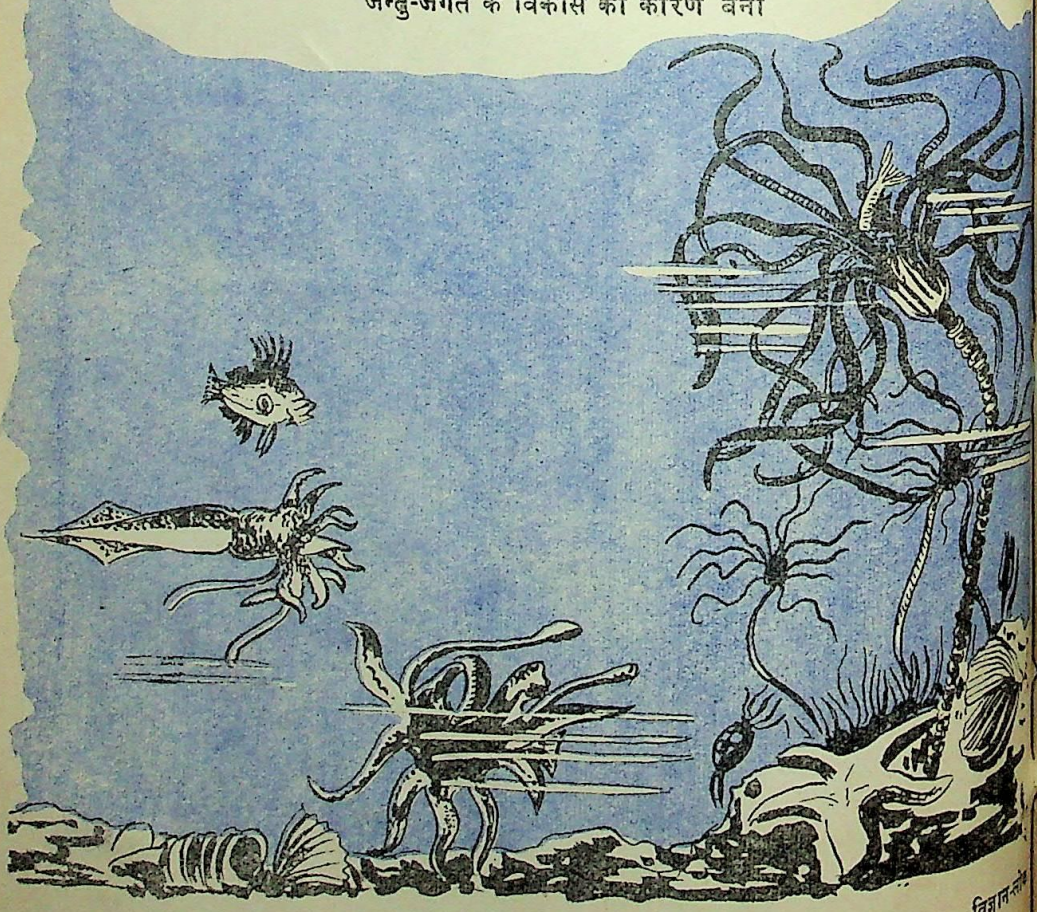

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

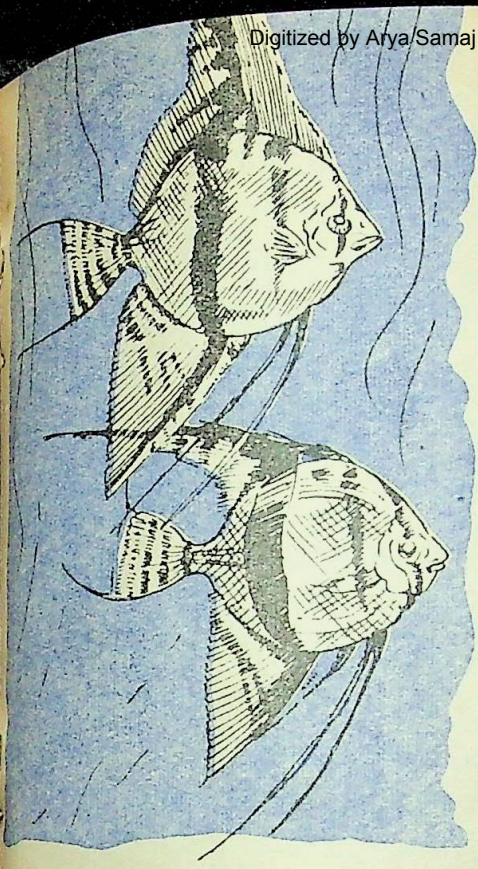

अनन्त सागर में एक निश्चित गहराई में तैरती ऐंगल मछलियां (angel-fishes) रुक-रुककर प्रकाश पैदा करती हैं

से अवश्य गुजरा होगा। जीव-द्रव्य के विषम अणु का विकास पूर्व की किसी अल्प विकसित स्थिति से हुआ लगता है; जीवद्रव्य का यह विषम अणु विकास की अगली स्थिति में अन्य समान जीवद्रव्यीय अणुओं को उत्पन्न करने लगा और ये अणु साथ-साथ रहने लगे। इस तरह जीवन का एक अन्तहीन श्रृंखला-क्रम प्रवाह प्रारम्भ हुआ।

आरम्भिक जीवन बहुत कुछ आज के जीवाणुओं की भांति रहा होगा। वह न वनस्पति रहा होगा और न जन्तु। हां, वह जीवन अवश्य रहा होगा और अपना निर्वाह समुद्र के जल में प्राप्य कारबन यौगिकों पर करता रहा होगा या आज के लौह तथा गन्धक जीवाणुओं की भांति वह समुद्र के जल में उपस्थित तत्त्वों को सीधा ही ग्रहण करता रहा होगा।

धीरे-धीरे पृथ्वी पर छाये मेघों का आवरण झीना होता रहा। एक समय ऐसा आया जब सूर्य का प्रचुर प्रकाश पृथ्वी पर पहुंच सका। इस समय तक समुद्र जल में उद्भूत कुछ जीव अपने में हरीतिमा का विकास कर चुके थे। सूर्य के प्रकाश में वे वातावरण से कार्बन डाइआक्साइड और समुद्र-जल से आवश्यक तत्त्वों को लेकर अपने लिए भोजन का निर्माण करने लगे। उनके जीवन के निर्वाह के लिए स्टार्च और शर्करा आवश्यक हो गया और इस तरह वनस्पति-जगत् पृथ्वी पर आया।

एक अन्य जीवन-वर्ग जो हरीतिमा से वंचित था, वानस्पतिक भक्षण की ओर बढ़ा। उसने उपयुक्त पौधों को खाना प्रारम्भ कर दिया। इस तरह जन्तु-जगत् का विकास प्रारम्भ हुआ। आज भी जन्तु-जगत् तथा वनस्पति जगत् का विकास हो रहा है।

समुद्र-जल के दबाव के कारण कई जाति की मछलियां जल के निश्चित स्तरों तक ही सीमित हैं

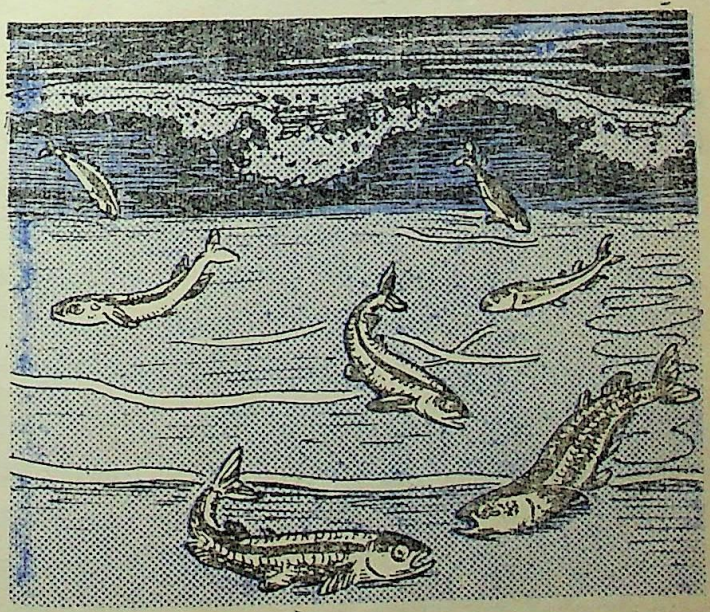

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

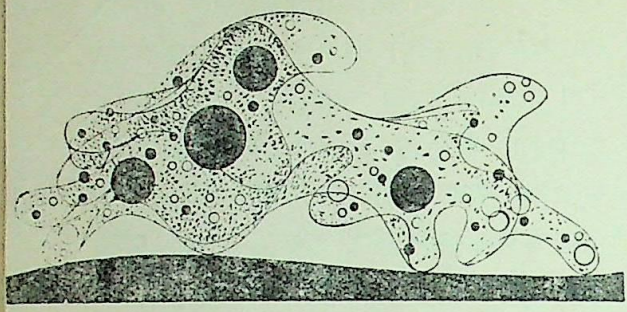

एक-कोषीय जीव अमीबा (amoeba)—**एक-कोषीय जीवों के पश्चात् कोष-उपनिवेश जीवन अस्तित्व में आया**

वर्ष पर वर्ष बीतते गये—करोड़ों वर्ष। जीवन विषम होता गया। एक-कोषीय जीवों के पश्चात् कोष-उपनिवेश जीवन जो कई कोषों का संग्रह था, विकसित हुआ। इसके बाद ऐसे जीव विकसित हुए जिनके बाह्य तथा आन्तरिक अंग थे। मछलियां, स्पंज और केकड़े उपयुक्त उदाहरण हैं।

वनस्पति-जगत् भी विकास में संलग्न रहा। अणु वनस्पति के पश्चात् सेवार तथा मूल वाली वनस्पति का विकास हुआ।

समुद्र की सतह के नीचे अनोखा संसार

समुद्र की सतह के नीचे अनोखा संसार है। भांति-भांति के जीव वहां मिलेंगे, कई किस्म की मछलियां, मूंगे, स्पंज, केकड़े और न जाने कितने ही जीव।

जल की सतह से नीचे का परिवेश सदैव जलवायु की दृष्टि से सामान्य रहता है। वहां न अधिक गरमी रहती है और न अधिक ठण्डक। समशीतोष्ण कटिबन्धों में शायद ही तापमान कभी ८५° फा. से ऊपर जाता होगा। ध्रुवीय क्षेत्रों में तापमान २९° फा. से नीचे नहीं जाता। समुद्र के तीन चौथाई से अधिक भाग में मौसम-परिवर्तन के साथ-साथ तापमान में परिवर्तन अधिक से अधिक पांच अंश होता है। ८०० फुट से नीचे मौसम-सम्बन्धी किसी परिवर्तन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

समुद्र के जीव-जन्तुओं की प्रमुख विशेषता यह है कि वे सदैव जल के सम्पर्क में रहते हैं। वे अपने आन्तरिक संस्थानों में पानी सींच लेते हैं और उससे आवश्यक गैसें—आक्सीजन और कार्बन डाइआक्साइड—तथा लवण और अन्य तत्त्व प्राप्त करते हैं जो उनके पोषण के लिए आवश्यक हैं।

जल में जन्तुओं तथा वनस्पति को गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव से मुक्ति मिली रहती है। जल की वनस्पति को न तने की जरूरत होती है और न जड़ों की, कि वे सीधी रह सकें। जलीय जन्तुओं के पैर की हड्डियां स्थलीय जन्तुओं की भांति कठोर तथा शक्तिशाली नहीं होतीं। निश्चय ही यह बात अजीब लगेगी कि १४० टन वजन की ह्वेल की अस्थियां स्पंजी होती हैं तथा उनमें तेल भरा रहता है। यदि ह्वेल को पानी के किनारे, रेत पर छोड़ दिया जाय, तो उसकी मृत्यु हो जाती है जबकि वह सांस लेने वाली स्तनपोषी है। इसका प्रमुख कारण यह है कि इसके फेफड़े इसके शरीर के वजन के कारण पिचक जाते हैं।

साढ़े तीन सौ फुट से अधिक गहराई में कोई वनस्पति नहीं

इस तरह हम पाते हैं कि समुद्र जीवन के प्रति अत्यन्त उदार है। यह अपने गर्भ में जीवन को विभिन्न अवस्थाओं में विकसित होने के लिए सहायता करता रहता है। वास्तव में जलचारी, स्थलचारी जन्तुओं के मुकाबले अधिक विकास नहीं कर सके हैं, इसका प्रमुख कारण यह है कि पानी की सतह के नीचे की परिवेशगत अवस्थाएं वही हैं जो लाखों-करोड़ों वर्ष पूर्व थीं, किन्तु स्थल पर जीवन लगातार परिवर्तनों से गुजरता रहा है और अब भी गुजर रहा है। जल-जीवन के उपादान हैं—तापमान, जल का खारापन, दबाव तथा प्रकाश।

समुद्र के जल का दबाव जल जीवन को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कई परतों में विभाजित करता है। कोई जीव जितनी ही गहराई में होगा, उस पर उतना ही दबाव पड़ेगा। ह्वेल दबाव की एक परत से दूसरी परत तक आसानी से जा सकती है, किन्तु अन्य जन्तुओं के साथ यह बात नहीं है। उन्हें अपनी सीमा में ही रहना पड़ता है।

प्रकाश उन सभी समुद्री वनस्पतियों के लिए आवश्यक है जो अपना भोजन तैयार करती हैं। प्रफाश संश्लेषण क्रिया के लिए प्रकाश बहुत आवश्यक है। इसी क्रिया द्वारा पौधे सूर्य के प्रकाश में और हरीतिमा की उपस्थिति में अपना भोजन तैयार करते हैं।

लेकिन समुद्र में बहुत गहराई तक सूर्य का प्रकाश नहीं पहुंचता। हां, बहुत गहराई में प्रकाश उत्पन्न करने वाले कुछ जन्तु पाये जाते हैं। इन जन्तुओं का अपना प्रकाश होता है। बस, इधर-उधर उनके क्षीण प्रकाश की टिमटिमाहट ही दिखायी पड़ती है।

यही कारण है कि वनस्पति समुद्र में उतनी ही दूर तक पायी जाती है जितनी दूर तक प्रकाश पहुंचता है। यह उल्लेखनीय है कि ३५० फुट से अधिक गहराई में कोई वनस्पति नहीं उगती।

समुद्र तल से नीचे जन्तु-जगत का अद्भुत विस्तार है। जहां बड़ी-बड़ी पृष्ठवंशी (vertebrates) मछलियां है, वहां छोटे-छोटे अपृष्ठवंशी (invertebrates) जीव भी हैं। समुद्र में ऐसे जन्तु भी हैं जो अत्यन्त तीव्रता से गतिशील हैं। फ्लाइंग फिश, डाल्फिन, ब्लू मारलिन आदि की चाल बहुत तेज होती है—लगभग ५० मील प्रति घण्टा।

अधिकांश मछलियों का रंग उनके आस-पास के वातावरण के अनुसार ही है। फिर भी उनका रंग बहुत ही हलका होता है, यद्यपि कुछ अपवाद भी हैं।

बहुत गहराई में थोड़ी ही मछलियां ऐसी हैं जो बिलकुल नहीं देख सकतीं। ८००-१५०० फुट की गहराई पर पायी जाने वाली मछलियों की आंखें बड़ी-बड़ी होती हैं। ये बहुत ही हलके प्रकाश में भी देख सकती हैं।

अनेक ऐसे जन्तु जो जल में तैरते हुए प्रकाश फेंकते हैं, अपने प्रकाश की सहायता से शिकार पकड़ते हैं। ऐसी भी बहुत-सी मछलियां हैं जिनका मुंह लम्बा है तथा उनके मुह में दांत हैं।

अतल गहराइयों में जन्तु-जगत अपने अस्तित्व के लिए सतत संघर्षरत है। वहां एक-दूसरे पर अपने अस्तित्व के लिए निर्भरता है।

समुद्र में घने जंगल

सागर की गहराइयों में घने जंगल हैं। यह बात बहुत अजीब-सी लगती है, लेकिन सत्य है। धरती पर जितने घने जंगल हैं, समुद्र में उससे कम घने जंगल नहीं है। समुद्र में पर्वत हैं, घाटियां हैं और संकरी नहरें हैं। यहां पौधों के अनेक समूह हैं, पर ये आज भी अपनी पुरानी ही अवस्था में हैं—इनकी जड़े नहीं हैं और इनमें पुनरुत्पादन बीज द्वारा नहीं होता, लेकिन अपवाद रूप में कुछ पौधे ऐसे भी हैं

समुद्र-तटवासी कुछ कर्कट (crabs) जल और थल दोनों में रह लेते हैं, लेकिन कुछ जाति के कर्कट केवल स्वच्छ जल में ही रह पाते हैं

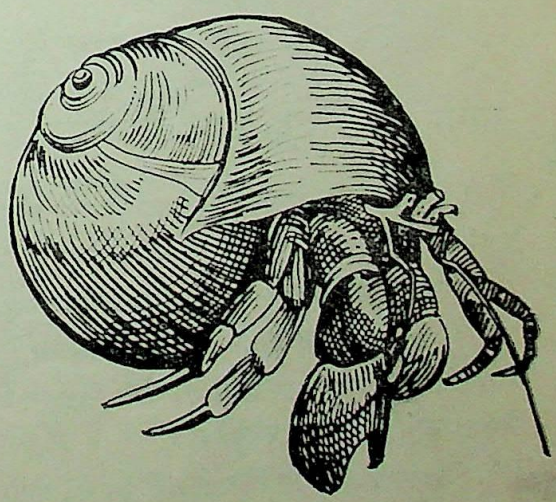

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनमें पुनरुत्पादन बीजों द्वारा होता है। ईल ग्रास (eel graes) ऐसा ही उदाहरण हैं।

सागर के कुछ भागों में जल की एक ऐसी परत है जहां समुद्री प्राणी बहुतायत से मिलते हैं। द्वितीय महायुद्ध के दौरान ऐसी सतह को गहराई मापक यन्त्र से पहली बार अंकित किया गया, तो इसे ही समुद्र का अधस्तल मान लिया गया। बाद में वैज्ञानिकों ने इसे गहरी प्रकीर्ण परत कहा।

दिन की अपेक्षा रात को यह परत सतह के अधिक निकट होती है। गहरी प्रकीर्ण परत द्वारा प्रस्तुत वैज्ञानिक पहेली को अभी तक नहीं सुलझाया जा सका है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि जिस स्थान पर खाद्य पदार्थ अधिक है वहां मछलियों तथा इसी प्रकार के अन्य प्राणियों के एकत्र हो जाने से ऐसी परत बन जाती है।

आंसू की बूंद के आकार की मछली

एक समय वह था जब यह विश्वास किया जाता था कि समुद्र के गहनतम भागों में कोई जीवित प्राणी नहीं हो सकता। किन्तु वैज्ञानिकों ने अपनी खोजों में पाया है कि अतल गहराइयों में भी अनेक प्रकार के प्राणी रहते हैं। अधस्तल से निकाली गयी बहुत-सी मछलियां विचित्र प्रकार की है। एक ऐसी मछली भी पायी गयी है जो आंसू की बूंद के आकार की है और दो इंच लम्बी है। इसकी आंखें बड़ी और नीले रंग की होती हैं।

गहरे पानी के अन्य निवासी प्रायः छिछले पानी में पायी जाने वाली मछलियों से मिलते-जुलते हैं। कुछ वैज्ञानिकों की धारणा है कि मत्स्य परिवार के अनेक सदस्य कभी समुद्र के ठण्डे और प्रकाशरहित स्थानों में चले गये होंगे और बाद में अपने को उन बदली हुई परिस्थितियों के अनुकूल ढाल लिया होगा।

समुद्र में ज्वालामुखी अस्थिरता वाले कई क्षेत्र है। ऐसे क्षेत्रों में गहरी खाइयां हैं। पृथ्वी पर सबसे अधिक गहरे गर्त ये ही है। न्यूजीलैण्ड और सामोआ के बीच समुद्र में टोंगा ट्रैंच है। यह अद्भुत खाई है। इसकी लम्बाई १,५०० मील तथा चौड़ाई १५-३० मील है। अनेक स्थानों पर यह सात मील गहरी है। अभी वैज्ञानिक इस खाई में निवास करने वाले प्राणियों के बारे में पता लगा रहे हैं। बहुत सम्भावना है कि इस खाई में अद्भुत प्राणियों का पता लगे। ज्वालामुखी अस्थिरता वाले कई क्षेत्रों में वैज्ञानिकों को शार्क मछलियां तथा कुछ चमकीले रंगों की मछलियां मिली हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि सागर की गहराइयों में कोई ऐसा स्थान भी होगा जो जीवन से सर्वथा रहित होगा।

पानी की सतह से नीचे भोजन, खनिज और रसायन

कुछ समुद्री मछलियां प्लैंकटन नामक छोटी जैवी रचनाओं को भोजन के रूप में ग्रहण करती हैं। जहां भी प्लकटन अधिक पाया जाता है, वहां ये मछलियां एकत्र हो जाती हैं। प्लैंकटन की गतिविधि का पता लगाकर वैज्ञानिक व्यापारी मछुओं को सलाह दे सकते हैं कि वे अपने जाल कहां डालें।

समुद्र जल में थोड़ी मात्रा में स्वर्ण भी होता है, यद्यपि इस मूल्यवान धातु को निकालने के लिए कोई व्यवहारिक तरीका अभी तक नही निकाला गया। किन्तु समुद्र के अन्य खनिज एवं रसायन स्वर्ण की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

अन्तर्जलीय गैस और तेल के कुएं तो पहले ही खोदे जा चुके हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उर्वरक

सत्यकुमार, एम.एस-सी.

आज उर्वरक का अन्यतम महत्त्व है, यह किसी से छिपा नहीं है। हमारा देश कृषि प्रधान है फिर भी हम अपनी आवश्यकता का अन्न नहीं उपजा पाते। अनाज की पूर्ति के लिए हमें विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है। और यह हाल तो तब है जब हमारे देश के अधिकांश व्यक्तियों को दो समय भरपेट भोजन नहीं मिलता। जनसंख्या के आंकड़े इस समस्या को और जटिल बना देते हैं। इस समस्या का एक ही समाधान है कि उपज बढ़ाई जाय। जो भूमि बंजर पड़ी है उसे खेती योग्य बनाया जाय और जिस भूमि में कम उपज होती है उसे उर्वर बनाकर अधिक उपज की जाय।

अधिकांश तत्त्व पौधों को भूमि से प्राप्त होते हैं

मनुष्य हो या पशु, जीवधारियों का तो अस्तित्व ही पौधों पर आधारित है। शाकाहारी मनुष्य रोटी, दाल, साग, चावल आदि जो कुछ खाता है वह सब पौधों से विभिन्न रूप में प्राप्त होता है। मांसाहारी मनुष्य अण्डा तथा गोश्त भी खाता है। यह पशु-पक्षियों से प्राप्त होता है, और अधिकांश पशु-पक्षी पौधों पर ही निर्भर रहते हैं। अतः मनुष्य को पोषण के लिए सभी आवश्यक तत्त्व प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में पौधों से ही प्राप्त होते हैं, अर्थात् पौधों और जीवधारियों के अधिकांश तत्त्व समान हैं। पौधे अपना भोजन वायु, जल तथा भूमि से लेते हैं तथा ये अपना भोजन ठोस रूप में न लेकर द्रव रूप में लेते हैं।

पौधों को अपनी वृद्धि के लिए मुख्यतः कार्बन, आक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, फासफोरस, पोटैशियम, कैल्शियम तथा कम मात्रा में मैग्नीशियम, गन्धक, लोहा, मैंगनीज, बोरान, तांबा, जस्ते की आवश्यकता होती है। कभी-कभी किसी पौधे को अति सूक्ष्म मात्रा में सोडियम, क्लोरीन, आयोडीन, सिलीकन या मोलिब्डिनम की भी आवश्यकता पड़ सकती है।

अधिकांश तत्त्व पौधों को भूमि से प्राप्त होते हैं। यदि स्थान विशेष की भूमि में किन्हीं तत्त्वों की कमी होगी, तो पौधे में उनकी कमी स्पष्ट दीखेगी। पौधे की वृद्धि, फल, फूल और बीज के विकास पर उसका प्रभाव पड़ेगा। वृद्धि रुकने के अतिरिक्त पौधे बीमारियों के शिकार भी हो सकते हैं। आवश्यक तत्त्व न रहने या कम मात्रा में रहने के कारण उनमें रोगों से लड़ने की क्षमता नहीं रहती है। इन सबका उपज पर प्रभाव पड़ता है। उर्वरकों की सहायता से यह कमी दूर की जा सकती है। किस फसल के लिए कौन से तत्त्व विशेष रूप से आवश्यक हैं तथा किस भूमि में कौन से तत्त्वों की कमी है, इसका रासायनिक अध्ययन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने के पश्चात् उर्वरकों द्वारा यह कमी पूरी की जा सकती है।

पौधों को पोशकांशों की प्राप्ति दो प्रकार से करायी जा सकती है

उर्वरकों को प्रायः खाद भी कह देते हैं। वैसे प्राकृतिक रूप से उपलब्ध जिन पदार्थों को मल-मूत्र, गले-सड़े पदार्थ, हड्डियों का चूरा इत्यादि को उर्वरक के रूप में प्रयुक्त करते हैं, उन्हें खाद कहते हैं। खाद का प्रचलन पुरातन काल से चला आ रहा है। परन्तु खाद देने के पश्चात् भी पौधों में तत्त्वों की कमी रह जाती थी। इसकी पूर्ति रासायनिक पदार्थों द्वारा की गयी, जैसे नाइट्रोजन के लिए अमोनियम सल्फेट देकर। इन रासायनिक पदार्थों का नाम 'उर्वरक' पड़ गया। एक उर्वरक प्रायः एक ही तत्त्व की पूर्ति करता है। प्रकृति द्वारा भूमि में उपलब्ध पौधे के लिए आवश्यक तत्त्व नष्ट होते रहते हैं तथा फिर प्राप्त होते रहते हैं। यदि ऐसा न होता, तो भूमि में तत्त्वों का या उन तत्त्वों के यौगिकों का अक्षय भण्डार तो था नहीं, और खेती-बाड़ी युगों से होती चली आ रही है। वैज्ञानिक साधनों के अभाव में समस्त धरती बांझ हो गयी होती। फसलों में काम आने के अतिरिक्त कटाव, निकास तथा किण्वन द्वारा भी इन तत्त्वों का क्षय होता रहता है, जबकि वर्षा, नाइट्रोजन स्थिरीकरण तथा भूमि की निचली तहों से पोषकांशों की प्राप्ति भी होती रहती है।

खाद तथा उर्वरक द्वारा पौधों को पोषकाशों की प्राप्ति दो प्रकार से करायी जा सकती है। एक तो पौधे के लिए आवश्यक खाद भूमि में मिलाकर, दूसरे, भूमि में ऐसे पदार्थ मिलाकर कि अविलेय, अप्राप्य लवण घुलनशील होकर पौधे के भोजन का अंग बन सकें। खाद तथा उर्वरक को सामान्य तथा विशिष्ट, दो भागों में बांट लिया जाता है।

तीन तत्त्वों के अनुपात पर फसल का भविष्य

सामान्य वर्ग में पौधे के भोजन के प्रायः सभी आवश्यक तत्त्व होते हैं। प्रक्षेत्र (फार्म-यार्ड) खाद, हरी खाद, मल-मूत्र, पक्षियों की विष्ठा, मछली का चूरा इत्यादि इस वर्ग में आते हैं। खेतों में सामान्य खाद देने से भूमि को सभी तत्त्व प्राप्त होते हैं। जो हैं वे भी, जो नहीं हैं वे भी। वैज्ञानिक अध्ययन के अभाव में, सुविधा की दृष्टि से अधिकांश किसान सामान्य खाद ही प्रयोग करते हैं। विशिष्ट वर्ग की खाद के अन्तर्गत नाइट्रोजन देने वाली, पोटैशियम देने वाली तथा फासफोरस देने वाली खाद आती है। इसमें पौधे के भोजन के लिए एक या दो तत्त्व ही होते हैं। किन्तु मुख्यतः इन्हीं तीनों के अनुपात पर फसल का भविष्य निर्भर करता है। इस खाद का उपयोग सस्ता और श्रेष्ठ है। पर इसके लिए वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है। किसान को ठीक पता हो कि किस तत्त्व की कमी है तथा कितनी। यदि हमारे देश के किसान ठीक उर्वरक का प्रयोग करने लगें, तो न केवल वे अधिक अन्न उपजा सकेंगे, अपितु वे स्वयं सम्पन्न होंगे तथा हमारा राष्ट्र सम्पन्न होगा।

नाइट्रोजन देने वाले उर्वरक

नाइट्रोजन देने वाले उर्वरकों से आशय अनेक रासायनिक यौगिकों से है, जिन्हें भूमि में मिला देने से पौधों को नाइट्रोजन प्राप्त होती है। इन विशिष्ट उर्वरकों से यह लाभ है कि इनसे पौधे को सीधे ही नाइट्रोजन प्राप्त होती है जबकि काम्पोस्ट, मल-मूत्र इत्यादि समान्य खादों का पहले विच्छेदन होता है तब पौधे द्वारा ग्रहण कर सकने योग्य नाइट्रोजन के यौगिक बनते हैं।

भूमि-वायु में ७९·२ प्रतिशत मुक्त नाइट्रोजन होती है। इसके अतिरिक्त कार्बनिक पदार्थों के रूप में ००·५ से ०·३ प्रतिशत तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संयुक्त रूप में भूमि में नाइट्रोजन होती है। समस्त व्यापारिक खादों में नाइट्रोजन देने वाली खादों का प्रभाव तुरन्त और अधिक होता है। वैसे नाइट्रोजन को फसल की रीढ़ कहा जा सकता है। यह जिन जटिल कार्बनिक पदार्थों में संयुक्त रहती है, जीव-रासायनिक क्रियाओं द्वारा उनका विच्छेदन होता रहता है। नाइट्रोजन अमोनियम यौगिक बनाती है, जो फिर नाइट्राइट तथा नाइट्रेटों में बदल जाते हैं। इस क्रिया को नाइट्रीकरण कहते हैं।

भूमि में कार्बनिक पदार्थ अधिक होने पर जीवाणुओं की संख्या बढ़ने लगती है। शक्ति प्राप्त करने के लिए ये जीवाणु स्वयं ही नाइट्रोजन लेने लगते हैं। इस दशा में नाइट्रीकरण के विपरीत क्रिया होने लगती है। अतः नाइट्रोजन को जटिल यौगिकों से ऐसे यौगिकों में बदलना जिन्हें पौधा ग्रहण कर सके, कठिन तो नहीं है पर परिस्थितिवश अवश्य है।

प्रोटीन और जीव-द्रव्य पौधे के आवश्यक अंग हैं और इनमें नाइट्रोजन पाया जाता है। अतः प्रोटीन और जीव-द्रव्य की वृद्धि का अर्थ है पौधे की वृद्धि, जिसके लिए नाइट्रोजन नितान्त आवश्यक हैं। पौधे नाइट्रोजन को अमोनियम या नाइट्रेट आयनों के रूप में सहज ही पचा सकते हैं। अनुमान है कि पौधे में पहुंचकर नाइट्रेट आयन भी अमोनियम आयनों में अवकृत हो जाते हैं। अमोनियम आयन मुख्यतः हरी पत्तियों में कार्बोहाइड्रेट के साथ मिलकर अमीनो अम्ल बनाते हैं। अतः यदि पौधे काफी नाइट्रोजन लेंगे, तो अधिक अमीनो अम्ल बनेगा। यह अमीनो अम्ल तथा इससे बना प्रोटीन पौधे की हरियाली या पत्तियों की वृद्धि के लिए आवश्यक है। पत्तियों की वृद्धि से प्रकाश संश्लेषण अधिक होता है, जिससे पौधे को जल तथा कार्बन डाइआक्साइड से आक्सीजन एवं

अलफाल्फा—पोटैशियम की कमी पत्तियों में स्पष्ट देखी जा सकती है

कार्बोहाइड्रेट मिलते हैं।

पौधों में नाइट्रोजन उर्वरक देने के लाभ

नाइट्रोजन उर्वरक देने से पौधे को कई लाभ होते हैं, जैसे (१) पौधे का हरियाली वाला भाग बहुत बढ़ता है, अर्थात् पौधे के भूमि के ऊपर के हिस्से की वानस्पतिक वृद्धि होती है। जड़ों आदि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। (२) नाइट्रोजन के अभाव में पत्तियां पीली या लाल-हरी हो जाती हैं। पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन उर्वरक देने से पत्तियों का रंग गहरा हरा रहता है। (३) नाइट्रोजन से पत्तियों में सरसता रहती है, अर्थात् जल का अनुपात बढ़ता है। (४) नाइट्रोजन की कुछ मात्रा पौधे की कोशिकाओं का आकार बढ़ाने के काम आती है। कोशिकाओं का आकार बढ़ने से स्वभावतः दीवारें पतली हो जाती हैं। (५) धान्यों में नाइट्रोजन की वजह से भरे हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छे, मोटे, गूदेदार दाने बनते हैं तथा प्रोटीन की मात्रा बढ़ती है। (६) अपर्याप्त नाइट्रोजन मिलने से पौधों की वृद्धि रुक जाती है। वे जड़ के आसपास ही फैलकर रह जाते हैं। एवं (७) नाइट्रोजन पौधों में नियामक का काम करती है। यह पौधों में फासफोरस और पोटैशियम का विनिमय भी सन्तुलित रखती है।

किन्तु ऐसा नहीं कि नाइट्रोजन से पौधों को लाभ ही लाभ हैं। नाइट्रोजन की मात्रा अधिक हो जाने से पौधों को हानि भी होती है। फसल देर से पकती है, क्योंकि नाइट्रोजन की मात्रा अधिक होने के कारण वह देर तक हरी बनी रहती है। और यदि भूमि में पोटैशियम तथा फासफोरस कम रहे, तो फसल में दाना बहुत देर से पड़ता है। पौधों में कोमलता अधिक रहती है। लम्बी बढ़ने वाली फसलें खड़ी नहीं रह पातीं, गिर जाती हैं। कोमल पौधे शीघ्र रोग-ग्रसित हो जाते हैं तथा उन पर कीड़े-मकोड़ों का आक्रमण भी जल्दी होता है। प्रायः दाना कम और भूसा अधिक होता है। गेहूं इसका ज्वलन्त उदाहरण है। दानों और फलों की किस्म भी गिर जाती है। पौधे वायु, वर्षा और कुहरे का शिकार भी जल्दी होते हैं। अतः नाइट्रोजन का आधिक्य नहीं होना चाहिये। उपयुक्त मात्रा ही प्रयुक्त होनी चाहिये।

आजकल हमारे देश में अमोनियम सल्फेट का प्रयोग बहुत हो रहा है। सिन्दरी में मुख्यतः इसी का निर्माण होता है। यह एशिया भर में संश्लेषित उर्वरक बनाने का सबसे बड़ा कारखाना है। इसमें प्रतिदिन ९६० टन अमोनियम सल्फेट बनता है।

अमोनियम सल्फेट को फसल बोने के समय भूमि में देते हैं तथा बाद में फसल पर छिड़कते हैं। खेत में डालने के एक सप्ताह बाद इसका प्रभाव दिखायी पड़ने लगता है। धान और पटसन के लिए यह विशेष उपयुक्त है। गेहूं, ईख, मक्का, ज्वार, बाजरा और आलू में भी इसे देते हैं।

अमोनियम नाइट्रेट को भी फसल बोते समय तथा खड़ी फसल में देते हैं। वैसे यह विस्फोटक पदार्थ है और स्टोर में ऐसी परिस्थितियां हो सकती हैं कि विस्फोट हो जाय। दूसरी कमी यह है कि यह नमी सोखकर कड़ा हो जाता है।

अमोनियम क्लोराइड : एक महंगा उर्वरक

अमोनियम क्लोराइड महंगा होने के कारण कम प्रयुक्त होता है। इसका परिणाम अमोनियम सल्फेट जैसा ही होता है। केवल जौ और आलू में कुछ अन्तर होता है।

अमोनियम फासफेट का उपयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। यह नाइट्रोजन और फासफोरस, दोनों की पूर्ति करता है। आलू, गन्ना तथा जड़ एवं दलहन वाली फसलों के लिए यह विशेषतः लाभकारी है।

सोडियम नाइट्रेट का प्रभाव फसल पर दो-तीन दिनों में ही दिखायी देने लगता है। यह खाद शीघ्र बढ़ने

उर्वरक को खेतों में फैलाने के लिए ट्रैक्टर से एक विशेष प्रकार का डिब्बा जोड़ दिया जाता है। ट्रैक्टर जैसे-जैसे आगे बढ़ता रहता है, इस डिब्बे के छिद्रों से उर्वरक की समान मात्रा गिरती रहती है

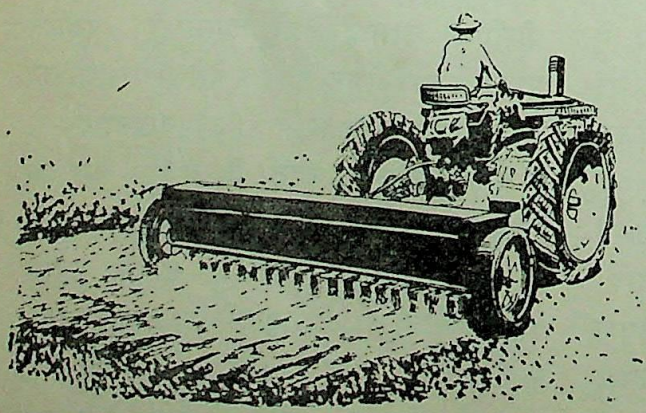

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र.सं.	उर्वरक	नाइट्रोजन-प्रतिशत
(१)	अमोनियम सल्फेट	२०
(२)	अमोनियम नाइट्रट	३५
(३)	अमोनियम क्लोराइड	२६
(४)	अमोनियम फासफेट	११
(५)	सोडियम नाइट्रेट	१६
(६)	पोटैशियम नाइट्रेट	१४
(७)	कैल्शियम नाइट्रेट	१५
(८)	कैल्शियम सायनेमाइड	२२
(९)	यूरिया	४६

नाइट्रोजन देने वाले प्रमुख उर्वरक

वाली फसलों के लिए विशेष लाभदायक है। इसका निरन्तर प्रयोग भूमि में खारीयता पैदा करता है। इसका एक लाभ यह है कि सोडियम आयन अन्य भूमि खनिजों से पोटैशियम का विनिमय करते हैं। अतः पौधे को इतना पोटैशियम आयन मिल जाता है कि पोटैशियम देने वाले किसी उर्वरक की आवश्यकता नहीं रहती। यह उर्वरक उद्यानों के लिए निरर्थक है। घास-फूस अधिक पैदा करता है।

पोटैशियम नाइट्रेट या शोरा बहुत महंगी खाद है। इस यौगिक का बारूद, हिम मिश्रण, नाइट्रिक अम्ल आदि बनाने में पर्याप्त उपयोग होता है। तम्बाकू और आलू की फसल के लिए यह लाभदायक है।

कैल्शियम नाइट्रेट की उर्वरक शक्ति सोडियम नाइट्रेट के बराबर होती है। इसमें कमी यह है कि वायुमण्डल से नमी सोखकर गीला हो जाता है, अतः खेत में फैलाना मुश्किल हो जाता है। इसलिए इसे अन्य उर्वरकों के साथ मिलाकर प्रयुक्त करते हैं तथा जलसह बोरियों में इकट्ठा करते हैं।

कैल्शियम सायनेमाइड : एक उत्तम खाद··· फिर भी···

कैल्शियम सायनेमाइड उत्तम खाद है। जिस भूमि में चूने की कमी होती है उसके लिए यह विशेषतः उपयुक्त है। हानि यह है कि हलका होने कारण भूमि में मिलाते-मिलाते उड़कर ही काफी नष्ट हो जाता है। बीज के लिए भी हानिकारक होता है, अतः बीज देने के दो सप्ताह पूर्व भूमि में मिला दिया जाना चाहिये।

यूरिया का प्रयोग जहां पानी की सुविधा हो, वहीं करना चाहिये। बीज बोने से एक सप्ताह पूर्व इसे भूमि में मिला देना चाहिये। भूमि में नमी होना आवश्यक है। अतः शुष्क क्षेत्रों में इसके प्रयोग का सवाल ही नहीं उठता। इसका प्रयोग सभी फसलों के लिए तथा हर प्रकार की मिट्टी में किया जा सकता है। इसमें नाइट्रोजन का प्रतिशत अधिक होने के कारण प्रयोग करने के पूर्व थोड़ी रेत या मिट्टी मिला लेते हैं।

नाइट्रोजन देने वाले उर्वरकों में अमोनियम सल्फेट और सोडियम नाइट्रेट श्रेष्ठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माने जाते हैं। दोनों का मिश्रण प्रयोग करना उत्तम रहेगा। सोडियम नाइट्रेट से पौधे को तुरन्त के प्रयोग के लिए नाइट्रोजन मिलेगी तथा अमोनियम सल्फेट से कुछ दिनों बाद नाइट्रोजन मिलने लगेगी। दोनों के मिश्रण से भूमि प्रतिक्रिया पर भी प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता।

फासफोरस देने वाले उर्वरक

मिट्टी में फासफोरस की मात्रा कम होती है जबकि पौधों को इसकी आवश्यकता अधिक होती है। यह पौधे के लिए आवश्यक तत्त्व है। पौधे की वृद्धि में इसका योग महत्त्वपूर्ण है। फासफोरस की कमी होने से पौधे को पोटैशियम आदि अन्य तत्त्व लेने में कठिनाई होती है। इसके अतिरिक्त यह नाइट्रोजन के आधिक्य को भी कम करता है। इसका मुख्य कार्य परिपाचन है, अर्थात् सब तत्त्वों को पौधे में घुला-मिला देना।

केवल पौधे पर दृष्टि डालने से फासफोरस के अभाव का पता नहीं चलता। इसका सम्बन्ध पौधे की जड़ों, बीज और फल से है।

भूमि को प्रकृति से कुछ नाइट्रोजन की प्राप्ति हो जाती है परन्तु फासफोरस के लिए कोई ऐसा स्रोत नहीं है। यही नहीं अपितु भूमिगत बहुत-सा फासफेट अघुलनशील होने के कारण पौधे को प्राप्त नहीं हो पाता। अतः पौधे को फासफोरस उर्वरक और वह भी आवश्यकता से कई गुना अधिक देना अनिवार्य है, अधिक इसलिए कि दिये जाने वाले उर्वरक से सभी प्राप्य फासफोरस पौधे को प्राप्त नहीं हो पाता। इसका एक भाग भूमि में पहुंचकर स्थिर हो जाता है।

फासफोरस का महत्त्व

फासफोरस की कमी से प्रायः पौधे रोगग्रस्त हो जाते हैं। इसकी पर्याप्त मात्रा होने पर वे रोग का सहज सामना कर लेते हैं। फासफोरस की कमी से पौधों की जड़ें सूख जाती हैं। जड़ें दृढ़ न होने के कारण जलानुविन्द्ध होने लगता है। पर्याप्त फासफोरस होने से पराग संक्रमण अच्छा होता है, फल समय से पकते हैं, पौधे में भूसे की अपेक्षा अनाज की मात्रा अधिक होती है। पौधे में प्रोटीन की मात्रा बढ़ती है। भूमि में भी दृढ़ता आती है, अतः फसल आसानी से गिरती नहीं। धान्यों की उपज बढ़ाने में यह सहायक होता है। अनेक फसलों की किस्म इसके द्वारा सुधर जाती है।

नाइट्रोजन उर्वरक एक्राइलोनाइट्राइल (acrylonitrile) कड़ी मिट्टी को भुरभुरी और पानी सोखने योग्य बनाता है—(बायें) कड़ी मिट्टी और (दायें) उर्वरक मिली मिट्टी

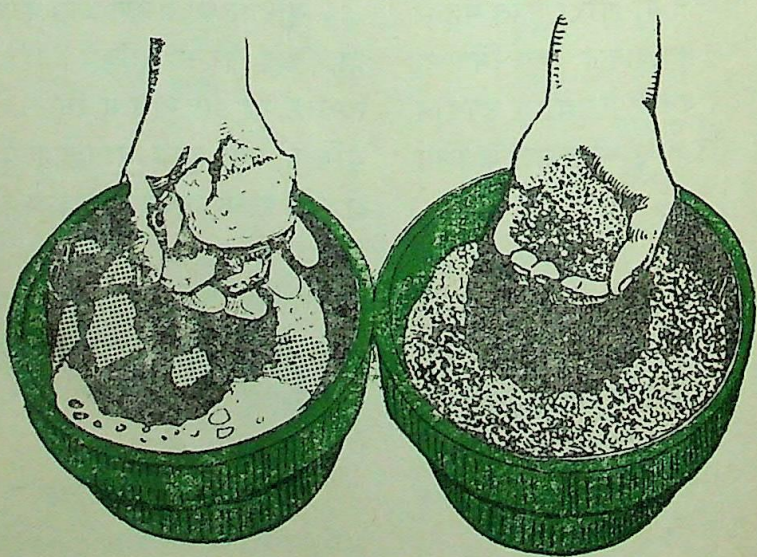

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

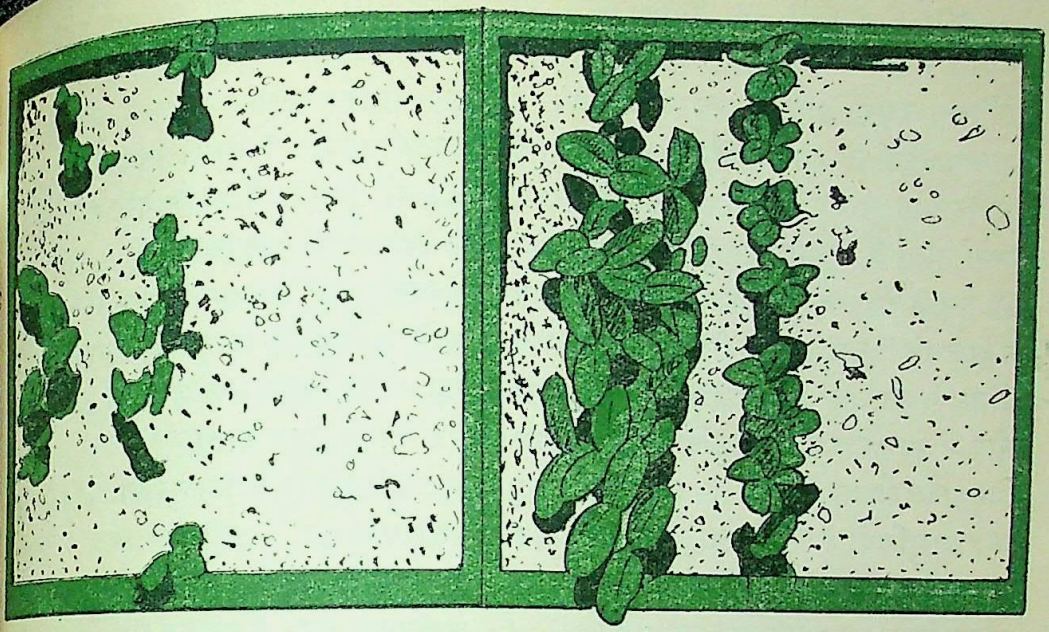

बीजों के अंकुरण के लिए मिट्टी में नाइट्रोजन उर्वरक का मिला होना जरूरी है—(बायें) कड़ी मिट्टी में अंकुणर और (दायें) उर्वरक मिली मिट्टी में अंकुरण

फासफोरस की कमी से पौधों में कोष विभाजन ठीक से न हीं पाता। इसके अतिरिक्त वसा एवं अल्बुमीन भी ठीक प्रकार नहीं बन पाते।

फासफोरस की उपस्थिति में फलीदार फसलों की जड़ों में उपस्थित ग्रन्थियों के आकार और संख्या में वृद्धि होती है, फलतः पौधे वायुमण्डल से अधिक नाइट्रोजन लेकर संग्रह कर सकते हैं।

यह भी अनुभव किया गया है कि पर्याप्त फासफोरस की उपस्थिति में साग, तरकारी सुस्वादु हो जाती है।

सुपर फासफेट : एक उत्तम फासफोरस देने वाली खाद

सुपर फासफेट फासफोरस देने वाली खादों में उत्तम समझा जाता है तथा सबसे अधिक उपयोग इसी का होता है। इसका रासायनिक नाम कैल्शियम हाइड्रोजन फासफेट है किन्तु यह सुपर फासफेट नाम से विख्यात है। प्रसिद्ध रसायनज्ञ लीविग ने सर्वप्रथम हड्डियों को खाद के रूप में प्रयुक्त करने का सुझाव दिया था। उस समय लोगों ने इस सुझाव को हंसी में टाल दिया। आज अनेक जगह हड्डियों पर सल्फ्यूरिक अम्ल की क्रिया से सुपर फासफेट के निर्माण के लिए उद्योग स्थापित हो गये हैं।

सभी फसलों के लिए उपयुक्त सुपर फासफेट

सुपर फासफेट सभी फसलों के लिए उपयुक्त है। इस खाद को जड़ों के समीप दिया जाता है। इसको बुवाई से पहले, बीज से २–२½ इंच की दूरी पर ४–६ इंच की गहराई में देते हैं। जड़ तथा दलहन वाली फसलों के लिए यह विशेष लाभकारी है।

अम्लीय भूमि में सुपर फासफेट का प्रयोग उपयुक्त नहीं रहता। यह लोहे और अल्यूमीनियम के साथ स्थिर हो जाता है तथा पौधों को प्राप्त नहीं हो पाता। अम्लीय भूमि में चूना आदि मिलाकर पहले उसकी अम्लीयता कम कर लेते हैं, तब सुपर फासफेट देते हैं।

सुपर फासफेट में एक अन्य अच्छी बात यह है कि एक बार दिये जाने पर भूमि में बना रहता है, नष्ट नहीं होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षारीय धातुमल को 'बेसिक स्लेग' या 'थामस फासफेट' भी कहते हैं। थामस ने सर्वप्रथम इसको कृषि में उर्वरक के रूप में प्रयुक्त करने का सुझाव दिया था। यह लोहे और इस्पात उद्योग में गौण उत्पादन के रूप में प्राप्त होता है। आज का युग कलयुग, मशीन का युग है और कल-पुरजे लोहे और इस्पात के ही बनते हैं, अतः यह क्षारीय धातुमल पर्याप्त मात्रा में अनायास प्राप्त हो जाता है। ढलवा लोहे में फासफोरस की अशुद्धि रहती है। इसे पिटवा लोहे या इस्पात में बदलने के लिए अन्य अशुद्धियों के साथ फासफोरस भी मुक्त करना पड़ता है जो आक्सीकृत होकर फासफोरस पेण्टा आक्साइड बन जाता है।

क्षारीय धातुमल के फासफोरस के महत्त्व को इस तथ्य से आंका जा सकता है कि इसे कृत्रिम तौर पर भी बनाना प्रारम्भ कर दिया गया है।

इसको बार ककर भूमि में मिलाया जाता है। जितना बारीक चूर्ण होता है उतना ही अधिक पौधों को फासफोरस प्राप्त होता है। इसे गीले स्थान पर अधिक देर तक नहीं रखना चाहिये अन्यथा ढेले बंध जाते हैं। यह सभी फसलों के लिए लाभदायक सिद्ध हुआ है। घास, धान, मूंगफली की फसलें इससे विशेषतः प्रभावित होती हैं। यह पौधों में शीघ्र वृद्धि करता है तथा किसी-किसी भूमि में तो जड़ों के लिए सुपर फासफेट से भी श्रेष्ठ है।

हड्डी की खाद

हड्डी की खाद का चलन बहुत दिनों से चला आ रहा है। फासफोरस की खोज तो अठारहवीं शताब्दी में हुई है, किन्तु किसान पुरातन काल से इसका इस्तेमाल करता चला आ रहा है। इसमें ५० प्रतिशत कैल्शियम फासफेट होता है। पहले यह ऐसे ही प्रयोग की जाती थी किन्तु अब इस पर ८-१० किलोग्राम दबाव डालकर भाप प्रवाहित की जाती है, जिससे वसा अलग हो जाय। फिर इसे पीसकर चूर्ण कर लेते हैं। यह खाद भी जितनी बारीक पिसी हो उतनी ही उत्तम होती है। इसे मिट्टी में फसल बोते समय या बोने के ठीक पहले मिलाना चाहिये। इसे मिट्टी में बिखेरा या बरसाया जा सकता है। अम्लीय भूमि के लिए यह हितकर है। चावल के लिए यह अति लाभदायक है। इसे खड़ी फसलों पर नहीं छिड़का जाता।

खनिज फासफेटों में मुख्यतः फासफोराइट, क्लोरएपेटाइट, फ्लोरएपेटाइट गिने जाते हैं। इनमें प्रायः २५-५५% फासफोरस पेण्टा आक्साइड होता है पर वह सब पौधों को सहज प्राप्त नहीं होता। एक तो ये अघुलनशील होते हैं; दूसरे इनकी रचना अत्यन्त जटिल होने के कारण विनिमय द्वारा भी ये पौधों को सरलता से प्राप्त नहीं होते। यदि खनिज फासफेटों द्वारा ही पौधों को फासफोरस प्राप्त हो जाया करता, तो सुपरफासफेट उर्वरक बनाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। इनसे बहुत कम फासफोरस धीरे-धीरे प्राप्त होता है।

इन्हें बारीककर, भूमि में बिखेरकर मिट्टी में अच्छी तरह मिला देते हैं या बीज बोने के पहले गहराई में मिला देते हैं। इन्हें गोबर की खाद इत्यादि के साथ मिलाकर प्रयोग करना लाभदायक रहता है। प्रतिवर्ष इन्हें देने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि ये भूमि में जल्दी नष्ट नहीं होते।

अमोनियम फासफेट नाइट्रोजन और फासफोरस तत्त्वों की पूर्ति करता है

अमोनियम फासफेट नाइट्रोजन और फासफोरस, दो पोषक तत्त्वों की पूर्ति करता है। यह भूमि में काफी गहराई तक पहुंच जाता है तथा फसल बहुत अच्छी होती है। इस खाद का उपयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। आलू, गन्ना, जड़ और दलहन वाली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फसलों के लिए यह विशेषतः लाभदायक है।

सुपर फासफेट में अमोनिया मिला देने से अमोनिएटेड सुपर फासफेट बन जाता है। सुपर फासफेट एक श्रेष्ठ उर्वरक है ही। अमोनिया मिलाये जाने से नाइट्रोजन भी उपलब्ध हो जाती है और इस प्रकार यह सर्वश्रेष्ठ हो जाता है।

शलजम और आलू पर विशेषतः फासफोरस देने से आश्चर्यजनक परिणाम देखे गये हैं।

पोटैशियम देने वाले उर्वरक

नाइट्रोजन तथा फासफोरस के बाद पौधों के लिए महत्त्वपूर्ण पोषक तत्त्वों में पोटैशियम की गिनती होती है। अपेक्षाकृत पोटैशियम पृथ्वी में अधिक है, इस कारण कम हो देना पड़ता है। प्रकृति में अधिकांश खनिज पदार्थों, जैसे अभ्रक, जियोलाइट फेलसपार, बोरा, पोटैशियम सल्फेट, पोटैशियम क्लोराइड इत्यादि के रूप में पोटैशियम पाया जाता है। बीज और फल की अपेक्षा पोटैशियम पौधों के पत्तों तथा भूसे में अधिक होता है और पौधे और भूसे अन्त में भूमि में मिल जाते हैं। अतः प्रकृति में निजी रूप से पोटैशियम का चक्र-सा चलता रहता है। जिस भूमि की उपज पत्तों-सहित बाजार में पहुंच जाती हैं, जैसे गाजर, गोभी, शलजम, प्याज, मूली, तम्बाकू इत्यादि उसमें पोटैशियम की कमी हो सकती है।

पोटैशियम का महत्त्व

यह पौधों को शक्तिशाली बनाता है, जिससे वे संकटकालीन परिस्थितियों का सामना सहज ही कर सकते हैं। यह पौधों पर नाइट्रोजन के बुरे असर को दूर करता है तथा फासफोरस का सन्तुलनकर बीज को जल्दी या देर से न पकने देकर समय पर पकाता है। पौधों में अच्छा हरा रंग आ जाता है। पौधों में प्रोटीन और स्टार्च के बनने में तीव्रता आती है, अर्थात् पौधों को अधिक भोजन प्राप्त होने लगता है। पत्तियों में बनने वाले पदार्थ पूरे पौधे में पहुंचने लगते हैं। दोनों में चमक आ जाती है, वे मोटे होते हैं तथा उनका रंग चटक हो जाता है। फलों की किस्म सुधरती है। इसकी कमी से आलू स्वादहीन हो जाता है। भूसे, घास का उत्पादन बढ़ जाता है।

हरीतिमा के विकास के लिए पोटैशियम की उपस्थिति भी आवश्यक है। फलीदार फसलों में पोटैशियम की उपस्थिति उनकी गांठों द्वारा वायुमण्डल से नाइट्रोजन लेने में सहायक होती है।

पोटैशियम देने वाले उर्वरक क्यों ?

हम यह कह चुके हैं कि अपेक्षाकृत पोटैशियम भूमि में अधिक है, फिर इसे उर्वरक रूप में देने की क्या आवश्यकता है ? कारण

फासफोरस देने के लिए प्रयुक्त विभिन्न उर्वरक

*** फासफोरस का प्रतिशत फारफोरस पेण्टाआक्साइड (P_2O_5) में निकालते हैं**

क्र. सं.	उर्वरक	*प्रतिशत
(१)	सुपर फासफेट	१६–५०
(२)	क्षारीय धातुमल	१५–२५
(३)	हड्डियां	२०–३०
(४)	ऐपेटाइट खनिज	२५–५५
(५)	अमोनियम फासफेट	४८
(६)	अमोनिएटेड सुपर फासफेट	१६–१८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्र. सं.	उर्वरक	*प्रतिशत
(१)	पोटैशियम क्लोराइड	५०–६०
(२)	पोटैशियम सल्फेट	४०–५०
(३)	पौटैशियम नाइट्रेट (शोरा)	१०–१५
(४)	कायनाइट } खनिज	१२.८
(५)	सिलविनाइट } खनिज	१७.४
(६)	पोलीहैनाइट और शोनाइट } खनिज	२७.२

पोटैशियम देने वाले प्रमुख उर्वरक

*** जिस तरह फासफोरस उर्वरकों में प्राप्य फासफोरस की मात्रा पेण्टा आक्साइड के समतुल्य निकालते हैं, उसी प्रकार पोटैशियम उर्वरकों में पोटैशियम की मात्रा पोटैशियम आक्साइड (K_2O) के समतुल्य आंकी जाती है**

यह है कि रेतीली मिट्टी में पोटैशियम नहीं पाया जाता। दूसरे, भूमि में उपस्थित पोटैशियम की अधिकांश मात्रा विनिमय योग्य नहीं होती अर्थात् पोटैशियम उपस्थित होते हुए भी पौधे उसे नहीं ले सकते। तीसरे, भूमि में उपस्थित अनेक जीवाणु भी पोटैशियम का सेवन करते हैं। घुल-बहकर भी काफी पोटैशियम नष्ट हो जाता है। चौथे, अधिकांश पौधे अपनी आवश्यकता से कई गुना अधिक पौटैशियम ले लेते हैं। पौधे में इसकी अधिक मात्रा से कोई हानि नहीं होती, परन्तु भूमि में कमी हो जाती है।

पोटैशियम क्लोराइड में पोटैशियम की मात्रा अन्य उर्वरकों की अपेक्षा अधिक होती है। यह जल में विलेय है पर विशेषता यह है कि भूमि में नष्ट नहीं होता। मिट्टी के कलिल कण इसका शोषण कर लेते हैं। इसे बीज बोते समय या उससे पहले कभी भी भूमि में मिलाया जा सकता है, पौधे को शीघ्र ही सारा पोटैशियम प्राप्त हो जाता है। उपज बढ़ाने में यह किसी भी पोटैशियम उर्वरक से कम नहीं है परन्तु यह फसल की किस्म नहीं सुधारता। आलू तथा जौ के लिए यह विशेष लाभदायक है।

पौटैशियम सल्फेट महंगा और दुर्लभ उर्वरक है। यह फलों की किस्म सुधारने के लिए सर्वश्रेष्ठ उर्वरक है। इसका प्रयोग बीज बोने से पूर्व किया जाता है। यह भी जल में विलेय है तथा भूमि में मिलाते ही पौधों को प्राप्त होने लगता है। आलू, टमाटर, तम्बाकू तथा उद्यान के सभी फलों के लिए यह सर्वश्रेष्ठ उर्वरक है।

पोटैशियम नाइट्रेट का प्रयोग खड़ी फसल में किया जाता है। वैसे बीज बोने से पूर्व भी इसे बिखेर सकते हैं। यह भी जल में विलेय है और पर्याप्त महंगा है। इसका प्रयोग गन्ना, कपास, तम्बाकू, मक्का, ज्वार, धान, आलू और पटसन के लिए किया जाता है। तम्बाकू और आलू के लिए यह विशेष हितकर है।

कायनाइट, सिलविनाइट और शोनाइट पोटैशियम के खनिज हैं। इन्हें भी उर्वरक के रूप में प्रयोग करते हैं। ये अपेक्षाकृत सस्ते हैं। पोटैशियम के प्रायः सभी लवण जल में विलेय होते हैं, अतः पौधों को इन्हें लेने में कोई कठिनाई नहीं होती। इनका प्रयोग बीज बोते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पूर्व करना चाहिये।

पोटैशियम फलों में अम्लों की वृद्धि करता है

पोटैशियम के उर्वरक रूप में प्रयोग पर प्रारम्भ में प्रकाश डाल चुके हैं। विलेयता और स्थिरता इसके विशिष्ट गुण हैं। जिस भूमि में सोडियम नाइट्रेट उर्वरक (नाईट्रोजन के लिए) दिया जाता है, उसमें सोडियम द्वारा पोटैशियम के विनिमय होने से भूमि में अवश्य कमी हो जाती है, अन्यथा प्रायः इसकी भूमि में कमी नहीं होती। फलों का उत्पादन बढ़ाने तथा किस्म सुधारने में पोटैशियम विशेष सहायक है। फलों में यह रस की वृद्धि भी करता है। खट्टे फलों में यह अम्लों की वृद्धि करता है। जिन पौधों में फल नहीं लगते, कम या छोटे लगते हैं, वे पोटैशियम उर्वरक देने पर फलने-फूलने लगते हैं। तम्बाकू के वे पत्ते जिनमें पर्याप्त पोटैशियम होता है (पर क्लोराइड रूप में नहीं) सिगरेट बनाने के लिए अच्छे रहते हैं। उस तम्बाकू का कोयला जलने पर स्पंज-जैसा होकर शीघ्र भस्म हो जाता है।

हाईस्कूल और हायर सेकण्डरी कक्षाओं के लिए

हमारे उपयोगी प्रकाशन

१. **जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ३·००

२. **वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ३·००

३. **प्रारम्भिक भौतिकी**—दयाप्रसाद खण्डेलवाल — मूल्य : ३·५०

४. **प्रेक्टिकल जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : २·००

५. **प्रेक्टिकल वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : २·००

६. **सामान्य विज्ञान**—मेहरोत्रा, विद्यार्थी, खण्डेलवाल — मूल्य : ६·२५

७. **सरल माध्यमिक जीव-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ५·००

(हायर सेकण्डरी की कक्षा ९ और १० के लिए)

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा—३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पागलों का मसीहा लुई पाश्चर

डा. हर्ष प्रियदर्शी

हमारी कहानी की शुरुआत दुनिया के सबसे बड़े, रंगीन और रूमानी नगर से होती है। पेरिस जो महज एक स्वप्न है—दुनिया के तमाम कलाकारों का पेरिस जो कभी विश्वविजयी रहा है, पेरिस जो दुनिया के सबसे बड़े महत्वाकांक्षी नैपोलियन की यादगार है, पेरिस जो शैम्पेन की बोतलों में डूबा हुआ है। वही पेरिस इतना तेज भागता है···इतना तेज कि दुनिया उसे पकड़ नहीं पाती। और यदि आप उसे पकड़ लें, तो उसके सौन्दर्य और कलाकृतियों की अन्तिम सतहों में आपको मिलेगी एक मसीहा की आकृति।

मसीहा !

आप चौंक उठेंगे। लेकिन शैम्पेन की बोतलों के व्यापार को जिस व्यक्ति ने एक नया मोड़ दिया था, वह एक मसीहा था। आज का फ्रांस स्वस्थ है और सुन्दर है, लेकिन इस स्वस्थ और सुन्दर फ्रांस के पीछे जो आकृति है वह उसी पागल मसीहा की है जिसने दुनिया को निरोग करने का व्रत लिया था।

वह मसीहा था पाश्चर—लुई पाश्चर।

फ्रांस के पूर्वी पहाड़ी इलाकों के आरबियोस नामक अंचल में एक छोटे-से, चमड़े का व्यापार करने वाले के घर इस मसीहा का जन्म हुआ था। लुई जन्म से महान् नहीं था। लुई ने जो भी महानता अर्जित की थी, उसने अपने श्रम और बुद्धि से की थी।

कलात्मक सृजन फ्रांस की विरासत है। लुई को फ्रांस की विरासत किशोरावस्था में ही प्राप्त हो गयी थी और वह उसे काफी समय तक सालती रही थी। लुई भावुक था, और भावनाओं में खोया हुआ वह नदी के किनारे अपनी बहन को बैठाकर घण्टों कैनवस पर उसकी आकृति रंगों में उतारा करता था। वह इतना अधिक भावुक था कि कभी-कभी उसे बहन की रंगी हुई आकृतियों में अपनी मां की रूह दीखने लगती थी। किशोर लुई की आंखों में दिनों तक रूहों के साये उतरते रहे थे। और एक दिन उसकी कौतुकपूर्ण आंखों में दर्द और करुण क्रन्दन की एक तस्वीर उतर गयी थी।

वह दर्द की एक तस्वीर !

यह तस्वीर थी दर्द और घुटन की। मानवीय पीड़ा की; कराहती मानवता की। इस पीड़ा की कथा अनोखी है। अक्तूबर की एक शाम लुई नदी-तीर से अपने घर वापस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौट रहा था कि सहसा एक लोहार के दरवाजे पर जमी भीड़ को देखकर जिज्ञासावश उसके कदम रुक गये। भीड़ के उस घेरे के अन्दर कृषक निकोली को लाल तप्त लोहे से दागा जा रहा था और सारे वातावरण में जले हुए मांस की गन्ध और निकोली की यन्त्रणामय चीखें भरती जा रही थीं। गोश्त की गन्ध से लदा हुआ सारा वातावरण आतंकमय हो गया था। आतंक का सबसे अधिक प्रभाव किशोर लुई के मन पर हुआ, क्योंकि वह सहसा ही चीख मारकर उस दिन उस स्थान से सीधे अपने घर की ओर भाग आया था।

उस शाम जब लुई आतंक में डूबा हुआ अपने घर वापस आया, तो गहराते हुए धुंधलके में वह एक गहरे मौन में अपनी जिज्ञासा को शान्त करने में संलग्न हो गया। रात गहराती गयी किन्तु लुई के मन में प्रश्न कौंधता रहा, वह अपना सब कुछ भूलकर सिर्फ यही एक तथ्य सोचता रहा कि लोग कुत्तों के काट लेने से पागल क्यों हो जाते हैं और उनकी क्यों मृत्यु हो जाती है? लुई कुछ न सोच पाया और तब विवश हो उसने अपने पिता के सम्मुख अपनी जिज्ञासा रखी। लुई का पिता नेपोलियन की सेना का सार्जेण्ट रह चुका था और जिसने लगभग दस हजार व्यक्तियों की मृत्यु देखी थी, वह लुई को एक मृत्यु का कोई कारण न बता सका। यह सत्य है कि उस दिन लुई का पिता पागल कुत्ते के काटने से होने वाली मृत्यु का कारण न बता सका था, किन्तु फिर भी उसने उस दिन जो कुछ भी उसे बतलाया था, उस काल में शायद सबसे महान् वैज्ञानिक अथवा चिकित्सा-शास्त्री भी यही बतलाते। उसने लुई को बतलाया था: 'मेरे बच्चे, कुत्तों में कोई बुरी प्रेतात्मा उतर आती है और तब कुत्ते पागल हो जाते हैं। और हम-से जब किसी की मृत्यु प्रभु चाहता है, तो उसे पागल कुत्ते से कटवा देता है, जिसके परिणामस्वरूप उस व्यक्ति में वह बुरी प्रेतात्मा आ जाती है और तब उस व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है।' मालूम नहीं उस दिन किशोर लुई की जिज्ञासा अपने पिता के उत्तर से शान्त हुई थी अथवा नहीं, किन्तु इतना तो सत्य है कि लुई कई दिनों तक इस आतंकमय घटना से प्रभावित रहा था। और शायद इस दीर्घ प्रभाव का कारण उसका भावुक कलाकार मन रहा होगा।

स्पैलेंजैनी की मृत्यु के उपरान्त कितने ही दिनों तक कीटाणुओं का विषय गर्द और गुबार के नीचे दब गया था। लुई के काल तक लोग कीटाणुओं को प्रायः भूल चुके थे। उन्हीं दिनों लिनायास नामक एक जीवशास्त्री ने पुनः इन क्षुद्र प्राणियों का उद्धार किया। लिनायास जिसे तमाम दुनिया के विचित्र प्राणियों के संग्रह का शौक था, कीटाणुओं में सहसा ही दिलचस्पी लेने लगा था, कीटाणुओं के विषय में एक अदभुत तथ्य प्रचारित किया था: 'ये प्राणी इतने अधिक क्षुद्र और संक्रामक हैं कि शायद कभी इनके विषय में कोई पूर्ण सत्य का परिचय नहीं प्राप्त कर सकेगा, यथार्थ में तो ये प्राणी एक ऐसे प्राणी वर्ग में आते है जिन्हें 'कैआस' कहा जाना चाहिये।'

लिनायास के उक्त कथन की परिपुष्टि एक जरमन वैज्ञानिक इहरनबर्ग ने की थी जो उन दिनों ख्याति की चरम सीमा पर था। इहरनबर्ग ने कीटाणुओं के विषय में काफी मनोरंजक प्रश्न उठाये थे। इन प्रश्नों में मुख्य प्रश्न था कि क्या इन कीटाणुओं के अन्य प्राणियों के भांति शरीर के अन्य अंग जैसे उदर आदि भी हैं, अथवा नहीं। इहरनबर्ग ने ही एक और भी विचित्र शंका इन कीटाणुओं के विषय में व्यक्त की थी। इस विचित्र शंका के अनुसार उसने एक और सम्भावना उपस्थित की और वैज्ञानिकों की दृष्टि आकर्षित की थी कि क्या यह सम्भव नहीं है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये कीटाणु किसी वनस्पति के क्षुद्र अंश हो अथवा किसी दूसरे प्राणी के क्षुद्र शारीरिक अंश मात्र हों, जो जीवन-गुणों से परिपूर्ण हो? जो भी हो, सत्य क्या था, यह तो आगे चलकर पुष्टि पा सका, किन्तु लिनायास और इहरनबर्ग ने एक बार वैज्ञानिक इतिहास में कीटाणुओं का विषय निश्चित रूप से गरम अवश्य कर दिया था।

उपदेशक लुई

जिन दिनों लिनायास और इहरनबर्ग यूरोप में कीटाणु जीवन की सम्भावनाओं को लेकर वैज्ञानिक तर्क-वितर्क प्रस्तुत कर रहे थे, उन दिनों हमारी इस कीटाणु-कथा का नायक आरबियोस ने एक छोटे-से कालेज में अध्ययन कर रहा था। लुई अपने विद्यार्थी जीवन में भी विचित्र ही रहा था लेकिन उसमें वैज्ञानिक बनने के कोई भी लक्षण तब तक नहीं प्रगट हुए थे। लुई अपनी कक्षा का सबसे छोटा और सबसे दुर्बल विद्यार्थी था, किन्तु वह अपनी कक्षा का मानीटर बनना चाहता था। लुई अपनी इस कोमल किशोरावस्था में कक्षा के दूसरे विद्यार्थियों को पढ़ाने की भी आकांक्षा रखता था, और अपनी इस आकांक्षा को उसने पूर्ण भी किया था।

बीस वर्ष की अवस्था के पूर्व लुई बेजनकोन कालेज में एक प्रकार से सहशिक्षक हो गया था। इन्हीं दिनों वह एक उपदेशक हो गया था। उसने अपनी बहनों को उपदेशात्मक पत्र लिखे थे। अपने इन उपदेशात्मक पत्रों में से एक पत्र में उसने एक बार अपनी बहन को 'इच्छा', 'कार्य' और 'सफलता' के विषय में उपदेश दिया था। अपने इस पत्र में लुई ने लिखा : 'मेरी प्रिय बहन, याद रखो, यदि मनुष्य को महान् बनना है, तो उसे महान् बनने की इच्छा करनी होगी और अपनी इस इच्छा को सफल करने के लिए उसे कार्यरत होना होगा, तभी वह महान् बन सकने में सफल हो सकेगा।' इस वय में लुई की कार्य के दर्शन में महान् आस्था हो गयी थी और इसी आस्था ने उसे एक दिन इतना महान् बना दिया कि आज भी इतिहास के पन्ने उसकी महानता को अलग नहीं कर पाये हैं।

इसी अवस्था में लुई के पिता ने उसे पेरिस के नार्मल स्कूल में उच्च अध्ययन के लिए भेजा किन्तु थोड़े दिनों में ही लुई का मन ऊबने लगा और उसे घर की याद बुरी तरह सताने लगी। फलस्वरूप लुई पेरिस के उस स्कूल से पुनः आरबियोस लौट आया। आरबियोस लौट आने पर वर्ष भर लुई अपने घर पर ही अध्ययन-अध्यापन करता रहा और अगले वर्ष वह पुनः नार्मल स्कूल लौट गया। पेरिस के इस स्कूल में तात्कालिक फ्रांस के एक महान् रसायन वैज्ञानिक अध्यापक-रूप में कार्य कर रहा था—यह महान् वैज्ञानिक था ड्यूमा जिससे लुई अत्यधिक प्रभावित हुआ था।

रसायन-स्थापना

एक दिन जब ड्यूमा अपने छात्रों के बीच रसायन-विज्ञान पर बोल रहा था, तो भावुक लुई व्याख्यान के कुछ अंशों पर रो पड़ा था और अपने धार-धार बहते आंसुओं के बीच उसने एक महान् रसायन-शास्त्री बनने का संकल्प लिया था। संकल्पों में डूबा लुई उस दिन जब पेरिस के लैटिन क्वार्टर की कुहासों में डूबी गलियों से गुजर रहा था, तो उसने यही महसूस किया था, कितना महान् है विज्ञान का यह अंश! कितनी महान् ख्याति है ड्यूमा की! और तब एक क्षण को लैटिन क्वार्टर की कुहासों में डूबी गलियों को देखकर सिर्फ इतना ही वह सोच सका था कि इन गलियों, अन्धकार-डूबी गलियों का कल्याण यदि किसी से भी हो सकता है, तो वह सिर्फ रसायन-विज्ञान से ही हो सकता है। उसकी मन की एक परत पर ड्यूमा की ख्याति और रसायनों का गन्ध-लदा भविष्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छा गया था। रात गये तक लुई उस दिन लैटिन क्वार्टर की गलियों में भटकता रहा था। काफी रात गये जब लुई अपने कमरे में लौटा, तो उसने चित्रकारिता के तमाम सामान, रंग, कैनवस और तूलिकाओं को एक कपड़े में बांधकर कमरे के कोने में रख दिया।

दूसरे दिन।

कुहासों से लदी सुबह की धूप और धुन्ध-भरी रोशनी में लुई तमाम रसायनों की रंग-बिरंगी बोतलें ले आया, जिन्हें उसने अपने कमरे के फर्श पर दृढ़ संकल्पों के मध्य स्थापित कर दिया। जिन दिनों लुई ने अपने कमरे में दृढ़ संकल्पों के साथ रसायन का स्थापन किया था, उन्हीं दिनों उसका एक अभिन्न दार्शनिक मित्र चैपियस रसायन-शास्त्र और रवों पर लुई के लम्बे-चौड़े व्याख्यानों को सुना करता था। कभी-कभी चपियस लुई के इन लम्बे व्याख्यानों से ऊब जाता, और तब लुई उदास मन से चैपियस से कहता, 'मेरे अच्छे मित्र! काश, तुम एक रसायनज्ञ होते, तो शायद मुझे समझ पाते।' चैपियस लुई को नहीं समझ पाया, लेकिन रसायनज्ञ लुई सदैव यही प्रयत्न करता था कि किसी तरह चैपियस दर्शन के नीरस उपाख्यानों से निकलकर रसायन में डूब जाय। लेकिन चैपियस दर्शन के नीरस, लम्बे, रहस्यमय उपाख्यानों का मोहबन्धन तोड़ पाया। मात्र चैपियस ही नहीं, उन दिनों तो अनगिन व्यक्तियों को लुई ने रसायन-शास्त्री बनाने की चेष्टा की थी, ठीक उसी प्रकार, जैसे चालीस वर्ष बाद कीटाणु वैज्ञानिक बन जाने पर उसने यूरोप के तमाम चिकित्सकों को कीटाणु-शास्त्री बनाना चाहा था।

दो नयी आकृतियां

उन दिनों जब पाश्चर रवों पर कार्य कर रहा था, योरपीय विज्ञान के इतिहास में कीटाणुओं का विषय पुनः धधकने लगा था। इस कीटाणु-अग्नि को पुनः प्रज्ज्वलित करने में फ्रांस और जरमनी के दो वैज्ञानिकों का प्रमुख हाथ था। एक सीधे-सादे फ्रांसीसी वैज्ञानिक कैगनियार्ड डी ला तोर ने १८३७ में झाग-भरी बीयर के झाग बिन्दुओं में एक प्रकार के कीटाणुओं का अस्तित्व सिद्ध किया। उसने घोषणा की कि बीयर के इन झाग कणों में जो कीटाणु उपस्थित होते हैं उनके बिना बीयर नहीं बन सकती। बीयर के इन कीटाणुओं को खुमार (yeast) कहते हैं। और इन्हीं खुमार नामक कीटाणुओं के कारण जौ के रस से बीयर बनती है। कैगनियार्ड एक सीधा-सादा व्यक्ति था इसलिए उसने अपने इस महत्त्वपूर्ण आविष्कार का अधिक प्रचार नहीं किया।

रवे और रासायनज्ञ लुई

इसी वर्ष जरमनी में डा. स्वान ने इसी आशय का एक महत्त्वपूर्ण शोध लेख प्रकाशित करवाया था जिसमें उसने सिद्ध किया था कि गोश्त तभी सड़ता है जब उसमें कीटाणुओं की उपस्थिति होती है। यूरोप के तमाम समाचार पत्रों तथा वैज्ञानिक पत्रों में डा. स्वान की चर्चा बलवती हो उठी। लुई इन दिनों रवों पर कार्य कर रहा था। इन दिनों उसकी वय छब्बीस वर्ष की थी। छब्बीस वर्ष की आयु में लुई ने अपना प्रथम महत्त्वपूर्ण रासायनिक आविष्कारसम्पन्न किया। लुई का यह महत्त्वपूर्ण रासायनिक आविष्कार टार्टरिक अम्ल के रवों के विषय में था। लुई ने यह सिद्ध किया था कि टार्टरिक अम्ल के चार विभिन्न प्रकार हैं। टार्टरिक अम्ल के इस महत्त्वपूर्ण आविष्कार ने उसे एकदम से यूरोप के अग्रणी रसायन-शास्त्रियों की पंक्ति में बैठा दिया। फ्रांस के बुजुर्गवार रसायन-शास्त्री उसके मित्र हो गये, जो लुई से वय में चारगुने अधिक थे। चारों ओर से लुई को सम्मान मिलने लगा। और तब लुई की स्टार्सबर्ग कालेज में रसायन-विभाग में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

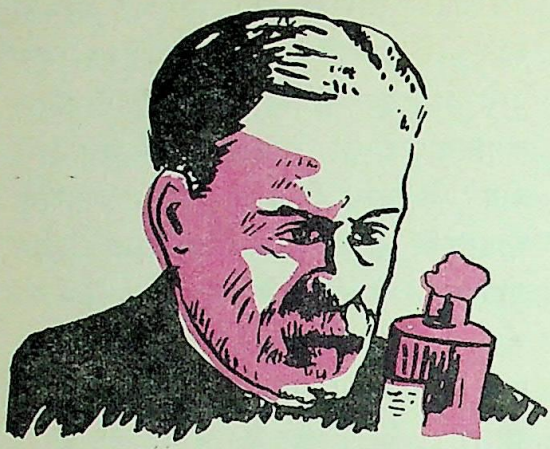

लुई आस्थावान था। उसकी आस्था ने उसे महानता की उस ऊंचाई पर पहुँचा दिया जो आज भी स्पर्धा का विषय बनी हुई है

अध्यापक के रूप में नियुक्ति हुई। यहीं स्टार्सबर्ग कालेज में लुई का प्यार रसायन विभाग के डीन की कन्या से हुआ। जो बादमें विवाह के बन्धनों में सम्पन्न हुआ। लुई अपने छात्रों को अटूट लगन के साथ शिक्षा देता रहा और रिक्त समय में वह शोध-विषयक कार्य करता रहा। इन दिनों लुई ने जीव-रसायन पर शोध किया था, किन्तु उसे अपने इन शोध-कार्यों में सफलता नहीं प्राप्त हुई। थोड़े दिनों उपरान्त लुई की नियुक्ति लिली नगर के विद्यालय में विज्ञान के डीन के रूप में हुई और तब वह स्टार्सबर्ग से लिली चला आया।

नयी जिज्ञासा

लिली उन दिनों के फ्रांस का शराब तथा चीनी उद्योगों का केन्द्र था। लिली में लुई 'फूल की गलियों' में आकर रहने लगा और यहीं उसके जीवन में एक नया मोड़ आया। जिन्दगी का यह नया मोड़ रसायनज्ञ लुई को कीटाणु वैज्ञानिक बना गया। यहीं लिली में वह कीटाणुओं के अध्ययन में प्रथम बार उत्सुक हुआ था। लुई की यह उत्सुकता जिज्ञासा तथा शोध में परिवर्तित हुई। वह रात-दिन शोध में संलग्न रहा। अनगिन रातों और दिनों के श्रम के उपरान्त एक दिन उसने कीटाणु-विषयक एक महत्त्वपूर्ण शोध किया। लुई के इस शोध से चिकित्सा-जगत् में एक क्रान्ति उपस्थित हो गयी। उसने अपने इस कीटाणु-विषयक शोध से फ्रांस की अनगिन माताओं को जीवनदान दिया। लुई का यह शोध उन कीटाणुओं के विषय में था जिनसे प्रसव के समय अनगिन नारियों की मृत्यु हो जाया करती थी, किन्तु लुई के इस शोध ने उन्हें पुनः जीवनदान दिया।

समस्या

लिली के इस छोटे-से औद्योगिक नगर में लुई की ख्याति घर-घर फैल गयी। चारों ओर लुई विख्यात हो गया। उससे विज्ञान सीखने के लिए नगर के तमाम विद्यार्थी उत्सुक हो उठे। किन्तु इतनी ख्याति और यश के इस कोण पर लुई के जीवन में पुनः एक अवरोध उत्पन्न हो गया। नगर के व्यापारियों की एक गोष्ठी ने एक शाम लुई को भोज पर आमन्त्रित किया। इस भोज में नगर के तमाम प्रमुख उद्योगपति एक समस्या लेकर उसके सम्मुख उपस्थित हुये। उद्योगपतियों के प्रमुख ने लुई से उस दिन कहा था, 'माननीय शिक्षक महोदय, हम आपके प्रत्येक तर्क को स्वीकार करते हैं। हम यह स्वीकार करते हैं कि विज्ञान का उच्च अध्ययन आवश्यक है, किन्तु यदि आपके इस उच्च विज्ञान से हमारे नगर को कुछ लाभ नहीं हुआ, तो आपका यह उच्च विज्ञान हमारे लिए व्यर्थ है। एक बात स्मरण रखिए, माननीय, कि लिली का यह नगर उद्योगों का नगर है और इसके उद्योगों की आत्मा चीनी और शराब के उत्पादनों में बसती है। लिली का यह नगर आपसे यह चाहता है कि आप अपने उच्च विज्ञान के माध्यम से हमारी मिलों की चीनी एवं शराब का उत्पादन बढ़ा दीजिए। यकीन मानिए, महोदय लुई, यदि आप ऐसा करने में समर्थ हो सके, तो निश्चित रूप से हम आपकी सहायता करेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम आपकी प्रयोगशाला और वैज्ञानिक शोध तथा अध्ययन के लिए अधिक से अधिक आर्थिक सहायता देंगे जिससे आपको शोध-कार्यों की प्रगति में सहायता प्राप्त हो सके। किन्तु यदि आप ऐसा नहीं कर सके, तो लिली का यह नगर आपकी सहायता करने में असमर्थ होगा।'

जरा कल्पना तो करिए उस भोजवार्त्ता की। शायद एक क्षण के लिए आपके पैरों-नीचे की धरती खिसक जायेगी। सोचिए, एक क्षण के लिए यदि आइजक न्यूटन से किसी व्यापारी ने यह कहा होता कि, महोदय, मैं आपके गति और गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्तों को तभी सत्य मानने को तैयार हूंगा, जब आप यह प्रदर्शित कर दें कि आपके गति के नियम मेरे इस्पात उद्योग को कैसे लाभान्वित कर सकते हैं, तो यह निश्चित था कि वह महान् भौतिक वैज्ञानिक और विचारक अपनी पराजय स्वीकार कर लेता और विज्ञान को छोड़ने के लिए भी शायद तैयार हो जाता। किन्तु लुई उस रात की भोजवार्त्ता से विचलित नहीं हुआ, क्योंकि वह इस तथ्य से परिचित हो चुका था कि विज्ञान के लिए धन की आवश्यकता है। वह भली-भांति इस बात को जानता था कि इस उन्नीसवीं शताब्दी में यदि वैज्ञानिक को जीवित रहना है, तो उसे इन समस्याओं को सुलझाना होगा, क्योंकि यह शताब्दी उद्योगों की शताब्दी है।

एक नाटक विज्ञान का

इस भोजवार्त्ता की घटना के उपरान्त लुई ने नगर में चारों ओर एक वैज्ञानिक नाटक की भावभूमिका का प्रचार शुरू किया। अपने इस नाटक में लुई ने एक दिन शाम को उद्योगपतियों की एक गोष्ठी में एक व्याख्यान बड़े नाटकीय ढंग से दिया। अपने इस वक्तव्य में लुई ने इन उद्योगपतियों के समक्ष एक तथ्य रखा जिससे सारे उद्योगपति प्रभावित हुए। अपने इस तथ्य में लुई ने कहा था, 'माननीय महोदयगण, यदि आपके परिवार में एक युवा की जिज्ञासा विज्ञान के लिए होती है, तो आपका धर्म है कि आप उस युवा वैज्ञानिक की जिज्ञासा को शान्त करिए, क्योंकि वह युवक आगे चलकर आलू से चीनी, चीनी से मदिरा, और मदिरा से ईथर तथा सिरका बनाने में समर्थ सिद्ध हो सकता है।' लुई के इस वक्तव्य से बीगो नामक एक उद्योगपति इतना अधिक प्रभावित हुआ कि एक दिन वह स्वयं लुई के घर पर एक समस्या लेकर उपस्थित हुआ। घर पर आये हुए अतिथि के आतिथ्य के उपरान्त वैज्ञानिक लुई ने अतिथि बीगो महाशय से जब आने का कारण पूछा, तो बीगो महाशय ने झिझकते हुए कहा, 'महोदय ! मेरा पुत्र आपका विद्यार्थी है और मैं उसे वैज्ञानिक बनने के लिए हर तरह से उत्साहित करता रहता हूं।' प्रत्युत्तर में लुई ने कहा, 'यह तो आपकी कृपा है, महाशय बीगो। क्या आपको मेरे शिष्य में अथवा मेरी अध्यापन-प्रणाली में कोई त्रुटि दृष्टिगोचर हुई है ?'

'नहीं, नहीं। ऐसी कोई बात नहीं, महोदय ! यह तो लिली का सौभाग्य है जो उसे लुई-जैसा महान् वैज्ञानिक प्राप्त हुआ है। मैं तो अपनी एक व्यक्तिगत समस्या को लेकर आपके पास आया था, सोचा कि शायद आपका विज्ञान मेरी समस्या का भी कोई समाधान खोज सके।'

'आपका ऐसा विचारना ठीक है, महाशय बीगो, मैं कल निश्चित रूप से आपके शराब के कारखाने में आ रहा हूं।' लुई ने बीगो महाशय को सान्त्वनापूर्ण उत्तर दिया और इस सान्त्वना से सन्तुष्ट होकर महाशय बीगो अपने निवासगृह को लौट गये।

समस्या और समाधान

रात का अन्धकार गहराने लगा और रसायनज्ञ लुई इस गहराते हुए अन्धकार में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीगो की समस्या को लेकर स्वयं तर्क-वितर्क करता रहा। रात बीती और दूसरे दिन सुबह बीगो के शराब-निर्माण-केन्द्र की ओर लुई के कदम एक नयी आशा को लेकर उठ गये। कारखाने पहुंचने पर लुई ने उन तमाम पात्रों का निरीक्षण किया जिन पात्रों में चुकन्दर से मदिरा का सही प्रतिशत नहीं बन पा रहा था। इन पात्रों का निरीक्षण करने के उपरान्त लुई ने स्वस्थ पात्रों का निरीक्षण किया, थोड़ा-सा चुकन्दर का स्वस्थ गूदा निरीक्षण के लिए निकाल लिया। इतना सब कुछ कर चुकने पर वह अपनी प्रयोगशाला को वापस आ गया।

प्रयोगशाला आने पर लुई की समझ में कुछ नहीं आया कि वह किस प्रकार बीगो महाशय की सहायता करे। थोड़ी देर तक लुई निरर्थक, यों ही विचार करता रहा, किन्तु उसे समस्या का कोई समाधान नहीं प्राप्त हुआ। तब यों अनजाने ही बिना किसी विचार के लुई ने स्वस्थ चुकन्दर के रस की एक बूंद अपने अणुवीक्षण यन्त्र के दायरे में रख दी। लेकिन यह क्या! लुई का उदास चेहरा एकदम से गम्भीर क्यों हो गया?

हुआ यह कि लुई ने जब इस एक बूंद रस का निरीक्षण किया, तो रासायनिक रवों के स्थान पर असंख्य छोटे-छोटे गतिशील गोल दायरे दीख पड़े। पहले तो लुई इन असंख्य गतिशील गोल बूंदों को समझ नहीं सका कि ये कौन-सी वस्तु हैं। लेकिन थोड़ी ही देर बाद उसे सहसा ही स्मरण हुआ कि हो न हो ये गोल गतिशील बूंदें खुमार न हों। और तब उसे खुमार के विषय में खोजे गये उस तथ्य की याद आयी जिसके अनुसार सब प्रकार के रसों में खुमार उपस्थित होते हैं और ये खुमार ही रस में किण्वन की क्रिया करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप चीनी और मदिरा का निर्माण होता है।

अपने इस सन्देह को पुष्टि का रूप देने के लिए लुई ने एक बार इस रस बूंद का पुनः ध्यानपूर्वक परीक्षण किया किन्तु इस बार भी उसे खुमारों की उपस्थिति ही मिली, और मिली उनकी गतिशीलता। तब लुई के मन में यह बात अच्छी तरह जम गयी कि कैगनियार्ड डी ला तोर सच था और ये खुमार जीवित प्राणी हैं जिनके कारण चुकन्दर का रस चीनी और अलकोहल में परिवर्तित हो जाया करता है। इतना सब समझ लेने पर लुई ने रोगी मदिरा पात्रों द्वारा लायी हुई चुकन्दर के गूदे की रस-बूंद का भी निरीक्षण किया। किन्तु इस रोगी रस-बूंद के निरीक्षण में उसे गतिशील खुमार बिन्दु नहीं प्राप्त हुआ। इस तथ्य से लुई को बहुत अधिक आश्चर्य हुआ कि क्या कारण है कि इस रस-बूंद में खुमार नहीं है। लेकिन लुई इससे हतोत्साहित नहीं हुआ, किन्तु वह और तीव्रता से सोचने लगा कि खुमार कहां चला गया। और यदि खुमार नहीं है, तो इसका क्या अर्थ है?

एक नया रहस्य

बेचैन लुई प्रयोगशाला में इधर से उधर टहलने लगा। टहलते हुए सहसा ही उसने उस शीशी को उठाकर देखना प्रारम्भ किया जिसमें रोगी चुकन्दरों का रस संगृहीत था। पहले तो लुई को धुंधभरे रस के अतिरिक्त शीशी में कुछ भी न दीख पड़ा, किन्तु थोड़ी देर के गहन परीक्षण के बाद उस बोतल की कांच तथा रस की सतह पर भूरे रंग के कुछ अद्भुत कण दीख पड़े जो उसे स्वस्थ चुकन्दर वाली शीशी में नहीं मिले थे। पहले तो लुई ने सोचा, शायद ये धूलकण हों किन्तु फिर उसके मन में एक सन्देह—एक नया सन्देह उत्पन्न हो गया। कांच की एक पतली स्वच्छ तीली से लुई ने इस भूरे कण को बाहर निकाल कर अपने अणुवीक्षण यन्त्र के दायरे में रख दिया।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी मूक प्रतिज्ञा...

इस स्वतंत्रता दिवस पर हम एक प्रण करते हैं—और भी अच्छी रेल-सेवा तथा और भी अधिक सुरक्षित रेल-यात्रा का प्रण। हम यह प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए जी तोड़ प्रयत्न करेंगे। यह हमारा धर्म है।

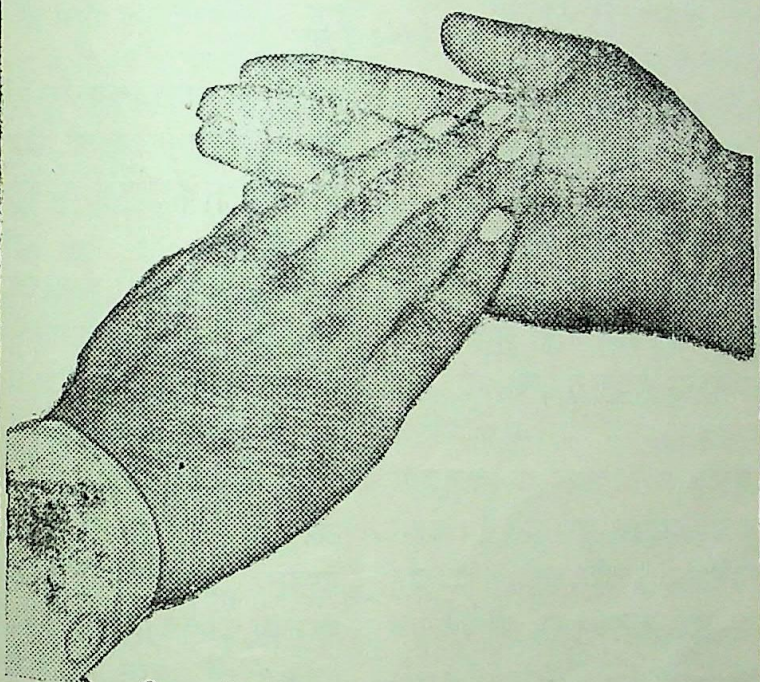

...इसे पूरी करने में आपकी सहायता चाहिए

रेलें राष्ट्र की संपत्ति हैं—आपकी अपनी हैं। जिन सारी चीज़ों से रेलों का लगाव है उन से आपका भी लगाव है। हमें हर हाल में आपके सहयोग और सद्भावना का भरोसा है—यहां तक कि गाड़ियों को समय पर चलाने और रेल-यात्रा को ज़्यादा सुरक्षित और आरामदेह बनाने में भी। कृपया हमारी मदद कीजिए कि हम आपकी सेवा कर सकें।

पश्चिम और मध्य रेलवे द्वारा प्रचारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक अजनबी ग्रह की यात्रा

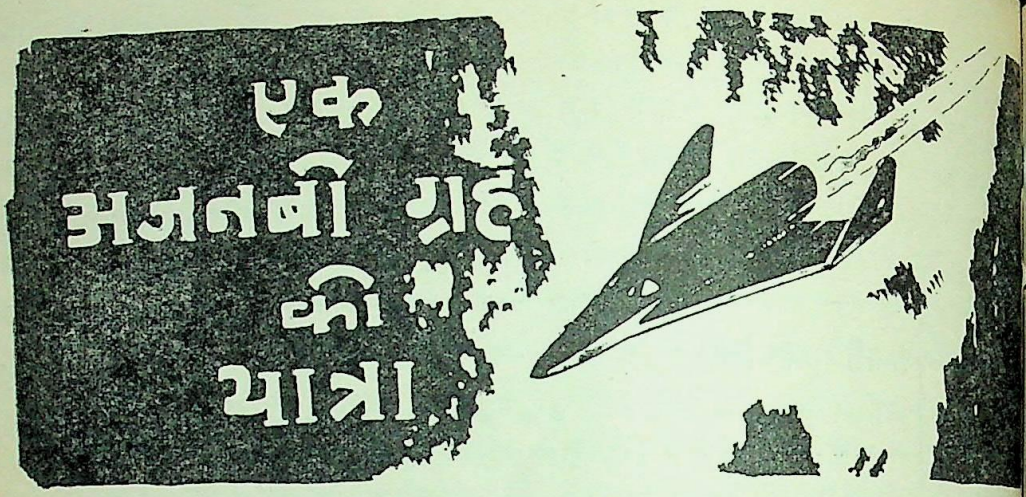

निरंजन पाल

काल बोध : २०६६।

दिक बोध : हमारे सौरमण्डल में हमारी पृथ्वी।

जब पहली बार वैज्ञानिकों को इस ग्रह का पता चला, तो वे चौंक उठे। काफी समय तक उसे एक दूरस्थ नक्षत्र के रूप में जाना जाता था। लेकिन उसका अपना अलग सूर्य था, और वह उस सूर्य का अकेला ग्रह था। एक प्रसिद्ध अन्तरिक्ष-विज्ञानवेत्ता ने हिसाब लगाकर ज्ञात किया कि वह ग्रह अधिक दूर नहीं है। इसने उस ग्रह का नाम डेसोल रखा, क्योंकि जब वह अपनी दूरबीन उधर मोड़ता था, तो उसे उस पिण्ड पर सब कुछ उजाड़ (desolated) नजर आता था। वहां पृथ्वी-जैसा वायुमण्डल होने की कोई सम्भावना नहीं थी।

विभिन्न देशों के अन्तरिक्ष अभियानों द्वारा उस ग्रह की पूरी-पूरी जानकारी मिल गयी। अनेक दुर्लभ चित्र भी प्राप्त हुए।

फिर वैज्ञानिक डेसोल की यात्रा की योजना बनाने लगे। उन्होंने अपने प्रयोगों में पाया कि वहां पहुंचने के लिए अन्तरिक्ष की दो निकटस्थ नीहारिका-प्रणालियों की ओर जाना पड़ेगा। पर कुछ सैद्धान्तिक विवाद खड़े हो गये और वैज्ञानिक उनमें फंसे रहे। अनेक गणितीय उलझनों को सुलझाते हुए उन्होंने यह ज्ञात किया कि यदि अन्तरिक्षयान सप्तर्षि तारामण्डल की दिशा में बढ़ता हुआ शुक्र के पास से निकले, तो वह डेसोल की यात्रा कर सकेगा।

पहली बार दो अन्तरिक्षयात्री डेसोल की यात्रा पर पृथ्वी से भेजे गये। उनका परमाणु-शक्ति-चालित अन्तरिक्षयान आसाधारण था और उनके पास डेसोल पर कुछ दिनों तक टिकने की व्यवस्था थी। जब उन्होंने डेसोल की ऊपर उड़ान भरी, तो पाया कि वहां वायु मण्डल बिलकुल झीना है, लेकिन उनके आश्चर्य का तब ठिकाना नहीं रहा जब उन्होंने बहुत नीची उड़ान भरी। उन्हें शुद्ध अंगरेजी में संकेत प्राप्त हुए कि वे अपने अन्तरिक्षयान को लेकर उनकी सीमा से चले जायें। दोनों अन्तरिक्षयात्रियों ने इधर-उधर कुछ तलाशने की कोशिश की। तभी नजदीक से दो यान आये जो न सुपर-जेट यान थे न जेट यान, क्योंकि उनमें पंखे, प्रापेलर आदि नहीं थे। लेकिन वे घड़े की तरह दीखते थे। अनुमानतः उनकी गति १०,०००-१२,००० मील प्रति घण्टे की रही होगी।

दोनों अन्तरिक्षयात्रियों ने कुछ खतरा महसूस किया और अपने यान में लगे मिसाइल छोड़े। देखते ही देखते घड़े की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकार के अनगिनत यानों ने उन्हें घेर लिया। उन्हें फिर संकेत मिला कि वे फौरन नीचे उतरें। यह संकेत भी विशुद्ध अंगरेजी में था। एक अन्तरिक्षयात्री ने पृथ्वी स्थित नियन्त्रण केन्द्रों को शून्य में घट रही इन घटनाओं की सूचना दी। अन्तरिक्ष स्थित नियन्त्रण केन्द्रों को भी सूचित किया गया।

अब अन्तरिक्षयान डेसोल के यानों के घेरे में नीचे उतर रहा था।

जब अन्तरिक्षयान डेसोल के एक मैदानी क्षेत्र में उतरा, तो सभी डेसोल-यान भी उतर आये। उन यानों में से नुकीले जीव जो काफी डीलडौल वाले थे, निकले। वे पृथ्वी पर से आये अन्तरिक्षयात्रियों की ओर बढ़े। उनके पास बन्दूक के आकार के यन्त्र थे जिनसे वे विकिरण फेंकते थे। अन्तरिक्षयात्रियों ने पृथ्वी पर तथा अन्तरिक्ष के नियन्त्रण केन्द्रों को सूचित किया कि उन पर आक्रमण हो रहा है और वे डेसोल पर उतर चुके हैं···'लगता है, यहां की सभ्यता बहुत विकसित है···' और इसके बाद उनकी आवाज बुझ गयी।

इस दुर्घटना के बाद वैज्ञानिक डेसोल से सम्पर्क स्थापित करने में लगे रहे। इसमें उन्हें सफलता भी मिली। उनके रेडियो संकेतों का उत्तर मिलता रहा। बड़ी मुश्किल से वे डेसोल के केन्द्रों को अपने रेडियो संकेत समझा सके। उनके रेडियो संकेतों को भी समझने में पर्याप्त कठिनाई हुई। फिर कई वर्षों तक संवादों का आदान-प्रदान होता रहा। फिर भी कोई महत्वपूर्ण जानकारी डेसोल के केन्द्रों से उन्हें प्राप्त नहीं हुई। लेकिन वैज्ञानिक डेसोल की दूसरी यात्रा की योजना बनाने में संलग्न रहे।

२०७६···और एक बार फिर दो अन्तरिक्षयात्रियों ने डेसोल की यात्रा की।

रेडियो दूरदर्शी सर्वेक्षण द्वारा तैयार डेसोल के नक्शे के अनुसार वे उस जगह काफी ऊंचाई पर उड़ान भरते रहे जहां पृथ्वी के अन्तरिक्ष-यात्रियों के साथ दुर्घटना घटी थी। वे इतनी ऊंचाई पर थे कि डेसोलवासी उनके सम्बन्ध में जरा भी नहीं जान सकते थे। फिर वे अपने यान को एक रेगिस्तान-जैसे इलाके की ओर ले गये। स्मिथ ने कहा, "विट, मेरा खयाल है, यह इस ग्रह का सबसे उजाड़ क्षेत्र है और यहां गरमी भी अधिक नहीं पड़ती लगती है।"

"हम इस क्षेत्र के नजदीक अपना यान उतार सकते हैं।" विट ने स्वीकृति दी।

यान अब बहुत नीचा होकर उड़ने लगा था। पृथ्वी को संकेत भेजे जा रहे थे···'एक सुनसान और उजाड़ क्षेत्र के नजदीक यान उतारा जा रहा है। दूर-दूर तक जीवन का कोई लक्षण नहीं दिखायी पड़ रहा है।···'

यान की गति कम होती जा रही थी, और नीचे का दृश्य स्पष्ट हो रहा था।

थोड़ी देर बाद यान बालू वाले क्षेत्र के एक किनारे उतर चुका था। स्मिथ और विट यान से बाहर निकल आये। गुरुत्वाकर्षण की कमी का उन्हें यान में ही भान हो गया था। वे स्पेस-सूट में सुरक्षित थे और अपने पीछे बंधे सिलिण्डरों की आक्सजन से सांस ले रहे थे। विट ने कहा, "हमें उस स्थान का पता लगाना चाहिये जहां पहला अन्तरिक्षयान नष्ट हुआ था।"

स्मिथ ने कहा, "ठीक है, मैं नक्शा लाता हूं।" और वह यान के केबिन में नक्शा लेने चला गया। कुछ देर बाद वह नक्शा लेकर आया। उन्होंने नक्शे के आधार पर निकटवर्ती क्षेत्र का सर्वेक्षण किया। वह स्थान जहां पहली अन्तरिक्षयात्रा का यान उतरा था, नक्शे में साफ था लेकिन वे यह हिसाब लगा पाने में असमर्थ थे कि जहां उनका अन्तरिक्षयान उतरा है, वहां से वह स्थान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कितनी दूर है। वे दोनों केबिन में गये और कम्प्यटर की सहायता से स्थान ज्ञात किया। फिर अन्तरिक्षयान के बगल के हिस्से से उन्होंने एक रेसिंग कार-जैसी गाड़ी 'स्पीड मास्टर' निकाली। वे कुछ देर तक इधर-उधर टहलते रहे। दोनों ने महसूस किया कि उन्हें कुछ अस्वाभाविक-सा लग रहा है। वे 'स्पीड मास्टर' पर बैठकर उस स्थान की ओर चल पड़े जहां पहली यात्रा का अन्तरिक्षयान दुर्घटना का शिकार हो गया था। उनकी 'स्पीड मास्टर' गाड़ी में यह विशेषता थी कि वह जमीन से करीब डेढ़ फुट ऊपर उड़ती हुई चलती थी। उसकी रफ्तार बहुत तेज थी और पृथ्वी पर चलने वाली किसी गाड़ी के मुकाबले तो बहुत ज्यादा थी। वह परमाणु शक्ति से चालित थी और डेसोल ग्रह पर उसकी रफ्तार करीब पांच सौ मील प्रति घण्टा थी।

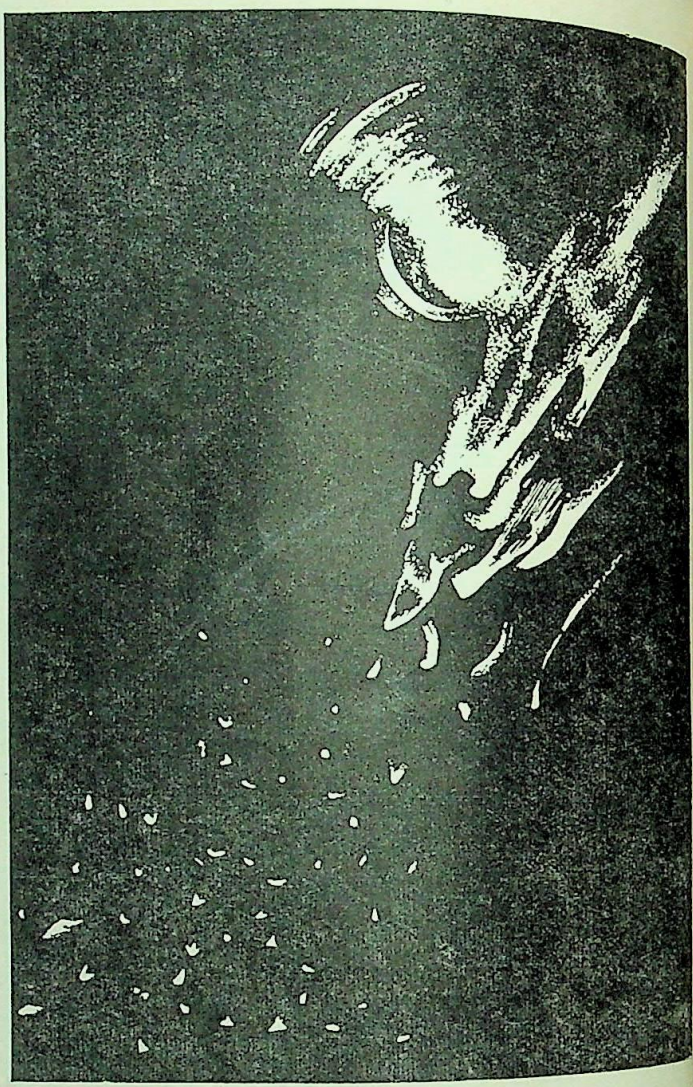

फिर भी घड़े के आकार के रहस्यमय यान कहीं से निकल आते थे और अन्तरिक्षयात्री रेडियो संकेत प्राप्त करने लगते थे

करीब दो घण्टे की यात्रा के बाद वे अपेक्षित स्थान पर पहुंचे। दूर से ही उन्हें पहली यात्रा का अन्तरिक्ष यान दिखायी पड़ गया। वे नजदीक पहुंचे। वह अन्तरिक्षयान ध्वस्त हुआ पड़ा था। अन्तरिक्षयात्रियों के अवशेषों का कोई पता नहीं था। वह एक विशाल भवन की भांति लग रहा था जो टूटकर टुकड़ों में बंट गया हो। स्मिथ ने सिर झुकाकर कहा, "वे कितने साहसी थे जो यहां आये और मृत्यु को प्राप्त हो गये। लेकिन उनकी हड्डियां, उनके अवशेष, यहां कुछ भी तो नहीं है। और वह अत्यधिक विकसित सभ्यता कहां है? वे अनोखे डेसोल-यान कहां हैं? हमें तो कोई दिखायी नहीं दे रहा है। क्यों, विट, तुम्हें यह ठीक तरह ज्ञात है, उन्होंने पृथ्वी के केन्द्रों को यही सन्देश भेजा था कि उन पर आक्रमण हो रहा है?"

विट अभी कुछ कहता, इससे पहले ही उन्होंने चार घड़ानुमा यान आकाश में देखे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे एक आशंका से घबरा उठे। उन्होंने आपस में मन्त्रणा की और 'स्पीड मास्टर' पर बैठकर तेजी से अपने यान की ओर चले गये। 'स्पीड मास्टर' को यान में बने गैरेज में डालकर वे यान में बैठ गये और राकेट छोड़कर उन्होंने उड़ान भरी। वे जल्दी ही बहुत ऊंचाई पर पहुंच गये और डेसोल के झीने-पतले वायुमण्डल की सीमा से बहुत दूर चले गये। उन्होंने ढेर-सारे डेसोल-यानों को देखा। दूर-दूर तक वे ही दिखायी पड़ रहे थे। वे अपने यान को, कक्षा बदलकर, डेसोल के दूसरे गोलार्द्ध की ओर ले गये। उन्हें बराबर रेडियोसंकेत प्राप्त हो रहे थे कि वे डेसोल के रेगिस्तानी इलाके में उतरें और उन्हें डेसोलवासियों से कोई खतरा नहीं महसूस करना चाहिये, लेकिन अगर उन्होंने कुछ आक्रमण-जैसी काररवाई करनी चाही, तो वे तबाह कर दिये जायेंगे···लेकिन उन्होंने डेसोल से प्राप्त रेडियो संकेतों की उपेक्षा की।

"अब फिर कहां ?" विट ने पूछा।

स्मिथ स्क्रीन पर लगातार देखता रहा। उसने पृथ्वी को डेसोल के सम्भावित आक्रमण की सूचना दी। अन्तरिक्ष स्थित सभी केन्द्रों को भी उसने सूचित किया। उसने विट से कहा, "क्या तुम यह सोचते हो कि हमें वापस पृथ्वी पर लौट चलना चाहिये ?"

"यह अच्छा ही होगा।" विट ने कहा, "लगता है, इस ग्रह पर हम अपना अनुसन्धान-कार्य नहीं कर पायेंगे। पता नहीं अभी और क्या-क्या आश्चर्य देखने को मिलें!"

लेकिन स्मिथ विट से सहमत नहीं हो सका। वह आजीवन इसी अवसर की तलाश में रहा था। वह अन्तरिक्षयात्रा के लिए चुने जाने से पहले यही सोचता रहा था कि एक दिन उसे किसी ग्रह पर खोज करने का अवसर मिलेगा। यह एक रोमांचकारी मौका था। पृथ्वी पर लौट जाना असफलता होती। उसने कहा, "एक जरिया है। लगता है, इस ग्रह की सभ्यता अत्यधिक विकसित है। मुमकिन है हमारी पृथ्वी की सभ्यता से दो अरब वर्ष आगे हो। हमें इस सभ्यता और इस ग्रह के वासियों का रहस्य जानना है। अब हम डेसोल पर उतरेंगे नहीं और अपने अन्तरिक्षयान में उड़ते हुए ही यह ज्ञात करने की कोशिश करेंगे कि इस ग्रह के लोग रहते कहां हैं। यह क्या आश्चर्यजनक नहीं है कि जब हम किसी को देख नहीं पाते हैं, फिर भी डेसोल-यान कहीं से निकल आते हैं और हमें रेडियो संकेत प्राप्त होने लगते हैं। हमें बताया गया था कि इस ग्रह के जीव नुकीली आकृति वाले होते हैं। वे सब कहां हैं ?

स्पीड मास्टर पर बैठकर वे उस स्थान की ओर चल पड़े जहां पहली यात्रा का अन्तरिक्षयान दुर्घटना का शिकार हो गया था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह भी चमत्कारिक है कि इस ग्रह के लोग अंगरेजी जानते हैं। कैसे ? क्या कभी इन्होंने पृथ्वी की यात्रा की थी ? विट···विट, हम वापस पृथ्वी पर तब तक नहीं लौट सकते जब तक इस ग्रह के सम्बन्ध में पूरी-पूरी जानकारी प्राप्त नहीं कर लेते।"

विट ने अपने कंधे हिलाये। वह आशंकित था। उसने कभी नहीं यह कल्पना की थी कि डेसोल पर कोई अत्यधिक विकसित सभ्यता मिल सकती है। उसने पहले की अन्तरिक्षीय दुर्घटना को मात्र एक साधारण दुर्घटना स्वीकार किया था और सोचा था कि यदि डेसोल पर सभ्यता हुई, तो निश्चय ही वह पृथ्वी से अधिक विकसित नहीं होगी, लेकिन आसमान में छा जाने वाले डेसोल-यानों के बारे में सोचकर वह हमेशा सिहर उठा है।

डेसोल के दक्षिणी ध्रुव की ओर स्मिथ यान ले गया। यान उधर ही काफी देर तक चक्कर काटता रहा। उन्हें डेसोल हर ओर से उजाड़ नजर आया था। स्मिथ ने अचानक विट का ध्यान आकर्षित किया। दक्षिणी ध्रुव के बिलकुल सिरे पर करीब तीन-चार सौ वर्ग मील के क्षेत्र में कई बड़े-बड़े फाटक लगे थे। विट ने उधर देखकर आश्चर्य किया। यान को उन्होंने थोड़ा और नीचे किया। उनका यान एक बहुत छोटी कक्षा में चक्कर काटने लगा था। उन्होंने वे रेडियो संकेत डेसोल को भेजे जो वैज्ञानिक प्रायः पृथ्वी से भेजते थे। ये संकेत मैत्रीपूर्ण थे। फिर डेसोल के किसी केन्द्र से बातचीत आरम्भ हो गयी। स्मिथ ने फौरन यह सब अन्तरिक्ष और पृथ्वी के केन्द्रों को सूचित किया। उन केन्द्रों की ओर से निर्देश मिला कि यदि सावधानीपूर्वक डेसोल पर खोज हो सकती है, तो वे जारी रखें।

उन्होंने अपने यान की कक्षा बदल ली और हजारों मील तक फैली ऊसर भूमि के ऊपर उड़ते रहे। झीने वायुमण्डल वाला डेसोल अजीब ग्रह था। यहां वर्षा नहीं होती थी, तूफान नहीं उठते थे और बर्फ नहीं गिरती थी। क्या कभी यहां सघन वायुमण्डल था? यह एक ऐसा प्रश्न था जिसका उत्तर डेसोलवासी ही दे सकते थे।

विट ने पूछा, "यहां के इतने झीने वायुमण्डल में जिसमें आक्सीजन बिलकुल नहीं है, जीवन कैसे हो सकता है ? फिर भी हम एक अत्यधिक विकसित सभ्यता वाले ग्रह के ऊपर उड़ान भर रहे हैं।"

"निश्चय ही।" स्मिथ ने कहा, "एक झीने वायुमण्डल वाले ग्रह पर जिसमें आक्सीजन न हो, जीवन की कल्पना अजीब-सी लगती है। लेकिन जीवन के कई स्वरूप हो सकते हैं। वह स्वरूप जो हमारी पृथ्वी पर है, उससे जरूर इस ग्रह पर का जीवन भिन्न होगा।"

"तो क्या यह माना जा सकता है कि इस तरह के वायुमण्डल वाले ग्रह पर एक अत्यधिक विकसित सभ्यता हो सकती है ?"

"इस प्रश्न का उत्तर तो डेसोलवासी ही दे सकते हैं।"

विट ने स्क्रीन की ओर इशारा करके कहा, "वह देखो ! दायीं तरफ, उधर···।"

स्मिथ ने फिर यान की कक्षा बदल दी। उसे कुछ पर्वत नजर आये। ये पर्वत विशालकाय थे। एक-दूसरे से करीब सौ फुट की दूरी पर। स्मिथ और विट दोनों ने इन पर्वतों को देखकर आश्चर्य किया। उन्होंने फौरन चित्र लेने शुरू कर दिये। उन्होंने टेलीविजन कैमरों के लेंस भी उधर मोड़ दिये। पृथ्वी के केन्द्रों को उन्होंने सूचना भेजी कि निश्चय ही यहां सब कुछ रहस्यपूर्ण है और बड़े-बड़े पर्वत दिखायी पड़ रहे हैं। लेकिन ये पर्वत नहीं, वे राकेट लगते हैं जिन पर शायद डेसोलवासी अन्तरिक्ष की यात्रा करते हैं।

उन्होंने अपने यान को और नीचा कर लिया और वे जमीन के बहुत पास होकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उड़ान भरने लगे। उन्होंने दूर-दूर पर जमीन में गोल सुराख देखे। वे सुराख बेतरतीब-से थे। उन सूराखों पर स्पंज के ढक्कन रखे हुए थे। उन्होंने अपने यान को फिर ऊपर कर लिया। तभी विट ने कुछ अजीब तरह के रेडियो संकेत प्राप्त किये। उसने देखा, एक ओर बड़ी तेज रोशनी हुई है। उसने स्मिथ को सावधान किया। स्मिथ ने रेडियो संकेत सुने। फिर देखते ही देखते घड़े के आकार के यान आकाश में छा गये। उन्होंने देखा, डेसोल के तल पर बहुत से दरवाजे खुल गये हैं और उनमें से वे यान निकलते जा रहे हैं। निश्चय ही वे विचित्र यान दस-बारह सौ की संख्या में थे। अब उन्हें स्पष्ट रेडियो संकेत प्राप्त हो रहा था कि वे नीचे उतर आयें, नहीं तो शून्य में ही उनका यान नष्ट कर दिया जायेगा। इस तरह की धमकी उन्हें बार-बार मिल रही थी। उन्होंने अपने यान को डेसोल की सीमा से बहुत दूर ले जाना चाहा, लेकिन डेसोल यान उनकी ओर बढ़े आ रहे थे।

स्मिथ की दृष्टि अचानक मीटर की ओर गयी। उसने पाया कि यान के बाहर विकिरण की मात्रा काफी बढ़ गयी है। सम्भवतः वे सब अपने यानों में लगी विशालकाय तोपों से विकिरण बिखेर रहे थे। खतरा सामने था। विकिरण की मात्रा के काफी बढ़ जाने से मुमकिन है, उनका यान भस्म हो जाय, क्योंकि थर्मामीटर पर बाहर का ताप ७,००० डिग्री सेण्टीग्रेड से अधिक हो गया था और उनके यान पर चढ़ी तापनिरोधक पट्टियां ९,००० डिग्री सेण्टीग्रेड से अधिक ताप के लिए पर्याप्त नहीं थीं। उन्होंने पृथ्वी के केन्द्रों को सन्देश भेजा कि वे अपना यान डेसोल पर उतार रहे हैं। वे खतरे में पड़ गये हैं और यह नहीं कह सकते कि वे बच जायेंगे।

सन्देश भेजने के बाद ही पृथ्वी से उनका सम्बन्ध समाप्त हो गया। वे यान को उतारने के लिए अधिक नीचाई पर उड़ने लगे। डेसोल से उन्हें उपयुक्त स्थान पर उतरने के लिए संकेत मिल रहे थे। वे उन संकेतों के आधार पर एक सपाट रेगिस्तानी इलाके के ऊपर चक्कर काटने लगे। करीब-करीब सभी डेसोल-यान उतर चुके थे। फिर भी कुछ यानों ने अन्तरिक्षयान के चारों तरफ एक घेरा बना रखा था और वे उसके साथ-साथ उतर रहे थे।

वे दोनों, स्मिथ और विट बालू वाली जमीन पर उतरे। उनके नजदीक ही करीब एक सौ रहस्यमय डेसोलयान उतरे थे। दोनों यात्री अन्तरिक्षयान का केबिन खोलकर बाहर आ गये। उन्होंने सावधानी से अन्तरिक्ष सूट के साथ आक्सीजन के दो-दो सिलिण्डर लगा लिये थे। डेसोल के रहस्मय यानों से निकलकर डेसोल-मानव जो निश्चय ही वहां के सैनिक थे, पृथ्वी के अन्तरिक्षयात्रियों की ओर बढ़ने लगे। उन्होंने स्मिथ और विट को घेरे में ले लिया। तभी दो गाड़ियां जो बहुत तेज गति से आयीं, पास ही रुक गयीं। एक गाड़ी में से एक डेसोल मानव निकला। सम्भवतः डेसोल-यानों का वह कप्तान था। वह पृथ्वी के अन्तरिक्षयात्रियों की ओर, आगे बढ़ आया और उसने विशेष प्रकार से उनका अभिवादन किया। उसके हाथ में एक छड़ी-जैसी कोई चीज थी जिसे उसने कई बार घुमाया। उसने एक यन्त्र की सहयता से अंगरेजी में बात की, "हम आप लोगों का अपने ग्रह पर स्वागत करते हैं। हमने आपको उतरने के लिए कटु संकेत दिये, इसका हमें खेद है, क्योंकि हमारे यहां के शासन का यह नियम है कि हम बाह्य अवकाश में अपने शत्रु और मित्रों की पहचान करें। यदि शत्रु कोई हो, तो हम उसे नष्ट कर दें। पर आप जिस ग्रह से आये है, उसे यहां का शासन मित्र ग्रह मानता है। हम आपको अपने ग्रह के शासनाध्यक्ष तक ले चलेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्मिथ और विट यह सब कुछ समझ न सके। उन्हें लगा, जैसे वे कोई स्वप्न देख रहे हों। यह एक उजाड़-सा समझा जाने वाला ग्रह, जहां जीवन की कोई सम्भावना नहीं थी, वहां के ये नुकीली आकृति वाले लोग। मानव से बिलकुल मिलते-जुलते। वे हैरान रहे।

स्मिथ और विट डेसोल की निर्जन सतह पर चलने वाली तीव्रगामी गाड़ी द्वारा जिसमें कप्तान आया था, करीब छह घण्टे (विश्व की घड़ी) की यात्रा के बाद उस स्थान पर ले जाये गयी जहां काफी पहले दक्षिणी ध्रुव की ओर उड़ते हुए कई सौ वर्ग मील क्षेत्र में उन्होंने दरवाजे देखे थे।

एक विशालकाय दरवाजे के सामने गाड़ी रुक गयी। कप्तान ने गाड़ी में से ही कोई बटन दबाया। दरवाजा अपने-आप खुल गया। स्मिथ ने आश्चर्य करते हुए कप्तान की ओर देखा। कप्तान ने कहा, "हमारी सभ्यता इतनी विकसित हो चुकी है कि यहां सभी काम दूरस्थ नियन्त्रण द्वारा होते हैं।"

उनकी टैक्सी जब दरवाजे के भीतर गयी, तो उसकी रफ्तार कुछ कम हो गयी।

कप्तान ने कहा, "हमारे यहां के लोग टेलीविजन पर आपका यहां आना देख चुके होंगे। जगह-जगह लोग शायद आप दोनों के स्वागत के लिए मिलें।"

स्मिथ और विट ने जवाब में सिर्फ धन्यवाद कहा।

वे कई सौ मील एक अंधेरी सुरंग में चलते रहे, फिर उसके बाद जैसे वे भूगर्भ के किसी नगर में पहुंच गये। उन्होंने पाया, उस नगर में उनके स्वागत के लिए सड़कों के इधर-उधर हजारों-लाखों की संख्या में लोग खड़े हैं और वे न जाने कौन-सी भाषा में उनका स्वागत कर रहे हैं। लेकिन उनकी गाड़ी चलती रही। बाजार में से गुजरते हुए उनकी गाड़ी की रफ्तार काफी कम हो गयी थी। वे एक-एक करके कई नगरों में से गुजरते रहे। हर नगर में दिन का-सा प्रकाश था। कप्तान बार-बार यही कहता रहा कि हमारे यहां की सभ्यता काफी आगे बढ़ी हुई है। आप लोगों को शायद आश्चर्य हो रहा हो।

वे लम्बा रास्ता तय करके एक रेलवे स्टेशन-जैसी जगह में पहुंचे। वहां एक विशेष गाड़ी उनका इन्तजार कर रही थी।

वे गाड़ी में बैठे। यात्रा प्रारम्भ हुई। गाड़ी एक पतली सुरंग में से होकर गुजरती रही उस गाड़ी में कोई इंजन नहीं था, केवल दो कम्पार्टमेण्ट थे, और उनमें कुछ यन्त्र लगे हुए थे।

स्मिथ और विट शासनाध्यक्ष के पास पहुंचे। शासनाध्यक्ष से उनकी मुलाकात करायी गयी। मुलाकात के समय उस ग्रह के प्रसिद्ध वैज्ञानिक तथा अन्यानेक महत्त्वपूर्ण ग्रहवासी थे। वहां विशेष यन्त्रों की सहायता से स्मिथ और विट ने उनसे अंगरेजी में बात की। अंगरेजी में ही जवाब भी मिला। अब तक बातचीत में वे 'डेसोल' शब्द का प्रयोग करते थे। उन्हें बताया गया कि उस ग्रह का नाम रेजोना है। उन्हें रेजोना के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण जानकारी दी गयी।

रेजोना किसी समय पृथ्वी ही की भांति घने वायुमण्डल वाला ग्रह था—शायद दो अरब वर्ष पूर्व। धीरे-धीरे वहां का वायुमण्डल समाप्त होता रहा और जीवन बदलता गया। लेकिन क्रमशः कम विकसित जीवन लुप्त होता गया। केवल मानव अति विकसित रूप में बचा रहा। फिर भी विकास की ओर अग्रसर रहा।

इस परिवर्तन में अरबों वर्ष लगे। अब रेजोना-मानव के फेफड़े नहीं होते, फेफड़ों की जगह स्पंज की भांति गद्दियां होती हैं। ये गद्दियां शरीर में उत्पन्न अनावश्यक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

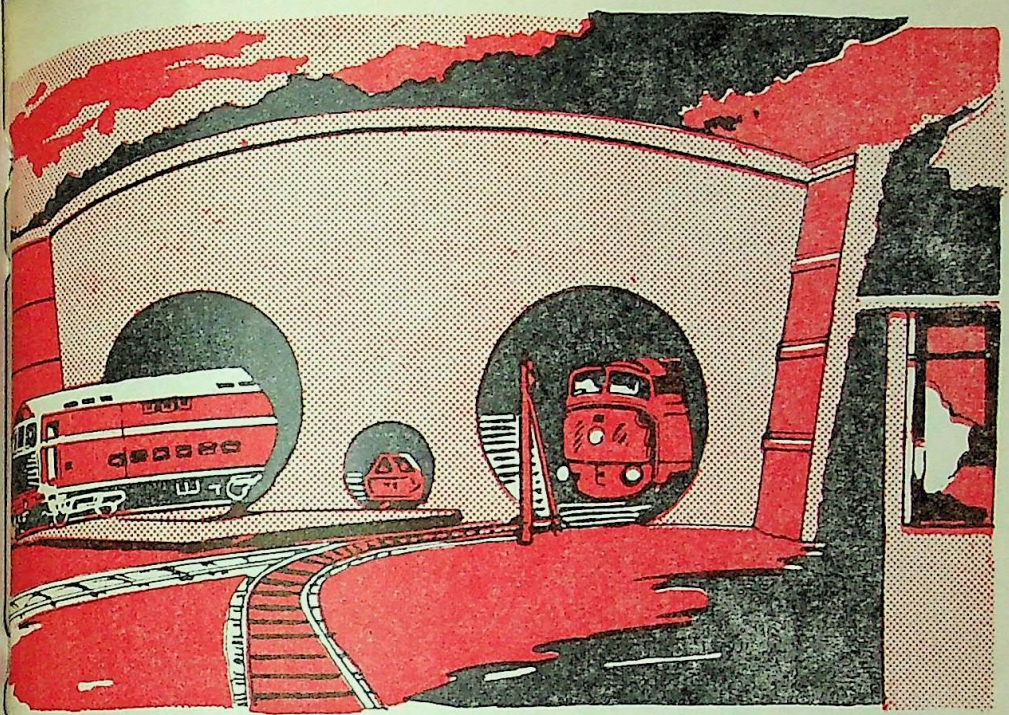

ग्रह के अन्दर बसी दुनिया—उनकी गाड़ी एक पतली सुरंग में से होकर गुजरती रही

कार्बन डाइआक्साइड को सोखती हैं।

वायुमण्डल जैसे-जैसे लुप्त होने लगा, रेजोनावासियों ने ग्रह के अन्दर अपनी दुनिया बना ली। इसमें लाखों-करोड़ों वर्ष लगे और इतने समय में रेजोना का ऊपरी भाग उजाड़ होता रहा।

शासनाध्यक्ष ने बताया कि यद्यपि रेजोना के वैज्ञानिक तब से ही पृथ्वी में दिलचस्पी लेते रहे हैं, जब वह अभी निर्माणाधीन थी किन्तु पिछले दो हजार वर्षों में हमारे अन्तरिक्षयान पृथ्वी की यात्रा पर कई बार गये। उसने कहा, "दो हजार वर्ष हमारे अपने वर्ष हैं। आपके तीस हजार वर्ष के बराबर। इस बीच हमने आपकी भाषा सीखी और उन्हें रेजोना के लोगों को सिखाया। हमारी एक महत्त्वपूर्ण यात्रा ६ सितम्बर १९६५ को अमरीकी घड़ियों के अनुसार सुबह के २ बजकर २४ मिनट पर सम्पन्न हुई थी। हमारा यान न्यूहेमिस्फेयर में उतरा था। वहां के अखबारों में आकाश में अद्भुत चमक देखे जाने का वर्णन अवश्य छपा होगा। हम दुनिया की हर खबर रखते हैं। हमारे यहां की टेलीविजन व्यवस्था बहुत शक्तिशाली है। दुनिया के किसी भी देश का टेलीविजन प्रोग्राम हम देख सकते हैं।" इतना कहकर शासनाध्यक्ष पीछे एक आलमारी-जैसी जगह की ओर घूमा। उसने परदा हटाया। एक टेलीविजन-जैसा उपकरण रखा था। उसने कुछ नाब घुमाये। स्क्रीन पर मिलेजुले रंगों का प्रकाश फैल गया, फिर एक दूसरे नाब को घुमाने के बाद एक यूरोपीय राजनीतिज्ञ की तस्वीर उभरी। स्मिथ और विट मुस्करा उठे। शासनाध्यक्ष ने कहा, "हम ध्वनि नहीं सुनते। एक तो हमारे यहां का वायुमण्डल बहुत झीना है और विज्ञान यहां इतना विकसित हो चुका है कि हम सिर्फ विद्युत् चुम्बकीय लहरों से ध्वनि अनुभव करने लगे हैं। लेकिन आप लोग इस तरह ध्वनि का अनुभव नहीं कर सकते।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्मिथ और विट ने स्वीकृति में सिर हिलाया।

स्मिथ और विट रेजोना के भूगर्भ में भ्रमण के लिए छह घण्टे तक रुक गये। लेकिन ये छह घण्टे पृथ्वी के छह घण्टों के बराबर नहीं थे, क्योंकि रेजोना बहुत धीमी गति से अपनी धुरी पर और अपनी कक्षा में घूमता था। वहां के छह घण्टे अरबों वर्ष पहले पृथ्वी के ही छह घण्टों के बराबर थे लेकिन जैसे-जैसे ग्रह की गति मन्द पड़ती गयी, दिन और रात की सीमा बढ़ती गयी और वर्ष भी बढ़ता गया। अब तक करीब पृथ्वी की तुलना में १६ गुना अन्तर पड़ गया था। यानी वहां के छह घण्टे पृथ्वी के चार दिन के बराबर हो गये थे। लेकिन इससे रेजोनावासियों को कोई फर्क नहीं पड़ता था, क्योंकि उनके लिए अब तक दिन और रात का महत्त्व समाप्त हो गया था। इसका कारण यह था कि वे अब ग्रह पर नहीं, ग्रह के भीतर रह रहे थे।

स्मिथ और विट रेजोना का भ्रमण करने से पहले यान तक आये और कुछ और आक्सीजन सिलिण्डर अपने साथ ले लिये।

भ्रमण में उन्होंने बहुत-सी नयी बातें मालूम कीं। रेजोना के लोग नर और मादा में बंटे हुए हैं। वहां जानवर बिलकुल नहीं हैं, केवल रेजोनावासी नर और मादा हैं। जानवरों का अस्तित्व करोड़ों वर्ष पूर्व ही समाप्त हो गया था। वहां सभ्यता उस ग्रह की सापेक्षिक स्थितियों में विकास की चरम सीमा पर पहुंची हुई है और अब उसका ह्रास हो रहा है। रेजोना शीघ्र ही एक मृत ग्रह में परिवर्तित हो जायेगा। वहां का अति विकसित नर और मादा स्वरूप भी समाप्त हो जायेगा। उस समय रेजोना की गति समाप्त हो जायेगी और वह या तो शून्य में विलीन हो जायेगा, या अपने सूर्य की ओर खिंचता चला जायगा। लेकिन अब उसमें अरबों वर्ष लगेंगे।

रेजोना के लोग भोजन के लिए विशेष प्रकार के बैक्टीरिया की खेती करते हैं जो वहां के अमोनियायुक्त झीने वायुमण्डल में प्रजनित होता है। इसके लिए भूगर्भ में ही बड़े-बड़े खेत हैं जहां कुछ कृत्रिम तत्त्वों से बैक्टीरिया की चादर उगायी जाती है। फिर यह चादर खाद्य पदार्थों के निर्माण में काम में लायी जाती है। वहां पानी नहीं है और लोग पानी नहीं पीते। बैक्टीरिया की चादर से निर्मित खाद्य पदार्थ कैपसूल के आकार का होता है। इसे रेजोना मानव मुंह में रख लेता है। थोड़ी देर में मुंह में भाप-सी बनने लगती है जो मुंह बन्द रखने पर पेट में चली जाती है और फिर वहां से शरीर के अवयवों को शक्ति प्रदान करती है। शरीर के अवयवों का क्षय बहुत धीमे होता है। यही कारण है कि रेजोनावासी प्रायः पांच-पांच सौ वर्ष तक जीवित रहते हैं।

रेजोना में अनेक शासन नहीं हैं। वहां पहले कई शासन थे पर अनेक युद्धों के बाद वे एक शासन के सिद्धान्त से सहमत हुए। उनकी एक संस्कृति है। सब कुछ एक ही। वहां लोग काम करते हैं अन्वेषण की लालसा से। वैसे भोजन का कैपसूल सबको मुफ्त बांटा जाता है।

डेसोल···रेजोना में सभ्यता उस ग्रह की सापेक्षिक स्थितियों में विकास की चरम सीमा पर पहुंची हुई है···और यह ठहराव नहीं है···

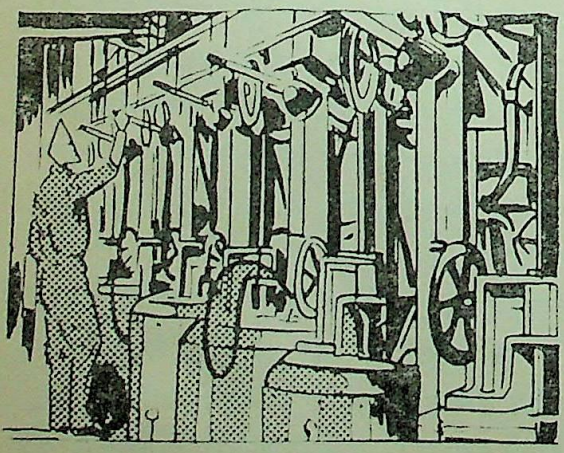

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहां बड़े-बड़े उद्योग हैं और प्रायः अन्तरिक्षयानों के निर्माण के अनेक केन्द्र हैं जिनमें रेजोनावासी अन्तरिक्षयान द्वारा दूर-दूर के नक्षत्रों की यात्रा करते हैं। वे हजारों वर्ष पूर्व फोटोन राकेट की शक्ति से अन्तरिक्ष-यात्राएं करते थे, लेकिन अब उन्होंने एक नयी विधि का आविष्कार किया है और ब्रह्माण्ड में विकरित होती असीम शक्ति को एकत्र कर राकेट चलाते हैं।

लेकिन रेजोना की वहां के समय के अनुसार छह घण्टे की यात्रा समाप्त करके पृथ्वी के अन्तरिक्षयात्री लौट नहीं सके। विश्व भर में उनके स्वागत की तैयारी हो चुकी थी और अपने यान के चलने के बाद उन्हें सन्देश भेजना था। उनके यान को भूमध्यसागर के पास उतरना था। लेकिन अफसोस! उनका यान लाख प्रयत्नों के बाद भी पृथ्वी की ओर नहीं आ सका।

जब यान रेजोना से चला। तो अन्तरिक्ष-यात्रा के लिए अन्तरिक्षयात्री पूरी तरह तैयार थे। काफी दूर तक उनके साथ-साथ रेजोना के परमाणु-चालित अन्तरिक्षयान भी आये थे। उनके लौटने के बाद अचानक स्मिथ और विट अन्तरिक्षीय आंधी में फंस गये और उनका दिशा-बोध जाता रहा। उन्होंने फिर पृथ्वी से सम्पर्क स्थापित करने की कोशिश की और सम्पर्क स्थापित कर भी लिया लेकिन यान को नियन्त्रित नहीं कर सके। उनका यान लगातार एक अन्तरिक्षीय द्वीप की ओर बढ़ता जा रहा था। विवशतः उन्हें सावधानीपूर्वक अपने यान को उस अन्तरिक्षीय द्वीप पर उतारना पड़ा।

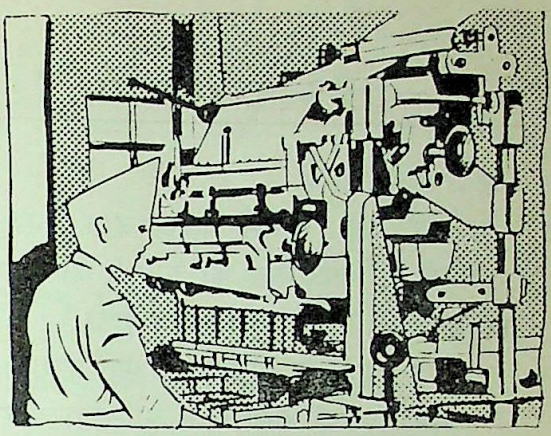

...लेकिन यह विकसित सभ्यता, यह अति विकसित, नर और मादा स्वरूप शीघ्र ही समाप्त हो जायेगा, क्योंकि रेजोना का ह्रास हो रहा है

उस अन्तरिक्षीय द्वीप पर उतरने के बाद उन्होंने इधर-उधर वनस्पतियां देखीं और जीवन भी। लेकिन यह सब ऐसा लगा, जैसे वे अपनी ही पृथ्वी पर करोड़ों वर्ष पूर्व का काल जी रहे हों।

उपरिलिखित विवरण स्मिथ और विट ने उसी अन्तरिक्षीय द्वीप से भेजा था। उन्होंने अपने यान को पुनः कक्षा में स्थापित करने की चेष्टा की किन्तु उस अन्तरिक्षीय द्वीप के अधिक गुरुत्वाकर्षण के कारण उन्हें सफलता नहीं मिल सकी।

लेकिन पृथ्वी पर के वैज्ञानिक अभी तक उस अन्तरिक्षीय पिण्ड की स्थिति का सही-सही अन्दाजा नहीं लगा पाये हैं जिस पर स्मिथ और विट के अनुसार मानव जीवन के विकसित होने की पूरी-पूरी सम्भावना है। फिलहाल वैज्ञानिकों ने रेजोना के बारे में सोचना छोड़ दिया है और अपना ध्यान उस अन्तरिक्षीय पिण्ड पर केन्द्रित कर लिया है।

एक सम्भावना

अपोलो योजना के अन्तर्गत चन्द्रमा से लौटते समय पृथ्वी के वायुमण्डल में २४,७५० मील प्रति घण्टा की गति से प्रवेश करते समय अन्तरिक्षयान के कमाण्ड खण्ड का प्रवेश-कोण यदि चौड़ा हुआ, तो अन्तरिक्ष-यात्री पृथ्वी के वायुमण्डल में फिसलाते हुए आगे निकल जायेंगे तथा अन्तरिक्ष में विलीन हो जायेंगे !...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

बहु-उपजाऊ मकई

मकई की एक ऐसी बहु-उपजाऊ किस्म बुडापेस्ट में विकसित की गयी है जो एक एकड़ में ३१ टन से अधिक पैदा होती है।

यह मकई रूस, पोलैण्ड और पूर्वी जरमनी में लोकप्रिय हो गयी है। आस्ट्रिया और ब्रिटेन के किसान भी यह मकई बोने लगे हैं।

विलक्षण रेडियो टेलीफोन-व्यवस्था

घाना की राजधानी अंकरा से तेमा की १२ मील लम्बी सड़क पर ५ रेडियो टेलीफोन लगाये गये हैं। ये टेलीफोन उन यात्रियों के लिए हैं जिनकी मोटरगाड़ी इस मार्ग पर खराब हो सकती है।

इस टेलीफोन व्यवस्था की यह विशेषता है कि इसके रेडियो उपकरणों के लिए विद्युत-शक्ति का स्रोत सूर्य की रश्मियों से प्राप्त होता है। प्रत्येक टेलीफोन के साथ एक स्तम्भ लगा है, जिसके सिरे पर एक बैटरी लगी होती है। यह बैटरी सूर्य की किरणों से विद्युत-शक्ति खींचकर संचित करती है।

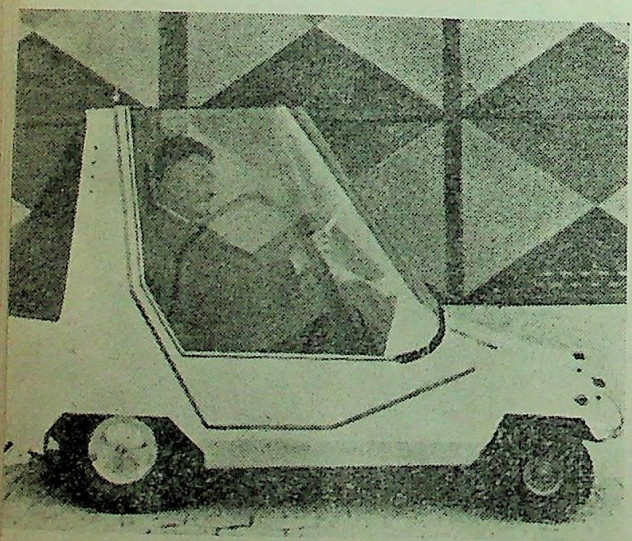

अनाज को सुरक्षित रखने में अणु-विज्ञान की सहायता

दो आणविक विकिरण यन्त्र कनाडा की आणविक शक्ति संस्थान की ओर से भारत आ रहे हैं। इन यन्त्रों द्वारा खाद्य पदार्थों को सुरक्षित रखने के सम्बन्ध में प्रयोग किये जायेंगे।

इनमें से एक यन्त्र द्वारा मछली, फल और सब्जियों पर गामा किरण का प्रभाव डालकर यह पता लगाया जायगा कि गामा किरणों के प्रभाव से वे पदार्थ कितने दिनों तक खराब हुए बिना रह सकते हैं।

इस यन्त्र को शल्य-चिकित्सा में प्रयोग में आने वाले औजारों को कीटाणु-रहित बनाये रखने के लिए भी प्रयुक्त किया जायेगा।

दूसरे यन्त्र द्वारा अनाज को आणविक विकिरण द्वारा देर तक सुरक्षित रखा जायेगा, ऐसी योजना है।

इन आणविक यन्त्रों में जो तत्त्व ईंधन की तरह प्रयुक्त होगा, वह भी प्रारम्भ में कनाडा से मंगाया जायेगा।

बाजार जाने के लिए लघु कार

पश्चिम जरमनी में एक अनोखी लघु कार का निर्माण हुआ है। सम्भवतः इस कार द्वारा गृहणियों को दैनिक उपयोग की वस्तुओं को खरीदने जाने में सुविधा होगी। यह लघु कार छह फुट लम्बी, तीन फुट चौड़ी तथा पौने चार फुट ऊंची है। इसमें केवल इतनी जगह है कि एक आदमी बैठ सकता है और अपने साथ थोड़ा सामान रख सकता है। इसकी चाल ५० मील प्रति घण्टे है और इसमें सुरक्षा का पूरा-पूरा प्रबन्ध है। इस कार की कीमत लगभग ७५० डालर है।

सम्भवतः यह कार बाजार, खरीद-दारी करने जाने के प्रयोजन से विशेष लोकप्रिय होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयनमण्डल

कुलदीप चड्ढा, एम. एस-सी.

विज्ञान का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आविष्कार है रेडियो। हमारे घरेलू जीवन में तो यह मधुर संगीत, देश-विदेश के समाचार और ज्ञानवर्धक वार्त्ताओं द्वारा रुचि भरता ही है, इसके अतिरिक्त सेना और पुलिस आदि के संचार साधनों, दूर देशों से तार-टेलीफोन की व्यवस्था, जलयान और वायुयान आदि के मार्गदर्शन से सम्बद्ध इसके संख्यातीत उपयोग हैं। पर ये उपयोग संख्यातीत न होते यदि एक विज्ञानी ने हठधर्मी का मार्ग न अपनाया होता!

मारकोनी का साहसिक प्रयोग

इस वैज्ञानिक का नाम था मारकोनी। वैज्ञानिक सूझ-बूझ और आत्मविश्वास का अनुपम समन्वय प्रस्तुत करते हुए मारकोनी ने प्रथम तो यूरोप के दूरस्थ स्थानों को रेडियो तरंगों से मिलाया। इसी क्रम में उसने, यूरोप और इंग्लैण्ड के बीच स्थिति इंग्लिश चैनल के आरपार रेडियो संचार स्थापित किया। इस उपलब्धि के बाद मारकोनी ने सोचा, क्यों न अन्य महासागर के आरपार भी रेडियो संचार फैलाया जाय?

पर ज्यों ही मारकोनी ने अपना यह निश्चय प्रकट किया, सिद्धान्त वैज्ञानिकों ने निराशाजनक परामर्श देने प्रारम्भ कर दिये। यह अकारण न था। रेडियो तरंगों के बारे में यह सुविदित था कि वे सरल रेखा अथवा सीधी दिशा में प्रचलन करती हैं, प्रकाश की किरणों की भांति। चूंकि हमारी पृथ्वी गोलाकार है, अतः सीधी दिशा में चलने वाली तरंगों द्वारा संचार व्यवस्था एक सीमा तक ही सम्भव हो सकती है (चित्र-१)। इस सीमा को प्रसारण के लिए ऊंचे खम्बे गाड़कर बढ़ाया तो जा सकता है, तो भी व्यवहार में यह अन्तर ५०-१०० मील तक ही रहता है।

सफलता के उत्कट अभिलाषी मारकोनी ने इस तर्क और इन गणनाओं की रत्ती भर भी परवा न की। संप्रेषण यन्त्र (ट्रांसमीटर) को इंग्लैण्ड में पोल्डू नामक स्थान पर स्थापित करके वे स्वयं संग्रहण यन्त्र (रिसेप्शन) लेकर अमरीका के न्यूफाउण्ड लैण्ड प्रदेश में जा पहुंचे।

सिद्धान्त के निराशात्मक परामर्श के कारण मारकोनी ने अपने प्रयोग के सभी पक्षों को दृढ़ किया। संप्रेषक की शक्ति को पहले से सौ गुना बढ़ाया और एरियल अथवा वातार के स्थान पर धातु के तार से उड़ने वाली पतंग इस्तेमाल की, जो धरती से ४०० फुट की ऊंचाई पर उड़ रही थी।

१२ दिसम्बर १९०१ के दिन निर्धारित समय पर मारकोनी इंग्लैण्ड से प्रसारित संकेत सुनने की प्रतीक्षा करने लगा। स्थानीय समय के अनुसार ठीक साढ़े बारह बजे जब मारकोनी ने तीन बिन्दुओं वाले संकेत को सुना, तो उनकी खुशी की सीमा न रही!

कैनेली हेवीसाइड परत

जहां यह घटना मारकोनी के लिए इतनी खुशी का कारण थी वहां सिद्धान्त वैज्ञानिकों के लिए यह सिरदर्द बन गयी। हजारों मीलों के अन्तर पर संचार की प्रत्येक कल्पित सम्भावना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

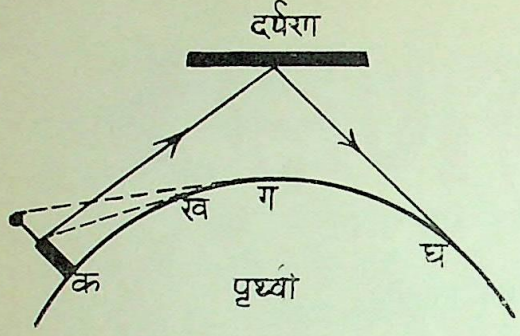

(चित्र-१) पृथ्वी की गोलाई के कारण स्थान क से प्रसारित तरंगें केवल ख तक पहुँच सकेंगी। खम्भे की ऊंचाई बढ़ाने से वे ग तक पहुँच जायेंगी। पर ऊंचाई पर कोई रेडियो दर्पण हो, तो वे घ तक पहुँच सकती हैं

पर उन्होंने विचार किया, पर कोई भी आशाजनक परिणाम न देती। आखिर १९०२ में, अमरीका के कैनेली और इंग्लैण्ड के हेवीसाइड, इन दो वैज्ञानिकों ने परस्पर स्वतन्त्र रूप से सुझाव रखा कि वायुमण्डल में ऊंचाई पर कोई ऐसी व्यवस्था होगी जो रेडियो तरंगों को परावर्तित कर सकती हो। उदाहरण के तौर पर चित्र-१ में यदि एक निश्चित स्थान पर एक रेडियो दर्पण हो तो 'क' और 'घ' के बीच संचार सम्भव हो सकता है, जो अन्यथा असम्भव होगा।

कैनेली और हेवीसाइड ने जब यह विचार प्रकट किया कि रेडियो को परावर्तित (रिफ्लैक्ट) करने वाली व्यवस्था, विद्युत्कणों की परतों के रूप में होगी, तो लोगों को दशाब्दियों पूर्व की घटनाएं याद आयीं। पृथ्वी के चुम्बकीय तूफानों (मैगनेटिक स्टार्म्ज) के मूल कारणों पर विचार करते हुए स्टुअर्ट और शूस्तर ने क्रम से १८७८ और १८८९ में पृथ्वी के गिर्द विद्युत्कणों की परतों की विद्यमानता की कल्पना की थी।

पर शायद कोई पूछ बैठे कि रेडियो तरंगों के परावर्तन के लिए विद्युत्कणों की परतें ही क्यों जरूरी हैं? उत्तर में हम याद दिलायेंगे कि रेडियो तरंगों का ठेठ तकनीकी अथवा वैज्ञानिक नाम है विद्युत चुम्बकीय (electro-magnetic) तरंगें, क्योंकि वे विद्युत् अथवा चुम्बक के किसी भी क्षेत्र में अकस्मात् परिवर्तन द्वारा पैदा होती हैं। घर में रेडियो सुनते समय हमने अनुभव किया है कि जब भी बिजली की रोशनी आदि के लिए कोई स्विच दबाते हैं, तो रेडियो प्रोग्राम के साथ तत्काल 'खर्रर' की ध्वनि सुनायी देती है। यह कुछ नहीं, आपके स्विच दबाने से पैदा हुई रेडियो तरंगों की आवाज है! अतएव इन तरंगों के परावर्तन के लिए विद्युत् कणों के फैलाव का सुझाव नितान्त तर्कपूर्ण था। इसलिए इस सुझाव की प्रस्तावना करने वाले वैज्ञानिकों के नाम पर विद्युत् कणों की कल्पित परत को 'कैनेली हेवीसाइड परत' का नाम दिया गया।

आयनमण्डल : नया नाम

विद्युत्कणों की परत के इस दर्पण का उचित प्रयोग करने के लिए यह स्वाभाविक ही था कि उसकी स्थिति और रंगरूप आदि का पूरा परिचय प्राप्त किया जाता। इस दिशा में सबसे पहले ब्रीट और ट्यूब नामक व्यक्तियों ने प्रयास किये, पर बाद में एडवर्ड एपल्टन ने विशेष तत्परता से खोज कार्य किया। इस काम के परिणामों से उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि वायुमण्डल में विद्युत्कणों की एक नहीं, अनेक परते हैं। एपल्टन ने दो परतों की तो निश्चित रूप से पहचान की और उन्हें रोमन लिपि के अक्षरों इ (E) और एफ (F) से व्यक्त किया। वर्णमाला के बीच के भाग का प्रयोग करने का कारण यह था कि एपल्टन को बाद में दो-चार और परतों के खोजे जाने पर पूरा विश्वास था। इस आविष्कार के बाद कुछ समय तक इ-स्तर को कैनेली हेवीसाइड और एफ-स्तर को एपल्टन स्तर के नाम से पुकारा जाता रहा। पर अब सारी परतों के समूह को आयनमण्डल के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम से लक्षित किया जाता है, क्योंकि इस सारे क्षेत्र में 'आयन' कण विशाल संख्या में विचरते हैं।

'आयन' शब्द यूनानी भाषा की एक धातु पर आधारित है, जिसका अर्थ है 'जाना'। क्योंकि विद्युत्कण विद्युत् क्षेत्र में एक अथवा दूसरी दिशा में प्रयाण करते हैं इसलिए इन्हें आयन भी कहा जाता है। संस्कृत में इस आशय के लिए 'या' धातु का प्रयोग किया जाता है।

यह आयनमण्डल आयनों की चादरों के रूप में हमारी पृथ्वी को सभी ओर से घेर रहा है। प्रत्येक चादर रेडियो तरंगों के दर्पण का काम निभाती है। संसार के दूर संचार की सभी व्यवस्थाओं का आधार यही आयनमण्डल है।

सूक्ष्म रूप

वैसे तो आयनमण्डल में विद्युत्कणों की नियमित या अनियमित अनेक परतें हैं, पर व्यवहार में महत्त्व केवल तीन परतों का है। एप्लटन द्वारा निर्धारित 'इ' तथा 'एफ' के अतिरिक्त तीसरी परत 'डी' से लक्षित की जाती है। हां, दिन के समय 'एफ' परत दो भागों में बंट जाती है जिन्हें 'एफ–१' तथा 'एफ–२' से व्यक्त किया जाता है। इसी प्रकार कभी-कभी 'इ' परत भी इ–१ और इ–२ में बंट जाती है। पर यह बंटबारा इतना प्रकट नहीं। अनेक वर्षों के खोज कार्य के परिणामस्वरूप इन परतों के रूप का जो निरूपण हुआ है, उसे तालिका–१ में प्रकट किया गया है। तालिका की सभी राशियां औसत हैं।

आयनमण्डल के अस्तित्व का मूल

तालिका-१ में परतों की जिन ऊंचाइयों को प्रकट किया गया है, वायुमण्डल की इतनी ऊंचाइयों पर हवा का दबाव बहुत कम है। कम दबाव के क्षेत्र में विचरने वाले अणु और परमाणु सरलता से अपने ऋणाणु (electron) खो देते हैं और विद्युत्कण अथवा आयन बन जाते हैं। उनके इस कार्य में सहायता देती है सूर्य की किरणों की शक्ति। ज्यों-ज्यों सूर्य की किरणें वायुमण्डल में से होती हुई पृथ्वी-तल की ओर बढ़ती हैं, वायुमण्डल का दबाव बढ़ता जाता है—अर्थात् ऐसे कणों की संख्या बढ़ती जाती है, जिन्हें वे आयन बना सकती हैं। पर उधर किरणों की अपनी शक्ति भी क्रम से व्यय होती जाती है। इस समूची परिस्थिति के कारण, आयनों की संख्या, धरती से अन्तर कम होने के साथ, पहले तो बढ़ती जाती है, पर एक चरम सीमा पर पहुंचकर घटनी शुरू हो जाती है।

आयनीकरण क्रिया की बारीकी में जाने से ज्ञात होता है कि सूर्य की विशेष तरंग लम्बान की किरणें विशेष तत्त्वों अथवा यौगिकों को ही आयनित कर पाती हैं। वायुमण्डल में कुछ मीलों की ऊंचाई के बाद तत्त्व और यौगिक भिन्न-भिन्न स्तरों अथवा परतों के रूप में फैले हुए हैं। इन अलग-अलग तत्त्वों

(चित्र-२) पृथ्वी की ओर बढ़ते हुए सौर-किरणों की शक्ति कम होती जाती है और हवा का दवाब बढ़ता जाता है। अतः आयन गहनता पहले बढ़ती हुई अधिक सीमा तक पहुँच जाती है, फिर क्रम से लगातार एक सीमा तक कम होती जाती है

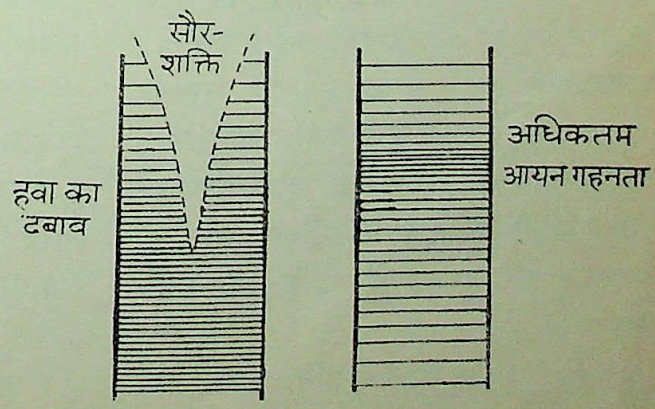

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परत	अधिकतम आयन-गहनता (प्रति घन सें. मी.)	औसत ऊंचाई	
		कि. मी.	मील
डी	१०००	६०	४०
इ	२ लाख	१२५	८०
एफ–१	१० ,,	२००	१२५
एफ–२	२५ ,,	३००	२००

तालिका–१

आदि की परतों को, सूर्य की भिन्न-भिन्न प्रकार की किरणें आयनित करती हैं।

परिणामस्वरूप आयन अनेक परतों के रूप में न्यस्त होते हैं। प्रत्येक परत में आयन की संख्या एक विशेष स्थल पर अधिकतम होती है और इसके दोनों ओर क्रम से कम होती जाती है (चित्र-२)। आयनों की संख्या में यह क्रम, आयन गहनता को परवलय (पैराबोला) का रूप देता है। अतः आयन गहनता में इस क्रमिक परिवर्तन को 'परवलीय वितरण' कहा जाता है।

जिन मुख्य परतों का पूर्व उल्लेख किया गया था, उनमें कौन-कौन-से तत्त्व अथवा यौगिक बहुलता से हैं तथा सूर्य की कौनसी लम्बाई की किरणें उन्हें आयनित करती है, इसका ब्यौरा तालिका–२ में दिया गया है।

विभिन्न परतें : विभिन्न स्वभाव

मुख देखने के लिए हम प्रायः दर्पण का प्रयोग करते हैं। पर चेहरे का कुछ-कुछ आभास साधारण शीशे में से भी मिल जाता है। शीशा वैसे तो पारदर्शक है, पर प्रकाश की थोड़ी-सी मात्रा का परावर्तन भी करता है। उधर दर्पण प्रकाश के बहुलांश का परावर्तन कर देता है, केवल थोड़े-से प्रकाश को शोषित करता है। इस प्रकार प्रत्येक पदार्थ, अपने पर गिरने वाली शक्ति के प्रति तीन प्रकार का व्यवहार कर सकता है, आंशिक या समूचे रूप में—

(१) शक्ति का परावर्तन।

(२) शक्ति का वर्तन।

(३) शक्ति का शोषण।

आयनमण्डल की परतों को हमने रेडियो दर्पण की संज्ञा दी थी। पर वास्तव में उन पर निपात करने वाली तरंगों का वे आंशिक परावर्तन, आंशिक वर्तन और आंशिक शोषण करती है। किस प्रकार का व्यवहार प्रमुख रहता है, यह रेडियो तरंगों की लम्बाई पर निर्भर करता है। पर एक ही लम्बाई की तरंगों के प्रति विभिन्न परतों का व्यवहार भिन्न-भिन्न होता है। तो भी स्थूल रूप से, मध्यम लम्बाई की रेडियो तरंगों का सभी परतें शोषण कर लेती हैं। क्षुद्र तरंगों के प्रति, अलग-अलग परतें दर्पण अथवा धुंधले शीशे-सा रवैया अपनाती है।

इनसे भी छोटी तरंगें, सभी परतों को बेधकर निकल जाती हैं—पूर्ण वर्तन के तुल्य (चित्र-३)। प्रकट ही है कि मध्यम तरंगों और अतिक्षुद्र तरंगों के लिए आयनमण्डल दर्पण का काम नहीं करता। अतएव आयनमण्डल के माध्यम से रेडियो संचार केवल क्षुद्र तरंगों—शार्ट वेव—तक ही सीमित है।

शार्ट वेव की तरंगों का अपना ही फैलाव है, यथा १९ मीटर, ३१ मीटर, ६० मीटर आदि। ज्यों-ज्यों रेडियो तरंगों की लम्बाई कम होती जाती है, उनके परावर्तन के लिए आयन की अधिकतर गहनता आवश्यक होती है। चूंकि विभिन्न परतों में आयन गहनता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असमान है, इसलिए विभिन्न लम्बाई की तरंगों के प्रति उनका व्यवहार भी असमान है।

तरंग लम्बान और आवृत्ति

ऊपर के विवरण में हम तरंगों के स्वभाव को उनकी लम्बाई के रूप में प्रकट करते आये हैं, क्योंकि प्रायः सब अधिकतर रेडियो तरंगों के 'मीटर' से ही अधिक परिचित होंगे। पर तकनीकी साहित्य में प्रायः रेडियो तरंगों की आवृत्ति अथवा कम्पनांक को प्रमुखता दी जाती है। दोनों राशियों में एक सरल-सा गणितीय सम्बन्ध है—

$$\text{आवृत्ति} = \frac{३००}{\text{तरंग लम्बान}} \qquad (१)$$

इस सूत्र में आवृत्ति की इकाई है मेगासाइकल (=$१०^{६}$ चक्र) और तरंगलम्बान की मीटर। अर्थात् यदि रेडियो तरंगें ३० मीटर लम्बी हैं, तो उनकी आवृत्ति १० मेगासाइकल होगी।

चरम आवृत्ति

कुछ समय पूर्व हमने प्रकट किया था कि कम लम्बाई की रेडियो तरंगों के लिए अधिक आयन-गहनता आवश्यक है। यदि किसी स्थल की आयन-गहनता निश्चित हो, तो एक निश्चित न्यूनतम लम्बाई की तरंगें वहां से परावर्तित हो सकेंगी—इससे भी कम लम्बाई की तरंगें उस स्थल को बेध निकलेंगी। आवृत्ति की भाषा में यदि किसी स्थल के एक घन सेण्टीमीटर व्यापन में आयन की संख्या 'स' हो, तो वहां से परावर्तित हो सकने वाली तरंगों की अधिकतम आवृत्ति की गणना निम्नलिखित सूत्र से की जा सकेगी—

$$\text{आवृत्ति} = \sqrt{८१\ \text{स}} \qquad (२)$$

यदि किसी परत में अधिकतम आयन-गहनता 'स' ही, तो सम्बद्ध आवृत्ति 'चरम आवृत्ति' कहलाती है। यदि संख्या 'स' की इकाई $१०^{१२}$ कण हो(=१०,००,००,००,००,०००) तो आवृत्ति पूर्ववत मेगासाइकल में होगी।

यदि रेडियो तरंगें आयनमण्डल पर तिरछी दिशा से निपात करें, तो उनके रास्ते में आने वाली आयन-गहनता बढ़ जायगी और उसी अनुपात से आवृत्ति भी। अब कल्पना करें कि स्थल क से ख तक रेडियो संचार स्थापित करना चाहते हैं (चित्र-४)। इसके लिए रेडियो तरंगें धरती-तल से लगभग य अंश का कोण बनाती प्रस्थान करेंगी। परावर्तन स्थल 'ह' पर आयन-गहनता को ध्यान में रखते हुए तथा कोण य की गणना से एक ऐसी आवृत्ति को आंका जा सकता है, जो इस व्यवस्था के लिए अधिकतम है। इस आवृत्ति को अधिकतम प्रयोग्य आवृत्ति (मैक्सीमम यूजेबल फ्रीक्वेंसी या MUF) कहते हैं। यदि संचार व्यवस्था दो स्थलों ग और घ के बीच हो, तो अधिकतम प्रयोग्य आवृत्ति (=अ प्र आ) कोण 'र' पर निर्भर करेगी। यह कोण जितना कम होगा आवृत्ति उतनी ही अधिक होगी। अतः परिपथ ग-घ की अ प्र आ परिपथ क-ख की अ प्र आ से अधिक होगी।

ऊपर के वृत्तान्त से स्पष्ट हो गया होगा कि किन्हीं दो क्षेत्रों के बीच रेडियो व्यवस्था

तालिका—२

परत	बहुल तत्त्व और यौगिक	सौर किरणों की तरंग लम्बाई (इकाई आंग्स्ट्राम यूनिट)
डी	ओषजन अणु	९१०—१०२०
इ	नाइट्रोजन अणु	७५०—८००
एफ—२	ओषजन परमाणु	८००—९००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

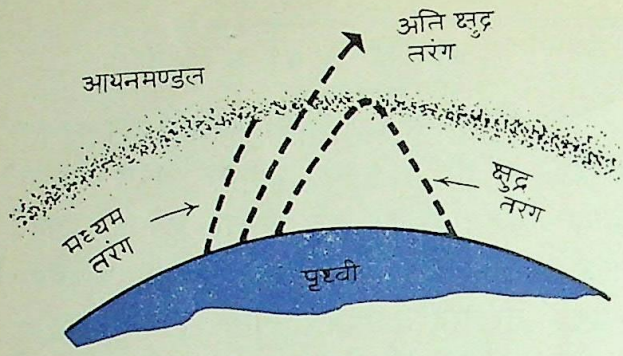

(चित्र-३) क्षुद्र तरंगों से भी छोटी तरंगें सभी परतों को बेधकर निकल जाती हैं

स्थापित करने के लिए वैज्ञानिकों को दो स्थलों के बीच अन्तर, आयनमण्डल की परतों की अधिकतम गहनता और परतों की ऊंचाई आदि सभी तत्त्वों पर ध्यान देना पड़ता है। यह काम इस कारण से और भी कठिन हो जाता है कि परतों की आयन-गहनता और ऊंचाई बदलती रहती है।

सूर्य और आयनमण्डल

पहले बतला चुके हैं कि आयनमण्डल सूर्य की किरणों का परिणाम है। अतः स्वाभाविक ही है कि सूर्य के तेज के साथ आयनमण्डल में भी परिवर्तन हो। सूर्योदय के साथ आयनमण्डल में विद्युत्-कणों की संख्या बढ़ने लगती है। यह क्रम दोपहर के कुछ बाद तक चलता रहता है। संध्या के समय फिर यह संख्या कम होने लगती है। इसी के साथ शार्ट वेव को रेडियो व्यवस्थाओं में तरंगों का मीटर भी बदलता रहता है। सबने अपनी इच्छा के शार्ट वेव रेडियो स्टेशन के मीटरों का दिन के समय के अनुसार परिवर्तन लक्षित किया होगा। किसी क्रिकेट मैच का आंखों देखा हाल सुन रहे हैं कि घोषणा सुनायी देती है : मीटर परिवर्तनके लिए हमारा शार्ट वेव का ट्रांसमीटर १५ मिनट के लिए बन्द रहेगा। इसके बाद आप यह प्रोग्राम ४१ मीटर के स्थान पर ३१ मीटर पर सुनेंगे…।

आयन-गहनता में परिवर्तन के साथ परतों की ऊंचाई भी बदलती है।

केवल दिन के समय के साथ ही नहीं मौसम के साथ भी आयन-गहनता बदलती रहती है। इसके अतिरिक्त प्रतिवर्ष थोड़ा परिवर्तन अलग क्रिया के कारण। इस क्रम का चक्र ११ वर्षों का होता है।

रेडियो तरंग शोषण

आयन-गहनता बढ़ने के साथ किसी परत से परावर्तन पा सकने वाली तरंगों की आवृत्ति तो बढ़ जाती है। पर हम चालू कम आवृत्ति की तरंगों का ही प्रयोग क्यों नहीं कर सकते? इसका कारण है तरंगों का शोषण। किसी भी परत से गुजरने वाली रेडियो तरंगों का कुछ भाग शोषित हो जाता है। तरंगें जितनी ही लम्बी होंगी अथवा उनकी आवृत्ति जितनी ही कम होगी, शोषण उतना ही अधिक होगा। अतः प्रयत्न यही किया जाता है कि रेडियो तरंगों की आवृत्ति अधिकतम हो। और अधिकतम की सीमा है अ प्र आ। अ प्र आ की तरंगें आयनमण्डल की परत के उस भाग से परावर्तित होती हैं जहां आयन-गहतता अधिकतम हो। इससे कम आवृति की तरंगें कम गहनता के स्तर से ही लौट आती हैं (चित्र-५)।

(चित्र-४) यदि रेडियो तरंगें आयनमण्डल पर तिरछी दिशा से निपात करें, तो उनके रास्ते में आने वाली आयन गहनता बढ़ जायेगी और उसी अनुपात से आवृत्ति भी

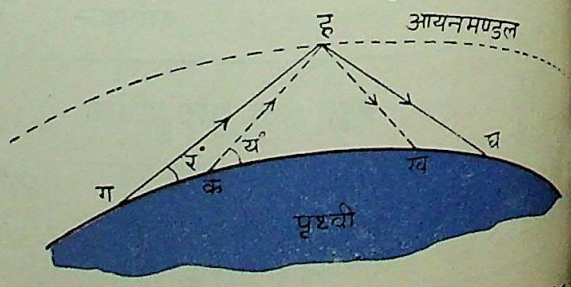

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

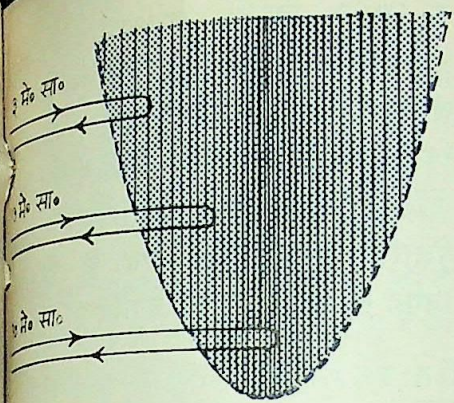

(चित्र-५) अ प्र आ की तरंगें आयनमण्डल की परत के उस भाग से परावर्तित होती हैं जहां आयन-गहनता अधिकतम होती है। इससे कम आकृति की तरंगें कम गहनता के स्तर से ही लौट आती हैं

यही नहीं, आवृत्ति के अनुसार तरंगें एक अथवा अन्य परत पर से लौटा दी जायेंगी। यदि तरंगों की आवृत्ति डी-स्तर के अ प्र आ से अधिक नहीं है, तो वह इसी परत से लौट जायेंगी। यदि इससे अधिक है, तो डी स्तर से तो वह बेध जायेगी, पर इ अथवा एफ स्तर से प्रतिफलित होगी। यह क्रम चित्र-६ में स्पष्ट किया गया है। चूंकि डी, इ, एफ-१, एफ-२ परतों में आयन-गहनता बढ़ती जाती है, अतः ३, ५, १० और १२ मेगासाइकल आवृत्ति की तरंगें उनसे परावर्तित होती हुई दिखायी गयी हैं। पर अन्तिम तरंग की आवृत्ति २० मे.सा. है और वह सभी परतों को बेधकर निकल जाती है।

अन्तिम तरंग

पर जाती कहां है?

१९५७ के पूर्व इसका उत्तर दिया जा सकता था—शून्य में। पर आज के दर्जनों कृत्रिम उपग्रह

पृथ्वी की परिक्रमा कर रहे हैं, तो यह भी सम्भावना है कि उक्त तरंग उनमें से किसी से टकराकर वापस लौट आवे। लेकिन प्रस्तुत लेख का सम्बन्ध केवल उन्हीं तरंगों से है जो आयनमण्डल तक सीमित हैं और उसका घेरा तोड़कर निकल नहीं भागतीं। आयनमण्डल प्रायः ३० मे. सा. से अधिक की तरंगों को परावर्तित नहीं करता।

लेकिन २–३० मेगासाइकिल तक के रेडियो प्रसारण आयनमण्डल द्वारा ही नियन्त्रित होते हैं। ऐसे प्रसारणों की सुव्यवस्था के लिए प्रबन्धकों को आयनमण्डल के स्वभाव और उसमें होने वाले परिवर्तनों का पूरा अध्ययन करना पड़ता है। इसके लिए संसार भर में सैकड़ों प्रयोगशालाएं क्रियाशील हैं। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इन प्रयोगशालाओं द्वारा इकट्ठे किये गये आंकड़ों को सहयोजित किया जाता है और प्रकाशित किया जाता है ताकि प्रयोग हो सके। प्रायः तो पूर्व अनुभव के आधार पर ४-६ महीने पहले ही प्रयोग

(चित्र-६) आवृति के अनुसार तरंगें एक अथवा दूसरी परत से लौटा दी जाती हैं

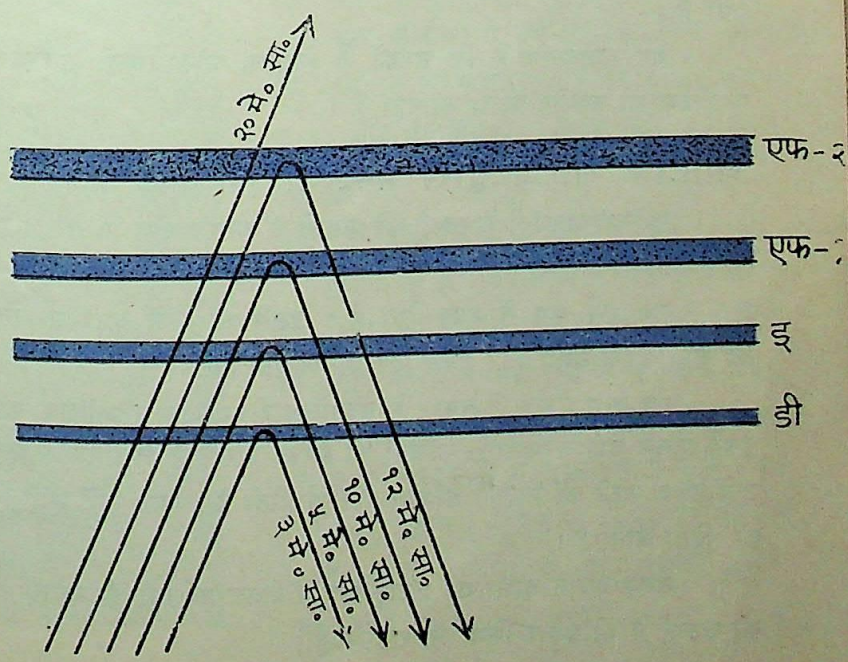

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने वाली आवृत्तियों की तालिका बना ली जाती है।

भारत में आयनमण्डल की खोज के निमित्त आकाशवाणी (आल इण्डिया रेडियो) के अनुसन्धान विभाग, रक्षा प्रयोगशाला, भौतिक प्रयोगशाला (अहमदाबाद), कलकत्ता आयत विश्वविद्यालय आदि अनेक संस्थाओं के अधीन दिल्ली, कलकत्ता, हैदराबाद, अहमदाबाद, गौहाटी, त्रिवेन्द्रम, नागपुर, जम्मू आदि अनेक स्थानों पर प्रयोग किये गये हैं। इनके कार्यों का संयोजन 'रेडियो रिसर्च कमेटी' करती है। भारतीय वैज्ञानिक स्वर्गीय प्रो. एस. के. मित्र इस विषय में अन्तरराष्ट्रीय ख्याति पा चुके हैं।

बन्द गोभी के आकार का छत्रक

हेम्बर्ग के पास स्थापित पादप-आनुवंशिकी की मेक्सप्लेंक इंस्टीट्यूट ने बन्द गोभी के आकार का छत्रक विकसित किया है। यह अन्य क्षत्रकों से केवल आकार के कारण ही भिन्न है, स्वाद में कोई अन्तर नहीं पड़ा है।

इसे दूसरी जाति के कुकुरमुत्ते की भांति ही काटा, उबाला या तला जा सकता है।

निश्चय ही व्यापारिक स्तर पर इस जाति के क्षत्रक की खेती अत्यन्त उपयुक्त होगी। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कुछ वैज्ञानिकों ने प्रो. रेंहोल्ड के नेतृत्व में अपना एक छोटा-सा क्षत्रक फार्म बना लिया है और परीक्षण कर रहे हैं।

प्लास्टिक का बढ़ता हुआ महत्त्व

हाल ही में न्यूरेम्बर्ग में हुई प्लास्टिक की एक प्रदर्शनी में कृत्रिम सामग्री से बने कारों का प्रदर्शन किया गया है। आशा की जाती है कि निश्चय ही ये किसी दिन सभी मौसमों में प्लास्टिक की सड़कों पर दिन में तथा स्वप्रकाशित रात्रि में सुरक्षित रूप से चल सकेंगी। इसके अतिरिक्त प्रदर्शनी में शीशे के तन्तु वाली सभी प्रकार की नौकाएं तथा डेढ़ टन छोटी पनडुब्बी भी प्रदर्शित की गयी है।

यह उल्लेखनीय है कि सड़कों के निर्माण, मोटरवाहन, उड्डयन और अन्तरिक्षयात्रा में भी अब प्लास्टिक का उपयोग बढ़ता जा रहा है।

यान्त्रिक मानव द्वारा फलियों की कटाई

पश्चिम जरमनी में सब्जी की फसलों के व्यापक क्षेत्र में फसल कटाई का एक नया यन्त्र काम में लाया जाने लगा है।

यह पूर्ण रूप से स्वचालित है। इससे कटाई में बड़ी सरलता आ जाती है, विशेष रूप से तब जब अधिक समय और प्रयास की आवश्यकता होती है।

यह यन्त्र एक छोटे ट्रैक्टर से संचालित होता है, और आंशिक रूप से ट्रैक्टर इंजिन से चलता है। इसके फलक बड़ी सरलता से फलियों की कटाई कर लेते हैं। तब फलियों और पत्तियों की सफाई तथा उन्हें पृथक करने की मशीनी प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। फिर उन्हें मशीनों द्वारा डिब्बों में बन्द करके पैक कर दिया जाता है।

समय बचाने वाला यह कटाई-यन्त्र न केवल फलियों की कटाई में बल्कि अन्य सब्जियों और फलों की कटाई में भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

विज्ञान-लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचित्र संसार

मानसिक रोगों का इलाज : कठपुतली का नाच

वेलफेल्ड के पास बेथल अस्पताल में मानसिक रोगियों के इलाज के असामान्य तरीके अपनाये गये हैं। दो पेशेवर कठपुतली वालों ने एक छोटे-से कठपुतली थियेटर की स्थापना की है, जिसे डाक्टर मानसिक रोगियों के इलाज के लिए प्रयुक्त कर रहे हैं।

अनेक विशेषज्ञों की राय है कि इस विधि से मानसिक रोगों के इलाज में सफलता मिलेगी।

बाक्सिग पर प्रतिबन्ध

मेम्फर्ट-मेन में प्रमुख खेलकूद डाक्टरों के एक सम्मेलन में विशेषज्ञों ने यह घोषणा की कि बाक्सिग से मस्तिष्क और शरीर को

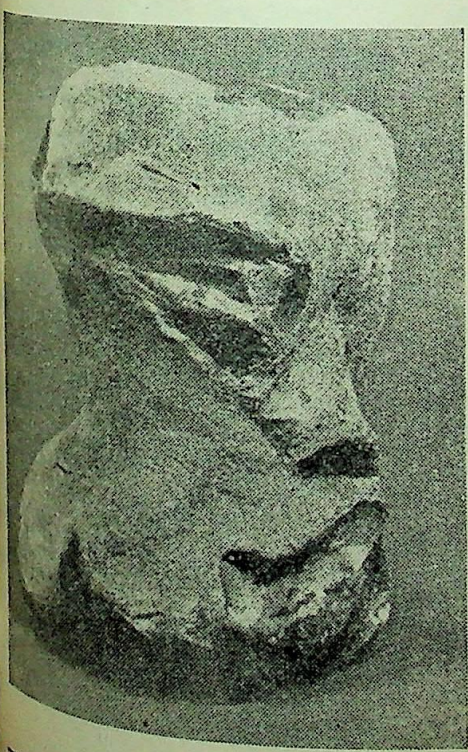

भारी नुकसान पहुंचता है और खेलकूद द्वारा स्वास्थ्य बनाने की दृष्टि से उसका समर्थन नहीं किया जा सकता। अधिकांश वक्ताओं ने इस पर रोक लगाने की मांग की है !

प्रोफेसरों की आलोचना

पश्चिम बर्लिन की फ्री यूनिवर्सिटी के छात्रों ने अभी तक की शैक्षणिक परम्पराओं के विपरीत एक छात्र समाचार पत्र में तीन लेख प्रकाशित करवाये हैं जिनमें प्रोफेसरों के वैज्ञानिक कार्यों की आलोचना की गयी है। यह उल्लेखनीय है कि अभी तक जरमन प्रोफेसरों की आलोचना करने का रिवाज नहीं था।

छात्रों ने अपने लेखों में शिक्षकों की पढ़ाने की प्रणाली पर प्रहार किया और यहां तक लिखा कि उनके एक प्रोफेसर जो लेक्चर देते हैं वह आयोजित नहीं होता।

रूस में कार नहीं मिलती

सोवियत जोन में लोगों को कार के लिए छह वर्षों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है।

पूर्वी बर्लिन के समाचार पत्र न्यू जेत के अनुसार १९६०-६१ में ६,००,००० कारों के लिए आर्डर बुक थे, पर डिलीवरी अभी तक वहीं हो सकी। गत चार वर्षों में केवल २,२५,००० कारें ही दी जा सकीं।

इस सम्बन्ध में एक रोचक तथ्य यह है कि उत्पादन की वर्तमान दर पर ६,००,००० कारों की डिलीवरी १९७६ से पूर्व सम्भव नहीं होगी।

शिल्प के सात लाख वर्ष पुराने नमूने

हाल ही में जरमनी के हेल्गोलैण्ड के उत्तरी समुद्री द्वीप में एक प्रदर्शनी आयोजित की गयी। इसमें ५-१० इंच के शिल्प के ८५० नमूने प्रदर्शित किये गये। पुरातत्त्ववेत्ताओं का मत है कि शिल्प के ये नमूने सात लाख वर्ष पुराने हैं ! निश्चय ही इनका निर्माता पेलियोलिथिक युग का मानव या उसका पूर्वज नाण्डरताल मानव रहा होगा। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा प्रकाशित मानक-ग्रंथ

(क) विज्ञान की पुस्तकें

क्र. सं. पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य	प्राप्ति स्थान
१. शुद्ध घन ज्यामिति प्रवेशिका	गणेश सखाराम महाजन	४.१५	प्रकाशन शाखा,
२. समीकरण सिद्धांत	श्रीराम सिन्हा	५.३५	सिविल लाइंस,
३. अर्द्धचालक और उनके उपयोग	ए. एफ. योफी	२.९०	दिल्ली।
४. कार्बोहाइड्रेट और ग्लाइकोसाइड	फूलदेव सहाय वर्मा	४.८५	,,
५. कृषि के हानिकारक कीट	डा. श्रीवास्तव	(प्रेस में)	,,
६. द्रव्यों के यांत्रिकीय गुणधर्म	स्टार्लिंग	(प्रेस में)	,,
७. प्रकाशिकी	डा. डी. के. गुप्त जे. एन. राय	१०.००	हिन्दी प्रकाशन समिति,
८. विद्युत और चुम्बकत्व (भाग १)	डा. डी. के. गुप्त एस. के. तिवारी	४.५०	काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय, काशी।
९. विद्युत और चुम्बकत्व (भाग २)	,,	११.००	,,
१०. द्रव्य के सामान्य गुण	एल. के. सिंह डा. एम. वी. वर्मा जे .एन. राय	८.००	,,
११. गति विज्ञान (भाग १)	ए. एस. रेमजे	७.५०	अनुवाद निदे.,
१२. गति विज्ञान (भाग २)	,,	८.८५	दिल्ली विश्वविद्यालय
१३. समाकलन गणित	शांतिनारायण	६.५५	ई/ए ६/७, माटल टाउन, दिल्ली।
१४. प्रकाश तरंगें और उनके उपयोग	निकलसन	७.५०	प्रकाशन शाखा,
१५. बीजगणित	डब्ल्यू. एल. फ़ेरार	(प्रेस में)	सिविल लाइंस,
१६. शांक्वों की वैश्वेषिक ज्यामिति	आस्कविद	(,,)	दिल्ली।
१७. प्राथमिक सूक्ष्मदर्शीय खनिज विज्ञान	सुधाकर मोतीराम चौधरी	(,,)	,,

(ख) विज्ञान की लोकप्रिय पुस्तकें

१. समस्थानिकों के संसार में	वी. मेजन्त्सेफ	२.९०	,,
२. रहस्यमय विश्व	जेम्स जीन्स	२.८०	,,
३. माताओं और शिशुओं के रोगों की रोकथाम	ओ. मकेयेवा	४.००	,,
४. उल्काएं	वी. फैंडिस्की	२.६०	,,
५. अश्रव्य ध्वनियां	वी. कुद्रयावास्तेव		
६. धरती और मानव	शिवतोषदास	८.२५	,,
७. जीवन की कहानी	रत्नसिंह गिल	४.३५	,,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. अपना हृदय सबल बनाइए			
९. पीड़ाहीन प्रसव	आई. वेलवोस्की	(प्रेस में)	
१०. चिकित्सा और मानव	रिची काल्डर	(प्रेस में)	
११. डा. राबर्ट काच	वेरनर क्यूदना		
१२. जाति वर्गों का विकास	चार्ल्स डार्विन	१२.५०	हिन्दी समिति, लखनऊ।

(ग) मानविकी पुस्तकें

१. भारत की जिला शासन व्यवस्था	हरिगोपाल परांजपेय	८.५०	प्रकाशन शाखा,
२. भारतीय परम्परा	हुमायुन कबिर	२.५०	सिविल लाइंस,
३. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध	महेशप्रसाद टण्डन	८.५०	दिल्ली।
४. अन्तर्राष्ट्रीय विधि	सांवलिया बिहारीलाल वर्मा	१४.००	,,
५. जापान का इतिहास	कैनेथ स्काट् लातुरेत	७.५०	,,
६. पूर्ति और मांग	एच. हेंडरसन	३.६०	,,
७. चीनी पुनर्जागरण	हू शीह	...	,,
८. केन्ज गाइड	ए. एच. हैन्सन	...	,,
९. जनसंख्या	ईआन बावेन	(प्रेस में)	,,
१०. ब्रिटेन का आर्थिक भूगोल	कुलश्रेष्ठ	(प्रेस में)	,,
११. अर्थशास्त्र का स्वरूप और महत्त्व	लियोनेल राबिंस	(प्रेस में)	,,
१२. घाना गणराज्य का संविधान	अनु. डा. डी. पी. सिंह	०·९५	हिन्दी प्रकाशन
१३. जापान का संविधान तथा अपराध कानून	अनु. डा. रामाधार पाठक	३.००	समिति, काशी हिन्दू विश्व-
१४. स्विट्जरलैण्ड का संविधान	अनु. सुश्री आशा जलोटा	२·२५	विद्यालय,
१५. पाकिस्तान गणराज्य का संविधान	अनु. बी. पी. राय	२.५०	वाराणसी।
१६. आस्ट्रेलिया राष्ट्रमण्डल का संविधान	अनु. बी. पी. राय	२.२५	,,
१७. ब्रिटिश नार्थ अमेरिका अधिनियम	श्रीप्रकाश दुबे	१.५०	,,
१८. समाजसेवा का क्षेत्र (खंड १)	ई. फिन्क	९.००	,,
१९. समाजसेवा का क्षेत्र (खंड २)	,,	८.५०	,,
२०. पूर्वी एशिया का आधुनिक इतिहास (खंड १)	डा. पद्माकर चौबे	८.५०	,,
२१. पूर्वी एशिया का आधुनिक इतिहास (खंड २)	,,	५.५०	,,
२२. शुद्ध बुद्धि मीमांसा	काण्ट	९.००	,,
२३. मानव बुद्धि संबंधी विवेचना	ह्यूम	३.५०	,,
२४. शासन पर दो निबंध	लाक	४.५०	,,
२५. मूल्य और पूंजी	हिक्स	९.००	,,

विशेष जानकारी के लिए निम्न पते पर पत्र-व्यवहार करें :

डा. ओमप्रकाश शर्मा,
प्रधान वैज्ञानिक तथा अधिकारी (प्रका.)
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग,
हंगेरियन पवेलियन, एग्जीबीशन ग्राउण्ड्स,
नई दिल्ली

DA 66 141

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केसर की खेती

रतनकुमार टण्डन

सुगन्धित केसर का जन्म-स्थान भारत के उत्तर पश्चिम कश्मीर प्रान्त में है जहां इसकी खेती वहुकाल से होती रही है। मुगल शासनकाल में भी कश्मीर केसर की खेती के लिए विख्यात था। सदियों बाद आज भी कश्मीर की पम्पोर घाटी में इसकी खेती की जाती है। लोगों का विश्वास था कि भारत में केसर कश्मीर के अलावा और दूसरी जगह सफलता से नहीं उगाया जा सकता, लेकिन १९५६ से चौबटिया के राजकीय पर्वतीय फल अनुसन्धानशाला उद्यान में इसको उगाने की कोशिश की जा रही है, जहां सफल परिणाम प्राप्त हुए हैं। अब उत्तर प्रदेश के कुमाऊं और गढ़वाल क्षेत्र में इसकी खेती करने का नया प्रोत्साहन मिला है।

केसर जो बाजार में बिकता है, इसके फूलों के पुष्पकेसर का लाल अग्रभाग (stigma) है। केसर की क्यारियों से प्रातः-काल ही इसके फूल चुन लिये जाते हैं जिनके पुष्पकेसर के लाल अग्रभाग को तोड़कर धूप में सुखा लेते हैं। इनके सफेद निचले भाग (white-styler portion) को तोड़ फेंकना चाहिये, नहीं तो वह केसर निम्नकोटि का गिना जाता है। इनके परागकेसर रखने वाले फूल के पीले भाग (anthers) को भी अलग निकाल देना चाहिये नहीं तो उस केसर की भी किस्म घटिया हो जाती है।

केसर की लाल-गुलाबी जाति सबसे ऊंची होती है। कश्मीर में केसर की यह जाति 'शाही' कहलाती है। दूसरी जाति का नाम 'मोगरा' है जिसमें फूलों के पुष्पकेसर का सफेद भाग भी शामिल रहता है। इससे निचली 'लच्छा' कहलाती है जिसका दाम कम लगता है।

बहुमूल्य केसर के कन्द

एक ग्राम केसर १२५ फूलों के पुष्पकेसर के लाल अग्रभाग से निकलता है। १,२५,००० फूलों से एक किलोग्राम केसर निकलेगा। केसर की खेती इसके कन्दों (corms) द्वारा होती है। इसके कन्दों की उत्पादन शक्ति हर साल बढ़ती जाती है फिर चार-पांच साल बाद इसका उत्पादन कम होने लगता है। एक एकड़ खेत में १·५०–१·७५ किलोग्राम केसर पैदा होती है, जिसकी कीमत ६,०००–७,००० रुपये (४ रुपये प्रति ग्राम) मिलती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोने के पांच साल बाद ६–८ लाख कन्द, पहले साल बोये गये कन्दों के अतिरिक्त, तोड़े जा सकते हैं जिनसे ३०,०००-३५,००० रुपये की अतिरिक्त आमदनी होती है, जबकि एक-एक कन्द सिर्फ दो पैसे का बेचा जाय। चूंकि इसकी खेती कन्दों द्वारा ही होती है, इसलिए कन्द बेचे जाते हैं।

सुगन्ध में बेजोड़

प्रति एकड़ इसकी खेती पर १,५०० रुपये का व्यय निकालकर, दूसरे वर्ष से सिर्फ केसर के उत्पादन से प्रति एकड़ औसत आमदनी ५,००० रुपये प्रति वर्ष होती है।

दवा और खाद्य पदार्थों में इसका उपयोग होता है और मदिरा में महक लाने के लिए भी इसका प्रयोग करते हैं। चीन में, तेल और केशों के रंग बनाने में केसर का उपयोग करते हैं। यह गरमी प्रदान करता है और औषधियों में काम आता है। आधुनिक काल में बढ़िया खाना बनाने के लिए दिन-प्रतिदिन इसका प्रचार होता जा रहा है। अपनी सुगन्ध के लिए इसका कोई और जोड़ नहीं है इसलिए कन्नौज में इसकी बड़ी मांग है। जिस समय केसर की क्यारी फूली रहती है, उसकी छटा बड़ी अनोखी प्रतीत होती है और वहां के सारे वातावरण में इसकी महक गमकती रहती है। एक बार वहां से आप गुजर जायें, तो वहां की याद चिरस्मरणीय रहेगी।

केसर की खेती

इसके लिए ठण्डी और धूप वाली जलवायु अनुकूल है। समुद्रतट से १,५००-२,२५० मीटर की ऊंचाई पर इसकी खेती हो सकती है, लेकिन समुद्र तट से १,८००-२,१०० मीटर की ऊंचाई पर यह खूब फूलता-फूलता है। सरदियों में इसके कन्द शिथिल पड़े रहते हैं और तब इसको नमी की जरूरत नहीं रहती। बरसात आते ही कन्द बढ़ना शुरू

केसर जो बाजार में बिकता है, इसके फूलों के पुष्पकेसर का लाल अग्रभाग होता है

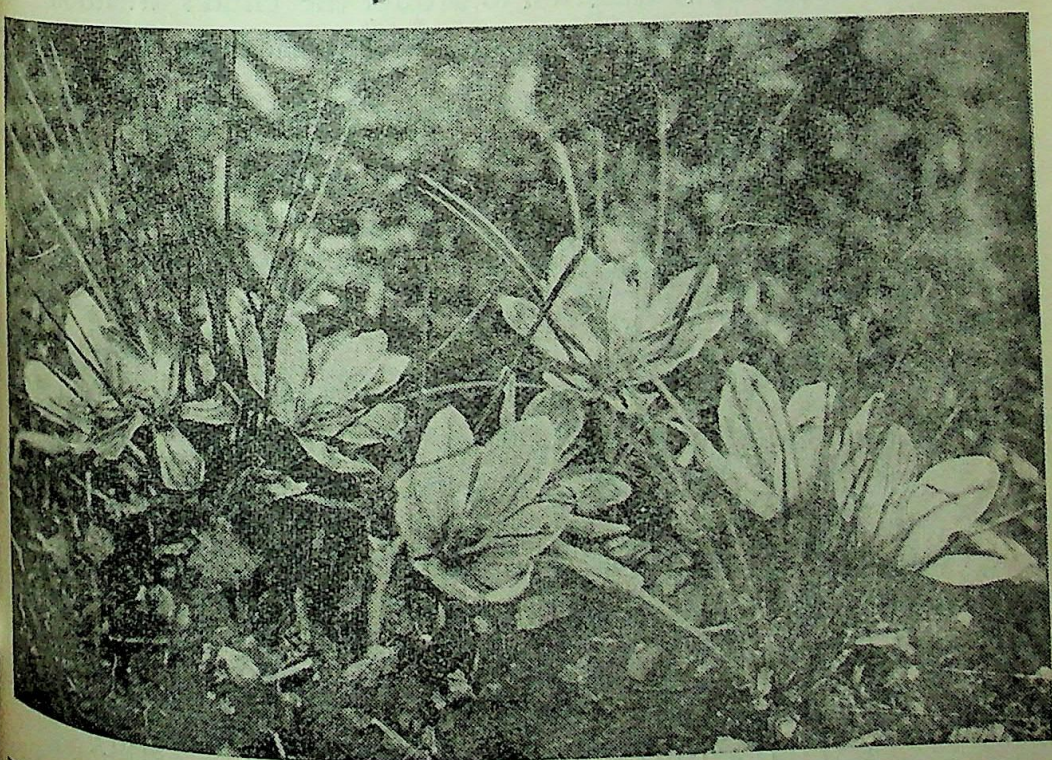

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupil how to write sentences correctly. He learns by doing, and by doing *correctly*.
- Exercises are so arranged that even a slow child is sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The Work Books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I.....Price : Re. 0·80
Book II.....Price : Re. 1·00
Book III.....Price : Re. 1·20

For further enquiries please write to :

SRI RAM MEHRA & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर देते हैं और लम्बी-लम्बी पत्तियां उनमें निकलती हैं।

सितम्बर माह में इसमें फूल लगने लगते हैं। अगर वर्षा का समय नहीं होती, तो फूल कम लगते हैं इसलिए अगर पर्याप्त वर्षा न हो, तो पानी देना आवश्यक हो जाता है।

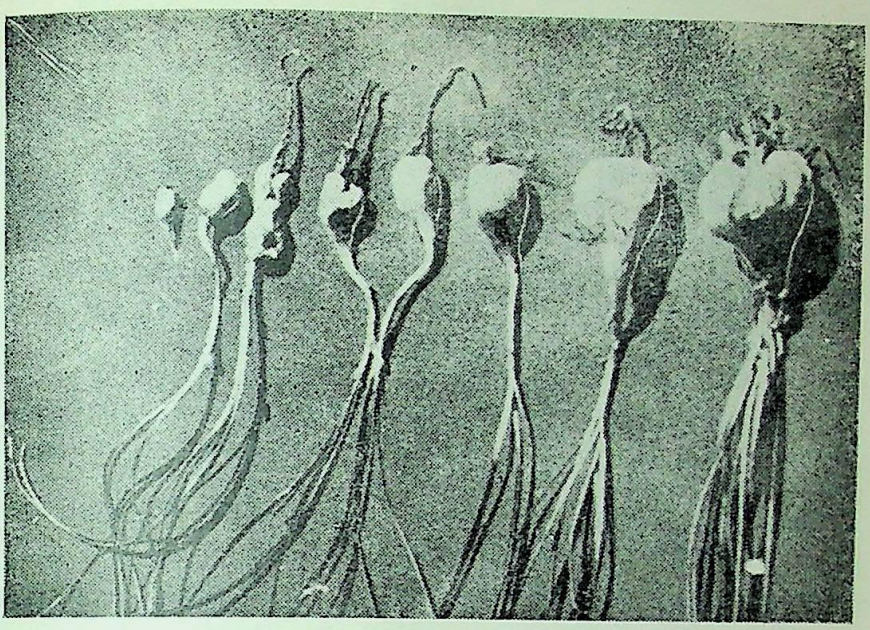

केसर की खेती इनके कन्दों (corms) द्वारा होती है

चिकनी मिट्टी में यह पैदा नहीं हो सकता। इसकी खेती के लिए बलुई दोमट भूमि आवश्यक है। कुमाऊं में ऐसी बहुत-सी भूमि पड़ी है जहां इसकी खेती सुगमता से की जा सकती है और फलों की खेती से इतना फायदा होने की भी गुंजायश नहीं है, क्योंकि वे जल्दी सड़-गल जाते हैं, और दूसरे, दूर भेजने के साधन सब जगह उपलब्ध नहीं होते।

चौकोर क्यारियों में केसर की खेती करनी चाहिये जिनकी लम्बाई-चौड़ाई ६ फुट और ऊंचाई ४ इंच रखनी चाहिये। सिंचाई के लिए बीच-बीच में नालियां बनानी चाहिये। गरमियों में क्यारियों को खूब खोद कर गोड़कर तैयार कर लेना चाहिये। खूब सड़ी हुई खाद ५,६००-९,६०० किलोग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से खेतों में देनी चाहिये। कन्दों को जुलाई माह में ६-६ इंच के फासले पर क्यारियों में ३-४ इंच नीचे गाड़ना चाहिये। कन्द देखने में प्याज-जैसे लगते हैं। एक-एक कन्द में करीब १५ आंखें (eye buds) होती हैं। प्रति एकड़ १,००,००० कन्द बुआई के लिए काफी होंगे।

प्रयोग से सिद्ध हुआ है कि नेत्रजन और पोटाश उर्वरक इसके लिए अत्यन्त आवश्यक हैं और फास्फोरस उर्वरक भी देना उचित है, ताकि अच्छी उपज मिले। खेती के लिए क्यारियां बनाते समय ६५ किलोग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से उर्वरक दो बार यानी अगस्त और नवम्बर माह में देना लाभदायक होता है। ●

उष्ण देशों की कृषि का केन्द्र

चेकोस्लोवाकिया की राजधानी में एक ऐसा केन्द्र है जहां विकासशील देशों के छात्रों को उष्ण और गरम देशों की कृषि के बारे में प्रशिक्षण दिया जाता है। प्राग में इस अध्ययन-केन्द्र की स्थापना का कारण यह है कि यहां यूरोप का दूसरा सबसे बड़ा कृषि पुस्तकालय है और अन्तर्राष्ट्रीय कृषि साहित्य का है। इस केन्द्र के उष्ण गृहों में गरम देशों की विभिन्न वनस्पतियां पैदा की जाती हैं। यहां के पशु-संग्रहालय में गरम देशों के पशु-पक्षी भी हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

तुम्हारे पत्रों से ऐसा लगता है, तुम्हारी रुचि को पर्याप्त सामग्री विज्ञान-लोक में मिल रही है। हर माह तुम्हारी रुचि की एक वैज्ञानिक कहानी अवश्य रहती है। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि तुम वैज्ञानिक कहानी से भी बहुत कुछ सीखते हो। निश्चय ही सीखने का आधार कल्पना है। हमारे चारों ओर जितनी भी वैज्ञानिक उपलब्धियां हैं, आविष्कार में आने से पहले वे अवश्य ही किसी न किसी व्यक्ति की कल्पना में रही होंगी। कोई आविष्कार तब तक नहीं हो सकता, जब तक उसके सम्बन्ध में उसकी रूपरेखा न सोची जाय।

विज्ञान-क्लब के स्तम्भों **तुम्हारी कलम से** तथा **करो और देखो** में तुम विशेष रुचि नहीं दिखला रहे हो। अभिव्यक्ति के लिए लिखना आवश्यक है, और लिखना अभ्यास से होता है।

जून अंक के सम्बन्ध में प्राप्त हुए तुम्हारे कुछ पत्रों में से···

नलिनी सेठ (नागपुर) : जून अंक में **फूल** (कीर्तिमोहन) में एक नया ही दृष्टिकोण मिला। **भविष्य के लिए भोजन** (राजेन्द्र-प्रसाद वार्ष्णेय) सूचनाप्रधान है, और कई नयी बातें ज्ञात होती हैं। **ब्रह्माण्ड** (राजेन्द्र-कुमार) रोचक है और इसमें कुछ विवादस्पद मान्यताओं की समुचित व्याख्या है।

सुधा (चन्दौसी) : विज्ञान-लोक में कठिन से कठिन विषय की भी प्रस्तुति इतनी उपयुक्त होती है कि सामान्य लोग भी आज की वैज्ञानिक उपलब्धियों से इसके माध्यम से परिचय प्राप्त कर सकते हैं। जून अंक बहुत पसन्द आया। **फूल** (कीर्तिमोहन) में पौधे के एक अंग के वैज्ञानिक अध्ययन का नया पहलू मिला। **ब्रह्माण्ड** (राजेन्द्रकुमार) में ब्रह्माण्ड विस्तार के सम्बन्ध में कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों से परिचय मिलता है। वैज्ञानिक कहानी **नींदघर** (सुप्रकाश दत्त) रोचक है। निस्सन्देह विज्ञान-लोक में इधर उच्चकोटि की वैज्ञानिक कहानियां मिल रही हैं।

सेवकराम (दार्जिलिंग) : जून अंक के सभी लेख रोचक तथा ज्ञानवर्द्धक हैं। **जीव-रसायन** (नरेन्द्रसिंह माथुर) विशेष रूप से पसन्द आया। **परमाणु-शक्ति और धातु-विज्ञान** (सत्यपालसिंह राजपूत) सूचनाप्रधान है।

···और हमारा सदा से यह प्रयत्न रहा है कि विज्ञान-लोक को हम अधिक से अधिक तुम्हारी रुचि के अनुकूल बनायें। तुम अपनी पसन्द तथा किन-किन विषयों पर लेख पढ़ना चाहते हो, हमें समय-समय पर यह सूचित करते रहा करो।

तुम्हारी अर्द्धवार्षिक परीक्षाएं निकट आ रही हैं। मैं आशा करती हूं, सफलता प्राप्त करने के लिए निश्चय ही तुम अधिक परिश्रम करोगे।

सस्नेह तुम्हारी
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ७६ के विजेता

प्रथम पुरस्कार

अनूपकुमार (१२५८४) सागर।

द्वितीय पुरस्कार

कृष्णकुमार (१३३१९) मेरठ।

तृतीय पुरस्कार

सोमेश (१८८०२) कलकत्ता।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ७८

नाम .....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

रवीन्द्रपाल
(स. सं. ११५८९)

कमलकुमार
(स. सं. १२८२६)

मोहनलाल
(स. सं. १८१५५)

राजपाल
(स. सं. १८१५८)

१२,३५९ विजयकुमार (१४) सीतापुर, ६० प्रवेशकुमारी (१६) सीतापुर, ६१ आदित्यकुमार (१७) सीतापुर, ६२ कृष्णगोपाल (१७) बरेली, ६३ हुलासमल (१८) डूंगरगढ़, ६४ हस्तीमल (१९) इन्दौर, ६५ अशफाक (१७) सिओही, ६६ मंगतराम (२०) नगलाअक्खू, ६७ फतेहमल (१९) बीकानेर, ६८ प्रभातकुमार (१५) छिवरामऊ, ६९ रामप्रकाश (१७) फैजाबाद, ७० अशोककुमार (१४) रांची, ७१ सरोजरानी (१९) मथुरा, ७२ अब्दुलहमीद (२३) मथुरा, ७३ विनोदसरन (२१) शाहजहांपुर, ७४ नवीकान्त (१७) सहारनपुर, ७५ रवीन्द्रपाल (१६) इलाहाबाद, ७६ राजकुमार (१७) चन्दौसी, ७७ मुन्नालाल (१७) अर्जुनी, ७८ काशीनाथ (१९) आसनसोल, ७९ सुधीरकुमार (१८) बीकानेर, ८० राजवीर (२१) मेरठ, ८१ शैलेन्द्रकुमार (१८) धामपुर, ८२ परमेश्वर (२०) उदयपुर, ८३ सतीशकुमार (१५) बीकानेर, ८४ अताउल्लाह (१६) मिरजापुर, ८५ शुभचन्द्र (१८) टीकमगढ़, ८६ राजेशकुमार (१४) पिथौरागढ़, ८७ विजयस्वरूप (२०) दिल्ली, ८८ विनयकुमार (१७) बिरलानगर, ८९ पवनकुमार (१६) देवास, ९० विजय (१७) दुर्ग, ९१ मोहनलाल (१७) मुण्डारा, ९२ अशोककुमार (१५) गया, ९३ नारायणसिंह (१९) केकरी, ९४ गुरुचरण (१७) पेण्डरा, ९५ राजेन्द्रप्रसाद (१८) सहारनपुर, ९६ शचिन्द्रकुमार (१६) इलाहाबाद, ९७ किशनलाल (२१) कानपुर, ९८ निशीराशेजखर (९) पटना, ९९ अजन्ता (१२) रामपुर, १२,४०० नरेन्द्रकुमार (१६) सहारनपुर, १ सुरेन्द्रकुमार (१५) जगदलपुर, २ सुभाषचन्द्र (१७) संगरिया, ३ शशिकान्त (१८) इन्दौर, ४ योगेशचन्द्र (१९) कलकत्ता, ५ अभयकुमार (१६) अनीसाबाद, ६ कैलाशनारायण (१७) सीहोर, ७ सुरेशकुमार (२०) शारदाग्राम, ८ वीरेन्द्रसिंह (१९) उदयपुर, ९ रवीन्द्रकुमार (१९) इलाहाबाद, १० मुहम्मद मुस्तफा (२०) इलाहाबाद, ११ आसिफ अनवर (१४)जगदलपुर, १२ नन्द्रभानसिंह (१५) गोहद, १३ हरीसिंह (१६) गोहद, १४ अंजना (१९) नौगांव, १५ अभयकुमार (१४) मथुरा, १६ महेशकुमार (१८) इन्दौर, १७ लल्लन (२०) सोनवानी, १८ जीतेन्द्रनाथ (१३) सोनवानी, १९ बांकेलाल (१७) सैयदसरावां, २० सत्यनारायण (२२) हाथरस, २१ नारायणदास (१८) बीकानेर, २२ नवलकिशोर (२७) बीकानेर, २३ विजयलक्ष्मी (१७) बरेली, २४ अर्जुनदास (१८) गंगाशहर, २५ गुविन्दरसिंह (१७) बीकानेर, २६ अशोककुमार (१६) सवौर, २७ कुसुमलता (१९) अजमेर, २८ सोमेशप्रसाद (१६) रानीखेत, २९ चन्द्रशेखर (१७) पिलानी, ३० गजेन्द्र (१७) भीलवाड़ा, ३१ नरेन्द्रकुमार (१६) पटना, ३२ वेंकटेशनारायण (१९) आगरा, ३३ ललितचन्द्र (१८) आदिपुर, ३४ अनुरागकुमार (१५) अजमेर, ३५ ललितकुमार (१६) कोटा, ३६ कुसुमदेवी (१९) कलकत्ता, ३७ कृष्णकुमार (१५) गोरखपुर, ३८ रफीअहमद (१७) नागरवारा, ३९ प्रकाशचन्द्र (१९) आगरा, ४० त्रिलोचनकुमार (१७) अलीगढ़, ४१ चन्द्रमोहनी (१५) कटनी, ४२ जगदीशप्रसाद (१८) नैनपुर, ४३ जगदीश (१८) कानपुर, ४४ जयन्तकुमार (१६) औरैया, ४५ कृष्णकुमार (१७) रायगढ़।

हंसराज
(स. सं. १८१६०)

तेजप्रतापसिंह
(स. सं. १८१६८)

जवाहरलाल
(स. सं. १८१७१)

खीमराजसिंह
(स. सं. १८६९१)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७८

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : १५ अक्तूबर

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५३ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो—

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७८ के उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर १५ अक्तूबर तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायेगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७८ के प्रश्न

१. अत्यधिक कठोर प्राकृतिक पदार्थ का क्या नाम है ?

२. सेण्टीग्रेड थर्मामीटर का आविष्कार किसने किया ?

३. यलांग-यलांग (ylang-ylang) से क्या तात्पर्य है ?

४. गुबरैले (beetles) किस वर्ग से सम्बन्धित हैं ?

५. जन्तु-जगत में आउंस से क्या तात्पर्य है ?

६. वे कौन थे जो ब्रिटेन से आस्ट्रेलिया तक पहली बार तीन दिन से कम समय में उड़े ?

७. मंगल के दो उपग्रहों का क्या नाम है ?

८. एक रैडियन (radian) कितने अंश के बराबर होता है ?

९. कौन-सा रत्न रासायनिक रूप से विशुद्ध कारबन है ?

१०. कृषि-विज्ञान के अन्तर्गत भूमि के अध्ययन के लिए कौन-सा शब्द प्रयुक्त होता है ?

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७६ के प्रश्नों के उत्तर

१. मोटे शीशे के जार में रखने पर।

२. $(NH_4)_2 CO_3$।

३. ऐन्थ्रासाइट (anthracite)।

४. (क) पीला, (ख) लाल, और (ग) सफेद।

५. पारा।

६. बेथिस्काफ।

७. चींटियां।

८. ७६ वर्ष के बाद।

९. एन्तिर्रहिनम (*antirrhinum*)।

१०. नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारी कलम से

नीचे···और नीचे

मनोहरलाल (स. सं. १८८९८)

ग्यारह किलोमीटर नीचे महासागर के तल के अच्छे चित्र अभी तक नहीं प्राप्त किये गये हैं। यह एक रोचक तथ्य है कि उन चित्रों की अपेक्षा कहीं उत्कृष्ट चित्र चन्द्रमा के तल के प्राप्त किये गये हैं।

समुद्र की गहराई में ज्यों-ज्यों उतरते जाते हैं दबाव बढ़ता जाता है। बहुत-से गोते लगाये जाने के बाद अमरीकी नौ सेना ने यह व्यक्त किया है कि ऐसे जहाजों का निर्माण किया जा सकता है जो समुद्र द्वारा डाले जाने वाले अत्यधिक दबाब (लगभग १५,००० पौण्ड प्रति वर्ग इंच) सहन कर सकें।

गहरे समुद्र में चलने वाले अमरीकी जलयानों में छोटी पनडुब्बी एल्विन प्रसिद्ध है। यह जल की सतह से ६,००० मीटर नीचे २०-२५ मील की गति से २४ घण्टे तक अनुसन्धान कार्यों में भाग ले सकती है।

एक विचित्र अमरीकी जलयान का नाम स्लिप है। पानी की सतह से ऊपर इसकी ऊंचाई ३६० फुट है। जब अनुसन्धान कार्य होता रहता है, यह एकदम लम्बवत् खड़ा हो जाता है। उस समय ऐसा लगता है जैसे यह डूबने से पूर्व गोता खा रहा हो।

तैरने वाला अनोखा पीपे का पुल

अमरीकी नौ सेना ने एक अन्य उपकरण भी विकसित किया है। यह तैरने वाला पीपे का पुल है और २०,००० फुट लम्बी पंक्ति को सहारा देता है। इसके छोर पर आंकड़े संग्रह करने वाले सेंसर लगे होते हैं। किनारे के केन्द्र से निर्देश मिलने पर यह रेडियो द्वारा आंकड़े प्रसारित करने लगता है।

आज अनेक देश के वैज्ञानिक आधुनिक उपकरणों की सहायता से समुद्र की गहराई में खोज कार्य कर रहे हैं। उनका यह निश्चित मत है कि वह समय दूर नहीं जब वे समुद्र की अधिकतम गहराई में पहुंच जायेंगे और पृथ्वी के निर्माण का रहस्य ज्ञात कर लेंगे। अनेक वैज्ञानिकों ने यह मत प्रतिपादित किया है कि प्रशान्त महासागर के सर्वाधिक गहरे तल से प्राप्त मोहो और चन्द्रमा के तल की धूल में समानता मिलेगी। फिर यह कह पाना आसान हो जायेगा कि चन्द्रमा का कब निर्माण हुआ।

अमरीकी नौ सेना महासागरीय अनुसन्धान में सक्रिय है। इन अनुसन्धानों के अन्तर्गत एक समुद्री जीव-विज्ञान कार्यक्रम भी शामिल है। वैज्ञानिक महासारीय जल-धाराओं, पानी के घनत्व, क्षारत्व, तापमान, पानी की पट्टियां, तलहटी के नमूनों और महासागरों की अन्य विशेषताओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के लिए उत्सुक हैं।

महासागरों के गर्भ में काम करने वालों की सहायता के लिए कितने ही उपकरण विकसित हुए हैं, और हो रहे हैं। निस्सन्देह वह दिन दूर नहीं जब हम गहरे से गहरे तल के सम्बन्ध में पूरी जानकारी पा लेंगे। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैसे? कभी पेड़ पर नहीं उगते...

मनीप्लांटसे घर की सुन्दरता अवश्य बढ़ेगी, पर धन प्राप्त नहीं होगा। बचत करनेसे धन की वृद्धि हो सकती है और यही बचत आपकी और आपके परिवार की आर्थिक सुरक्षा है। पंजाब नेशनल बैंक में सेविंग्स एकाउन्ट खोलिये, निरन्तर बचत कीजिए और फिर देखिए कैसे धन की वृद्धि होती है।

धन से धन बनता है...
पंजाब नेशनल बैंक में धन दिन पर दिन बढ़ता है।

पंजाब नेशनल बैंक

आत्मनिर्भरता का एकमात्र आधार—उत्पादनवृद्धि

PR/PNB/6517/Hin

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक प्रकाशन

(हाई स्कूल एवं हायर सेकेण्डरी स्कूल के विद्यार्थियों के लिए)

प्रारम्भिक भौतिकी (मूल्य : ३·५०)

लेखक

दयाप्रसाद खण्डेलवाल

एम. एस-सी., पी-एच. डी.

देवीसिंह विष्ठ राजकीय महाविद्यालय, नैनीताल

जन्तु-विज्ञान (मूल्य : ३·००)

वनस्पति-विज्ञान (मूल्य : ३·००)

लेखक

आर. डी. विद्यार्थी

बी. एस-सी. (आनर्स), एम. एस-सी., एल.टी., एफ.एन.ए.

ला मार्टीनियर कालेज, लखनऊ

सामान्य-विज्ञान (मूल्य : ६·२५)

लेखक

रामचरण मेहरोत्रा, एम. एस-सी., पी-एच. डी.

दयाप्रसाद खण्डेलवाल, एम. एस-सी., पी-एच. डी.

आर. डी. विद्यार्थी, एम. एस-सी.

प्रैक्टिकल जन्तु-विज्ञान (मूल्य : २·००)

प्रैक्टिकल वनस्पति-विज्ञान (मूल्य : २·००)

लेखक

आर. डी. विद्यार्थी

प्रकाशक

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीहारिका

कहानी मासिक

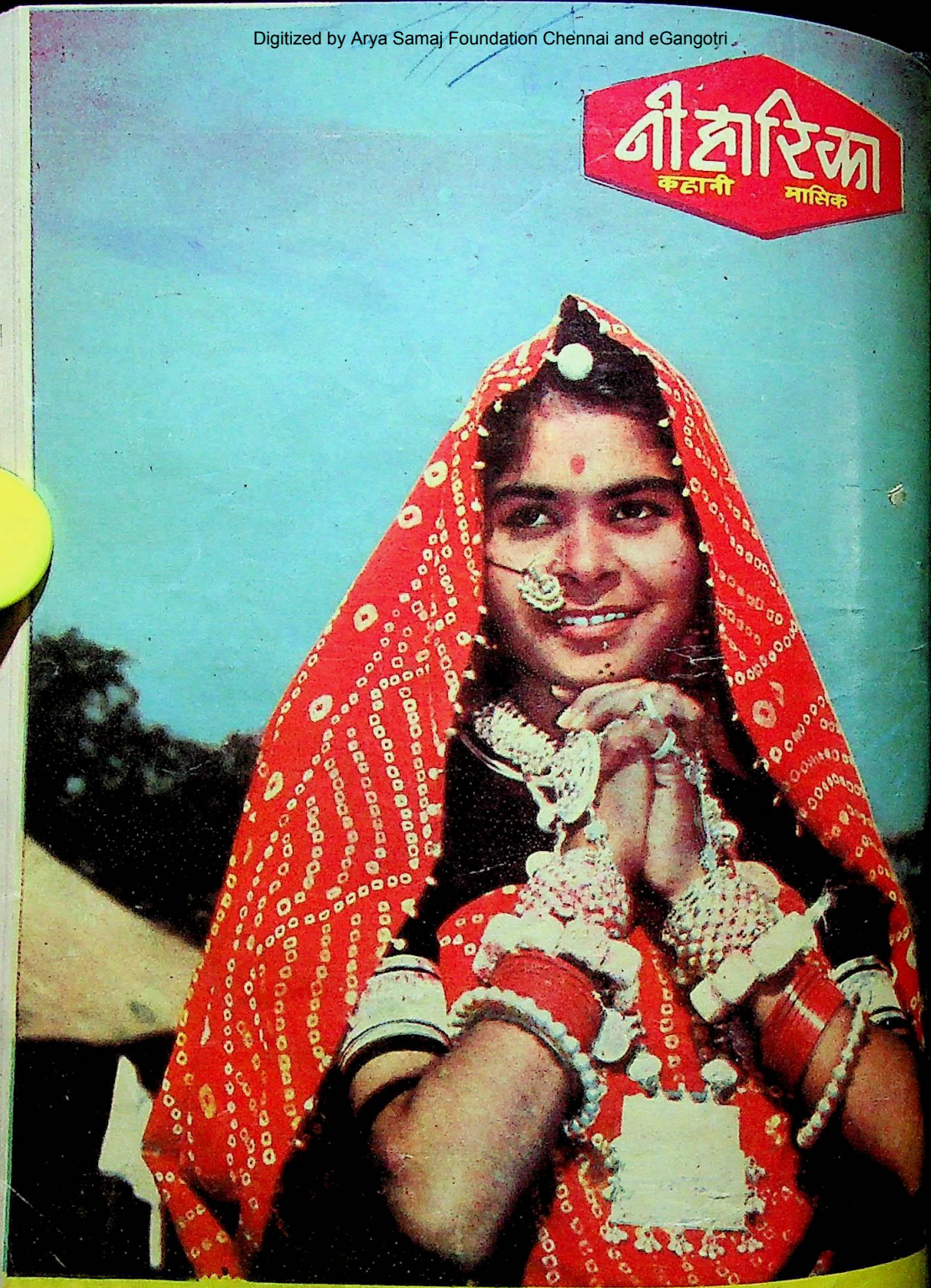

अगस्त अंक

अब सब जगह उपलब्ध है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

पक्षी : विकास और स्वभाव का अध्ययन ३
—राजेन्द्रकुमार

विविध उर्वरक ९
—सत्यकुमार

वस्त्रोद्योग में रसायन एवं भौतिकी १५
—राजकुमार शर्मा

लेसर २१
—एस. प्रेमी

अंजीर और अडूसा २९
—आर. एन. सिंह

ऊर्जा के विविध स्वरूप ३६
—श्यामकुमार तिवारी

डा. टामसन का अनुसन्धान ४३
—जी. नदकर्णी

गतिशील डंड-समूह ५०
—डा. हर्ष प्रियदर्शी

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां ४९

विज्ञान क्लब ५३

इनाम लो ५६

तुम्हारी कलम से ५७

वर्ष ७

निर्देशित क्षेप्यास्त्र की सहायता से
ने हाल ही में परमाणु बम का विस्फोट
है। क्षेप्यास्त्र ने सामान्य रूप से उड़ान
और परमाणु बम को लिये हुए एक नि
दूरी पर लक्ष्य से टकरा गया।

चीन ने यह दावा किया है कि उसकी
रक्षा-सामर्थ्य का तेजी से विकास हो रहा

उ. वियतनाम पर अमरीकी का
के विरोध में बर्ट्रण्ड रसल पीस फाउंडे
लन्दन के निदेशक, वैज्ञानिक यथार्थवा
अनुयायी प्रसिद्ध दार्शनिक लार्ड रसल
अन्तर्राष्ट्रीय ट्रिब्यूनल की स्थापना की
वियतनाम के मसले पर अमरीकी राज
को युद्ध का अपराधी करार देगा। लार्ड
ने घोषित किया है कि यह कदम उन्होंने
वता की रक्षा के लिए उठाया है।

यह निश्चय ही खेदजनक है कि
रसल ने अमरीका को द. पू. एशिया
के विस्तार के लिए दोषी ठहराया है
चीन की तथाकथित वैज्ञानिक क्रा
जिसके अन्तर्गत वह परमाणु शस्त्रों का
कर रहा है, विरोध नहीं किया है।

विकास में लगे हुए देशों में युद्ध
वैज्ञानिक क्रान्ति उन नेताओं की गल
का परिणाम है जो जनता को
अस्तित्व भुला देने के लिए बाध्य कर
क्या यह सुना गया कि चीन में परमा
का शान्ति-कार्यों में उपयोग हो रहा है

भारत भी परमाणु बम बना स
लेकिन वह परमाणु-शक्ति का उपयोग
के कार्यों में करने के लिए कटिबद्ध है
तीय वैज्ञानिकों की आस्था नारों और
बहाव में नहीं है।

अंक ७

एक प्रति : ७५ पैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सम्पादक : शंकर मेहरा

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

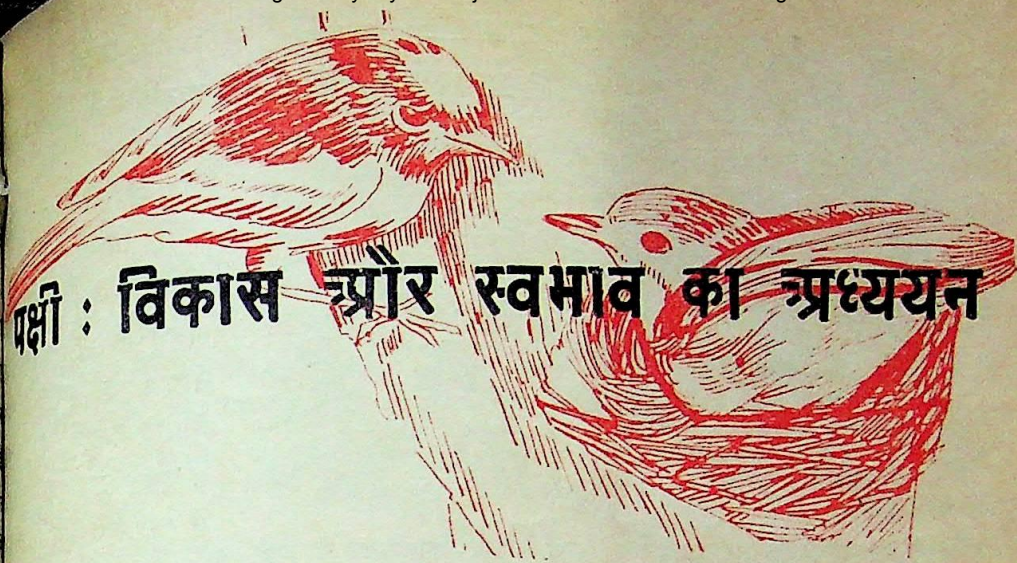

पक्षी : विकास और स्वभाव का अध्ययन

राजेन्द्रकुमार

जल में सर्व प्रथम अस्थियुक्त जीवधारियों के रूप में मछलियों का उद्भव हुआ। अधिकांश मछलियां जल के बाहर पृथ्वी पर रह सकने में असमर्थ थीं। केवल वे ही मछलियां भूमि पर कुछ मिनटों तक रह पाती थीं जिनके फेफड़े थे, फिर भी स्वच्छन्दता-पूर्वक उनका इधर-उधर चल-फिर सकना सम्भव नहीं था। किन्तु उभयचारी जन्तु (amphibians) जो अण्डे देते थे, शैशव में जल में तैरते थे और प्रौढ़ावस्था में धरती पर उछलते भी थे। अनुमान है कि कालान्तर में इनके पैर विकसित हुए होंगे, और ये उन्मुक्त रूप से पृथ्वी पर विचरण करने में समर्थ हुए होंगे। मेंढक इस श्रेणी के जन्तुओं का एक उपयुक्त उदाहरण है। नृ-विज्ञानवेत्ताओं के अध्ययन के अनुसार आरम्भिक उभयचारी मूलतः से बड़े आकार के नहीं थे।

सरीसृप से पक्षी का विकास हुआ

वैज्ञानिकों का मत है कि उभयचारी जन्तुओं के बाद सरीसृप (reptiles) आस्तित्व में आये। इस वर्ग के जन्तु ठण्डे खून वाले होते हैं और अण्डे देते हैं। पृथ्वी के इतिहास में इनका स्वर्ण युग प्रसिद्ध है। उस समय धरती पर विचरण करने वाले जन्तुओं में ये अत्यन्त विशालकाय थे। उभयचारी जन्तुओं के विपरीत अधिकांश सरीसृप पूरी तरह धरती पर ही रहते थे। ये अपने अण्डे भी जमीन पर ही देते थे जो सूर्य की गरमी से सेये जाते थे। किन्तु कालान्तर में इनकी कुछ जातियां वापस जल में चली गयीं, और कुछ जातियां उड़ने में समर्थ हो गयीं।

इन विशालकाय जन्तुओं का युग अनोखा था। कल्पनातीत रूप से ये विशालकाय थे। इस युग में प्रकृति जन्तुओं के आकार के साथ शायद प्रयोग कर रही थी। वह जीवन के विकास का दूसरा युग था। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि उस युग में उत्तरी अमरीका के आकाश में विशालकाय जन्तु उड़ते रहे होंगे। उन जन्तुओं के पंखों का फैलाव लगभग २५ फुट तक रहा होगा। लेकिन पंखों की तुलना में शरीर निस्सन्देह छोटा रहा होगा।

प्राप्त अवशेषों के आधार पर पक्षियों के पूर्वज की कल्पना कर सकते है। उसकी खोपड़ी बहुत पतली रही होगी। चोंच में दांत नहीं रहे होंगे। पिछला हिस्सा लम्बा और पतला होने की सम्भावना है जो निश्चय ही उड़ने में सहायक रहा होगा। वैज्ञानिकों ने इस टेरैण्डन इंजेन्स (Pterandon Ingens) कहा है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

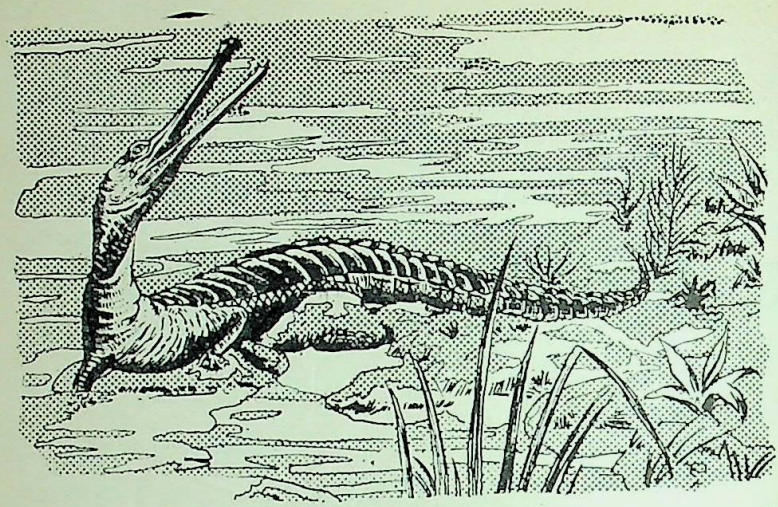

वैज्ञानिकों का मत है कि सरीसृप वर्ग की कुछ जातियां कालान्तर में उड़ने में समर्थ हुईं—(चित्र) छिपकली का पूर्वज टोलियोसारस

जिसका अर्थ होता है दन्तरहित उड़ाका।

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि पृथ्वी के इतिहास में उड़ने वाले जन्तुओं में टेरैण्डन इंजेन्स अत्यन्त विशालकाय थे। इनके सम्बन्ध में सबसे अधिक रोचक तथ्य यह है कि ये अपनी पांखें फड़फड़ाकर नहीं उड़ते थे। इस तरह इन्हें बहुत कम शक्ति व्यय करनी पड़ती थी। यही कारण है कि इनका काम थोड़े से भोजन से ही चल जाता था। ये आसमान में ग्लाइडर की तरह छाये रहते थे। घण्टों ओर दिनों तक ये उड़ते रहते थे। भोजन के रूप में ये मछलियां खाते थे। इनके नीचे के जबड़े में थैली के आकार का एक अंग होता था जिसमें ये मछलियां रख लेते थे, जिन्हें ये अपनी उड़ान के दौरान खाते रहते थे। ये अपनी उड़ान में चौड़ी झीलें भी पार कर जाने में समर्थ थे।

उड़ने वाला अत्यन्त प्राचीन सरीसृप

उस युग में विभिन्न आकार के उड़ने वाले जन्तुओं का विकास हो रहा था। कुछ वैज्ञानिकों की धारणा है कि उड़ने वाला अत्यन्त प्राचीन सरीसृप आकार में एक मुरगी के बराबर रहा होगा। कालान्तर में बड़े आकार के उड़ने वाले जीवों का विकास हुआ होगा। फिर ऐसे जीव भी अस्तित्व में आये जिनकी पांखें एक छोटे वायुयान की भांति रही होंगी।

पृष्ठवंशी जीवों में पक्षी विशेष कोटि के जीव हैं—देखने में अत्यन्त खूबसूरत, अत्यन्त प्रशंसनीय। ये सम्पूर्ण विश्व में पाये जाते हैं। एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव तक, दुनिया में हर कहीं इनका चहचाहना सुनायी पड़ता है। हिमालय की ऊंचाइयों पर, सुनसान टापुओं पर, घने, अंधेरे जंगलों में और उजाड़ बस्तियों में भी पक्षी मिलेंगे। दक्षिणी ध्रुव का केन्द्र (Antarctic center) ही एक ऐसा स्थान है जहां पक्षी नहीं देखे गये हैं। कुछ पक्षी गोताखोर होते हैं जो मछलियों की तलाश में सौ फुट की गहराई तक भी डुबकी लगा लेते हैं, जबकि ऐसे भी पक्षी हैं जो अपने शिकार की टोह में अंधेरे खोहों में भटकते रहते हैं।

संसार भर में कुल कितनी जाति के पक्षी हैं, यह कहना कठिन है, किन्तु विशेषज्ञों ने व्यापक निरीक्षणों के आधार पर जो सूची दी है उसमें विश्व के हर क्षेत्र के पक्षी सम्मिलित हैं। कुछ ही अपरिचित जातियां छूटी होंगी। पक्षियों को पहचानना कठिन है। उनकी बनावट से तो उनकी पहचान करते ही हैं, लेकिन बनावट से अधिक महत्त्वपूर्ण उनकी पोशाक है। विभिन्न जाति के पक्षियों के परों की बनावट तथा उनके रंग विभिन्न प्रकार के होते हैं। पक्षी अपने पंखों के आकर्षक रंगों के कारण ही सुन्दर लगते हैं। इसके अतिरिक्त परों जाड़े और गरमी से इनकी रक्षा भी करते हैं।

शैशव में पक्षियों के पर भद्दे होते हैं

शैशव में पक्षियों के पर अनावश्यक रूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से भद्दे होते हैं, इसी कारण ये अनाकर्षक दीखते हैं। उम्र बढ़ने के साथ-साथ इनका रंग भी निखरता जाता है। कुछ पक्षियों के बच्चे अण्डों में से निकलने के वर्षों बाद अपनी जाति का मौलिक रंग पाते हैं।

पक्षियों के पर दो प्रकार के होते हैं—डैने तथा शरीर पर छाये हुए रोयें।

डैने पक्षियों की उड़ने में सहायता करते हैं। रोयेंदार पर जो इन पर वस्त्र की भांति छाये रहते है, सरदी-गरमी से इनकी रक्षा करते हैं। इनके रोयें अक्सर झड़ते रहते हैं और नये उगते रहते हैं। यह क्रिया वर्ष में प्राय: दो बार होती है और उम्र भर चलती रहती है।

विकासवाद का यह एक प्रमुख सिद्धान्त है कि जीवधारी अपने को परिस्थितियों के अनुकूल ढालकर अपने चारों ओर के वातारण से अपनी रक्षा के लिए अपना रंगरूप वैसा ही बना लेते हैं। भूमि पर रहने वाले अधिकांश रंग मटमैले हैं। रेत में रहने वाली कुररी का रंग रेतीला होता है।

पक्षियों के लिए आवश्यक अंगों में दुम और डैने का अनन्य महत्त्व है। दुम से उसे उड़ने में काफी सहायता मिलती है। इससे ही वह दिशा बदलता है। अपनी रफ्तार को कम भी कर सकता है। मुख्यत: डैने पक्षियों की उड़ने में सहायता करते हैं।

भांति-भांति के पक्षियों की चोंच की बनावट अलग-अलग होती है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि वे खाते क्या हैं, और कैसे खाते हैं? उनके पैर की बनावट भी बहुत कुछ उनके रहने के स्थानों पर निर्भर करती है। पानी में तैरने वाले पक्षियों के पैर की अंगुलियां एक झिल्ली से जुड़ी होती हैं। जो पक्षी पेड़ पर रहते हैं उनका पिछला अंगूठा मजबूत होता है। इस तरह वे डाल से लटके रहकर गिरते नहीं। शिकारी पक्षी फौलादी पंजे वाले होते हैं।

पक्षी प्रजनन-काल आने पर ही अण्डे देते हैं। हरेक पक्षी के अण्डों की एक निश्चित संख्या होती है। जब तक यह संख्या पूरी नहीं हो जाती, मादा अण्डे देती रहती है।

पक्षियों में अन्तर्प्रेरणा

जब अण्डों का सेना शुरू हो जाता है, तो मादा इस काम में तल्लीन हो जाती है। प्राय: यह देखा गया है कि अण्डों के खराब हो जाने पर भी कुछ जाति की मादाएं उन्हें सेती रहती हैं।

जब अण्डे के भीतर से पक्षी बाहर निकलने लगता है तो उसके मां-बाप काफी सतर्क हो जाते हैं।

प्रकृति ने पक्षियों को अन्तर्प्रेरणा शक्ति दे रखी है। इस शक्ति से ये अपनी जीवन-रक्षा करते हैं। उदाहरणस्वरूप यह उल्लेखनीय है कि जब अण्डे से बच्चा बाहर निकलने लगता है, तो खोल तोड़ने के लिए वह भीतर से उस पर चोट करता है। इस चोट की खट्-खट् ध्वनि आसपास सुनायी पड़ती है। निस्सन्देह उस समय बच्चे के मां-बाप सावधानीपूर्वक दुश्मन की आहट लेते रहते हैं और खतरे की आशंका होते ही एक विचित्र प्रकार की ध्वनि

स्टिल्ट स्वभाव से घुमक्कड़ पक्षी है

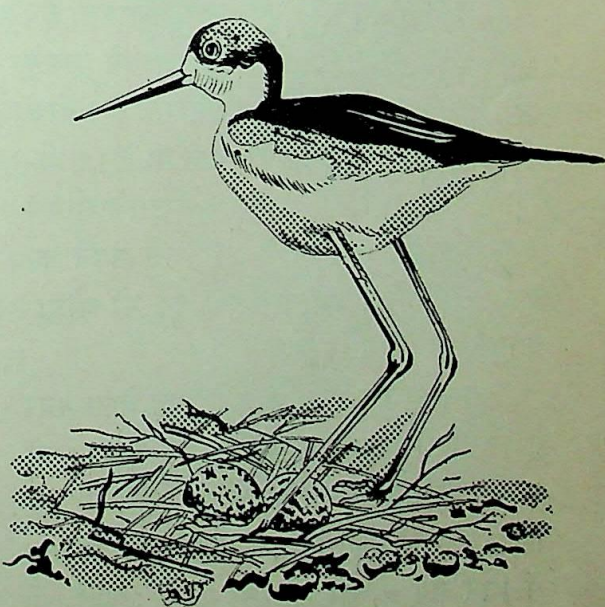

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिकार का पक्षी चहा । चहे कबूतर-जैसे होते हैं

करते हैं। यह ध्वनि सुनते ही बच्चा अन्दर से खट्-खट् करना बन्द कर देता है और चारों ओर निस्तब्धता फैल जाती है। जब खतरा दूर होता है, तो मादा एक भिन्न प्रकार की आवाज करती है और बच्चा पुनः खोल पर चोट करना प्रारम्भ करता है। इस उदाहरण से ऐसा प्रतीत होता है, जैसे बच्चा पहले से ही शिक्षित हो ।

नवजात शिशु अपने सहज ज्ञान की सहायता से अपने शुरू के कुछ दिन गुजारता है। फिर उसके माता-पिता उसके सामने उड़ने का प्रदर्शन करके उसे उड़ना सिखाते हैं। चोंच में भोजन ले आकर उसे खिलाते भी हैं। कभी-कभी कोई खाने की चीज लेकर उसके सामने कम ऊंचाई पर उड़ते हैं और उसे उड़ने का लालच देते हैं। प्रयत्न करके वह भी थोड़ा-थोड़ा उड़ने लगता है।

सन्तान की रक्षा में प्रायः यह देखा गया है कि पक्षी अपनी जान की भी परवा नहीं करते। जंगली बतख के बारे में यह प्रसिद्ध है कि जब वह देखती है, उसके अण्डे मुसीबत में घिर गये हैं, तो घोंसला समेत अण्डों को लेकर किसी सुरक्षित स्थान की टोह में निकल पड़ती है। यह भी प्रायः देखा गया है कि अण्डों को सुरक्षित स्थान तक पहुंचाने के प्रयत्न में खुद उसकी ही मृत्यु हो जाती है।

पक्षी सन्तान-रक्षा करने में तरह-तरह की बहानेबाजियां करके आगन्तुक को चक्कर में डाल देते हैं। कुछ पक्षी बहुधा दुश्मन को देखकर लंगड़ाने लगते हैं। दुश्मन समझता है किसी शिकारी ने उन्हें घायल कर दिया है इस लिए वह उनके पीछे-पीछे उन्हें पकड़ने के लिए दौड़ने लगता है। वे चकमा देते हुए उसे अपनी सन्तान से दूर ले जाते हैं। जब वे यह महसूस करते हैं कि दुश्मन को वे काफी दूर घसीट लाये हैं, तो फिर फुर्र से उड़ जाते हैं। दुश्मन भ्रमित रह जाता है।

छोटे-छोटे पक्षी सन्तान-पालन में भेद-भाव नहीं रखते और अपने बच्चों को खिलाते समय दूसरे के बच्चों को भी खिलाते हैं।

पक्षी खेल खेलते हैं

पक्षी खेल भी खेलते हैं। कभी ये अपना घोंसला बनाते हैं, कभी उसे तोड़-फोड़कर नष्ट कर देते हैं। कभी मादा को हटाकर नर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अण्डों पर बैठता है और उसे फोड़ डालता है। डाल पर लटककर झूला झूलने में भी पक्षियों को बड़ा आनन्द आता है। कई पक्षी पिंजड़े का सामान बाहर फेंकने में आनन्द अनुभव करते हैं।

पक्षियों में जब जोड़ा बांधने का समय आता है, तो नर नानाप्रकार से मादा को रिझाने की कोशिश करता है। गाने वाले पक्षी जोर-जोर से गाना शुरू कर देते हैं। इन दिनों उनके गले में एक खास मिठास आ जाती है। कभी-कभी गाने के साथ-साथ नर तरह-तरह के हावभाव दिखाता है। पंख फैलाता है, दुम हिलाता है और छाती फुलाता है। मोर, कबूतर आदि मादा को रिझाने के लिए नाच दिखाते हैं।

पक्षियों की अनेक जातियों का बहुधा शिकार भी किया जाता है। चहा इनमें उल्लेखनीय है। इसकी लगभग आठ जातियां भारत में पायी जाती हैं। चहे कद में कबूतर-जैसे होते हैं। इनकी आंखें बड़ी तथा सिर में काफी पीछे की ओर होती हैं।

चहों में नर-मादा एक रंग-रूप के होते हैं। स्वभात: ये कीटभक्षी हैं। कीड़े-मकोड़ों के अतिरिक्त ये घोंघे भी खा जाते हैं। अपनी लम्बी चोंच को कीचड़ में डाल-कर ये कीड़े-मकोड़े चुगते हैं।

पहाड़ी मुरगी भी शिकार के पक्षियों की कोटि में आती है। यह रंगबिरंगी तथा भड़कीली पोशाक वाली होती है।

पक्षियों में अनेक घुमक्कड़ स्वभाव के होते हैं। विश्व के घुमक्कड़ पक्षियों में स्टिल्ट का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पूरे उत्तरी अमरीका और उत्तरी ध्रुव तक यह घूमता है।

राबिन वर्ष भर गाता है

आस्ट्रेलियाई स्टिल्ट जलाशयों के पास घासफूस से अपना घोंसला बनाता है। अपने अण्डों की रक्षा में यह कई चालें चलता है। आक्रमणकारी से अपना घोंसला बचाने के लिए इसकी भिन्न-भिन्न जातियां भिन्न-भिन्न उपाय काम में लाती हैं। आस्ट्रेलिया के चितकबरे स्टिल्ट का नर आदमी को देखकर लंगड़ा हो जाता है। मृत होने का अभिनय भी कुशलता से कर लेता है।

कुछ पक्षी वर्ष भर गाते रहते हैं। राबिन भी ऐसा ही पक्षी है। जाड़े की भोर में राबिन की आवाज प्राय: सुनी जाती है। यह आवाज लुभावनी होती है। इसकी चम-कीली आंखें और रंग आकर्षक होता है।

बतख भी अनोखा पक्षी है। यह पक्षी प्राय: आबादी के निकट पाया जाता है। इसे नियमित रूप से खाना देकर पालतू भी बनाया जा सकता है। पालतू बतखों को मीठे पानी की झील में रखा जाता है।

बतखें सर्वभक्षी होती हैं। किन्तु एक

पहाड़ी मुरगी भी शिकार के पक्षियों की कोटि में आती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

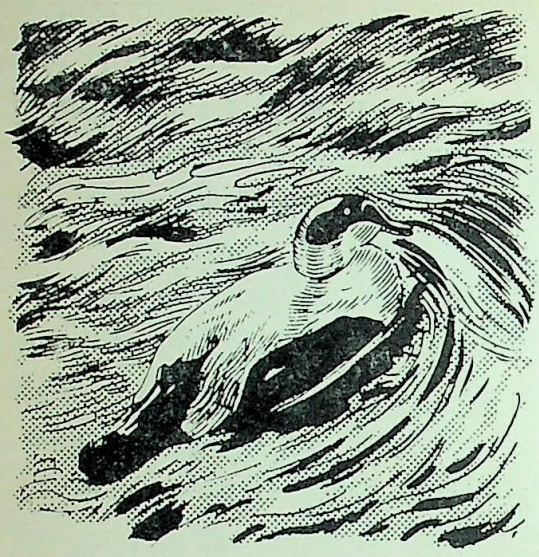

बतख समुद्र के किनारे पानी में दो सौ फुट की गहराई तक गोता लगा सकती है

विशेष जाति की बतखें सिर्फ मछली खाती हैं। इस बतख की विशेषता यह है कि समुद्र के किनारे यह पानी में दो सौ फुट की गहराई तक भी गोता लगा लेती है।

यह एक रोचक तथ्य है कि पक्षी सूर्य-स्नान करते हैं। नीलकण्ठ बहुधा शरीर के परों को फैलाकर तथा डैने और पूंछ को ऊपर उठाकर धूप सेवन करता है। अन्य पक्षी भी अपने घोंसलों के बाहर धूप में बैठते हैं।

नहाने के बाद पक्षी काफी देर तक अपने रोयों की सफाई करते हैं। कभी-कभी चोंच से एक-दूसरे के बाल भी संवार दिया करते हैं। बतखों की पीठ पर पूंछ के पास एक उठा हुआ स्थान होता है। इससे एक प्रकार का स्निग्ध तरल पदार्थ निकलता है। इस तरल पदार्थ से ये अपने परों का श्रृंगार करती हैं।

अनेक जल-पक्षी घण्टों तरह-तरह से जल में खेल खेलते हैं। कभी-कभी इस तरह ये सारा दिन बिता डालते हैं।

पक्षियों में कुछ चोर-डाकू भी होते हैं। कौआ प्रसिद्ध चोर है। गरुड़ पक्षियों का डाकू है। समुद्री गरुड़ तो जल-दस्यु के रूप में विख्यात है।

पक्षियों का संसार अनोखा है। पक्षी हमारे इतने नजदीक हैं, फिर भी हम उनसे दोस्ती नहीं करते। किसी ने सच ही कहा है कि जिस इनसान के कानों ने चिड़ियों के मोहक संगीत में रस लेना नही सीखा, वह अकेला सफर करता है, जबकि उसे अच्छे साथी मिल सकते हैं। ●

हवासिल : अनोखे पक्षियों का उपनिवेश

हवासिल अक्सर झुण्ड बनकर रहते हैं। पक्षी-निरीक्षकों ने इनके गांव के गांव बसे हुए देखे हैं। बर्मा में सितांग नदी के आस-पास के जंगलों में इनका एक उपनिवेश फैला है बसमें करोड़ों की संख्या में ये रहते हैं।

हवासिल कद में गिद्ध से भी बड़े हते हैं। गरदन छोटी होती है। इनके पांव मजबूत तथा जालीदार होते हैं। चोंच मोटी तथा लम्बी होती है।

ये अपनी उड़ान के लिए विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। जब ये उड़ते हैं, तो इनके परों से सीटी की आवाज होती है।

ये पक्षी मत्स्यभक्षी हैं। इनका मछली पकड़ने का तरीका बड़ा रोचक है। ये समुद्र में दर्जनों की संख्या में मछली पकड़ने निकलते हैं, और अपने डैनों से पानी को चोट देते हुए आगे बढ़ते हैं। इस तरह ये मछलियों को गहरे पानी से छिछले पानी की ओर जाने के लिए बाध्य करते हैं।

ये कतार बांधकर उड़ते हैं।

यह ज्ञातव्य है कि हवासिल इस देश का बारहमासी पक्षी नहीं है। शीतकाल में यह समुद्रतटवर्ती प्रदेशों में देखा जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विविध उर्वरक

सत्यकुमार, एम. एस-सी.

नाइट्रोजन, फासफोरस और पोटैशियम देने वाले उर्वरकों के अतिरिक्त भी अनेक उर्वरक हैं जो भूमि को पौधों के लिए आवश्यक तत्त्व प्रदान करते हैं। इनमें मुख्य पदार्थ हैं—नमक, गन्धक, चूना या चूने का पत्थर, कैल्शियम सल्फेट (जिप्सम), फेरस सल्फेट (हरा कसीस), गैस लाइम तथा विरल तत्त्व (लोहा, जस्ता, मोलिब्डिनम, मैंगनीज, बोरान आदि)।

नमक : अप्रत्यक्ष उर्वरक

नमक अप्रत्यक्ष रूप से उर्वरक का कार्य करता है। सोडियम आयनों के विनिमय से जटिल लवणों से पोटैशियम आयन मुक्त होकर पौधों को प्राप्त हो जाते हैं। नमक भूमि की जल धारण करने की क्षमता बढ़ाता हैं तथा अविलेय फासफेटों और सिलीकेटों को विलेय अवस्था में लाता है। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से पौधे को फासफोरस देता है। नमक अनेक कीटाणुओं को नष्ट करता है। यदि भूमि में चूना पर्याप्त हो, तो नमक मिलाने से कपास की उपज बहुत अच्छी होती है। उपज के अतिरिक्त कपास की किस्म भी सुधरती है। नमक हलकी भूमि के लिए उत्तम है तथा मूली, प्याज, टमाटर, चुकन्दर, गोभी, आम के लिए विशेष लाभदायक है। फलीदार फसलों के लिए नमक हानिकारक होता है। यह साधारणतः धान्यो के भूसे को कठोर करता है।

पौधे के लिए आवश्यक विरल तत्त्व गन्धक

गन्धक की गिनती पौधे के लिए आवश्यक विरल तत्त्वों में होती है। भूमि में गन्धक वर्षा-जल द्वारा सल्फेटों के रूप में पहुंचती है। इस प्रकार भूमि को प्रति एकड़ लगभग १२ किलो ग्रा. गन्धक मिलती है। किन्तु भूमि में से प्रति एकड़ २५ किलो ग्रा. गन्धक पौधों में पहुंचती है। अतः बाहर से गन्धक मिलाया जाना आवश्यक है। वैसे कार्बनिक खादों, पोटैशियम सल्फेट तथा सुपर फासफेट आदि उर्वरकों के साथ कुछ गन्धक भी भूमि में पहुंचती है।

भूमि में गन्धक मिलाने से जड़ों का विकास होता है। रिजका में ग्रन्थियां अधिक विकसित होती हैं। गन्धक की उपस्थिति से पौधों में रोगों से लड़ने की शक्ति रहती है। भूमि में इसकी कमी से फसलों को अनेक रोग हो जाते हैं। तम्बाकू की उपज के लिए गन्धक बहुत लाभदायक है। प्याज, लहसन तथा सरसों की फसल के लिए भी गन्धक आवश्यक है। पौधे में सगंध तैल बनाने के लिए भी गन्धक का होना आवश्यक है।

चूना तुरन्त फसलें अच्छी कर देता है

चूना अर्थात कैल्शियम आक्साइड या पानी मिलाने पर कैल्सियम हाइड्रोक्साइड और चूने का पत्थर अर्थात् कैल्शियम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्बोनेट, संगमरमर, चाक, कंकड़, डोलोमाइट इत्यादि पदार्थ जिनमें कैल्शियम कार्बोनेट होता है, सभी चूने के पत्थर की श्रेणी में आते हैं। पर भूमि में चूना मिलाने पर भी वह जल और कार्बन डाइआक्साइड से कैल्शियम कार्बोनेट में ही बदल जाता है। अतः भूमि के दृष्टिकोण से चूना या चूने का पत्थर एक ही वस्तु है।

$CaO \quad (+H_2O) + CO_2 \rightarrow Ca\,CO_3$ $(+H_2O)$.

भूमि में चूना के बारे में कहा जाता है कि तुरन्त की फसलें तो अच्छी हो जाती हैं पर आगे चलकर भूमि की उर्वरता समाप्त हो जाती है।

चूना भूमि की अम्लीयता दूर करता है। अम्लीय अवस्था में जीवाणु पनप नहीं पाते। जीवाणु कार्बनिक पदार्थ का विच्छेदनकर धरण आदि बनाने में सहायक होते हैं। चूने में कैल्शियम होने के कारण विनिमेय आयन अधिक हो जाते हैं, विनिमय द्वारा पौधे को पौटैशियम आयन सहज प्राप्त हो जाते हैं। चूने के साथ अशुद्धि के रूप में मैग्नीशियम और फासफोरस भी पौधों में पहुंच जाता है। चूने की उपस्थिति में नाइट्रीकरण अच्छा होता है। भूमि की ऊपर की तहों से जल का नीचे रिसना बढ़ जाता है। मिट्टी भुरभुरी हो जाती है और इस तरह नाइट्रीकरण अच्छा होता है। चूने वाली भूमि स्वस्थ मानी जाती है। इसके अभाव में पौधों को मुदगर मूल आदि अनेक रोग हो जाते हैं। फलीदार फसलों में सेंजी और रिजका तथा सब्जियों में चुकन्दर, गोभी, बन्दगोभी के लिए चूना बहुत लाभदायक है।

भूमि पर चूने का भौतिक और जैविक दो प्रकार का प्रभाव पड़ता है।

भूमि में चूने का आधिक्य होने से हानियां भी अनेक हैं। पौधों को विरल तत्त्व प्राप्त करने में कठिनाई होती है; भूमि में कार्बनिक पदार्थ का विच्छेदन अधिक तथा शीघ्र होने लगता है, बाष्पशील पदार्थों को पौधा तुरन्त नहीं ले पाता; फासफोरस के जटिल यौगिक बन जाते हैं जिनसे पौधे को फासफोरस प्राप्त नहीं हो पाता; रेतीली भूमि की संरचना बिगड़ जाती हैं; छोटे पौधों के बीज चूने के दाहक सम्पर्क में जल जाते हैं; घास झुलस जाती है; फसल समय के पूर्व पक जाती है; आलू तथा तरबूज पर अधिक बुरा प्रभाव पड़ता है।

कैल्शियम सल्फेट पौधों को कई तत्त्वों की प्राप्ति कराता है

कैल्शियम सल्फेट ($CaSO_4, 2H_2O$) जिप्सम (दूध पथरी) नाम से प्रकृति में पर्याप्त मिलता है। इसका कैल्शियम मिट्टी के जटिल कणों से पोटैशियम, फासफोरस, मैगनीशियम आदि का विनिमयकर पौधों को इन तत्त्वों की प्राप्ति कराता है।

यह भूमि के लिए हानिकारक सोडियम कार्बोनेट को सोडियम सल्फेट में बदल देता है—($CaSO_4 + Na_2CO_3 \rightarrow Na_2SO_4 + CaCO_3$)।

ऊसर भूमि में कार्बोनेट अधिक होता है, अतः उसके लिए जिप्सम अति उत्तम है। जिप्सम की उपस्थिति में 'एमोनीकरण' भी बढ़ जाता है। समुद्र के किनारे की मिट्टी के लिए जिप्सम विशेषतः उपयुक्त रहता है। यह दाल की फसलों, विशेषतः अरहर की दाल के लिए उपयुक्त है। दालों के अतिरिक्त यह चना, तम्बाकू और आलू के लिए लाभदायक है।

फेरस सल्फेट ($FeSO_4 \cdot 7H_2O$) भूमि में पौधों की आवश्यकता के लिए पर्याप्त होता है। वैसे भी पौधे को अधिक लौह की आवश्यकता नहीं होती। पौधे की राख के विश्लेषण से पता चलता है कि इसमें केवल १-२% लौह आक्साइड रूप में होता है। अनेक वैज्ञानिकों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का मत है कि भूमि में हरा कसीस देने से आलू, गोभी, धान्य तथा सेम वर्ग की फसलें अच्छी होती है।

गैस लाइम : कोल गैस का उप-उत्पादन

गैस लाइम कोल गैस के उत्पादन में गौण रूप में प्राप्त होता है। यह हरे-पीले रंग का दुर्गन्धयुक्त पदार्थ है। कोल गैस की अशुद्धियों में मुख्यतः हाइड्रोजन सल्फाइड, कार्बन डाइआक्साइड और कार्बन डाइसल्फाइड होते हैं। क्योंकि ये गैसीय अशुद्धियां हैं और चूने में शोषित हो अनेक यौगिक बनाती हैं, अतः प्रयुक्त चूने को गैस लाइम कहते हैं। यह कैल्शियम सल्फाइड, कैल्शियम कार्बोनेट, कैल्शियम बाई कार्बोनेट, कैल्शियम सल्फाइड, सल्फो कैल्शियम सायनाइड, बुझा हुआ चूना, अमोनिया, कुछ सायनाइड और फैरोसायनाइड आदि का जटिल मिश्रण होता है।

जब गैस लाइम कोल गैस शोधन के उपयुक्त नहीं रहता, अर्थात् काम आ चुकता है, तब इसे खाद के लिए काम में लेते हैं। यह विषैला पदार्थ है इसलिए एकदम खेत में नहीं डाल दिया जाना चाहिये। पहले इसे खुले में रखकर आक्सीकृत होने देना चाहिये। इससे अनेक गैसीय हानिकारक पदार्थ निकल जाते हैं। कैल्शियम लवणों के कारण यह भूमि और फसल दोनों के लिए लाभदायक है पर इसका उपयोग विशेषज्ञों की देख-रेख में ही करना चाहिये।

पौधों को विरल तत्त्वों की अधिक आवश्यकता नहीं होती। इनमें मुख्यतः मोलोब्डिनम, जस्ता, बोरान, लोहा और मैंगनीज हैं। ये किन्हीं-किन्हीं पौधों में बहुत थोड़ी मात्रा में मिलते हैं। वैसे प्रकृति ने पौधों के लिए ही सूक्ष्म मात्रा रखी है, क्योंकि इनकी अधिक मात्रा हानिकारक है। आवश्यकतानुसार इनके लवणों की थोड़ी मात्रा भूमि में

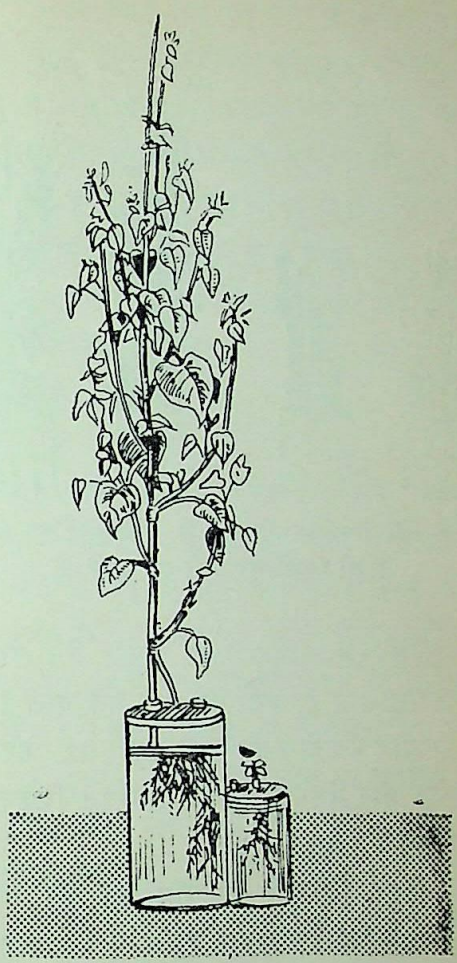

भूमि में मिलकर विरल तत्त्व पौधों के विकास में उत्प्रेरक का कार्य करते हैं

अन्य मुख्य उर्वरकों के साथ मिलाकर दी जाती है।

भूमि में मिलकर विरल तत्त्व पौधों के विकास में उत्प्रेरक या उत्तेजक का कार्य करते हैं। ये पौधों में बीमारी नहीं लगने देते। संकट-काल में पौधे अन्य तत्त्वों के स्थान पर इनसे अपना काम चला सकते हैं। कई जटिल लवणों से पौधों के लिए आवश्यक तत्त्व प्राप्त करते हैं; जीवाणु क्रिया में वृद्धि करते हैं; आक्सीकरण, अवकरण, रसाकर्षण आदि अनेक रासायनिक प्रक्रियाओं पर इनका प्रभाव पड़ता है। ज्ञातव्य है कि रसाकर्षण के कारण ही पत्तियों में सरसता रहती है तथा जड़ें सुदृढ़ होती हैं।

लोहे व मैंगनीज की कमी से पौधों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

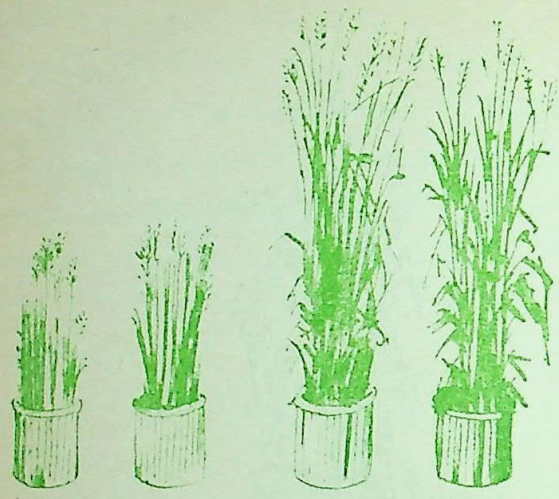

लोहे और मैंगनीज की कमी से पौधे छोटे रह जाते हैं, और पत्तों पर धब्बे पड़ जाते हैं

हरिद्रोग (Chlorosis) हो जाता है। पोधे छोटे रह जाते हैं, पत्तों पर धब्बे पड़ जाते हैं। लोहे और मैंगजीन की कमी पौधों पर फेरस सल्फेट और मैंगनीज सल्फेट विलयन छिड़क-कर दूर की जाती है।

जस्ते की कमी से पौधों की पात ऊति (life tissue) खत्म हो जाती है। तम्बाकू के पौधों की नीचे की पत्तियों में धब्बे पड़ जाते हैं। जिन पौधों की जड़ें अधिक फैली होती हैं वे सहज ही जस्ता ले लेते हैं।

मोलिब्डिनम मुख्यत: नाइट्रेट आयनों का अमोनियम आयनों में अवकरण करने में सहायक होता है। फली वाले पौधे इसकी अनुपस्थिति में नाइट्रोजन स्थिर नहीं कर पाते। इसकी कमी अमोनियम मोलिब्डेट देकर पूरी की जा सकती है।

बोरान का कार्य मुख्यत: जड़ों द्वारा लिये कैल्शियम को पूरे पौधे में फैलाना है। इसकी कमी से अंकुर, जड़, फूल, आदि सब अविकसित रह जाते हैं। इसकी कमी मिट्टी में सुहागा मिलाकर पूरी करते हैं।

प्राय: बाजार में बिकने वाले उर्वरक के बोरों पर ३ संख्याएं लिखी मिलती हैं, जैसे ५–१०–५। ये संख्याएं मिश्रित उर्वरकों के बोरों पर लिखी रहती हैं। ये पौधे के लिए नितान्त आवश्यक तत्त्व नाइट्रोजन, फास-फोरस, पोटैशियम की प्रतिशत मात्राएं हैं, अर्थात् उस उर्वरक विशेष के प्रयोग से पौधे को कितने प्रतिशत नाइट्रोजन, कितने प्रतिशत फासफोरस (P_2O_5 के रूप में) और कितने प्रतिशत पोटैशियम (K_2O के रूप में) प्राप्त हो सकती है।

भूमि में कभी-कभी एक से अधिक तत्त्वों की कमी होती है। अत: एक उर्वरक से काम नहीं चल सकता। अब या तो अनेक उर्वरक प्रयोग किये जायें, अन्यथा ऐसे मिश्रण प्रयोग किये जायें जिनमें अनेक उर्वरक या पोषक तत्त्व आवश्यक मात्रा में मिश्रित हों। ऐसे उर्वरकों की जो भूमि के लिए आवश्यक एक से अधिक तत्त्वों की आवश्यकता पूरी करें, मिश्रित उर्वरक कहते हैं। इन यौगिकों का कोई रासायनिक सूत्र नहीं होता। ये मिश्रण हैं, और मिश्रण में अवयवों की मात्रा घट-बढ़ सकती है। किन्तु इन्हें विशिष्ट मापदण्ड का बनाया जाता है, और संख्या के रूप में ऊपर लिखी मात्रा ही इनका सूत्र कही जा सकती है।

मोटे तौर पर इन्हें दो भागों में बांट सकते हैं—(१) निम्न विश्लेषण उर्वरक, (२) उच्च विश्लेषण उर्वरक।

निम्न विश्लेषण उर्वरकों में तीनों तत्त्वों की प्रतिशत मात्रा का जोड़ १४ से अधिक नहीं होता।

उच्च विश्लेषण उर्वरकों में तीनों तत्त्वों की प्रतिशत मात्रा का जोड़ १४ से अधिक होता है।

मिश्रित उर्वरकों के लाभ

दो-तीन की जगह एक ही मिश्रित उर्वरक से काम चल जाता है, इस प्रकार, खर्च कम होता है और परिश्रम भी कम करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न उर्वरक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमि में विभिन्न परिस्थितियों में दिये जाते हैं। मिश्रित उर्वरक में अनेक तत्त्व एक ही परिस्थिति में भूमि को दिये जा सकते हैं। प्रयोगों से पता चला है कि अकेले उर्वरकों की अपेक्षा मिश्रित उर्वरक अधिक प्रभावशाली है। विरल तत्त्वों को भी मिश्रित उर्वरकों के साथ सुगमता से दिया जा सकता है। भूमि में उचित एवं उपयुक्त ph रखी जा सकती है अर्थात् अम्लीयता एवं क्षारीयता का नियन्त्रण किया जा सकता है। साधारण किसान भी इसे सहज में दे सकता है। संग्रह करने में असुविधा नहीं होती। पौधे का क्रमिक विकास होता है। किसी पोषकांश के लिए उसे प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। समय पर सब मिलता है।

मिश्रित उर्वरकों से कुछ हानियां भी हैं, जैसे यदि भूमि में केवल एक ही पोषक तत्त्व की कमी है, तो अन्य तत्त्व व्यर्थ ही नहीं रहेंगे, अपितु उनकी अधिक मात्रा फसल को हानि पहुंचायेगी। इसके अतिरिक्त किसान को अपनी भूमि का वास्तविक ज्ञान होना आवश्यक है कि किन-किन तत्त्वों की कमी है तथा कौन-सा मिश्रित उर्वरक (निम्न या उच्च) उपयुक्त रहेगा। बोरों पर लिखी संख्या से यह बोध नहीं होता कि उर्वरक बनाते समय कौन-कौन से पदार्थ प्रयुक्त किये गये हैं। उदाहरणत. नाइट्रोजन के लिए यूरिया प्रयुक्त किया गया है या अमोनियम सल्फेट, कौन कह सकता है ?

मिश्रित उर्वरकों का निर्माण

मिश्रित उर्वरकों के निर्माण के लिए चार पदार्थ आवश्यक हैं—(१) उर्वरक (२) उन्दाल्पक (३) ph नियन्त्रक और (४) पूरक।

उर्वरक : ये कई तरह के होते हैं—नाइट्रोजन देने वाले, फासफोरस देने वाले और पोटैशियम देने वाले उर्वरकों में से एक-एक छांट लिये जाते हैं।

उन्दाल्पक : मिश्रित उर्वरक की भौतिक दशा ठीक रहे, अर्थात् वह गीला न हो जाय, ढेले न बंध जायें, वाष्पशील पदार्थ बने—इस सब के लिए कुछ कार्बनिक पदार्थ मिला देते हैं। इनको उन्दाल्पक कहते हैं। चावल का छिलका, गोले (गरी) के ऊपर का छिलका, तम्बाकू का तना इत्यादि उन्दाल्पक की तरह प्रयुक्त होते हैं। उन्दाल्पक की मात्रा लगभग ५० किलो ग्रा. प्रति टन रखते हैं।

ph नियन्त्रक : अमोनियम सल्फेट, यूरिया आदि कुछ ऐसे उर्वरक हैं जिनके प्रयोग से भूमि अम्लीय होती है। यदि ये पदार्थ मिश्रित उर्वरक में प्रयुक्त किये जाते हैं, तो चूना या चूने का पत्थर आदि कुछ क्षारीय पदार्थ भी उनका प्रभाव नष्ट करने को मिला देते हैं। इस प्रकार भूमि पर नियन्त्रण रहता है। परिस्थिति विशेष (अम्लीय या क्षारीय) में पौधों को पोषकांशों की प्राप्ति होना सम्भव नहीं है।

मिश्रित उर्वरकों से कई लाभ हैं। दो-तीन उर्वरकों की जगह एक ही से काम चल जाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरक : किसी पदार्थ में उसके गुणों पर प्रभाव डाले बिना जो वस्तु उसका भार बढ़ा दे, उसे पूरक कहते हैं। मिश्रित उर्वरक में भी पूरक आवश्यक है, अन्यथा पोषक तत्वों की मात्रा बहुत अधिक रहेगी। बालू-रेत, राख, पिसा हुआ कोयला, मिट्टी आदि प्रायः पूरक के रूप में प्रयुक्त होते हैं। पूरक का भी सस्ता और सहज उपलब्ध होना आवश्यक है। पूरक की मात्रा गणना करके निकालते हैं। इतना पूरक मिलाते हैं कि नाइट्रोजन, फास-फोरस व पोटैशियम की वांछित प्रतिशत मात्रा मिल जाये।

घर पर मिश्रित उर्वरक बनाना

उत्साही, पढ़ा-लिखा किसान मिश्रित उर्वरक घर पर भी बना सकता है। वैसे भी यदि ताजा मिश्रित उर्वरक दिया जाय, तो अधिक लाभदायक है। फिर तुरन्त बनाये उर्वरक के ढेले नहीं बंधते और उसे मिट्टी में आसानी से मिलाया जा सकता है। किसान अपने बनाये उर्वरक का अपनी फसल पर प्रभाव भी देख सकता है और इस प्रकार भविष्य में अवयवों में परिवर्तन कर सकता है। यदि आवश्यक पदार्थ सस्ते उपलब्ध हों, तो घर पर बनाया उर्वरक सस्ता भी पड़ सकता है। किन्तु व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि आवश्यक पदार्थ या तो सहज उपलब्ध नहीं होते और यदि उपलब्ध होते हैं, तो सस्ते नहीं पड़ते। कारखाने वाले व्यापारी थोक में अधिक माल खरीदते हैं, अतः उन्हें सस्ता पड़ता है। दूसरे, घर पर अवयवों को बारीक चूर्ण करने तथा भली-भांति मिलाने के लिए उचित मशीनें नहीं होतीं। इसलिए मिश्रित उर्वरक भी अच्छी किस्म का नहीं बन पाता। तीसरे, अनेक पदार्थ दुर्गन्धयुक्त होने या विस्फोटक या विषैले होने के कारण घर पर संगृहीत नहीं किये जा सकते।

संग्रह

मिश्रित उर्वरकों को शुष्क स्थान पर संगृहीत करना चाहिये। कच्चे फर्श या नमी वाले स्थान पर संग्रह नहीं करना चाहिये, अन्यथा ढेले बंध जायेंगे। पक्के फर्श पर भी नीचे तख्ते या तिरपाल बिछा लेना अच्छा रहता है। बोरों के बहुत ऊंचे ढेर भी न लगाये जायें, अन्यथा ऊपर के बोरों के दबाव से नीचे के बोरे दबकर ढेलों में जम जाते हैं।

बिना चालक के चलने वाला ट्रैक्टर

रूस में एक ऐसे ट्रैक्टर का विकास किया गया है जो बिना किसी मनुष्य के नियन्त्रण के स्वयं खेतों की जुताई कर सकता है। इस विधि में विद्युत मोटर के शाफ्ट में एक दर्पण और चकती लगा दी जाती है। खेतों से परावर्तित होकर आने वाली प्रकाश-किरणें ऊर्ध्वाकार रूप से नेत्रताल में पड़ती हैं और इसके द्वारा पिक-अप के एक कक्ष में स्थित प्रकाश सुग्राहक तत्त्व पर प्रक्षेपित की जाती हैं। इस प्रकार घूमते हुए दर्पण को खेत के जुते हुए एव बगैरजुते हुए भाग का पता चल जाता है, क्योंकि दोनों प्रकार के खेतों से प्रकाश भिन्न मात्रा में परवर्तित होता है।

इस पिक-अप में एक प्रकाश-विद्युत् सैल तथा एक बिजली का बल्ब होता है जिनके बीच एक चकती घूमती रहती है। इसका क्रिया द्वारा प्रकाश विद्युत-ऊर्जा में बदल जाता है और ट्रैक्टर के अगले पहियों का तत्काल संवेग मिलता है।

ये संकेत पिक-अप द्वारा इलेक्ट्रानिक नियन्त्रक को भेज दिये जाते है जो ट्रैक्टर की गति से सम्बन्धित आदेश देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्त्रोद्योग में रसायन एवं भौतिकी

राजकुमार शर्मा, एम. एस-सी.

पर्किन के समय से लेकर आज तक रजंकों की कथा अथवा स्वान एवं कार्डीनेट के काल से आज तक की आधुनिक महीन और चमकदार वस्त्रों की कहानी फिर से दोहरानी पड़ेगी तथा उन अनेक आविष्कारों का पुनः वर्णन करना पड़ेगा जिन्होंने मनुष्य को समृद्धशाली बनाने और लाभान्वित करने के साथ-साथ कभी-कभी मानवता को लांछित और पददलित भी किया है। लेकिन ऐसी गाथाएं पहले ही इतनी वृहत् हैं कि अब उनमें और वृद्धि करना अथवा उन्हें समुन्नत करना अधिक सम्भव नहीं है। वस्त्रोद्योग में रसायन-विज्ञान के प्रयोग के सम्बन्ध में उसके दुरुपयोग तथा विध्वंसक प्रयोजनों के लिए इस्तेमाल का भी प्रश्न नहीं उठता, जिससे उसका औचित्य सिद्ध किया जाय अथवा भर्त्सना की जाय।

रसायनज्ञ का काम मन्द गति का एवं श्रम-साध्य है, परन्तु अत्यन्त रोचक और प्रायः उत्तेजक होता है। वह उस शिल्पी की भांति है जो कुछ सोचता है और फिर एक स्थूल योजना बनाता है, विस्तार करता है, उसमें काट-छांट करता है और कभी-कभी उसे रद्दी की टोकरी में डालकर फिर नये सिरे से सोचने का कार्य करता है, और तब तक सन्तुष्ट नहीं होता जब तक उसका भवन बनकर खड़ा नहीं हो जाता और लोग देखकर प्रशंसा नहीं करते।

सूती वस्त्र में रेशमी चमक

कभी-कभी साधारण दैनिक कार्य करने वाले रसायनज्ञ समझते हैं कि रसायन का यश प्रचार करने वाले अत्युक्ति करते हैं और शायद औरों से अधिक एक वस्त्र-रसायनज्ञ मर्सरीयन विद्या के आविष्कारक से ईर्ष्या करते समय यह भूल जाता है कि वह आविष्कार संयोग और सौभाग्य की बात थी और स्वयं रसायन को उसका विशेष श्रेय नहीं है। उस इक्कीस वर्षीय नवयुवक आविष्कारक ने सूती कपड़े को रेशमी बनाने का प्रयत्न भी नहीं किया था, और न उसको यह आशा थी कि दहक्षार उपचार से क्रेप-जैसा मन्द रूप उत्पन्न होता है। यह उसका सौभाग्य ही था कि उसने यह देख लिया, सूती वस्त्र को तानकर दहक्षार से उपचारित करने के बाद धोने से उसमें रेशमी चमक आ जाती है। इस प्रकार के सूक्ष्म अवलोकन और तथाकथित छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देने से अनेक ऐसी वस्त्र-विधाओं का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्तित्व प्रकाश में आया जिनमें कालान्तर में बहुमूल्य वाणिज्यिक फल प्राप्त हुए।

इन बातों से ऐसा लग सकता है कि मर्सरीयन के जन्मदाता की खिल्ली उड़ायी जा रही है। किन्तु ऐसी बात कदापि नहीं है। यह प्राय: निश्चित है कि युवक होरेसलो ने मर्सर के इस अनुभव की पृष्ठभूमि में कि दह-सोडा के उपचार से सूती कपड़ा सिकुड़ जाता है। तथा रंगाई के लिए उसकी उपयोगिता बढ़ जाती है, यह सोचा कि इस उपचार को दूसरे ढंग से करने से कपड़े पर दूसरे नये प्रभाव भी उत्पन्न किये जा सकते हैं। और कदाचित् वह भी उसी प्रकार का आचरण करता जैसा आधुनिक रसायनज्ञ करते हैं। शायद दह-सोडा के स्थान पर दहपोटाश इस्तेमाल करता, जलीय क्षार के बजाय उसका एल्कोहलीय विलयन प्रयोग करता, ऊंचे-नीचे ताप और सान्द्रण का प्रभाव जांचता और 'तीर नहीं तुक्का' वाली पुरानी अनुभवजन्य रीति का अनुसरण करता तथा ऊंचे संपीड का प्रयोग करता। फिर यदि उससे सन्तोष नहीं होता, तो···संपीडन की जगह प्रसारण का प्रयोग किया और उसे आशातीत फल भी प्राप्त हुआ।

एक प्रेरणा का सूत्रपात

यह तो हुई अटकलबाजी वाली बात, लेकिन 'मर्सराइजेशन' शीर्षक अपनी पुस्तक में जी. टी. मर्शि ने जो सुनिश्चित तथ्य वर्णन किया है वह भी उल्लेखनीय है। लो ने स्वंय कहा है कि मेरा कार्य मर्सर के कार्यों और अनुभवों पर आधारित है। उसके इस सुझाव से कि प्रबल दहसोडा कपड़ों के रंगाई-गुणों में परिवर्तन उत्पन्न करता है, मुझे उसके अन्य प्रभावों की जांच करने की प्रेरणा प्राप्त हुई।

बार नामक उनके सहयोगी ने भी यह उल्लेख किया है कि दहसोडा के उपचार से कपड़ों की सम्भाव्य सिकुड़न रोकने के ध्येय से लो ने उसके दोनों सिरों को कसकर तान दिया और तब उस पर दहसोडा लगाया। इससे सिकुड़नें तो बच गयीं और साथ ही उसकी चमक इतनी बढ़ गयी कि लो ने मजाक में कहा, 'मैंने सूती कपड़े को रेशमी बना दिया।'

यदि हम वस्त्रोद्योग की सफलता में समस्त विज्ञान के योगदान की समीक्षा करें, तो हमें स्वीकार करना होगा कि सूत अथवा वस्त्र को छोड़कर स्वयं प्राकृतिक तन्तुओं की उन्नति में रसायन का कार्य चाहे जितना भी महत्त्वपूर्ण हो, लेकिन है अंश-मात्र ही। सचमुच हमारी सम्भावनाएं बड़ी सीमित हैं; फलत: हमें विशेषरूप से तन्तुओं की श्लेषिका-रचना को अपरिवर्तित अथवा तनिक संशोधित रूप में ही छोड़ देने के लिए बाध्य होना पड़ता है, क्योंकि उनकी इसी रचना पर उनकी तनाव-सामर्थ्य तथा मुड़ने के और लचीलेपन के गुण निर्भर होते हैं। परन्तु कृत्रिम तन्तुओं में ऐसी कोई अवरोधी सीमा नहीं होती। उनकी श्लेषिका रचना को संशोधित करके उनका तनाव गुण तथा लचीलेपन का नियन्त्रण किया जा सकता है। अत: रसायनज्ञ को कीलत भौतिकी तथा एक्स-किरणों का प्रयोग अथवा इन विषयों पर कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं के सहयोग से कुछ विशिष्ट फल प्राप्त करने के लिए सार्थक प्रयत्न करना चाहिये।

हम ऐसे अखण्ड कृत्रिम तन्तुओं की बात सोचते हैं जो रेशम, कपास अथवा लिनेन से कहीं उत्तम हों, परन्तु इनके एक्स-किरण चित्रों से यह जान पड़ता है कि इस दशा की सफलता के लिए इनकी रासायनिक रचना की अपेक्षा भौतिक रचना की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। रेशम सदृश तन्तु की श्लेषिका को आन्तरिक भाग में समानान्तर, परन्तु उसके चारों ओर प्रत्यानुस्थापित (dis-oriented) होना चाहिये। कृत्रिम कपास तन्तुओं में प्राकृतिक कपास के सर्वोत्तम गुण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

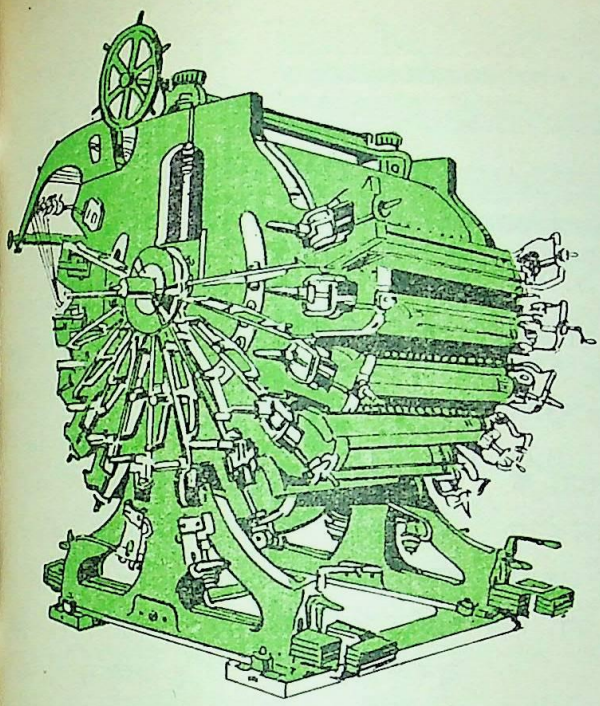

कपड़ों पर डिजाइन छापने वाली एक आधुनिक मशीन। क्या यह सिर्फ भौतिकी की प्रेरणा है?

जाने के लिए उसे रबर की ऐसी नली की तरह होना चाहिये जो हवा निकाल देने से चपटी हो गयी हो लेकिन उस पर कुन्तकल तन्तु का अथवा श्लेषिका का आवरण होना चाहिये। ऐसी रचना तैयार करने में अकेले रसायन-विज्ञान सफल नहीं हो सकता बल्कि रसायन एवं भौतिकी दोनों मिलकर इस उद्देश्य की पूर्ति कर सकते हैं।

आसंजनशक्ति-सम्बन्धी सम्भावनाएं

कारखानों के रसायनज्ञों के कार्य मुख्यतः तन्तुओं की प्रकृति का ज्ञान प्राप्त करना, उनके गुणों में वृद्धि करना तथा उनकी प्राप्ति बढ़ाना, उत्पादन खर्च घटाना, क्षेप्यों का उपयोग करना तथा त्रुटियों के कारण खोज निकालना है। वे विज्ञान एवं उसकी नयी-नयी रीतियों का अपने कार्य विशेष में प्रयोग करना चाहते हैं और समस्त उद्योग को लाभान्वित करना चाहते हैं।

कारखानों में विज्ञान और अनुसन्धान का बोध लोग केवल उन कार्यों से करते हैं जो रसायनज्ञ करता रहता है और जो किसी प्रकार लाभदायक भी होते हैं। लेकिन यह कदाचित् ही कोई अनुभव करता है कि वह छोकरा भी उसका भागीदार है जो सूत्रांक एवं सूत की लम्बाई की परीक्षा करता है अथवा विरजंक विलयनों की प्रबलता की जांच करता है। विज्ञान तथा अनुसन्धान के प्रतिरोध या खुले विरोध पर विजय प्राप्त करने का एकमात्र रास्ता यह है कि कर्मियों और कर्मशाला प्रबन्धक (works manager) को यह समझाया जाय कि विज्ञान और अनुसन्धान केवल परीक्षण, संपरीक्षण तथा सम्बद्ध कार्यकर्ताओं की पारस्परिक कठिनाइयों के समाधानार्थ साधनों की खोज की ही गौरवान्वित संज्ञा है।

यद्यपि वस्त्र अनुसन्धान एवं आविष्कारों में साधारणतया भौतिकी की ही प्रेरणा मानी जाती है, लेकिन उसमें रसायनज्ञ का भी बड़ा महत्त्वपूर्ण कार्य भाग है। यदि एक ऐसा सीमेण्ट मिल जाय जो तन्तुओं को एक-दूसरे से जोड़ सके और उतना ही अविलेय हो जितना तन्तु स्वयं होता है, तो कदाचित् अधिकांश प्रयोजनों के लिए कताई और बुनाई की आवश्यकता ही न रह जाय। ऐसे सीमेण्ट की अणु मोटाई के स्तरों की ही आवश्यकता होगी। रंगाई और छपाई में भी ऐसे स्तरों के प्रयोग की असीम सम्भावनाएं हैं। जनरल इलेक्ट्रिक कम्पनी ने बिजली के तारों के पृथक्करण (insulation) के लिए उन पर जैसे एक पतले स्तर का प्रयोग किया है, उसी प्रकार एक दिन विविध तन्तुओं के लिए भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

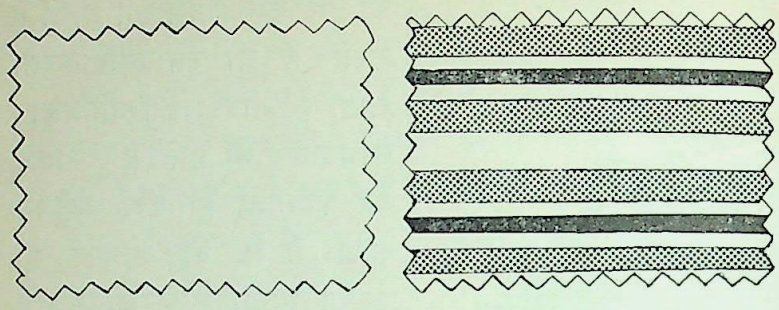

रंगीन कपड़े पर कई रंग की धारियों की छपाई पेचीदा नहीं है। मुख्य रंग पर विभिन्न रंगों की धारियां छाप दी जाती हैं, फिर मुख्य रंग आवश्यक स्थान से उड़ा दिया जाता है। (बायें) मुख्य रंग (दायें) धारियां

किया जायगा। उपर्युक्त बिजली के तारों के आवरण की आसंजक शक्ति इतनी प्रबल होती है कि उन्हें पीटकर चिपटाकर देने अथवा हजारों बार मोड़ने पर भी आवरण ज्यों के त्यों बने रहते हैं।

अण्डा केवल गाना गाकर उबाला जा सकता है

वर्तमान रंजकों की स्थिरता भी कुछ अधिक नहीं होती; परदों इत्यादि के रंग उड़ जाने की शिकायत उसे दूर करने के लिए पर्याप्त प्रेरणा दे सकती है। अधिस्वानिकी (Supersonics) भौतिक-विज्ञान का एक ऐसा विकास है जिसमें रसायनज्ञ की रुचि का होना आवश्यक है। कहा जाता है कि अधिस्वानिकी के प्रयोग से अब अण्डा केवल गाना गाकर उबाला जा सकता है। सचमुच इससे द्रवित धातुओं में चुम्बकत्व उत्पन्न किया जा सकता है। पनडुब्बियों का पता लगाया जा सकता है तथा वस्त्र-विज्ञान में सहाय कलिलों का संघनन किया जा सकता है। यह भौतिकी और रसायन के समन्वय-सहयोग का उत्तम उदाहरण है, और वस्तुतः किसी बड़ी समस्या के हल में यह समन्वय अनिवार्यतः आवश्यक है।

वस्त्रोउद्योग में रसायन का प्रभाव केवल बढ़ ही नहीं रहा है, वरन् उसका वेग भी तीव्रतर होता जा रहा है और अन्य विज्ञानों से होड़ ले रहा है। पच्चीस वर्ष पूर्व अमरीका का वस्त्रोद्योग नगण्य-सा था परन्तु आज वह महत्त्वपूर्ण स्थिति में है। वहां की प्रयोगशालाएं प्रगतिशील एवं उन्नतिशील हैं, एतदर्थ उन्हें सफलता प्राप्त होना अवश्यम्भावी है। यह उल्लेखनीय है, कि १९१६ में अमरीका में केवल १९ औद्योगिक अनुसन्धानशालाएं थीं और आज लगभग २,००० हैं।

सेलुलोज, सेलुलाइट तथा रेयान

रासायनिक भाषा में सेलुलोज को कार्बोहाइड्रेट (Carbohydrate) कहते हैं, अर्थात् उसमें कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन होता है तथा एक अणु में अन्तिम दो तत्त्वों का अनुपात जल के समान होता है। सेलुलोज इस वर्ग के सर्वाधिक निष्क्रिय यौगिकों में से है।

सक्रियता के इस अभाव से ही यान्त्रिक ढंग से बने इसके सामान बड़े टिकाऊ होते रहे हैं।

जब सेलुलोज को वानस्पतिक पदार्थों से एकत्र किया जाता है, तो उसकी रचना तान्तव (fibrous) होती है। इसके तन्तु अपनी औसत मोटाई के १००-१००० गुने लम्बे होते हैं। शीघ्र बढ़ने वाले पौधों के तन्तुओं की औसत लम्बाई $\frac{1}{2}$ इंच होती है। किन्तु कपास के बीजों के बाल १ इंच लम्बे होते हैं। और बास्ट तन्तु की लम्बाई २ इंच होती है।

प्रारम्भिक सेलुलोज-उद्योग में वस्त्र बनाने के लिए केवल शीघ्र पृथक किये जाने वाले लम्बे तन्तु ही प्रयोग किये जाते हैं। रस्से, रस्सियां तथा बोरी बनाने वाली सुतली के लिए ऐसे छोटे बास्ट तन्तु इस्तेमाल किये जाते थे, जो विधायन में पादपस्थित अपनी तन्तु-बण्डल अवस्था बनाये रख सकते हैं।

प्राकृतिक तन्तुओं के प्रायः अपरिवर्तनीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिमाण के कारण औद्योगिक विकास में काफी बाधा अनुभव की गयी। इस बाधा का निवारण सेलुलोज को विलेय अथवा प्लास्टिक अवस्था प्रदानकर विक्षेप्य (dispersive) बनाकर ही किया जा सका। एतदर्थ शुद्ध सेलुलोज पर मिश्रित नाइट्रिक और सल्फ्यूरिक अम्लों की क्रिया कराकर सेलुलोज नाइट्रेट बनाना पड़ा। सेलुलोज नाइट्रेट के उत्पादन का प्रथम वर्णन ब्रैकोनांट ने १८३३ में किया था, परन्तु उस समय केवल विस्फोटक गुणों पर अधिक ध्यान दिया गया। १८५५ में पार्क्स ने सेलुलोज नाइट्रेट में कुछ रुढ़कर्मक अथवा प्लास्टिक कर्ता मिलाकर तापी-प्लास्टिक (thermoplastic) पदार्थ बनाने का सुझाव दिया। अन्ततः १८६८-१८७५ की कालावधि में स्पिल ने इसके लिए कपूर और अल्कोहल का प्रयोग करके इसे औद्योगिक रूप से सफल बनाया। उसी समय सेलुलाइड के एक व्यापक उद्योग की नींव पड़ी और तभी से तापी-प्लास्टिक ढालने योग्य पदार्थों का उत्पादन होने लगा।

स्वान ने एक नये प्रयोग की सम्भावना का अनुभव किया

सेलुलाइड के उत्पादन के लिए विस्फोटक बनाने में प्रयुक्त होने वाले सेलुलोज नाइट्रेट की अपेक्षा कम नाइट्रोजन मात्रा वाला सेलुलोज नाइट्रेट इस्तेमाल किया जाता है। सेलुलोज नाइट्रेट को यन्त्रों द्वारा चूर्ण करके उसे कपूर (प्रायः ३०%) के साथ गूंथा तथा अल्कोहल डालकर उसका पूर्ण विक्षेपण किया जाता है। इसी समय रंग पदार्थ अथवा रंग द्रव्य भी छोड़े जाते हैं। इसके बाद उष्ण-वेल्लन करते तथा सुखाते समय अल्कोहल उड़ जाता है, तथा सेलुलाइड की सिलें, चद्दरें अथवा छड़ें बना ली जाती हैं, जिन्हें आवश्यकतानुसार सांचे में ढालने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

सर्वप्रथम वाणिज्यिक पैमाने पर उत्पन्न कृत्रिम रेशम का पैठिक पदार्थ भी सेलुलोज नाइट्रेट ही था। १७३४ में र्‌यूमर ने आश्लेषी पदार्थ से कताई अथवा खिंचाई द्वारा रेशम-जैसे रेशे बनाने का सुझाव दिया था। आगे चलकर १८४२ में सूक्ष्म छिद्र वाले एक ऐसे कर्तानांग (Spinneret) के प्रयोग का सुझाव दिया गया जिसके द्वारा पुंजि को खींचकर रेशे बनाये जा सके। परन्तु काफी समय तक यह सुझाव कार्यान्वित न हो सका। १८८० में विद्युत् दीपों के लिए अखण्ड संतन्तु बनाये गये, जिनसे वस्त्रों के लिए सूत बनाने में महती प्रेरणा मिली।

स्वान ने १८८३ में दीपों के लिए संतन्तु बनाने की रीति का पेटेण्ट लिया। उसी ने वस्त्रोद्योग में ऐसे धागों के प्रयोग की सम्भावना का अनुभव किया तथा १८८५ में कृत्रिम रेशम के नाम से कुछ नमूनों का प्रदर्शन भी किया।

क्यूप्रिक हाइड्रोक्साइड के अमोनिया विलयन में सेलुलोज के विक्षेपण का श्रेय श्वीजर तथा एक अन्य समकालीन रसायनज्ञ

कपड़े पर डिजाइन छापने के लिए ब्लाक प्रयुक्त होते हैं। ये ब्लाक लकड़ी के होते हैं और डिजाइनें तांबे के तारों की बनी होती हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मसर को दिया जाता है। अन्ततः यहाँ रेयन उत्पादन की एक दूसरी विधा का आधार बना जिसमें सेलुलोज नाइट्रेट विधा की तरह आग लगने का जोखिम न था। इस विधा से बारीक तथा मजबूत सूत भी बनने लगे, लेकिन यह थोड़ी जटिल थी तथा विक्षेपण बनाने और प्रयुक्त रसद्रव्यों की पुनः प्राप्ति में कठिनाई होती थी। यद्यपि इस विधा से सूत तो १८८५ में तैयार कर लिया गया, लेकिन उसका वाणिज्यिक उत्पादन १८९५–१९०० के पूर्व सम्भव नहीं हुआ।

एक सब से बड़ी आधार विधा

रेयन बनाने की क्युप्रामोनियम विक्षेपण विधा की विशेषता यह है कि कताई के समय काफी अधिक तनाव प्रयुक्त किया जा सकता है, जिसके फलस्वरूप प्रारम्भिक अवस्था में ही अति सूक्ष्म तन्तुक बना लिया जाता है, जो लाभ अन्य रीतियों में सम्भव नहीं था। तनाव कताई से प्राप्त सूत के भौतिक गुणों के कारण ही यह रीति बनी रह सकी, तथा विकसित भी हुई।

१९३२ में इस रीति से संसार के कुल उत्पादन का ३% रेयन तैयार होता था और आज यह उत्पादन बढ़कर ४% हो गया है। यह ज्ञातव्य है कि उत्पादन लगातार बढ़ रहा हैं।

१८९२ में क्रांस और बिवैन ने सेलुलोज विक्षेपण की एक विधा का आविष्कार किया जो आगे चलकर विस्कोज विधा कहलाने लगी। यह आजकल रेयन उत्पादन की सबसे बड़ी आधार विधा है। फिर भी यह उल्लेखनीय है, किसी कारण से १९१० तक यह विधा सफलतापूर्वक न अपनायी जा सकी।

विस्कोज नामक विक्षेपण से सूत तैयार करने के लिए उसे मुख्यतः सल्फ्यूरिक अम्ल और धात्वीय सल्फेट वाले संस्थापक उष्मक (Setting bath) में डुबाये कर्तानांग में से खींचा जाता है। इससे दह-सोडा का उदासीनीकरण भी हो जाता है तथा सेलुलोज व्युत्पत्ति के विच्छेदन से अखण्ड तन्तुक के रूप में सेलुलोज की पुनः प्राप्ति हो जाती है।

...और सूत की मजबूती बढ़ी

यद्यपि आरम्भ में इस रीति से कुछ मोटा सूत प्राप्त होता था, परन्तु आगे चलकर उसमें काफी उन्नति हुई और असली रेशम के समान या उससे भी अधिक बारीक सूत बनने लगे।

तनाव कताई की विधि से सूत की मजबूती बढ़ी और वे अब असली रेशम के सूतों के बराबर मजबूत होने लगे हैं। इसके प्रयोगों का क्षेत्र इतना बढ़ गया है कि आजकल विस्कोज विधा से संसार में प्रतिवर्ष १०० करोड़ पौण्ड का रेयन तैयार हो रहा है।

यह मात्रा संसार में असली रेशम की खपत का आठ गुना है। १९४० के पूर्व ७ वर्षों में संसार के कुल उत्पादन का औसत ८६% रेयान विस्कोज विधा से तैयार किया गया था, यद्यपि यह बात सभी देशों में एक समान नहीं थी।

रेयन उत्पादन की एक दूसरी विधा का भी औद्योगिक प्रयोग होता है। यह विलायक उद्वाष्पन कताई पर आधारित है। यह रीति मूलतः सेलुलोज नाइट्रेट के लिए निकाली गयी थी, लेकिन अब इसमें एसिटोन में विक्षेपित सेलुलोज एसिटेट प्रयुक्त होने लगा है। तदन्तर उपयोगी सूत तैयार करने में अनेक समस्याएं हल की गयी थीं और अन्ततः इसका उद्योग भी जम गया।

पिछले १७ वर्षों से संसार के कुल उत्पादन का ८-१०% रेयन उपर्युक्त रीति तैयार होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

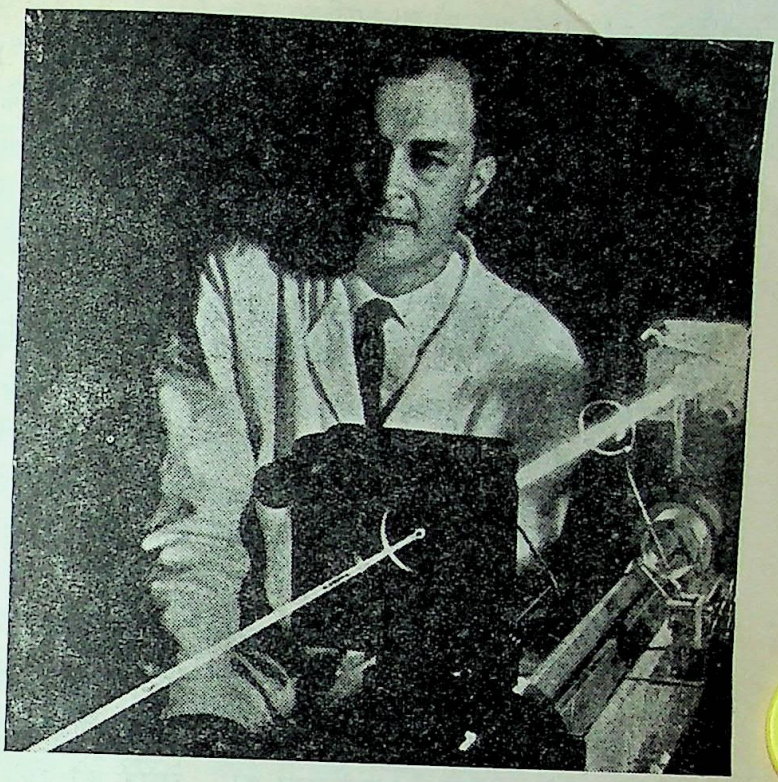

लेसर

एक विचित्र आविष्कार

एस. प्रेमी

कण्ट्रोल-डेस्क पर लगे हुए डायल की सूई बढ़ते-बढ़ते एक विशेष चिह्न तक पहुंच गयी। 'सावधान!' डेस्क पर बैठा हुआ आपरेटर बोला। उसकी दृष्टि डायल पर जमी हुई थी।

एक अन्य वैज्ञानिक ने दर्शकों को उस मेज से दूर हट जाने का संकेत किया जो कमरे के मध्य रखी हुई थी। सभी लोग तुरन्त वहां से हटकर कमरे की दीवारों के पास जा खड़े हुए।

मेज पर एक डिब्बा रखा हुआ था जो देखने में पुराने ढंग का कैमरा लगता था। उसके सूराख के सामने स्टेनलेस-स्टील का बना हुआ ईंट की शक्ल का एक टुकड़ा था जिसकी लम्बाई कई इंच थी। उधर कण्ट्रोल-डेस्क पर बैठे हुए व्यक्ति का हाथ एक बटन की ओर बढ़ा। उसके साथ ही दर्शकों को उसने फिर सम्बोधित किया, 'कोई व्यक्ति प्रकाश के स्रोत की ओर न देखे।'

अगले ही क्षण लाल प्रकाश का एक प्रवेश उस कैमरा रूपी मशीन से निकलकर गया। उसके साथ ही खटके की एक तेज आवाज भी सुनायी दी। लोगों ने देखा कि स्टील की उस मोटी ईंट के आर-पार एक सूराख हो गया था और उसके जले हुए किनारों से धुआं उठ रहा था। उस सारी प्रक्रिया में सेकण्ड के तीन हजारवें भाग के लगभग समय लगा था।

यह किसी वैज्ञानिक कहानी का फिल्म-दृश्य नहीं था, अपितु वैज्ञानिकों को उस ध्वसकारी शक्ति का एक नमूना दिखाया गया था जो लेसर किरणों के भीतर विद्यमान है।

लेसर : एक आश्चर्यजनक मशीन

लेसर क्या है?

यह उस आश्चर्यजनक मशीन का नाम है जिसका आविष्कार हुए अभी मुश्किल से पांच वर्ष भी नहीं हुए हैं। इसने विज्ञान के संसार में तहलका मचा दिया है। जिस

रेखाचित्र : पश्चिम जरमनी में लेसर द्वारा टेली-फोन करने की नयी प्रणाली विकसित की जा रही है—प्रयोग का एक दृश्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक के सिद्धान्त पर इसका आविष्कार हुआ है, उसे दो वर्ष पूर्व नोबल पुरस्कार मिल चुका है। इस समय कोई यन्त्र या मशीन ऐसी नहीं जो लेसर के समान ताप पैदा कर सके। विशेषज्ञ अब इसकी सहायता से नित्य नये कार्य पूर्ण करने के ढंग ढूंढ़ रहे हैं। इनमें कई कार्य ऐसे भी हैं जिन्हें बुद्धि नहीं मानती। उदाहरणस्वरूप, हिसाब-किताब करने वाली मशीन की गति को कई गुणा बढ़ाना, अन्तरिक्ष की खोज-बीन करना, कैंसर का इलाज करना। ये और इसी प्रकार के अन्य कार्य इससे किये जायेंगे। सबसे बढ़कर जिस बात पर विस्मय होता है, वह यह है कि लेसर की किरणें जहां हाइड्रोजन बम से अधिक विध्वसंकारी सिद्ध हो सकती , वहां किसी रोगी के प्राण बचाने के लिए पेनीसीलीन से भी उत्तम कार्य भर सकती हैं। इस बात का पता अभी हाल ही में उन अन्वेषणों के पश्चात् लगा है, जो अमरीकी डाक्टरों ने किये हैं।

इनमें से एक अन्वेषण दिसम्बर १९६३ में एक ऐसे व्यक्ति पर किया गया जो कई वर्षों से त्वचा-रोग से पीड़ित था। उसका छह बार आपरेशन हो चुका था। हर बार रोग की गिलटियां उसके शरीर से काटकर अलग की गयीं, किन्तु बाद में भी नयी गिलटियां पैदा हो जातीं। सर्जरी के अतिरिक्त ओषधियों से भी उस व्यक्ति का इलाज होता रहा, किन्तु रोग जड़ से न गया।

जब उस व्यक्ति पर लेसर को परखा गया, तो उसके सीने के दायें भाग से ऊपर कंधे तक तीन गिलटियां विद्यमान थीं। निचली गिलटी को लेसर की किरणों के दो फ्लैश लगाये गये। दरम्यानी गिलटी पर एक, और ऊपर वाली गिलटी को वैसी ही छोड़ दिया गया। छह सप्ताहों के पश्चात् डाक्टरों ने रोगी के सम्बन्ध में जो रिपोर्ट दी, उसके अनुसार निचली गिलटी पूर्ण रूप से विलीन हो चुकी थी। सूक्ष्मदर्शी-निरीक्षण से यह ज्ञात हुआ कि वहां रोग के केवल कुछ चिह्न मात्र रह गये थे। किन्तु अधिकाधिक रूप से रोग-चिह्न समाप्त हो चुके थे। इस अन्वेषण का सबसे अधिक उत्साहजनक पक्ष यह है कि ऊपर वाली गिलटी के भी लगभग बीस प्रतिशत रोग-कीटाणु समाप्त हो चुके थे, यद्यपि उसका बिलकुल इलाज नहीं किया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि लेसर की किरणों का प्रभाव शरीर में किसी अज्ञात रास्ते से गुजरकर नीचे वाली गिलटियों से ऊपर वाली गिलटी तक पहुंच गया था। त्वचा रोग के जिस रोगी पर लेसर से यह आपरेशन किया गया, उसे न तो अचेत किया गया और न चीर-फाड़ की नौबत आयी। जब उस व्यक्ति से पूछा गया कि क्या लेसर की किरणों से उसके शरीर में कोई जलन या दर्द महसूस हुआ, तो उसके उत्तर ने डाक्टरों को आश्चर्यचिकत कर दिया। उसने कहा, 'मुझे यों अनुभव हुआ था जैसे किसी ने मेरे शरीर पर अंगुली से चोट लगायी हो।'

लेसर को और अधिक उपयोगी बनाने के प्रयत्न हो रहे हैं

एक ऐसी मशीन जो एक समय में अंगुली की चोट से एक मनुष्य के मांस में हिलने वाले घातक लोथड़े को इस प्रकार समूल निकाल दे कि अन्य स्नायुओं को कोई क्षति न पहुंचे और फिर वही मशीन दूसरे समय में कई इंच मोटी धातु की प्लेट में पलक झपकने से भी कम समय में छिद्र कर दे, ऐसी मशीन की असाधारण उपादेयता से किसे इनकार हो सकता है!

लेसर के उपयोगी और लाभकारी प्रभावों की खोज-बीन करने और इस मशीन को और अधिक उपयोगी बनाने के लिए प्रयत्न हो रहे हैं। क्या पता कि किसी दिन कोई वैज्ञानिक इसे हाइड्रोजन बम-जैसी खतरनाक चीज बना दे, किन्तु इसके साथ-साथ इस बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की भी पूर्ण आशा है कि सामान्य जीवन में इसकी उपादेयता इतनी अधिक हो सकती है कि अस्पतालों, कारखानों और अन्य कई संस्थानों में लेसर से मानव-जाति की सेवा के लिए बड़े बड़े काम लिये जाने लगेंगे।

कई देशों में लेसर पर सैनिक दृष्टि से प्रयोग किये जा रहे हैं, किन्तु इस बारे में अभी कोई स्पष्ट ब्योरा प्राप्त नहीं है। केवल सामान्य ढंग के अनुमान लगाये जा रहे हैं। इस बात की बहुत बड़ी सम्भावना है कि निकट भविष्य में रडार अपना वर्तमान महत्त्व और स्थान खो देगा और उसका स्थान लेसर ले लेगा। रडार उस यान्त्रिक व्यवस्था का नाम है जिसमें विशेष प्रकार की रेडियो तरंगों को सर्चलाइट की भांति किसी दिशा में फैलाकर उस ओर से आने वाले वायुयानों या शत्रु के गुप्त ठिकानों का पता चलाया जाता है और उनकी गतिविधि देखी जा सकती है। रडार की तुलना में लेसर की किरणें अधिक दूर तक अपनी शक्ति स्थिर रखने और दिशा का अधिक सही निश्चय करने की विशेषता रखती हैं। युद्ध क्षेत्र पर फायर करने वाली तोपों का निशाना ठीक रखने में लेसर एक महत्त्वपूर्ण पार्ट अदा कर सकता है।

लेसर क्षेप्यास्त्रों को ध्वस्त करने के लिए

कई लोगों ने कल्पना से काम लेकर अधिक दूर तक सोचना आरम्भ कर दिया है। उदाहरणस्वरूप यह कि लेसर से एक ऐसा अस्त्र बना लिया जायेगा जो शत्रु के क्षेप्यास्त्रों को अपनी शक्तिमान किरणों का निशाना बनाकर मार्ग ही में ध्वस्त कर देगा या फिर उससे भी बढ़कर यह विचार कि एक न एक दिन वैज्ञानिक लेसर का कोई ऐसा अनोखा आविष्कार कर लेंगे जिसका एक बटन दबाने से वह भयानक 'मृत्यु की किरण' निकलेगी जिसका वर्णन अभी वैज्ञानिक कहानियों तक ही सीमित है। इस किरण की परिधि में आने

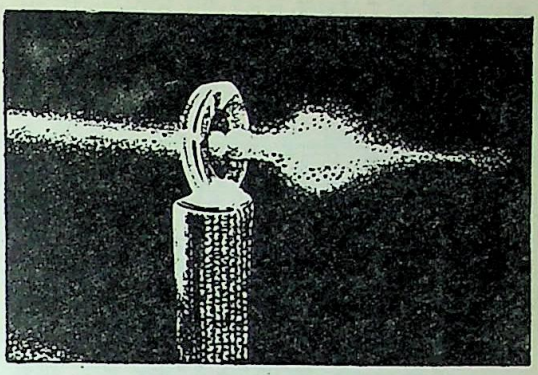

१०% लाल लेसर किरण को दूनी आवृत्ति के प्रकाश में परिवर्तित करने के सम्बन्ध में हाल ही में प्रयोग हुए—(फोर्ड मोटर कम्पनी की वैज्ञानिक प्रयोगशाला में प्रयोगाधीन एक लेसर उपकरण का रेखाचित्र)

वाला प्रत्येक व्यक्ति सेकण्डों में भस्म हो जायेगा। विशेषज्ञ जिन योजनाओं पर आजकल अति गम्भीरता से चिन्तन कर रहे हैं, उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं—

खुली सड़कों पर मोटरें दौड़ रही हों। उनकी गति दो सौ मील प्रति घण्टा हो। ड्राइवर आराम से लेटा हुआ हो और लेसर कारों को इस प्रकार कण्ट्रोल किये हुए हो कि न गति में कमी आये और न एक-दूसरे से टकराने पायें। वैज्ञानिक इस प्रयोग में कई वर्षों से संलग्न हैं और ८० प्रतिशत से अधिक सफलता प्राप्त हो गयी है। कुछ देशों में व्यावहारिक रूप से प्रयोग किये भी जा चुके हैं। जब यह प्रयोग बिलकुल पूरा हो जायेगा तो यातायात की समस्या एक सीमा तक शेष न रहेगी। लोगों के व्यवसाय में और भी अधिक तेजी आ जायेगी।

लेसर की शक्ति से चलने वाले बड़े एटमी रिएक्टर बनाये जायें, जो बहुत ही कम मूल्य में समुद्र के पानी से नमक अलग करके भारी परिमाण में पीने का पानी उपलब्ध करें।

आन्तरिक्ष यात्रा के लिए ऐसे भारवाहक यान तैयार किये जायें जो बिना किसी यानचालक के स्वतः निश्चित मार्ग पर यात्रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते रहें और केवल लेसर का प्रकाश उनका नियण्त्रण करे। इन बातों के अतिरिक्त वैज्ञानिकों का यह भी विचार है कि डाक और तार विभाग में लेसर बहुत बड़ी क्रान्ति ला सकता है। लेसर की किरणों के एक प्रवाह से लाखों व्यक्तियों की टेलीफोन पर बातचीत हो सकती है, संसार भर के रेडियो और टेलीविजन प्रोग्राम एक ही समय में दूसरे स्थान पर भेजे जा सकते हैं।

आखिर इस मशीन के अन्दर वह कौन-सा दैत्य बन्द है जो ऐसे अलौकिक कार्य करने की शक्ति रखता है? वास्तव में लेसर के अन्दर बहुत कम संख्या में छोटे और सादा कलपुरजे होते हैं। इनमें से एक तो तेज प्रकाश का बल्ब होता है जिसे फोटोग्राफर अपने स्टूडियो में रखते हैं, किन्तु इसकी शक्ल बहुतभिन्न होती नोन गैस की एक ट्यूब भी प्रकाश के रूप में उपयोग की जा सकती है।

दूसरी वस्तु एक कलम या सलाख है जो किसी साफ पदार्थ से बनायी जाती है। यदि पदार्थ गैस या द्रव्य अवस्था में हो, तो उसे एक सिलिण्डर-रूपी नलकी के अन्दर बन्द कर लिया जाता है।

लेसर का तीसरा भाग एक ऐसा संस्थान है जो पूरी मशीन को ठण्डा करता रहता है। गरमी की एक विशेष मात्रा इस मशीन में पैदा हो जाती है जिसे यदि खारिज न किया जाय, तो सब कल-पुरजे जलकर नष्ट हो जायें।

चौथी वस्तु वह लेंस है जो किरणों को एकत्र करके एक पतली धार की शक्ल में खारिज करता है।

इन सब भागों को एक विशेष ढंग से जोड़कर एक बक्स या डिब्बे की शक्ल के खोल में बन्द कर दिया जाता है। एक कंट्रोल-डेस्क अलग होता है जिसका आपरेटर लेसर के हर पुरजे की क्रिया को देख सकता है और उससे अपनी इच्छानुसार आवश्यक काम लेता है।

एक अनोखी प्रक्रिया : एक जादू

इस लेख के आरम्भ में जिस लेसर का वर्णन किया गया है, उसमें कृत्रिम रत्न की सलाख का उपयोग किया गया था। पहले उसके दोनों सिरे बड़ी सावधानी से घिसकर समतल बनाये गये थे, फिर उन्हें पालिश करके आईना-जैसा साफ बना दिया गया। एक सिरे को तो पूरी तरह साफ कर दिया गया, किन्तु दूसरा सिरा कम साफ रहा ताकि उसमें से प्रकाश प्रतिबिम्बित भी हो और आवश्यकता के समय बाहर भी निकल सके। प्रकाश के लिए जैनोन ट्यूब से काम लिया गया था जो रत्न की सलाख के गिर्द सांप के समान लिपटी हुई थी।

कृत्रिम रत्न का एक अंग क्रोमियम धातु का है। जब लेसर को चलाना होता है, तो प्रकाश बड़े परिमाण में रत्न की सलाख में इस प्रकार निरन्तर पहुंचाया जाता है, जैसे पम्प से हवा भरते हैं। एक समय ऐसा आता है कि उस प्रकाश के किसी एटम से एक विशेष प्रकार का कण पृथक हो जाता है जिसे विज्ञान की भाषा में 'फोटोन' कहते हैं। प्रकाश का यह कण या फोटोन सलाख के अन्दर चलने लगता है और कलई किये हुए सिरे से टकराकर वापस आता है। इस वापसी-यात्रा के मध्य किसी अन्य एटम से टक्कर खाकर वह अपने-जैसा एक और फोटोन उस एटम से स्वतन्त्र कर देता है। अब ये दोनों फोटोन चलते हुए सलाख के दूसरे सिरे तक पहुंचते हैं और वहां से जब टकराकर लौटते हैं, तो दो नये फोटोन निकल कर उनके साथ चलने लगते हैं। इस प्रकार हर फेरे में तोड़-फोड़ की यह प्रक्रिया बढ़ती जाती है और सलाख के भीतर चलायमान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरंगों का समूह बहुत ही अल्पावधि में एक जबरदस्त बाढ़ का रूप धारण कर लेता है। जबर मशीन के डायल पर लगी हुई सूई तीर के निशान की ओर बढ़ने लगती है और देर ही वह उस निशान को पार करती है, तरंगों का अथाह तूफान रत्न की सलाख के आधी कलई वाले सिरे से गुजरकर बाहर आ जाता है। इस प्रकार प्रकाश की जो तेजशाली किरणें उत्पन्न होती हैं, लेसर उन्हें सहेजकर उनकी सूक्ष्म धार बना देता है और उनकी शक्ति को समेटकर और अधिक कर देता है। किन्तु उनकी लपट के झपकने से भी पहले समाप्त हो जाती है। यदि लेसर में कोई गैस प्रयुक्त की जाय, तो किरणों की शक्ति कम रहती है, किन्तु उनका प्रवाह जब तक चाहें, स्थिर रहता है। इसके अतिरिक्त भिन्न प्रकार के पदार्थ अलग-अलग प्रभाव देने वाली किरणें उत्पन्न करते हैं।

यह है उस जादू की वास्तविकता जो उस साधन के अन्दर बन्द होता है। अंगरेजी का शब्द लेसर (Laser) जिन पांच अक्षरों को जोड़कर बनाया गया है, उनमें से प्रत्येक किसी पूरे शब्द का पहला अक्षर है। लेसर का अंगरेजी में पूरा नाम है : Light Amplification by Stimulated Omission of Radiation; इसका अर्थ है, किरणों के विकिरण में निरन्तर आन्दोलन और सम्पर्क पैदा करके प्रकाश की शक्ति को बढ़ाना। इस पूरे वाक्य को संक्षिप्त करके इसे लेसर का नाम दिया गया है।

लेसर-प्रकाश और सामान्य प्रकाश में अन्तर

जो प्रकाश लेसर से निकलता है, उसमें और सामान्य सफेद प्रकाश में जो हमें सूर्य या बिजली के बल्ब से प्राप्त होता है, बड़ा अन्तर है। सफेद प्रकाश इन्द्रधनुष के रंग वाली किरणों से मिलकर बनता है, इसकी तुलना में लेसर की किरणें केवल एक ही विशिष्ट रंग रखती हैं, किन्तु मुख्य प्रश्न यह है कि उन किरणों की असाधारण शक्ति का रहस्य क्या है? बात यह है कि जब हम बिजली का अधिक ताकतवर बल्ब जलाते हैं, तो उसका प्रकाश चारों ओर फैल जाता है। यदि उस प्रकाश को किसी परावर्तक द्वारा सहेजकर एक विशेष दिशा में फेंकें जिस प्रकार रेल के इंजन की बत्ती का प्रकाश फेंका जाता है, तो उस एक दिशा में प्रकाश की मात्रा बहुत बढ़ जायगी, किन्तु इन किरणों का फिर भी पर्याप्त फैलाव शेष रहता है और ऐसा कोई ढंग नहीं है कि इन किरणों को एक बहुत ही सूक्ष्म धार बना दिया जाय। यह उद्देश्य लेसर ने पूरा किया है। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि लेसर के प्रकाश की कुल मात्रा एकत्र होकर सेकण्ड के कई लाखवें भाग में निकलती है। इसका उदाहरण यह है : किसी नल में से जब मामूली रफ्तार से पानी गिर रहा हो, तो और बात होती है, किन्तु यदि उसके नीचे एक बड़ी-सी बालटी रख दी जाय और फिर पूरी बालटी भर जाने के बाद एकदम उलट दी जाय, तो यह और बात है। संक्षिप्त शब्दों में इसे इस तरह समझें कि प्रकाश उत्पन्न करने का सामान्य ढंग यदि 'सौ सुनार का है' तो लेसर का ढंग 'एक लोहार का' है।

लेसर का आरम्भिक दृष्टिकोण : एक अभिकल्पना

आज से करीब पन्द्रह वर्ष पहले एक अमरीकी वैज्ञानिक डाक्टर चार्ल्स हार्ड टाउंज के मस्तिष्क में लेसर का आरम्भिक दृष्टिकोण उभरा। १९५१ की बसन्त ऋतु की एक सुबह वह फ्रैंकलिन पार्क के एक बेंच पर अकेला बैठा था। टाउंज, जो उन दिनों कोलम्बिया विश्वविद्यालय में भौतिकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्राध्यापक था, रेडियो लहरों से सम्बन्धित एक सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए वाशिंगटन आया हुआ था। बेंच पर बैठे-बैठे वह प्रकटत: पार्क के रंग-बिरंगे फूलों और प्रात:समीर के झोंकों से आनन्दित हो रहा था, किन्तु उसका मस्तिष्क किसी और उधेड़बुन में लगा था। वह सोच रहा था, क्या ऐसी विद्युत् चुम्बकीय लहरें पैदा होना सम्भव है जिनकी लम्बाई सामान्य रेडियो लहरों की तुलना में लाखों या करोड़ों गुना कम हो। अकस्मात उसे यह विचार सूझा कि क्यों न यह काम एटम से लेने का प्रयत्न किया जाय। यह विचार अभी किसी और को नहीं सूझा था। टाउंज का अपना कहना है कि मैंने उसी समय जेब से एक पुराना लिफाफा निकालकर उस पर रेखाएं बनायीं कि एटम के अन्दर एक विशेष प्रकार का प्रकम्पन उत्पन्न करने के लिए कौन-कौन-सी शर्तों को पूरा करना आवश्यक होगा। इस प्रकार उस दृष्टिकोण का एक धुंधला-सा रेखाचित्र टाउंज के मस्तिष्क में तैयार हो गया। कोलम्बिया वापस आकर उसने अन्य सहयोगियों से भी इस बात का जिक्र किया। उसका एक शिष्य जेम्स गोर्डन, पी. एच-डी. की डिग्री के लिए टाउंज के दृष्टिकोण पर व्यावहारिक कार्य करने के लिए तैयार हो गया।

दो वर्ष तक टाउंज और गोर्डन अपनी प्रयोगशाला में कठोर परिश्रम करते रहे। उन्होंने प्रयोग में उपयोग लाये जाने वाले सामान में कई परिवर्तन किये और बहुत से ढंग परखे, किन्तु सफलता न मिली। इन अन्वेषणों पर सरकार के ५० हजार डालर भी खर्च हो गये जो प्रकटत: बिलकुल नष्ट हो गये थे। प्राध्यापक के मित्रों ने परामर्श दिया कि वह इस काम पर और समय नष्ट न करे। सच तो यह है कि स्वयं टाउंज भी निराश होने लगा था, किन्तु १९५३ के अन्त में एक दिन टाउंज कक्षा में पढ़ा रहा था कि कमरे का दरवाजा खुला और गोर्डन हांफता हुआ अन्दर आया। वह आते ही उल्लास से चिल्लाया, 'प्रोफेसर! एटम के अन्दर वांछित प्रकम्पन उत्पन्न हो गया है।'

बस, फिर क्या था, टाउंज की कक्षा उसी समय समाप्त होकर एक निकटवर्ती रेस्तरां में चली गयी जहां उत्सव मनाया गया।

पहले चूहों पर

इस आरम्भिक अन्वेषण के बाद जिस मशीन या यन्त्र को बनाया गया, उसका नाम 'मेसर' रखा गया था। इसमें म अक्षर माइक्रो वेव शब्द से लिया गया था। शेष अक्षरों का क्रम वहीं है जो लेसर में है। १९५८ में टाउंज ने अपने सिद्धान्त को एक पग और आगे बढ़ाया और यह आशा प्रकट की कि इसी सिद्धान्त के अनुसार प्रकाश की बेहद शक्तिशाली लहरों को उत्पन्न करना भी सम्भव है। इससे संसार के बहुत से वैज्ञानिकों के दिमाग में प्रकाश-सम्बन्धी लेसर आविष्कार करने का उन्माद समा गया। अन्तत: हास एयरक्राफट कम्पनी के प्रसिद्ध विशेषज्ञ थ्यू डारमे मैन ने कृत्रिम रत्न का लेसर तैयार कर लिया जिसका वर्णन ऊपर दिया गया है।

लेसर से त्वचा-रोग के विरुद्ध सफल प्रयोग पहले चूहों पर किया गया था और बाद में उसे मनुष्यों पर परखा गया। बोस्टन मेडीकल सेण्टर के कुछ डाक्टरों ने बहुत से चूहों के मुंह में उक्त रोग के कीटाणुओं को डालकर उन्हें छोड़ दिया। कुछ दिनों के बाद गिलटियां उग आयीं और इतनी बढ़ गयीं कि चूहों के मुंह उनसे पूरी तरह भर गये। उसके बाद आधे चूहों को लेसर की किरणें इस प्रकार दी गयीं कि फ्लैश सेकण्ड के केवल तीस करोड़वें भाग तक गिलटी पर डाला जाता था। बीस से तीस दिन की अवधि के अन्दर इन चूहों में रोग के सभी चिह्न मिट गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु जिन चूहों का इलाज नहीं किया गया, वे सब मर गये। एक डाक्टर से प्रश्न किया गया, लेसर की किरणों से चूहे के शरीर में आर-पार सूराख क्यों न हुआ? उसने उत्तर दिया कि इन किरणों को मांस की नमी तुरन्त जज्ब करके अप्रभावित बना देती है। इस लिए उनका असर गिलटी की ऊपरी सतह तक ही सीमित रहा।

आंख के भीतरी परदे की वेल्डिंग

आपने सड़क पर जाते हुए हुए वेलडिंग की किसी दुकान पर कारीगर को लोहे के टुकड़ों को एक-दूसरे से जोड़ते हुए तो अवश्य देखा होगा, किन्तु आंख के भीतरी परदों की वेलडिंग के बारे में आपने कभी न सोचा होगा। विश्वास कीजिए, कि लेसर ने यह भी कर दिखाया। आंख की एक विशेष बीमारी होती है जिसमें आंख का भीतरी परदा रेटिना (retina) किसी कारण से डेले से पृथक हो जाता है। हमारी दृष्टि इस परदे पर कायम है। इसलिए यदि किसी व्यक्ति की आंख में यह नुक्स हो जाय, तो वह आंख बिलकुल अंधा हो जाता है। इसका इलाज सर्जरी से सम्भव तो है किन्तु यह बेहद नाजुक, संजीदा और कष्टप्रद आपरेशन है। हाल ही में लेसर से इसका इलाज किया गया है। इस की किरणों को एक सूक्ष्मदर्शी से गुजारकर आंख के अन्दर इस प्रकार डाला गया कि वे बहुत सूक्ष्म धार के रूप में भीतरी परदे के किनारों पर टकरायें। जिस स्थान पर कोई किरण पड़ी वहीं उसने परदे का जरा-सा किनारा डेले के साथ लगा दिया। इस प्रकार परदे के किनारों की जगह-जगह जोड़ लगा दिये गये। बाद में जब इस वेलडिंग के जख्म भर गये, तो परदा अपने स्थान पर चिपक चुका था और रोगी को खोई हुई दृष्टि वापस मिल गई थी।

लेसर की किरणें एक बार धरती से चांद तक और चांद से धरती तक यात्रा कर चुकी हैं। इस अभियान का विचार दो वैज्ञानिकों को केवल इस कारण पैदा हुआ कि उनके वायुयान के आगमन में एक बार असाधारण विलम्ब हो गया था। मैसाचुसेट्स इंस्टीट्यूट आफ टेक्नालोजी के दो राडार विशेषज्ञ, प्रोफेसर सम्लन और डाक्टर फयाको नवम्बर १९६१ की एक शाम को सैनिक हवाई अड्डे पर उस यान की प्रतीक्षा कर रहे थे। समय बिताने के लिए वे इधर-उधर की बातें कर रहे थे कि लेसर का जिक्र आ गया। आकाश पर चौदहवीं का चांद उदय हो रहा था। वे सोचने लगे कि क्या लेसर की किरणें लम्बे फासले के लिए राडार के रूप में प्रयुक्त की जा सकती हैं? अनुमान लगाने के लिए कागज की आववश्यकता अनुभव हुई। जेब में ढूंढ़ने के बाद डाक का एक लिफाफा मिला। उधर यान रन-वे पर उतर रहा था और इधर ये दोनों वैज्ञानिक अपनी योजना का संक्षिप्त रेखा-चित्र तैयार कर चुके थे।

लेसर से चांद की ओर फायर

सम्लन और फयाको की योजना में अमरीकी सेना के तीनों विभागों के साथ-साथ कई अन्य वैज्ञानिक संस्थानों ने भी असाधारण दिलचस्पी प्रकट की। दीर्घावधि

वायु में विद्युत् विसर्जन का एक दृश्य। यह दृश्य एक बृहत् पल्स लेसर (pulse laser) को फोकस करने से उत्पन्न होता है

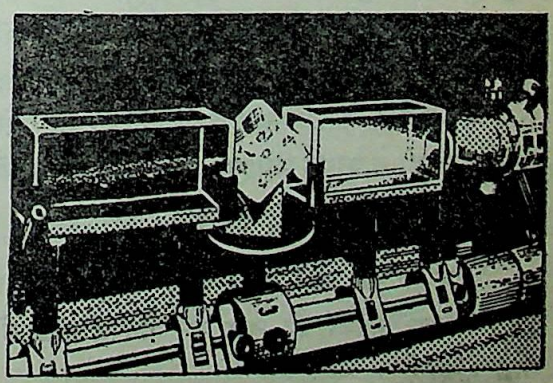

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बाद जब तैयारी पूरी हो गयी, तो निश्चित तिथि को एक लेसर दूरबीन के साथ लगा दिया गया। उससे चांद की ओर निशाना बांधकर किरणों के फायर किये जाने थे। साथ के एक अन्य कमरे में दूसरी दूरबीन का मुख भी चांद की ओर था। उसका काम यह था कि जब किरणें चांद को सतह से पलटकर आयें, तो वह उन्हें इकट्ठा करके एक ओस्लोग्राफ पर रिकार्ड कर दे। ऐन मौके पर हिमपात आरम्भ हो गया। लेसर की किरणें हिम की तरलता के कारण बिलकुल बेअसर होकर रह गयीं, इसलिए प्रयोग स्थगित कर दिया गया। दूसरी बार जब चांद आकाश पर उपयुक्त स्थान पर पहुंचा, तो उस समय मौसम बहुत अच्छा था। लेसर से चांदमारी शुरू हो गयी।

लेसर के फ्लैश चांद पर फेंके गये

एक मिनट के विराम के बाद प्रकाश का फव्वारा निकलता और चांद की ओर उड़ता। किरणें पेंसिल के समान मोटी धार बनाती थीं जो चांद तक पहुंचते-पहुंचते दो मील के फैलाव में टकरातीं। यदि लेसर के बजाय प्रकाश का कोई सामान्य ढंग प्रयुक्त किया जाता, तो उसकी किरणों का फैलाव हजारों मील होता। यही कारण है कि ऐसा प्रकाश बहुत ही कम मात्रा में चांद तक पहुंच सकता है। धरती से चांद तक दोतरफा फासला लगभग पौने पांच लाख मील है जिसे प्रकाश ढाई सेकण्ड में तय कर लेता है। किरणें अपनी यात्रा पूरी करके दूसरे कमरे वाली दूरबीन में रिकार्ड होती चली गयीं। उस रात लेसर के बहुत से फ्लैश चांद पर फेंके गये जिनमें से एक दर्जन से अधिक स्पष्ट रूप में रिकार्ड हो गये।

भ्रम पैदा हो गया है

इस प्रयोग की सफलता से कई लोगों ने क्षेप्यास्त्र विध्वंस करने और 'मृत्यु की किरण' पैदा करने वाले लेसरों के आविष्कार के बारे में चर्चा शुरू कर दी है। वास्तव में एक बड़ा भ्रम पैदा हो गया है। जब ये लोग कई इंच मोटी धातु की प्लेट में सूराख कर देने वाले प्रयोग को देखते हैं, तो यह भूल जाते हैं कि किरणों को लेंस की सहायता से सहेजकर एक बिन्दु पर केंद्रित किया जाता था और फिर प्लेट लेसर के बहुत समीप थी। जैसे-जैसे दूरी बढ़ती जायेगी, किरणों का प्रभाव कम होता जायेगा।

हिसाब लगाया गया है कि क्षेप्यास्त्र में उड़ान के मध्य सूराख करने के लिए लेसर को अपनी वर्तमान शक्ति की तुलना में हजारों गुना अधिक शक्तिशाली बनाना पड़ेगा। जितनी शक्ति उस एक लेसर में लगेगी, उस से इतनी बिजली पैदा की जा सकती है जो एक छोटे से नगर की सभी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए पर्याप्त होगी।

भुट्टे की गुल्ली से प्लाईवुड का निर्माण

वन अनुसन्धान, देहरादून में किये गये परीक्षणों में पता चला है कि भुट्टे की गुल्ली उष्मा की कुचालक है। प्लाईवुड के क्रोड-द्रव्य में जो विशेषताएं होती हैं वे सब इसमें हैं। भुट्टे की गुल्ली को क्रोड के निर्माण में इस्तेमाल करने के लिए भी प्रयोग हुए। वैज्ञानिकों का मत है कि ऐसे क्रोड द्वारा निर्मित लकड़ी साधारण प्लाईवुड से अधिक हलकी और सस्ती होगी।

प्रतिजीवाणुओं की खोज

अर्बुद का नाश करने के लिए रूस में प्रतिजीवाणुओं की खोज की गयी है। ये प्रतिजीवाणु अर्बुद पीड़ित ऊतकों को नष्ट कर देते हैं। इनकी खोज द्वारा निश्चित रूप से अर्बुद के रोगियों को लाभ पहुंचा है।

विज्ञान-लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

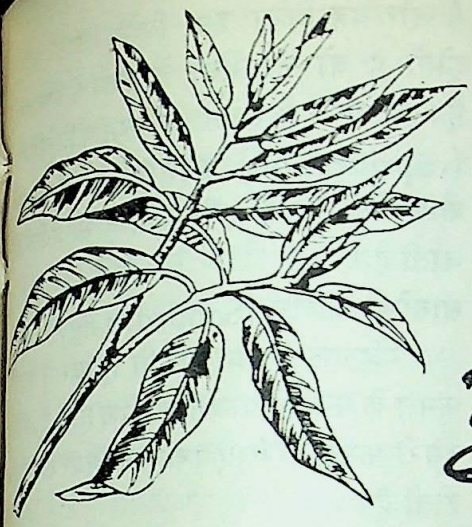

अंजीर और अडूसा

आर. एन. सिंह, एम.एस-सी.

कहा जाता है कि गूलर के फूल नहीं होते। इस तरह तो अंजीर के भी फूल नहीं होते। परन्तु यह कहना एक उपलक्षण मात्र होगा। वास्तव में पेड़-पौधों की एक जाति (genus) ही ऐसी होती है जिसके विषय में कहा जा सकता है कि इसमें फूल नहीं होते। यह जाति फाइकस (*Ficus*) कहलाती है, परन्तु इस जाति के विषय में जो प्रचलित धारणा है कि इसमें बिना फूल ही के फल लगते हैं, भ्रमपूर्ण है। तथ्य यह है कि इसके फूलों की रचना ही ऐसी प्रतीत होती है कि वे फल प्रतीत होते हैं। वनस्पति विशेषज्ञों ने यह सिद्ध कर दिया है कि फाइकस जाति के पेड़-पौधों के फूलों का स्तम्भक (thalamus) बढ़कर चारों ओर से अन्य भागों को ढंक लेता है और शीर्षभाग पर एक छिद्र मात्र शेष रह जाता है। इसके भीतर अनेक स्त्रीपुष्प तथा पुंपुष्प रहते हैं। इन पुष्पों से बाद में फल बनते हैं। इस प्रकार एक फल वास्तव में छोटे-छोटे फलों का संग्रह होता है। इस जाति के अन्तर्गत लगभग ६५ प्रजातियां (species) हैं जो संसार भर में फैली हुई हैं। अंजीर भी इसी जाति का एक पौधा है। पीपल, गूलर, पाकड़, रबर आदि जो हम नित्य देखते हैं, इसी जाति के अन्तर्गत आते हैं। परन्तु अंजीर इन सबसे महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इसके फलों में बहुत से पौष्टिक पदार्थ पाये जाते हैं और इसका प्रयोग ओषधि तथा आहार, दोनों रूपों में होता है।

परिचय

प्राचीन काल से ही हमारे देश में अंजीर का व्यवहार होता आ रहा है। इसे संस्कृत भाषा में फल्गु कहते हैं। इसका लैटिन नाम फाइकस कैरिका (*Ficus carica*) है और यह मौरेसी (*Moraceae*) कुल की वनस्पति है। इसके छोटे या मध्यम आकार के पेड़ होते हैं। पत्तियां चौड़ी तथा किनारे ३-४ खण्डों में विभक्त होते हैं (चित्र-१)। इनका ऊपरी भाग खुरदरा तथा शिराएँ स्पष्ट दिखायी देती हैं।

अंजीर का पुष्पगुच्छ (inflorescence) विशिष्ट आकृति का होता है जिसका थैलामस बढ़कर चारों ओर से फूलों को ढंक लेता है। ऊपरी भाग पर एक छिद्र रहता है। फूलों की रचना तथा सेचन-क्रिया (pollination) के आधार पर अंजीर के कई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

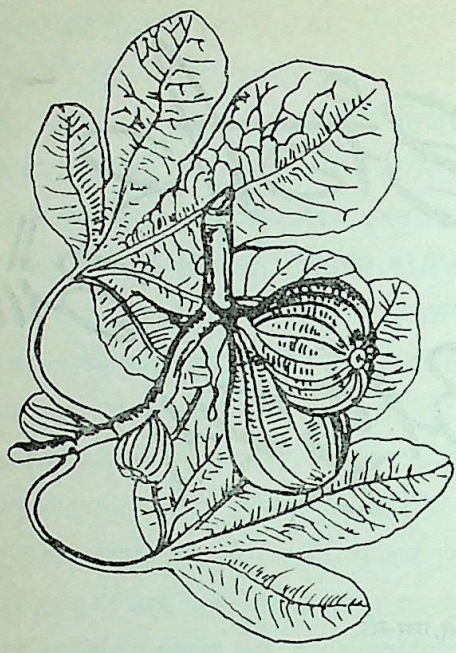

अंजीर के एक सामान्य वृक्ष की शाखा

भेद भी माने जाते हैं, जो निम्नलिखित प्रकार हैं—

सामान्य अंजीर (Common fig)

इस जाति के अंजीर में प्राय: स्त्रीकेशरीय (pistilate) पुष्प होते तथा फल पारथेनोकार्पिक (Parthenocarpic) होते हैं, अर्थात बिना गर्भाधान (fertilization) के ही फलों का निर्माण होता है।

कैप्रि फिग (Capri fig)

इस जाति में स्त्रीकेसरीय, तथा पुंकेसरीय दोनों प्रकार के पुष्प होते हैं। स्त्रीपुष्पों का योनि-सूत्र (style) बहुत छोटा होता है। इस प्रकार के स्त्रीपुष्पों में एक विशेष जाति का कीड़ा घुसकर वहां अण्डे देता है तथा उससे जब लारवा (larva) बनता है, तो एक प्रकार की उत्तेजना मिलती है, जिसके परिणामस्वरूप फल का निर्माण होता है। इस जाति में भी सेचन तथा गर्भाधान क्रिया की आवश्यकता नहीं होती।

स्मायर्ना अंजीर (Smyrna fig)

इस जाति के फूलों में परसेचन (cross-pollination) क्रिया की आवश्यकता पड़ती है और यह क्रिया इस विशेष कीट द्वारा होती है जो कैप्रिफिग के फलों से निकलता है। इस प्रकार के सेचन की क्रिया कैप्रिफिकेशन (caprification) कहलाती है। कभी-कभी कैप्रि फिकेशन की कृत्रिम विधि भी प्रयोग की जाती है।

सानपेड्रो अंजीर (Sanpedro fig)

यह एक मिश्रित जाति है जिसमें पहली फसल के फल तो पार्थेनोकार्पिक होते हैं, परन्तु दूसरी फसल के लिए परसेचन क्रिया आवश्यक होती है।

जलवायु तथा उत्पत्ति स्थल

अंजीर प्रारम्भिक रूप से एशिया माइनर के केरिका नामक स्थान का मूल निवासी माना जाता है, परन्तु अब यह संसार के उष्ण तथा शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में सर्वत्र उत्पन्न होता है। इसकी विशेष उपज भूमध्य-सागरीय प्रदेश में स्पेन से टर्की तक तथा संयुक्त राज्य अमरीका, चिली, अरब, फारस, चीन, जापान आदि देशों में होती है। भारतवर्ष में पूना, सतारा, अहमदाबाद, बंगलौर, बेलारी, अनन्तपुर तथा सहारनपुर के जिलों में और पंजाब तथा कश्मीर प्रदेशों में इसके बाग मिलते हैं। हमारे यहां जो अंजीर होता है वह वास्तव में फाइकस कैरिका तथा देशीय जाति का मिश्रिण रूप है। अंजीर की उत्तम उपज के लिए शीतोष्ण जलवायु तथा थोड़ी रेत मिली हुई सघन तथा जहां पानी न रुकता हो ऐसी भूमि चाहिये। खाद तथा सिंचाई से भी फसल अच्छी होती है। फल पकने के समय शुष्क जलवायु अनुकूल होती है। जलवायु तथा जमीन की विभिन्नता के कारण अंजीर के फल आकार-प्रकार में भी उत्तम हो जाते हैं।

अंजीर की खेती तथा प्रसार

अंजीर की खेती तथा इसका प्रसार अधिकतर इसकी कलमों (cuttings) से किया जाता है। दो-तीन वर्ष पुराने पौधों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरसात के प्रारम्भ में ८-१२ इंच लम्बी कलमें काट ली जाती हैं और उन्हें एक-एक फुट की दूरी पर पौधघर (nursery) में लगा देते हैं। एक वर्ष के बाद फिर इन्हें खेतों में २०-३० फुट की दूरी पर लगाते हैं। कभी-कभी बीजों से भी इसकी खेती की जाती है। अंजीर के ग्राफ्ट (graft) को पीपल, गूलर आदि के पेड़ों पर लगाने में भी सफलता मिली है, और इस प्रकार से उत्पन्न फल भी अच्छे होते हैं।

अंजीर के फल उसकी शाखाओं पर ही लगते हैं। शाखाओं की संख्या बढ़ाने तथा पेड़ को मनोवांच्छित आकार देने के लिए प्रुनिंग (prunning) भी करनी पड़ती है। वर्ष में दो बार फल लगते हैं, अतः प्रुनिंग का समय स्थानिक सुविधाओं के अनुसार निश्चित करना पड़ता है, जैसे पूना में जुलाई में और उत्तरप्रदेश में दिसम्बर में प्रुनिंग लाभदायक होती है। अच्छे फल के लिए कैप्रिफिकेशन की कृत्रिम क्रिया भी करते हैं। इस विधि में बांस की पतली सींकों को पहले जंगली गूलर या कैप्रि फिग के फूलों के छिद्रों में डालकर फिर उन सींकों को अंजीर के फूलों में डालते हैं। इस प्रकार परसेचन होकर अच्छे फल लगते हैं।

पौध लगाने के दो-तीन वर्ष बाद फल लगने प्रारम्भ हो जाते हैं। पेड़ १२-१५ वर्ष तक अच्छे फल देते हैं। वर्ष में दो फसलों के अतिरिक्त कभी-कभी तीसरी भी देखी गयी है। एक पेड़ से लगभग ६००-६५० फल प्रति-वर्ष निकलते हैं। पके फल जब पेड़ से अधिकांश सूखकर गिर जाते हैं, तो उन्हें एकत्रकर चौड़े बर्तनों में अच्छी तरह सुखाते हैं, अथवा पके फलों को २०-३० मिनट तक गन्धक का धुआं (sulphur fumes) देकर फिर लकड़ी के बर्तनों में ५-७ दिन तक धूप में सुखाते हैं। फलकुल शुष्क होने के पूर्व उन्हें दबाकर चपटा कर लिया जाता है जिससे पैकिंग में आसानी होती है। पैकिंग के पूर्व फलों को ३% नमक के घोल में डुबाते हैं जिससे वे मुलायम तथा स्वादिष्ट हो जाते हैं। इन फलों को कभी-कभी माला की तरह गूंथकर बाजार में विक्रय हेतु भेजते हैं। कोल्ड स्टोरेज में रखे हुए तथा जमाये हुए अंजीर (frozen fig) जल्दी विकृत हो जाते है, अतः ये विधियां अधिक प्रचलित नहीं हैं।

हानिकारक कीड़े तथा रोग

अंजीर में विशिष्ट प्रकार के कीड़े तथा रोग भी लग जाते हैं जिससे फसल को काफी हानि पहुंचती है। एक विशेष कीड़े के कारण इसके पत्तों का निचला भाग मुरचई (rusty) रंग का हो जाता है। इससे पत्ते गिरने लगते हैं तथा फल कम लगते हैं। इससे बचने के लिए गन्धक के बोर्डे मिश्रण (Bordeaux mixture) का छिड़काव करना चाहिये। कुछ कीड़े अंजीर के तनों में छेद बना देते हैं और पेड़ को कई प्रकार से क्षति पहुंचाते हैं। ये कीड़े मिट्टी के तेल से मरते हैं। कुछ कीड़े

अंजीर के फल माला की तरह गूंथकर बाजार में विक्रय के लिए भेजे जाते हैं

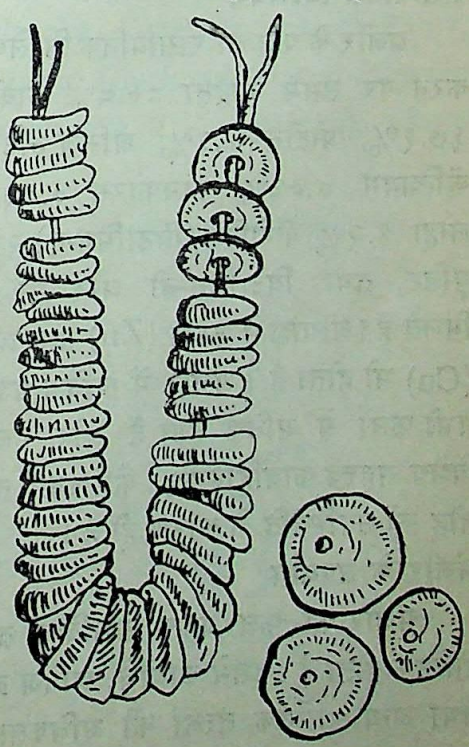

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

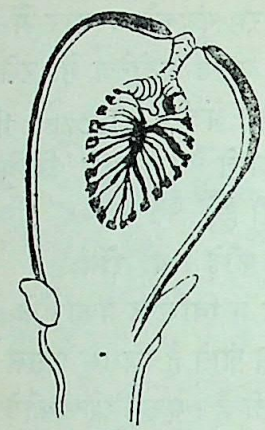

अनुदैर्घ्य काट में अंजीर—अंडपी पुष्प देखे जा सकते हैं

फलों में लगते हैं जिससे फल खट्टे हो जाते हैं या सड़ जाते हैं। ज्यादा पानी से भी फल विकृत हो जाते हैं। इसलिए अच्छे फल की प्रगति के लिए अंजीर के पेड़ों को कीड़े-मकोड़े तथा अन्य हानिकारक पदार्थों से बचाना चाहिये।

रासायनिक विश्लेषण

अंजीर के फल का रासायनिक विश्लेषण करने पर उसमें आर्द्रता ८०.८%, कार्बोज १७.१%, प्रोटीन १.३%, खनिज ०.६%, कैल्शियम ०.०६%, फासफोरस ०.०३%, लोहा १.२%, कैरोटिन (विटामिन-ए) २५० यूनिट, तथा विटामिन-बी और सी भी मिलते हैं। अल्पांश में जस्ता (Zn) तथा ताम्र (Cu) भी होता है। अंजीर में खनिज पदार्थ सभी फलों से अधिक होते हैं और इसका विशेष महत्त्व कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम तथा लौह की उपस्थिति के कारण ही है।

अंजीर के उपयोग

अंजीर का फल बहुत स्वादिष्ट तथा पौष्टिक होता है। इसमें कार्बोज, खनिज द्रव्य तथा अन्य पौष्टिक तत्त्वों की अधिकता के कारण ही इसे सभी फलों से उत्तम माना जाता है। इसके सूखे तथा ताजे, दोनों प्रकार के फलों का उपयोग होता है। फलों से शराब (alcohol and wine) भी तैयार की जाती है। यूरोपीय देशों में काफी (fig coffee), अचार (pickle or spiced fig), रोटी (fig bread), मांस (fig meat) तथा ब्राउनीज (fig brownies) के रूप में इसका प्रयोग प्रचलित है।

चिकित्सा में भी इसके फलों का प्रयोग बहुलता से किया जाता है। ये हलके दस्तावर (laxative) तथा स्निग्धकारक (demulscent) होते हैं। अतः ऐसे रोगों में जब आंतों में रुक्षता बढ़ जाती है और कब्जियत हो जाती है, इसका प्रयोग किया जाता है। शर्बत अंजीर (syrup fig) नामक दवा मिलती है, जिसका प्रयोग कब्जियत में करते हैं। इसमें थोड़ी मात्रा में सनाय (senna) भी मिली होती है। इसका प्रयोग बवासीर, यकृद्वृद्धि, कामला तथा बच्चों के जिगर के रोगों में भी लाभदायक होता है।

अनुदैर्घ्य काट में कंपरी अंजीर—पुंकेसरी और अंडपी पुष्प देखे जा सकते हैं

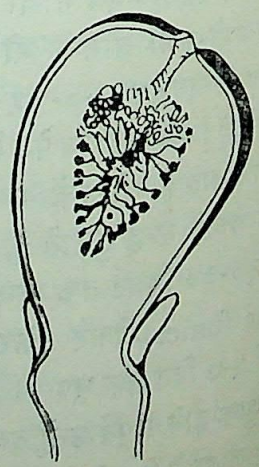

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अण्डपी पुष्प (विवर्धित)

अंजीर की छाल तथा कच्चे फलों से एक प्रकार का गाढ़ा दूध (latex) निकलता है जो दूध को जमा देता है। इस गाढ़े दूध से रिनेट (rennet) तैय्यार किया जाता है जो सामान्य रिन्नेट से ३०–१०० गुना अधिक शक्तिशाली होता है। इसका प्रयोग दूध जमाने, पनीर बनाने, कुछ व्यावसायिक क्रियाओं में तथा ओषधि के रूप में किया जाता है। अन्य कृमियों पर इसका घातक प्रभाव होता है। इसका कार्य इसमें रहने वाले फिसिन (ficin) नामक एक किण्व (enzyne) के कारण होता है, जो विशेषकर आंतों में रहने वाले केंचुओं (Ascaris) को मारता है। इसका प्रयोग सोडा बाईकार्ब (soda bicarb) के साथ मिलाकर मुख द्वारा करना चाहिये, अन्यथा यह आमाशय के अम्ल से नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह मांस को मुलायम बनाने के काम भी आता है। अंजीर की पत्तियों का प्रयोग पशुओं के चारे के रूप में किया जाता है।

खांसी का शत्रु-अडूसा

अडूसा के बारे में एक उक्ति प्रचलित है कि जब तक इसके पौधे पृथ्वी पर विद्यमान हैं, तब तक खांसी, क्षय और रक्तपित्त के रोगियों को हताश होने की आवश्यकता नहीं है। तात्पर्य यह है कि अडूसा इन रोगों की अचूक ओषधि है। यह एक लोकोक्ति ही नहीं, बल्कि प्राचीन चिकित्सा-शास्त्रियों के अनवरत अनुभव पर आधारित सत्य कथन है। आज भी इसके प्रयोग से अनेक रोगों में आशातीत सफलता मिल रही है।

अडूसा हमारे देश के मैदानी भागों में होने वाला ओषधिगुणयुक्त सर्वसुलभ पौधा है। इसे संस्कृत में वासा, वासक, आठरूपक, तथा वृष कहते हैं। देहातों में इसे अडूसा, अरुस, बांसा या बसौंटा कहते हैं। यह एकेंथेसी (*Acanthaceae*) कुल की वनस्पति है और इसका लैटिन नाम एधाटोडा वासिका (*Adhatoda Vasica*) है। पुष्पों के वर्णानुसार इसके दो भेद मिलते हैं—(१) श्वेत पुष्प—इसके पुष्प सफेद रंग के होते हैं। यही जाति अधिकतर उपलब्ध होती है, और (२) कृष्ण पुष्प (या ताम्र पुष्प)—इसे असितवर्ण या कृष्णवासक भी कहते हैं। यह जाति विशेषकर हिमालय के पर्वतीय प्रदेशों में ४,००० फुट की ऊंचाई पर बहुलता से प्राप्त होती है। इसके पौधे ६-१४ फुट ऊंचे होते हैं। पत्ते गहरे रंग (dark colour) के तथा पुष्प ताम्रवर्ण होते हैं। शाखाओं की ग्रन्थियां

पुंकेसरी पुष्प (विवर्धित)

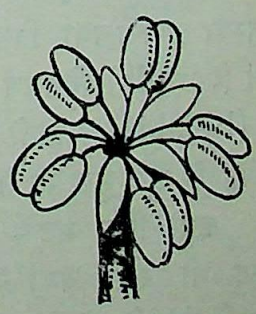

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

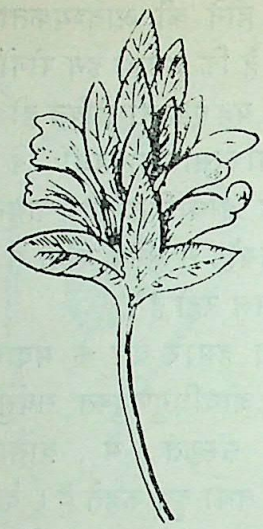

अडूसे की शाखाओं पर एक-एक स्थान से दो पत्र निकलते हैं

रक्ताभ होती हैं। ओषधि की दृष्टि से यह अधिक उपयोगी है।

परिचय

अडूसे(श्वेतपुष्प) के क्षुप ४–८ फुट तक ऊंचे होते हैं और सदाहरित (evergreen) रहते हैं। पत्ते ५–६ इंच लम्बे, १½ इंच चौड़े, भालाकार तथा तीक्ष्णाग्र होते हैं। शाखाओं पर एक-एक स्थान से दो पत्र निकलते हैं जो दोनों तरफ फैले होते हैं।

मध्यशिरा स्पष्ट दीखती है। पत्रवृन्त १–१½ इंच लम्बे होते हैं। शाखाओं के शीर्षभागपर या पत्र-सन्धि से पुष्पमञ्जरियां निकलती है जो २–४ इंच लम्बी, सघन तथा डण्ठलहीन पुष्पों से सुशोभित रहती हैं। पुष्प श्वेतवर्ण के जिनका वाह्यदल (calyx) ⅓–½ इंच लम्बा तथा पंचधा विभक्त होता है। पंखुड़ियां (corolla) श्वेतवर्ण की तथा द्वि-ओष्ठीय (bi-labiate) होती हैं जिससे देखने पर सिंह के खुले मुख की तरह प्रतीत होती हैं। इसी लिए अडूसे का एक नाम सिंहास्य भी रखा गया है। निचले ओष्ठ पर बैंगनीं रंग की दो तिरछी धारियां होती हैं। पंखुड़ी के भीतरी भाग पर रक्ताभ लोहितवर्ण के धब्बे होते हैं। पुंकेसर दो होते हैं। फल (capsule) ⅔ इंच लम्बा, मुद्गराकार, लम्बाई में धारयुक्त (channelled) होता है। प्रत्येक फल में चार बीज होते हैं। शरद्ऋतु में पुष्प लगने लगते हैं।

उत्पत्ति-स्थल

अडूसे के क्षुप प्रायः स्वयंजात अर्थात् अपने से पैदा होते रहते हैं। हमारे देश के मैदानी भागों में सर्वत्र तथा ४,००० फुट की ऊंचाई तक पर्वतीय प्रदेशों में उपलब्ध होते हैं। कृष्णजाति तो अधिकतर पहाड़ी स्थानों पर ही उत्पन्न होती है। अडूसा कड़ी, कंकड़ीली, तथा पथरीली भूमि में समूहबद्ध उत्पन्न होता है। प्रायः रेल लाइनों तथा सड़कों के किनारे पुराने जीर्ण-शीर्ण खण्डहरों में इसके क्षुप बहुलता से मिलते हैं। भारतवर्ष के अतिरिक्त दक्षिणी-पूर्वी एशिया में, विशेषकर बर्मा, सिंगापुर में भी इसके पौधे प्राप्त होते हैं।

रासायनिक विश्लेषण

अडूसे की उपयोगिता को देखते हुए इसके कार्यकारी तत्त्व को पता लगाने के बहुत प्रयत्न वैज्ञानिकों द्वारा किये गये। १८८८ में हूपर ने यह बतलाया कि अडूसे में मुख्यतः दो प्रकार के तत्त्व हैं—एक उड़नशील तैल सदृश गन्धयुक्त पदार्थ तथा दूसरा एल्कलाइड जिसका नाम वासिसिन (vacicine) रखा गया। अन्य वैज्ञानिकों ने भी इन तत्त्वों की उपस्थिति बतलायी। वासिसिन एक रवेदार एल्कलाइड (crystalline alkaloid) है। इसका रासायनिक सूत्र $C_{11}H_{12}N_2O$ है। इसका स्वाद अलग होता है। १९५४ में डा. चोपड़ा तथा डा. गुप्ता ने अडूसे के पत्र, पुष्प तथा मूल में एक पीताभ वर्ण का ०.०७५% उड़नशील तैल (essential oil) पाया। पत्तों में एधाटोडिक अम्ल भी मिलता है। इसके अतिरिक्त इसमें वसा, राल, लुआवदार पदार्थ, शर्करा, पीतरंजक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी अल्पांश में मिलते हैं।

अडूसे को खांसी का शत्रु कहा जाता है। वास्तव में इसके प्रयोग करने से कफ पतला होकर आसानी से निकलने लगता है, और श्वासनलिकाओं का संकोच (spasm) दूर होता है। यह कार्य इसके एल्कलाइड वासिसिन के कारण होता है। इन गुणों के कारण इसका प्रयोग पुरानी खांसी, दमा या श्वासरोग तथा क्षय की सूखी खांसी में बहुत लाभदायक होता है। इन रोगों में इसका ताजा रस, एक्स्ट्रैक्ट, सिरप या टिंक्चर देते हैं। दमा के दौरों को रोकने के लिए इसकी सूखी पत्तियों का धूम्र-पान के रूप में व्यवहार करते हैं।

डा. चोपड़ा तथा उनके सहयोगियों ने परीक्षणों से यह सिद्ध किया है कि अडूसे में पाया जाने वाला उड़नशील तैल क्षयरोग के कीटाणुओं की वर्धनशीलता रोकता है, और क्षय के रोगी को इसके प्रयोग से लाभ हो सकता है। यद्यपि आजकल क्षयरोधक अन्य प्रभावशाली ओषधियां उपलब्ध हैं, परन्तु इस देशीय ओषधि का भी प्रयोगात्मक परीक्षण होना चाहिये, और हो सकता है यह अधिक उपयोगी सिद्ध हो।

तिक्त तथा कषाय होने से अडूसा स्तम्भक (astringent) भी होता है, इस लिए मल के वेग तथा रक्तस्राव को रोकता है, और अतिसार, प्रवाहिका या आंव पड़ने पर इसका सफल प्रयोग होता है। यह उन अवस्थाओं में अधिक हितकर है जब मल के साथ रक्तस्राव भी होता हो, जैसे रक्तातिसार, रक्तमिश्रित आंव गिरना, खूनी बवासीर, रक्तापत्त, रक्तप्रदर तथा रक्तष्ठीवन आदि। वाह्य रक्तस्राव को भी यह रोकता है, तथा, कृमिघ्न होने से त्वचा के रोग और शूलयुक्त स्थानों पर इसका लेप किया जाता है।

अडूसायुक्त ओषधियां

अडूसा के ताजे पत्रों का रस निकालकर प्रायः प्रयोग किया जाता है। पत्तों को थोड़ा गरम करने से आसानी से रस निकल जाता है। पत्तों के अलावा पुष्प तथा मूल की छाल का अधिकतर प्रयोग होता है। अडूसे से बनी हुई बहुत-सी दवाएं बाजार में मिलती हैं। ●

हाईस्कूल और हायर सेकण्डरी कक्षाओं के लिए
हमारे उपयोगी प्रकाशन

१.	**जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : ३·००
२.	**वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : ३·००
३.	**प्रारम्भिक भौतिकी**—दयाप्रसाद खण्डेलवाल	मूल्य : ३·५०
४.	**प्रेक्टिकल जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : २·००
५.	**प्रेक्टिकल वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : २·००
६.	**सामान्य विज्ञान**—मेहरोत्रा, विद्यार्थी, खण्डेलवाल	मूल्य : ६·२५
७.	**सरल माध्यमिक जीव-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी (हायर सेकण्डरी की कक्षा ९ और १० के लिए)	मूल्य : ५·००

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा—३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

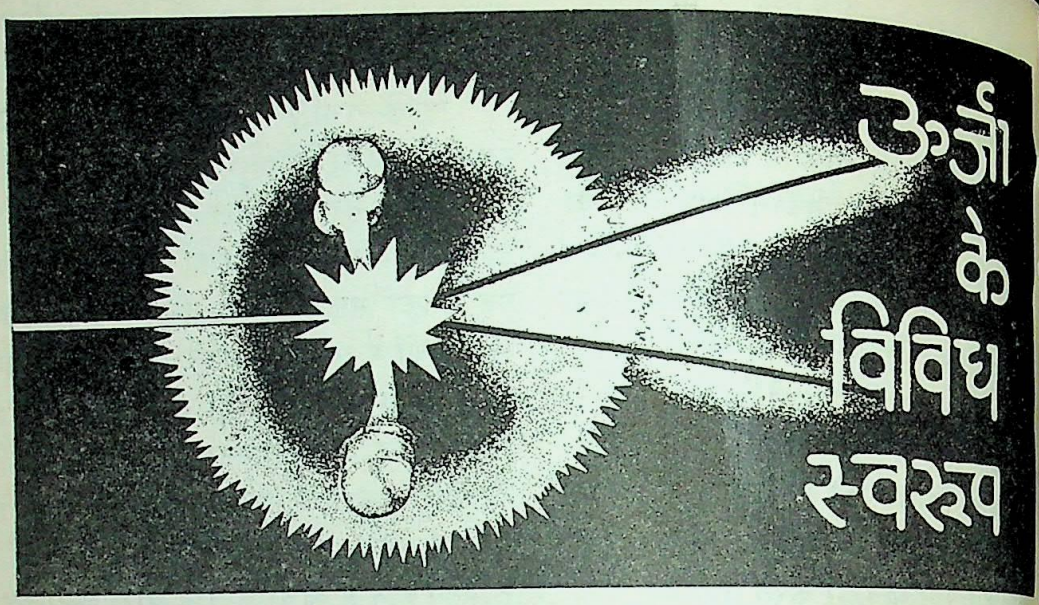

ऊर्जा के विविध स्वरूप

श्यामकुमार तिवारी

प्रकृति के चमत्कारों एवं प्रतिक्षण होने वाली विभिन्न प्रक्रियाओं ने सदैव मानव का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है। सदियों पूर्व जब मानव ने सभ्यता की ओर कदम बढ़ाये, उसने अपने चतुर्दिक होने वाले परिवर्तनों और प्रक्रियाओं का अध्ययन प्रारम्भ किया। आदिम युग में जब मानव जंगली था, वह आधुनिक सभ्यता से कोसों दूर था। फिर भी अनेक तथ्यों से परिचित था, भले ही उनके वैज्ञानिक रहस्य से वह अनभिज्ञ था। उसे यह ज्ञात था कि यदि किसी वस्तु को लक्ष्य करके पत्थर का टुकड़ा फेंके, तो वह लक्ष्य से टकराकर उसे क्षति पहुंचा सकता है। धीरे-धीरे इसी ज्ञान का उपयोग उसने शस्त्र-निर्माण में किया। आज भी अफ्रीका के वन प्रदेशों के आदिवासी एवं अनेक आदिम जातियों के लोग बिना इस रहस्य को जाने अपना जीवनयापन कर रहे हैं।

किन्तु ज्यों-ज्यों विज्ञान का प्रसार हुआ, मानव ने अनेक प्रश्नों पर विचार किया। जब मानव ने ताकत लगाकर फेंके गये हथियार से अपना शिकार किया होगा, तो उसके जिज्ञासु मस्तिष्क में यह प्रश्न अवश्य उठा होगा कि आखिर उस पत्थर में इतनी शक्ति आयी कहां से ? सर्वप्रथम जब न्यूटन ने गति के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, तब 'बल' का विचार वैज्ञानिकों के मस्तिष्क में आया। इसी समय मानव का परिचय 'संवेग' से हुआ। न्यूटन के अनुसार संवेग परिवर्तन की दर आरोपित बल के समानुपाती होती है। उन्नीसवीं सदी के मध्य प्रयोगों के द्वारा यह स्पष्ट हो गया कि किसी गतिशील पिण्ड का बल, उष्मा गति या विद्युत्-चुम्बकीय घटना के रूप में बदला जा सकता है। अतः यह गतिशील बल इस अर्थ में समझा जाने लगा कि यह विभिन्न भौतिक अवस्थाओं में समान रहता है।

ऊर्जा : गति के परिवर्तन को उत्पन्न करने वाला कारण

यंग ने बल की परिभाषा 'गति के परिवर्तन' से स्पष्ट की। सर्वप्रथम मेयर ने ऊर्जा के अविनाशत्व के सिद्धान्त का मात्रात्मक प्रमाण दिया, और हैमहाल्जी ने इसका गणितीय वर्णन उपस्थित किया। फैराडे ने भी लिखा है : 'बल शब्द से मेरा तात्पर्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस कारण से है जो भौतिक गति उत्पन्न करता है।'

इस प्रकार भौतिक-शास्त्री उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में ऊर्जा को गति के परिवर्तन को उत्पन्न करने वाला कारण मानने लगे। ए. बी. स्टांले ने १८८२ में लिखा : 'ऊर्जा गति के कारण को व्यक्त करती है।'

संहति और ऊर्जा को भिन्न मानकर भौतिक-शास्त्रियों ने ऊर्जा को 'काम करने की क्षमता' के रूप में पाया, और इसलिए ऊर्जा का मापन सरल और सम्भव हो गया। मैक्सवेल ने बताया : 'कार्य को ऊर्जा का स्थानान्तरण समझा जा सकता है।' इस प्रकार ऊर्जा का विचार अधिक निखरे रूप में हमारे समक्ष आया।

मेयर तथा जूल के प्रयोगों ने उष्मा को भी ऊर्जा सिद्ध कर दिया। इसके साथ ही वैज्ञानिकों का ध्यान उर्जा के विविध स्वरूपों की ओर आकृष्ट हुआ। सीबेक तथा पेल्टियर के प्रयोगों ने यह दिखा दिया कि उष्मा और विद्युत् शक्ति का परस्पर रूप परिवर्तन हो सकता है। सादी कारनां ने अपने सिद्धान्त से सिद्ध कर दिया कि उष्मा को यान्त्रिक ऊर्जा में बदला जा सकता है। आंरेस्टेड और आर. एल. वर्ल के प्रयोगों से चुम्बकीय ऊर्जा का विद्युत् ऊर्जा में परिवर्तन सिद्ध हो गया। इस प्रकार ऊर्जा परिवर्तन का सिद्धान्त पोषित हुआ।

उपरलिखित सभी विवेचनों से केवल यह आभास मिलता है कि किस प्रकार ऊर्जा का विचार विकसित हुआ। मुख्य प्रश्न है कि ऊर्जा वस्तुतः है क्या ? इस प्रश्न पर सर्वप्रथम एक भौतिक-शास्त्री हेनरी पायनकेयर ने विचार किया किन्तु वह असफल रहा।

वस्तुतः उसकी असफलता का कारण यह था कि उस समय तक द्रव्य को पूर्णरूपेण निष्क्रिय माना जाता था। यंग के ऊर्जा शब्द के अर्थ को ध्यान में रखकर विलियम थामसन (बाद में लार्ड केलविन) ने थर्मोडाइनमिक्स के प्रथम नियम का प्रतिपादन किया। यहीं पर उसने स्थितिज और गतिज ऊर्जा का विचार भी व्यक्त किया।

स्थितिज ऊर्जा

केलविन के अनुसार स्थितिज ऊर्जा वस्तु की विशेष स्थिति के कारण होती है। इसका मापन काम के उस परिमाण से किया जाता है जो वह वस्तु अपनी स्थिति से किसी प्रामाणिक स्थितिमें जाने पर कर सकती है। यदि किसी वस्तु की मात्रा m है और धरातल से h ऊंचाई पर है, तो उसकी स्थितिज ऊर्जा m.g.h. होगी। घड़ी में चाबी लगाने से उसके फनल में खिंचे हुए स्प्रिंग में और उस पर रखे भार में स्थितिज ऊर्जा होती है। यही ऊर्जा घड़ी को गति देती है।

और गतिज ऊर्जा वह ऊर्जा है जो गति के कारण उत्पन्न होती है। यदि m संहति की गतिशील वस्तु का वेग v है तो उसकी गतिज ऊर्जा का माप $^1/_2\ mv^2$ होगा। यद्यपि मानव को इसकी वास्तविकता का ज्ञान काफी समय बाद हुआ, किन्तु इसके प्रयोग से सभी काफी समय से परिचित हैं। हालैण्ड की पवनचक्कियां वायु से ऊर्जा पाकर चलती हैं। झरनों और प्रपातों से चक्की और टरबाइनें चलायी जाती हैं। बन्दूक से जब गोली दागी जाती है, तो उसका वेग बहुत बढ़ जाता है, फलस्वरूप उसका संवेग (momentum) भी बहुत बढ़ जाता है। अतः लक्ष्य से टकराने पर जब लक्ष्य उसके मार्ग में अवरोध उत्पन्न कर देता है, तो ऊर्जा उसे आगे बढ़ने को प्रेरित करती है, और इस प्रकार वह लक्ष्यबेध देती है। अधिकतर सभी आग्नेय शस्त्र इसी सिद्धान्त पर बने हैं।

किन्तु अलबर्ट आइन्स्टीन के सापेक्षवाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सिद्धान्त ने पुराने सिद्धान्तों की सभी जड़ें हिला दीं। ऊर्जा के सम्बन्ध में मान्य सभी विचार एकदम बदल गये। वस्तुतः आइन्स्टीन परमाणु युग का प्रमुख वैज्ञानिक था। उसके सिद्धान्त से अनेक नये तथ्य जो प्रायोगिक रूप से भी सत्य हैं, सम्मुख आये।

आइन्स्टीन के अनुसार किसी भी संहति को ऊर्जा में बदला जा सकता है। इस प्रकार संहति का पूर्णतः अक्रिय समझा जाना गलत साबित हुआ। इस महान् वैज्ञानिक ने प्राचीन परम्परा को तोड़कर ऊर्जा का एक विशाल स्रोत और क्षेत्र हमारे लिए उपलब्ध किया, और परमाणु ऊर्जा का स्रोत वैज्ञानिकों के हाथ लगा।

यूं तो परमाणु युग का प्रारम्भ आइन्स्टीन से ही हुआ, किन्तु कुछ समय पूर्व बैक्यूरल ने रेडियोधर्मिता का पता लगाया था। बैक्यूरल ने यह भी देखा कि कुछ पदार्थ ऐसी किरणें निकालते हैं जिनसे फोटोग्राफी की प्लेट पर असर पड़ता, और जो पदार्थों को भेदकर बाहर निकल जाती हैं। यह भी ज्ञात हुआ कि ये रश्मियां गैसों का आयनीकरण कर देती हैं। फलतः यह माना गया कि प्रकृति में कुछ ऐसे पदार्थ हैं जो अनवरत कुछ रश्मियां निकालते हैं और ये रश्मियां ऊर्जा का स्रोत भी हैं।

प्रकृति का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिकों को परमाणु के गूढ़ अध्ययन की आवश्यकता हुई। अतः वैज्ञानिकों ने परमाणु-रचना की ओर विशेष ध्यान दिया। प्रसिद्ध वैज्ञानिक नील बोहर ने परमाणु का विशेष अध्ययन किया और एक माडल तैयार किया जिसे 'बोहर का परमाणु माडल' कहते हैं। उसने बताया कि इलेक्ट्रान विभिन्न ऊर्जा-स्तरों पर अपनी कक्षा (orbit) में घूमते हैं, और ये कक्षाएं गोलाकार होती हैं। एक कक्षा में घूमने वाले इलेक्ट्रान लगभग एक-सी ऊर्जा वाले होते हैं। जब कभी इन ऊर्जा-स्तरों को

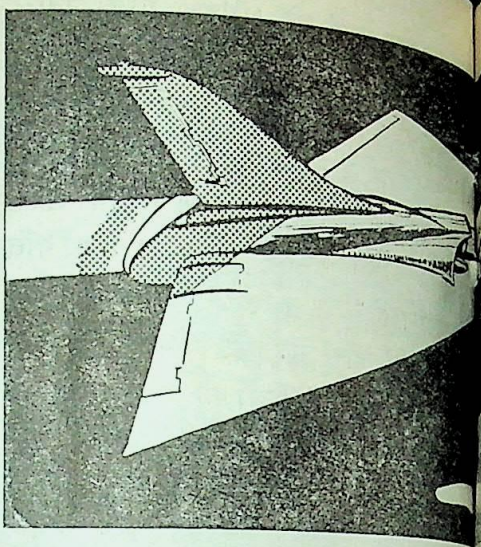

वैज्ञानिकों ने आशा व्यक्त की है कि वर्तमान शताब्दी के यानों में ऐसे यान ध्वनि की रफ्तार से उड़ें

परिवर्तित करके ये इक्लेट्रान स्तर बदलते हैं, तो प्रकाश वर्णपट प्राप्त होता है। बाद में इस मत में परिवर्तन एवं संशोधन हुए क्योंकि इन अनुमानों से वर्णपट निर्माण को तो समझाया जा सकता है, किन्तु उत्तम वर्णपट (fine spectrum) के निर्माण का कारण नहीं समझाया जा सकता। (एक ही वर्णपट रेखा जब किसी चुम्बकीय या अन्य क्षेत्र में रखी जाती है, तो यह कई लाइनों में टूट जाती है। इस प्रकार बना वर्णपट उत्तम वर्णपट (fine spectrum) कहलाता है।) अतः कक्षा को दीर्घ वृताकार माना गया। एक कक्ष के इलेक्ट्रान को एक ही ऊर्जा स्तर पर माना जाना गलत कहा गया।

मूलभूत कणों की संख्या अधिक हो गयी

अरम्भिक मतों के अनुसार परमाणु के नाभिक का निर्माण प्रोटान और न्यूट्रान कणों से मिलकर हुआ है। इलैक्ट्रान अपनी परिधि में नाभिक के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। इन कणों को मूलभूत कण (elementary particles) कहा गया। बाद में अन्य कणों की खोज की गयी। इस प्रकार आधुनिक मतानुसार मूलभूत कणों की संख्या केवल तीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

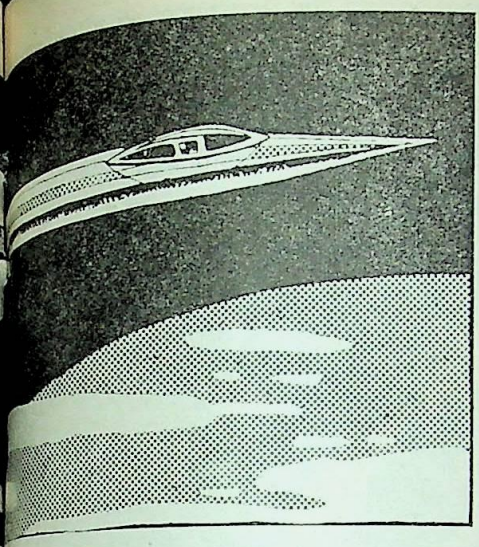

यानों में परमाणु ऊर्जा का उपयोग होने लगेगा
से उड़ेंगे

(प्रोटान, न्यूट्रान, इलैक्ट्रान) न होकर अधिक हो गयी है।

१९३९ में जरमन वैज्ञानिक आटो हान ने खोजा कि जब यूरेनियम-२३८ का तेज गति वाले न्यूट्रान कणों के साथ संघट्ट होता है तो बेरियम का एक आइसोटोप बनता है। इस नये आइसोटोप का परमाणु-भार यूरेनियम के परमाणु-भार का लगभग आधा है। इस प्रकार लगभग २०० M. E. V. ऊर्जा उत्पन्न हुई। यह क्रिया तत्कालीन ज्ञात क्रियाओं से सर्वथा भिन्न थी, क्योंकि इस क्रिया में यूरेनियम का परमाणु लगभग दो समान परमाणुओं में टूट गया था। इस क्रिया का नाम न्यूक्लियर फिसन (nuclear fission) दिया गया। प्रक्रिया को निम्नलिखित रासायनिक समीकरण से दर्शाया जाता है—

$$^{U^{238}}_{92} + ^{n^1}_{0} \rightarrow Ba^{148}_{56} + Kr^{88}_{36} + 3n^1_0$$

वस्तुतः यह यूरेनियम परमाणु और भी अनेक परमाणुओं में टूट सकता है। इसी सिद्धान्त पर परमाणु बम का निर्माण किया गया। परमाणु बम में एक परमाणु-भ्राष्ट बनायी जाती है जिसमें यूरेनियम-२३५ को ईंधन के रूप में काम में लाते हैं। इसमें कार्बन के ब्लाक बनाये जाते हैं और इन ब्लाकों में छेद कर दिये जाते हैं। इन छेदों में यूरेनियम-२३५ भर दिया जाता है, और इसे एल्यूमीनियम के डब्बों में सील कर दिया जाता है। इसे पाइल कहते हैं। इस का ताप बर्फ के प्रभाव से ठण्डा रखा जाता है। प्रक्रिया की नियन्त्रक छड़ों के रूप में कैडमियम (Cd) की छड़ें काम में लायी जाती हैं। कैडमियम का परमाणु न्यूट्रान का प्रमुख शोषक है, अतः इसके द्वारा प्रक्रिया का नियन्त्रण सम्भव है।

न्यूट्रान कण पोलोनियम से प्राप्त α कणों की बेरेलियम पर क्रिया से प्राप्त होते हैं। इन कणों की गति प्रारम्भ में बहुत तेज होती है। अतः इसको कम करने के लिए इन्हें मोम या कार्बन की तहों से गुजारते हैं। ये कण जब-जब U-२३५ से क्रिया करते हैं, तो पूर्व कथनानुसार फिसन (दो बराबर भागों में टूटने की क्रिया) सम्भव होती है और इससे और अधिक न्यूट्रान प्राप्त होते हैं। इन न्यूट्रान कणों की गति पुनः मोम से गुजारकर मन्द कर देते हैं। ये पुनः U-२३५ से क्रिया करते हैं। इस प्रकार अनवरत रूप से यह क्रिया चलती रहती है।

प्रयोगों से पता चला है कि यदि U-२३५ की संहति एक निश्चित मात्रा से कम होगी, तो फिसन की क्रिया नहीं होगी। अतः परमाणु बम में दो या अधिक U-२३५ के पिण्ड जिनकी मात्रा इस निश्चित मात्रा जिसे क्रान्तित संहति (critical mass) कहते हैं, कम होती है, लिये जाते हैं। यदि इन पिण्डों के बीच एक तीसरा या अन्य पिण्ड (जिसकी संहति भी क्रान्तित संहति से कम हो, किन्तु कुल पिण्डों का भार क्रान्तित मात्रा से अधिक हो) बैठा दिया जाय, तो इस प्रकार कुल पिण्डों का भार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रान्तित भार से अधिक हो जायगा और इस प्रकार फिसन क्रिया सम्भव हो सकेगी। यह क्रिया इतनी तीव्र होती है कि इस पर नियन्त्रण कठिन ही नहीं असम्भव हो जाता है। इससे विशाल ऊर्जा प्राप्त होती है। परमाणु बम का जहां विस्फोट कराना होता है वहीं पूर्वोक्त रीति से दोनों पिंडों के बीच सम्पर्क स्थापित हो जाता है।

सम्पर्क स्थापित कराते ही इस पर न्यूट्रान कणों की बौछार आरम्भ हो जाती है।

हिरोशिमा पर जो बम गिराया गया था उसमें U-२३५ और नागासाकी में प्लूटोनिनम-२३९ का प्रयोग किया गया था।

इसके विपरीत उद्जन बम (hydrogen-bomb) में U-२३५ प्रक्रिया के स्थान पर हलके परमाणुओं को 'फ्यूज' करके भारी परमाणु बनाते हैं। उद्जन परमाणु मिलकर हीलियम या दूसरे भारी परमाणु बनाते हैं, और इस क्रिया में ऊर्जा उत्पन्न होती है, उदाहरणार्थ—

$$\underset{1}{H^2}+\underset{1}{H^2}\rightarrow\underset{2}{H^4}+91\times10^9\ \text{cal}$$

$$\underset{1}{H^2}+\underset{1}{H^2}\rightarrow\underset{1}{H_e^3}+\underset{0}{n^1}+10^9\ \text{cal}$$

सूर्य : ऊर्जा का स्रोत

सूर्य ऊर्जा की एक वृहद् मात्रा वायुमण्डल में प्रति क्षण देता रहता है। प्रकाश और उष्मा के रूप में अज्ञात समय से पृथ्वी और सौर-मण्डल के अन्य ग्रह इससे ऊर्जा प्राप्त करते रहे हैं। किन्तु परमाणु-प्रक्रियाओं के ज्ञान के पूर्व सौर ऊर्जा के रहस्य को समझना या इस प्रश्न का उत्तर कि प्रतिक्षण ऊर्जा का विकिरण करने वाला सूर्य ठण्डा क्यों नहीं होता, जटिल ही नहीं असम्भव भी था।

बेथ ने १९३८ में सर्वप्रथम सौर-ऊर्जा के प्रश्न पर विचार किया। उसने यह पता लगाया कि सूयमण्डल का ताप लगभग २० × १०^{६} ° सें. है। इस ताप पर वहां पाये जाने वाले सभी परमाणु अपने अतिरिक्त इलेक्ट्रानों (extra nuclear electrons) को निकाल देंगे। बेथ ने कल्पना की कि निम्नलिखित प्रक्रिया सूर्य में होती है—

$$\underset{1}{H^1}+\underset{6}{C^{12}}\longrightarrow\underset{7}{N^{13}}+r\ \text{rays}\ (\text{गा.कि.})$$

$$\underset{6}{C^{13}}+1e^{\circ}+r\ \text{rays}\longleftarrow$$

$$\underset{1}{H^1}+\underset{6}{C^{13}}\rightarrow\underset{7}{N^{14}}+r\ \text{rays}$$

$$\underset{1}{H^1}+\underset{7}{N^{14}}\rightarrow\underset{8}{O^{15}}+r\ \text{rays}$$

$$\downarrow$$

$$_{7}N^{15}+1e^{\circ}+r\ \text{rays}\ldots$$

इन गामा किरणों से प्राप्त ऊर्जा दृश्य वर्णपट, अल्ट्रा-वायलेट और इन्फ्रा लाल किरणों तथा उष्मा के रूप में हम तक आती है। सूर्य से हम ३·८ × १०^{33} अर्ग ऊर्जा प्रति सेकेण्ड प्राप्त करते हैं।

ब्रह्माण्ड किरणें

सूर्य के अतिरिक्त ऊर्जा का अन्य स्रोत ब्रह्माण्ड किरणें हैं। इनकी खोज प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व हुई थी। १९०० में सी. टी. आर. विल्सन ने कैम्ब्रिज में और एच. गाइटलड ने जरमनी में पृथक्-पृथक अपने इलेक्ट्रोस्कोपों में एक आश्चर्यजनक घटना देखी। उनका निरीक्षण था कि पूर्णरूपेण पृथग्नस्थ होने पर भी यन्त्र में ऊर्जा का निरन्तर ह्रास हो रहा था। आरम्भ में इसे पृथ्वी के रेडियोधर्मी पदार्थ से निकली रेडियोसक्रिय किरणों के कारण माना गया। इसकी व्याख्या इस प्रकार की गयी कि ये किरणें विद्युत्दर्शी के अन्दर आयनीकरण कर देती हैं, फलतः विद्युतावेश कम हो जाता है।

१९१० में इस प्रकार के प्रयोगों को पृथ्वी के ऊपर और विभिन्न ऊंचाइयों पर किया गया, तो देखा गया कि ऐसा ह्रास बढ़ने लगा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

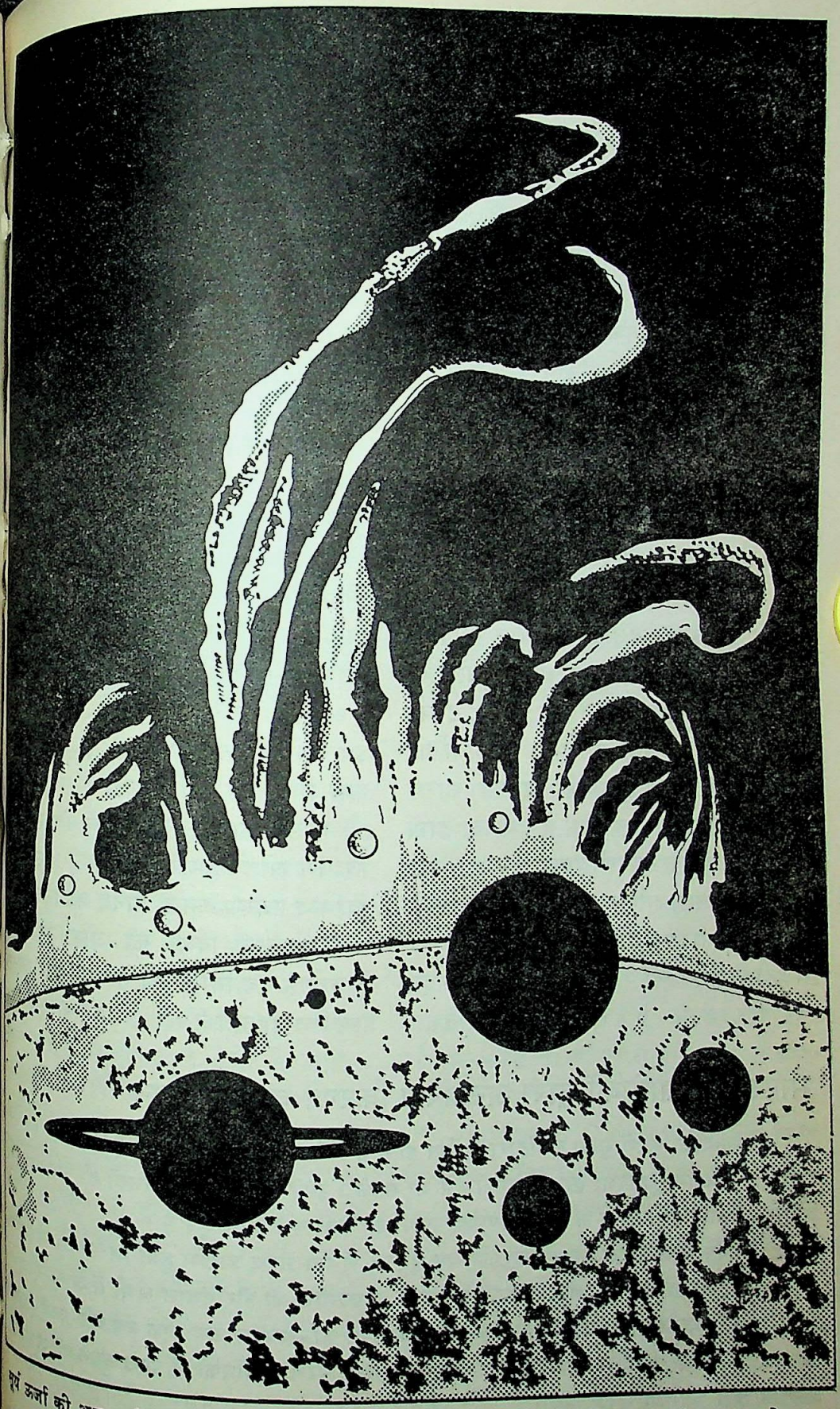

सूर्य ऊर्जा की अकल्पनीय मात्रा वायुमण्डल में प्रति क्षण बिखेरता रहता है। प्रकाश और उष्मा के रूप में अज्ञात समय से पृथ्वी और सौरमण्डल के अन्य ग्रह इससे ऊर्जा प्राप्त करते रहे हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि यह आयनीकरण पूर्वकथनानुसार पृथ्वी की रेडियोसक्रिय किरणों के कारण होता, तो इसकी दर ऊंचाई बढ़ने पर कम हो जानी चाहिये थी। तब यह निष्कर्ष निकाला गया कि यह आयनीकरण पृथ्वी की गामा किरणों से नहीं, अपितु वायुमण्डल से आने वाली किरणों से हुआ। ब्रह्माण्ड से आने के कारण इन्हें ब्रह्माण्ड किरणें (cosmic rays) कहा गया। वैज्ञानिकों की धारणा थी कि ये किरणें सूर्य से आती हैं, किन्तु रात में प्रयोग करने पर भी इस प्रकार की किरणों की उपस्थिति का ज्ञान हुआ, अतः पूर्णरूपेण यह सिद्ध हो गया कि दूर अन्तरिक्ष से इस प्रकार की किरणें आती हैं।

अति ऊर्जायुक्त अन्तरिक्ष किरणें

अन्तरिक्ष किरणें ऊर्जा का प्रमुख स्रोत हैं। ये ऊंचे वायुमण्डल को चीरकर समुद्र में भी लगभग १,००० मीटर तक पहुंचती हैं। इससे इस बात का पता चलता है कि इनका शोषण एक्स रश्मियों या गामा रश्मियों की अपेक्षा बहुत कम होता है। इसका कारण इनका अति ऊर्जायुक्त होना है। गणना द्वारा पता चला है कि सम्पूर्ण वायुमण्डल को पार करने में जितना शोषण इनका होता है, पानी की १०.३ मीटर मोटी तह उतना शोषण कर सकती है। लेड की २० सें. मी. मोटी चादर को पार करने में लगभग ५० प्रतिशत ब्रह्माण्ड किरणों का शोषण हो जाता है।

प्रश्न उठता है कि ब्रह्माण्ड किरणें आयीं कहां से? मिलीकन ने बताया कि ब्रह्माण्ड किरणें आइन्स्टीन के सिद्धान्त के अनुसार मात्रा के ऊर्जा में परिवर्तन से प्राप्त होती हैं। ब्रह्माण्ड किरणें दो प्रकार की होती हैं—(१) मृदु भाग—इसका शोषण लेड की १० से. मी. तह द्वारा होता है। और (२) कठोर भाग—यह १०० सें. मी. लेड की तह भी पार कर जाती है।

न इलेक्ट्रान, न प्रोटान

कठोर ब्रह्माण्ड किरणों का पथ जब बादल कक्ष (cloud chamber) में देखते हैं, तो इसका पथ इलेक्ट्रान की भांति दिखायी देता है, किन्तु चुम्बकीय क्षेत्र में इनका झुकाव तथा आयनीकरण घनत्व (ionization density) इस बात को सिद्ध करते हैं कि ये न तो इलेक्ट्रान हैं और न प्रोटान। इनके कण का भार १०० तथा ३०० m. c. के बीच आया। इन कणों का नाम मेसान (Meson) रखा गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ऊर्जा का विशाल स्रोत हमारे सम्मुख है। ऊर्जा के विभिन्न स्वरूप आज मानव को निर्माण की उस अनजानी दिशा की ओर मोड़ रहे हैं जहां से नव निर्माण के भास्कर का आलोक प्रस्फुटित हो रहा है। •

भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा अन्तरिक्ष किरणों का अध्ययन

अन्तरिक्ष किरणें सूक्ष्म कणोंद्वारा निर्मित होती हैं। ये कण इतने सूक्ष्म होते हैं कि आंख तो क्या, संसार के श्रेष्ठतम सूक्ष्मदर्शी द्वारा भी नहीं देखे जा सकते। इनके अध्ययन से नाभिकों की संरचना तथा अन्तरिक्ष-विज्ञान के सम्बन्ध में अनेक उपयोगी तथ्यों की जानकारी प्राप्त हुई है।

भारत में अन्तरिक्ष किरणों का अध्ययन १९२६ में उस समय प्रारम्भ हुआ था जब अमरीका के प्रसिद्ध भौतिक-शास्त्री प्रो. आर्थर एच. काम्पटन ने कश्मीर की पीर पंजाल श्रेणी में अध्ययन प्रारम्भ किया था। किन्तु भारतीय वैज्ञानिकों ने अन्तरिक्ष किरणों का अध्ययन प्रायः एक दशाब्दी बाद प्रारम्भ किया। भारतीय वैज्ञानिक अब इनके अध्ययन द्वारा परमाणुनाभिकों में इनके घुसने की क्षमता का अनुमान लगा रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

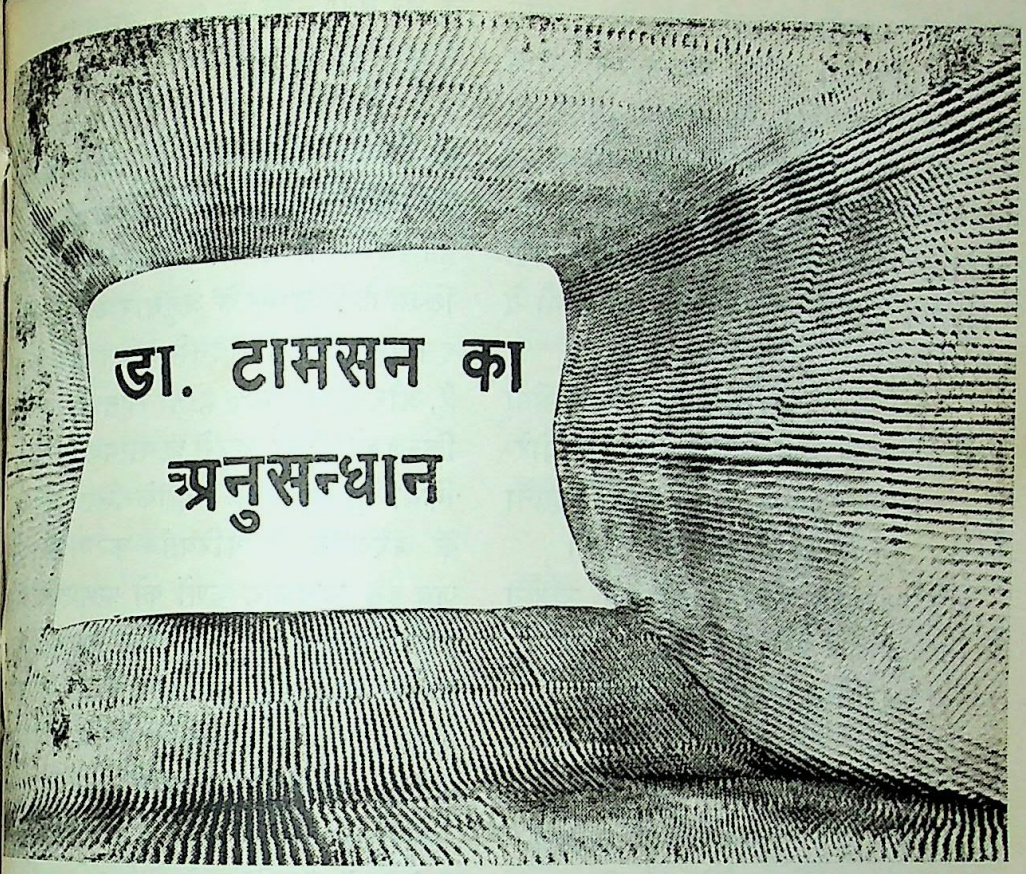

डा. टामसन का अनुसन्धान

जी. नदकर्णी

शाम लगभग बीत चुकी थी। इकबाल मुझे लेकर वेंगर्स पहुंचा। हम जल्दी-जल्दी सीढ़ियां चढ़ गये। प्रेस लाउंज में संवाददाता आ चुके थे और चाय पी रहे थे। अभी कान्फ्रेंस नहीं शुरू हुई थी। हम अपने दोस्तों के साथ जा बैठे। कई नये चेहरों से हमने परिचय किया। हमने चाय पी। इसी बीच डा. टामसन हाथ में बैग लिये हुए बहुत तेजी से आये। उन्होंने हैट उतारकर हम सबका अभिवादन किया और अपनी कुर्सी पर बैठ गये। उनके थोड़ा ही पीछे दो-तीन फाइलें लिये हुए उनका सहायक आया। वह डा. टामसन के नजदीक एक कुरसी पर बैठ गया और अपनी फाइलें हाल के उस मेज पर रख दीं जिस पर डा. टामसन ने अपना बैग रखा था। कुछ देर के बाद उठकर वह बोला, "दोस्तो, मैं जरूरी नहीं समझता कि लिबर्टी पुरस्कार विजेता डा. टामसन का विस्तृत परिचय आपको दूं। आप एक अंगरेज डाक्टर हैं। ह्यूमन बाडी के जीवित कोष में मेटाबालिज्म और प्रोटोप्लाज्म को कंट्रोल करने के लिए आपने एक विधि का आविष्कार किया है। आपकी सहायता से डा. टामसन अपने विचार, कि जीवन और मृत्यु दो आम दृश्य हैं और इन पर कण्ट्रोल रखा जा सकता है, अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाना चाहते हैं।

"डा. टामसन का अनुसन्धान रोचक और साधारण व्यक्ति की समझ में आ जाने लायक है, फिर भी इसका थ्योरेटिकल आस्पेक्ट बहुत उलझा हुआ है। व्यक्ति एक विद्युत् आवेशयुक्त कक्ष में रखा जाता है, जहां हाई फ्रिक्वेंसी की इलेक्ट्रो-मैगनेटिक वेब्ज बहती हैं। व्यक्ति का शरीर भी विद्युत् आवेश-युक्त किया जाता है। वह अपने शरीर में एक असाधारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तबदीली महसूस करता है। यह प्रयोग कंट्रोल्ड होता है। कृत्रिम रूप से व्यक्ति के शरीर में मेटाबालिज्म की रफ्तार बढ़ायी जा सकती है, या प्रोटोप्लाज्म में परिवर्तन लाकर पूर्व की मेटाबालिक क्रियाओं का प्रभाव कम किया जा सकता है। इस तरह व्यक्ति अपनी वास्तविक उम्र से अधिक या कम दिखायी दे सकता है।

"अब मैं डाक्टर टामसन से प्रार्थना करूंगा कि वे अपने आविष्कार का थ्योरेटिकल आस्पेक्ट आपके सामने रखें।" इतना कहकर टामसन का सहायक बैठ गया।

डा. टामसन उठे। सबसे पहले उन्होंने बाइबिल से कोट किया:

टु एवरी थिंग देयर इज ए सीजन,
एण्ड ए टाइम टु एवरी परपज
अण्डर द हैवेन···
(हर चीज के लिए एक समय होता है,
और प्रकृति में हर उद्देश्य के लिए एक
समय···)

डा. टामसन थोड़ी देर तक खामोश रहे। उनके चेहरे पर सिकुड़नें उभर आयीं। वे बड़ी गम्भीरता से नीचे देख रहे थे। दो-तीन मिनट तक चुप रहने के बाद उन्होंने कहा, "मैं हवाई जहाज से ब्रुसेल्स से हिन्दुस्तान लौट रहा था। मेरे साथ एक हिन्दुस्तानी वैज्ञानिक भी बम्बई आ रहे थे। मेरे प्रयोगों के बारे में उन्होंने किसी अमरीकी पत्रिका में पढ़ा था। मुझसे कहने लगे, 'डा. टामसन, आपके प्रयोगों के सम्बन्ध में पढ़कर नैथेनियल हाथर्न की एक कहानी की याद आ गयी।' मैंने उन्हें बताया कि मेरा प्रयोग दूसरा है। मैंने कोई पीने की दवा नहीं ईजाद की है, और मैं आदमी को जवान भी बना सकता हूं, बूढ़ा भी।

"मैंने एक उलझी हुई थ्योरी दुनिया के सामने रखी है। बहुत से वैज्ञानिक मेरी थ्योरी से सहमत नहीं हैं, लेकिन मैं जानता हूं, हर नयी चीज को पहले मुखालफत के दौर से गुजरना पड़ता है।

"मैंने यह माना है कि प्रोटोप्लाज्म पर ही जिन्दगी और मौत का सवाल टिका है। प्रोटोप्लाज्म मैगनेटिक पार्टिकिल्ज द्वारा बना है। इन मैगनेटिक पार्टिकिल्ज के दो ध्रुव मैगनेटिज्म के सिद्धान्त के अनुसार अरेंज्ड होते हैं। इस तरह लगातार इनसे शक्ति मिलती रहती है, और इनका डिके होता रहता है। इन पार्टिकिल्ज को कृत्रिम रूप से ऋणात्मक या धनात्मक किया जा सकता है। इसके लिए इनके ध्रुवों के अरेंजमेंट में परिवर्तन करना पड़ता है। जब इन चुम्बकीय कणों को ऋणात्मक किया जाता है तो ये बाहर से शक्ति चाहते हैं। यदि बाहरी शक्ति जो इलेक्ट्रिक चार्जेज के रूप में होती है, इन्हें दी जाय, तो निश्चत मात्रा पर व्यक्ति की उम्र के निश्चित वर्ष कम होते जायेंगे। जब मैगनेटिक पार्टिकिल्ज धनात्मक किये जाते हैं, तो इनसे शक्ति निकलती है। शक्ति की जितनी भी मात्रा निकलती जायगी, उसी अनुपात में आदमी बूढ़ा होता जायगा। मेरा प्रयोग इसी सिद्धान्त पर आधारित है।" इतना कहकर डा. टामसन बैठ गये और हमसे प्रश्न पूछने के लिए कहा।

कई संवाददाताओं ने प्रश्न पूछे।

"क्या आपका यह मत है कि मृत्यु को नियन्त्रित किया जा सकता है?"

"यह सही है, लेकिन एक सीमा तक। प्रोटोप्लाज्म के मैगनेटिक पार्टिकिल्ज, एक समय ऐसा आयेगा जब उदासीन होकर टूट जायेंगे, लेकिन जब तक वे ऐक्टिव हैं, मृत्यु को कंट्रोल में रखा जा सकता है।"

"क्या यह सम्भव है कि दुनिया के सब लोगों की उम्र में से दस-दस वर्ष कम हो जाय?"

"यह सम्भव है, लेकिन मृत्यु के नजदीक पहुंचकर उम्र कम कराना ठीक रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं नहीं समझता कि पांच वर्ष के बच्चे की उम्र इस प्रकार दस वर्ष कम की जा सकती है।"

डा. टामसन की इस बात पर काफी देर तक संवाददाता हंसते रहे। फिर प्रश्नों की झड़ी लग गयी :

"क्या आप यह मानते है कि आपका प्रयोग व्यक्ति को अमरत्व की ओर ले जायेगा ?"

"हां, पर एक तरह से।"

"क्या आप यह मानते हैं कि इन चुम्बकीय कणों पर आक्षांस और देशान्तर का असर पड़ता है ?

"हां, जरूर।"

"क्या उम्र के परिवर्तन के साथ-साथ स्वभाव-परिवर्तन भी होता है ?"

"बिना किसी शक के। यह एक मामूली बात है।..."

काफी देर तक प्रश्न पूछे जाते रहे। भारतीय और विदेशी पत्रों के पचास से अधिक प्रतिनिधियों ने डा. टामसन के प्रयोग के सम्बन्ध में अधिक से अधिक जानकारी पाने की कोशिश की। आखिरी बार चाय और नमकीन का एक और दौर चला, फिर संवाददाता डा. टामसन को धन्यवाद देकर बिखरने लगे।

इकबाल मेरा साथ छोड़कर डा. टामसन की ओर चला गया। उनसे कुछ बातें करने लगा। इस बीच मैंने टेलीग्राम का टेक्स्ट तैयार कर लिया।

इकबाल जब डा. टामसन के पास से आया तो फिर हम साथ-साथ सीढ़ियों की ओर बढ़े। नीचे आकर उसने बताया कि डा. टामसन ने अपनी प्रयोगशाला में मिलने के लिए अगले इतवार का समय दिया है, और वे उस दिन अपना प्रयोग भी दिखायेंगे। इकबाल ने मुझे सलाह दी कि मैं अपना मूवी कैमरा मय रीलों के उस दिन के लिए तैयार रखूं।

मुझे और इकबाल को लान के गेट पर पर देखकर पोर्टिकों में खड़ा झबरा कुत्ता जोर-जोर से भूंकने लगा। माली जो पौधों को पानी दे रहा था, दौड़कर उसे रोकने गया। हमने उससे बताया कि डा. टामसन से मिलने आये हैं। वह हमें एक कमरे में ले गया और बैठने के लिए कहा। फिर वह कुत्ते के साथ भीतर चला गया।

थोड़ी देर में सफेद पतलून और काली जाकेट पहने हुए एक व्यक्ति कमरे में आया। उसने हमसे हमारा परिचय पूछा, फिर मेरी ओर देखते हुए मुस्कराकर बोला, "तो आप लोग डाक्टर के प्रयोग की फिल्म भी उतारेंगे?"

इकबाल ने हंसकर कहा, "प्रेस का काम बहुत कठिन है। एक बड़ी जिम्मेदारी हमें निभानी पड़ती है—वाइड एण्ड जेन्युइन कवरेज।"

"ओह, यस। दैट'ज ट्रू।"

हमें वह व्यक्ति करीब आधे घण्टे तक बैठने के लिए कहकर चला गया।

टेबिल पर कुछ किताबें और साइंस मैग्जीन्स पड़ी थीं। वह कमरा शायद आगन्तुकों के लिए बैठकर इन्तजार करने का था। दो सोफे के अलावा तीन-चार कुर्सियां थीं और दीवार पर लटकता हुआ कैलेण्डर।

हम मैगजीन के पन्ने पलटते हुए इन्तजार करने लगे।

ठीक समय से वही व्यक्ति आया। हमसे उसने बताया कि डाक्टर साहब अपनी प्रयोगशाला में हमें बुला रहे हैं।

हम उस व्यक्ति के पीछे-पीछे चलने लगे। एक लम्बा गलियारा पारकर आंगन में आये, फिर लम्बे बरामदे से होकर गुजरे। भीतर आकर ही मालूम हुआ कि वह कोठी कितनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी है। बरामदे के बाद एक छोटा-सा लान था और लान के बाद डा. टामसन की प्रयोगशाला।

प्रयोगशाला अन्दर से अद्भुत थी। अन्दर कई कक्ष थे। जिन कक्षों से हम होकर गुजरे थे उनकी दीवारों पर सिर्फ मीटर ही मीटर दिखायी पड़े थे। फर्श पर बड़ी-बड़ी मशीनें थीं जिन्हें देखकर यह अन्दाजा लगता था कि इनके चलने पर काफी आवाज होती होगी। पर जिस व्यक्ति के साथ हम चल रहे थे, उसने बताया कि इन मशीनों के चलने पर जरा भी आवाज नहीं होती।

हम डा. टामसन के कक्ष में पहुंचे। उनकी मुद्रा से लगा कि वे हमारा इन्तजार कर रहे थे। वे एक कोने में खड़े थे और उनके हाथ में शीशे का एक उपकरण था। उनके चेहरे पर अजीब सौम्यता फैली थी।

हमारा अभिवादन करके उन्होंने हमें बैठने के लिए कहा, फिर हमारे नजदीक ही एक कुर्सी पर खुद बैठ गये।

डाक्टर ने हमसे चाय पीने ने लिए कहा और हमारे मना करते रहने पर भी उन्होंने इण्टरकाम पर चाय लाने के लिए कह दिया। मैंने उनसे कहा, "डाक्टर टामसन, हम आपका प्रयोग देखेंगे और उसकी फिल्म लेंगे। मैं चाहता हूं, अपना काम अभी से शुरू कर दें। कृपया आप गम्भीर मुद्रा में बैठिए।

डा. टामसन मुस्कराये। उन्होंने कहा, "मैं ऐक्टर नहीं हूं। आप नेचुरल तस्वीरें लीजिए।" इतना कहकर वे खड़े हो गये। अपने हाथ में शीशे का वह उपकरण थामे सामने दीवार की ओर देखने लगे। कमरे में रोशनी काफी थी, और मुझे डाक्टर से अतिरिक्त रोशनी के लिए कहना नहीं पड़ा। इकबाल ने कुछ स्नैप्स लिये और मैंने मूवी कैमरे की रील चला दी। दो-तीन सेकण्ड के बाद मैंने कैमरा रोक दिया। इकबाल ने टेप-रिकार्डर स्टार्ट करके मेज के के नीचे रख दिया। डाक्टर से उसने बैठने का अनुरोध किया। डाक्टर बैठ गये। मैं फिर कोने में चला गया। इकबाल प्रश्न पूछने लगा, "ह्वाट इज लाइफ ऐज यू नो इट···ह्वाट आर डी एन ए, आर एन ए···"

इकबाल के प्रश्नों का डाक्टर संक्षिप्त उत्तर देते रहे, और मैं चित्र लेता गया।

कुछ देर बाद चाय आयी। हमने सब काम रोककर चाय पीनी शुरू की। इस बात की हमें प्रसन्नता हो रही थी कि हममें डाक्टर काफी रुचि ले रहे थे। उन-जैसा अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त व्यक्ति इतना सौम्य हो सकता है, इसका आभास मुझे उसी दिन हुआ।

चाय के बाद डाक्टर हमें उस कमरे में ले गये, जहां वह अद्भुत प्रयोग हम देखने वाले थे। वह कमरा बड़ा विचित्र था। उसकी दीवारें जैसे लोहे के स्प्रिंग्स की बनी थीं। कमरे के बाहर बहुत से यन्त्र और मीटर लगे थे। डाक्टर ने इकबाल से कहा, "यह प्रयोग मैं आप पर करूं तो कैसा रहे?"

इकबाल एक क्षण के लिए घबरा-सा गया। यह उसके चेहरे से प्रकट हो रहा था। फिर संयत होता हुआ बोला, "मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी।"

डाक्टर ने उससे कहा, "आप उस कुर्सी पर जाकर बैठ जाइए। हम बाहर ही ठहरेंगे।"

इकबाल डाक्टर की बात मानकर कमरे में बढ़ा। उसकी चाल से लग रहा था कि वह कुछ डरा और सहमा हुआ है। डाक्टर ने कहा, "डोंट बी नर्वस। इट'ज जस्ट ए गेम।"

इकबाल कुरसी पर जाकर बैठ गया। डाक्टर ने कहा, "मैं इकबाल की उम्र लगभग बीस वर्ष कम कर रहा हूं।"

मेरे कैमरे का लैंस इकबाल की ओर था। डाक्टर ने एक बटन दबाया। इकबाल उसी तरह कुर्सी पर बैठा रहा। कोई अतिरिक्त ध्वनि नहीं हुई, न ही कोई आश्चर्यजनक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घटना घटी। इकबाल का चेहरा थोड़ा-थोड़ा सुर्ख जरूर होने लगा था। शायद इस कारण कि वह आशंकित था। डाक्टर तल्लीनता से एक मीटर की रीडिंग ले रहे थे, और एक बक्स-जैसे उपकरण में लगा नाब घुमा रहे थे।

मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं रही जब मैंने कुछ ही क्षणों में देखा कि इकबाल तबदील होकर बारह-तेरह वर्ष का एक लड़का बन गया है। डाक्टर ने उससे कुर्सी पर से उठ आने का इशारा किया। वह लपककर हमारी ओर आ गया। डाक्टर ने बताया कि उम्र के बराबर ही यादाश्त भी हो जाती है। मैंने पाया कि इकबाल मुझे पहचान नहीं रहा है। शायद इसका कारण यह था कि जब वह बारह-तेरह वर्ष का रहा होगा, उस समय हम एक-दूसरे से कतई परिचित नहीं थे।

मैं लगातार फिल्म उतारे जा रहा था। मैंने देखा, इकबाल बिलकुल बच्चों-जैसी हरकतें करने लगा था। वह अपनी दोनों बाहें डाक्टर के गले में डालकर झूलने लगा था, और उनसे लाली-पाप की फरमाइश कर रहा था।

डाक्टर ने कठोर स्वर में कहा, "जाओ, कुर्सी पर बैठो। शैतानी नहीं करते।"

इकबाल डरा-सा लपककर कुर्सी पर जा बैठा था।

डाक्टर फिर बक्स-जैसे उस उपकरण का नाब घुमाकर मीटर की रीडिंग ले रहे थे। मैं कैमरे की रील बदलकर फिल्म लिये जा रहा था। यह सब अनोखा दृश्य था, और मुझे तनिक भी विश्वास नहीं हो रहा था कि मैं यह कुछ देख रहा हूं, हालांकि खुद दर्शक था।

देखते ही देखते इकबाल फिर पहले-जैसा हो गया। उसकी मुद्रा से लगा, जैसे वह कुछ देर तक सोया रहा हो, और फिर उठा हो।

डा. टामसन ने उसकी ओर देखते हुए

डा. टामसन के हाथ में शीशे का एक उपकरण था

कहा, "मिस्टर इकबाल, अब आप बाहर आ जाइए। आपका नया जन्म हुआ। मुबारक हो।"

इकबाल बाहर आ गया। मैंने भी कैमरा रोक लिया। इकबाल हम दोनों की ओर आश्चर्य की मुद्रा में देख रहा था। डा. टामसन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने कहा, "मानव पर मैंने यह पहला प्रयोग किया, और यह सफल रहा।"

इकबाल जैसे कुछ याद कर सका, फिर डा. टामसन को बधाई देता हुआ बोला, "अजीब प्रयोग है, डाक्टर। मुबारक हो आपने मेरा क्या कर दिया था ? मुझे तो कुछ भी याद नहीं आ रहा है।"

डा. टामसन ने कहा, "अभी आप बारह वर्ष के बच्चे की तरह शरारतें कर रहे थे, मिस्टर इकबाल।"

"सच !"

"यस, मिस्टर इकबाल। अब मैं आपको आपरेट करना बताता हूं। यह प्रयोग अपने ऊपर भी होने देना चाहता हूं। इट'ज टू इजी टु आपरेट दिस मशीन। यह देखिए, मि. इकबाल। इस मीटर की काली सूई शून्य पर है। इस बटन को दबाकर आप नाब तब तक दायीं ओर घुमाते जाइए जब तक अस्सी पर न पहुंच जाय। यह लाल सूई अगर हिलने लगे, तो फिर नाब दूसरी ओर घुमाकर शून्य पर ला दीजिए। यह दूसरा नाब बिलकुल न छुएं, और इस मीटर से आपका कोई मतलब नहीं है।"

फिर डा. टामसन कुर्सी पर जा बैठे। उन्होंने कहा, "यस, मिस्टर इकबाल।"

मैं फिर फिल्म लेने लगा। इकबाल ने आपरेट करना शुरू किया। धीरे-धीरे वह नाब घुमाता गया। डा. टामसन की आंखें बन्द थीं और उनके शरीर में धीरे-धीरे परिवर्तन हो रहा था। हमने देखा कि एक पचास वर्ष का व्यक्ति धीरे-धीरे पचपन···साठ···सत्तर··· और फिर अस्सी पर आकर रुक गया। हमने उस बूढ़े डा. टामसन को देखा और आश्चर्य किया। हमने देखा कि टामसन बहुत बूढ़े हो गये हैं, और उन्हें कुर्सी पर से उतरने में भी कठिनाई हो रही है। किसी तरह कुर्सी पर से उतरकर वे हम तक आये। हमने पाया कि इस दशा में उनकी स्मृति जाती रही है।

इकबाल ने बूढ़े टामसन से कहा, "डाक्टर टामसन, आप फिर उस कुर्सी पर बैठे जाइए।"

बहुत ही आहिस्ता कदमों से टामसन कुर्सी की ओर बढ़े। उनकी हर हरकत से बुढ़ापा झलक रहा था।

डाक्टर टामसन कुर्सी पर बैठ गये। मैं फिल्म लेता रहा। इकबाल कुर्सी की ओर देखता हुआ नाब घुमाता गया। हमने देखा, डाक्टर टामसन का चेहरा पीला पड़ता गया, और उनके चेहरे पर पीड़ा उभरती गयी। मुझे अजीब लग रहा था।

आखिर नाब रुक गया लेकिन टामसन पहले की स्थिति में वापस नहीं लौटे। इकबाल ने घबराकर मीटर देखा, फिर कांपता हुआ मुझसे बोला, "दोस्त, गलती से नाब उम्र बढ़ाने की ओर घूमता गया। यह मीटर देखो, यहां एक सौ चालीस पर काली सूई पहुंची है और लाल सूई लगातार हिल रही है।"

मैंने इकबाल से कहा, "नाब जल्दी पीछे करो।" मैंने कैमरे को एक तरफ रख दिया।

इकबाल ने नाब पीछे किया लेकिन उम्र की सूई पीछे नहीं खिसकी। सामने कमरे में मैं एक अजब खामोशी देख रहा था—एक निश्चेष्ट आकृति—डा. टामसन। ●

फान्तासी

दो व्यक्ति मंगल ग्रह से पृथ्वी पर आये। वे पृथ्वी की यात्रा करने वाले पहले मंगलवासी थे। अमरीका के एक नगर में वे उतरे। उन्होंने हर मकान पर टेलिविजनके एरियल देखे। उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। उनमें से एक खुशी में चिल्लाया, "वह देखो औरतें !"

विज्ञान-लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

नयी ईंटें

राजस्थान नहर में, छत्रगढ़ क्षेत्र में पायी जाने वाली मिट्टी में ३५-४० प्रतिशत मृत्तिका (clay) और १५ प्रतिशत पिसा हुआ चूना होता है।

इस मिट्टी द्वारा बनी ईंटों के सूखने पर दरारें पड़ जाती थीं। इसलिए केन्द्रीय भवन अनुसन्धान संस्थान रुड़की में इस समस्या पर अनुसन्धान कार्य किया गया ताकि ईंटों में दरारें न पड़ें और उचित दलन शक्ति की ईंटें उत्पन्न की जा सकें। इन अनुसन्धानों के परिणामस्वरूप यह पता चला है कि ६० प्रतिशत बरीक बालू ईंटों में दरारें पड़ने से रोक सकती है।

इस कोटि की बालू आस-पास के क्षेत्रों में काफी मात्रा में पायी जाती है। १००°सें. पर गरम की गयी ईंटों की दलन शक्ति ६२ कि. ग्रा. प्रति वर्ग सें. मी. और जल-शोषण क्षमता १५-१६ प्रतिशत पायी गयी है।

खान संवातन से सम्बन्धित सर्वेक्षण

उद्योग के सहायतार्थ कुछ समय से केन्द्रीय खान अनुसन्धान संस्थान, धनबाद में खान संवातन के सम्बन्ध में सर्वेक्षण कार्य किया जा रहा है।

अभी तक झरिया, रानीगंज और सिंगारेनी कोयला क्षेत्रों के अन्तर्गत २१० वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में स्थित २८ खानों का सर्वेक्षण किया जा चुका है।

इस सर्वेक्षण के अन्तर्गत परिमाणात्मक सर्वेक्षण, दबाव सर्वेक्षण, तापीय सर्वेक्षण आदि सम्मिलित हैं।

विशेष प्रकार के सिरामिक छन्ने

केन्द्रीय इलेक्ट्रानिक इंजीनियरी अनुसन्धान संस्थान, पिलानी में ट्रांजिस्टर तथा रेडियो में उपयोग के लिए एक विशेष प्रकार के सिरामिक छन्ने (filter) का निर्माण किया गया है। यह एक ट्रांसफारमर की भांति कार्य करता है। ये छन्ने राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला, नयी दिल्ली द्वारा प्राप्त विशेष कोटि के सिरामिक टुकड़ों द्वारा बनाये गये हैं। ये पहले प्रयुक्त छन्नों की अपेक्षा अधिक उपयोगी प्रमाणित हुए हैं।

स्मृति इंजेक्शन : एक अनोखी परिकल्पना

हाल में रूस में हुई मनोवैज्ञानिकों की महासभा में दो मनोवैज्ञानिकों ने एक परिकल्पना सामने रखी, जिसके अनुसार स्मृति जैव रसायन तत्त्वों को एक प्राणी के मस्तिष्क से निकालकर दूसरे प्राणी के मस्तिष्क में स्थानान्तरित किया जा सकता है। इस प्रकार एक प्राणी की स्मृति दूसरे तक स्थानान्तरित की जा सकती है।

इस परिकल्पना की जांच करने के लिए अमरीकी वैज्ञानिक प्रो. मार्क रोजेनविग तथा डा. एलन जैकबसन ने कुछ जन्तुओं के मस्तिष्क से रिबोन्यूक्लिक अम्ल निकालकर इसे नियन्त्रित परन्तु अप्रशिक्षित जन्तुओं के मस्तिष्क में पहुंचा दिया। परिणामस्वरूप ये अप्रशिक्षित जन्तु भी प्रशिक्षित जन्तुओं की भांति व्यवहार करने लगे। उक्त वैज्ञानिकों का कथन है कि निकट भविष्य में एक मनुष्य की स्मृति को दूसरे मनुष्य के मस्तिष्क में स्थानान्तरित करना सम्भव होगा।

यदि ऐसा हुआ तो विद्यार्थियों, वकीलों, डाक्टरों आदि को मोटे-मोटे ग्रन्थ याद करने के लिए इतना परिश्रम नहीं करना पड़ेगा। इसके लिए सम्बन्धित स्मृति इंजेक्शन ही काफी होगा। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतिशील डंड-समूह

लुई पाश्चर की वैचारिक उपलब्धि

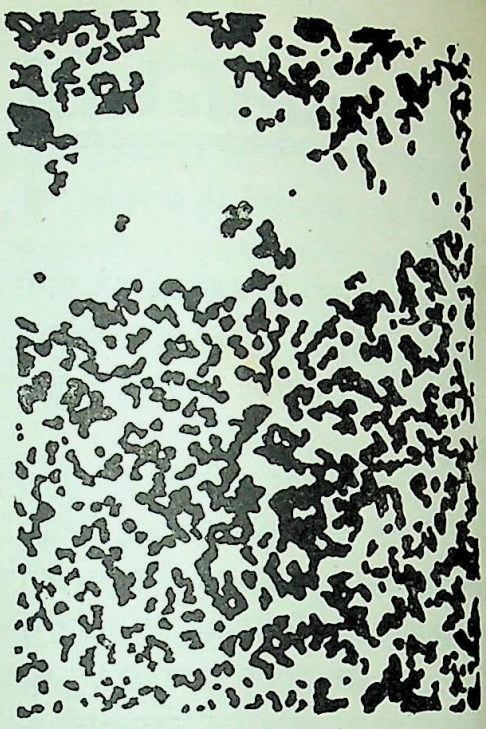

डा. हर्ष प्रियदर्शी

लुई के सूक्ष्मदर्शी के दायरे में एक नया रहस्य उद्घाटित हुआ। उसने असंख्य गतिशील दण्ड देखे। पहले तो उसे अत्यन्त आश्चर्य हुआ, क्योंकि यह सब देखने की आशा उसने नहीं की थी। वह खमीर के कणों को देखने के लिए उत्सुक था, किन्तु बाद में उसने इस नये दृश्य की ओर ध्यान दिया। आकार पर ध्यान लुई ने दिया तो पाया कि यह नयी वस्तु आकार की दृष्टि से खमीर कणों के आकार से कहीं छोटी है। यह नयी वस्तु एक इंच के पचास हजारवें भाग के बराबर थी।

लुई के मन में एक संशय कौंधा

तमाम रात लुई बेचैन रहा। वह सुबह का बेबसी से इन्तजार कर रहा था। सुबह होते ही वह भागा-भागा बीगो महोदय के कारखाने में गया। उसने पुनः मदिरा के पात्रों से बीमार खमीर के कुछ टुकड़े लिये और लौट आया। उसने बीमार खमीर के कणों का अध्ययन प्रारम्भ किया, किन्तु इस बार भी उसे वे ही गतिशील दण्ड-समूह मिले। इन समूहों में लाख-लाख दण्डाकार प्राणी गतिशील थे।

लेकिन इस बार के अध्ययन से लुई को एक नयी वस्तु मिली। उसने गतिशील दण्ड-समूह के सम्बन्ध में एक नयी बात खोज निकाली। उसने अपने प्रयोग में पाया कि इन गतिशील दण्डाकार प्राणियों में अल्कोहल की जगह दही के अम्ल कण हैं। अचानक उसके मन में एक संशय कौंधा—ये गतिशील दण्ड-समूह जीवित कीटाणुओं का समूह हैं और उस तरह जिस तरह खमीर, लेकिन खमीर की भांति ये अल्कोहल नहीं बनाते, बल्कि दूध को दही में परिवर्तित करते हैं। उसने एक अन्य तथ्य भी खोज निकाला कि ये मदिरा के रोगी पात्रों में कहीं से आ जाते हैं और खमीर से युद्ध करने लगते हैं। इस कीटाणु-युद्ध में ये दण्डाकार अम्लीय कीटाणु विजयी होते हैं। यही कारण है कि इन रोगी मदिरा पात्रों में चुकन्दर से मदिरा नहीं बन पाती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लुई की वैचारिक उपलब्धि : एक सम्भावना

अपनी इस अद्भुत वैचारिक उपलब्धि पर लुई सीधा अपनी पत्नी के पास भागा-भागा गया। उसने उसे अपनी महान उपलब्धि का परिचय दिया। लुई की पत्नी अपने भावुक वैज्ञानिक पति की बातें ध्यानपूर्वक सुनती रही, किन्तु वह उसकी उपलब्धि की भावी सम्भावनाओं को ग्रहण न कर सकी, फिर भी लुई के उज्ज्वल भविष्य की कल्पना में वह खो-सी गयी। लुई की पत्नी को स्वयं खमीर तथा दण्डाकार कीटाणुओं के सम्बन्ध में कोई ज्ञान नहीं था, किन्तु उसकी लुई के अनुसन्धानात्मक प्रयोगों में आस्था थी। उसे यह विश्वास था कि एक दिन वह दुनिया का ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक हो जायगा।

एक भावी सम्भावना

लुई की यह वैचारिक उपलब्धि मात्र एक भावी सम्भावना ही थी जिसे उसने सहसा ही प्राप्त कर लिया था। ऐसी अनेक सम्भावनाएं लुई के जीवन में आयीं जिनमें से वह कुछ को ही सत्य का रूप दे सकने में समर्थ हो सका। किन्तु यह वैचारिक उपलब्धि एक ऐसी सम्भावना थी जो दस हजार वर्ष पुराने किण्वन के रहस्य और गोपनीयता की परतों को तोड़ने में सफल हो जाती। लुई के समक्ष किण्वन की यह गोपनीयता और रहस्यमयता एक प्रश्न बनकर खड़ी हो गयी और वह यह सोचने पर विवश हो गया कि क्या उसकी उपलब्धि ही इस किण्वन समस्या का समाधान है। फिर लुई एकाग्र चित्त से समस्या का समाधान ढूंढ़ने में जुट गया। लेकिन वह अपने आस-पास के माहौल से बेखबर नहीं था। वह किसानों तथा उनकी समस्याओं में पर्याप्त दिलचस्पी दिखा रहा था।

आकार में क्षुद्रतम, दैत्य से अधिक समर्थ

उसने अपनी प्रयोगशाला में एक नया विभाग 'खाद परीक्षण केन्द्र' खोल दिया था। वह पेरिस की वैज्ञानिक अकादमी की सदस्यता के लिए भी खड़ा हुआ, लेकिन दुर्भाग्यवश उसे पराजय स्वीकार करनी पड़ी। किन्तु इस पराजय से वह विचलित नहीं हुआ। वह दुगुने जोश के साथ फिर काम में जुट गया। अपने चुनाव में असफल रहने के बाद उसने अपने विद्यार्थियों के लिए एक शैक्षणिक पर्यटन योजना बनायी और उन्हें बैल सियनीस के मदिरा के कारखानों में व्यावहारिक ज्ञान दिलाने की दृष्टि से ले गया। अपने जीवन के इन अस्तव्यस्तदिनों में लुई बार-बार अपनी किण्वन-सम्बन्धी उपलब्धि की सत्यता के बारे में सोचा करता था। इन्हीं दिनों लुई ने एक विधि खोज निकाली जिसके द्वारा यह सिद्ध किया जा सकता था कि सूक्ष्मतम दण्डाकार वस्तुओं में जीवन है, और आकार में क्षुद्रतम होते हुए भी ये किसी दैत्य से अधिक समर्थ हैं। उसने यह स्थापना दी कि ये चीनी को लैक्टिक अम्ल में परिवर्तित कर सकते हैं।

लुई चिन्तन में डूब गया। विचारों में उलझा हुआ वह एक विचित्र सम्भावना की ओर बढ़ता रहा। उसने चुकन्दर के गूदे के रस के अतिरिक्त एक दूसरे घोल में उन दण्डाकार प्राणियों को रखने का निश्चय किया। वह यह ज्ञात करना चाहता था कि क्या ये दण्डाकार प्राणी दूसरे किसी घोल में भी प्रजनन कर सकते हैं और जीवित रह सकते हैं ?

परिणाम की प्रतीक्षा

पहले लुई ने शुद्ध चीनी के घोल में इन दण्डाकार प्राणियों को रखा, और प्रजनन कराने की चेष्टा की, लेकिन उसे सफलता नहीं मिली। इस असफलता के बाद उसने अनेक प्रयोग किये और उनमें भी असफल रहा। फिर उसने एक विचित्र घोल का निर्माण किया। इस विचित्र घोल का निर्माण करने के लिए उसने पहले थोड़ा-सा शुष्क किण्वन शुद्ध जल में घोलकर घोल को उबाला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके पश्चात् उसने घोल को स्थिर दशा में रख दिया। इससे किण्वन कण शुद्ध रूप में जल से विलग हो गये। विलग हुए शुद्ध किण्वन घोल में लुई ने अम्लता से बचाव के लिए चाक का कार्बोनेट तथा चीनी की निश्चित मात्रा मिला दी। घोल तैयार हो जाने पर एक बारीक सूई की नोंक की सहायता से उसने बीमार मदिरा पात्रों में से रोगी खमीर कणों के मध्य से एक भूरे रंग के कण को अलग किया और इसे सावधानीपूर्वक नये तैयार हुए खाद्य घोल में डाल दिया। फिर अपने इस नये खाद्य घोल की एक बूंद एक शीशे के पात्र में ली, और उसे तापसंचालित भट्ठी में रख दिया। वह परिणाम की प्रतीक्षा करने लगा।

लेकिन वह एक अजीब सुबह थी जो उसके लिए निराशा ले आयी। वह सुबह ही प्रयोग शाला में गया। वहां पहुंचकर उसने अपने कांपते हाथों से प्रयोग-पात्र उठाया, लेकिन उसमें कोई परिवर्तन नहीं मिला। उसने वह पात्र पुनः भट्ठी में रख दिया, और वहीं फर्श पर निराशा में डूबा लेट गया। समय खिसकता रहा। रात गहराती गयी। वह अंधेरे में उठा। उसने पेट्रोमेक्स मंगाया और उसकी तेज रोशनी में उसने पुनः प्रयोग-पात्र को देखा। उसने महसूस किया कि प्रयोग-पात्र में परिवर्तन हो रहा है। उसने देखा, छोटे-छोटे बबूलों की कतारें घोल की सतह पर उभर रही हैं।

सहसा लुई शान्त हो गया। उसने प्रयोग-पात्र को पुनः भट्ठी में रख दिया।

और एक बार फिर लुई ने भट्ठी में से प्रयोग-पात्र को बाहर निकाला। पेट्रोमेक्स की तेज रोशनी के सामने वह उसे ले आया। उसके आश्चर्य की सीमा नहीं रही, जब उसने देखा कि उस प्रयोग-पात्र में बादल-सा कुछ उठ रहा है···बड़े-बड़े बबूलों का समूह! उसने पात्र से घोल की एक बूंद सूई की नोंक पर उठाकर सूक्ष्मदर्शी के दायरे में रख दी। उसने सूक्ष्मदर्शी में देखा और आश्चर्य से चीख पड़ा!

(क्रमशः)

ग्राहकों से निवेदन

विज्ञान-लोक की एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे है। एक वर्ष का शुल्क ९ रुपये, दो वर्ष का १६ रुपये तथा तीन वर्ष का २० रुपये (विशेष रियायत) है।

पत्र-व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें। विज्ञान-लोक जिस लिफाफे में आपके पास आता है, उसी पर आपकी ग्राहक संख्या आपके पते के ऊपर लिखी रहती है।

पता बदलने की सूचना हमें एक मास पूर्व प्राप्त होनी चाहिये। इसके लिए नया और पुराना, दोनों पते भेजें। यदि छह मास से कम के लिए पता बदलवाना हो, तो कृपया अपने डाकखाने से इसकी व्यवस्था कर लें।

नये ग्राहकों को मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा किस अंक से विज्ञान-लोक भेजा जाय, यह अवश्य लिखना चाहिये।

पुराने ग्राहक अपनी सदस्यता का नवीयन (renewal) कराते समय मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा ग्राहक संख्या लिखने की कृपा करें।

विक्रय-व्यवस्थापक * विज्ञान-लोक * हास्पिटल रोड, आगरा-३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

इस माह प्राप्त तुम्हारे अधिकांश पत्रों में **विज्ञान-लोक** की प्रशंसा से सम्बन्धित पंक्तियां हैं। इस बात की हमें प्रसन्नता है कि **विज्ञान-लोक** तुम्हारे लिए और अधिक रुचिकर तथा उपयोगी होता जा रहा है। पर इसका खेद है कि तुम **करो और देखो** तथा **तुम्हारी कलम से** स्तम्भों में विशेष रुचि नहीं दिखा रहे हो। यदि तुम इन स्तम्भों की सामग्री के स्वरूप में परिवर्तन चाहते हो, तो लिखो। कुछ सदस्यों ने एक-दो और स्तम्भ देने का अनुरोध किया है। तुम सुझाव भेजो कि किस तरह के स्तम्भ चाहते हो।

विज्ञान-लोक के पिछले अंक के सम्बन्ध में प्राप्त तुम्हारे कुछ पत्र—

सरोज यादव (रानीखेत) : **समुद्र-तल के नीचे जीवन** (कुमारी प्रमिला) में जलीय जन्तुओं के उद्भव और विकास का पूरा परिचय मिलता है। अन्य लेखों में **उर्वरक** (सत्यकुमार) तथा **केसर की खेती** (रतनकुमार गाडन) सूचनाप्रधान हैं। **एक अजनबी ग्रह की यात्रा** (निरंजन पाल) निश्चय ही अनोखी कहानी है।

बी. सेन (कलकत्ता) : इधर कुछ महीनों से हर अंक में एक वैज्ञानिक कहानी मिल रही है। आपका प्रयास सराहनीय है। हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य बहुत कम है। विज्ञान-लोक से आशा बंधती है। जुलाई अंक में **एक अजनबी ग्रह की यात्रा** (निरंजन पाल) अत्यधिक रोचक है।

प्रीतम (जलंधर) : जुलाई अंक में सभी लेख रोचक तथा ज्ञानवर्द्धक हैं। **समुद्र-तल के नीचे जीवन** (कुमारी प्रमिला) विशेष रूप से पसन्द आया। **आयनमण्डल** (कुलदीप चड्ढा) रोचक तथा सूचनाप्रधान है।

निर्मल वर्मा (इन्दौर) : जुलाई अंक में **आयनमण्डल** (कुलदीप चड्ढा) विशेष सूचनाप्रधान लगा। **उर्वरक** (सत्यकुमार) का सामयिक महत्त्व है। पिछले कुछ महीनों से कृषि-विज्ञान पर नियमित रूप से **विज्ञान-लोक** में लेख मिल रहे हैं। आपके प्रयास की सराहना करता हूं। इस अंक की वैज्ञानिक कहानी **एक अजनबी ग्रह की यात्रा** (निरंजन पाल) उच्चकोटि की तथा रोचक है।

जीवनप्रसाद (भाटापारा) : **विज्ञान-लोक** विद्यार्थियों तथा शिक्षकों में समान रूप से लोकप्रिय हो चुका है। जुलाई अंक में **लुई पाश्चर** (डा. हर्ष प्रियदर्शी) अत्यन्त रोचक लगा। **समुद्र-तल के नीचे जीवन** (कुमारी प्रमिला) सूचनाप्रधान है।

…और मुझे फिर भी तुम्हारे सुझावों की प्रतीक्षा है—स्तम्भों के सम्बन्ध में। आशा है लिखोगे।

सस्नेह तुम्हारी,
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ७७ के विजेता

प्रथम पुरस्कार

सन्तोषकुमारी (१८८४५) नयी दिल्ली।

द्वितीय पुरस्कार

रघुवीरसिंह (१८८६९) पटना।

तृतीय पुरस्कार

मनोहरलाल (१८८९८) वाराणसी।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ७९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

अनिलकुमार
(स. सं. १८२९२)

भंवरलाल
(स. सं. १८३०७)

कीमत
(स. सं. १८३४४)

इन्द्रनाथ
(स. सं. १८३८३)

१२४४६ भरतलाल (१८) पिपरिया, ४७ हरिश्चन्द्र (१६) अलीगढ़, ४८ सुभाषचन्द्र (१९) बरेली, ४९ कैलाशचन्द्र (१६) भोपाल, ५० चन्द्रमोहिनी (१५) कटनी, ५१ दिनेशकुमार (१८) हरदा, ५२ सन्तोषकुमार (१५) हरदा, ५३ विनोदप्रकाश (१६) शाहजहांपुर, ५४ विजयकुमार (१७) सिगरी, ५५ विवेकानन्द (१६) मेरठ, ५६ वीरेन्द्रकुमार (२२) कानपुर, ५७ उमाप्रसाद (१९) मालीनगर, ५८ आदर्शकुमार (१७) मण्डलेश्वर, ५९ राजेन्द्रकुमार (१७) कानपुर, ६० रामेश्वरदयाल (१९) गंजडुण्डवारा, ६१ नरेशकुमार (१४) बीकानेर, ६२ वरुणकुमार (१५) नेतरहाट, ६३ विजयकुमार (१६) नेतरहाट, ६४ उदयकान्त (१५) नेतरहाट, ६५ रविशंकरप्रसाद (१८) गया, ६६ साहबदास (९) आगरा, ६७ अशोक (१६) झांसी, ६८ राजेन्द्रस्वरूप (१७) सुकेत, ६९ आनन्दकुमार (१५) लवन, ७० महेन्द्रसिंह (१५) अल्मोड़ा, ७१ सुरेन्द्रकुमार (१६) अल्मोड़ा, ७२ अशोककुमार (१७) बुढ़ार, ७३ रघुवीरप्रसाद (१७) जबलपुर, ७४ अश्विनीकुमार (१५) कांडला, ७५ श्यामसुन्दर (१६) जयपुर, ७६ चांदमल (१७) ब्यावर, ७७ राज्यवर्धन (१६) धामपुर, ७८ अमरनाथ (१८) पूसा, ७९ रजनीकान्त (१४) सहरसा, ८० रंजन (१३) गोविन्दगढ़, ८१ हरिप्रसाद (२०) बिसावर, ८२ ए. के. जुली (१९) भोपाल, ८३ अष्टूजसाह (१८) रतलाम, ८४ चित्राकुमारी (१५) मेरठ, ८५ अनिलकुमार (१४) मेरठ, ८६ विजयकुमार (१४) सीतापुर, ८७ अशोककुमार (१४) खुरजा, ८८ रामसिंह (२१) चन्द्रापुर, ८९ कमलेश्वर (१६) बेतिया, ९० गोपालकृष्ण (१६) इन्दौर, ९१ श्यामलकान्ति (१६) धनबाद, ९२ रणजीतसिंह (१६) दिल्ली, ९३ द्विजेन्द्रसिंह (१८) रामकोला, ९४ किशोरीलाल (१८) पटरंगा, ९५ महताबसिंह (१७) जून्नरदेव, ९६ कृष्णदेवप्रसाद (१९) समेयागढ़, ९७ राजीव (१६) जौनपुर, ९८ रामदयाल (१५) बरेली, ९९ विजयशंकर (१५) मझगांवां, १२,५०० मथुराप्रसाद (२०) बरेली, १ कु. मधुरिमा (१८) शहडोल २ राजेशकुमार (१६) शहडोल, ३ वरुणकुमार (१६) सीतापुर, ४ जनार्दनप्रसाद (१७) इलाहाबाद, ५ हरीशंकर (१९) सिनावल कन्नां; ६ कु. मधुजय वाचस्पति (१८) वाराणसी, ७ महेन्द्रकुमार (१८) अजमेर, ८ राजकिशोर (१८) किशनगढ़, ९ नरेन्द्रकुमार (१३) हिसार, १० सुरेशकुमार (१९) दुर्ग, ११ अशोककुमार (१८) जबलपुर, १२ विनोदकुमार (१५) रायबरेली, १३ टी. एस. शंकर (२२) गोरखपुर, १४ सुरेशप्रसाद (१९) बलिया, १५ अजयकुमार (१७) लखनऊ, (१६) जगन्नाथ राम (१९) बलिया, १७ ओमप्रकाश (१९) जोधपुर, १८ सुरेन्द्रकुमार (१८) इलाहाबाद १९ रमेशचन्द्र (२२) भोपाल, २० दर्शनकुमार (१६) गुड़गांव, २१ प्रकाशवीर (१६) मुरादाबाद, २२ कौशलेन्द्र (१७) सीतापुर, २३ चक्रपाणिसिंह (१७) नेतरहाट, २४ दालचन्द (१७) जबलपुर, २५ दुर्गाप्रसाद (१९) जबलपुर, २६ चन्दू भाई (१८) जामला, २७ दीपककुमार (११) मुरादाबाद, २८ प्रभुनाथ (२०) कलकत्ता, २९ फिलिप (३६) रांची, ३० राजाराम टीकमगढ़, ३१ ईशकुमार (१८) कानपुर, ३२ सुरेन्द्रकुमार (१९) जलन्धर, ३३ अरुणकुमार (१८) देहरादून, ३४ बृजकिशोर (१७) लखनऊ।

कमलेशकुमार
(स. सं. १८३८४)

हरीशचन्द्र
(स. सं. १८३८८)

रामकुमार
(स. सं. १८३९३)

रामबालक
(स.सं. १८३९९)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डैडी आप कह रहे थे बैंक में धन बढ़ता है। यह कैसे होता है ?

मेरी ही तरह अनेक व्यक्ति बैंक में अपना रुपया जमा रखते हैं। बैंक में बहुत सा रुपया इकट्ठा हो जाता है। उस रुपये को बैंक दुकानदारों, कारखानों और सरकार को उधार दे देती है। कुछ समय बाद बैंक को अपना रुपया ब्याज सहित वापस मिल जाता है क्योंकि बैंक हमारे रुपये का उपयोग करती है, इसलिए उसमें से कुछ ब्याज हमें भी दे देती है। इससे हमारा रुपया बढ़ता है। यदि हम रुपये को बैंक में जमा न करेंगे, तो वह कैसे बढ़ेगा ?

ठीक है ! आप अपना रुपया तो पंजाब नेशनल बैंक में ही जमा रखते हैं ना ?

हाँ, बेटा। वही मेरा बैंक है। यह देश के सबसे पुराने और सबसे बड़े बैंकों में से एक है। देश भर में इसकी ४७५ से अधिक शाखाएं हैं।

पंजाब नेशनल बैंक

PR/PNB/6623 H-1

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनाम लो

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : ३० नवम्बर

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५३ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो—

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७९ के उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर ३० नवम्बर तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायेगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७९ के प्रश्न

१. भारत में सूक्ष्मदर्शी के लिए नेत्रक (eye-piece) का निर्माण कहां हुआ है ?

२. किस देश में हाल ही में एक ऐसी कार का निर्माण हुआ है जो जमीन पर तो चलती ही है, हवा में भी उड़ती है ?

३. पेप्टिक अल्सर प्रायः कैसे हो जाता है ?

४. मई-जून, ६६ में अन्तर्राष्ट्रीय कम्प्यूटर प्रदर्शनी कहां हुई थी ?

५. प्राथमिक अन्तरिक्ष विकिरण के कण पृथ्वी की ओर तेजी से आते हैं या मन्द गति से ?

६. क्या एक्स-किरणें हड्डियों को भी भेदकर निकल जाती है ?

७. ९ अगस्त १९६६ को स्टीफेन किल्सटन ने जिस पुच्छल तारे को देखा था, उसका क्या नाम रखा गया है ?

८. किस देश के वैज्ञानिकों ने ऐसा लेसर विकसित कर लिया है जिससे अनेक तरंग लम्बाइयों की किरणें प्राप्त की जा सकती हैं ?

९. अल्यूमीनियम की मिश्रधातु से सर्वप्रथम कब और कहां वायुयान बनाया गया था ?

१०. क्या जैट विमान सभी हवाई अड्डों पर उतर सकते हैं ?

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७७ के प्रश्नों के उत्तर

१. कंक (Kunk)।
२. लगभग ७५ वर्ष तक।
३. कम से कम २६८० टन।
४. एस्परेगस (Asperagus)।
५. दक्षिणी ध्रुव में।
६. एटलस (Atlas)।
७. १९४६ में।
८. हां।
९. सर जेम्स यंग सिम्पसन।
१०. फूल है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिलिकन

रेत में, चमक में, हीरे में

प्रतापभानु (स. सं. ५१६३)

यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि कारबन संसार में यौगिक अवस्था में कई पदार्थों में पाया जाता है। वैज्ञानिकों का मत है कि कारबन के बाद यदि कोई और पदार्थ जीव सृष्टि या निर्जीव सृष्टि का मुख्य अंग बन सकता है, तो वह सिलिकन है। जब इस प्रश्न पर बहस होती है कि सूर्य के दूसरे ग्रहों पर जीवन होगा या नहीं, तो यही सम्भावना सामने आती है कि वहां सिलकिन पर आधारित सृष्टि होगी। कारबन और सिलिकन मिलतेजुलते हैं।

खुदाई में जीवधारियों की लाशें ज्यों की त्यों निकलने की बात सबने पढ़ी होगी। लाशें? किस कारण इस प्रकार सुरक्षित रखी रहती हैं।

यह सब चमत्कार सिलिकन का ही है।

सृष्टि पृथ्वी के गर्भ में

प्राचीन काल में भूकम्पों के कारण जीव-सृष्टि और वनस्पति सृष्टि पृथ्वी के गर्भ में पहुंच गयी। दबाव के कारण उनमें रूपान्तर होने लगा। कई गैसें उनमें से उड़ गयीं और कारबन बचा। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया तथा परिस्थितियां बदलती गयीं, वह कारबन सिलीकन का रूप धारण करता गया। सिलिकन का मुख्य गुण उसकी कठोरता है। इससे वे लाशें और वनस्पतियां ज्यों की त्यों सुरक्षित रह गयीं। उनमें सड़ांध पैदा न हुई।

इससे पता चलता है कि पृथ्वी के अन्दर सिलिकन का भण्डार भरा है। लेकिन यह पदार्थ स्वतन्त्र रूप से शायद ही कहीं दिखायी पड़ता है। अक्सर यह सिलिका के रूप में मिलता है, जिसका रासायनिक नाम सिलिकन डाइआक्साइड (SiO_2) है।

सिलकिन का विशुद्ध रूप स्फटिक

हम डाइआक्साइड से कारबन डाइ-आक्साइड (CO_2) जोड़ लेते हैं।

कार्बन डाइआक्साइड एक अदृश्य गैस है, लेकिन केवल डाइआक्साइड की समानता के कारण जरूरी नहीं है कि सिलीकन डाइआक्साइड भी अदृश्य गैस होगी। यह कठोर पदार्थ है। डाइआक्साइड का केवल एक मतलब है कि कार्बन की तरह सिलिकन का भी एक अणु आक्सीजन के दो अणुओं से संयोजन करता है।

स्फटिक सिलिकन और कांच

सिलिकन का विशुद्ध रूप स्फटिक (क्वार्ट्ज) होता है। समुद्र की रेत सबसे ज्यादा सिलिकन की बनी है। रेत से कांच तैयार किया जाता है। स्फटिक सिलिकन का कांच तो बहुत ही मजबूत होता है। यह जानकर भी कोई आश्चर्य में पड़े बिना नहीं रह सकता कि जब हम इस कांच को खूब गरम करें, इतना गरम करें कि वह लाल हो जाय, फिर पानी में डुबायें तो छन-छन करके ठण्डा हो जायगा परन्तु टूटेगा नहीं। साधारण रेत का कांच इतना गरम करके ठण्डा करने पर चूर-चूर हो जाता है।

साधारण कांच ६००–९००° सें. ताप पर ही मुलायम हो जाता है, परन्तु यह कांच १५००° सें. पर भी अपनी कठोरता नहीं छोड़ता।

संसार में जितने भी बहुमूल्य पदार्थ हैं, उन सबमें हीरा प्रमुख है—मूल्य में, सुन्दरता में, कठोरता में। हीरों में भी सिलिकन डाइ-आक्साइड रहता है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज ही

ब्रुअरी की तरोताज़ा

बीयर से आनन्द उठाइये

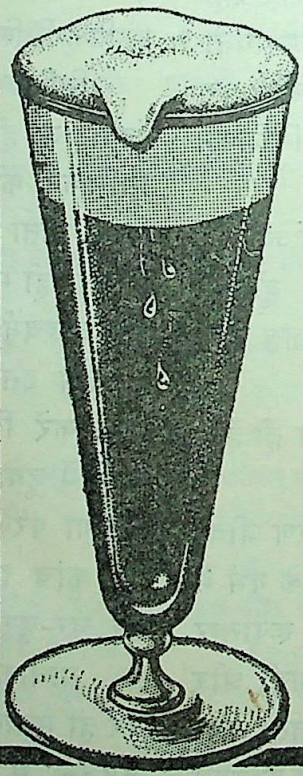

इसका स्वाद अत्यन्त रुचिकर है। बीयर अच्छी चीज़ों के स्वाद को और भी अधिक अच्छा बना देती है। यह स्वाद में परिपूर्ण आज का स्वल्पाहार है।

गोल्डन ईगल

लागर बीयर

डायर मीकिन ब्रुअरीज लि०-स्थापित १८५५

सोलन ब्रुअरी – लखनऊ डिस्टिलरी – कसौली डिस्टिलरी
मोहन नगर ब्रुअरी ऐंड एलाइड इन्डस्ट्री (यू० पी०)
शताब्दी पुराना अनुभव विश्वास की गारन्टी है

DMB-NP-703

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक प्रकाशन

(हाई स्कूल एवं हायर सेकेण्डरी स्कूल के विद्यार्थियों के लिए)

प्रारम्भिक भौतिकी (मूल्य : ३·५०)

लेखक

दयाप्रसाद खण्डेलवाल

एम. एस-सी., पी-एच. डी

देवीसिंह बिष्ठ राजकीय महाविद्यालय, नैनीताल

जन्तु-विज्ञान (मूल्य : ३·००)

वनस्पति-विज्ञान (मूल्य : ३·००)

लेखक

आर. डी. विद्यार्थी

बी. एस-सी. (आनर्स), एम. एस-सी., एल.टी., एफ.एन.ए.

ला मार्टीनियर कालेज, लखनऊ

सामान्य-विज्ञान (मूल्य : ६·२५)

लेखक

रामचरण मेहरोत्रा, एम. एस-सी., पी-एच. डी.

दयाप्रसाद खण्डेलवाल, एम. एस-सी., पी-एच. डी.

आर डी. विद्यार्थी, एम. एस-सी.

प्रैक्टिकल जन्तु-विज्ञान (मूल्य : २·००)

प्रैक्टिकल वनस्पति-विज्ञान (मूल्य : २·००)

लेखक

आर. डी. विद्यार्थी

प्रकाशक

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Price : 75 paise August 1968 Regd. No. L 1410
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीहारिका

कहानी मासिक

अक्तूबर अंक

अब सब जगह उपलब्ध है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

16-1-67

विज्ञान-लोक

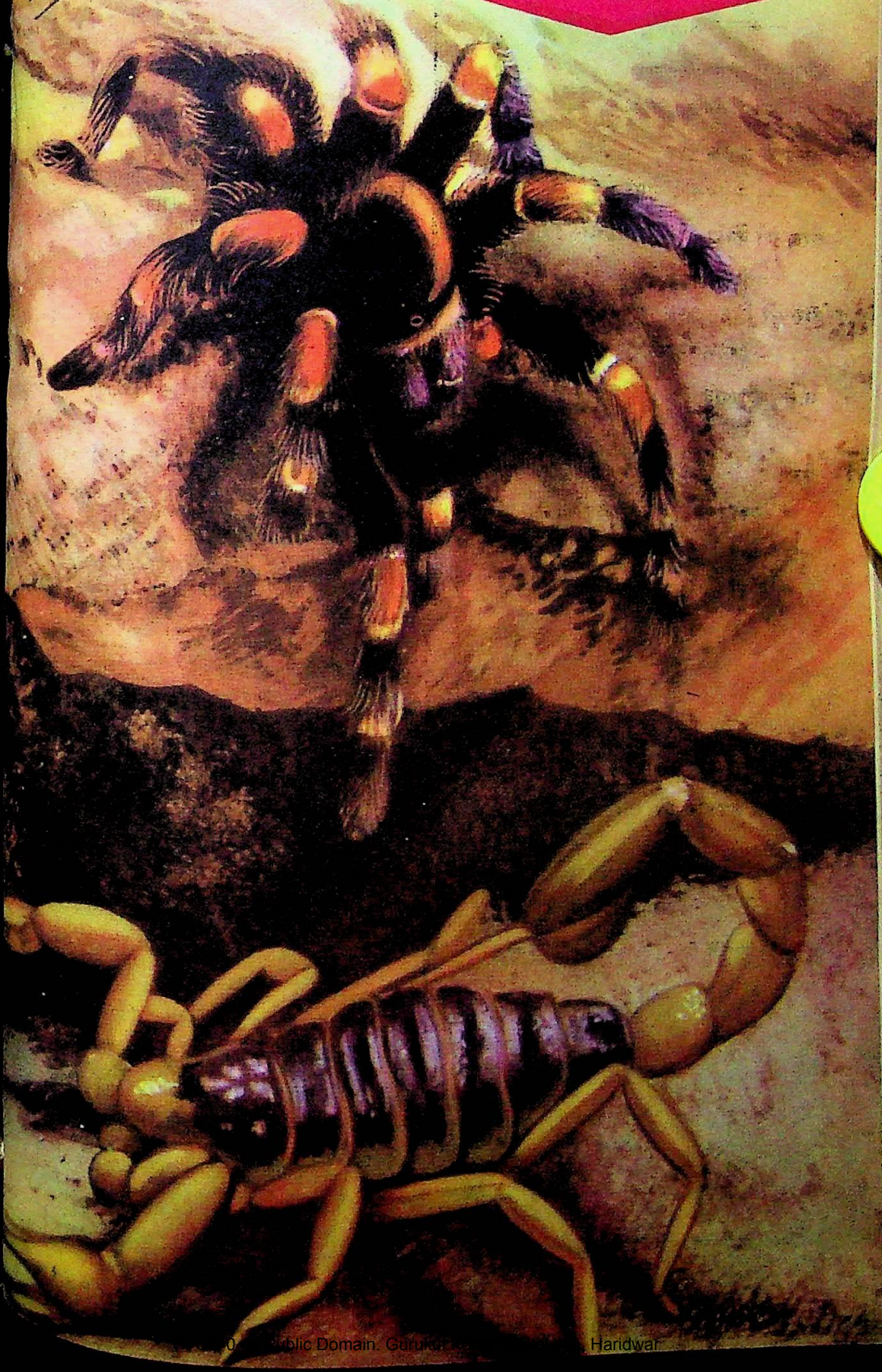

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

मकड़े, मकड़ियां और बिच्छू ३
—कुमारी प्रमिला

आंवला ८
—शशिभूषण शलभ

क्षय एक घातक रोग १३
—रमेशप्रसाद शर्मा

लाख का कीड़ा और उसका पालन १८
—यमुनाधर पांडेय

ट्रांस-यूरे नियम तत्त्व २३
—अशोककुमार चौबे

गोबर की खाद ३१
—सत्यकुमार

प्रेरणाएं ४०
—डा. महेश्वरसिंह सूद

लुई पाश्चर ५०
—डा. हर्ष प्रियदर्शी

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां ४९

विज्ञान-क्लब ५३

इनाम लो ५५

तुम्हारी कलम से ५६

वर्ष ७

अपनी बात

कभी-कभी वैज्ञानिक यह अनुभव करता है कि वह विज्ञान की प्रकृति समझ सकने में असमर्थ है, क्योंकि अपने को वह तथ्यों और आंकड़ों में बुरी तरह उलझा हुआ पाता है तथा उनके महत्त्व को समझ सकने में असमर्थ होता है। इस तरह विज्ञान एक 'बुद्धिमान' मस्तिष्क के लिए समस्या का रूप धारण कर लेता है।

जब वैज्ञानिक अपने को तथ्यों और आंकड़ों में उलझा हुआ पाता है, तो वह प्रश्नों का उत्तर देने की चेष्टा करता है। प्रश्न कठिन होते हैं, जैसे ब्रह्मांड के परे क्या है ? यह सृष्टि अस्तित्व में क्यों आयी ? इसका प्रयोजन ?

ऐसे प्रश्नों की कोई सीमा नहीं होती। वैज्ञानिक अपने को सूक्ष्मतर की ओर मोड़ चला जाता है। वह कार्य और कारण में सम्बन्ध स्थापित करने के लिए व्यग्र हो उठता है।

जड़ की व्याख्या कर पाना कठिन नहीं है, किन्तु चेतन व्याख्या से परे लगता है। विकासवाद उन कथित रासायनिक क्रियाओं से हमारा परिचय कराता है जो जीवन के उद्भव का कारण बनीं, परन्तु उनके सम्भव होने की प्ररणा के विषय में हमारा ज्ञान अधूरा है।

अन्तरिक्ष के छोर पर अबाध रूप से प्रकाशपुंज लुप्त होते जा रहे हैं और सृष्टि में निरन्तर नया पदार्थ उत्पन्न हो रहा है। इस सबके पीछे वह एक नियम क्या है ? क्या इस तरह किसी सम्भावना पर पहुंचा जा सकता है ?

विज्ञान-लोक प्रारम्भ से ही समन्वयीकरण के प्रयत्न मे रहा है। भविष्य में हम विज्ञान के महान् विचारकों के चिन्तन को विज्ञान के सन्दर्भ में प्रस्तुत करने का प्रयास करेंगे।

अंक ९

एक प्रति : १२५ पैसे

सम्पादक : शंकर मेहरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मकड़े, मकड़ियां और बिच्छू

एक सामान्य अध्ययन

कुमारी प्रमिला

यूनान की एक पौराणिक कथा के अनुसार लिडिया की युवती अरैक्न बुनाई करने में दक्ष थी। उसे अपनी कला का अभिमान था। एक बार वह देवी अथेना को प्रतियोगिता का निमन्त्रण दे बैठी। अरैक्न की इस धृष्ठता पर अथेना ने उसे मकड़ी बना दिया और शाप दिया कि वह तमाम उम्र जाले बुनती रहे।

मकड़े और मकड़ियां कीटों के अरैक्निडा (*Arachnida*) वर्ग के अन्तर्गत आते हैं। इस वर्ग के अधिकांश सदस्य जाले बुनने में दक्ष हैं। जिन तन्तुओं से ये जाले बुनते हैं, वे प्रकृति में अन्यतम पदार्थ हैं। इस वर्ग के जन्तु लगभग २९,००० जातियों में विभाजित हैं, फिर भी कीट विशेषज्ञों का मत है कि अभी और अधिक जातियों का पता लगाया जा सकता है। जन्तु-जगत के अन्तर्गत कीटों का यह वर्ग अनोखा है।

मकड़े और मकड़ियों के जाले धरती पर कहीं भी पाये जा सकते है। चार्ल्स डारबिन ने इन्हें अधिक संख्या में भूमध्य रेखा पर, अन्ध महासागर के सेंट पाल द्वीप पर लक्ष्य किया। प्रसिद्ध अंगरेज कीट विशेषज्ञ डा. टामस एच. सेवोरी ने हिमालय पर्वत पर, २२,००० फुट की ऊंचाई पर भी मकड़ों को जाल बुनते देखा है। इस सन्दर्भ में यह ज्ञातव्य है कि १८,००० फुट की ऊंचाई के बाद किसी अन्य जन्तु या वनस्पति का अस्तित्व सरलतापूर्वक सम्भव नहीं है। कुछ कीट अवश्य पाये जाते हैं। सेवोरी ने अपने निरीक्षण से यह निष्कर्ष निकाला कि इतनी ऊंचाई पर मकड़े अन्य छोटे-छोटे कीटों का शिकार करते हैं, या आपस में ही एक-दूसरे को भोजन के रूप में ग्रहण करते हैं। ये मकड़े एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते-आते रहते हैं। इसके लिए ये वायु के झोंकों पर निर्भर रहते हैं, या स्वयं के बुने हुए जालों पर चलते हैं।

मकड़े जाल बुनते हुए चलते हैं

मकड़े जब चलते हैं, तो जाल अवश्य बुनते हैं। खतरे के समय ये उसी जाल पर पीछे भाग आते हैं। यह भी पाया गया है कि अलग-अलग जाति के मकड़े अलग-अलग किस्म के जाल बुनते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

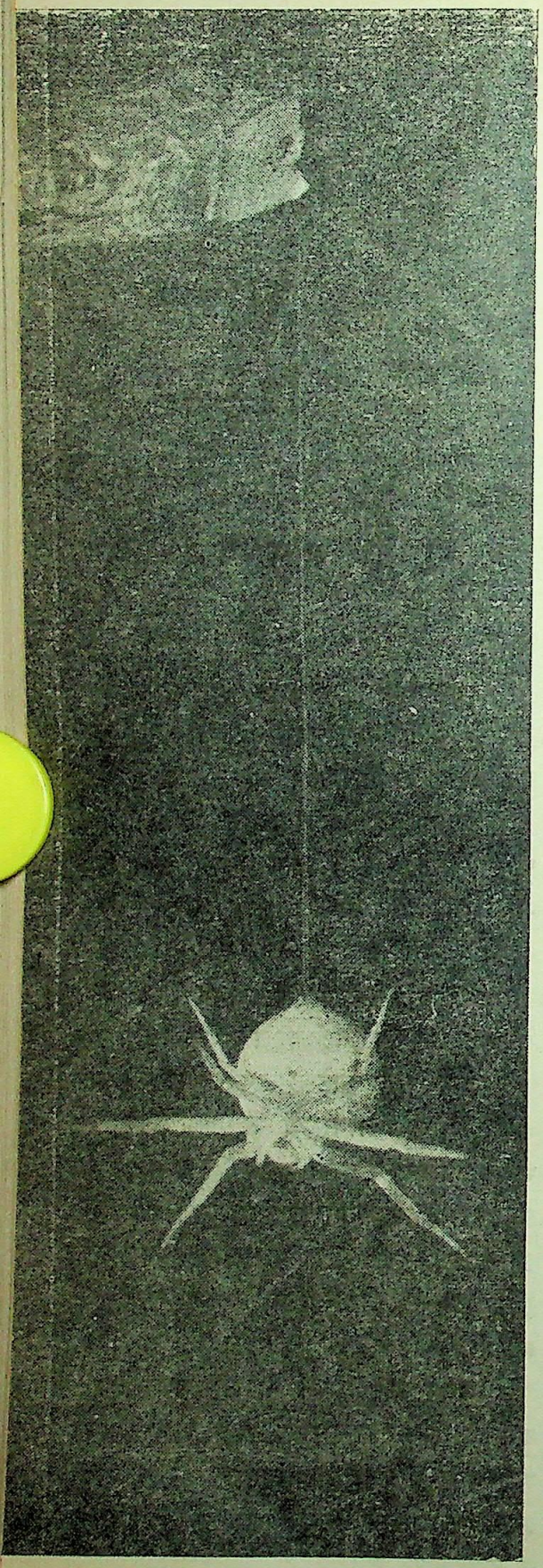

१९वीं शताब्दी के आरम्भिक चरण में फ्रांसीसी कीट विशेषज्ञ पी. ए. लेब्रिल ने मकड़ों के जालों का अध्ययन किया और यह निष्कर्ष निकाला कि इनके जाल मुख्यतः चार प्रकार के होते हैं—पहले प्रकार का जाल गोलाकार होता है जो समतल फैला रहता है; दूसरे प्रकार का जाल सहायक तन्तुओं से इधर-उधर खिंचा रहता है। एक अन्य प्रकार का जाल समतल बिखरा रहता है। ऐसे जाल बहुधा झाड़ियों में पाये जाते हैं। एक विशेष जाति का मकड़ा शुंडाकार जाल बुनता है। अक्सर ऐसे जाल किसी बिल के ऊपर होते हैं जिसमें छिपकर मकड़ा शिकार का इन्तजार किया करता है।

उष्ण कटिबन्ध के मकड़े

उष्ण कटिबन्ध में प्रायः नेफिला (*Nephila*) जाति के मकड़े पाये जाते हैं। ये इस कटिबन्ध के वृक्षों पर रहते हैं। इनके वृहत् जाल भी देखे गये हैं। कुछ जाल आठ फुट के दायरे में फैले रहते हैं। इन जालों की बुनाई अनोखी होती है। कभी-कभी छोटे पक्षी, चमगादड़ तथा कीट इन जालों में फंस जाते हैं। जब कोई जन्तु नेफिला के जाल में फंसता है, तो यह दौड़कर उसे पकड़ लेता है और पूरी तरह अपने कब्जे में कर लेता है।

मकड़ों और मकड़ियों की जाल बुनने की क्षमता विलक्षण है। यह भी एक अनोखी बात है कि प्रत्येक जाति के मकड़े या मकड़ियां अलग-अलग प्रकार का जाल बुनती हैं। कुछ के जाल बहुत महीन और समरूप होते हैं, तथा कुछ के रुक्ष।

घरों में पायी जाने वाली सामान्य मकड़ी थेरिडियन (*Theridion*) बड़ी ही विचित्र होती है। यह कमरे के कोने में अपना जाल

अपने बुने जाल पर नीचे बढ़ी चली आ रही कंबा मकड़ी—जाति : मिसुमेना (*Misumena*)। आवश्यकता पड़ने पर यह अपने ही जाल पर चढ़ती हुई ऊपर पहुंच जायेगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिकारी मकड़ों की मादा कई दिनों तक अपनी सन्तानों को अपनी पीठ पर लिये रहती है। जब शिशु चलने-फिरने लायक हो जाते हैं, तो पीठ पर से उतरकर इधर-उधर चले जाते हैं

बुनती है, और तन्तुओं पर अंडे लटका देती है। अगर कोई अंडा नीचे गिरने लगता है, तो जल्दी से दौड़कर यह उसे पकड़ लेती है। इसकी आंखें बहुत तेज होती हैं और यह बड़ी फुरती से दौड़कर अपने शिकार को पकड़ती है।

बड़े-बड़े शिकारी मकड़े (आविकुलारिया (*Avicularia*) और यूरिपेमा (*Eurypelma*) आदि) दक्षिणी तथा दक्षिण-पश्चिमी अमरीका में पाये जाते हैं। बहुधा ये रात में शिकार करते हैं। इनके शिकार करने का ढंग अनोखा होता है। ये अपने शिकार की आहट पाकर या उसके स्पर्श से उस पर झपट पड़ते है, और उसे अपनी मजबूत पकड़ से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेहाल कर देते हैं। वह प्रायः चमत्कृत रह जाता है। ये केचुए और चूहे के अतिरिक्त अन्य जन्तुओं का भी शिकार करते हैं।

जहरीले मकड़े

कुछ मकड़े जहरीले भी होते हैं। ये शिकार को पकड़कर उसे काट खाते हैं, और उसके शरीर में जहर प्रविष्ट करा देते हैं। थोड़े ही समय में इस जहर के प्रभाव से कीट (शिकार का शरीर) द्रव में परिवर्तित हो जाता है। मकड़ा इस द्रव को पी जाता है।

यह अक्सर देखा गया है कि बड़े मकड़ों में जहर तो होता है, पर वे उसका प्रयोग कम ही करते हैं, और वह अधिक प्रभावशाली भी नहीं होता। इसके विपरीत छोटे मकड़े अधिकांशतः जहरीले होते हैं, और वे बहुधा अपने शिकार को काट खाते हैं। पर यह अवश्य है कि अधिकांश मकड़े या मकड़ियां जहरीली नहीं होतीं। केवल कुछ ही जातियां जहरीली होती हैं।

बगीचे में पाया जाने वाला मकड़ा आरजियोप औरन्तिया (*Argiope Aurantia*) बड़ा खूबसूरत जाल बुनता है

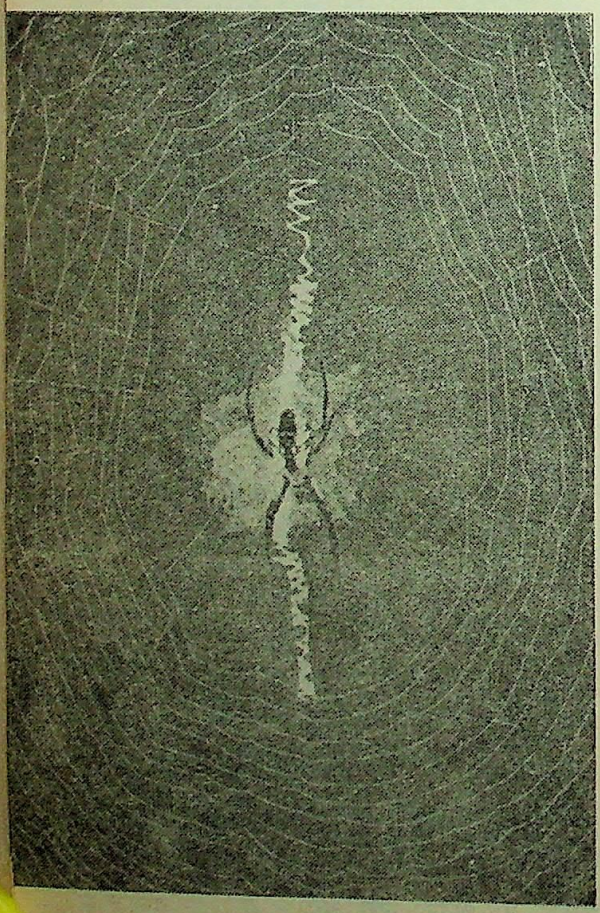

लात्रोदेक्तस मैक्तैंस (*Latrodectus Mactans*) नामक मकड़ा सर्वाधिक जहरीला होता है। इसका विष वयस्क व्यक्ति पर फौरन प्रभाव डालता है। इसका उदर गोलाकार तथा काले रंग का होता है। उदर के नीचे लाल रंग का एक धब्बा होता है। अक्सर मादा ही काटती है।

अधिकांश मकड़ों की आठ चमकीली आंखें होती हैं। इनकी आंखों का आकार अलग-अलग होता है।

कुछ मकड़े रंग बदलते हैं। क्रैब मकड़ों के सम्बन्ध में पहले कीट विशेषज्ञों की धारणा थी कि ये सफेद फूल पर जब तक रहते हैं, तब तक इनका रंग सफेद रहता है, और जब पीले फूल पर रहने लग जाते हैं, तो इनका रंग पीला हो जाता है। लेकिन बाद की खोजों में कीट विशेषज्ञों ने इस धारणा को भ्रामक पाया। वास्तव में क्रैब मकड़े साल में दो बार रंग-परिवर्तन करते हैं। इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि वे पीले फूल पर रहते हैं, या सफेद फूल पर।

फूलों पर रहने वाले मकड़े बड़े विचित्र ढंग से अपने शिकार पकड़ते हैं। ये बिलकुल गतिहीन होकर बैठे रहते हैं, और जैसे ही कोई कीट उड़ता हुआ इनके पास आता है, ये फौरन उस पर झपट पड़ते हैं।

बिच्छू : मृत्यु का प्रतीक

बिच्छू रेंगने वाला एक जहरीला जन्तु है जिसके डंक मारने से प्राणियों को अत्यधिक पीड़ा पहुंचती है, और कभी-कभी मृत्यु भी हो जाती है।

प्राचीन काल में लोग बिच्छू से बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ते थे। वे इसे मृत्यु का प्रतीक मानते थे। मिस्र में प्राचीन काल में बिच्छुओं का प्रकोप काफी था, अतः लोगों ने इसके डंक के निदान की ओर ध्यान दिया। शीघ्र ही उन्होंने एक ऐसे जहर की खोज कर ली जो बिच्छू के जहर को प्रभावहीन कर देता था।

अफ्रीका के भूमध्यरेखीय क्षेत्र के अधिकांश बिच्छू आकार में १० इंच तक लम्बे होते हैं, पर ये उतने खतरनाक नहीं होते। यदि इन्हें छेड़ा न जाय, तो ये अपना जीवन एकान्त में ही बिताना पसन्द करते हैं। बहुधा ये अपने शिकार की तलाश में रहते हैं। कभी-कभी ये अपनी जाति के दूसरे बिच्छुओं से उलझ पड़ते हैं। ये आपस में एक-दूसरे का भी शिकार करते हैं।

बिच्छू के बच्चे जब छोटे होते हैं, तो अपनी माता की पीठ पर सवार रहते हैं।

बिच्छू की कुछ सामान्य जातियां

बहुत से बिच्छू नुकसान पहुंचाने वाले नहीं होते। इनमें मैस्टिगोप्रोकेटस (*Mastigopro cetus*) उल्लेख्य है। यह छोटे-छोटे कीड़ों का शिकार करता है। शेलेफर कैंक्रोआइड (*Chellefer Cancroide*) जाति का बिच्छू प्रायः पत्थरों आदि के नीचे छोटे-छोटे कीड़ों की तलाश करता रहता है। यह आकार में बहुत छोटा, चौथाई इंच का होता है। इस जाति के

मादा बिच्छू अपनी सन्तानों की सुरक्षा का विशेष ध्यान रखती है, और प्रायः उन्हें अपनी पीठ पर रखे रहती है

बिच्छू अपने घोंसले बनाने में बहुत नियमित होते हैं। ये घोंसले में ही बच्चे पैदा करते हैं और उनका पालन-पोषण करते हैं।

दरअसल मकड़े और बिच्छू में कोई प्रत्यक्ष मेल नहीं दीखता, लेकिन जातिगत अध्ययन के आधार पर इनके व्यवहरों में विलक्षण समानता मिलती है। वास्तव में दोनों ही शिकार करने वाले जीव हैं, और दोनों ही की कुछ जातियां मानव के लिए संकट उपस्थित कर देती हैं।

समुद्री मकड़ा : आठ पैरों वाला जन्तु

गोताखोर समुद्री मकड़े को अच्छी तरह पहचानते हैं। इस जाति के मकड़े के चार जोड़े पैर होते हैं जो अपेक्षाकृत काफी लम्बे होते हैं। इसका पेट बहुत छोटा होता है। मादा का मुंह लम्बाकार होता है और सिरे पर छोटा-सा मुंह रहता है।

किनारे के जल में पाये जाने वाले मकड़ों का आकार गहराई में पाये जाने वाले मकड़ों से छोटा होता है। ये बहुधा एलगी पर ही जीवन निर्वाह करते हैं, लेकिन कुछ मकड़े जेलीफिश से चिपके रहकर उनकी का जीवन व्यतीत करते हैं। अंडे से जब बच्चा निकलता है, तो उसके छह पैर होते हैं। अतिरिक्त पैर विकास के साथ-साथ प्रकट होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आंवला

औषधीय महत्त्व का फल

शशिभूषण शलभ

आंवला भारत में बहुत लोकप्रिय फल है। भारत में प्रत्येक स्थान पर यह उत्पन्न होता है। इसे भाषा और स्थान के अनुसार अनेक नामों से सम्बोधित किया जाता है। संस्कृत में इसे आमलक, धात्री और अमृत-फल भी कहते हैं। हिन्दी में इसके कई नाम प्रसिद्ध हैं। इसे आमला, आंवड़ा, आंवरा, औड़ा और औंरा कहते हैं। बंगला में इसे आमलकी; मराठी में आवली, आंवला कांटा; गुजराती में अमली; मलयालय में अवला कम; तमिल में मैलिकाई; कन्नड़ में काया; तेलुगु में उसीरिकी; फारसी में आमलाह और लैटिन में एम्बिलक मेरो बलन (*Emblic myro balan*) कहते हैं।

परिचय

आंवला धानी रंग का एक छोटा-सा गोल फल है। इस पर खरबूजे की तरह धारियां बनी होती हैं। आंवले के रेशे उभरी हुई नसों के समान दिखायी देते हैं। पके हुए आंवले का रंग पीला और लाल होता है। इसके वृक्ष सारे भारत में पाये जाते हैं। आंवले के वृक्ष की ऊंचाई २५-४५ फुट के लगभग होती है। इसकी पत्तियां बहुत छोटी-छोटी होती हैं। पत्तियों का रंगरूप इमली की पत्तियों के समान होता है। इसके वृक्ष की छाल प्रतिवर्ष शुष्क होकर स्वयं बिखर जाती है। शाखाओं पर बहुत छोटे-छोटे फूल खिलते हैं जो बाद में फल का रूप धारण कर लेते हैं।

आंवला तीन प्रकार का होता है—कलमी आंवला, बीजू आंवला और जंगली आंवला। कलमी आंवला दूसरे आंवलों की अपेक्षा कुछ बड़ा फल होता है, परन्तु इसमें रेशे नहीं होते। इसलिए स्वाद के लिए तो अच्छा होता है परन्तु यह अधिक लाभदायक नहीं होता। बीजू आंवला कलमी आंवले की अपेक्षा कुछ छोटा फल होता है। इसमें रेशे भी पाये जाते हैं। यह पहले की अपेक्षा बहुत कुछ लाभदायक होता है। आंवलों में विशेषकर जंगली आंवले का प्रयोग किया जाता है। यह गुण, स्वाद में दूसरों की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ होता है। यह अधिकतर जंगलों में उत्पन्न होता है। इसके फल बहुत ठोस और छोटे होते हैं। इसमें रेशे भी बहुत घने पाये जाते हैं। उक्त गुणों के कारण अधिकतर इसी आंवले का विभिन्न रूपों में प्रयोग करते हैं।

वैज्ञानिक विश्लेषण

आंवला गुणप्रधान लाभदायक फल है। वैज्ञानिक दृष्टि से आंवले में शक्ति देने वाले सभी गुण पाये जाते हैं। आंवले का रासायनिक विश्लेषण इस प्रकार है—आंवले में प्रोटीन ०·५%, वसा ०·१%, लोहा ०·२% कैल्शियम ०·५%, जल ८१·२%, कर्बोज १४·१%, खनिज लवण ०·७%, फासफोरस ०·५% पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त विटामिन-सी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होता है।

प्रकृति

आंवला स्वाद में कसैला, मधुर, चरपरा और गुण में शीतल, ग्राही, अम्लयुक्त तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्ष होता है। आंवला वायु, पित्त, कफ के दोषों को नष्ट करता है, इसलिए इसे निर्दोष नाशक भी कहते हैं। इसके प्रयोग करने से मूत्र साफ आता है। इससे दूषित रक्त शुद्ध होता है और शरीर में शक्ति का विकास होता है। यह नेत्रों की ज्योति बढ़ाता है। आंवले को सुखाकर, कूट-पीसकर सिर धोने से बाल और अधिक काले होते हैं। इससे मस्तिष्क को भी ठंडक पहुंचती है। आंवले के विभिन्न रूपों में प्रयोग करने से अनेक रोग नष्ट होते हैं। पीलिया, कामला, अतिसार, अजीर्ण, वात रक्त, नेत्र रोग, मूत्रकृच्छ, अग्निमान्द्य, बहुमूत्र, क्षय, धातु रोग, कब्ज, बेरी-बेरी, रक्त प्रदर, प्रमेह, श्वास कास, प्रदाह, अर्श, रक्ताल्पता, अम्लपित्त तथा वमन आदि विकारों में आंवला बहुत लाभ पहुंचाता है।

आंवले के प्रयोग

आंवला कच्चा, पका अथवा सुखाकर किसी भी प्रकार प्रयोग किया जा सकता है। कटे हुए आंवलों को काटकर धूप में सुखा लेते हैं। इससे कई प्रकार के पौष्टिक खाद्य पदार्थ तैयार किये जाते हैं। आंवलों को कूटकर मुकन्द, मुक्ता पिष्टी और मिश्री मिलाकर प्रतिदिन प्रातः सेवन करने से सिरदर्द समाप्त हो जाता है।

हमारे देश में प्राचीन काल से आंवले को शक्तिवर्द्धक ओषधियों के रूप में प्रयोग करते हैं। च्यवन ऋषि ने आंवले से ही लाभदायक, शक्तिवर्द्धक ओषधि च्यवनप्राश का निर्माण किया था, जिसका प्रयोग आज भी बहुत अधिक मात्रा में किया जाता है। च्यवनप्राश नवयुवकों और वृद्धों को शक्ति प्रदान करने वाली सबसे उत्तम ओषधि है। विद्यार्थियों को इससे मानसिक शक्ति प्राप्त होती है।

वृक्ष अंग

आंवले के वृक्ष की सभी वस्तुएं बहुत लाभदायक और उपयोगी होती हैं। कच्चा, पका आंवला, पुष्प, हरी और सूखी पत्तियां, बीज, वृक्ष की छाल, सभी वस्तुएं उपयोग में लायी जा सकती हैं।

पत्तियों का प्रयोग

इसकी पत्तियों में टेनिन एसिड बहुत अधिक मात्रा में प्राप्त होता है। सूखी पत्तियों का चूर्ण बनाकर सेवन करने से अजीर्ण और अग्निमान्द्य के दस्त बन्द हो जाते हैं। इसकी पत्तियां मुंह के छालों, सड़े-गले घावों व फोड़े-फुंसियों को शीघ्र ठीक करने में बहुत उपयोगी हैं। इसके लिए पत्तियों का क्वाथ बनाकर प्रयोग करना चाहिये।

आंवले का पुष्प

इसमें गेलिक एसिड विशेष मात्रा में पाया जाता है। आंवले का पुष्प शीत वीर्य, मृदुरेचक गुण वाला होने के कारण पेचिश, आंव, खूनी दस्त, रक्तपित्त और खूनी बवासीर को ठीक करता है।

घरेलू उपयोग

आंवले का अचार बहुत स्वादिष्ट तथा लाभदायक होता है। दूसरे अचारों की खटाई स्वास्थ्य को हानि पहुंचाती है, लेकिन आंवले की खटाई से लाभ होता है। आंवले के अचार के लिए हरे आंवले को टुकड़ों में काट लेना चाहिये। शुद्ध सरसों के तेल में अचार की सामग्री मिलाकर आंवलों के साथ धूप में रख देते हैं। एक दिन धूप में रखने से दो-तीन दिन पश्चात् जब अचार बन जाता है, तो उसका सेवन करते हैं।

यह अचार स्वादिष्ट ही नहीं, बहुत लाभदायक भी होता है। इसके सेवन से कब्ज दूर होती है तथा भोजन शीघ्र पचता है। इससे भूख बढ़ती है और प्लीहा, यकृत के विकार ठीक होते हैं।

मुरब्बा

सबसे अधिक आंवले का प्रयोग मुरब्बे के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

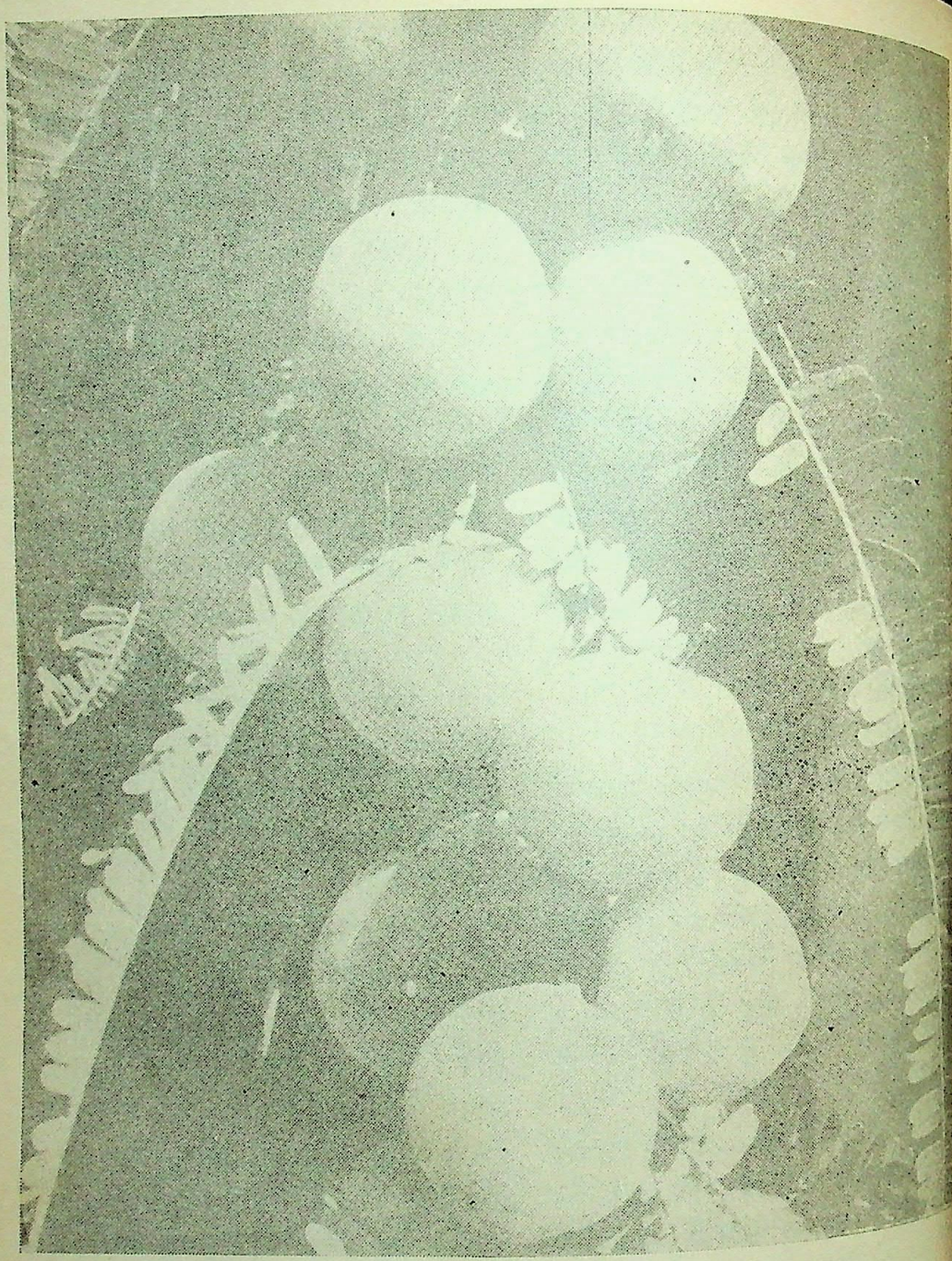

कलमी आंवला दूसरे आंवले की अपेक्षा कुछ बड़ा फल होता है

रूप में किया जाता है। आंवले का मुरब्बा विदेशों में भी बहुत प्रसिद्ध है। बड़े घरों में नास्ते के साथ आंवले के मुरब्बे को चांदी का वर्क लगाकर खाते हैं। मुरब्बा बहुत स्वादिष्ट, लाभदायक और शक्तिवर्द्धक होता है।

मुरब्बा बनाने की विधि

पके हुए आंवलों को जल से धोकर स्वच्छ कर लेते हैं। फिर किसी बारीक सलाई से सूई छेदते हैं।

छेदने के बाद उसे चूने के पानी में छोड़ देते हैं। पन्द्रह-बीस घंटे चूने के पानी में भिगोने के पश्चात् कुछ घंटे उन आंवलों को ठंडक में पड़ा रहने देते हैं। फिर उन्हें स्वच्छ जल से धोते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिश्री या चीनी की चाशनी बनाकर आंवलों को उसमें उबालते हैं। फिर ठंडा करने के लिए रख देते हैं। दूसरे दिन फिर आंवलों को उस चाशनी से निकालकर उसी में फिर चीनी की चाशनी तैयार करते हैं।

कम से कम तीन बार चीनी की चाशनी बनाकर आंवलों को उसमें पकाते हैं। ऐसा करने से आंवले भलीभांति चीनी पकड़ लेते हैं और उनका कसैलापन, खट्टापन जाता रहता है।

महिलाएं भी इसका प्रयोग कर सकती हैं। उनके खाने से श्वेतप्रदर, वायु, खांसी, श्वांस, रक्तपित्त आदि विकार नष्ट हो जाते हैं। मुरब्बे के साथ दूध पीने से बहुत शक्ति बढ़ती है।

गर्भ के समय आंवले का प्रयोग

गर्भ के समय अधिकतर स्त्रियों को बहुत कष्ट और परेशानी होती है। इस कष्ट से मुक्ति पाने के लिए आंवले का प्रयोग किया जाता है। पांच तोले आंवले को बीस तोले जल में खूब उबालते हैं। जब आठ तोले शेष रह जाय, तो उसमें शहद मिलाकर खिलाते हैं। इसके प्रयोग से सन्तान बिना किसी कष्ट के उत्पन्न होती है।

बालों के लिए एक प्रयोग

सूखे आंवले के टुकड़े रात्रि को पानी में भिगो देते हैं। सुबह उसके पानी से बाल धो लेते हैं।

कुछ सप्ताह ही ऐसा करने से लाभ अनुभव होने लगता है। इसके प्रयोग से बालों का गिरना, पकना बन्द हो जाता है और बाल लम्बे, काले होते हैं। इससे मस्तिष्क को शक्ति प्राप्त होती है।

आंवले की चटनी

इसकी चटनी बहुत स्वादिष्ट और लाभदायक होती है। इसके खाने से भूख बढ़ती है। बनाने की विधि इस प्रकार है—हरे आंवलों को काटकर उसमें नमक, अदरक और प्याज (लहसन) मिलाकर पीस लेते हैं। प्रयोग करने से कब्ज अतिसार, आंव, पेचिश नष्ट होते हैं। रक्त शुद्ध होता है और भोजन रुचिकर बन जाता है तथा भूख भी बढ़ती है।

रोगों में उपयोग

सूखे आंवले को कूट-पीसकर चूर्ण बना लेते है। कुछ समय तक मूली के साथ इस चूर्ण को खाते रहने से मूत्र पथरी नष्ट हो जाती है। इसी चूर्ण को एक-एक तोला प्रतिदिन गाय के दूध से खाने पर वीर्य अधिक शक्तिशाली बनता है।

धातु रोग, स्वप्नदोष, मधुमेह रोग नष्ट होते हैं और शरीर में शक्ति आती है। रक्त शुद्ध होता है।

तोतले बच्चों की जबान को ठीक करने के लिए सूखे आंवले के चूर्ण को गाय के घी के साथ मिलाकर चटाते है। कुछ दिनों में तुतलाना ठीक हो जाता है।

आंवले के चूर्ण को तेल में मिलाकर मालिश करने से खुजली नष्ट होती है। फोड़े-फुंसी और गुमड़ियों को ठीक करने के लिए आंवले को छाछ (लस्सी) में घिसकर लगाना चाहिये। इससे शीघ्र लाभ होता है। जल जाने पर इसका प्रयोग किया जा सकता है।

पाडू रोग (पीलिया) में आंवले का चूर्ण छाछ के साथ सेवन करते है। गरमी के दिनों में बार-बार नाक बहने पर सूखे आंवले को घी में तलकर, पीसकर मस्तिष्क पर लेप करना चाहिये।

आंवले का नियमित सेवन करने से कब्ज दूर होती। नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। कच्चे आंवले का प्रयोग करने से आत्म और उदर के अनेकों विकार नष्ट होते हैं। यह कृमियों को शीघ्र नष्ट करता है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupil how to write sentences correctly. He learns by doing, and by doing *correctly*.
- Exercises are so arranged that even a slow child is sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The Work Books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I.....Price : Re. 0·80
Book II.....Price : Re. 1·00
Book III.....Price : Re. 1·20

For further enquiries please write to :

SRI RAM MEHRA & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA-3

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षय एक घातक रोग

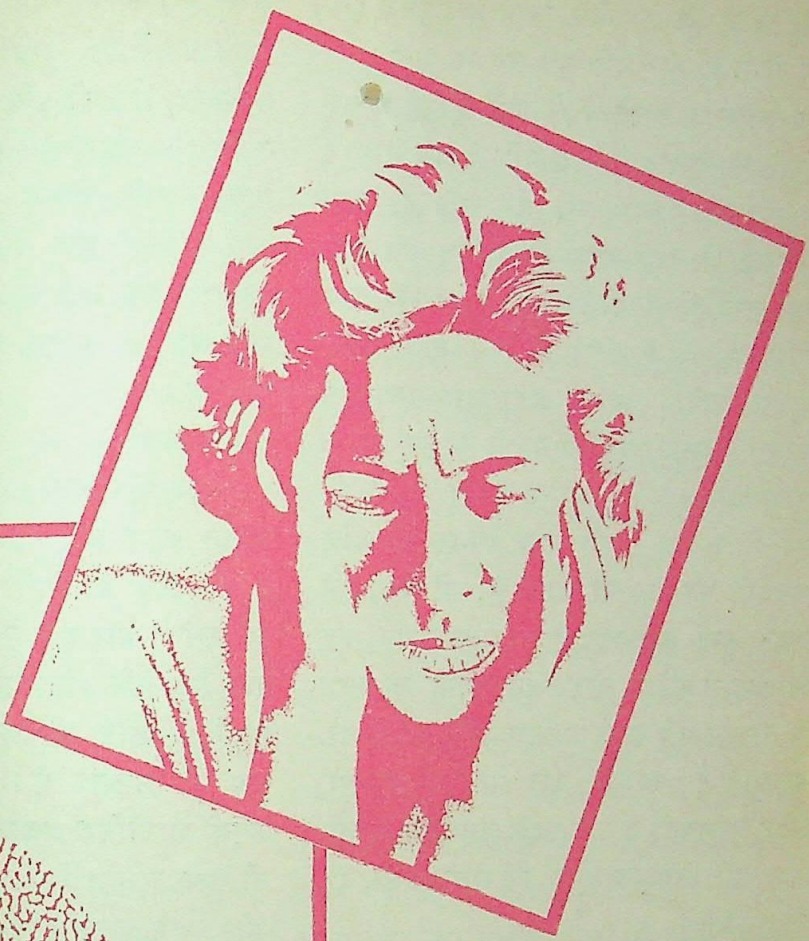

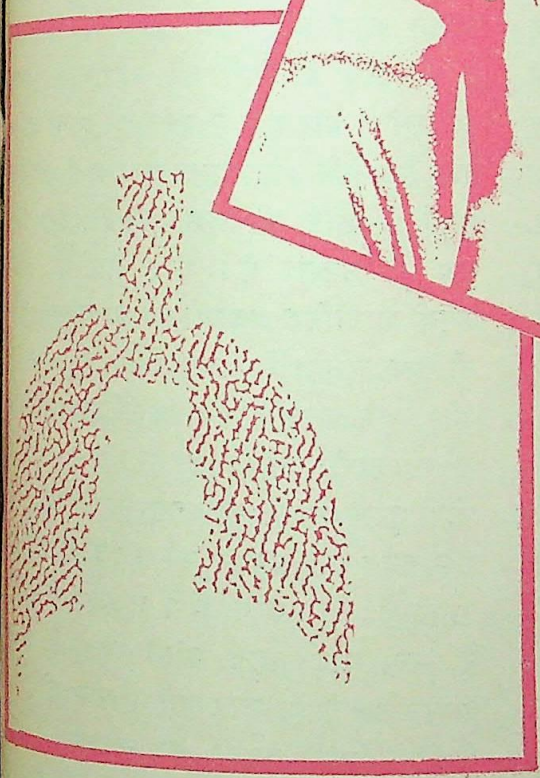

इलाज और रोकथाम : आशा और निराशा का आदिमयुगीन सन्दर्भ

रमेशप्रसाद शर्मा

क्षय रोग आदिम युग से मानवता को त्रस्त कर रहा है। यह शरीर का घुन है जो चुपके से आता है और शरीर को धीरे-धीरे खाता चला जाता है। रोग का पता उस समय चलता है जब काफी समय बीत चुकता है। आज से बीस साल पहले जब क्षय रोग का कोई इलाज नहीं था, क्षय की चपेट में आये हुए नौजवान बेटे को बचाने की झूठी उम्मीद में घर के बरतन-जेवर और जमीन बिकती ही चली जाती थी, उधर आशा और निराशा के झूले में झूलता हुआ लड़का आखिर एक दिन दम तोड़ देता था।

क्षय : एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या

क्षय भारत ही की नहीं, वरन् सम्पूर्ण संसार की एक बहुत बड़ी समस्या है, जिससे संसार के लगभग डेढ़ करोड़ व्यक्ति पीड़ित हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत में ही पच्चीस लाख से अधिक क्षय के रोगी हैं, और प्रति वर्ष लगभग पांच लाख व्यक्ति काल कलवित हो जाते हैं। आधुनिक चिकित्सा-पद्धति से जिस गति से क्षय से मरने वालों की संख्या कम हो रही है, उसी अनुपात में अभाग्यवश क्षयपीड़ित होने वाले व्यक्तियों की संख्या बढ़ रही है। इसका एक-मात्र कारण है दिन व दिन बढ़ने वाली गरीबी और हमारा अज्ञानमय संयमहीन जीवन। हमारा दुर्भाग्य यह है कि हम क्षय के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानते। यदि किसी को एक्सरे अथवा किसी अन्य प्रकार की जांच करवाने की राय दी जाती है, तो वह उसे बहुत बुरा समझता है। डाक्टर पर वह अविश्वास करेगा और कहने लगेगा कि आज के डाक्टर पैसे ठगने के लिए हरेक को टी.बी. बतलाते हैं। आखिर जब रोग बढ़ जायेगा, और सम्भवत: कफ के साथ खून आने लगेगा, तब कहीं विश्वास होगा कि सचमुच टी. बी. हो चुकी है।

क्षय कैसे फैलता है ?

यह बहुत ही छोटे-छोटे जीवाणुओं से जिन्हें 'माइक्रो बैक्टीरियम ट्युबरकुलोसिस' कहते हैं, फैलता है। इनकी खोज जरमनी के राबर्ट काख ने १८८२ में की थी। इनका सिर गोल या नोकदार होता है और शरीर गठीला या दानेदार। इन पर केवल एक ही रंग का असर होता है, वह है कार्बोलफुखसिन, और एक बार रंग जाने पर फिर ये कभी रंगहीन नहीं होते। टी. बी. के जीवाणु ८० सें. तक ताप सह लेते हैं और अनेक जीवाणुमारकों से बच जाते हैं। बरसों बिना खाये-पीये जी सकते हैं और फेफड़ों को ज्यादा प्रभावित करते हैं। थूक की एक बूंद में ये पांच लाख की संख्या में रह सकते हैं। गन्दी आदतों में ये पलते तथा फैलते हैं। ये कमजोर आदमी पर काफी तेजी के साथ असर करते हैं। अनियमित जीवन, शराब, चरस आदि का सेवन, अत्यधिक परिश्रम, आराम न करना, रात को अधिक जगने, अच्छी खुराक न मिलने, कड़ी और खतरनाक चोटें लगने, कुकुर खांसी, चेचक, इंफ्लुएंजा, सरदी के रोग आदि के होने, स्त्रियों के बार-बार गर्भ धारण करने, क्षय के रोगी के बेहद सम्पर्क में आने आदि के कारण क्षय का होना सम्भव होता है।

क्षय के लक्षण

क्षय के लक्षणों को पहचान पाना बहुत कठिन कार्य है। साधारणत: यह धारणा है कि क्षय के रोगी को ज्वर, छाती में दर्द, खांसी और थूक में रक्त का आना अनिवार्य है। लेकिन यह गलत धारणा है, क्योंकि इनमें से कोई भी लक्षण न हो, फिर भी क्षय हो सकता है। यदि क्षय का रोगी अपनी शारीरिक अवस्था को ध्यानपूर्वक देखे, तो पता चलेगा कि इस रोग का साधारण और प्रथम लक्षण है बिना किसी प्रत्यक्ष कारण के कमजोरी अनुभव करना। इस दशा में रोगी घूमने-फिरने की इच्छा नहीं करता और उसे सदैव एक प्रकार की कमजोरी सताती रहती है। जिन लोगों में ये लक्षण प्रकट होते हैं, उन्हें थोड़ी-बहुत खांसी रहती है, गला खराब रहता है, ज्वर बहुधा शाम को होता है और किसी प्रकार की तकलीफ न पैदा करने के कारण जल्दी पकड़ में नहीं आता। रात को सोते समय क्षय के रोगी को पसीना आता है और वजन गिरता जाता है। धीरे-धीरे भूख कम होती जाती है। अन्तिम चिह्न कफ के साथ खून का आना है। कभी-कभी खांसी आते ही खून की उलटी होती है। हो सकता है कि इनमें से कोई एक लक्षण प्रत्यक्ष रहे और शेष प्रकट न हों, अथवा कई लक्षण एक ही साथ प्रकट हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षय की अवस्थाएं

क्षय रोग एक या दोनों फेफड़ों में हो सकता है। सबसे पहले फेफड़ों में कहीं-कहीं बहुत ही छोटे स्थान पर क्षय के लक्षण रोगी के एक्सरे में दीख पड़ते हैं जिसे इंफिल्ट्रेशन (infilteration) कहते हैं। यदि इस स्थिति में रोग की रोकथाम नहीं की जाती है, तो रोग के कीटाणुओं से प्रभावित स्थानों पर गलाव बढ़ता जाता है। इसे फेफड़े में दाग का होना कहा जाता है। जब गलाव अधिक बढ़ जाता है तो छेद निकल आते हैं, और इस स्थिति को फेफड़े में केवेटी (cavity) का होना कहते हैं।

क्षय की तीन प्रमुख अवस्थाएं

सुविधा की दृष्टि से चिकित्सकों ने क्षय को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में विभाजित किया है—

प्रथम अवस्था

इस अवस्था में रोगी को (बिना अनुभव होने वाला) ज्वर रहता है। अनायास ही जब थर्मामीटर लगता है तब ज्वर के रहने का पता लगता है। कभी-कभी हलकी खांसी उठती है और थोड़ा-सा बलगम निकलता है। भूख-प्यास और वजन में कोई विशेष अन्तर नहीं आ पाता है। योग्य और अनुभवी डाक्टर ही रोग को पकड़ पाते हैं और थोड़े ही दिनों के इलाज से रोगी रोगमुक्त हो जाता है।

दूसरी अवस्था

इस अवस्था पर आते-आते रोगी को स्वयं ही सन्देह होने लगता है और डाक्टर भी रोग को सरलता से पहचान लेता है। खांसी कुछ तेज हो जाती है, बलगम अधिक निकलता है, हलका ज्वर सदैव बना रहता है जो शाम को बढ़ जाता है, सीने में हलका दर्द रहता है, रात को पसीना निकलता है, नाड़ी की गति तेज हो जाती है, रोगी कमजोरी महसूस करता है, और वजन घटता जाता है। अगर रोग का विधिवत इलाज करवाया जाता है, तो रोगी बच जाता है।

तीसरी अवस्था

क्षय के कीटाणु इस अवस्था में फेफड़े को क्षत-विक्षत कर चुकते हैं। खांसी बढ़ जाती है, भूख बिलकुल नहीं लगती, पैर और चेहरे पर सूजन आ जाती है, नींद ठीक से नहीं आती, रात को पसीना बहता है, बलगम बदबूदार निकलता है, रोगी हड्डी का ढांचा मात्र रह जाता है, तथा कमजोरी काफी बढ़ जाती है। इस अवस्था के रोगी को बहुत सावधानी की आवश्यकता रहती है।

चिकित्सा

क्षय का थोड़ा-सा भी सन्देह होने पर किसी अनुभवी डाक्टर की राय लेनी चाहिये। प्रारम्भिक अवस्था में यह रोग आसानी से पकड़ में नहीं आता, लेकिन पकड़ में आ जाय तो इसका इलाज बहुत ही आसान है। क्षय का सरल इलाज है चिन्तामुक्त रहना, अच्छी नींद सोना और डाक्टर द्वारा दी हुई ओषधि समय पर लेना। आज से लगभग २५-३० वर्ष पूर्व इस रोग की कोई दवा नहीं थी, पर आज तो कई प्रमुख दवाएं उपलब्ध हैं, जैसे स्ट्रेप्टोमाइसीन, पारा एमिनोसोलिसाइटिक-एसिड (पी. ए. एस.), आइसोनोक्रोनोटोनिक-एसिड-हाइड्राजाइड (आई. एन. ए. एच.), सायोकार्बाजोन, इथियानामाइड, साइक्लोसेरिन, पाइरोजीनामाइड आदि। विशेषकर प्रथम तीन ओषधियों का प्रयोग किया जाता है। स्ट्रेप्टोमाइसीन की खोज १८४४ में अमरीकी वैज्ञानिक, नोबल पुरस्कार विजेता सिल्मन ए. वाक्समन ने कुछ अन्य वैज्ञानिकों की सहायता से की थी। पेनीसीलीन की भांति यह भी एक फफूंदी (स्ट्रेप्टोमाइसीन ग्राइसस) से बनायी जाती है। जार्जेन लेहमैन ने पी. ए. एस. की खोज १९४६ में की थी। क्षय के जीवाणुओं की वृद्धि को रोकने की शक्ति इसमें है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आई. एन. एच. की खोज १९५१ में हुई थी। यह अपनी क्षमता और अल्प विषाक्तता के लिए प्रसिद्ध है। प्रारम्भ में यह ४८ रुपये प्रति सैकड़े के हिसाब से बिकती थी, किन्तु आज काफी सस्ती मिल जाती है।

सबसे परेशानी की बात यह है कि इस रोग के एक बार हो जाने पर महीनों बाद यह नियन्त्रण में आता है। कम से कम ८-१० महीने तो लग ही जाते हैं। क्षय के रोगी के लिए सुरुचिपूर्ण, विटामिनयुक्त भोजन, खुली हवा, नियमित विश्राम, मानसिक प्रसन्नता और आधुनिक ओषधियों की आवश्यकता है।

शल्य चिकित्सा

आज की क्षय-सम्बन्धी सूक्ष्म शल्य क्रियाओं का विकास पेविया के सर्जन कार्लो फार्लानी की कृत्रिम बातिल वक्ष की तकनीक की खोज से हुआ। इन सब क्रियाओं का उद्देश्य क्षयग्रस्त फेफड़े को वातरहित करके उसे आराम देना और उसके रुग्ण भाग को स्वस्थ होने का अवसर देना है। इसी प्रकार की अन्य क्रिया द्वारा फ्रेनिक नर्व में अल्कोहलडालकर फ्रेनोअल्कोहोलिस्टेशन कर दिया जाता है अथवा उसे कुचलकर डायाफ्राम को क्रियाशून्य कर दिया जाता है। कैवर्नोस्टामी शल्यक्रिया द्वारा सीधे फुफ्फुस के भीतर के क्षयग्रस्त भाग को पूरी तरह साफ किया जाता है और ओषधियां आदि डाली जाती हैं।

बी. सी. जी. की कहानी

प्रयोगशाला में लगातार २३ दिनों तक पशुजातीय काक जीवाणु को ग्लिसरीन तथा गो-पित्त में उबाले हुए आलुओं में बार कल्चर तथा सब-कल्चर क्रिया द्वारा नपुंसक जीवाणु में परिवर्तित किया गया। इसका नाम बैसिलस कामेट्टे गुएरिन (बी. सी. जी.) रखा गया। पहली बार बी. सी. जी. छह मिलीग्राम की मात्रा में क्षय से पीड़ित मां-बाप के एक बच्चे को पेरिस में दिया गया। परिस्थितियों के अनुसार बच्चे के क्षयग्रस्त होने की पूरी सम्भावना थी, किन्तु फिर भी वह अपनी सामान्य स्थिति में पाया गया। यही बी. सी. जी. की पहली सफलता थी। इसके बाद अनेक बच्चों को बी. सी. जी का टीका दिया गया। पैस्ट्युअर इंस्टीट्यूट बी. सी. जी. के टीके बनाकर बाहर भेजने लगा जिसका उपयोग अर्जेंटाइना, क्यूबा, पोलैंड आदि देशों में होने लगा। किन्तु कुछ जगह इसका विरोध भी किया गया। स्विट्जरलैंड, आस्ट्रिया, फ्रांस में बी. सी. जी. के प्रयोग का काफी विरोध हुआ। पर राष्ट्रसंघ द्वारा संचालित एक जूरी ने अपना फैसला दिया कि बी. सी. जी. निश्चित रूप से लाभदायक थी।

इसी बीच लूबेक (जरमनी) की दुखान्त घटना हुई। लूबेक में दिसम्बर १९२९ और अप्रैल १९३० के बीच २५२ बच्चों को बी. सी. जी. के टीके दिये गये। उनमें से क्षय संक्रमण के कारण ७१ मर गये, २७ बीमार पड़े और ५ की हालत बहुत नाजुक हो गयी। खोजबीन के पश्चात् मुकदमा चला। अन्त में यह पाया गया कि प्रयोगशाला की भयंकर भूल के कारण यह दुर्घटना हुई। प्रयोगशाला के अधिकारी को सजा हुई और तब से अनेक बच्चों को बी. सी. जी. का टीका दिया जा रहा है। इसकी उपादेयता निर्विवाद सत्य सिद्ध हो चुकी है।

इलाज घर में या सेनेटोरियम में

इसका इलाज आजकल सरलतापूर्वक घर में भी किया जा सकता है, लेकिन इसके लिए बहुत कुछ सावधानियां बरतनी पड़ती हैं। मरीज का हवादार कमरा बिलकुल अकेला होना चाहिये, उसमें पलंग, एक मेज, आराम करने की कुर्सी तथा खाने के बरतन होने चाहिये। मरीज के उपयोग की वस्तुएं, खाने के बरतन, तौलिया, बिस्तर, थर्मामीटर, पुस्तकें आदि को अलग ही रखा जाय। उसके थूक,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मल आदि का उचित ढंग से परिष्कार और और विस्तारण होना चाहिये। दोपहर को लगभग दो घंटे रोज सोना आवश्यक है। यदि नींद न आये, तो भी पलंग पर पड़े रहना चाहिये। इस बीच किताब पढ़नी या बातचीत नहीं करनी चाहिये। वास्तव में रोगी को शारीरिक और मानसिक आराम की जरूरत होती है। किताब पढ़ने या बातचीत करने से निश्चय ही मस्तिष्क पर दबाव पड़ेगा जो दुर्बलता बढ़ायेगा। अन्य किसी समय सरल साहित्य पढ़ा और रेडियो आदि सुना जा सकता है। जब बुखार आना खत्म हो जाय, तब सुबह-शाम थोड़ा-सा टहला जा सकता है। क्षय-रोगी एक तरह से बहुत थका हुआ होता है। अतः थकान से बचना चाहिये। प्रातः छह बजे बिस्तर से उठना और शाम को आठ बजे सो जाना आवश्यक है। इसमें जितना आराम किया जा सके उतना ही अच्छा है। प्रायः रोगी को पहाड़ पर ले जाते हैं। यह भी एक अच्छी बात है। इसमें वातावरण-परिवर्तन तो होता ही है, साथ-साथ रोगी का स्वास्थ्य भी सुधरता है। जिन रोगियों को अस्पताल की चिकित्सा की सुविधा मिल सके वे उस सुविधा का सदुपयोग करें, क्योंकि आरोग्य निवास (सैनेटोरियम) एक वातावरण है, संस्था नहीं। क्षय के रोगियों की संख्या को देखते हुए प्रत्येक का आरोग्य निवास में स्थान पाना कठिन है, अतः घर पर सावधानी-पूर्वक किया गया इलाज सस्ता रहता है, और अच्छा भी।

क्षय आज एक विश्वव्यापी समस्या है। अमरीका, इंग्लैंड, रूस, चीन, जापान, कहीं भी क्षय के रोगी मिलेंगे। एक तरह के लक्षण, एक-सी ही शारीरिक दुर्बलता, और एक-सा ही परिणाम। इस पर भौगोलिक सीमाओं का बन्धन नहीं है और न जलवायु और सामाजिक भेदभाव का। जो देश आर्थिक रूप से उन्नत हो चुके हैं, उनमें इस रोग का फैलना कम होता चला जा रहा है। ऐसा केवल उन्नत जीवन स्तर तथा रोक-थाम के पूर्ण विकसित वैज्ञानिक तरीके अपनाने के कारण है। आजकल इससे जल्दी निरोग होने के लिए अनेकानेक प्रयोग किये जा रहे है, और वह दिन दूर नहीं जब डाक्टर कहा करेंगे कि थोड़ा-सा क्षय हो गया है, एक इंजेक्शन या गोली में ठीक हो जायगा। फिर भी क्षय का आदिमयुगीन सन्दर्भ आज कायम है। यद्यपि सभ्यता पर्याप्त विकसित हो चुकी है, पर यह विकास कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित है। हां, यह स्वीकार्य है कि अर्द्ध-विकसित देशों में विकास कार्य शीघ्रता से सम्पन्न हो रहे हैं, और यह असम्भव नहीं जब क्षय का विश्व से पूर्ण उन्मूलन हो जायगा। ●

सल्फा ओषधियां : एक चमत्कार

सल्फा ओषधियों के आविष्कार से पूर्व निमोनिया से मृत्यु साधारण बात थी। चिकित्सक केवल रोगी की परिचर्या कर सकते थे, इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं। सल्फा ओषधियों के आविष्कार के बाद निमोनिया एक साधारण रोग रह गया। वास्तव में इन ओषधियों का आविष्कार एक चमत्कार था।

सल्फा ओषधियों को जीवाणु स्तम्भक ओषधियां कहते हैं। ये जीवाणुओं पर न विषैला प्रभाव डालती हैं, न उन्हें मारती हैं। ये उनकी वृद्धि को रोक देती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाख का कीड़ा और उसका पालन

यमुनाधर पांडेय, एम. एस-सी.

मानव को लाभ पहुंचाने वाले कीड़ों में लाख के कीड़े का स्थान प्रमुख है। लाख का उपयोग मानव सभ्यता के आरम्भ से ही हुआ है। आधुनिक युग में इसका सबसे अधिक उपयोग ग्रामोफोन रिकार्ड बनाने में होता है। इसके अतिरिक्त यह विभिन्न कार्यों में जैसे चूड़ियां, वार्निश, पालिश, छापने की स्याही बनाने में, सील बन्द करने में, शीशे में पालिश करने में, फेल्ट हैट के कपड़े में कड़ापन लाने के लिए, आभूषणों के अन्दर भरने के उपयोग में आती है। भारतवर्ष में प्रतिवर्ष लगभग ४२,००० मेट्रिक टन लाख उत्पन्न होती है जो उत्पादन की दृष्टि से संसार के उत्पादन का लगभग तीन चौथाई है, और निर्यात से लगभग १५ करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रमुख लघु-उद्योग के रूप में इसकी खेती की जाती है और यह लगभग १½ लाख परिवारों की जीविका का साधन है। अतः आर्थिक दृष्टि से लाख का उत्पादन बहुत महत्त्वपूर्ण है।

लाख क्या है ?

संसार के अन्य देशों पाकिस्तान, बर्मा, श्रीलंका, चीन, थाइलैंड इत्यादि में भी थोड़ा-बहुत लाख का उत्पादन होता है। भारत में लाख का उत्पादन बिहार के छोटा नागपुर क्षेत्र में, मध्यप्रदेश के पूर्वी जिलों में, बंगाल, बम्बई, उत्तरी उड़ीसा, आसाम तथा उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले में प्रमुख रूप से होता है। कम उत्पादन वाले क्षेत्रों में मद्रास, मैसूर, राजस्थान तथा पंजाब के नाम उल्लेखनीय हैं।

लाख एक किस्म की पपड़ी है जो कीड़े द्वारा पैदा की जाती है, जिसे लाख का कीड़ा (लैसीफर लैका) कहते हैं। यह कीड़ा पलास, बेर, पीपल, बरगद, बबूल, कुसुम इत्यादि पेड़ों की कोमल टहनियों का रस चूसता है और अपनी लक्षग्रन्थियों द्वारा इस रस को उद्यास (रेजिन) के रूप में परिवर्तित कर देता है, जो द्रव के रूप में बाहर निकलता है और वातावरण के सम्पर्क में आने पर सूखकर कठोर तथा ठोस बन जाता है। यह लाख प्रायः मादाएं अपने शरीर के चारों ओर प्राकृतिक शत्रुओं तथा प्रतिकूल मौसम से बचने के लिए बनाती हैं।

कीड़े का पालन : जीवन-इतिहास

भारतवर्ष में इस कीड़े की वर्ष भर में प्रायः दो पीढ़ियां होती हैं। पहली पीढ़ी के शिशु ग्रीष्म ऋतु में जून से लेकर अगस्त तक निकलते हैं। इस पीढ़ी से शीत ऋतु में फसल तैयार होती है जिसे 'कार्तिकी' फसल कहते हैं। दूसरी पीढ़ी के शिशु अक्तूबर से जून तक निकलते हैं जिनसे ग्रीष्म ऋतु की फसल 'बैसाखी' मिलती है। कीड़े के जीवन-चक्र को भोजन तथा जल-वायु बहुत सीमा तक प्रभावित करते हैं। कुसुम के पेड़ों पर आश्रित रहने वाले कीड़ों की फसल को 'जेटी' तथा 'अगहनी' कहते हैं। फसलों के नाम हिन्दी महीनों पर आधारित हैं। 'कार्तिकी' तथा 'बैसाखी' फसलों को 'रंगीनी' तथा 'जेठी' एवं 'अगहनी' फसलों को 'कुसुमी' कहते हैं।

सभी फसलों में नर तथा मादा पाये जाते हैं। इनकी संख्या विभिन्न फसलों में विभिन्न होती है, लेकिन यह प्रायः १ (नर) और ३ (मादा) के अनुपात में होती है। लाख का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन अधिकतर मादा की संख्या पर निर्भर करता है, क्योंकि नर बहुत कम लाख बनाते हैं। अतः अच्छी फसल के लिए मादा प्रौढ़ों की संख्या जितनी अधिक हो, अच्छा है।

प्रौढ़ नर गुलाबी रंग का, १.३ मि. मी. लम्बा होता है। नर दो प्रकार के होते हैं—पंखधारी तथा पंखहीन। पंखधारी नर चमकीले लाल रंग का होता है और श्रृंगिकाएं तथा टांगें पीले-भूरे रंग की होती हैं। पंखधारी नर प्रायः ग्रीष्म ऋतु में तथा पंखहीन नर शीत ऋतु में पाये जाते हैं। इनके मुखभाग नहीं होते हैं, अतः ये ३-४ दिनों तक ही जीवित रहते हैं और इन दिनों में मादाओं से मैथुन करते रहते हैं। प्रौढ़ मादा गहरे लाल रंग की, १.५ मि. मी. लम्बी, पंख, टांगें और नेत्रविहीन होती है तथा अपनी शुंड को टहनी में गड़ाकर कोशिका-रस चूसती रहती है। मादा चल-फिर नहीं सकती है। वह एक ही स्थान पर चिपकी हुई लाख उत्पन्न करती रहती है।

विषेचन के पश्चात् मादा २५०-३५० अंडे लाख के खोल में देकर मर जाती है। मादा द्वारा बनाया गया यह खोल उसी के लिए समाधि बन जाता है। अंडों की संख्या वातावरण के तापक्रम पर बहुत निर्भर करती है। ग्रीष्म ऋतु में १७° से और शीत ऋतु में १५° से से कम तापक्रम होने पर मादा अंडे देना बन्द कर देती है। अंडे निषिक्त तथा अनिषिक्त, दोनों प्रकार के होते हैं और दोनों से नर तथा मादा कीट उत्पन्न होते हैं। अंडों से शिशु कुछ ही समय बाद निकल आते हैं।

नवजात शिशु बहुत छोटे तथा गुलाबी रंग के होते हैं। इनमें टांगें, आंखें तथा श्रृंगिकाएं उपस्थित रहती हैं। ये शिशु समूहों में होते हैं तथा मन्द गति वाले होते हैं। मादा की कोष्ठक से निकलने के बाद ये पेड़ पर, ऊपर की ओर चढ़ना प्रारम्भ कर देते हैं। कोमल टहनियों तक पहुंचने के बाद स्थिर हो जाते हैं और चिपककर रस चूसने लगते हैं तथा अपने शरीर के चारों ओर लाख बनाना प्रारम्भ कर देते हैं। मुख भाग, दो श्वास-रन्ध्रों एवं गुदा को छोड़कर शेष शरीर को पूरी तरह से ढंक लेते हैं। एक लाख का कोष्ठक कीड़े की आयु के अनुसार ही बढ़ता जाता है। प्रौढ़ होने के लिए शिशु तीन बार निर्मोक करता है और प्रत्येक रूप का समय वातावरण की दशाओं, यथा तापक्रम, आर्द्रता और भोजन इत्यादि पर निर्भर करता है। प्रथम निमोचन के पश्चात शिशु की टांगें, आंखें और श्रृंगिकाएं समाप्त हो जाती हैं। प्रारम्भिक अवस्था में नर और मादा में भेद करना कठिन है, लेकिन अंडाज्जन के लगभग दो सप्ताह बाद कोशिकाओं के आधार पर लिंग भेद किया जा सकता है। नर की कोशिकाओं में वृद्धि लम्बाई में तथा मादा कोशिकाओं में लम्ब-रूप होती है। तीसरे निर्मोक के पश्चात नर कीट कोशित (प्यूपा) अवस्था में पहुंच जाता है और फिर प्रौढ़ बनकर बाहर निकल आता है। टांगें, आंखें, श्रृंगिकाएं तथा पंख (पंखहीन नरों को छोड़कर) पूर्ण विकसित होते हैं। मादा प्रौढ़ में अन्तिम निर्मोक के पश्चात जननांग परिपक्व हो जाते हैं और नर मादा को निषेचित कर देता है। निषेचन के पश्चात मादा द्वारा लाख उत्पादन करने की क्षमता बहुत बढ़ जाती है, और प्रौढ़ मादा का शरीर तथा उत्पादित लाख की मात्रा नर की अपेक्षा कई गुना अधिक बढ़ जाती है।

लाख का उत्पादन

बहुत प्राचीन काल से ही आदिवासी जंगलों से लाख एकत्र करते रहे हैं। एकत्र करने की विधि बहुत ही दोषपूर्ण है और इससे कीट तथा पेड़ों को बहुत हानि पहुंचती है। कीड़ों की संख्या कम हो जाती है और पेड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

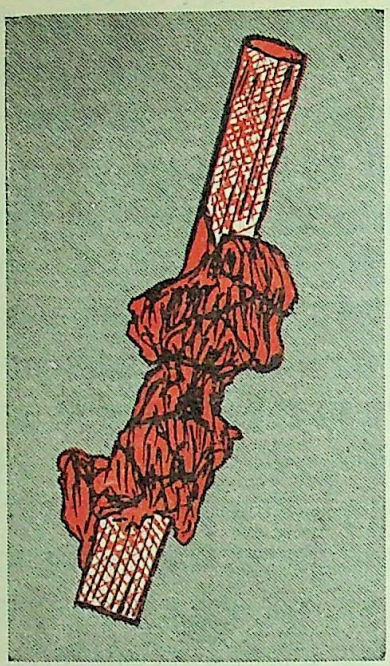

टहनी पर लगी हुई लाख

सूख जाते हैं, फलतः उत्पादन बहुत कम होता है।

आधुनिक विधि वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। इसको विभाजन-विधि कहते हैं। इस विधि में पेड़ों पर एक फसल लेने के बाद कुछ दिनों तक विश्राम करने के लिए छोड़ देते हैं जिससे पेड़ों के सूखने का डर नहीं रहता है, साथ ही पैदावार भी बढ़ जाती है। कुसुम के पेड़ों को जो धीरे-धीरे बढ़ते हैं, चार बराबर भागों में बांट लेते हैं तथा अन्य पेड़ों (पीपल, बरगद, बबूल आदि) की संख्या को ३:१:३ में विभाजित कर लेते हैं। कुसुम के प्रत्येक भाग के पेड़ों में एकान्तर जेठी तथा अगहनी फसलें उगाते हैं। इससे प्रत्येक पेड़ को १८ मास का विश्राम मिल जाता है। अन्य पेड़ों के दो बड़े भागों में एकान्तर वर्षों में 'बैसाखी' फसल और छोटे वाले भाग में प्रति वर्ष 'कार्तिकी' फसल उगाते हैं।

पेड़ों की छंटाई

लाख की खेती करने से पहले यह ध्यान रखना चाहिये कि जिन पेड़ों पर लाख की खेती की जाय, उन पर पर्याप्त मात्रा में कोमल टहनियां मौजूद हों जिससे कीड़ों का अच्छी तरह से भोजन मिल सके। अगर ऐसा नहीं है तो पेड़ों की छंटाई कर देनी चाहिये। छंटाई विशेषकर बेर के पेड़ के लिए आवश्यक होती है क्योंकि उसके बाद शीघ्र ही कोमल प्ररोह निकलने प्रारम्भ हो जाते हैं। साधारणतया पलास और कुसुम के लिए छंटाई की आवश्यकता नहीं होती है। छंटाई हलकी हो और इस प्रकार की गयी हो जिससे नये प्ररोहों के निकलने के लिए पर्याप्त स्थान मिल सके। छंटाई करते समय १ इंच से कम व्यास वाली, मरी हुई तथा रोगी टहनियों को काट देना चाहिये। बेर के पेड़ों की छंटाई का

पंखहीन प्रौढ़ नर

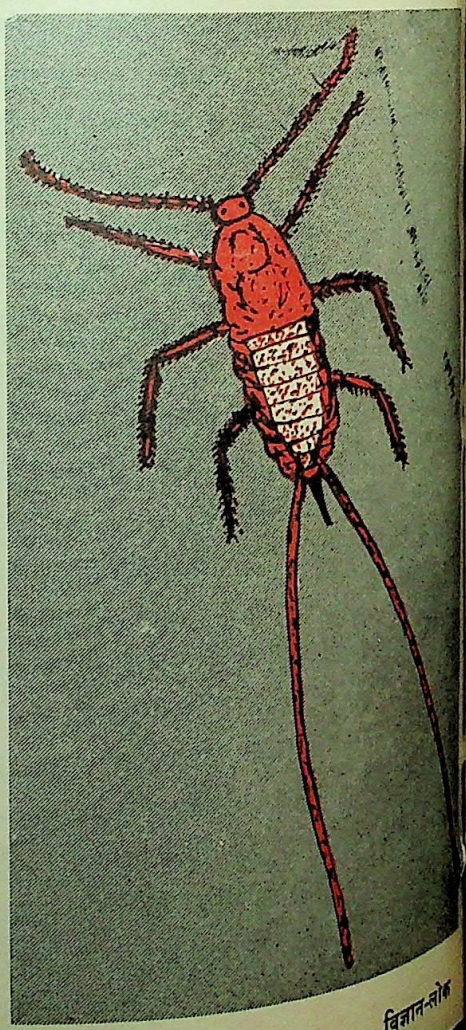

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उचित समय 'कार्तिकी' की फसल लेने के लिए मई तथा 'बैसाखी' की फसल लेने के लिए मध्य अप्रैल है।

पेड़ों में लाख के कीड़े रोपना

अच्छी जाति की लाख की टहनी (ब्रूड स्टैक) लाकर पेड़ों की टहनियों के ऊपर बांध देते हैं। लाख की इन टहनियों में कीड़े के अंडे उपस्थित रहते हैं। लाख की टहनी की लम्बाई सुविधानुसार १५-३० सें. मी. हो सकती है, और अंडों से शिशु निकलने के समय या इससे कुछ समय पहले इसे पेड़ों पर रोपना चाहिये। लाख की टहनी स्वस्थ, परजीवी और हिंस्रजीवी जीवधारियों से मुक्त होनी चाहिये। लाख की टहनियों को एक या दो सप्ताह बाद खोलकर एकत्र कर लेना चाहिये, नहीं तो ये हानिकारक जीवों द्वारा नष्ट कर दी जाती हैं। इस लाख को 'फकी' लाख कहते हैं।

कटाई

लाख की कटाई अथवा लाख की टहनियों को एकत्र करना, क्रमबद्ध तथा उपयुक्त समय पर शिशुओं के निकलने के समय होना चाहिये जिससे पेड़ को कोई हानि न पहुंचे। यदि लाख की फसल पकने से पहले ही इकट्ठी कर ली जाती है, तो इसको 'एरी लाख' कहते हैं। यह अहितकर है। यह केवल तभी करना

पंखधारी प्रौढ़ नर

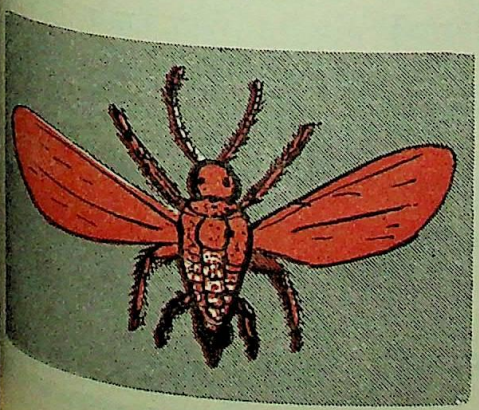

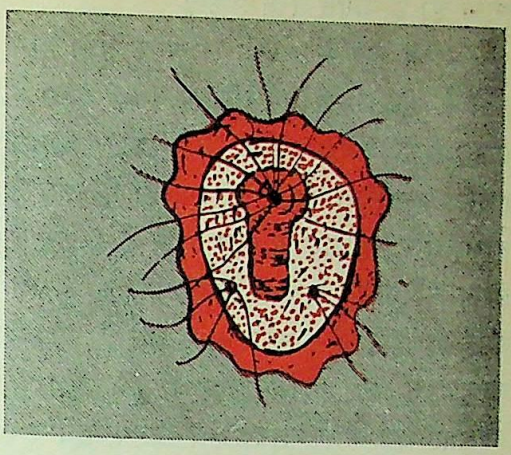

प्रौढ़ मादा

चाहिये जब टहनी के कीड़े किसी कारणवश प्रौढ़ होने से पहले ही मर गये हों। ठीक विधि तो यह कि जब सब कीड़े मर जायें तब लाख इकट्ठी करनी चाहिये। इस लाख को स्टिक लाख कहते हैं। इस लाख को टहनियों से छुड़ा लेते हैं और साफ करने पर इससे दाना लाख तथा चूर्ण लाख प्राप्त होती है। दाना लाख तथा चूर्ण लाख को गरम करके पपड़ी के रूप में जमा लेते हैं। इसे चपड़ा कहते हैं।

लाख के कीड़े के शत्रु

अन्य कीड़ों की भांति इस कीड़े के भी प्राकृतिक शत्रु हैं, जिन्हें दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—(अ) परजीवी तथा शिकारी कीट, (ब) अन्य शत्रु।

ये कीड़े फसल को बहुत हानि पहुंचाते हैं और कभी-कभी यह हानि उत्पादन के ३०-४० प्रतिशत तक पहुंच जाती है। परजीवी कीटों में कैलिसड्स का नाम उल्लेखनीय है। ये परजीवी पंखधारी होते हैं, तथा लाख के कोष्ठकों के अन्दर अंडे देते हैं जिनके शिशु लाख के कीड़ों का भोजन के रूप में प्रयोग करते हैं। शिकारी कीटों में प्रमुख रूप से दो पतंगे आते हैं—यूब्लेमा तथा होलोसेरा। इन दोनों की सूड़ियां लक्ष कीट तथा लाख दोनों को खाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाख का उत्पादन तथा सफाई

मुख्य रूप से कच्ची लाख के तीन भाग होते हैं–(क) उद्यास (रेजिन), (ख) पानी में घुलनशील रंजक और (ग) कठोर मोम। इसके अतिरिक्त मरे हुए कीड़ों के शरीर, बालू, धूल इत्यादि के कण रहते हैं। कच्ची लाख को पानी में भिगोकर, पैरों से अच्छी तरह मलकर तीन-चार बार धोते हैं, इससे लाल रंग का पदार्थ बाहर निकल जाता है जिसका अब कोई व्यापारिक महत्त्व नहीं है। कुछ समय पूर्व यह रंगने के कार्यों में प्रयोग किया जाता था। लाख को धूप में सुखा लेते हैं। इसे व्यापारिक दाना लाख कहते हैं। इस दाना लाख को गरम छानने की विधि से अथवा घोलक विधि से साफ करके चपड़ा बनाते हैं। गरम छानने की विधि में लाख को पतले कपड़ों के १० फुट या १२ फुट लम्बे झोलों में रखकर आगसे गरम करते हैं। झोले के दोनों किनारों को मोड़ते रहते हैं और लाख पिघलकर कपड़ेसे छन-कर बाहर निकल आती है जो पहली परतों के रूप में जम जाती है। इस लाख को कड़ा होने से पहले ही छोटे-छोटे टुकड़ों के रूप में परि-वर्तित कर लेते हैं। घोलक विधि में दाना लाख को किसी उपयुक्त घोलक, व्यापारिक अल्कोहल में घोलकर बारीक कपड़े से छान लेते हैं और स्वच्छ घोल को निथारकर अल्को-हल अलग कर लेते हैं और शुद्ध लाख अलग।

एक पौंड लाख के उत्पादन के लिए लगभग १,५०,००० लाख के कीड़ों की आव-श्यकता होती है। •

हाईस्कूल और हायर सेकण्डरी कक्षाओं के लिए
हमारे उपयोगी प्रकाशन

१. **जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ३·००

२. **वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ३·००

३. **प्रारम्भिक भौतिकी**—दयाप्रसाद खंडेलवाल — मूल्य : ३·५०

४. **प्रेक्टिकल जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : २·००

५. **प्रेक्टिकल वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : २·००

६. **सामान्य विज्ञान**—मेहरोत्रा, विद्यार्थी, खंडेलवाल — मूल्य : ६·२५

७. **सरल माध्यमिक जीव-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी (हायर सेकंडरी की कक्षा ९ और १० के लिए) — मूल्य : ५·००

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा – ३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुसन्धानों के सन्दर्भ में

ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व

अशोककुमार चौबे, एम. एस-सी.

एक तत्त्व को दूसरे में परिवर्तित करने का प्रयत्न मानव चिरकाल से करता आ रहा है। विज्ञान के प्रारम्भिक काल में भी मिस्र के कीमियागर नीची धातु लोहे आदि को ऊंची धातु स्वर्ण आदि में परिवर्तित करने का प्रयत्न करते रहे हैं। तत्त्वों के रूप का परिवर्तन करके अन्य उच्च तत्त्वों का निर्माण वैज्ञानिक दृष्टि में सर्वप्रथम १९३४ में रोम में हुआ। यह नया आविष्कार न्यूट्रान कण की खोज के बाद ही सम्भव हो सका। फर्मी, सीगरे तथा उसके साथी यूरेनियम से भी अधिक भारी तत्त्वों के बनाने के प्रयत्न कर रहे थे, और वे यूरेनियम को अन्य भारी तत्त्वों में रूपान्तरित करने में सफल हो गये। उन्होंने इन तत्त्वों को ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व की संज्ञा प्रदान की।

इन अन्वेषणकर्ताओं ने यूरेनियम तत्त्व के ऊपर धीमी गति वाली न्यूट्रान धारा की बौछार की और उन्हें इस क्रिया के फलस्वरूप बहुत से रेडियोसक्रिय तत्त्व प्राप्त हुए। इस अनुसन्धान के कुछ ही समय पश्चात् अन्य व्यक्तियों ने विभिन्न स्थानों पर प्रयोग करके बहुत-से रेडियोधर्मी तत्त्वों का निर्माण किया। रासायनिक अन्वेषणों से ज्ञात हुआ है कि विभिन्न रेडियोसक्रिय जातियां पहले से ही ज्ञात तत्त्वों के समस्थानिक हैं जो यूरेनियम तत्त्व के दो बराबर भागों में टूट जाने से प्राप्त होते हैं। ये रेडियोधर्मी तत्त्व निम्नलिखित समीकरण के अनुसार प्राप्त होते हैं—

$$_{92}U^{235} + {}_{0}n' \rightarrow {}_{56}Ba^{140} + {}_{36}Kr^{93} + 3\,{}_{0}n' + \text{ऊर्जा}$$

न्यूक्लीयर विघटन की यह क्रिया ट्रांस-यूरेनियम तत्त्वों को प्राप्त करने में एक उपफल के रूप में प्राप्त हो गयी थी। यही नहीं, प्रथम ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व नेपच्यूनियम की खोज भी ई. एम. मैकमिलन द्वारा विघटन क्रिया का अध्ययन करते समय १९४० में एक उपफल के रूप में हुई थी। इन नये तत्त्वों की खोज करने के पश्चात् इनके रासायनिक तथा भौतिक गुणों का अध्ययन करके तत्त्वों की सारिणी में इनका स्थान निश्चित कर दिया गया। यहां संक्षेप में ट्रांस-यूरेनियम तत्त्वों का पृथक्-पृथक् अध्ययन किया जायेगा।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय में १९४० की वसन्त ऋतु में मैकमिलन न्यूक्लीयर क्रिया का अध्ययन कर रहा था। वह यूरेनियम की विघटन क्रिया से प्राप्त दो तलों की ऊर्जा नाप रहा था। एक कागज के ऊपर उसने बहुत ही अल्प मात्रा में यूरेनियम आक्साइड लिया तथा इसके पास ही एक और पतला कागज लगाया। यह कागज विघटन क्रिया से प्राप्त तत्त्वों को रोककर उन्हें एकत्र करने के लिए लगाया गया था। इस प्रयोग में बहुत ही साधारण कागज का उपयोग किया गया था। स्वयं सिगरेट बनाकर सिगरेट पीने वाले व्यक्ति जिस कागज से सिगरेट बनाते हैं, उसी कागज का उपयोग इस प्रयोग में भी किया गया था। अपने अध्ययन के समय मैकमिलन ने देखा कि विघटन से प्राप्त तत्त्वों के अतिरिक्त एक रेडियोसक्रिय तत्त्व और भी जन्म लेता है लेकिन यह तत्त्व विघटित तत्त्वों की भांति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूरेनियम से अलग नहीं होता। उसने विचार किया कि सम्भवतः अविघटनशील यूरेनियम-२३८ में न्यूट्रान के शोषण से यह नया तत्त्व प्राप्त होता है। मैकमिलन तथा उसके साथी अवेलशन ने रासायनिक क्रियाओं से इस तत्त्व का अध्ययन करने के पश्चात् बताया कि यह नया तत्त्व ९३ आवेश वाले तत्त्व का समस्थानिक ९३–नेपच्यूनियम–२३९ है जो यूरेनियम में न्यूट्रान के शोषण से प्राप्त होता है। इस क्रिया को निम्नलिखित समीकरण से प्रदर्शित किया जा सकता है—

$$९२U^{२३८} + {}_{०}n^{१} \rightarrow ९२U^{२३९} + \text{गामाकिरणें}(\gamma)$$

B (बीटा किरणें)

$$९२U^{२३९} \rightarrow ९३NP^{२३९} \quad (T\tfrac{१}{२} = २.३५. \text{ दिन})$$

$T\frac{१}{२}$ (अर्धजीवन काल)

$= २३.५$ मिनट

यूरेनियम–२३८ एक न्यूट्रान का शोषण करने के पश्चात् रेडियोसक्रिय यूरेनियम–२३९ में परिवर्तित हो जाता है तथा γ (गामा) किरणें प्राप्त होती हैं। इस यूरेनियम–२३९ का अर्धजीवन काल ($T\frac{१}{२}$) २३.५ मिनट होता है तथा यह बीटा किरणें (B) निकालकर एक नये तत्त्व पेपच्यूनियम-२३९ में परिवर्तित हो जाता है। इसका अर्धजीवन काल २३५ दिन होता है। इस न्यूक्लीयर क्रिया को संक्षेप में इस प्रकार लिखा जा सकता है—

$U^{३२८}(n, \gamma)\ U\ २३९$।

इस प्रकार प्राप्त नेपच्यूनियम बहुत ही अल्प मात्रा में था तथा इसे तुला द्वारा तौलकर इसकी मात्रा आदि ज्ञात नहीं की जा थी। इसके रासायनिक गुणों का अध्ययन करके यह सिद्ध किया गया कि यह गुणों में यूरेनियम से मिलता है और इसे यूरेनियम के आगे स्थान दिया गया।

नेपच्यूनियम का एक अन्य समस्थानिक अधिक मात्रा में १९४४ में एक और न्यूक्लीयर क्रिया द्वारा प्राप्त किया गया। दो अन्य वैज्ञानिक द्वितीय महायुद्ध में शिकागो विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला में कार्य कर रहे थे। नेपच्यूनियम की खोज उन्होंने निम्नलिखित क्रिया द्वारा की—

$$९२U^{२३८} + {}_{०}n^{१} \rightarrow ९२U^{२३७} + २\,{}_{०}n^{१}$$

$$\beta^-$$

$$९२U^{२३७} \rightarrow ९३Np^{२३७}$$

$T\frac{१}{२} = ६.८$ दिन

$(T\frac{१}{२} = २.२ \times १०^{६}$ वर्ष)

इस क्रिया को संक्षेप में इस प्रकार लिखा जा सकता है—$U^{२३८}(n,2n)^{२३७}$। इस नये तत्त्व को नेपच्यूनियम नाम की संज्ञा नेपच्यून तारे के नाप पर दी गयी। क्योंकि नेपच्यून यूरेनस तारे के बाद आता है तथा यूरेनस के नाम पर यूरेनियम रखा गया, अतः यूरेनियम के अगले तत्त्व का नाम नेपच्यूनियम रखा गया।

प्लूटोनियम

यह द्वितीय ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व है जिसकी खोज की गयी थी। यूरेनियम तत्त्व पर ड्यूट्रान कण की क्रिया को निम्नलिखित समीकरण द्वारा दिखाया जा सकता है—

$$९२U^{२३८} + १H^{२} \rightarrow ९३Np^{२३८} + {}^{२}_{०}n^{१}$$

$$\beta^-$$

$$९३Np^{२३८} \rightarrow ९४Pu^{२३८}(T\tfrac{१}{२} = ८६.४ \text{ वर्ष})$$

$T\frac{१}{२} = २.१$ दिन

इस क्रिया को संक्षेप में इस प्रकार लिखा जा सकता है—$U^{२३८}(d, 2n)Np^{२३८}$। इन दो नवीन तत्त्वों नेपच्यूनियम और प्लूटोनियम के गुणों का अध्ययन ट्रेसर विधि द्वारा किया गया। बहुत समय तक इन तत्त्वों का नाम तत्त्व-९३ तथा तत्त्व-९४ ही चलता रहा। १९४२ में इस नवीन तत्त्व-९४ का नाम प्लूटो तारे के नाम पर प्लूटोनियम रखा गया। जिस प्रकार प्लूटो तारा स्थान के बाद द्वितीय संख्या पर आता है, उसी प्रकार इस तत्त्व को भी यूरेनियम के बाद रखा गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

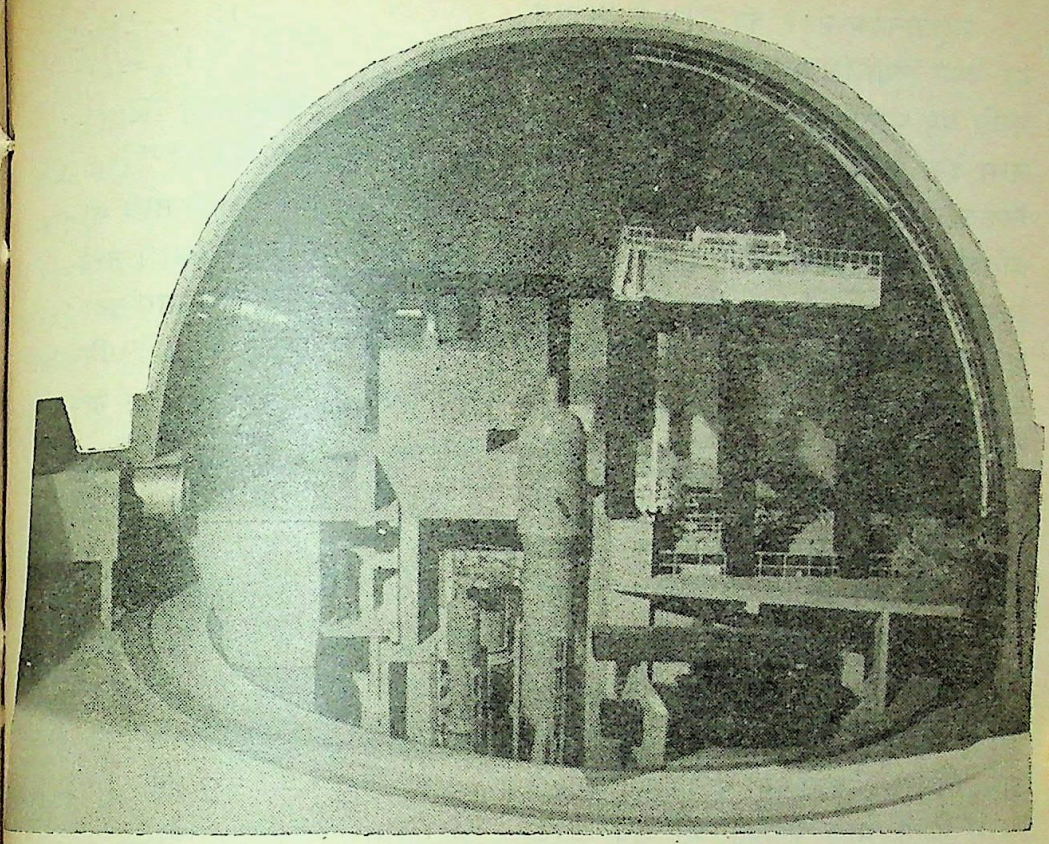

पश्चिम जरमनी के ओवरीगियेन में निर्मित एक महत्त्वपूर्ण अणुशक्ति प्लांट की झांकी

यूरेनियम-२२५ न्यूक्लीयर क्रियाओं द्वारा जिस प्रकार अपार ऊर्जा को जन्म देता है, उसी प्रकार यह कल्पना की गयी थी कि यह नया तत्त्व प्लूटोनियम भी प्रचुर मात्रा में न्यूक्लीयर ऊर्जा प्रदान करेगा। प्लूटोनियम के एक समस्थानिक प्लूटोनियम-२३९ की खोज १९४१ की वसन्त ऋतु में सीगरे, केनेडी, वहल तथा सीबर्ग नामक वैज्ञानिकों ने की। यूरेनियम-२३८ पर मन्द गति वाले न्यूट्रान की क्रिया से नेपच्यूनियम-२३९ को प्राप्त किया गया। इसका अर्धजीवन काल २.३५ दिन होता है। नेपच्यूनियम-२३९ बीटा किरणें निकालने के बाद ९५-प्लूटोनियम-२३९ में परिवर्तित हो जाता है। इसका अर्धजीवन-काल २४,३६० वर्ष है।

प्लूटोनियम के इस समस्थानिक को प्राप्त करने के लिए १.२ किलोग्राम यूरेनाइल नाइट्रेट लिया गया था। इसे पैराफिन की मोम में अच्छी तरह मिला दिया गया था। इस पैराफिन का उपयोग उच्चगति वाले न्यूट्रान की गति कम करने के लिए किया गया था। सायक्लोट्रान नामक मशीन में बैरीलियम धातु का लक्ष्य लगाकर न्यूट्रान प्राप्त किये गये थे। बैरीलियम लक्ष्य के बिलकुल पीछे यूरेनाइल नाइट्रेट तथा पैराफिन को रख दिया गया था। रासायनिक विधियों द्वारा प्राप्त नैपच्यूनियम-२३९ को पृथक् किया गया था। इसकी मात्रा ०.५ माइक्रोग्राम थी। यह नेपच्यूनियम बीटा किरणें निकाल प्लूटोनियम में परिवर्तित होता रहा। प्लूटोनियम-२३९ से निकलने वाले अल्फा कणों को मापकर इस नये समस्थानिक की पुष्टि की गयी और इसका अर्धजीवन काल ज्ञात किया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्लूटोनियम-२३९ की खोज के पश्चात् यह देखा गया कि क्या यूरेनियम-२३५ की भांति यह प्लूटोनियम भी विघटन क्रिया को जन्म देता है ? इन प्रयोगों का निष्कर्ष यह निकला कि यह समस्थानिक यूरेनियम में ५० प्रतिशत अधिक विघटनशील है तथा विघटन क्रिया द्वारा अपार ऊर्जा को जन्म देता है। जब यह अच्छी तरह ज्ञात हो गया कि प्लूटोनियम से प्राप्त विघटन क्रिया यूरेनियम से अधिक महत्त्वपूर्ण है, तब प्लूटोनियम को अधिक मात्रा में प्राप्त करने के प्रयत्न किये जाने लगे। द्वितीय महायुद्ध के समय प्लूटोनियम की इस योजना को गुप्त रखा गया, तथा इस योजना को एक गुप्त नाम भी दिया गया था। ९५-प्लूटोनियम-२३९ को अधिक मात्रा में प्राप्त करने की इस योजना का गुप्त नाम '४९' रखा गया था। इस योजना में काम करने वाले व्यक्ति भी अब अपने-आप को '४९' नाम से सम्बोधित करते हैं। अगस्त १९४२ में कन्निघम तथा बरनर नामक व्यक्तियों ने शिकागो विश्वविद्यालय में कार्य करके प्रथम बार एक माइक्रोग्राम प्लूटोनियम-२३९ को प्राप्त किया था। यह प्रथम ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व था जिसे अति सूक्ष्मदर्शियों का प्रयोग करके आंखों द्वारा देखा जा सका था।

अमेरिसियम तथा क्यूरियम

शिकागो विश्वविद्यालय की युद्धकाल की प्रयोगशाला में प्लूटोनियम का पूर्ण रूप से अध्ययन करने के पश्चात् वैज्ञानिकों ने अगले ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व के विषय में विचार करना प्रारम्भ किया। एक और नये तत्त्व की खोज १९४४ की ग्रीष्म ऋतु में की गयी। इस तत्त्व को प्लूटोनियम-२३९ पर ३२ Mev ऊर्जा के अल्फा कणों की क्रिया से प्राप्त किया गया था। इस क्रिया को निम्नलिखित समीकरण द्वारा दर्शाया जा सकता है—

$$_{९४}Pu^{२३९} + _{२}He^{४} \underset{(\text{अल्फाकण})}{-} {}_{९६}Cm^{२४२} \downarrow (T_{\frac{१}{२}} = १६२.५ \text{ दिन}) + {}_{०}n^{१}$$

इस क्रिया को संक्षेप में $Pu^{२३९}(\alpha,n)Cm^{२४२}$ लिखा जा सकता है। इस तत्त्व को तत्त्व-९६ तथा क्यूरियम कहा गया। तत्त्व-९५ की खोज १९४४ के अन्तिम मास तथा १९४५ के प्रारम्भिक महीनों में की गयी। निम्नलिखित समीकरण द्वारा तत्त्व-९५ को उत्पन्न किया गया—

$$_{९४}Pu^{२३९} + {}_{०}n^{१} \longrightarrow {}_{९४}Pu^{२४०} (T_{\frac{१}{२}} = ६५८० \text{ वर्ष}) + \gamma \text{ (गामाकिरणें)}$$

$$_{९४}Pu^{२४०} + {}_{०}n^{१} \longrightarrow {}_{९४}Pu^{२४१} + \gamma$$

$$\beta$$

$$_{९४}Pu^{२४१} \rightarrow {}_{९५}Am^{२४१} (T_{\frac{१}{२}} = ४५८ \text{ वर्ष})$$

$$T_{\frac{१}{२}} = १३.२ \text{ वर्ष}$$

इन नवीन तत्त्वों—९५ तथा ९६—को रासायनिक विधियों से पृथक करने में बहुत ही कठिनाइयां आयीं तथा इस कारण बहुत समय तक इनका नामकरण नहीं हो सका। बहुत समय पश्चात बर्कले में आयन परिवर्तन विधि का प्रयोग करके इन तत्त्वों को पृथक किया गया।

बैरकीलियम तथा कैलिफोर्नियम

अगले ट्रांस-यूरेनियम तत्त्वों को प्राप्त करने के लिए अमेरिसियम तथा क्यूरियम को अधिक मात्रा में प्राप्त करना आवश्यक था, क्योंकि अगले तत्त्वों को क्यूरियम आदि को लक्ष्य बनाकर प्राप्त किया जा सकता था। इन तत्त्वों के बहुत अधिक रेडियोसक्रिय होने के कारण अगले तत्त्वों को प्राप्त करना एक बहुत ही कठिन कार्य था। यह कठिन समस्या भी हल हो गयी और १९४९ के अन्तिम और १९५० के प्रारम्भिक मास में प्रयोग सफल हो गये। प्लूटोनियम के ऊपर अधिक समय तक तीव्र न्यूट्रान धारा की बौछार करके अमेरिसियम को प्राप्त किया गया। अमेरिसियम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

70253

इतिहास के विद्यार्थियों तथा इतिहास में रुचि रखने वाले प्रत्येक पाठक के लिए एक संग्रहणीय प्रकाशन

हुमायूं

विद्वान इतिहासज्ञ डा. हरिशंकर श्रीवास्तव ने हुमायूं के जीवन पर उपलब्ध सभी फारसी तथा अन्य भाषाओं के ग्रन्थों का अध्ययनकर मुगलकालीन इतिहास के एक चर्चनीय परिच्छेद को प्रस्तुत किया है। महत्त्वपूर्ण युद्धों के मानचित्र, भौगोलिक स्थान, व्यक्तियों के नाम तथा फारसी शब्दों के प्रचलित उच्चारण पुस्तक को और भी उपयोगी बनाते हैं।

कुछ सम्मतियां

It is exceedingly well written in elegant Hindi. You have made use of the original as well as secondary sources of information and produced a scholarly and at the same time an eminently readable work.

—*M.P. Sharma, M.A., D. Litt., Vice Chancellor, University of Saugar.*

डा. हरिशंकर श्रीवास्तव की 'हुमायूं' प्रामाणिक आधार पर लिखी हुई एक पठनीय पुस्तक है। पुस्तक की भाषा सुबोध और सुरुचिपूर्ण है।···इतिहास में रुचि लेने वाले पाठकों और स्नातकोत्तर कक्षा के विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी।

—**हीरालाल सिंह, एम.ए., पी.एच-डी. (लन्दन), प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, इतिहास विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस।**

लगभग ५०० पृष्ठ : डिमाई अठपेजी आकार :
बहुरंगी सुनहरा आवरण : मूल्य १५ रुपये

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा—३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धातु मिलीग्राम में प्राप्त की गयी और इसे लक्ष्य धातु के रूप में प्रयुक्त किया गया। इस लक्ष्य पर न्यूट्रान की तीव्र धारा द्वारा क्यूरियम को माइक्रोग्राम में प्राप्त किया गया और फिर इसे लक्ष्य बनाया गया।

सीबर्ग, टामसन तथा उसके साथियों ने दिसम्बर १९४९ में तत्त्व-९७ की खोज की। मिलीग्राम में प्राप्त अमेरिसियम-२४१ पर ३५ Mev. ऊर्जा वाले अल्फा कणों की क्रिया से तत्त्व-९७ जिसकी मात्रा संख्या २४३ थी, प्राप्त किया गया। इस क्रिया को निम्नलिखित समीकरण द्वारा दिखाया जा सकता है—

$$_{९५}Am^{२४१} + _{२}He^{४} \longrightarrow _{९७}Br^{२४३}$$

$$(T_{\frac{१}{२}} = ४.५ \text{ घण्टा})$$

$$(\text{अल्फाकण}) \quad + _{२०}n^{१}$$

तत्त्व-९७ प्राप्त करने वाले वैज्ञानिकों ने ही फरवरी ५० में तत्त्व-९८ प्राप्त किया। तत्त्व ९८ के प्रथम समस्थानिक की मात्रा संख्या २४५ है तथा इससे अल्फा कण निकलते हैं। ३५Mev ऊर्जा वाले अल्फा कणों की बौछार माइक्रोग्राम में प्राप्त क्यूरियम-२४२ पर की गयी। इसे निम्नलिखित समीकरण द्वारा दिखा सकते हैं—

$$_{९६}Cm^{२४२} + _{२}He^{४} \longrightarrow _{९८}Cf^{२४५}$$

$$(T_{\frac{१}{२}} = ४४ \text{ मिनट})$$

$$+ _{०}n^{१}$$

तत्त्व-९८ बहुत ही कम मात्रा में प्राप्त हुआ था। इस तत्त्व के लगभग ५,००० परमाणु ही प्राप्त हुए थे तथा इतने परमाणुओं द्वारा ही इसके गुणों का परीक्षण कर लिया गया था। इतने कम परमाणुओं के रूप में प्राप्त तत्त्व को देखकर किसी ने उस समय कहा था कि यह परमाणुओं की संख्या तो उन छात्रों से भी कम है जो उस समय कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय में अध्ययन कर रहे थे। तत्त्व-९८ के नाम क्रमशः बर्कले शहर और कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के नाम पर बर्केलियम तथा कैलीफोर्नियम रखे गये।

तत्त्व-९९ तथा १०० की खोज विज्ञान में एक अनूठा उदाहरण है। ये सातवें तथा आठवें ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व न्यूक्लीयर विस्फोट से प्राप्त रेडियो धूल से प्राप्त किये गये थे। नवम्बर १, १९५२ को प्रशान्त महासागर में एक बड़े न्यूक्लीयर विस्फोट का परीक्षण किया गया। वायुयानों में छनना कागज लगाकर इस विस्फोट की रेडियो धूल को एकत्र किया गया। तत्पश्चात् विस्फोट का यह मलबा अमरीका में, विभिन्न प्रयोगशालाओं में परीक्षण के हेतु लाया गया। इसका परीक्षण करने पर इसमें प्लूटोनियम के कई समस्थानिक प्राप्त हुए। प्लूटोनियम-२४३ को तो बहुत पहले ही प्राप्त किया जा चुका था लेकिन प्लूटोनियम-२४४ तथा २४६ को इस धूल में से प्राप्त किया गया। कैलीफोर्निया विकिरण प्रयोगशाला में कार्य करने वाले व्यक्तिओं ने इस विस्फोट के मलबे से तत्त्व-९९ तथा १०० को प्राप्त करने का प्रयत्न किया। कठिन परिश्रम के बाद ये लोग तत्त्व-९९ तथा १०० को प्राप्त करने में सफल हो गये। तत्त्व-९९ का अर्धजीवन काल २० दिन है तथा इसमें से ६.६ Mev के अल्फा कण निकलते हैं। इस तत्त्व की मात्रा संख्या २५३ पायी गयी। तत्त्व-१०० का अर्धजीवन काल २२ घंटा है तथा इसमें से ७.१ Mev के अल्फा कण निकलते हैं। इसकी मात्रा संख्या २५४ पायी गयी। तत्त्व १०० के केवल २०० परमाणु ही प्राप्त किये जा सके तथा इन्हीं से इसे पहचाना गया। तत्त्व-९९ का नाम महान वैज्ञानिक आइंसाटाइन के सम्मान में आइंसटाइनियम रखा गया और तत्त्व-१०० का नाम परमाणु युग के जन्मदाता, वैज्ञानिक फर्मी के नाम पर फरमियम रखा गया।

इन तत्त्वों की उपस्थिति ज्ञात होने के पश्चात् इन्हें अधिक मात्रा में प्राप्त किये जाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के प्रयत्न किये गये। प्लूटोनियम–२३९ पर तीव्र न्यूट्रान की धारा की क्रिया से इतना आइंसटाइनियम-२५३ प्राप्त किया जा सका जिसे तुला की सहायता से तौला जा सका। फरमियम को इतनी मात्रा में प्राप्त नहीं किया जा सका, जिसे तौलना सम्भव हो।

इस तत्त्व की खोज अत्यन्त नाटकीय ढंग से हुई। अब तक सभी ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व उन लक्ष्य धातुओं से प्राप्त किये गये थे जिन्हें तौलना सम्भव था। लेकिन इस नये तत्त्व की खोज ऐसे लक्ष्य तत्त्व से की गयी थी जिसे तौलना सम्भव ही नहीं था। इस तत्त्व की खोज के समय तक तकनीकी ज्ञान इतना अच्छा हो गया था कि तत्त्व–१०१ कितनी ही अल्पमात्रा में क्यों न प्राप्त हो उसका परीक्षण किया जा सकता था। आइंसटाइनियम-२५३ पर ४० Mev ऊर्जा वाले अल्फा कणों की बौछार से तत्त्व-१०१ की खोज की गयी। इस तत्त्व की प्राप्त मात्रा का अनुमान इस प्रकार लगाया जा सकता है कि २१० न्यूक्लीयस आइंसटाइनियम का लिया गया तो उससे १ न्यूक्लीयस तत्त्व–१०१ का प्राप्त हुआ। तत्त्व १०१ का अर्धजीवन काल १.५ घंटा है, तथा यह तत्त्व–१०० अर्थात् फरमियम–२५६ में परिवर्तित हो जाता है। फरमियम का अर्धजीवन काल १६० मिनट है तथा यह बहुत तेजी से न्यूक्लीयर विघटन क्रिया द्वारा नष्ट हो जाता है। तत्त्व-१०१ का जीवन काल कम होने के कारण इसे पहचानने में अधिक समय लगा। इन क्रियाओं को निम्नलिखित प्रकार से दिखाया जा सकता है—

$$_{९९}Es^{२५३} + {}_{२}He^{४} \rightarrow {}_{१०१}Md^{२५३} + {}_{०}n^{१}$$

$$_{१०१}Md^{२५६} \longrightarrow {}_{१००}Fm^{२५६}$$

$$T_{\frac{१}{२}} = १.५ \text{ घंटा}$$

$$_{१००}Fm^{२५६} \longrightarrow \text{न्यूक्लीयर विघटन क्रिया}$$

$$T_{\frac{१}{२}} = १६० \text{ मिनट}$$

अमरीका की आर्गन नेशनल प्रयोगशाला, इंग्लैंड के एटामिक एनर्जी कमीशन तथा स्वीडन के नोबल इंस्टीट्यूट के वैज्ञानिकों ने १०५७ में मिलकर स्टाकहोम की नोबल प्रयोगशाला में परीक्षण करके तत्त्व-१०२ के होने की घोषणा की। क्यूरियम-२४४ पर कार्बन-१३ के आयनों की बौछार करके इस नये तत्त्व को प्राप्त किया गया। इन वैज्ञानिकों ने बताया कि तत्त्व-१०२ से ८५ Mev के अल्फा कण निकलते हैं तथा इसका अर्धजीवन काल १० मिनट है। इन वैज्ञानिकों ने नोबल पुरस्कार को जन्म देने वाले वैज्ञानिक के नाम पर इस तत्त्व का नाम भी नोबिलियम रखा। रूस की विभिन्न प्रयोगशालाओं में कार्य करने वाले तथा बर्कले में कार्य करने वाले वैज्ञानिक इस तत्त्व की पुष्टि नहीं कर सके। बर्कले में कार्य करने वाले वैज्ञानिकों के प्रयोग अधिक विश्वसनीय थे। जब इन प्रयोगों से तत्त्व १०२ की पुष्टि नहीं की जा सकी तब वैज्ञानिकों ने इस तत्त्व को नहीं माना।

१९५२ में कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय में कार्य करने वाले वैज्ञानिकों ने क्यूरियम-१४६ पर कार्बन-१२ के आयनों की बौछार करके तत्त्व-१०२ प्राप्त होने की घोषणा की। उन्होंने बताया कि इस तत्त्व की मात्रा संख्या २५४ है। इस क्रिया को निम्नलिखित भांति दिखाया जा सकता है—

$$_{९६}Cm^{२४६} + {}_{६}C^{१२} \rightarrow {}_{१०२}^{२४५} + ४\,{}_{०}n^{१}$$

$$_{१०२}^{२५४} \longrightarrow {}_{१००}Fm^{२५०} + {}_{२}He^{४}$$

$$(T_{\frac{१}{२}} = ३ \text{ सेकंड})$$

तत्त्व-१०२ फरमियम-२५० में परिवर्तित हो जाता है। यह फरमियम ७.४३ Mev के अल्फा कण निकलता है तथा इसका अर्ध जीवन काल ३० मिनट है। इन अल्फा कणों द्वारा ही तत्त्व-१०२ की पुष्टि की गयी है। यद्यपि इस तत्त्व को नोबिलियम नाम दिया गया था, लेकिन इसे माना नहीं गया तथा अब इसे कोई नाम नहीं दिया गया है। जब तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस तत्त्व की पुष्टि अन्य परीक्षणों से नहीं हो जाती, उस समय तक इसे कोई नाम नहीं दिया जायेगा।

लारेंसियम

तत्त्व-१०२ की खोज के लगभग ३ वर्ष बाद १९६१ की वसन्त ऋतु में बर्कले में कुछ वैज्ञानिकों के समूह ने तत्त्व-१०३ को प्राप्त किया तथा इसके होने की पुष्टि की। इस तत्त्व का नाम सायक्लोट्रान मशीन बनाने वाले महान वैज्ञानिक ओ. लारेंस के सम्मान में लारेंसियम रखा गया। कैलीफोर्नियम तत्त्व के समस्थानिकों पर बोरान-१० तथा बोरान-११ की क्रिया से इस तत्त्व को प्राप्त किया गया। लक्ष्य धातु कैलीफोर्नियम-२५२ को निम्नलिखित समीकरण से दिखाया जा सकता है—

$$_{९८}Cf^{२५२} + _{५}B^{११} \rightarrow _{१०३}L_{ω}^{२५७} \quad (T_{\frac{१}{२}} = ८ \text{ सेकंड}) + _{६०}n^{१}$$

$$_{९८}Cf^{२५२} + _{५}B^{१०} \rightarrow _{१०३}L_{ω}^{२५७} \quad (T_{\frac{१}{२}} = ८ \text{ सेकंड}) + _{५०}n^{१}$$

लारेंसियम की मात्रा संख्या-२५७ पायी गयी तथा यह ८.६ Mev के अल्फा कण निकालता है। इसका अर्धजीवन काल ८ सेकंड है। अर्ध जीवन काल कम होने के कारण इस तत्त्व के रासायनिक परीक्षण नहीं सके हैं केवल न्यूक्लीयर क्रियाओं द्वारा ही इसकी पुष्टि की जा सकी है।

ट्रांसयूरेनियम तत्त्वों की खोज का इतिहास पढ़ने में वास्तव में बहुत ही आनन्ददायक है। वैज्ञानिकों ने लगन तथा परिश्रम से इन तत्त्वों की खोज की, तथा बहुत ही कठिनाइयों का सामना करते हुए इन तत्त्वों के जीवन पर प्रकाश डाला। सबसे अधिक भारी तत्त्व को तौलने योग्य मात्रा में प्राप्त नहीं किया जा सकता है, आइंसटाइनियम तक ही तत्त्वों को तौलने योग्य मात्रा में प्राप्त किया जा सका।

ग्राहकों से निवेदन

विज्ञान-लोक की एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे है। एक वर्ष का शुल्क ९ रुपये, दो वर्ष का १६ रुपये तथा तीन वर्ष का २० रुपये (विशेष रियायत) है।

पत्र-व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें। विज्ञान-लोक जिस लिफाफे में आपके पास आता है, उसी पर आपकी ग्राहक संख्या आपके पते के ऊपर लिखी रहती है।

पता बदलने की सूचना हमें एक मास पूर्व प्राप्त होनी चाहिये। इसके लिए नया और पुराना, दोनों पते भेजें। यदि छह मास से कम के लिए पता बदलवाना हो, तो कृपया अपने डाकखाने से इसकी व्यवस्था कर लें।

नये ग्राहकों को मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा किस अंक से विज्ञान-लोक भेजा जाय, यह अवश्य लिखना चाहिये।

पुराने ग्राहक अपनी सदस्यता का नवीयन (renewal) कराते समय मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा ग्राहक संख्या लिखने की कृपा करें।

विक्रय-व्यवस्थापक * विज्ञान-लोक * हास्पिटल रोड, आगरा-३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

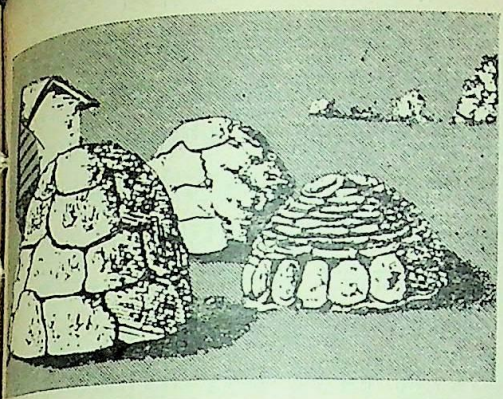

गोबर की खाद

सत्यकुमार, एम.एस-सी.

गोबर की खाद से अर्थ है फार्म पर रहने वाले पशुओं का मलमूत्र, उनके नीचे की बिछैली या बिछावन, उनके खाने से बचा हुआ चारा इत्यादि।

इस खाद का प्रयोग युग-युगों से चला आ रहा है। किसान के लिए सबसे निकट और सहज उपलब्ध यही खाद है। वैसे भी इस खाद में पौधों के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्त्व पाये जाते हैं। पौधों को पोषक तत्त्व देने के अतिरिक्त यह खाद भूमि की भौतिक दशा भी सुधारती है। नाइट्रोजन व पोटैशियम की मात्रा बढ़ाती है। भूमि-ताप पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। भूमि-कटाव कम होता है। भूमि में धारण तथा जल धारण क्षमता बढ़ती है, वायु संचार उचित होता है। इसकी उपस्थिति में रासायनिक उर्वरक सोने में सुहागे का काम करते हैं।

हमारे देश में किसान प्रायः गोबर का प्रयोग करता है। हमारे फार्मों पर गाय, भैंस के अतिरिक्त अन्य पशु नहीं होते, जबकि विदेशों में घोड़ा, बकरी, भेड़, मुरगी, बतख इत्यादि भी फार्म पर रहते हैं। हमारे यहां मूत्र को इकट्ठा नहीं किया जाता। गोबर में जितना सोख लिया जाता है, वही खाद में पहुंच पाता है। पशुओं के नीचे बिछावन की प्रथा भी हमारे यहां नहीं है। बिछावन से पशु को आराम मिलता है तथा वह द्रव मल भी सोख लेता है। वैसे भी मल व मूत्र अलग-अलग स्थानों पर एकत्र किये जाने चाहिये। एक साथ इकट्ठा किये जाने पर अनेक पोषक तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। हमारे यहां फार्मों पर कुकुर पालन का रिवाज नगण्य ही है। प्रयोगों से पता चला है कि बीट की खाद में गोबर की खाद से दुगुना अमोनिया तथा तिगुना फासफोरस पेंटा आक्साइड होता है। पोटैशियम की मात्रा भी इसमें कुछ अधिक ही होती है। भेड़-बकरियों के मलमूत्र की खाद में भी गोबर से अधिक पोषक तत्त्व होते हैं।

ताजा गोबर अनेक पदार्थों का जटिल मिश्रण होता है। इसकी रचना स्थिर नहीं अपितु परिवर्तनशील होती है। प्रायः इसमें निम्नलिखित पदार्थ होते हैं—

(१) जल ७०-८०%, (२) ठोस पदार्थ २०-३०%, (३) नाइट्रोजन ६-७%, (४) पोटाशियम ३-४%, (५) फासफोरस १५-१८%।

ठोस पदार्थ में बिना पचे और अघुलनशील खाद्य पदार्थ होते हैं। कुछ मात्रा में पाचक रसों से प्राप्त पदार्थ भी होते हैं। इनके अतिरिक्त वसा, स्टार्च, काष्ठीय तन्तु, बिना पचा सैलुलोज, म्युकोसा इत्यादि भी होते हैं।

मूत्र और बिछावन की भी गोबर की खाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ही गिनती होती है। मूत्र में १७% जल, ४% ठोस व २% यूरिया होता है। इनके अतिरिक्त अल्प मात्रा में सोडियम यूरेट, सोडियम हिपूरेट, सोडियम क्लोराइड, सोडियम सल्फेट व बाईसल्फेट, पोटैशियम सल्फेट, कैल्शियम फासफेट व मैग्नीशियम फासफेट होते हैं।

बिछावन में विभिन्न अनाजों का भूसा, घास, पत्तियां, लकड़ी का बुरादा, मक्का की पूली आदि पशु बांधने के स्थान पर उसके आराम के लिए बिछाया जाता है। यह मूत्र तथा अन्य बाष्पशील पदार्थ का शोषण कर लेता है। पौधे के लिए सभी आवश्यक तत्त्व इसमें होते हैं तथा यह खाद को हलका (पतला) करने के काम भी आता है। यह पौधों को नाइट्रोजन तथा कार्बन देता है। यह किण्वन द्वारा होने वाले परिवर्तनों पर प्रभाव डालता है, सरन्ध्रता बढ़ाता है तथा जीवाणुओं की वृद्धि करता है।

भूसे में नाइट्रोजन, फासफोरस व पोटाशियम, तीनों पोषक तत्त्व होते हैं। सूखे पत्तों का यही उपयोग होता है। लकड़ी के बुरादे की शोषण-शक्ति बहुत होती है। इससे आक्सीकरण और किण्वण में सहायता मिलती है। पहाड़ी इलाकों में शुष्क 'ब्रेकेन' बिछावन के तौर पर इस्तेमाल करते हैं। चमड़ा कमाने के बाद अवशिष्ट कचरे का भी कोई अन्य उपयोग न होने के कारण बिछावन में ही इस्तेमाल होता है।

गोबर की खाद के गुण निम्नलिखित तथ्यों पर निर्भर करते हैं—

१. पशु की किस्म, २. पशु का भोजन, ३.पशु की आयु, ४. पशु का बिछावन, ५. संग्रहण की परिस्थितियां।

विभिन्न पशुओं के मल-मूत्र में पोषक तत्त्वों की मात्रा भिन्न-भिन्न होती है। मलमूत्र की रचना पशुओं के भोजन पर निर्भर करती है। भोजन में मात्रा और किस्म मुख्य हैं। केवल भूसा-घास खाने वाले पशु के मल से बनायी गयी खाद में चोकर, बिनौला या खल खाने वाले पशु की अपेक्षा कम नाइट्रोजन होगी। पशु की पाचनशक्ति के अनुसार भी खाद की रचना में परिवर्तन हो जाता है। आयु का भी पाचनशक्ति से सम्बन्ध है। वैसे भी बाल व युवा पशु अपने शरीर के विकास के लिए अधिक पोषक तत्त्व लेते हैं। खाद को संगृहीत करने में यदि सावधानी न बरती गयी, तो नाइट्रोजन और पोटैशियम के घुलनशील लवणों के बह जाने की सम्भावना रहती है। अपक्षालन और किण्वन द्वारा खाद का विच्छेदन होने से पोषक अंग नष्ट हो जाते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि— १. खाद इकट्ठा करने में बिछावन की अधिक मात्रा हो, २. पक्के फर्श पर खाद इकट्ठी करें और ३. ढेर का ढलाव ठीक रखा जाय।

गोबर की खाद में अनेक जीवाणु 'बैक्टीरिया' होते हैं, अतः उसमें किण्वन द्वारा विच्छेदन होता है। गोबर की खाद के नाइट्रोजनीय पदार्थ का विच्छेदन तीन भागों में बांटा जा सकता है—१. मूत्र का किण्वन, २. ठोस पदार्थ का गलना, ३. एमीनो यौगिकों का किण्वन।

इसी प्रकार नाइट्रोजनविहीन पदार्थ का विच्छेदन भी तीन भागों में बांटा जा सकता है—१. वसीय अम्लों का किण्वन, २. हाइड्रोजन सल्फाइड किण्वन, ३. कार्बोहाइड्रेटों का किण्वन।

गोबर की खाद में विच्छेदन के फलस्वरूप अनेक परिवर्तन होते रहते हैं तथा अनेक यौगिक बनते हैं। जैसे-जैसे खाद पुरानी होती जाती है, उसमें नाइट्रोजन की वृद्धि होती है। बाद में नाइट्रोजनविहीन की हानि अधिक होती है तथा बैक्टीरिया द्वारा अमोनिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुनः प्रोटीन में बदल जाता है। कार्बनिक पदार्थों के संश्लेषण से अन्त में धरण बनता है।

गोबर की खाद के विच्छेदन पर ताप, वायु, जल तथा जीवाणुओं का प्रभाव पड़ता है। ताप अनुकूलतम होना चाहिये, न कम न अधिक (जिस ताप पर जीवाणुओं की क्रियाशीलता कम होती है)। अधिक ताप पर जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। पर्याप्त वायु पहुंचती रहे, इसके लिए खाद के ढेर को पलटते रहना चाहिये। खाद में जल की मात्रा कम होने से फफूंद लग जाती है, अधिक जल की मात्रा में वायु की मात्रा कम हो जाती है तथा उपयुक्त तापक्रम नहीं पहुंच पाता। अतः जल की मात्रा भी उपयुक्त होनी चाहिये। इसके अतिरिक्त खाद में जीवाणुओं के लिए पर्याप्त भोजन होना चाहिये।

गोबर की खाद तैयार करना

भारत की जनसंख्या विश्व की जनसंख्या का पांचवां भाग है। भारत के पशुओं की भी जनसंख्या विश्व के पशुओं की जनसंख्या का पांचवां भाग हैं। हमारा देश कृषिप्रधान कहा जाता है पर निम्नलिखित कारणों से यहां गोबर की खाद अधिक मात्रा में नहीं बनायी जाती है—

१. उपले (कंडे) के रूप में गोबर ईंधन के लिए उपयुक्त होता है।

२. खाद बनाने की वैज्ञानिक विधि का पालन नहीं होता। गरमी में अधिक तापक्रम से व वर्षा में घुल-बहकर अनेक पोषक तत्त्व नष्ट हो जाते हैं।

३. पशुओं के मूत्र को इकट्ठा नहीं किया जाता, जो कि खाद का प्रमुख अंग है।

गोबर की खाद तैयार करने के लिए २०×५×३ फुट या २५×६×४ फुट

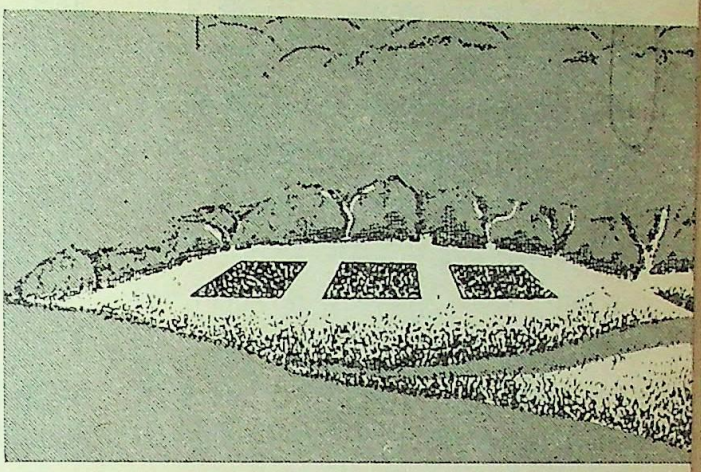

गोबर की खाद तैयार करने के लिए विशेष आकार के गड्ढे तैयार किये जाते हैं जिनमें गोबर के अतिरिक्त कूड़ा-करकट, बिछावन आदि भरते हैं

आकार के गड्डे तैयार किये जाते हैं। पशु बांधने के स्थान के पास ही कूड़ा-करकट, बिछावन आदि एक ढेर में इकट्ठा करते हैं। इसमें ३-४ किलो मिट्टी मिलाकर पशुओं के मूत्र के शोषण के लिए उनके नीचे बिछा देते हैं। प्रतिदिन प्रातः यह बिछावन गोबर ठीक तरह मिलाकर गड्ढे के भाग में भरते हैं। जब गड्ढे का यह भाग भरते-भरते पृथ्वी तल से १½ फुट ऊंचा हो जाय, तो उसका गुम्बद-सा बनाकर मिट्टी से लेप देते हैं। एक गुम्बद बन जाने के बाद दूसरे भाग को भी इसी प्रकार भरना शुरूकर गुम्बद बना लेते है। इस प्रकार प्रत्येक गड्ढे में दो गुम्बद बन जाते हैं। इस विधि में यह लाभ होता है कि २-३ माह में जब तक दूसरा गुम्बद तैयार होता है, पहले गुम्बद की खाद सड़कर खेत में देने योग्य हो जाती है। इसे खेत में दे देने के बाद गड्ढे के इस भाग को पुनः भरना प्रारम्भ कर देते हैं। जब तक यह भरेगा, दूसरा गुम्बद खेत में देने योग्य हो जायगा। इस प्रकार वर्ष भर निरन्तर खेत के लिए एक ही गड्ढे से खाद उपलब्ध होती रहेगी।

संग्रहण

खाद को खुला नहीं छोड़ना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छेड़ना, कुरेदना उलटना-पलटना भी वर्जित है। खाद का ढेर पूर्णतः सघन रहे तथा उसमें पानी की अनुकूलतम मात्रा हो। खाद का ढेर खुले में न होकर छाये में होना चाहिये। पक्के और समतल फर्श पर खाद इकट्ठी करनी चाहिये तथा २-३ माह बाद इस्तेमाल करनी चाहिये, क्योंकि वाजा खाद की अपेक्षा सड़ी खाद उत्तम होती है।

अच्छी सड़ी खाद की पहचान यह है कि उसमें दुर्गन्ध नहीं आती तथा वह काले रंग की भुरभुरी होती है।

गोबर की खाद का भूमि पर भौतिक प्रभाव

भारी मिट्टी की दशा सुधर जाती है, भूमि वायु की मात्रा बढ़ती है, जड़ों का विकास अधिक होता है, मिट्टी का कटाव कम होता है, रेतीली मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ जाती है, भूमि में धरण की मात्रा भी बढ़ जाती है। भूमि ताप अधिक शोषित करती है और पौधों की वृद्धि बहुत तेजी से होती हैं।

रासायनिक प्रभाव

पौधों को पोषक खनिज अधिक मात्रा में मिलते हैं। भूमि को कार्बनिक पदार्थ मिलता है। कार्बनिक पदार्थ के विच्छेदन से कार्बन डाइआक्साइड मिलती है। यह अनेक विलेय कार्बोनेट व बाइकार्बोनेट बनाती है। पोटैशियम व फासफोरस सुपाच्य सरल यौगिकों में परिवर्तित हो जाते हैं। भूमि की सार विनिमय क्षमता बढ़ जाती है।

जैविक प्रभाव

जीवाणुओं की संख्या व क्रियाशीलता बढ़ती है। जीवाणु जटिल नाइट्रोजनीय पदार्थों को अमोनिया व नाइट्रेट आयनों में बदल देते हैं। इन्हें पौधे सहज ले सकते हैं। वायुमण्डल का नाइट्रोजन स्थिर हो जाता है। भूमि की उर्वरता बढ़ती है तथा जीवाणुओं द्वारा मिट्टी से पोषक तत्त्व सीधे पौधे को पहुंचते हैं, यह विशेष उल्लेखनीय प्रभाव है।

प्रयोग विधि

गोबर की कच्ची खाद खेत में नही डाली जानी चाहिये अन्यथा दीमक लग जाती है। फिर खाद के सड़ने (विच्छेदित होने) में भी समय लगता है। इसकी रेतीली भूमि में अच्छी प्रकार सड़ी हुई खाद मिलानी चाहिये। भारी चिकनी भूमि में अंशतः सड़ी हुई खाद लाभदायक है। मध्यम या भारी संरचना की भूमि में यह खाद पनझड़ या सर्दी में, खेत तैयार करनेसे पहले भूमि में मिलायी जाती है। रेतीली या पहाड़ी भूमि में पहले खाद देना उचित नहीं होता। कटाव या अपक्षालन द्वारा काफी खाद नष्ट हो जाती है।

खाद देते समय इसे पूरे खेत में फैलाना चाहिये। खाद को खेत में मिलाकर शीघ्र ही मिट्टी में मिला देना चाहिये। भारी मिट्टी में खाद कम गहराई तक और हलकी मिट्टी में अधिक गहराई तक दी जानी चाहिये। यदि खाद की कम मात्रा उपलब्ध हो, तो इसे ढेरों के रूप में देना अच्छा रहता है। खाद के ढेर फसल के पौधों के पास लगाने चाहिये। उद्यान में फलों के पेड़ों के तने से दूर मूल क्षेत्र में ये ढेर लगाने चाहिये। खेत में खाद का उचित उपयोग करने के लिए आवश्यक है कि खेत में डालने के बाद इसे जुताई द्वारा मिट्टी में मिला देना चाहिये। कठोर व शुष्क भूमि को सिंचाई करके नरम व जोतेने योग्य बना लेना चाहिये। आजकल अच्छी सड़ी खाद को लम्बी अवधि वाली फसलें, जैसे गन्ना इत्यादि में बुवाई के समय या पहली सिंचाई के साथ भी देने लगे हैं।

इस खाद में फासफोरस की बहुत कमी होती है, अतः इसे पूर्ण या सन्तुलित बनाने के लिए इसमें फासफोरस उर्वरक मिलाया जाता है। यह पुनर्वलन कहलाता है। फासफोरस उर्वरक अलग से भी खेत में दिया जा सकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि खाद एक टन प्रति एकड़ देनी हो, तो डेढ़-दो किलो प्रति टन सुपरफासफेट मिला देते हैं।

आलू, गोभी, तम्बाकू, मक्का, कपास, गन्ना आदि के लिए गोबर की खाद अति उपयोगी सिद्ध हुई है। जाड़े की ऋतु में यह गेहूं के लिए लाभदायक है। गेहूं के साथ बोयी फलीदार फसल के लिए भी यह उपयुक्त है।

कृत्रिम या संश्लेषित गोबर की खाद को कम्पोस्ट कहते हैं। पौधों व जीवों के अवशिष्ट का बैक्टीरिया व फुंगी (कवकानि) आदि द्वारा विच्छेदन होने से यह पदार्थ बनता है। यह गहरे भूरे रंग का पदार्थ रंग तथा गुणों में गोबर की खाद के समान है। इसको कूड़ा खाद भी कहते हैं। इसे बनाने की प्रक्रिया को कम्पोस्ट बनाना कहते हैं।

कम्पोस्ट का प्रयोग यूं तो पिछली शताब्दी में प्रारम्भ हो गया था परन्तु इसका वैज्ञानिक अध्ययन १९२१ में हचिनसन व रिचर्ड्स ने किया। उन्होंने भूसे से कम्पोस्ट बनाया। भूसे का जीवाणुओं द्वारा विच्छेदन किया गया। उदासीन या निर्बल क्षारीय माध्यम में यह क्रिया बड़ी तीव्र हुई। किण्वन द्वारा इस विच्छेदन में जीवाणुओं की क्रियाशीलता के लिए भोजन, वायु व जल आवश्यक है। इस खोज के पश्चात् कम्पोस्ट के सम्बन्ध में अनुसन्धान कार्य बड़ी तेजी से हुआ। भूसे के स्थान पर घर का कूड़ा, कचरा इत्यादि विभिन्न पदार्थ कम्पोस्ट बनाने के लिए प्रयुक्त किये गये। वास्तव में गोबर की खाद की कमी को पूरा करने के लिए कम्पोस्ट पर अधिक कार्य हुआ, अतः इसका महत्त्व भी बढ़ गया।

कम्पोस्ट बनाने के लिए आवश्यक पदार्थ

१. कार्बनिक कूड़े-कचरे का भंडार, २. प्रारम्भक, ३. जल, ४. वायु, ५. नाइट्रोजन उत्प्रेरक व चूने का पत्थर।

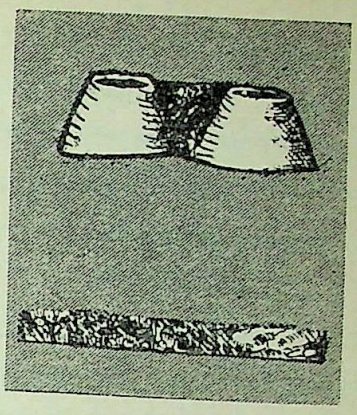

पशुओं के मल और मूत्र अलग-अलग एकत्र किये जाते हैं (ऊपर); बिछावन में विभिन्न अनाजों का भूसा, घास, पत्तियां, लकड़ी का बुरादा आदि की तह होती है (नीचे)

कार्बनिक कूड़े-कचरे का भंडार

यह निम्नलिखित साधनों से प्राप्त होता है: (१) फार्म का कूड़ा-कचरा, (२) पशुओं का बिछावन, (३) पशुओं के भोजन से बचा चारा, (४) सूखी या ताजा पत्तियां, (५) विभिन्न घासें, (६) खर-पतवार, (७) गन्ने आदि की पत्ती, (८) सब्जीमंडी का कचरा, (९) शहर-मुहल्ले का घूरा।

प्रारम्भक

कूड़े-करकट के अपार भंडार को कम्पोस्ट में बदलने के लिए 'जामन' देने की आवश्यकता होती है। इस पदार्थ को प्रारम्भक या प्रर्वतक कहते हैं। यह निम्नलिखित में से कोई होता है: (१) गोबर, (२) मानव मल, (३) मूत्र, (४) गन्दे नाले का पानी, (५) अवपंक या अवमल, (६) सोडियम नाइट्रेट, (७) कैल्शियम सायनेमाइड, (८) ऐमोनियम सल्फेट।

जल

कम्पोस्ट बनने में जल की मात्रा का नियन्त्रण आवश्यक है। जल की मात्रा लगभग ५% होनी चाहिये। जल की मात्रा कम होने से जीवाणुओं की क्रियाशीलता कम हो जाती है जिससे कम्पोस्ट बनाने में बाधा पड़ती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाष्पीकरण तथा प्रस्राव द्वारा भी जल की हानि होती है, अतः कम्पोस्ट में समय-समय पर पानी मिलाते रहना चाहिये। एक सप्ताह तक किण्वन हो चुकने के बाद कम्पोस्ट के ढेर को मिट्टी से लीपकर भी वाष्पीकरण द्वारा जल की हानि को रोका जा सकता है।

वायु

कम्पोस्ट बनाने की प्रारम्भिक अवस्था में वायु की विशेषतः अधिक आवश्यकता पड़ती है। अधिकतर क्रियाएं वातापेक्षी जीवाणुओं द्वारा होती हैं, अतः वायु की उपस्थिति जीवाणुओं की क्रियाशीलता के लिए आवश्यक है। कम्पोस्ट के ढेर को १०–१५ दिन में एक बार उलटने-पलटने से भी उसमें वायु पहुंच जाती है। वायु की पर्याप्त उपस्थिति से कम्पोस्ट जल्दी बन जाता है।

नाइट्रोजन उर्वरक व चूने का पत्थर

कम्पोस्ट में प्रायः नाइट्रोजन की कमी होती है। प्रथम तो कूड़े-कचरे में ही नाइट्रोजन की मात्रा कम होती है, दूसरे जीवाणु भी अपने पोषण के लिए नाइट्रोजन लेते हैं। नाइट्रोजन की कमी से अम्लीयता बढ़ती है अर्थात् कम्पोस्ट का PH कम हो जाता है। अम्लीयता बढ़ने से जीवाणुओं की क्रियाशीलता कम हो जाती है। जीवाणुओं के लिए अनुकूलतम माध्यम उदासीन या निर्बल क्षारीयता है। अतः जीवाणुओं की सक्रियता बनाये रखने एवं PH नियन्त्रण के लिए कम्पोस्ट में नाइट्रोजन उर्वरक तथा चूने का पत्थर मिला देते हैं।

कम्पोस्ट बनाने की विधियां

१. एडको विधि, २. उत्प्रेरित कम्पोस्ट विधि, ३. इन्दौर विधि, ४. बंगलौर विधि।

एडको विधि

यह सबसे पुरानी विधि है। हचिनसन व रिचर्ड्स ने इंग्लैंड में १९२१ में सर्वप्रथम इसे प्रकाशित किया था। इसमें कम्पोस्ट बनाने के लिए 'एडको' चूर्ण प्रयोग करते हैं। 'एडको' इंग्लैण्ड की एग्रीकल्चरल डेवलेपमेंट कम्पनी का सूक्ष्म नाम है। इस चूर्ण के अवचव व्यापारिक रहस्य हैं। फाउलर के अनुसार यह अमोनियम फासफेट, सायनेमाइड व यूरिया से बनाया जाता है। कोलिसन व कोन के अनुसार 'एडको' में अमोनियम सल्फेट, सुपर-फासफेट, पोटैशियम क्लोराइड व चूने का पत्थर होता है।

इस विधि में पहले भूसे आदि की एक फुट गहरी तह १० वर्ग गज भूमि पर बिछायी जाती है। इसको भिगोकर इस पर ७% 'एडको' चूर्ण छिड़क देते हैं। छह बार यह क्रिया दोहराई जाती है। जब ७′ ऊंचा ढेर बन जाता है, तो इसे तीन सप्ताह के लिए छोड़ देते हैं। यदि आवश्यकता होती है, तो केवल जल छिड़कते हैं। फिर यदि सड़ना तीव्र न हो तो ढेर को उलट-पलट सकते हैं।

यह विधि भारत-जैसे गरम देश के लिए उपयुक्त नहीं है। यहां गरमी के कारण नमी की कमी हो जाती है जिससे किण्वन रुक जाता है। तापक्रम में भी असमानता रहती है।

उत्प्रेरित कम्पोस्ट विधि

यह विधि फाउलर व रेंज ने १९२२ में प्रकाशित की। इसमें घास, पत्तों, घर का कूड़ा-करकट, खेत-बगीचे का सब कचरा एक गड्ढे में इकट्ठा करते रहते हैं। अवकाश के समय इस गड्ढे में से निकालकर ७′ लम्बा व २′ ऊंचा ढेर लगा लेते हैं। फिर एक मन ताजा गोबर लेकर, उसमें पानी मिला पतलाकर ढेर को इसमें भिगा देते हैं। इस पर समय-समय पर जल छिड़ककर गीला करते हैं तथा कुरेदते रहते हैं। पहले तापक्रम बढ़ता है और फिर घटता है। ढेर भुरभुरा हो जाता है। उसका रंग भूरा हो जाता है तथा मिट्टी की-सी गन्ध आती है। इस विच्छेदित पदार्थ में उत्प्रेरक या प्रारम्भक की उत्पत्ति हो जाती है, अर्थात् इस प्रकार कार्बनिक कूड़ा-करकट में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम्पोस्ट को उत्प्रेरित करने वाला पदार्थ उत्पन्न कर लिया जाता है। इस पदार्थ से अब कम्पोस्ट की अधिक मात्रा बनायी जा सकती है।

इस ढेर में से एक तिहाई लेकर दूसरे ढेर में मिलाकर उसे बीच-बीच में गोबर के पतले घोल में भिगाकर कम्पोस्ट में बदला जा सकता है। जब किण्वन पूरा हो जाये, तो इसमें से एक तिहाई लेकर दूसरे ढेर में मिलाकर उसे किण्वित किया जा सकता है। इस प्रकार एक बार उत्प्रेरित पदार्थ बना लेने पर उससे निरन्तर कम्पोस्ट बनाने की क्रिया चलती रहती है।

गोबर की अपेक्षा गोमूत्र से अच्छे परिणाम मिले हैं। परन्तु गोमूत्र की प्राप्ति आसान नहीं है। मानव मल व हड्डियों के चूरे से भी परिणाम अच्छे मिले हैं, पर इनके प्रयोग करने में अनेक बाधाएं हैं।

इन्दौर विधि

इस विधि को हावर्ड और वार्ड ने विकसित किया। इसमें गाय का गोबर प्रवर्तक, प्रारम्भक की तरह प्रयोग किया गया, क्योंकि इस विधि पर पादप उद्योग संस्थान इन्दौर में काम किया गया था, अतः यह इन्दौर विधि के नाम से प्रसिद्ध है। इस विधि को विश्व की सभी कृषि संस्थाओं ने सराहा तथा मान्यता दी है।

इसी विधि में सहुलियत के अनुसार जरा बड़ा मैदान काम में लाते हैं। ३०′ × १४′ × २′ के ३३ गड्ढे बनाते हैं। गड्ढे ढलवां होते हैं, जिससे लदी हुई गाड़ियां गन्तव्य तक पहुंच जायें। गड्ढों को दो-दो के जोड़ों में बनाते हैं और उनके बीच १२′ जगह छोड़ देते हैं। पास के गड्ढों में पानी देने के लिए एक तालाब की व्यवस्था रखते हैं जिसमें ३-४ हजार गैलन पानी आ जाय तथा नलों द्वारा गड्ढों में पानी देते हैं। कम्पोस्ट बनाने के लिए निम्नलिखित पदार्थ लेते हैं—

१. मिश्रित पादप अवशेष, २. पशु मल, ३. मूत्रीय मिट्टी ४. लकड़ी की राख, ५. जल तथा वायु।

गड्ढों पर एक चौड़ा तख्ता रखते हैं, जिससे भरते समय पदार्थ कुचला न जाय। अब गड्ढे के तल पर मिश्रित पादप अवशेष की ३″ मोटी तह सब जगह एक-सी बिछा देते हैं। इसके ऊपर मूत्रीय मिट्टी और लकड़ी की राख छिड़क देते हैं। उसके ऊपर गोबर और बिछावन के लिए प्रयोग की गयी मिट्टी की २″ की तह लगाते हैं। फिर सब पदार्थ को पानी से तरकर गीला करते हैं। शाम को तथा दूसरी सुबह फिर पानी छिड़कते हैं, अर्थात् तीन बार पानी देते हैं। इस प्रकार पदार्थ काफी पानी सोख लेता है और उसमें शीघ्र ही किण्वन प्रारम्भ हो जाता है, पदार्थ का आयतन कम होने लगता है और वह शीघ्र ही गड्ढे के तल से जा लगता है। बाद में हर हफ्ते पानी देते रहते हैं। जीवाणुओं को वायु पहुंचाने के लिए तथा कम्पोस्ट का एकरूप मिश्रण बनाने के लिए पदार्थ को तीन बार उलटा-पलटा जाता है।

पहली बार गड्ढा भरने के १०-१२ दिन बाद पलटते हैं। गड्ढा खोदकर आधा पदार्थ बाहर निकालकर गीला कर लेते हैं। इस गीले पदार्थ को बचे हुए आधे पदार्थ पर बिछा देते हैं। गड्ढे का खोदा गया आधा भाग खाली पड़ा रहता है। दो सप्ताह बाद फिर पलटते हैं। फिर पानी मिलाते हैं तथा खाली पड़े आधे हिस्से में ढेर लगा देते हैं। दो माह पश्चात् तीसरी बार पलटते हैं। अब तक पदार्थ का रंग गहरा भूरा हो जाता है तथा वह भुरभुरा हो जाता है। इसको गीला करके धरातल पर १०′ × ९′ × ३·५′ के ढेर लगाते हैं। इस प्रकार इस ढेर को एक माह तक रखा रहने देते हैं। कम्पोस्ट पककर तैयार हो जाता है। एक माह तक रखा रहने में जीवाणु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वायुमण्डल की नाट्रोजन की काफी मात्रा स्थिर कर लेते हैं। अनुमान है कि यदि कम्पोस्ट सावधानीपूर्वक बनाया जाय, तो नाइट्रोजन की मात्रा में २५% तक की वृद्धि हो जाती है।

वर्षा ऋतु में गड्ढों में पानी भर जाने से कम्पोस्ट बनाने में बाधा पड़ती है। अतः ढेर लगाकर कम्पोस्ट बनाते हैं। २′ ऊंचे ऐसे ढेर लगाते हैं जो आधार पर ८′ × ८′ हों तथा ऊपर ७′ × ७′। यदि वर्षा अधिक हो तो ढेर छाये में लगाते हैं। यदि छाये की व्यवस्था न हो सके, तो वर्षा ऋतु में जून से सितम्बर तक कम्पोस्ट नहीं बनाते।

बंगलौर विधि

इस विधि को भारतीय वैज्ञानिक सी. एन. आचार्य ने कार्यान्वित किया था। इस विधि से सम्बन्धित सब कार्य इंडियन इंस्टीट्यूट आफ साइंस, बंगलौर में हुआ, अतः यह बंगलौर विधि के नाम से विख्यात है। इस विधि में यह लाभ है कि कम्पोस्ट को बार-बार पलटना नहीं पड़ता, जिससे खर्चे में काफी कमी हो जाती है। इस विधि में कम्पोस्ट के कार्बन-नाइट्रोजन अनुपात पर बल दिया जाता है तथा प्रारम्भिक जल की मात्रा पर नियन्त्रण रखा जाता है।

कम्पोस्ट गड्ढों से बनाते हैं। गड्ढे इस प्रकार खोदते हैं कि उनकी लम्बाइयां तो समानान्तर होती हैं, पर चौड़ाइयां एक पंक्ति में होती हैं।

दो गड्ढों के बीच ५′ रिक्त स्थान छोड़ा जाता है। गड्ढों के चौड़ाई वाले किनारों पर मल या कूड़े की गाड़ियां आने-जाने के लिए उपयुक्त रास्ता छोड़ा जाता है। नये गड्ढे खोदते समय मिट्टी निकलती है, उसका गड्ढे की ओर ढेर लगा देते हैं। गड्ढों का आकार नगर की जनसंख्या के अनुसार रखा जाता है।

जनसंख्या	गड्ढे का आकार
१०,००० से कम	२०′ × ६′ × ३½′
१०,००० से २०,००० तक	२५′ × ७′ × ४′
२०,००० से ३०,००० तक	३०′ × ८′ × ४′
३०,००० से ५०,००० तक	३५′ × ८′ × ४′
५०,००० से ऊपर	४०′ × ९′ × ४′

पहले गड्ढे के तल पर ९–१०″ मोटी कूड़े-कचरे की तह बिछाते हैं। उसके ऊपर ३″ मोटी मानवमल की तह लगाते हैं। मानव मल की तह लगाना कोई प्रिय कार्य नहीं है। इसकी तह की मोटाई का अनुमान भार के हिसाब से लगाते हैं। कूड़े-करकट को भी भार के हिसाब से गणना करके फैलाया जा सकता है।

१ घनफुट कूड़े-करकट का भार				=लगभग १० किलो
१	,,	मानवमल ,,	=	,, ३० ,,
१	,,	कम्पोस्ट ,,	=	,, २० ,,

मानवमल की तह को तुरन्त कूड़े-करकट से ढंक देना चाहिये और अन्त में सबसे ऊपर कूड़े-करकट की ९–१०″ मोटी तह होनी चाहिये। इससे एक तो गड्ढे से मक्खियां नहीं पैदा हो पातीं, दूसरे दुर्गन्ध नहीं फैलती। प्रत्येक तह पर यदि आदमी चलकर देखे तो उसका पैर धंसना नहीं चाहिये। कचरे और मानवमल के उचित अनुपात का यही माप-दंड है। यदि पैर धंसता है, तो मल का अनुपात अधिक है।

गड्ढे को भूतल से १′ ऊपर तक भर देना चाहिये। गड्ढा भरने के ४-५ दिन बाद ढेर में काफी ताप उत्पन्न हो जाता है। तापक्रम ७०° सें० तक पहुंच जाता है। गड्ढे को एक ओर से १-१·५ फुट खोदकर ताप की जांच की जा सकती है। यह ताप लगभग एक मास तक रहता है। इसके दो लाभ हैं: १. कचरे व कूड़े-करकट का विच्छेदन हो जाता है, २. मल व कचरे में साधारणतः पाये जाने वाले रोगजनक कीटाणु मर जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम्पोस्ट	N_2%	P_2O_5%	K_2O%
१. नगर के कचरे, मल से बनायी गयी	१·२	१·०	१·५
२. गांव के कचरे आदि से ,,	०·४-०·८	०·३-०·६	०·७-१·०
३. इन्दौर विधि से ,,	१·०	०·५	३·०
४. खरपतवार से ,,	२·०९	०·८६	...
५. चाय बागान के कचरे से ,,	१·३	०·५	३·०
६. केले के उद्यानों के कचरे से ,,	१·८७	०·४३	०·४५

कुछ कम्पोस्टों में नाइट्रोजन, फासफोरस तथा पोटैशियम की मात्रा

चार माह में पूर्ण विच्छेदन हो जाता है। पूर्ण विच्छेदित पदार्थ गन्धहीन होता है। इसी को कम्पोस्ट कहते हैं। यह गोबर की खाद से उत्तम है। इस विधि में संशोधन करके फार्म अवशिष्ट गोबर व मूत्र इत्यादि का भी प्रयोग कर सकते हैं।

कम्पोस्ट ढेरों में भी बनायी जाती है। यदि विच्छेदित पदार्थ के शीघ्र ठंडा व शुष्क होने की सम्भावना हो तो गड्ढों में कम्पोस्ट बनानी चाहिये। परन्तु जहां जल स्तर तल के ही निकट हो वहां गड्ढों में पानी भर जाने का भय रहता है। कुछ पोषक तत्वों का भूमि—जल में विलेय होकर नष्ट हो जाने का डर भी रहता है। ढेरों में बनायी जाने वाली खाद को वायु भी अधिक मिलती है, किन्तु ढेरों की आंधी व वर्षा से रक्षा की व्यवस्था होनी चाहिये।

कम्पोस्ट की रचना

कम्पोस्ट की रचना स्थिर नहीं होती। इसकी रचना इसको बनाने के लिए प्रयुक्त पदार्थों—कूड़ा करकट, प्रारम्भक तथा प्राप्त पदार्थों—पर निर्भर करती है। फिर नगर और गांव, खेत और बाग के कचरे में भी अन्तर होता है। कुछ कम्पोस्टों में नाइट्रोजन, फासफोरस व पोटैशियम की मात्रा उपर्युक्त तालिका के अनुसार होती है।

कम्पोस्ट का भूमि पर प्रभाव

भौतिक—भूमि की संरचना सुधरती है रेतीली मिट्टी सघन हो जाती है तथा मटियार भुरभुरी हो जाती है। भूमि की जलधारण व उष्मा शोषण क्षमता बढ़ती है। भूमि की पारगम्यता भी बढ़ती है। निकासी में सुविधा होती है। क्षार व लवण भूमि खेती योग्य हो जाती है।

रासायनिक

कार्बनिक अवशेष से बनाये जाने के कारण इसमें पौधे के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्त्व होते हैं। कम्पोस्ट के विच्छेदन से पोषक तत्त्व पौधों को शीघ्र प्राप्त हो जाते हैं। विच्छेदन में कार्बन डाइआक्साइड बनती है। भूमि-जल में विलेय होकर यह कार्बनिक अम्ल बनाती है। अनेक अघुलनशील लवण कार्बनिक अम्ल में विलेय होकर पौधों को सुपाच्य रूप में प्राप्त होते हैं।

जैविक

कम्पोस्ट में असंख्य जीवाणु होते हैं जिनके द्वारा नाइट्रीकरण, अमोनियाकरण तथा नाइट्रोजन स्थिरीकरण में वृद्धि होती है। धरण बढ़ता है। पादप हार्मोन भी कम्पोस्ट में पाया जाता है।

कृत्रिम या संश्लेषित गोबर की खाद ही कम्पोस्ट है। इसका उपयोग गोबर की खाद की तरह ही किया जाता है। नाइट्रोजन या फासफोरस पूरक उर्वरक मिला लेने से यह एक तरह से सम्पूर्ण खाद बन जाती है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

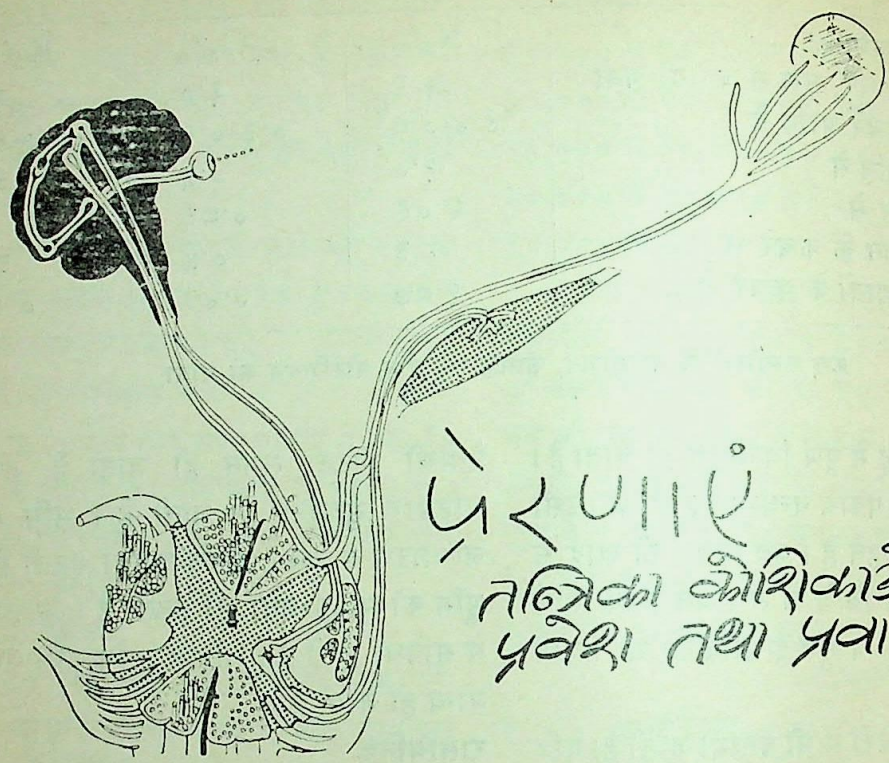

प्रेरणाएं तन्त्रिका कोशिकाओं में प्रवेश तथा प्रवाह

डा. महेश्वरसिंह सूद, एम.एस-सी., पी-एच.डी.

प्रत्येक सजीव की चेतना की अपनी सीमा होती है और इसी के अनुसार उसमें अनुक्रियाशीलता आती है। सजीव कितना सचेत है यह उसकी प्रवृत्तियों के ग्रहण करने की शक्ति पर निर्भर होता है। प्रवृत्तियां तन्त्रिका कोशिकाओं द्वारा प्राप्त की जाती हैं जो विभिन्न रूप और नाप की होती हैं। पिछली शताब्दी के अन्त में स्पेन के 'सेंटियागो रमन वाई कजाल' नामक रचनाविज्ञानवेत्ता ने यह स्पष्ट कर दिखाया कि तन्त्रिका कोशिकाओं में सामान्य कोशिकाओं की तरह न्यूक्लियस और कोशिका द्रव्य तो होता ही है, पर इसके अतिरिक्त बाह्य तल पर अनेक बहुशाखीय प्रवर्धन होते हैं जो प्रेरणा-सम्बन्धी होते हैं और जिनके द्वारा प्रेरणाएं ली जाती हैं तथा कोशिकाओं को प्रेषित की जाती हैं।

तन्त्रिका कोशिका में प्रेरणाओं का प्रवेश

ऐसे कोशिका प्रवर्ध जो पृष्ठ दिशाओं में होते हैं, वृक्ष की शाखाओं की तरह फैले हुए होते हैं। इनको अभिवाही प्रवर्ध कहते हैं, क्योंकि इनके द्वारा तन्त्रिका कोशिका में प्रेरणाएं प्रवेश करती हैं। अधर दिशा में केवल एक ही प्रवर्ध होता है जिसको संतन्तु कहते हैं, इसके द्वारा प्रेरणाएं सम्प्रेषित होती हैं। अक्षतन्तु का एक छोर बहुत छोटी शाखाओं में बंटा होता है, जो दूसरी तन्त्रिका कोशिका के अभिवाही प्रवर्धों के समीप फैला होता है। अक्षतन्तु की लम्बाई मिलीमीटर के कई दशमलव से लेकर एक मीटर तक की होती है। सबसे लम्बे अक्षतन्तु मांसपेशियों को संचालित करने वाले होते हैं। अक्षतन्तु की आकृति बिजली या टेलीफोन के बंटे हुए मोटे तार की रस्सी की तरह की होती है और ये विशेष रूप से तन्त्रिका प्रेरणा प्रवाह के उपयुक्त बने होते हैं। इनमें होकर प्रेरणाएं एक मीटर प्रति सेकंड की चाल से सौ मीटर प्रति सेकंड की चाल तक चलती नापी गयी हैं। एक तन्त्रिका कोशिका दूसरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तन्त्रिका कोशिका से चिपकी हुई नहीं होती है और न ही इनका कोई भाग एक-दूसरे से लगता रहता है। इनके मध्य में स्थान छूटा रहता है और इसको सर्वप्रथम चार्ल्स शेरिंगटन ने देखा और इसका नाम अन्तर्ग्रन्थन दिया।

एक पृथक विज्ञान की उपशाखा

इस रचना विशेष के महत्त्व का आभास इसी तथ्य से जाना जा सकता है कि इसके आधार पर एक पृथक विज्ञान की उपशाखा ही स्थापित हो गयी है जिसे अन्तर्ग्रन्थन विज्ञान कहा जाता है। इसके अन्तर्गत इस विषय का प्रतिपादन रहता है कि किस प्रकार एक कोशिका से दूसरी कोशिका में प्रेरणाएं पहुंचती हैं। विद्युत अणुवीक्षण यंत्र के द्वारा देखने से यह स्पष्ट हो गया है कि एक कोशिका से दूसरी कोशिका में अन्तर्प्रेरणाएं वितानों में विशेष प्रकार से फैली हुई अन्तर्ग्रन्थि गांठों से अत्यन्त वेग से छोड़े जाने वाले सम्प्रेषित पदार्थों की तरह जो पिचकारी की तरह छूटते हैं, पहुंचती हैं। अन्तप्रेरणा को अन्तर्ग्रन्थन से परे जाना है तो यह अति आवश्यक प्रतीत होता है कि अन्तर्प्रेरणा का दूसरी कोशिका के सिरे पर पुनर्जनन हो। पन्द्रह वर्ष पूर्व तक क्रिया-विज्ञान-वेत्ताओं का यह दृढ़ निश्चय रहा कि अन्त-प्रेरणा का पुर्नजनन एक विद्युत प्रपंच होता है परन्तु अब यह पूर्ण-रूप से सिद्ध किया जा चुका है कि यह विद्युत प्रपंच नहीं है, अपितु यह विशिष्ट रसायनों के छूटने के कारण होता है जो पिचकारी द्वारा छोड़े जाने वाले सम्प्रेषित रसायन होते हैं। इनसे ही अन्त-प्रेरणा एक तन्त्रिका कोशिका से दूसरी तन्त्रिका कोशिका में पुनर्जनन करती हुई प्रवाह करती है। रचना-विज्ञानवेत्ताओं और क्रिया-विज्ञानवेत्ताओं, दोनों ने ही यह जान लिया है कि मनुष्य के केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र के अंगों में जिनमें सुषुम्ना और मस्तिष्क दोनों ही सम्मिलित हैं, लगभग दस खरब इस प्रकार की तन्त्रिका कोशिकाएं होती हैं और इनकी संख्या ही चेतना की चरम शक्ति, सीमा प्रदानकरती है। जिनमें इनकी संख्या अधिक होती है वे अधिक ज्ञानी होते हैं और जिनमें इनकी संख्या कम होती है, वे उसी अनुपात से कम बुद्धि वाले होते हैं। वैज्ञानिकों ने यह भी पूर्णरूप से निर्धारित कर लिया है कि प्रत्येक तन्त्रिका कोशिका की चेतना की सीमा, शक्ति अनेक उपायों से घटायी या बढ़ायी जा सकती है। और इनमें सबसे बड़ा उपाय परि-स्थितियों के प्रति जागरुकता का अभ्यास ही माना जाने लगा है।

मानव : एक सर्वश्रेष्ठ रचना

वर्तमान में सजाव या प्राणियों में मानव ही सर्वश्रेष्ठ रचना माना जाता है। मानव में ज्ञान-शक्ति है और इसी के सहारे वह अपने को श्रेष्ठ मानता है। मानव संसार की सब वस्तुओं, जीव, जन्तु, वनस्पति आदि के सम्बन्ध में ज्यादा से ज्यादा जानना चाहता है, और जैसे-जैसे विज्ञान के साधनों में उन्नति होती जाती है, वह दिन प्रति दिन और अधिक जानता ही चला जा रहा है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि जिस समय कोई तथ्य मालूम न था तब वह तथ्य नहीं था, अपितु उस समय तक मानव के पास ऐसे साधन नहीं थे कि वह उन्हें जान सकता। यह भी हो सकता है कि उस समय मानव को उसकी आवश्यकता ही प्रतीत न हुई और उसने उस तथ्य के सम्बन्ध में जानने का प्रयास ही नहीं किया। इस कारण वह तथ्य जिसे हम मालूम होने पर नवीन कहते हैं पता न चल पाया। मानव ने स्वयं अपने शरीर की आकृति और प्रकृति को जानने के प्रयास किये हैं और सबसे अधिक समय और शक्ति वैज्ञानिकों ने अपने को ही जानने में लगायी है, फिर भी मानव अपने को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्णरूप से जान नहीं पाया है। आज तक मानव को यह पता नहीं है कि सजीव किस प्रकार अनेक कार्य करते हैं। उसे मालूम है कि चाहे सजीव एक कोशिकीय हो अथवा बहुकोशिकीय, उसके शरीर के कार्य तन्त्रिका संस्थान द्वारा ही नियन्त्रित एवं संचालित होते हैं। प्रत्येक सजीव का यह प्रयास होता है कि वह अपने-आपको अधिक से अधिक बाह्य परिस्थितियों के अनुकूल बना सके तथा सफल जीवनयापन कर सके। यह वह इतनी सफलता से ही कर पाता है जितना दृढ़ तन्त्रिका संस्थान उसे प्राप्त होता है।

तन्त्रिका नियन्त्रण के अतिरिक्त सजीव में एक अन्य शक्ति

वैज्ञानिक यह भी अब जान गये हैं कि तन्त्रिका नियन्त्रण के साथ-साथ सजीव में कोई और भी शक्ति होती है जो समस्त कार्यों को सम्पादित करने में दृष्टिगोचर होती है। यदि वह शक्ति न होती, तो उनके कार्य जिनका कोई भौतिक सम्बन्ध तन्त्रिका-तन्त्र से होता ही नहीं है, संचालित हो ही नहीं सकते। विज्ञान का लेशमात्र ज्ञान रखने वाले भी भलीभांति जानते हैं कि कोशिकाओं के आधार पर सजीवों को दो स्थूल भागों में बांटा जाता है—एक-कोशिकीय जिनमें शरीर की समस्त प्रक्रियाओं को करने के लिए एक ही कोशिका होती है। वे शरीर के समस्त कार्य इस एक कोशिका द्वारा ही कर लेते हैं। दूसरे, बहुकोशिकीय जिनमें एक से अधिक कोशिकाएं होती हैं। इनमें विभिन्न कार्य करने के लिए पृथक-पृथक कोशिकाएं या कोशिका-समूह होते हैं, अर्थात् इनमें आकृति विभाजन तथा कार्य विभाजन दोनों ही होते हैं और जिस जन्तु में जितना अधिक विभाजन होता है, वह उतना ही जटिल तथा उत्कृष्ट होता है। ऐसे ही प्रकार के जन्तुओं में तन्त्रिका नियन्त्रण के साथ-साथ रसायनिक नियन्त्रण भी रहता है। इसके द्वारा समस्त कोशिकाएं ठीक-ठीक कार्य करती हैं। इनमें बाहर से अन्दर अथवा अन्दर से बाहर रासायनिक पदार्थों का परिवहन और इसके साथ-साथ संवेदनाओं का आदान-प्रदान होता है। इससे जन्तु बाह्य परिस्थिति को जानते हुए अपने-आपको अनुकूल बनाते रहते हैं और जीवित रह पाते हैं। फिर समस्या रसायनों के परिवहन अथवा वितरण की आती है।

हारमोनों के परिवहन की समस्या

सबसे प्रमुख रसायन नलीविहीन ग्रन्थियों के स्राव हारमोन होते हैं और इन्हीं के परिवहन की समस्या सबसे महत्त्वपूर्ण होती है। ये हारमोन किन्हीं कोशिकाओं द्वारा संश्लिष्ट किये जाते हैं और विशिष्ट उत्तेजना पाकर रक्त के साथ मिलते हैं और शरीर के समस्त भागों में वितरित होते हैं। प्रत्येक हारमोन की यह विशेषता होती है कि वह केवल विशेष कोशिकाओं पर ही अपना प्रभाव डाल सकता है, अन्य पर या सब पर नहीं, और इससे सदैव एक ही प्रकार की अनुक्रिया हो पाती है। प्राणी-विज्ञानवेत्ता जानते हैं कि सजीव को उचित जीवन-यापन के लिए हारमोन की प्रर्याप्त मात्रा और वह भी उचित समय और स्थान पर मिलनी आवश्यक है। रक्त के साथ परिवहन होने से हारमोन के वितरण में अनेक सीमाएं रहती हैं। प्रथम, रक्तमंडल में रक्त नलिकाओं की स्वयं अपनी सीमाएं होती हैं। वे प्रत्येक कोशिका से सम्बन्धित नहीं होती हैं तथा चाप आदि की ऐसी परिस्थितियां आ जाती हैं जो कठिनाइयां लाती हैं। द्वितीय, रक्त स्वयं बहुत धीमी गति से घूमने वाला तरल होता है और जब रक्त की स्वयं की ही गति धीमी होती है तो हारमोन जिन्हें इसके साथ घूमना होता है, कैसे शीघ्रता से ऐसे स्थानों पर पहुंच सकते हैं जहां इनकी आवश्यकता होती है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्तु की बदलती परिस्थितियां, बदलता व्यवहार

मानव शरीर में रक्त को सामान्य स्थितियों में शरीर का पूर्ण चक्कर लगाने में बीस सेकंड का समय लगता है, इसलिए हारमोन के जो रक्त के साथ मिलकर चलते हैं परिवहन में भी इतना समय लग जाता है। तृतीय, जैसे-जैसे रक्त घूमता है, हारमोन भी घूमते हैं परन्तु वे अपना प्रभाव विशिष्ट स्थल पर ही डालते हैं, क्योंकि उनकी रासायनिक रचना इस प्रकार की होती है कि वे अधिक प्रभाव डाल ही नहीं सकते हैं, इस कारण जब रक्त उपयुक्त स्थान पर नहीं पहुंचता, तो हारमोन किस प्रकार से उस स्थान पर पहुंच सकते हैं। जन्तु की परिस्थितियां बदलती रहती हैं और उसका व्यवहार भी उनके साथ-साथ बदलता रहता है। आपत्ति काल में, जैसे खाद्य की अनुपस्थिति या किसी अन्य जीवन संकट में और अधिक आवश्यक हो जाता है कि हारमोन शीघ्रता के साथ और आवश्यक शक्ति के अनुसार उचित स्थल पर पहुंचकर प्रतिक्रिया करें। यह तब ही सम्भव हो सकता है जब जन्तु ऐसी परिस्थितियों को शीघ्रातिशीघ्र ग्रहण कर उसके अनुकूल कार्य कर सकें अन्यथा जीवन संकटमय हो जाता है और फिर परिणाम कुछ भी हो सकते हैं। तत्काल आपत्ति को जानने की क्षमता तथा उसके अनुसार कार्य करने की क्षमता तन्त्रिकाएं प्रदान करती हैं। बाहर से समस्त सूचनाएं ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त होती हैं। ज्ञानेन्द्रियां समस्त मांसपेशियों और ग्रन्थियों को उत्तेजित करती हैं और उनसे उचित कार्य करवाती हैं।

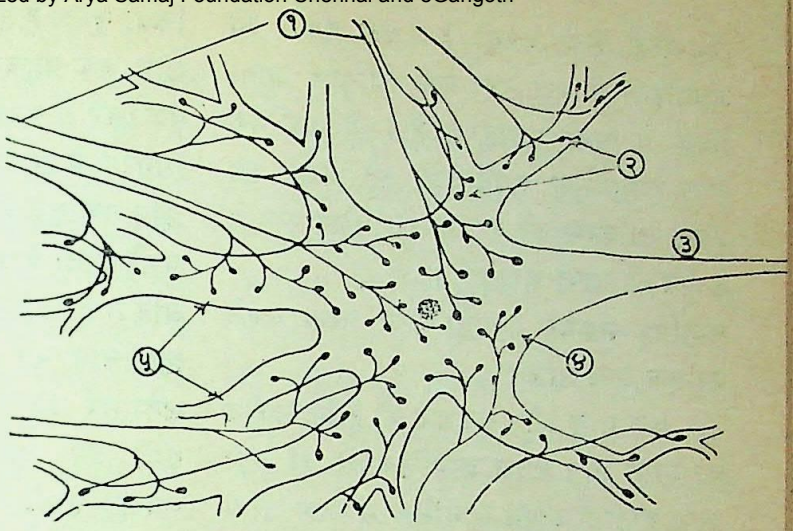

प्रेरक तन्त्रिका-कोष—(१) अभिवाही स्नायु प्रवर्ध, (२) सूत्र युग्मन गांठ, (३) प्रेरक तन्त्रिका का तन्त्रिकाक्ष, (४) प्रेरक तन्त्रिका-कोष, और (५) द्रुमाश्म।

यद्यपि तन्त्रिका सूत्रों का अत्यधिक जाल बिछा होता है, फिर भी प्रत्येक कोशिका तन्त्रिका सूत्र द्वारा बांधी हुई नहीं होती है। यदि ऐसा होता तो एक कठिनाई सजीव के लिए होती; और एक ऐसा विचित्र और जटिल जाल तन्त्रिका सूत्रों का फैल जाता कि वे स्वयं आपस में उलझकर किसी भी कार्य को स्पष्ट रूप में न होने देते और समस्त शरीर में अनिश्चितता सदैव बनी रहती। प्रत्येक अंग से विभिन्न तथा विपरीत आदेश आते-जाते एक और विषम परिस्थिति उपस्थित हो जाती, जिसका सामना करना सजीव के शरीर के वश की बात न रह जाती। इस कारण सजीव में रासायनिक नियन्त्रण का अलग ही महत्त्व होता है। ये तन्त्रिका तन्त्र के साथ मिलकर एक ऐसी परिस्थिति बना देते हैं कि समस्त समाचार केन्द्रित होकर मांसपेशियों और ग्रन्थियों का संचालन गठित रूप से और उचित मात्रा में प्राप्त संवेदना शक्ति के अनुरूप करते रहते हैं, जिससे प्राणी बाह्य परिस्थितियों की जानकारी तथा उनके प्रति जागरूकता उचित प्रकार ला पाते हैं। इससे विशिष्ट ज्ञानेन्द्रियों को ज्ञान प्राप्त होता है और वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठीक-ठीक कार्य करती हैं। इस प्रकार की ज्ञानेन्द्रियों में चक्षु तथा कर्ण विशिष्ट ज्ञानेन्द्रियों के अच्छे उदाहरण हैं। ये यान्त्रिक तथा रसायनिक संवेदनाओं को प्राप्त कर बाह्य पर्यावरण की जानकारी विशेष रूप से सजीव को प्राप्त कराते हैं।

मानसिक संक्रमण : बाह्य ज्ञान प्राप्त करने का एक अन्य साधन

एक बात और समझने की है कि सजीव को बाह्य ज्ञान केवल ज्ञानेन्द्रियों से ही नहीं प्राप्त होता है अपितु मानसिक संक्रमण द्वारा भी प्राप्त होता है, अर्थात् दूर स्थित एक मन का दूसरे जन्तु के मन पर भी प्रभाव पड़ता है। टैलीपेथी में एक ही जन्तु की अपनी ही मस्तिष्क प्रक्रियाएं कार्य नहीं करती हैं, अपितु अन्य व्यक्ति जो अपने विचार दूर से ही देता है, उसकी ज्ञानेन्द्रियां और अपनी विचार शक्ति मिलकर एक प्राणी जैसा ही तन्त्रिका तंत्र बनाते हैं और जिस प्रकार एक व्यक्ति की ज्ञानेन्द्रियां और मस्तिष्क मिलकर कार्य करते हैं ठीक उसी प्रकार टैलीपेथी में दो प्राणियों के विभिन्न भाग एक-दूसरे के पूरक भागों की तरह कार्य करते हैं, और एक प्राणी-जैसा ही तन्त्र बना देते हैं जिससे एक प्राणी के विचार दूसरे प्राणी में आ जाते हैं और कार्य होने लगता है।

शरीर में प्रेरणाओं का आदान-प्रदान

तन्त्रिकाएं शरीर में किस प्रकार प्रेरणाओं का आदान-प्रदान करती हैं यह भी हमें समझ लेना होगा। तन्त्रिकाओं की कार्य विधि ताप के परिचलनों की विधियों से कहीं भिन्न होती हैं। ताप के परिचलन की अनेक विधियां, हैं उनमें से धातु की छड़ का परिचलन और सिगरेट के जलने के परिचलन को यदि हम ठीक-ठीक समझ लें तो तंत्रिका द्वारा प्रेरणाओं के परिवहन को भी आसानी से समझ सकेंगे। धातु की छड़ के एक सिरे को जब गरम किया जाता है तो ताप धातु की छड़ के अन्तिम छोर तक पहुंचता है, परन्तु जब सिगरेट को एक सिरे से गरम करते हैं अथवा जलाते हैं तो सिगरेट में ताप आरम्भिक छोर से अन्तिम छोर तक तब ही पहुंचता है। जब वह जलती चली जाती है अन्यथा ताप न तो आगे बढ़ेगा और न ही अन्तिम छोर गरम होगा। धातु की छड़ ताप का सुचालक होने के कारण ताप लगातार बढ़ता ही जाता है जब तक कि गर्मी देने वाले के समान उसका ताप सब ही भागों में नहीं हो जाता है। सिगरेट ताप का कुचालक होता है, इस कारण इसमें ताप एक स्थान पर ही बढ़ता है और उस स्थान के जल जाने या भस्म हो जाने पर अर्थात् इतने ताप पर हो जाने पर कि वह जल जाय, ताप आगे की ओर बढ़ता है और इसी प्रकार एक भाग के भस्म हो जाने पर दूसरे भाग में पहुंचता है, इसी प्रकार अन्त तक पहुंचता है। दूसरे शब्दों में यों कहा जा सकता है कि छड़ में ताप एक कण से दूसरे कण में बहता हुआ चलता चला जाता है अर्थात् वह सक्रिय होता है, जबकि सिगरेट में परिचलन निष्क्रिय होता है। दियासलाई या माचिस की जलती हुई तीली सिगरेट के जलने को आरम्भ करा देती है और उसका कार्य सिगरेट के जलाने को आरम्भ करा देने तक ही सीमित होता है। इसके पश्चात् जब सिगरेट जलना आरम्भ कर देती है तब उसका कागज या तम्बाकू जलने लगता है और ताप प्रत्येक कण को समाप्त करता हुआ आगे बढ़ता है।

दियासलाई या माचिस तो केवल रसायनिक परिस्थितियों को आरम्भ कराने भर की जिम्मेदार होती है, और जब एक बार उसका जलना आरम्भ हो जाता है, माचिस की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती है, अर्थात् आरम्भकारी का प्रभाव संलग्न नहीं होता है। सिगरेट की चमक और जलना उसका अपना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षण होता है, उसका सम्बन्ध मूल कारण (स्रोत) पर कभी भी नहीं रहता है। धातु की छड़ में ताप का परिचलन तार द्वारा समाचार भेजने के समान होता है जबकि सिगरेट में ताप का परिचलन आंशिक रूप से। तन्त्रिकाओं में प्रभाव एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक स्थानीय विद्युत एवं रसायनिक विभव के कारण होता है। इनमें प्रभाव अथवा प्रोत्साहन फासले से घटता नहीं है।

प्रोत्साहन (उत्तेजना) की शक्ति तथा उसका अनुभव, प्रोत्साहन की शक्ति पर निर्भर नहीं रहता है, बल्कि यह तन्त्रिका की स्थिति पर निर्भर होता है। यदि तन्त्रिका ठीक होती है, अर्थात् उसमें शक्ति को ग्रहण करने की शक्ति अधिक होती है तो जन्तु पर अधिक प्रभाव पड़ता है। इसमें कल्पना का अधिक भाग होता है। मस्तिष्क में इतनी शक्ति होती है कि वह कभी-कभी वास्तविक प्रभाव के अतिरिक्त भी बहुत से अनुभव अपने आप मनगढ़न्त रख लेता है और ऐसा समय-समय पर जो प्रभाव उसको प्राप्त हुए होते हैं उनके कारण हो पाता है। मस्तिष्क विभिन्न समय के प्राप्त अनुभवों को अन्य समय में भी केवल कल्पना के आधार पर मिश्रित कर लेता है, इस कारण समस्त सजीव में विशेषकर मानव में मिश्रित प्रभाव ही होते हैं। प्रयोगों के आधार पर वैज्ञानिकों ने यह ठीक-ठीक जान लिया है कि तन्त्रिकाएं सजीव की सबसे आवश्यक तथा अच्छी सेवक होती हैं।

यह भी भलीभांति देख लिया गया है कि तन्त्रिकाएं सजीव की मृत्यु के साथ मृत नहीं होती हैं। किन्हीं में तो सजीव की मृत्यु होने के पर्याप्त समय के बाद तक जीवित बनी रहती हैं।

जीव में तन्त्रिकाएं अन्दर व बाहर रासायनिक घोलों से घिरी हुई होती हैं और इनमें विद्युत विभव होता है। इसको सिद्ध करने के लिए निम्नलिखित प्रयोग किया जा सकता है।

एक प्रयोग

तन्त्रिका के एक टुकड़े को सजीव के शरीर में से निकालकर, एक कांच की नली में सोडियम क्लोराइड के घोल में रखकर (केवल इसलिए कि वह सूखने न पाय) तार द्वारा वोल्ट मीटर से जोड़ दिया जाता है और फिर बिजली के तार को तन्त्रिका के अन्दर डाल देने से विद्युत धारा का अनुभव वोल्ट मीटर पर दिखायी देता है। सामान्य रूप से तन्त्रिका झिल्ली में $\frac{१}{२०}$ वोल्ट का अन्तर देखा गया है। इससे ही तन्त्रिका में संवेदना ले जाने की शक्ति प्राप्त होती है। तंत्रिकाओं में स्वयं अपनी बैटरी बनाने की शक्ति होती है और यह शक्ति तन्त्रिका के अन्दर उपस्थित रासायनिक घोलों के कारण होती है। यदि तन्त्रिका में से इस रसायन को निकालकर देखा जाय तो पता चलता है कि तन्त्रिका के अन्दर पोटेशियम का घोल होता है, जिसकी शक्ति बाह्य उपस्थित घोल से ३० गुना अधिक होती है। तन्त्रिका के ऊपर की झिल्ली पोटैशियम के लिए अगम्य (दुर्भेद्य) नहीं होती है। और जबकि सामान्य नियमों के अनुसार घोलों का चलन पतले द्रव से गाढे द्रव की ओर होता है, फिर भी तंत्रिका के अन्दर से पोटैशियम बाहर नहीं आता है, इसका एक मात्र कारण विद्युत का होना होता है। घोल में पोटैशियम के कण धनात्मक विद्युत लिये होते हैं जो बाह्य उपस्थित क्लोराइड से जो ऋणात्मक विद्युत वाले हैं, उदासीन हो सकते हैं। परन्तु सजीव में प्रोटोप्लाज्म से सटे होने के कारण विद्युत आकर्षण वहां सदैव बना रहता है और यह कभी भी तंत्रिका से पृथक नहीं हो पाता है।

तन्त्रिकाओं में सक्रियता उत्तेजना की शक्ति पर निर्भर नहीं होती

प्रयोगों द्वारा यह भी सिद्ध किया जा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुका है कि तंत्रिकाओं की सक्रियता उत्तेजना की शक्ति पर निर्भर नहीं होती है। उसकी अपनी निहित शक्ति होती है और उसी के अनुसार इसमें परिवर्तन आते हैं। नीचे के चित्र के अनुसार यदि तंत्रिका को बिजली के झटके से 'स' के स्थल पर उत्तेजित कर दिया जाय जो 'ट' बिन्दु से कुछ दूरी पर हो तो पता चलेगा कि कम शक्ति की विद्युत से अर्थात झटके से कोई प्रभाव नहीं होगा और इसी प्रकार दूसरी बार अधिक शक्ति के झटके से भी कुछ प्रभाव नहीं होगा। इससे निष्कर्ष निकलता है कि उत्तेजना की शक्ति से कोई प्रभाव में अन्तर नहीं होता है। वोल्ट मीटर तो केवल चेतना की सीमा पर अर्थात चरम बिन्दु जहां चेतना प्रति उत्तर देती है, प्रभाव दिखाता है। समस्त उत्तेजनाएं जो चरम बिन्दु से अधिक शक्ति वाली होती हैं, वे सबकी सब एक-सा ही प्रभाव दिखाती हैं और जो चरम बिन्दु से कम शक्ति वाली होती हैं वे कुछ भी प्रभाव नहीं दिखाती हैं, क्योंकि वे विद्युत विभिन्नता नहीं ला पाती हैं। वैज्ञानिकों ने 'प्रयोगों' द्वारा यह जान लिया है कि उत्तेजनाएं तंत्रिका में बीस मीटर प्रति सेकंड की गति से चलती हैं। यह भी देखा जा चुका है कि अत्यधिक ठंड से तंत्रिकाएं निष्क्रिय हो जाती हैं और उनमें उत्तेजनाओं को ग्रहण करने की शक्ति नहीं रहती है।

यह प्राय: सबने अनुभव किया होगा कि यदि हाथों को ठंडे पानी में बहुत देर रखा जाय तो कुछ देर के बाद हाथ सुन्न हो जाते हैं, अर्थात उनमें चेतना की शक्ति नहीं रहती है। शरीर के किसी भी भाग के सुन्न हो जाने का अर्थ उस भाग की तंत्रिकाओं का क्रिया-शून्य हो जाना होता है। प्रयोगों में यह देखा गया है कि जब तंत्रिका सक्रिय होती है तो तंत्रिका वेष्टन के अन्दर जो पोटैशियम विद्युताकर्षण के कारण रहता है, बाहर की ओर मिली सेकंड की चाल से रसने लगता है। यह प्रसरण तथा विद्युत दोनों के कारण होता है। इस प्रकार प्रेरणाएं तंत्रिका के सहारे प्रवाह करती रहती हैं। जैसे-जैसे प्रवाह आगे की ओर होता जाता है तंत्रिका पुन: पूर्व स्थिति को प्राप्त करती जाती है, अर्थात किसी भी प्रकार की उत्तेजना से किसी प्रकार का परिवर्तन तंत्रिका रचना में नहीं आता है। तंत्रिकाएं तो केवल परिवहन का माध्यम रहती हैं और जिस स्थल पर प्रथम सक्रियता की लहर समाप्त होती है, उसी स्थान से दूसरी लहर आरम्भ हो जाती है। मानव शरीर के सबसे तीव्रगामी तंत्रिका सूत्र हजार उत्तेजनाएं प्रति सेकंड प्रवाह करा सकते हैं यद्यपि प्रकृति में इतनी अधिक उत्तेजनाओं के एक साथ होने की सम्भावना नहीं होती है। अधिक से अधिक कुछ एक उत्तेजनाएं ही एक सूत्र में होकर एक समय में गति करती हैं।

तन्त्रिका से सम्बन्धित एक प्रयोग—(ट) बिजली के तार का सिरा, (व) वोल्ट मीटर और (स) उत्तेजित स्तर

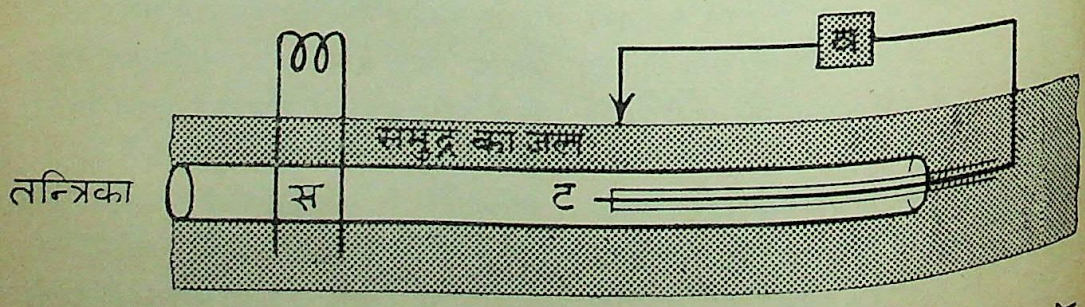

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह तथ्य कि उत्तेजना के प्रवाह के समाप्त होने पर उसी स्थान से दूसरी उत्तेजना के प्रवाह के लिए तंत्रिका सूत्र तैयार रहते हैं। इससे सरलता से हम इस निष्कर्ष पर पहुंच जाते हैं कि तंत्रिकाओं की निहित शक्ति का कभी भी प्रयोग नहीं होता है। और इससे इस तथ्य की भी पुष्टि हो जाती है कि विश्रामिक गर्भित शक्ति शून्य पर न आकर सदैव अपनी पूर्व स्थिति पर ही आती है। तंत्रिकाओं में से शक्ति कभी भी क्षीण नहीं होती है और वे प्रति उत्तर अपनी निहित शक्ति के अनुसार देती हैं तथा बारम्बार प्रभावित होती रहती हैं।

थकान

सजीव में दो प्रकार की थकान होती हैं—एक तो श्रम द्वारा उत्पन्न, जिसमें मांसपेशियों की थकान होती है। दूसरे, मानसिक थकान, जो केन्द्रीय तंत्रिकातंत्र की थकान होती है। मानसिक थकान लगातार सोचने से या एक-सा ही कार्य बहुत देर तक करने से या खिंचने आदि से आती है। यह सब जानते हैं कि मानसिक थकान अर्थात केन्द्रीय तंत्रिकातंत्र की थकान सोने से, छुट्टी लेकर आराम करने से, कार्य के बदल देने आदि से ठीक हो जाती है। यह भी सिद्ध किया जा चुका है कि मानसिक थकान मस्तिष्क और सुषुम्ना के थकने के कारण आती है। तंत्रिका सूत्र न कभी थकते हैं और न उनके कार्य करने में किसी प्रकार की कमी आती है। वे सदैव ही अपनी सामान्य शक्ति के अनुसार, जब तक उनको रक्त मिलता रहता है, आदेशों का निर्वाह करते रहते हैं। केवल रक्त के न पहुंचने पर ही वे क्रियाशून्य, निष्क्रिय होते हैं। यहां तक देखा गया है कि उन व्यक्तियों में जिनमें पूर्ण रूप से तंत्रिकीय क्लान्ति (शून्यीकरण) आ जाती है उनमें भी तंत्रिका सूत्र उसी प्रकार से कार्यक्षमता लिये रहते हैं जिस प्रकार से सामान्य व्यक्ति में।

सोया हुआ पांव

बहुधा अनुभव होता है कि घुटने पर घुटना रखकर बैठने अथवा कूल्हे की हड्डी की बगल से बैठने से पांव सो जाता है, अर्थात सुन्न पड़ जाता है। यह तंत्रिकाओं के अन्दर स्थित कोशिकाओं के दब जाने से होता है। सामान्यतः लोग यह समझते हैं कि सो जाने वाले हिस्से में रक्त संचार न होने से ऐसा होता है। यह धारणा गलत सिद्ध हो चुकी है। किसी भाग के सो जाने से तात्पर्य उस स्थान की तंत्रिकाओं के दब जाने से होता है, न कि रक्त नलिकाओं में रक्त के बहाव के बन्द हो जाने से होता है। जब कभी पांव सो जाय उस समय यदि घुटने के पीछे अंगुली डालकर देखा जाय, तो स्पष्टः वहां एक गड्ढा-सा दिखायी देता है जो सामान्य दशा में अर्थात जब पांव सोया हुआ नहीं होता है, उपस्थित नहीं रहता है। पांव के सो जाने पर टखने के पास नब्ज को आसानी से देखा जा सकता है। इससे भी यह सिद्ध होता है कि सुन्न होने पर रक्त नलिकाओं या रक्त के प्रवाह में कोई सम्बन्ध नहीं होता है।

शरीर में कई एक स्थल जैसे घुटना, कोहनी आदि जहां तंत्रिकाएं सतह के नजदीक अर्थात उथली होती हैं, अनायास टक्कर लग जाने से एक विशेष प्रकार की झनझनाहट होती है। यह झनझनाहट भी तंत्रिकाओं के झटका खाकर शून्य हो जाने से होती है। कुहनी में जब झटका लगता है तब हाथ की अंगुलियों में सबसे अधिक झनझनाहट प्रतीत होती है, इसी प्रकार घुटने में टक्कर लगने से तलवे में सनसनाहट होती है। पांव की अपेक्षा हाथ में इस प्रतिक्रिया का सदैव अधिक अनुभव होता है। इसी अनुभव के आधार पर चिकित्सकों (डाक्टरों) ने स्थानीय भागों के सुन्न होने की विशेषता के ज्ञान के आधार पर आश्रित होकर कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रसायनों जैसे नोवोकेन, प्रोकेन आदि से भाग को सुन्न कर नश्तर आदि लगाने में सहायता ली है। दन्त चिकित्सक भी इसी ज्ञान के आधार पर दांत निकाल पाते हैं।

तंत्रिकाओं को आक्सीजन चाहिये

तंत्रिकाएं ठीक-ठीक काम करें यह इस बात पर निर्भर रहता है कि उनको आक्सीजन की पर्याप्त मात्रा मिलती है। आक्सीजन प्रत्येक भाग को रक्त से मिलता है। अतः यों कहा जा सकता है कि प्रत्येक भाग को रक्त की मात्रा ठीक मिलती रहेगी, तो तंत्रिका-तंत्र के सब ही अंश ठीक काम करते रहेंगे। यह देखा गया है कि मेंढक की तंत्रिकाएं जो प्रति सेकंड २५० उत्तेजनाओं का आदान-प्रदान करती हैं, लगभग तीन दिन का समय अपने आयतन के बराबर आक्सीजन को इस्तेमाल करने में लगाती हैं। मानव की तंत्रिकाएं मेंढक से कहीं अधिक आक्सीजन का प्रयोग करती हैं, वे अधिक से अधिक पन्द्रह मिनट तक बिना आक्सीजन के रह सकती हैं। इस समय से अधिक आक्सीजन न मिलने से उनमें पुनः क्रियाशीलता किसी भी दशा में आती नहीं है अर्थात वे पुनः जीवित नहीं की जा सकती हैं। तंत्रिकाओं के ठीक कार्य करने में विटामिन 'बी' अत्यन्त सहायक रहता है। डाक्टरों तथा वैद्यों ने यह अनेक अनुभवों द्वारा सिद्ध कर दिखाया है। अतः तंत्रिकाओं को ठीक रखने के लिए यह आवश्यक होता है कि उन्हें पर्याप्त मात्रा में आक्सीजन मिलती रहे तथा उनको झटका आदि न लगे जिससे कि वे सुन्न हो सकें। ●

अपोलो योजना : एक महत्त्वपूर्ण प्रयास

अनथक प्रयत्नों के बाद अब यह सम्भावना प्रत्यक्ष होने लगी है कि मानव चन्द्रमा पर पहुंच जायेगा। हम पाते हैं कि शताब्दियों से पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण-सीमा से मुक्ति के प्रयास होते रहे, किन्तु सैद्धान्तिक आधार की खोज न हो पायी थी।

पिछली अर्द्ध दशाब्दी में इस दिशा में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। दुनिया के दो बड़े देश—अमरीका और रूस—सतत प्रयत्नशील रहे हैं। अब तक की अनेक परीक्षण उड़ानों में इन दोनों देशों ने वे सभी तथ्य एकत्र कर लिए हैं जो चन्द्रमा तक की समानव उड़ान को सफल बनाने में सहायक होंगे।

अमरीका की अगली योजना का नाम अपोलो योजना है। सम्भवतः यह लक्ष्य तक पहुंचने का अन्तिम चरण है।

सम्भवतः शीघ्र ही अमरीकी अपोलो योजना की पहली अन्तरिक्षयात्रा सम्पन्न होगी। इसमें छोटे आकार के सैटर्न राकेट द्वारा अपोलो अन्तरिक्षयान पृथ्वी की कक्षा में स्थापित किया जायेगा। १९६७-६८ के मध्य लगभग ६ उड़ानें की जायेंगी। हर नयी यात्रा पिछली अन्तरिक्ष यात्रा से अधिक जटिल और कठिन होगी तथा इनमें उन सभी कार्यों का अभ्यास किया जायेगा जो चन्द्रमा की वापसी यात्रा के दौरान करने पड़ेंगे।

इसी बीच सैटर्न-५ नामक चन्द्र राकेट का परीक्षण किया जायेगा। यह राकेट ७५ लाख पौंड प्रारम्भिक प्रवेश-क्षमता उत्पन्न करने में समर्थ होगा। चन्द्रयात्रा के पूर्व कुल मिलाकर ४-६ समानव सैटर्न अन्तरिक्ष यात्राएं की जायेंगी।

आकार और जटिलता की दृष्टि से अपोलो योजना जैमिनी योजना से काफी बढ़ी-चढ़ी है। जैमिनी अन्तरिक्षयान अन्तरिक्ष में स्थापित करने वाले टीटान राकेट की प्रारम्भिक प्रवेश क्षमता केवल ४,३०,००० पौंड थी, जबकि छोटे सैटर्न राकेट की प्रारम्भिक प्रवेश क्षमता १६ लाख पौंड होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

चन्द्रमा पर प्रकाश

अमरीकी वैज्ञानिकों ने एक विशाल आकार का लेसर बनाया है जिसकी किरण-दंड उस लेसर से कहीं ज्यादा शक्तिशाली है जिसने चन्द्रमा के अन्धकारमय रुख के दो मील के क्षेत्र को प्रकाशमान रखा और जो २७ सेकंडों में धरती पर लौट आया।

कोडक लेसर ग्लास के नाम से प्रसिद्ध यह बाई-बी-२० किस्म का लेसर टंकीय कांच का बना हुआ है और इस पर मृशला नामक एक दुर्लभ तत्त्व का प्रलेप है।

एक नयी सड़क

आठ वर्ष बीत चुके हैं किन्तु अभी तक २१० गज की परीक्षण-सड़क जो पश्चिमी जरमनी के वियेंसवेदन नगर की ट्रंक रोड पर है, जरा-सी भी टूटी-फूटी नहीं है। इसका कारण यह है कि इसकी सतह रबर की बनी हुई है। पास ही में बनी वजरी और तारकोल की सड़क खराब हो गयी लेकिन यह रबर की सड़क ज्यों की त्यों है।

इस परीक्षण से यह आशा बंधती है कि भविष्य में इस तरह की सड़कें काफी लोकप्रिय होंगी।

एक सूक्ष्म विद्युत् कण

एक सूक्ष्म विद्युत् कण ने जो आकार में सिलाई के सिरे से भी छोटा है, अमरीका में एक ऐसी क्रान्ति को जन्म दिया है जिसकी ओर अब तक कम ही लोग आकर्षित हुए हैं।

रेत से तैयार किये गये इस विद्युत् कण में एक सम्पूर्ण विद्युत् सरकिट का समावेश होता है। यह लगभग वेही कार्य करता है जो सूत्र, ट्रांजिस्टर, रिसिस्टर तथा इसी प्रकार के अन्य विद्युत् प्रवाहक उपकरणों द्वारा सम्पन्न किये जाते रहे हैं।

विद्युत् यन्त्रों में इसका उपयोग करने के फलस्वरूप गति, विश्वसनीयता और उपयोगिता के सम्बन्ध में नये सिद्धान्तों का जन्म हो रहा है। इन्हें मोनोलिथिक इंटिगरेटेड सरकिटों का नाम दिया गया है तथा जिस तकनीकी विद्या से इनका विकास हुआ है उसे माइक्रो इलेक्ट्रिक विज्ञान कहते हैं।

इन कणों का उपयोग कर अत्यन्त संवेदनशील विद्युदणु गणना यन्त्रों पर होने वाले समय में तथा उनके आकार में इतनी कमी की जा सकती है कि छोटे-छोटे उद्योगों और यहां तक कि घरों में भी इनका उपयोग सम्भव हो सकता है।

परीक्षण रेलगाड़ी : नयी सम्भावनाएं

एक रेलगाड़ी ने जिसमें ड्राइवर के डिब्बे की खिड़कियां बन्द थीं, बिना किसी दुर्घटना के हेम्बर्ग की भूमिगत रेलवे का सफर तय किया। हालांकि उसमें बैठा ड्राइवर कुछ भी नहीं देख सकता था, लेकिन फिर भी उसने गाड़ी रोकना, गाड़ी की गति को तेज करना तथा मोड़ों पर धीरे से ब्रेक लगाना आदि कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न किये।

छह डिब्बों वाली इस प्रदर्शन रेलगाड़ी का नियन्त्रण विद्युत् लहरों द्वारा किया गया। सभी आदेश विद्युत् द्वारा ड्राइवर तक पहुंचाये गये। वह उपकरण के पेनल पर हमेशा अपनी नजर रखे हुए था। इसमें यह व्यवस्था थी कि मशीनी खराबी आ जाने पर गाड़ी अपने-आप रुक जाती थी।

वैज्ञानिकों ने आशा व्यक्त की है कि यदि यह नयी प्रणाली जारी हो जाती है, तो रेल दुर्घटनाएं समाप्त हो जायेंगी और रेलें प्रति ६० सेंकंड के बाद चलायी जा सकेंगी। इससे यात्रियों को न तो अधिक समय तक प्रतीक्षा करना पड़ेगा और न उन्हें बार-बार टाइम टेबिल देखने की परेशानी होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

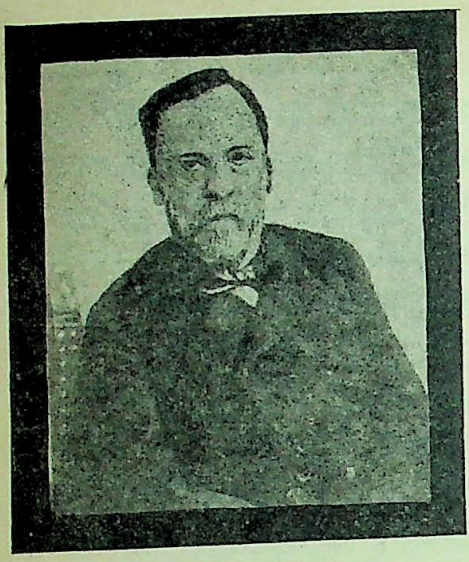

लुई पाश्चर

संघर्ष से सफलता की ओर

डा. हर्ष प्रियदर्शी

प्रयोगशाला की दीवारों में जब एकाकीपन का सन्नाटा खिंच गया, तो लुई ने शुरू किया अपना अद्भुत प्रयोग—प्रयोग जो लियविग के लिए मृत्युदायी बना। लुई ने पहले कुछ स्वच्छ फ्लास्क लिये और उनमें आसुत जल भरा, और तब इन आसुत जल-भरे फ्लास्कों में उसने नपी-तुली मात्रा में स्वच्छ चीनी छोड़ दी। और तब इस शर्करा घोल को उसने अपने अमोनिया-लवण में मिला दिया—वस्तुतः लुई ने जिस वस्तु का उपयोग प्रयोग में किया था वह वास्तव में अमोनिया टारट्रेट थी। अब इतनी तैयारी पूरी कर चुकने पर उसने इन फ्लास्कों में जिनमें अल्बुमिनरहित घोल विद्यमान था, एक-एक बूंद यीस्ट छोड़ दिया—उगने और प्रजनन करने के लिए। फ्लास्कों में यीस्ट की बूदें छोड़ चुकने पर उसने प्रत्येक फ्लास्क को अच्छी तरह से बन्द किया और उन्हें अपनी ताप संचालित भट्ठी में रख दिया। प्रयोग पूरा कर चुकने पर वह व्यग्रमन से सिर्फ यह सोचता हुआ कि क्या इस नये घोल में यीस्ट के प्राणी कणों का प्रजनन होगा अथवा नहीं, वह अपने घर लौट आया।

यहां हैं वे प्राणी कण !

लुई जब घर पहुंचा तब तक रात का सयापा पेरिस पर घिर चुका था। और रात के इसी भयावने सन्नाटे में उसने अपनी प्रिया को वह सब कुछ बताया जो आज दिन उसके साथ घटित हुआ था, और अपनी व्यग्रता भी उसने बयान की। उसकी पत्नी उसके एक-एक तर्क और तथ्य सुनती रही और साथ-साथ वह लुई को धीरज देती रही कि विजयश्री निश्चित ही उसके साथ होगी और निस्सन्देह इस नये प्रयोग में उसे सफलता प्राप्त होगी। पत्नी की कोमल सान्त्वना के बावजूद भी पूरी रात लुई सो न सका। वह बिस्तरे पर अधीरतापूर्ण प्रतीक्षा करता रहा सुबह की। अन्त में सुबह हुई और लुई की अधीर-व्यग्र रात्रि का अन्त हुआ। लुई सीधा भागा अपनी प्रयोगशाला की ओर जहां उसका भविष्य और लियविग की मृत्यु उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। प्रयोगशाला में पहुंचने पर लुई ने अधीरतापूर्ण फ्लास्कों को ताप संचालित भट्ठी से बाहर निकाला और एक फ्लास्क खोलकर उसके घोल की एक बूंद अपने अणुवीक्षण यंत्र के दायरे में रख दी। क्षण दो क्षण लुई अणुवीक्षण यंत्र पर झुका हुआ देखता रहा और तब उसके मुंह से हर्षोल्लास के शब्द फूट पड़े, 'यहां हैं वे प्राणी कण—हजार-हजार दंडाकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणीकण—यीस्ट···अनगिनत यीस्ट—सभी लगभग नवजात हैं और साथ में कुछ पुराने प्राणीकण भी हैं जिन्हें मैंने कल फ्लास्क में रक्षित किया था प्रजनन के लिए।' इतना देख लेने पर एक बार लुई के मन में तीव्र आकांक्षा उठी कि वह अभी बाहर जाय और चीख-चीख-कर सारी दुनिया में यह बता दे कि लियबिग मूर्ख है—लियबिग एक मिथ्याबोध में जीवित है, किन्तु लुई बाहर गया नहीं, वरन् उसने अपने आवेश को काबू में किया और उन सभी फ्लास्कों के खाद्य घोलों का निरीक्षण किया। प्रत्येक फ्लास्क के निरीक्षण पर उसे लाख-लाख नवजात यीस्ट प्राणीकणों की प्राप्ति हुई। अपने इस निरीक्षण को उसने अपनी नोटबुक में नोट किया तदुपरान्त एक फ्लास्क से थोड़ा एक रिटार्ट में डालकर उसका निरीक्षण किया। निरीक्षण करने पर लुई को रिटार्ट में अलकोहल की बूदें प्राप्त हुईं। अलकोहल की इस उपलब्धि पर एक बार पुनः लुई धीरे-धीरे गुनगुनाया, 'लियबिग नितान्त गलत है—किण्वन के लिए अल्बुमिन एकदम आवश्यक नहीं है, शर्करा का किण्वन तो यीस्ट की वृद्धि से सम्पन्न होता है।' प्रयोग और परीक्षण के समापन पर लुई का मन भर आया, हर्ष के अतिरेक में उसकी पलकों में आंसू के कतरे भर गये और तब वह अपनी इन्हीं विजयी आंखों से अपने विजय का समाचार सुनाने अपनी प्रिया को लौट गया···जहां अबोध शिशु उसकी प्रतीक्षा करते-करते थककर सो गये थे और उसकी महान् आस्थावान पत्नी घर की देहरी पर बैठी हुई थी, प्रतीक्षा में।

वह पुराने प्रयोगों को सत्य का जामा पहनाने में लगा रहा

लुई प्रयोगशाला के दायरे से घर जरूर लौट आया, किन्तु उसका मन प्रयोगशाला की चहारदीवारी में ही भटकता रहा, उसकी आंखों में दंडाकार प्राणीकण ही नाचते रहे। तमाम रात उसके स्वप्नों में वे लाख-लाख दंडाकार प्राणीकण नर्तन करते रहे और भोर होते ही वह पुनः अपनी प्रयोगशाला में चला गया जहां हफ्तों वह अपने पुराने प्रयोग को निश्चित् सत्य का जामा पहनाने के लिए कार्य करता रहा। लुई को प्रत्येक बार यही परिणाम मिला कि यीस्ट द्वारा ही शर्करा की किण्वन प्रक्रिया सम्पन्न होती है तथा फल-रूप में अलकोहल का सृजन होता है। लुई को अपने प्रयोग में निस्सन्देह सफलता प्राप्त हो गयी किन्तु इसके बावजूद उसने अपने इस महत्त्वपूर्ण परिणामफल को घोषित नहीं किया। वह निरन्तर इन दंडाकार प्राणियों पर कार्य करता रहा, क्योंकि अब उसकी आकांक्षा इन दंडाकार प्राणीकणों का पूर्णरूपेण अध्ययन करने की बन गयी थी। अपने इस अध्ययन कार्य में वह प्रतिदिन घंटों अणुवीक्षण यन्त्र के माध्यम से इन दंडाकार प्राणीकणों का अध्ययन करता रहा और अपने इसी अध्ययन के पीछे लुई पाश्चर को अपना शरीर, स्वास्थ्य सभी कुछ खो देना पड़ा। यीस्ट-विषयक उसका यह अध्ययन कार्य जून से सितम्बर तक निरन्तर चलता रहा। लुई ने अपनी आत्मकथा में अपने इन दिनों के विषय में लिखा है: 'उस क्षण से अणुवीक्षण यन्त्र के दायरे से मैंने अपनी दृष्टि नहीं हटायी।' अध्ययन के इन्हीं दिनों में यीस्ट विषयक एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य का पता लगा लिया था कि यीस्ट कब तक, किस काल तक शर्करा को किण्वन द्वारा अलकोहल में परिवर्तित करते रह सकते हैं। इतना सब कुछ समाप्त कर लेने पर वह यूरोप की वैज्ञानिक दुनिया में एक बार पुनः चीख पड़ा, 'अपने यीस्ट (दंडाकार प्राणीकणों) को अधिक से अधिक शर्करा दो और ये यीस्ट कण तीन अथवा अधिक महीनों तक अलकोहल का उत्पादन न रुकने देंगे।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लुई के अन्दर का वैज्ञानिक मर गया

और इन्हीं दिनों उसके अन्दर का वैज्ञानिक पल भर को मृत्यु को प्राप्त हो गया, और उसकी जगह पर जन्म हुआ एक प्रदर्शनकारी का। लुई के इस नये प्रदर्शनकारी व्यक्तित्व ने सारी दुनिया को यह महान् तथ्य बतलाने का निश्चय किया कि फ्रांस की हजारों गैलन शैम्पेन और जरमनी की अथाह बीयर राशि का जो वस्तुतः लाखों गैलन होती है निर्माण मानवों द्वारा नहीं वरन् इन अणुवीक्षणीय लाख-लाख दंडाकार प्राणीकणों द्वारा सम्पन्न होता है। और अपने इसी विचार को लेकर उसने तमाम वैज्ञानिक लेख लिखे, तमाम व्याख्यान दिये और तर्कों और तमाम प्रमाणों को लियबिग के ऊपर फेंक दिये, जिनके बोझ से रसायन के मसीहा लियबिग की प्रतिभा की मृत्यु हो गयी।

व्याख्यान और लेखों के इन्हीं शोर-शराबे वाले दिनों में नदी साइन के तट पर, वैज्ञानिक लोकतन्त्र में जो पेरिस में बसा था, एक चक्रवात उठ खड़ा हुआ जिसकी भयंकर लहरों की गूंज में सिर्फ एक शब्द गूंज-गूंज उठने लगा और वह शब्द था लुई···लुई···लुई···। हुआ यह कि पेरिस की वैज्ञानिक अकादमी जिसने एक दिन लुई को अपना सदस्य घोषित करने में अपमान माना था, उसी अकादमी ने लुई को क्रिया-विज्ञान का सबसे बड़ा पुरस्कार दिया।

पुरस्कार घोषणा के दूसरे दिन रात्रि को उत्सव में लुई के प्रथम और पुराने गुरु ड्यूमा ने लुई का आदर किया और उसे युग की सबसे महान् प्रतिभा घोषित की। ये वही प्रोफेसर ड्यूमा थे, एक दिन किशोरावस्था में रसायन पर जिनका व्याख्यान सुनकर लुई ने रसायनशास्त्री बनने का निश्चय किया था। इस अवसर पर लुई हर्ष और गर्व के अतिरेक में डूब गया था और इसी अतिरेक में अपने प्रोफेसर ड्यूमा को धन्यवाद देते हुए उसने कहा था, 'महोदय···आपको अभी कुछ दिन पूर्व ही अकादमी ने दूसरे महत्त्वपूर्ण आविष्कारों पर पुरस्कृत किया था, किन्तु आज को इस शाम को हर जन यह महसूस कर रहा है कि आज आपसे अधिक गौरवपूर्ण और महान् शिक्षक कोई दूसरा नहीं है।'

लुई सम्मान और यश के सागर में डूबने लगा

लुई सम्मान और यश के सागर में डूबने लगा लेकिन लुई के प्रतिद्वन्दी लुई के इस यश और विजय से अन्दर ही अन्दर धधकने लगे। चारों ओर उसके शत्रुओं ने उसका प्रतिरोध शुरू कर दिया किन्तु वह एक-एक से संघर्ष करता गया और उसने तमाम शत्रुओं को एक दिन समाप्त कर दिया। (क्रमशः)

अन्तरिक्षयान से टकराने वाले उल्कापिंड

तीन अमरीकी अन्तरिक्षयानों के विशाल पंखों में हुए १,१०० से अधिक छोटे छिद्रों से वैज्ञानिकों को उन उल्कापिंडों के विषय में महत्त्वपूर्ण जानकारी मिली है जो पृथ्वी के समीप अन्तरिक्ष में उड़ते रहते हैं।

ये उल्कापिंड ऐसे टुकड़े हैं जो आकार में धूल के कणों से लेकर बड़े पत्थरों के समान होते हैं। इनकी संख्या, आकार तथा छेदन शक्ति भावी अन्तरिक्षयानों के डिजाइनों—विशेष रूप से प्रोपेलेंट टैंकों और यान चालकों की केबिनों आदि के लिए महत्त्वपूर्ण है जिनमें छिद्र हो जाने पर विनाशकारी परिणाम निकल सकते हैं।

भावी अन्तरिक्षयानों के बड़े आकार और कार्यक्रमों की भावी अवधि के कारण अन्तरिक्ष में उल्कापातों—जैसे खतरों का अधिक सामना करना पड़ेगा और इससे उनके सम्बन्ध में मिलने वाली जानकारी का और महत्त्व बढ़ जायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

इस बार अनेक सदस्यों ने यह पूछा है कि पढ़ना-लिखना मुश्किल होते हुए भी कैसे आसान लग सकता है। यह बात बहुत उलझी हुई है। कम से कम इसका समाधान तो कठिन है ही।

तुम स्कूल में जो कुछ पढ़ते हो, उसके विषय में क्या सोचते हो? सम्भव है, तुम कुछ न सोचते होगे और योंही पढ़ते जाते होगे, या यह ध्येय होगा कि तुम्हें परीक्षाएं पास करनी हैं, या यह भी सोचते होंगे कि यदि नहीं पढ़ोगे तो मार खाओगे।

वास्तव में तुम्हें सोचना कुछ और है। तुम व्यक्तियों के समाज में रहते हो। पहले तुम एक व्यक्ति हो फिर कुछ और। तुमसे कुछ लोग उम्र में तथा दरजे में बड़े हैं। तुम देखोगे कि उन पर कुछ जिम्मेदारियां हैं। कल जब तुम बड़े हो जाओगे, तो तुम्हें भी वे ही जिम्मेदारियां निभानी पड़ेंगी।

पढ़ने-लिखने का मतलब है सुसंस्कृत होना। सुसंस्कृत होने का अर्थ है जिम्मेदारियों को निभाने में समर्थवान बनना। तुम अगर एक सिरे से सोचना शुरू करो, तो काफी बातें साफ हो जायेंगी।

तुम पढ़ते-लिखते इसलिए हो कि तुम्हें सीखना है। यह सीखना कभी खत्म नहीं होता। सीखने की क्रिया से तुम भागना चाहो, तो यह सम्भव नहीं होगा। लेकिन यदि तुम्हारी तबीयत यह होती है कि सीखने से भाग जाओ, तो वास्तव में तुममें अनुशासन की कमी है।

जरा सोचो कि दुनिया में जितना कुछ ज्ञान-विज्ञान है, वह सब तुम जानना-सीखना चाहो और इस विषय पर गम्भीरता से सोचो, तो पाओगे कि यह जीवन बहुत थोड़ा है। फिर भी यदि तुम अनुशासन में बंधे रहे, तो बहुत कुछ सीख लोगे।

पर यह सीखना, पढ़ना-लिखना आसान कैसे लग सकता है? वास्तव में व्यक्ति अपनी रुचि का गुलाम होता है। वह जिस काम में दिलचस्पी लेता है, उसे कर डालता है। मान लो तुम जीव-विज्ञान पढ़ रहे हो। यदि इस विषय में तुम्हारी दिलस्पी नहीं है, तो तुम इसे बहुत कठिन पाओगे। कभी-कभी किसी विषय में हो सकता है तुम्हारी रुचि न पैदा होती हो, लेकिन यह सोचकर कि ज्ञान के प्रति तुममें रुचि है, और यह विषय जिसमें तुम्हारी रुचि नहीं है, ज्ञान का अक्षय भंडार है, तुम उसमें दिलचस्पी लेने लग सकते हो। पर सब कुछ करना तुम्हें ही है। सोचना भी तुम्हें ही है, पढ़ना-लिखना भी तुम्हें ही है।

इधर तुम विज्ञान-क्लब के स्तम्भों में कम ही रुचि लेते हो, पर एक सदस्या अपनी रुचि से वैज्ञानिक कहानी लिखने में समर्थ हो सकी।

कोई भी काम कठिन मत समझो। हर कठिन काम में अपनी रुचि पैदा करो। थोड़े दिनों में देखोगे कि तुम सब कुछ कर सकते हो।

सस्नेह तुम्हारी

कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ७९ के विजेता

प्रथम पुरस्कार

मनोहरलाल (१८८९८) वाराणसी।

द्वितीय पुरस्कार

सोमेश (१८८०२) कलकत्ता।

तृतीय पुरस्कार

रघुवीर (१८८६९) पटना।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ८०

नाम.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

महर्षि लालाधर
(स.सं. १८४२४)

विजयबहादुरसिंह
(स.सं. १८४३३)

महेशप्रसाद
(स.सं. १८४९७)

सन्तोषकुमारसिंह
(स.सं. १८५०२)

१२६११ गोविन्दनारायन (१६) मोरार, १२ वासुदेव (१६) पटना, १३ विनोदकुमार (१६) सिरोंज, १४ किशनचन्द (१६) बरेली, १५ महेशचन्द्र (१७) बदायूं, १६ सुरेन्द्रपालसिंह (१३) इटारसी, १७ राजीव (१६) लखनऊ, १८ राकेश (१४) लखनऊ, १९ अमरेन्द्र (१४) सूरजपुरा, २० इन्द्रजीत (१६) आगरा, २१ प्रतापबाबू (१७) मुरैना, २२ हरीशंकरसिंह (१६) आगरा, २३ सज्जनकुमार (१४) सरैयागंज, २४ जगदीशकुमार (१७) संगरूर, २५ महेन्द्रकुमार (१६) टीकमगढ़, २६ अविनाशचन्द्र (४०) नयी दिल्ली, २७ अजीतकुमार (१७) मुजफ्फरपुर, २८ जयप्रकाश (१८) रांची, २९ विनोदप्रसाद (२०) भागलपुर, ३० ज्ञानसिंह (११) लखीमपुर, ३१ ब्रजेशकुमार (१२) बालाघाट, ३२ प्रकाशनारायण (१७) कानपुर, ३३ पाडुंरंग एम. (१९) विदिशा, ३४ पुरुषोत्तमदास (१६) पटना, ३५ ईश्वरचन्द्र (१५) पडरोना, ३६ उषा (१४) कानपुर, ३७ सत्येन्द्रविष्णु (१२) कानपुर, ३८ मीरा (१३) कानपुर, ३९ आशा (१८) कानपुर, ४० महादेव (१४) इन्दौर, ४१ गोपालकृष्ण नागेन्द्रराव (१४) इन्दौर, ४२ अशोककुमार (१७) जयपुर, ४३ सुनीलकुमार (१८) जयपुर, ४४ माधुरबली (१७) हरदोई, ४५ रमेशकुमार (१६) टीकमगढ़, ४६ खेमचन्द (१६) मुरैना, ४७ सतीशचन्द्र (१६) सबलगढ़, ४८ सतीशचन्द्र (१७) आगरा, ४९ अमितकुमार (१६) मथुरा, ५० सत्यपाल (१९) सहारनपुर, ५१ सुरेन्द्रप्रताप (१६) मथुरा, ५२ पुष्पाकुमारी (१८) इन्दौर, ५३ रघुनन्दन (१५) गंगापुर, ५४ आनन्द ब्रह्मकुमार (१६) बाराणसी, ५५ टामस (१६) मुरादाबाद, ५६ अशोककुमार (१७) मंदसौर, ५७ देवदास (१७) रायपुर, ५८ सुधीरकुमार (१९) अहमदाबाद, ५९ योगेन्द्रप्रसाद (१४) मुजफ्फरपुर, ६० के. एस. अजमानी (२२) इन्दौर, ६१ हितनाथ (१६) शाहाबाद, ६२ स्वरामकुमार (१७) बालाघाट, ६३ शामलाल (१६) करनाल, ६४ चाननमल (१७) संगरिया, ६५ स्वप्नकुमार (१६) हजारीबाग, ६६ राघवेन्द्रसिंह (१८) दुर्ग, ६७ उमेशचन्द्र (१५) मुरादाबाद, ६८ चन्द्रप्रकाश (१८) हजारीबाग, ६९ सज्जनकुमार (१९) बिलासपुर, ७० रामकुमार (१३) सागर, ७१ अरविन्दकुमार (१२) सागर, ७२ सरोज (१५) सागर, ७३ सत्येन्द्रकुमार (१३) मुरादाबाद, ७४ अमरनाथ (१७) हिसार, ७५ राधाविनोद (१८) अल्मोड़ा, ७६ देवीप्रसाद (१५) छिन्दवाड़ा, ७७ ज्ञानचन्द्र (१८) उदयपुर, ७८ बुधमल (१७) मुरैना, ७९ अखिलकुमार (१४) रांची, ८० नरेन्द्रकुमार (१७) मुजफ्फरनगर, ८१ सरोज (१७) गोरखपुर, ८२ विन्देश्वरीप्रसाद (१८) मुडवारा, ८३ नन्दलाल (१९) कांचरापाड़ा, ८४ अशोककुमार (१७) कांचरापाड़ा, ८५ अरविन्दकुमार (१८) चितौड़गढ़, ८६ नंदकिशोर (१७) सुजानगढ़, ८७ हेमेन्द्रकुमार (१६) मुरैना, ८८ विनोदबिहारीलाल (१७) मैनपुरी, ८९ जयप्रकाश (१६) शाहपुरा, ९० विजयकुमार (१८) कलकत्ता, ९१ विजयकुमार (१६) पटना, ९२ राजेश्वरी (२०) गाजीपुर, ९३ श्यामसुन्दर (१९) सुजानगढ़, ९४ दीपककुमार (१८) जगदलपुर, ९५ मदनलाल (१५) सुजानगढ़, ९६ प्रद्युम्नकुमार (१७) बाराबंकी, ९७ मलयमारुति (१६) भागलपुर, ९८ विनोदकुमार (१६) मुजफ्फरपुर।

सन्तोषकुमार
(स.सं. १८५०५)

उमेशचन्द
(स.सं. १८५१२)

रामस्वरूपलाल
(स.सं. १८५७१)

सुरेशचन्द्र
(स.सं. १८५८६)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८१

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : ३१ जनवरी

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५३ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो—

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८१ के उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर ३१ जनवरी तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८१ के प्रश्न

१. यह कैसे मालूम किया जा सकता है कि चोट लगने के बाद जो रक्तस्राव हो रहा है, वह धमनी से हो रहा है या सिरा से ?

२. प्रेशर कुकर में खाना जल्दी क्यों बन जाता है ?

३. क्या अलकोहल में बर्फ का टुकड़ा डूब जाता है ? क्यों ?

४. गरमियों में आमतौर से घड़ियां सुस्त क्यों चलने लगती हैं ?

५. बालू पर चलना क्यों कठिन है ?

६. हीरा रात में क्यों चमकता है ?

७. अवशेष (fossil) किसे कहते हैं ?

८. सामान्य स्वास्थ्य के एक व्यक्ति में उसके वजन की तुलना में रक्त का प्रतिशत क्या होता है ?

९. हवा भरते-भरते साइकिल का पम्प गरम क्यों हो जाता है ?

१०. प्रायः फूलों का रंग चमकीला क्यों होता है ?

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७९ के प्रश्नों के उत्तर

१. कलकत्ता में।

२. पश्चिमी जरमनी में।

३. पेट के अन्दर पेप्सिन और हाइड्रोक्लोरिक एसिड की प्रक्रिया से।

४. अमरीका में।

५. पृथ्वी की ओर अत्यन्त तीव्रता से।

६. एक्स-किरणें हड्डियों को नहीं भेदतीं।

७. किल्सटन।

८. अमरीकी वैज्ञानिकों ने।

९. १९१४ में ब्रिटेन और फ्रांस के सहयोग से।

१०. जेटयान सभी हवाई अड्डों पर नहीं उतर सकते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

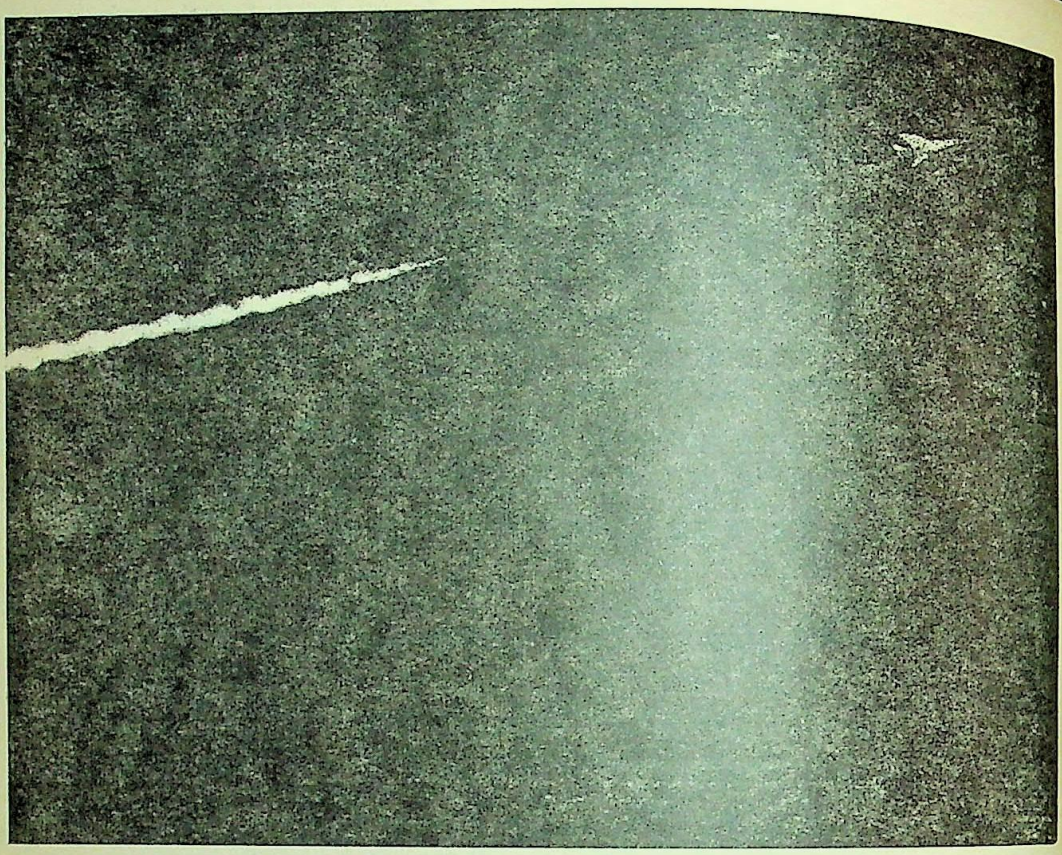

तुम्हारी कलम से

वह रहस्यमय जेटयान

अनीता सहगल (स. सं. १२७३९)

लोग बड़ी उत्सुकता से आकाश की ओर आंखें उठा लेते थे। रोज इसी समय एक जेटयान दक्षिण की ओर जाता था। वह आंखों से ओझल हो जाता था और आकाश में धुएं की एक लकीर बची रह जाती थी।

इस जेटयान के बारे में लोगों के मन में अलग-अलग विचार थे। कोई कहता कि यह मुसाफिरों को लेकर किसी पश्चिमी देश की ओर जा रहा होगा और कोई यह कि मुमकिन है, इतनी ऊंचाई पर दुश्मन नक्शे ले रहा हो। और अब तो यह हो गया था कि निश्चित समय पर लोग खुद ब खुद आकाश की ओर आंखें उठाकर जेटयान के आने की प्रतीक्षा करने लगते थे। जेटयान आता और चला जाता। धुएं की एक लकीर बची रहती।

और शायद लोगों को यह बात नहीं मालूम थी कि उनके मन में इस जेटयान के प्रति जितनी उत्सुकता थी, उससे कहीं ज्यादा उत्सुकता नाथूराम नामक एक व्यक्ति के मन में थी। पर वह किसी मकान की छत या किसी मैदान से इस जेटयान को नहीं देखा करता था। वह शहर से दूर, एक टीले पर खड़ा रहता और जेटयान को देखता रहता।

वास्तव में यह जेटयान अनोखा था। डाक्टर अब्दुल्ला रोगियों पर परीक्षण कर रहे थे। यह जेटयान एक किस्म का उड़ता हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्पताल था। इसमें दमा, तपेदिक, कैंसर और न जाने किस-किस बीमारी के रोगी थे। डाक्टर अब्दुल्ला का खयाल था कि गति और वायुमंडल के दबाव का किसी भी रोग की वृद्धि या उसकी रोकथाम पर असर पड़ता है। पहले नाथूराम उनकी योजनाओं में शामिल था। जब अपनी अरजी मंजूर हो जाने पर डाक्टर अब्दुल्ला ने इस जेटयान को खरीदा था, तो नाथूराम ही उसे उड़ाकर यहां तक लाया था, इसके अलावा वह अभी कुछ दिनों पहले तक इस जेटयान को उड़ाता था, लेकिन डाक्टर अब्दुल्ला ने उस पर यह शक किया कि शायद उनके परीक्षण को वह लोगों में अभी से ही फैला रहा है, क्योंकि जिन सिद्धान्तों पर डाक्टर अब्दुल्ला काम कर रहे थे, उनके एक अंश की अकस्मात् एक दूसरे वैज्ञानिक ने घोषणा कर दी थी। डाक्टर अब्दुल्ला का खयाल था कि इस तरह उनकी मेहनत बेकार हो जायेगी और नाम किसी दूसरे का होगा। यही कारण था कि उन्होंने नाथूराम को नौकरी से हटा दिया था।

लेकिन नाथूराम एक वफादार नौकर था और वह डाक्टर अब्दुल्ला की विवशता पहचानता था। फिर भी वह नौकरी से चुपके-से हट गया। लेकिन इस जेट के प्रति जिसे और लोग रहस्यमय समझते थे, उसके मन में मोह होना स्वाभाविक था।

नाथूराम का विश्वास था कि डाक्टर अब्दुल्ला की सफलता निश्चित है। गति और वायुचाप-सम्बन्धी जो प्रयोग वे कर रहे थे, उसमें नवीनता तो थी ही, साथ ही उनका आधार वैज्ञानिक भी था। किसी भी रोग में कोषों के विभाजन होने तथा बनने में गति का विशेष हाथ होता है। वायुमंडल के निश्चित स्तरों पर और निश्चित गति के अन्तर्गत कोषों पर प्रभाव अवश्य पड़ता है। यह एक ऐसा सिद्धान्त था जिसने उन्हें प्रयोग के लिए प्रोत्साहित किया था और अब वे कई देशों की मदद से इसे सम्पन्न कर रहे थे।

उन्होंने कुछ ही दिनों में देखा था कि विभिन्न रोगियों पर अलग-अलग प्रतिक्रियाएं होने लगी हैं। कैंसर का रोगी कुछ ठीक होने लगा है, पर तपेदिक के मरीज का रक्तचाप गिर गया है। वे रोज अपने प्रयोग में थोड़ा संशोधन करते जाते।

जब नाथूराम नौकरी से निकाला गया था, उस समय तक डाक्टर अब्दुल्ला को आधी सफलता मिल चुकी थी। नाथूराम एक ऐसा व्यक्ति था जिसे उन सिद्धान्तों की पूरी जानकारी थी जिन पर डाक्टर अब्दुल्ला प्रयोग कर रहे थे। वह समय-समय पर उन्हें सलाह भी दिया करता था, जिसे वे मान लेते थे।

यही नाथूराम को अफसोस था कि अब डाक्टर अब्दुल्ला को कौन सलाह दे पायेगा। कहीं ऐसा तो नहीं कि उसकी कुछ कीमती सलाहों के अभाव में डाक्टर अब्दुल्ला असफल रहें। पर तुरन्त ही वह सोचता कि उसे अपनी जानकारी का घमंड नहीं होना चाहिये और डाक्टर अब्दुल्ला की तुलना में वह एक मामूली आदमी है—निहायत साधारण पायलट, जिसका काम है जहाज उड़ाना। उसने इस बात पर और अधिक सोचना मुनासिब नहीं समझा कि डाक्टर अब्दुल्ला सफल रहेंगे या असफल, पर वह यह जरूर सोचता रहा कि क्या डाक्टर अब्दुल्ला के मन में यह बात गहराई तक पहुंची हुई है कि उसने ही उनके कुछ सिद्धान्तों को उस वैज्ञानिक तक पहुंचाया है। क्या यह मुमकिन नहीं है कि एक ही समय में दो आदमी एक ही बात पर सोचें और एक ही निष्कर्ष पर पहुंचे?

और दिन इसी तरह बीतते रहे। नाथूराम के मन में इस जेटयान के प्रति विशेष उत्सुकता नहीं थी। लेकिन दूसरे लोग जेटयान को कम या अधिक रहस्यपूर्ण समझने लगे थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक अजीब जेटयान जो चला जाता था और धुएं की लकीर छोड़ जाता था।

हमेशा की तरह उस शाम भी नाथूराम ऊंचे टीले पर खड़ा होकर जेटयान के आने की प्रतीक्षा करने लगा। नियत समय पर जेटयान आया। नाथूराम की आंखें उसे आकाश के फैलाव में तलाशने लगीं। वह दीखा। लेकिन अचानक ही जेटयान की ध्वनि समाप्त हो गयी। धुएं की लकीर टूट गयी। नाथूराम के मन में एक आशंका भर गयी। वह सोचने लगा, शायद कुछ अनर्थ हो सकता है।

तभी जेटयान चक्कर खाने लगा। वह ऊंचाई से तेजी में नीचे आ रहा था। और फिर देखते ही देखते वह पूर्व में एक ढलान की ओर गिर गया। उसके गिरते ही जोरों का धमाका हुआ और आग लग गयी। वह जगह मुश्किल से वहां से पांच सौ गज की दूरी पर थी जहां नाथूराम खड़ा था। वह जलते हुए जेटयान के पास दौड़ा चला गया। सब कुछ अस्तव्यस्त, जलता हुआ! लाशें ही लाशें! रोगियों की लाशें! और एक तरफ डाक्टर अब्दुल्ला की लाश! लपटों के प्रकाश में उसने देखा, पास ही एक डायरी पड़ी है। डाक्टर अब्दुल्ला की जलती लाश के पास से उसने बढ़कर डायरी उठा ली। तभी उसे फायर ब्रिगेड की गाड़ियों की घंटी सुनायी पड़ी। वह अंधेरे में सरक आया।

करीब डेढ़ घंटे के बाद नाथूराम शहर के एक खूबसूरत रेस्तरां में मौजूद था। उसने डायरी में आज की तारीख देखी। पृष्ठ सादा था। उसने पृष्ठ पलटा। पिछली तारीख वाले पृष्ठ पर लिखा था: 'मैं अपने प्रयोग में पूरी तरह सफल हो चुका हूं। कई रोगियों का इलाज कर चुका हूं। लेकिन नाथूराम की जुदाई अखरती है। वह वफादार था। मैं उसे मना लूंगा।'

नाथूराम की आंखों में पानी आ गया। ●

यहां से काटिए

विज्ञान क्लब सदस्यता, विज्ञान-लोक

कृष्णा दीदी,

जन्म-दिन _____ आयु _____

नाम _____

घर का पता _____

_____

_____

स्कूल का नाम _____

शिक्षा _____ रुचि _____

यहां से काटिए

यहां से काटिए

यहां से काटिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डैडी आप क्या लिख रहे हैं ?

चैक है ,बेटा ।

चैक क्या होता है ?

यह बैंक के नाम आदेश है कि अमुख व्यक्ति को रुपया दे दो । मुझे कुछ किताबें खरीदनी हैं । दुकानदार को रुपये की बजाय चैक ही भेज दूंगा । वह इसे अपनी बैंक में जमा करा देगा । उसकी बैंक इसे

Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Price : 75 paise October 1966 Regd. No. L 1410

नीहारिका
कहानी मासिक

दीखा। लेकिन अचानक ही जेटयान की ध्वनि समाप्त हो गयी। धुएं की लकीर टूट गयी। नाथूराम के मन में एक आशंका भर गयी। वह सोचने लगा, शायद कुछ अनर्थ हो सकता है।

तभी जेटयान चक्कर खाने लगा। वह ऊंचाई से तेजी में नीचे आ रहा था। और फिर देखते ही देखते वह पूर्व में एक ढलान की ओर गिर गया। उसके गिरते ही जोरों का धमाका हुआ और आग लग गयी। वह जगह मुश्किल से वहां से पांच सौ गज की दूरी पर थी जहां नाथूराम खड़ा था। वह जलते ब्रिगेड की गाड़ियों की घंटी सुनायी पड़ी। वह अंधेरे में सरक आया।

करीब डेढ़ घंटे के बाद नाथूराम शहर के एक खूबसूरत रेस्तरां में मौजूद था। उसने डायरी में आज की तारीख देखी। पृष्ठ सादा था। उसने पृष्ठ पलटा। पिछली तारीख वाले पृष्ठ पर लिखा था : 'मैं अपने प्रयोग में पूरी तरह सफल हो चुका हूं। कई रोगियों का इलाज कर चुका हूं। लेकिन नाथूराम की जुदाई अखरती है। वह वफादार था। मैं उसे मना लूंगा।'

नाथूराम की आंखों में पानी आ गया। ●

यहां से काटिए

विज्ञान क्लब सदस्यता, विज्ञान–लोक

कृष्णा दीदी,

जन्म-दिन _____ आयु _____

नाम _____

घर का पता _____

_____

_____

स्कूल का नाम _____

शिक्षा _____ रुचि _____

यहां से काटिए

यहां से काटिए

यहां से काटिए

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

पक्षियों में ध्वनि-संकेत ३
—नित्यानन्द पाठक

जीवन ७
—डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

नोबल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिक १३
—ब्रह्मस्वरूप शर्मा

चन्द्रयान द्वारा यात्रा १९
—वाल्टर फ्रोहलिच

भक्षणीय प्रकार के क्षत्रक की नयी कृषि २३
—रतनकुमार टण्डन

बिच्छू २७
—सुरजीत

धान ३३
—नरेन्द्र छावड़ा

नेत्र की नियन्त्रण-विधि ३८
—मौजमसिंह राजपूत

एक महान सम्भावना की स्थापना ४३
—डाक्टर हर्ष प्रियदर्शी

प्राणों का मोह ४६
—रामनाथ थडानी

थोरियम चक्र ४९
—सन्तोषकुमार

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां १८

विज्ञान-क्लब ५३

इनाम लो ५५

तुम्हारी कलम से ५६

अपनी बात

यह मानना उचित नहीं है कि विज्ञान से परे कुछ नहीं है और सब कुछ विज्ञान तक ही सीमित है। वास्तव में एक यथार्थवादी दृष्टिकोण वह नहीं है जो सामान्यत: प्रत्यक्षीकरण तक सीमित होता है। यथार्थान्वेषी को सिद्धान्त रूप में विविध प्रयोगों को स्वीकृति देनी चाहिये, जिससे सीमा से परे का ज्ञान भी प्राप्त हो सके।

आज विज्ञान शब्द का प्रयोग वस्तुत: रूढ़िगत सन्दर्भ में होता है। जो कुछ अनुभूतिगत या आत्मानुभूतिगत है, वह विज्ञान के क्षेत्र में नहीं आता, किन्तु यह सत्य है कि विज्ञान का क्षेत्र निर्धारित अभी नहीं हो पाया है।

यह विवेक का युग है। विज्ञान निश्चय ही आज एक उपयुक्त परिभाषा की अपेक्षा करता है। मानव जाति को उस रास्ते पर बढ़ना है जिसका महत्व सार्वभौमिक है। विज्ञान की उपयोगिता सत्य के अन्वेषण से सम्बन्धित उसके प्रयत्नों में है। राष्ट्रपति डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् विश्वप्रसिद्ध दार्शनिक हैं और उन कतिपय लोगों में से हैं जिन्होंने विज्ञान का गहन अध्ययन किया है और इसे मानवता के लिए कल्याणकारी बनाने का प्रयत्न किया है। 'जीवन' में पाठक डाक्टर राधाकृष्णन् की विलक्षण शैली और व्याख्यात्मक दृष्टिकोण से परिचय तो प्राप्त करेंगे ही, एक विशेष निष्कर्ष से भी अवगत होंगे जो विज्ञान की उपयुक्त परिभाषा उपलब्ध करता है।

वर्ष ७ अंक १०

एक प्रति : ७५ पैसे

सम्पादक : शंकर मेहरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पक्षियों में ध्वनि-संकेत

नित्यानन्द पाठक

पक्षी एक-दूसरे के संसर्ग में रहते हैं, हालांकि अपवादस्वरूप कुछ पक्षी ऐसे भी हैं जो एकान्त जीवन जीते हैं। ऐसे पक्षियों में किंग फिशर, कक्कू उल्लेखनीय हैं। किन्तु अधिकांश जातियां सामाजिक होती हैं। सामाजिकता का मुख्य आधार है भाषा और अभिव्यक्ति। तो पक्षी साथ-साथ तभी काम कर सकते हैं जब वे अपने भाव एक-दूसरे को समझा पाने में समर्थ हों।

पक्षी एक-दूसरे को अपने भावों से कई विधियों से अवगत कराते हैं—बोलकर, चहककर और अपने पंखों को फड़फड़ाकर। ये ऐसी विधियां हैं जिनकी सहायता से पक्षी एक-दूसरे से बातें करते हैं।

शताब्दियों से वैज्ञानिक तथा सामान्यजन पक्षियों की भाषा समझने का यत्न करते रहे हैं। आज इंग्लैंड, अमरीका तथा जरमनी में कुछ संस्थान पक्षियों की भाषा के अध्ययन में लगे हुए हैं। किन्तु यह एक तथ्य है कि कोई भी पक्षी-विशेषज्ञ पक्षियों की भाषा को पूरी तरह समझने का दावा नहीं कर सकता। वास्तव में पक्षियों की भाषा अनोखी होती है। मनुष्य की भाषा और पक्षियों की भाषा में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अन्तर यह होता है कि मनुष्य की भाषा वैज्ञानिक आधार लिये हुए होती है, और उसे सीखा जा सकता है; जबकि पक्षियों की भाषा का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं होता, और उसे सीखा नहीं जा सकता। पक्षी जो कुछ बोलते हैं वे शब्द नहीं होते, उन्हें हम एक प्रकार से आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति कह सकते हैं।

पक्षी गीत क्यों गाते हैं ?

पहले तो हमें यह जानना है कि पक्षी गीत क्यों गाते हैं और उनके जीवन में इसका क्या महत्त्व है ? वास्तव में पक्षियों के गीत में तथा दूसरे को पुकारने की ध्वनि में अन्तर होता है। प्रजनन-काल में केवल नर ही गाता है। वह प्राय: एक ही ध्वनि विशेष अन्तर पर करता है जो गीत की तरह लगती है। कुछ पक्षी ध्वनि अपने पंखों तथा चोंच को रगड़कर करते हैं, और कुछ पक्षी कंठ से।

कुछ पक्षी बहुत मधुर गीत गाते हैं। उनका स्वर इतना मधुर होता है कि लगता है, हम नैसर्गिक संगीत सुन रहे हैं। थ्रश परिवार के पक्षी गाने वाले पक्षियों में विशेष उल्लेखनीय हैं। पक्षियों में यह भी पाया गया है कि वे गाते समय खेलते हैं, या अपना घोंसला बनाते हैं। प्रजनन-काल में जब दूसरा नर पास ही कहीं होता है, तो जो नर गाता है, वह अपना गीत और प्रभावशाली कर देता है।

अक्सर हम पाते हैं कि अनेक पक्षी जो देखने में एक-दूसरे से भिन्न लगते हैं, प्राय: एक ही तरह के गीत गाते हैं। और यह भी तथ्य है कि पक्षी जो देखने में प्राय: एक जैसे होते हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पक्षी क्यों गाते हैं ? क्या हम उनकी भाषा समझ सकते हैं ?

अलग-अलग प्रकार के गीत गाते हैं।

पक्षी-विशेषज्ञों का मत है कि हलके रंग के पक्षी अच्छे गीत गाने वाले होते हैं। यह अनुमान है कि जो पक्षी चमकीले रंगों के होते हैं, उन्हें अपनी अभिव्यक्ति में विशेष कठिनाई नहीं होती और वे इसके लिए माध्यम के रूप में अपने रंगों का प्रयोग करते हैं; पर जो पक्षी फीके रंगों के होते हैं उन्हें अपनी अभिव्यक्ति के लिए कंठ का सहारा लेना पड़ता है। यह एक सामान्य धारणा है, और इसे कोई ठोस सिद्धान्त नहीं कहा जा सकता। पक्षी-विशेषज्ञों ने अपने निरीक्षणों में इसे परिलक्षित किया है।

हलके, फीके रंगों वाले पक्षी आसमान में काफी ऊंचाई तक उड़ जाते हैं और फिर गाने लगते हैं।

एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न

क्या पक्षी आनुवंशिक रूप से गायक होते हैं, या वे जन्म लेने के बाद गाना सीखते हैं ? यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। कुछ प्रयोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सम्बन्ध में किये गये हैं। एक बार एक पक्षी को जैसे ही वह अंडे में से निकला, दूसरे परिवेश में रख दिया गया। उसे अपनी जाति के पक्षियों का स्वर सुनने का अवसर नहीं मिला। लेकिन बाद में, जब वह बड़ा हुआ तो पाया गया कि वह भी उसी तरह गा सकता है जिस तरह उसकी जाति के और पक्षी गाते हैं। निस्सन्देह यह आश्चर्यपूर्ण है कि पक्षी वंशगत प्रभावों के कारण अपना स्वर ग्रहण कर लेते हैं। लेकिन कुछ ऐसे पक्षी भी हैं जो यदि ध्वनि-रहित परिवेश में प्रारम्भ से ही पाले जाते हैं, तो ऐसी स्थिति में वे गाना नहीं गा सकते। इस तरह के पक्षियों में फ्लाई-कैचर विशेष रूप से उल्लेख्य है।

नाइटेंगल के बच्चे यद्यपि शुरू से ही गाने वाले होते हैं, पर वे व्यवस्थित रूप से गाना अपने मां-बाप से सीखते हैं। शिशुओं के गीत में मिठास नहीं होती।

कुछ पक्षियों का स्वर इतना मधुर होता है कि लगता है, हम नैसर्गिक संगीत सुन रहे हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पक्षी विशेषज्ञ टेप-रिकार्डर की सहायता से पक्षियों के गीत का अध्ययन करते हैं। टेप पर अंकित ध्वनियों से विभिन्न पक्षियों की बोली समझने तथा उनकी भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करने में सहायता मिलती है। पिछले दस-पन्द्रह वर्षों में इस दिशा में अनेक अनुसन्धान हुए हैं और पक्षियों की भाषा तथा उनकी अभिव्यक्ति के साधनों के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों को विस्तृत जानकारी प्राप्त हुई है।

घुम्मकड़ प्रकृति के पक्षी आपस में सम्पर्क स्थापित करने के लिए एक-दूसरे ही प्रकार की ध्वनि करते हैं। रात में जो इनकी ध्वनियां सुनी जाती हैं, और विशेष रूप से कम आवृत्ति की, वे पक्षी-विशेषज्ञों के लिए एक पहेली हैं। रात में ये पक्षी ध्वनि द्वारा अपनी जाति के अन्य पक्षियों को अपनी स्थिति का संकेत देते हैं।

भोजन के सम्बन्ध में निश्चित संकेत

भोजन के सम्बन्ध में प्रायः सभी पक्षियों के निश्चित संकेत होते हैं। शिशु पक्षी जब भूखे होते हैं, तो वे ध्वनि द्वारा संकेत करके भोजन मांगते हैं। हेरिंग गल्ल नामक पक्षी यदि थोड़ा-सा भोजन पाता है, तो चुपके से हजम कर जाता है, पर यदि उसे अकस्मात काफी भोजन मिल जाता है, तो वह और पक्षियों को भी आवाज देता है। फल खाने वाले अधिकांश पक्षी जब वृक्ष पर फल देखते हैं, तो आवाज देकर अपनी जाति के अन्य पक्षियों को भी बुला लेते हैं। भोजन के मामले में प्रायः पक्षियों में सहयोग की भावना का आभास मिलता है। लेकिन जहां भोजन की थोड़ी मात्रा होती है और पक्षियों की संख्या अधिक होती है, वहां पक्षी आपसी सहयोग की बात भुला देते हैं, और जल्दी-जल्दी जो मिलता है हजम करते जाते हैं; कभी-कभी ये दूसरे पक्षियों से उलझ भी जाते हैं।

पक्षी खतरे में पड़ जाने पर भी ध्वनि करते हैं। प्रायः यह देखा गया है कि बाज-जैसे अन्य शिकारी पक्षियों को देखकर कुछ पक्षी भयानक ध्वनि करते हैं। इनकी ध्वनि भिन्न-भिन्न शिकारियों के लिए भिन्न-भिन्न होती है।

कुछ पक्षी के नर-मादा देखने में एक तरह के होते हैं। आपसी पहचान के लिए ये विशेष प्रकार की ध्वनि करते हैं। कुछ पक्षी जब आपस में मिलते हैं, तो भी ध्वनि करते हैं।

पक्षियों में सीखने की प्रवृत्ति नहीं के बराबर होती है। तोता अपवाद है।

गायिका कोयल

कोयल वह भारतीय पक्षी है जिसे गाने का बहुत शौक है। वह बड़ी उन्मुक्तता से गाती है। फारस की बुलबुल की तरह वह दिन-रात गाती है। वसन्त के आरम्भ में जब आम के वृक्ष बौरों से लद जाते हैं तो मंजरी, कोंपलें और फल का स्वाद लेती हुई ऐसी तान छेड़ती है कि श्रोता मन्त्रमुग्ध हो जाता है। यह डाल-डाल पर नाचती है और फिर गाने में तल्लीन हो जाती है।

वसन्त के बाद गरमियों में भी वह गाती रहती है। प्रायः साल में चार महीने से अधिक वह चुप नहीं रहती। यह जाड़ों में दक्षिण की ओर चली जाती है, पर कुछ कोयलें जाड़े में भी ठंडे क्षेत्रों में बनी रहती हैं। यह अवश्य है कि कोयल अधिक ठंडे क्षेत्रों में रहना पसन्द नहीं करती। यही कारण है कि यह पहाड़ों की ओर नहीं जाती है।

केवल उत्तर-पश्चिमी सीमान्त को छोड़कर यह भारत के सभी राज्यों में पायी जाती है। चीन में भी कोयल मिलती है। यह प्रायः छोटे-छोटे फलों को भोजन के रूप में ग्रहण करती है। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि यह पूरी तरह शाकाहारी है।

कोयल के नर और मादा के रूप में काफी अन्तर होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सम्भावित व्याख्या: एक दृष्टिकोण

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

वैज्ञानिक अनुसन्धान के विषय में सर्वसाधारण जो सोचते हैं, उससे अधिक वह आत्मानुभूतिगत है। हेनरी पायनकेयर की गणित-सम्बन्धी कल्पना अवश्य एक सन्दर्भित समस्या है। यह अवश्य रचनात्मक है। हम तर्कों के आधार पर प्रमाण देते हैं, किन्तु अनुसन्धान आत्मानुभूति द्वारा करते हैं। इस प्रसंग में हम एक एकात्म क्रिया-हीनता पाते हैं। माइकल फैराडे असम्भावित अनुसन्धान के एक और उदाहरण हैं। सम्पूर्ण व्यक्तित्व इसमें संलग्न है। जब दार्शनिक अज्ञेय विश्लेषण में लग जाते हैं, तो उनका रचनात्मक गुण उनसे पृथक् रह जाता है।

राधाकृष्णन् का विश्वास है कि आधुनिक विज्ञान अमूर्त विचारों तथा आंकड़ों पर बल देता है। एडिंगटन और जीन्स की धारणा के अनुसार पदार्थ एक प्रत्यय में परिवर्तित हो सकता है। सापेक्षता तथा क्वांटम यान्त्रिकी के सन्दर्भ में यह (पदार्थ) घटनाओं (क्रियाओं) का समूह है जिनका स्वभाव और अन्तः शक्ति होती है। पदार्थ की परम्परागत व्याख्या अब व्यावहारिक नहीं है। इसमें (नवीन व्याख्या में) संसार की वैदिक धर्म की व्याख्या का आभास है। सभी अस्तित्वमय हैं। एक अन्य रूप में राधाकृष्णन् तथ्यस्वरूप मानते हैं कि विज्ञान आदर्शवाद का समर्थन करता है। जो कुछ हम जानते हैं, वह वस्तुओं का हमारे भीतर पड़ने वाला प्रभाव होता है; सब कुछ अनुभव है और असम्भावित अनुभव। यह एक आदर्शवादी टिप्पणी है, और एक सर्वथा नवीन वैज्ञानिक आदर्शवाद की भूमिका है।

राधाकृष्णन् की यह प्रबल धारणा है कि विज्ञान का विकास बौद्धिक स्वतन्त्रता ही की स्थितियों में हो सकता है। किसी सभ्यता के अन्तर्गत मानव की भलाई के अर्थ में प्रयोजित वैज्ञानिक उपलब्धियां निर्बाध अन्वेषण के लिए सैद्धान्तिक अनुमति पर निर्भर करती हैं। ऐसी स्वतन्त्रता समाज के आर्थिक और राजनीतिक स्वरूप ही से प्राप्त नहीं होती। यह मानव के अस्तित्व के अन्तरतम तथा उसकी धार्मिक मान्यता से प्राप्त होती है। बौद्धिक स्वतन्त्रता विज्ञान के लिए महत्त्वपूर्ण है। इसका उद्भव मनुष्य के अस्तित्व के अर्थ तथा प्रयोजन से होता है। मनुष्य के भाग्य के सम्बन्ध में जो विचार निर्धारित किये जाते हैं उनके आधार पर एक सार्वभौम परियोजना में उसकी स्थिति ज्ञात होती है।

प्राचीन काल में वैज्ञानिकों को वस्तुपरक चिन्तन तथा नियन्त्रित प्रयोगों के विषय में बहुत कुछ सीखना पड़ता था, क्योंकि विज्ञान की विधियां धीरे-धीरे स्पष्ट रूप में परिभाषित होती थीं। लेकिन उन्होंने इस विश्वास के साथ कदम बढ़ाये कि प्रकृति में उनकी जिज्ञासा ऐसे ज्ञान को प्रत्यक्ष नहीं करेगी जो उनके द्वारा दृढ़ता से मान्य धार्मिक विश्वासों के विपरीत होगा। यह विश्वास कि प्रकृति एकात्म है, कि ब्रह्माण्ड एक नियम के अन्तर्गत क्रियारत है—इस धार्मिक ज्ञान के अन्तर्गत एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तार्किक सम्भावना है कि सार्वत्रिक सत्ता वाला ईश्वर अस्तित्वगत है। राधाकृष्णन् इस वैज्ञानिक सम्भावना का समर्थन करते हैं कि बिना कारण के कार्य नहीं होते, और इस पर बल देते हैं कि यह धार्मिक विश्वास—विश्व उद्देश्यपूर्ण तथा नियोजित है—स्वाभाविक है। यह धारणा, ब्रह्माण्ड इतना रहस्यपूर्ण नहीं है कि वह बिना कष्टसाध्य अध्ययन के समझा न जा सके, इस विश्वास का परिणाम है कि मनुष्य की रचना एक सार्वभौमिक परियोजना में भूमिका निभाने के लिए हुई थी।

पिछले पैंतीस वर्षों से भारतरत्न डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् का प्रभाव निरन्तर बढ़ रहा है। आज दर्शन, धर्म तथा विज्ञान पर उनकी रचनाएं विश्व के कोने-कोने में पढ़ी जाती हैं।

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् (मई १३, १९६२ से भारत के राष्ट्रपति) का जन्म ५ सितम्बर १८८८ को तिरुत्तनी में हुआ था। मद्रास क्रिश्चियन कालेज में शिक्षा हुई; प्रायः बीस वर्षों तक भारत तथा इंग्लैण्ड के विभिन्न विश्वविद्यालयों में दर्शन के व्याख्याता रहे। १९४६ में इन्होंने यूनेस्को में भारत का प्रतिनिधित्व किया, १९४९ में इस संस्था के चैयरमैन बने। उसी वर्ष रूस में स्वाधीन भारत के प्रथम राजदूत के पद पर इनका चुनाव हुआ।

१९५२ में ये भारत के उपराष्ट्रपति बने। राष्ट्रपति का पद ग्रहण करने तक ये उपराष्ट्रपति रहे।

दार्शनिक तथा राजमर्मज्ञ डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् दर्शन पर अनेक उच्चकोटि के ग्रन्थों के रचयिता हैं जिनमें 'ऐन आइडियलिस्ट वियू आव लाइफ', 'इस्टर्न रेलिजन्स एण्ड वेस्टर्न थाट', 'इंडियन फिलासफी' और 'द हिन्दू वियू आव लाइफ' प्रमुख हैं।

हाब्स और लाइबनिट्ज एक सीमित रूप में प्रशासनिक क्रिया-कलापों से सम्बद्ध रहे हैं। डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् एक प्रशासन के प्रमुख के रूप में प्रथम दार्शनिक हैं। इनका मत है कि पूर्णता की ओर जाने वाला मार्ग एक ढलान की तरह है, न कि सीढ़ियों की भांति। इन्होंने देश के लिए इस मार्ग का समर्थन किया है। इस समय ये शिखर पर हैं। इनके मतानुसार दर्शन सैद्धान्तिक संरचना से कहीं अधिक अन्तर्दृष्टियों का प्रदर्शन है। राष्ट्रपति के रूप में डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् की अन्तर्दृष्टि एक दार्शनिक तथा राजमर्मज्ञ की है।

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् की दर्शन-सम्बन्धी व्याख्याएं एक विशेष परम्परा को सम्मुख करती हैं जिसे हम, नयी पीढ़ी के लोग, वैज्ञानिक आदर्शवाद तथा एक विशिष्ट जीवन-धारा पर टिप्पणी कहते हैं। इस जीवन-धारा में ये बहुत कुछ शोषित कर चुके हैं, और यहां विज्ञान को स्थान प्राप्त है। मेरे-जैसे और लोग जो इनके निकट सम्पर्क में हैं, अच्छी तरह जानते हैं कि एक पूर्ण व्यक्तित्व सद् की ओर उन्मुख है, और वह मानव जाति के मूल्यांकन के लिए सतत संलग्न है।

प्रस्तुत लेख में पाठक पायेंगे कि डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् जीवन के सार्वत्रिक और उपयुक्त मूल्यांकन के लिए प्रभावशाली रूप में प्रयत्नशील हैं।

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् सीमितता से व्यापकता, लघु से महत् और सीमाबद्धता से सीमाहीनता की ओर मानव को अग्रसर करने वाली प्रवृत्ति के समर्थक हैं। व्यक्ति की चेतना उस महत् चेतना का एक अंश है जिसमें सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड, या जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में समाहित है। 'जीवन के अनुभव आग्रही और अविभाज्य इकाई की अभिव्यक्तियां हैं।'

—सूर्यदेव पाण्डेय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पदार्थ के ही सन्दर्भ में है कि जीवन प्रकाश के लिए व्यग्र होता है। जैविक विज्ञान (biological sciences) एक-कोषीय जीव से स्तनपायियों तक की क्रियाओं का अध्ययन करते हैं। यद्यपि ब्रह्माण्ड के अन्य भागों में भी जीवन की भांति कुछ हो सकता है, जीव-विज्ञानवेत्ता (मुख्यतः) पृथ्वी की सतह, समुद्र तथा वायुमण्डल में जीवन का अध्ययन करते हैं। यद्यपि उच्च श्रेणी के जीव चेतना के स्वरूप का प्रदर्शन करते हैं, किन्तु जैविक विज्ञान इससे सम्बन्धित नहीं होते।

जीवित पदार्थ के व्यवहार में कुछ ऐसा विशेष होता है जो जड़ में नहीं ढूंढ़ा जा सकता। आत्मीकरण, श्वसन, पुनर्जनन, विकास तथा उत्थान की क्रियाएं प्राकृत-रासायनिक (physico-chemical) प्रक्रियाओं से भिन्न हैं। जीवित पदार्थ प्रत्येक परिवर्तन में अपनी विशेष संरचना तथा क्रियाओं को वर्तमान रखता है। आकार की स्थिरता जीवित पदार्थ में उसकी आन्तरिक क्रियाओं द्वारा स्थापित रहती है, न कि वातावरण के परिवर्तन के विपरीत अवरोध द्वारा। उदाहरणस्वरूप श्वसन की क्रिया में जो विधियां अत्यन्त नियमितता से रक्त में आक्सीजन तथा फेफड़ों में कार्बन डाइआक्साइड का दबाव नियन्त्रित करती हैं, वे एक सम्पूर्ण जीवन में सन्तुलन बनाये रखती हैं। सम्पूर्णता का स्वप्न, वस्तु का ज्ञान ही जीवन के विस्तार में एक क्रियाशील प्रभाव है जो कार्यरत है। जीवन गतिशील सन्तुलन है जो स्वयं को स्थिर रखता है। जन्तु (जीवित पदार्थ) के विभिन्न अंग किसी प्राकृत (physical) पदार्थ की तुलना में न्यून रूप से स्वतन्त्र होते हैं। एक भौतिक संरचना से किसी अंग को पृथक् कर देने पर उसके गुणों में विशेष आवश्यक परिवर्तन नहीं होते, जबकि जीवित पदार्थ में स्वरूप संरचना और निर्माता तत्त्व एक-दूसरे पर निर्भर होते हैं। जीवित पदार्थ पूर्ण है, और वह वे सब कार्य करने में समर्थ है जो एक परमाण्विक संस्थान कभी नहीं कर सकता। जीवित पदार्थ अपने अनुभवों के परिणाम सुरक्षित रखते हैं, और इस तरह वे एक आदत का निर्माण करते हैं। बाह्य परिस्थितियों के प्रति वे जो परिवर्तन प्रदर्शित करते हैं, वह उनमें निर्मित होकर सुरक्षित रहता है।

परमाणु न अपने को सुधार सकता है न पुनर्जनन कर सकता है। जीवित पदार्थ अपने को वातावरण के अनुकूल कर लेता है। वह वातावरण के अनुसार क्रिया ही नहीं करता वरन उसका उत्तर भी देता है। जैसे ही जीवित पदार्थ क्षतिग्रस्त होता है, स्वास्थ्यकारी क्रियाएं उसमें होने लगती हैं। पौधा जहां से काट दिया जाता है, कोंपल का प्रस्फुटन वहां से होता है। विकास की क्रिया के अन्तर्गत जो परिवर्तन होते हैं, वे विशेष प्रकार के होते हैं। जीवित पदार्थ के एक भाग में पुनर्जनन की क्रिया प्रारम्भ होती है। अत्यन्त जटिल प्राकृत-रासायनिक संरचना का आनुवंशिक सम्प्रेषण भी होता है। एक रूप में परिवेश जीवित पदार्थ के लिए नवीन (बाहरी) नहीं होता, वह उसके जीवन में समाहित हो जाता है। जीवित पदार्थ अपना पोषण परिवेश के तत्त्वों को ग्रहण करके करता है। ये दो (परिवेश और जीवित पदार्थ) एक-दूसरे में इस तरह समाहित हैं कि इन्हें एक बृहत् पूर्णता की अभिव्यक्ति मान सकते हैं। ये दोनों विशद् स्थितियों में एक-दूसरे से मिले हुए हैं। जीवित पदार्थों में एक विशेष अन्तःनिर्देश होता है जो उनका विकास करता है, क्षतिपूर्ति करता है, और प्रजनन करता है तथा बाह्य परिवेश को अनुकूल करता है। परमाणु के सम्बन्ध में जो कुछ हमारा ज्ञान है वह जीवन-अधीन वर्तमानता की व्याख्या करने में असमर्थ है।

जीवित तथा निर्जीव में प्रमुख अन्तर के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

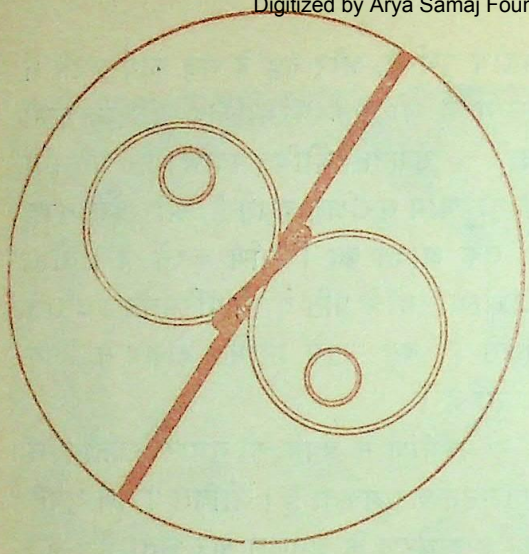

(क)

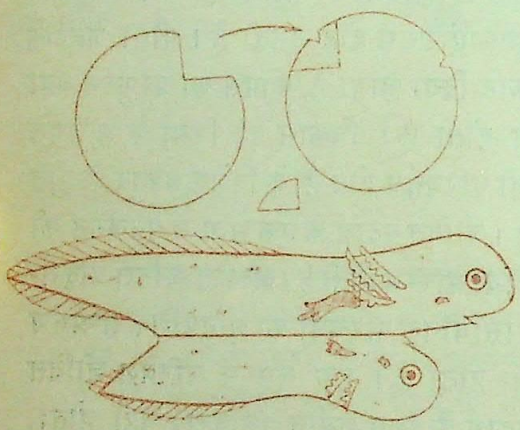

(ख)

प्रायः १८९० में हैन्स ड्रायस्क ने समुद्री अर्किन के अण्डों से सम्बन्धित अपना प्रयोग किया। समुद्री अर्किन एक क्षुद्र जीव है जो सागर तल में रेंगता रहता है। ड्रायस्क ने एक निषेचित अण्डा चुना और उसे दो कोषों में विभाजित कर दिया। यह विच्छेदन उन्होंने मनुष्य के बाल की सहायता से किया था। क्या ये दोनों विच्छेदित कोष आधे-आधे जीव बनेंगे? यदि हां, तो निश्चय ही ये दोनों कोष प्रकृति में पृथक होंगे—(क) किन्तु इस विच्छेदित अण्डे से छोटे आकार के दो पूर्ण जीवों की उत्पत्ति हुई···(ख) हैन्स स्पेमैन का एक प्रयोग : एक भ्रूण से दो सैलामैण्ड्रों की उत्पत्ति

ज्ञान ने कुछ जीव-शास्त्रियों को एक प्राथमिक सिद्धान्त की ओर प्रेरित किया कि यह (नया सिद्धान्त) एनटेलेकी (entelechy) या एक अचेतन 'आत्मा' भौतिक क्रियाओं को नियन्त्रित करती है। आत्माएं या एनटेलेकी जीवित पदार्थों में होती हैं। हैन्स ड्रायस्क इस मत का समर्थन समुद्री अर्किन के अण्डों से सम्बन्धित अपने एक प्रयोग के आधार पर करते हैं जिसके अन्तर्गत अण्डों को विच्छेदित कर दिया गया, फिर भी उनसे छोटे आकार के पूर्ण जीव की उत्पत्ति हुई।

उस मत के विरोध में जो जीवित पदार्थों को यान्त्रिक या प्राकृत-रासायनिक क्रियाओं के संश्लिष्ट स्वीकार करता है, यह जीववादी प्राथमिक सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण है। जीवित पदार्थ का यह विचित्र और विशेष स्वभाव परमाण्विक क्रियाकलापों के सन्दर्भ में नहीं स्वीकारा जा सकता है। जीववाद जीवन की लीला में (उसकी व्याख्या करते हुए) एक अधीन क्रिया को सम्मुख करता है जिसके द्वारा व्यक्ति के अंग एक पूर्ण अस्तित्व की क्रियाओं को वर्तमान रखते हैं। प्रत्येक अंग के विशेष अस्तित्व का कारण उस एक सम्पूर्ण अस्तित्व में निहित होता है। जीवन के अनुभव आग्रही और अविभाज्य इकाई की अभिव्यक्तियां हैं। किन्तु यह महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त कोई अ-भौतिक अस्तित्व नहीं हो सकता जो भौतिक अनुभवों को प्रभावित करे। प्रोफेसर लोयेब ने अपने प्रयोग में दिखाया है कि सुई द्वारा छेदने या किसी अन्य व्यवधान से एक अपरिपक्व अण्डाशय में विभाजन की क्रियाएं तथा अन्य सामान्य विकास हो सकता है जो दूसरी स्थिति में नहीं हो पाता। हमें सुई द्वारा छेदने तथा अन्य अधीनस्थ क्रियाओं में सम्बन्ध का ज्ञान नहीं है। उन्होंने सामान्य जीवों से वेदन तक की क्रियाओं का अध्ययन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रिया है, प्रकाश, उष्मा, चाप आदि की निर्दिष्ट क्रियाओं का भी। यह प्रकट है कि प्राकृत-रासायनिक उद्दीपन बहुत-सी महत्त्व-पूर्ण क्रियाओं का सूत्रपात करता है। उत्तर में जीववादी कहते हैं कि यह महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त प्राकृत-रासायनिक कारणों के संयोजन के साथ कार्य करता है। यह एक नियन्त्रक सिद्धान्त है और इसके कार्यरूप में आने के लिए उपयुक्त प्राकृत-रासायनिक प्रक्रियाओं की आवश्यकता है। किन्तु जबकि जीवन भौतिक स्थितियों पर निर्भर है, हम यह नहीं जानते कि भौतिक स्थितियां जीवन को कैसे अस्तित्व में लाती हैं। एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से जीववाद असन्तोषपूर्ण है, तथापि यह जीवन में घटित होने वाली सभी क्रियाओं का अध्ययन करता है। किन्तु इसकी सत्यता हम प्रमाणित नहीं कर सकते। अनुभवद्रष्टा के रूप में हमें तथ्यपूर्ण वक्तव्यों पर निर्भर रहना चाहिये, और प्रकृति की विवेचना उस तरह करनी चाहिये जिस तरह यह जीवन में प्रकट है। जीवित पदार्थों में उनकी संरचना का एक नया संगठन है और उनकी क्रियाओं की एक विशेष अधीनता है, एक विशेष रचना, एक पूर्ण के कार्यों और उद्देश्यों द्वारा प्रेरित सभी अंगों का एक अन्तर्मुखी निश्चय जिसकी भौतिक रूप से कोई व्याख्या नहीं हो सकती। विज्ञान के लिए केवल यही प्रयोजनीय है कि जो अन्त: सम्बन्ध जीव वैज्ञानिक तथ्यों के लिए उद्देश्यपूर्ण हैं, वे भौतिक दृश्यों के लिए उद्देश्यपूर्ण तथ्यों से भिन्न होते हैं।

जीव-विज्ञान जीवन की सम्पूर्ण व्याख्या उपलब्ध नहीं करता, वरन इसे सब व्याख्याओं से परे मानता है। जीवन प्रकृति का एक भाग है और पदार्थ से भिन्न है, फिर भी जीवित पदार्थों के साथ यह सम्भावना रहती है कि उन पर भौतिक या जीव वैज्ञानिक व्याख्याएं चरितार्थ हो सकती हैं।

मूल : अंगरेजी (अनुवाद सू. दे. पा.)

मेरा दिमाग इस समस्या से लड़ रहा है

अचानक हम एक नये युग में आ गये हैं। निश्चय ही प्रत्येक युग नया युग होता है लेकिन, मैं मानता हूँ, यह कहना ठीक होगा कि हमारा युग खास तौर से ऐसा है; और इस युग का प्रतीक परमाणु बम या परमाणु शक्ति है, अगर आप मानना चाहें, पर यह सोचना ज्यादा अच्छा रहेगा कि आज परमाणु शक्ति केवल परमाणु बम के रूप में जानी जाती है। और यदि इस युग का प्रतीक परमाणु बम है, तो इस प्रतीक द्वारा हर चीज निर्धारित है—मनुष्य की विचारधारा, मनुष्य का भय और दूसरी तमाम बातें।

हम इस छाया के नीचे हैं। क्या हम इस गौरवपूर्ण और खूबसूरत सभ्यता के साथ इसकी दोपहर से शाम की ओर बढ़ रहे हैं? क्या हम रचनात्मक चेतना खो चुके हैं? क्या हममें वह शक्ति और विश्वास नहीं है जो सभ्यताओं की शुरुआत में रहता है? क्या हम इस दोपहर के समय में वही चेतना फिर हासिल कर सकते हैं और इसे बदल सकते हैं या यह कि दोपहर के बाद शाम होगी और फिर रात की स्याही हम पर छा जायेगी? मैं नहीं जानता, लेकिन मेरा दिमाग इस समस्या से लड़ रहा है।

—जवाहरलाल नेहरु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहास के विद्यार्थियों तथा इतिहास में रुचि रखने वाले प्रत्येक पाठक के लिए एक संग्रहणीय प्रकाशन

हुमायूं

विद्वान इतिहासज्ञ डा. हरिशंकर श्रीवास्तव ने हुमायूं के जीवन पर उपलब्ध सभी फारसी तथा अन्य भाषाओं के ग्रन्थों का अध्ययनकर मुगलकालीन इतिहास के एक चर्चनीय परिच्छेद को प्रस्तुत किया है। महत्त्वपूर्ण युद्धों के मानचित्र, भौगोलिक स्थान, व्यक्तियों के नाम तथा फारसी शब्दों के प्रचलित उच्चारण पुस्तक को और भी उपयोगी बनाते हैं।

कुछ सम्मतियां

It is exceedingly well written in elegant Hindi. You have made use of the original as well as secondary sources of information and produced a scholarly and at the same time an eminently readable work.

—*M.P. Sharma, M.A., D. Litt., Vice Chancellor, University of Saugar*

डा. हरिशंकर श्रीवास्तव की 'हुमायूं' प्रामाणिक आधार पर लिखी हुई एक पठनीय पुस्तक है। पुस्तक की भाषा सुबोध और सुरुचिपूर्ण है।...इतिहास में रुचि लेने वाले पाठकों और स्नातकोत्तर कक्षा के विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी।

—**हीरालाल सिंह, एम.ए., पी.एच-डी. (लन्दन), प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, इतिहास विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस**

लगभग ५०० पृष्ठ : डिमाई अठपेजी आकार

बहुरंगी सुनहरा आवरण : मूल्य १५ रुपये

(१५ रुपये का मनीआर्डर प्राप्त होने पर पुस्तक रजिस्ट्री से भेज दी जायेगी। वी. पी. पी. से मंगाने पर डाक व्यय १.५० रुपया अलग से)

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा—३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोबल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिक एक अनुष्कोण

ब्रह्मस्वरूप शर्मा

पहला कोण

एडविन मैटीसन मैकमिलन (रसायन)

एडविन का जन्म १८ सितम्बर १९०७ को कैलीफोर्निया के रिर्डोडी बीच नामक स्थान में हुआ था। बचपन से ही उनकी विज्ञान में विशेष रुचि थी। वे एक मेधावी छात्र थे तथा कक्षा में सदा प्रथम स्थान प्राप्त करते थे। स्कूल की शिक्षा पूरी करके उन्होंने १९२५ में कैलीफोर्निया इंस्टीट्यूट आफ टेक्नालाजी में प्रवेश लिया। तीन वर्ष बाद उन्होंने बी.एस. की उपाधि प्रथम श्रेणी में प्राप्त कर ली। अनेक संस्थानों ने उन्हें अपने यहां नियुक्ति देने का प्रस्ताव किया परन्तु एडविन को तो वैज्ञानिक बनने की धुन थी। उन्होंने एम. एस. में प्रवेश लिया और १९२९ में मास्टर आफ साइंस की उपाधि भी प्रथम श्रेणी में प्राप्त की।

उस काल में बहुत कम लोग इतनी उच्च शिक्षा प्राप्त करते थे। अतः एडविन को अमरीका में अच्छी से अच्छी नोकरी प्राप्त हो सकती थी, परन्तु उन्होंने वैज्ञानिक शोध-कार्य करने का निश्चय किया और प्रिंस्टन विश्व-विद्यालय में शोध-छात्र बन गये। अपनी विलक्षण वैज्ञानिक प्रतिभा और परिश्रम के फलस्वरूप उन्हें दो वर्ष बाद ही पी-एच. डी. की उपाधि मिल गयी किन्तु नवयुवक डाक्टर डा. एडविन मैकमिलन की ज्ञान-पिपासा शान्त न हुई। उन्होंने बर्कले विश्वविद्यालय (कैली-फोर्निया) में 'रिसर्च फेलो' के रूप में अपना अनुसन्धान कार्य जारी रखा। तीन वर्ष बाद, १९३५ में, विश्वविद्यालय में ही उन्हें सहायक प्रोफेसर पद पर नियुक्त कर दिया गया।

१९३४ में ही कैलीफोर्निया की विकिरण प्रयोगशाला से उनका निकट सम्पर्क स्थापित हो गया था और वे उसके कार्यों में सक्रिय सहयोग देने लगे थे। १९५४ में वे इस प्रयोग-शाला के सहायक निदेशक बने और अन्ततः १९५८ में इसके मुख्य निदेशक चुने गये।

जब १९३९ में द्वितीय विश्व-युद्ध आरम्भ हुआ तो संसार के सभी प्रमुख वैज्ञानिकों को युद्ध से सम्बन्धित अनुसन्धान कार्यों में लगा दिया गया; अमरीकी सरकार ने डा. एड-विन को 'राडार' और 'सोनार' के सम्बन्ध में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खोज करने का कार्य सौंपा। इसी अवधि में उन्होंने लास अलामोस की परमाणुशक्ति प्रयोगशाला की स्थापना में भी भाग लिया। परमाणु-बम के निर्माण में भी उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

१९४० डा. एडविन के लिए महान् सफलताओं का वर्ष सिद्ध हुआ। इस वर्ष उन्होंने यूरेनियमवर्गीय तत्त्वों की शृंखला के प्रथम तत्त्व नेप्चूनियम की खोज की। इसके साथ ही उन्होंने अगले तत्त्व प्लूटोनियम की प्राप्ति की दिशा में भी कार्य किया। वास्तव में नेप्चूनियम की खोज ने यूरेनियमवर्गीय अन्य तत्त्वों की खोज का द्वार खोल दिया। इस क्षेत्र में एडविन ने इतना व्यापक अध्ययन किया था कि उनके लेख और शोधपत्र यूरेनियमवर्गीय रसायन-विज्ञान के आधार बन गये। आगे चलकर वे सीबर्ग तथा कुछ अन्य वैज्ञानिकों के साथ प्लूटोनियम की खोज करने में भी सफल हुए।

यूरेनियमवर्गीय तत्त्वों के विषय में महत्त्वपूर्ण खोजों के लिए डा. एडविन मैकमिलन और डा. सीबर्ग को सम्मिलित रूप से १९५१ का नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया।

'सिंक्रोट्रोन का सिद्धान्त' के नाम से उन्होंने १९४५ में एक सिद्धान्त भी प्रतिपादित किया। परमाणु ऊर्जा का उपयोग करने वाली आधुनिक मशीनों का निर्माण इसी सिद्धान्त के आधार पर किया जाता है। इस सिद्धान्त को १९४५ में ही रूसी वैज्ञानिक व्लादीमीर आई. वेक्सलर ने भी प्रतिपादित किया था, परन्तु यह बात निर्विवाद है कि दोनों वैज्ञानिकों ने इसे पृथक-पृथक रीतियों से, स्वतन्त्र रूप से ज्ञात किया था।

आज विश्व के परमाणु-वैज्ञानिकों में डा. एडविन मैकमिलन का प्रमुख स्थान है। नेप्चूनियम की खोज के लिए डा. मैकमिलन ने जो प्रयोग किया था उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है : साइक्लोट्रान पत्र पर प्रयोग करते समय उन्होंने लक्ष्य के स्थान पर एक कागज लगाया जिस पर यूरेनियम आक्साइड का हलका-सा लेप किया गया था। इसके पीछे उन्होंने सिगरेट के कागजों का एक गट्ठा लगा दिया था। अब उन्होंने लक्ष्य को न्यूट्रान कणों से वेधित किया और फिर सिगरेट के एक-एक कागज की रेडियोधर्मिता की परीक्षा की। उन्होंने देखा कि कुछ कागजों की रेडियोधर्मिता में अन्तर था।

अनेक बार प्रयोग करने के पश्चात् वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि रेडियोधर्मिता में यह अन्तर किसी अन्य अज्ञात तत्त्व की उपस्थिति का प्रमाण है। इस तत्त्व की खोज के लिए उन्होंने वैज्ञानिक फिलिप एच. एबेल्सन के साथ मिलकर कार्य करना आरम्भ किया और अन्ततः नेप्चूनियम प्राप्त करने में सफल हुए।

इसी खोज के साथ उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि नेप्चूनियम के अतिरिक्त अनेक यूरेनियमवर्गीय तत्त्वों की उपस्थिति भी सम्भव है।

दूसरा कोण

ग्लेन सीबर्ग

(रसायन)

ग्लेन का जन्म १९ अप्रैल १९१२ को इश्पेमिंग (मिशिगन) में हुआ था। ग्लेन की प्रारम्भिक शिक्षा इश्पेमिंग में हुई और फिर उन्हें मिशिगन में एक प्राइवेट स्कूल में भर्ती करा दिया गया। बहुत छोटी आयु से ही ग्लेन की प्रतिभा के प्रमाण मिलने लगे थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कक्षा में पढ़ाये जाने वाले वैज्ञानिक प्रयोगों के अतिरिक्त वे स्वयं भी नये-नये प्रयोग करके अपने मित्रों को दिखाया करते थे। १९ वर्ष की आयु में उन्होंने लास ऐंजिल्स के कालेज में प्रवेश लिया। १९३४ में ए. बी. की उपाधि प्राप्त की। प्रारम्भ से ही उन्हें वैज्ञानिक बनने की लगन थी। अतः अन्य किसी क्षेत्र में अध्ययन करने के बजाय उन्होंने पी-एच. डी. करने का निश्चय किया और बर्कले विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। तीन वर्ष बाद ही वे अपने शोधकार्य में सफल हुए और उन्हें डाक्टर की उपाधि प्रदान की गयी। कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के शोध-सहायक के रूप में उन्होंने अपना अनुसन्धान-कार्य जारी रखा। कुछ समय बाद विश्व-विद्यालय में उन्हें रसायन-विज्ञान के सहायक प्रोफेसर के पद पर नियुक्त कर दिया गया, और फिर कुछ वर्ष बाद वे प्रोफेसर बना दिये गये।

दूसरी ओर कैलीफोर्निया की विकिरण प्रयोगशाला से भी उनका सम्पर्क हुआ और वे उसके कार्यों में सहयोग देने लगे। १९४५ में वे इस प्रयोगशाला के सहायक निदेशक बन गये। आगे चलकर १९५८-१९६१ तक डा. सीबर्ग विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे।

डा. सीबर्ग ने अन्य वैज्ञानिकों के साथ मिलकर डा. एडविन मैकमिलन द्वारा किये हुए कार्य को आगे बढ़ाया। डा. मैक-मिलन ने यूरेनियमवर्गीय तत्त्वों में प्रथम तत्त्व नेप्चूनियम (सं. ९३) की खोज की थी। सीबर्ग ने (अन्य वैज्ञानिकों के साथ) इसके बाद के आठ तत्त्वों (सं. ९४-१०१) का पता लगाया और उन्हें प्राप्त करने की विधि निर्धारित की।

संश्लेषित यूरेनियमवर्गीय तत्त्वों के निर्माण में सीबर्ग का विशेष योगदान है, जिसके लिए उन्हें १९५१ का नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। रासायनिक तत्त्वों के 'न्यूक्लियस' में 'न्यूट्रान' कणों की वृद्धि करके उनमें कृत्रिम रेडियोधर्मिता उत्पन्न कर दी जाती है। संश्लेषण द्वारा बनाये गये इन तत्त्वों को 'संश्लेषित यूरेनियमवर्गीय तत्त्व' अथवा 'रेडियो आइसोटोप' कहते हैं। ऐसे संश्लेषित रेडियोधर्मी तत्त्वों के गुणों का सीबर्ग ने विस्तृत अध्ययन किया। जनवरी १९४० के 'रिव्यू आफ माडर्न फिजिक्स' में सीबर्ग और जे. लिविंगवुड ने ऐसे तत्त्वों की प्रथम सूची प्रकाशित की। इसमें ३३० रेडियो आइसोटोपों के गुणों का विवरण था।

चार वर्ष बाद सीबर्ग ने अकेले ही उसी 'रिव्यू' में ४२० कृत्रिम रेडियोधर्मी तत्त्वों के गुणों का विवरण प्रकाशित किया। [१९६१ तक ऐसे तत्त्वों की संख्या १,००० से अधिक हो गयी है और तत्त्व संख्या १-१०३ तक सभी के कम से कम एक-दो रेडियो आइसोटोप प्राप्त किये जा चुके हैं।]

द्वितीय महायुद्ध के समय, प्लूटोनियम के औद्योगिक उत्पादन का प्रश्न उठा। वैज्ञानिकों के सामने सबसे जटिल प्रश्न यह था कि प्लूटोनियम को अन्य पदार्थों में से कैसे पृथक किया जाय। उस समय सीबर्ग शिकागो विश्वविद्यालय की धातु-विज्ञान प्रयोगशाला के एक विभाग के प्रमुख थे। उन्होंने प्लूटोनियम के पृथक्कीकरण की रासायनिक विधि निकाली। इस विधि में बिस्मथ फास्फेट और लैंथेनम फ्लोराइड के प्रक्षेप के साथ प्लूटोनियम को अलग किया जाता है।

डा. सीबर्ग की प्रतिभा, विद्वता और योग्यता से प्रभावित होकर १९६१ में राष्ट्रपति केनेडी ने उन्हें अमरीका के परमाणुशक्ति आयोग का अध्यक्ष नियुक्त किया। आज भी वे इस पद कार्य कर रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीसरा कोण

अर्नेस्ट टामस सि. वाल्टन

(भौतिकी)

यूनान, मिस्र और यूरोप के अन्य देशों के रसायनज्ञ सैकड़ों वर्षों तक लोहे को स्वर्ण में परिवर्तित करने के लिए प्रयोग करते रहे और वे सफल न हो सके। परन्तु एक तत्त्व को दूसरे तत्त्व में परिवर्तित करने के आधुनिक प्रयास किसी सीमा तक सफल होते दिखायी दे रहे हैं। रेडियोसक्रिय तत्त्वों से अन्ततः एक सीमा प्राप्त होने की बात अब एक वैज्ञानिक तथ्य है। परमाणुओं की आन्तरिक रचना ज्ञात हो जाने से सैद्धान्तिक रूप में यह बात कही जा सकती है कि किसी तत्त्व के प्रोटान कणों में परिवर्तन करके, अथवा उसके चारों ओर घूमने वाले इलेक्ट्रानों की संख्या में परिवर्तन करके एक तत्त्व को दूसरे तत्त्व में परिवर्तित किया जा सकता है।

परन्तु यह सैद्धान्तिक व्याख्या १९३२ तक एक कल्पित सिद्धान्त ही थी जिसको प्रायोगिक रूप में सिद्ध करने का श्रेय आयरलैण्ड के वैज्ञानिक अर्नेस्ट थामस सिस्टन वाल्टन और इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक जान डगलस काक्क्रोफ्ट को प्राप्त हुआ।

वाल्टन का जन्म ६ अक्टूबर १९०३ को आयरलैण्ड के डिंगारवान कसबे में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा बैनब्रिज में हुई और स्कूल की उच्च कक्षाओं में पढ़ने के लिए उन्हें कुक्सटाउन भेज दिया गया। इसके बाद वाल्टन को बेल्फास्ट के मेथडिस्ट कालिज में पढ़ने का अवसर मिला। यहां उन्हें विज्ञान के उत्तम अध्यापक मिले और किशोर वाल्टन ने स्वयं एक वैज्ञानिक बनने का निश्चय कर लिया। उनकी भौतिक-विज्ञान में विशेष रुचि थी और सत्रह वर्ष की आयु में ही वे विद्युत के जटिल प्रयोग करने लगे। इन प्रयोगों को करने से उनके मन में कुछ वैज्ञानिक प्रश्न उठे जिनके समाधान के प्रयत्न में वे पाठ्यक्रम के अतिरिक्त बड़ी-बड़ी पुस्तकें पढ़ने लगे। १९२२ में उन्होंने डबलिन के ट्रिनिटी कालेज में प्रवेश लिया।

१९२७ में उन्हें वैज्ञानिक शोधकार्य के लिए 'ओवरसीज रिसर्च स्कालरशिप' मिली और वे लार्ड रदरफोर्ड के मार्ग दर्शन में, कैम्ब्रिज के ट्रिनिटी कालेज में शोधकार्य करने लगे। यहीं जान डगलस काक्क्रोफ्ट से उनका सम्पर्क हुआ। १९३० में वाल्टन को एक अन्य 'सीनियर रिसर्च' स्कालरशिप मिल

वाल्टन काक्क्रोफ्ट के परमाणु कणों में वेगवृद्धि करने वाले यंत्र का रेखाचित्र

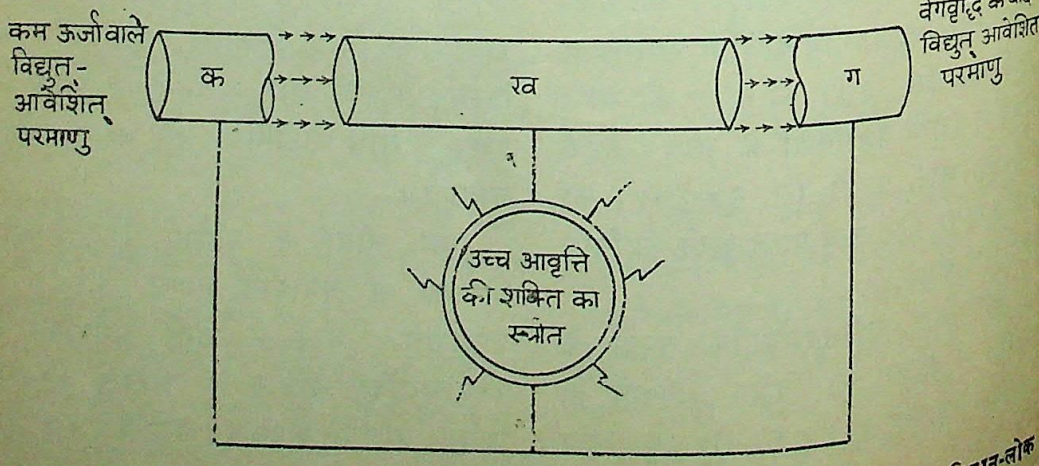

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। इस बीच वाल्टन और काक्क्रोफ्ट ने सामूहिक रूप से प्रोटान के विच्छेदन के लिए प्रयोग आरम्भ कर दिये और १९३२ में दोनों वैज्ञानिक एक नयी विधि से लीथियम में प्रोटान को विच्छेदित करने में सफल हो गये।

इस विधि में कृत्रिम रीति से परमाणु-कणों (इस विवरण में प्रोटान) की गति तीव्र कर दी जाती है जिसके परिणामस्वरूप प्रोटान विघटित हो जाता है।

वाल्टन और काक्क्रोफ्ट ने जब लीथियम के प्रोटान को वेगवृद्धि की रीति से विघटित किया और बाद में बनने वाले पदार्थ की परीक्षा की तो उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वह लीथियम न था—लीथियम हीलियम में परिवर्तित हो गया था। यह सचमुच एक महान उपलब्धि थी। इस प्रयोग के द्वारा यह सिद्ध हो गया कि एक तत्त्व के परमाणु को दूसरे तत्त्व के परमाणु में परिवर्तित किया जाना सम्भव है।

चौथा कोण

जान डगलस काक्क्रोफ्ट

(भौतिकी)

जान डगलस काक्क्रोफ्ट का जन्म २७ मई १८९७ को यार्कशायर (इंगलैण्ड) के समीप टाडमार्डेन में हुआ था। बाल्यकाल से ही वे बहुत बुद्धिमान थे। उनकी स्कूली शिक्षा टाडमार्डेन सेकेण्ड्री स्कूल में हुई और फिर उन्हें कैम्ब्रिज के सेण्ट जास कालेज में भेजा गया। शीघ्र ही उन्होंने कालेज के विद्यार्थियों और आचार्यों में अपनी योग्यता की धाक जमा दी। १९२७ में वे भी शोध-कार्य के लिए लार्ड रदरफोर्ड के शिष्य बन गये और कैवेंडिश प्रयोगशाला में थामस वाल्टन के साथ उन्होंने प्रयोग आरम्भ कर दिये। पांच वर्ष के अध्ययन और शोध के बाद (वाल्टन के साथ) वे थीलियम को हीलियम में परिवर्तित करने में सफल हो गये।

इस उपलब्धि के बाद भी दोनों वैज्ञानिक शोधकार्य में लगे रहे। १९३२ में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने थामस वाल्टन को क्लर्क मैक्सवेल छात्रवृत्ति प्रदान की और १९३८ में उन्हें इंग्लैण्ड की रायल सोसायटी की ओर से हग का पदक देकर सम्मानित किया गया।

और काक्क्रोफ्ट १९३९ में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में प्राचार्य बन गये। १९४१-१९४४ तक वे 'रक्षा अनुसन्धान और विकास प्रतिष्ठान' के मुख्य निरीक्षक रहे। उसके बाद दो वर्ष तक वे कनाडा की 'राष्ट्रीय अनुसन्धान परिषद' के परमाणु शक्ति विभाग के निदेशक (डायरेक्टर) भी रहे। कनाडा से लौटने पर उन्हें इंग्लैण्ड में हार्वेल के परमाणु-शक्ति-अनुसन्धान संस्थान का निदेशक नियुक्त किया गया।

थामस वाल्टन लम्बी अवधि तक अनुसन्धान कार्य करने के पश्चात् १९४६ में डबलिन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बन गये।

१९५१ की १५ नवम्बर को भौतिक विज्ञान के नोबेल पुरस्कार के लिए अर्नेस्ट थामस वाल्टन और जान डगलस काक्क्रोफ्ट को चुना गया। संसार के समस्त वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया कि १९३२ में इन दोनों के द्वारा एक तत्त्व का दूसरे तत्त्व में परिवर्तित किया जाना एक महान वैज्ञानिक उपलब्धि है। आजकल विशाल और शक्तिशाली विस्फोटक यन्त्र बनाये जा रहे हैं और परमाणु 'न्यूक्लियस' का विघटन एक सामान्य घटना बन गयी है। इस प्रकार वाल्टन और काक्क्रोफ्ट का अनुसन्धान विज्ञान की प्रगति में एक महत्त्वपूर्ण सीमाचिह्न बन गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

लघुतम कैमरे से पेट के कैंसर का निदान

अमरीका में एक ऐसी अनोखी विधि का विकास किया गया है जिससे आरम्भ में ही पेट के कैंसर का पता लगाया जा सकता है।

एक छोटा कैमरा जो आकार में छोटी अंगुली की नोक के बराबर है, मुख द्वारा रोगी के पेट में पहुंचा दिया जाता है। एक मिनट से भी कम समय में इस कैमरे से पेट के समूचे भाग के १६ रंगीन चित्र उतर जाते हैं और उन चित्रों को साथ मिलाने पर पेट का लगभग ९५ प्रतिशत भीतरी भाग दिखायी पड़ जाता है।

यह कैमरा रबर की एक महीन रस्सी से जुड़ा रहता है जिसके जरिये उसे रोगी के गले और मुख द्वारा पेट से बाहर निकाल लिया जाता है।

यह उन अनेक प्रयत्नों का नमूना मात्र है जो प्रारम्भिक अवस्थाओं में ही कैंसर का पता लगाने के लिए किये जा रहे हैं।

खराब कानों के लिए अनोखे यन्त्र

बुर्जबर्ग में हाल ही में खराब कानों के लिए एक लघुतम यन्त्र का प्रदर्शन किया गया। इसका वजन केवल ३५ ग्राम है। इसमें एक बैटरी, एक माइक्रोफोन, एक ट्रांजिस्टर, एक वालूम रेगुलेटर तथा कथित ध्वनि ट्रांसफार्मर लगा हुआ है। अनुसन्धान-कर्ताओं ने आशा व्यक्त की है कि भविष्य में इससे भी छोटे यन्त्रों का आविष्कार होगा।

वायु से उर्वरक बनाना

एक अमरीकी रसायनशास्त्री ने सस्ते नाइट्रोजन उर्वरक तैयार करने की विधि मालूम कर ली है। इस खोज से वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि उर्वरक तैयार करने के लिए वायु से सीधी नाइट्रोजन प्राप्त की सकती है। यह उल्लेख्य है कि वायु-मण्डल में अत्यधिक मात्रा में नाइट्रोजन तत्त्व मौजूद हैं।

असीम एवं निर्बाध नाइट्रोजन स्रोत जिसका वजन पृथ्वी के वायुमण्डल के ७५% के बराबर है, मनुष्य की पहुंच के बाहर रहा है। बहुत अधिक दबाव डालकर और अधिक तापमान में इसे मिश्रण में मिलाया जा सकता है, पर इस कार्य में काफी धन व्यय होता है।

किन्तु हाल की खोजों से बड़ी आशा बंधी है। एक ऐसे मिश्रण का पता लगाया जा रहा है जो नाइट्रोजन प्राप्त कराने में सहायक होगा। यह मिश्रण अमोनिया तैयार करने के लिए नाइट्रोजन में मिल जायेगा। उर्वरक तैयार करने के लिए अमोनिया का काफी प्रयोग किया जाता है। आजकल इसे तैयार करने में काफी खर्च आता है, परन्तु उपरोक्त विधि से यह बहुत सस्ता पड़ेगा।

मत गणना करने वाला कम्प्यूटर

हाल ही में पश्चिम जरमनी की हेस प्रान्तीय विधान सभा के चुनाव सम्पन्न हुए। उस चुनाव में लगभग ५,००० मतदान केन्द्र थे, लेकिन अधिकारियों को वहां डाले गये मतपत्रों को गिनने में तथा चुनाव परिणामों की घोषणा करने में मुश्किल से चार घण्टे लगे।

वास्तव में पश्चिम जरमनी के वैज्ञानिकों द्वारा आविष्कृत कम्प्यूटर की सहायता से मतपत्रों को गिनने में केवल एक ही घण्टे का समय लगा। इस कम्प्यूटर का नाम आई वी एम १६२० है और इसके पेनल पर लगे १८० नियन्त्रक प्रकाशों ने ६० मिनट के अन्दर एक कागज निकालकर सामने रख दिया जिसमें चुनाव परिणाम प्रदर्शित था। यह नतीजा बिलकुल ठीक था।

यह कम्प्यूटर पियानो के आकार का है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्रयान द्वारा यात्रा

वाल्टर फ्रोहलिच

चन्द्रमा की प्रथम अमरीकी समानव यात्रा के लिए लगभग पूरी तैयारी हो चुकी है। आशा है यह यात्रा १९६९ में, और यदि सम्भव हुआ तो १९६८ के अन्तिम चरण में ही सम्पन्न हो जायेगी।

इस सम्भावित यात्रा से सम्बन्धित योजना 'अपोलो योजना' के नाम से जानी जाती है।

१९६७ के आरम्भिक चरण में औपचारिक रूप से यह योजना प्रारम्भ हो जायेगी और तीन अन्तरिक्ष यात्री एक विशाल अन्तरिक्षयान में सवार होकर पृथ्वी की परिक्रमा करेंगे।

ये उड़ानें कक्षागत होंगी तथा दो वर्ष तक लगातार जारी रहेंगी। इन उड़ानों के दौरान अन्तरिक्षयात्री अन्तरिक्षयान से भलीभांति परिचित हो जायेंगे और अन्तरिक्ष में उसके संचालन की स्थितियों के अन्तर्गत उसका परीक्षण करने में समर्थ होंगे।

परीक्षण-सम्बन्धी उड़ानों की समाप्ति पृथ्वी से दूर, सृष्टि के अन्तराल में समानव यात्रा के प्रारम्भ की सूचक होगी। इस प्रकार की प्रथम उड़ान चन्द्रमा पर पहुंचने के लिए की जायेगी, और फिर (सम्भावना है) असीम दूरी पर स्थित नक्षत्रों की यात्राएं होंगी।

अपोलो योजना की स्थिति क्या है? अन्तरिक्ष अधिकारियों का कथन है कि वह सन्तोषजनक है। अपोलो अन्तरिक्षयानों के नमूनों द्वारा कई मानवरहित अन्तरिक्ष उड़ानें पूरी हो चुकी हैं। फिर भी ५ लाख मील की उस महत्त्वपूर्ण सप्तदिवसीय यात्रा के लिए कोई तिथि निर्धारित करने से पूर्व अभी कुछ और भी परीक्षण आवश्यक हैं।

तीन खंड : तीन काम

अन्तरिक्ष यात्रा में प्रयुक्त होने वाले अन्तरिक्षयान में तीन खंड सम्मिलित हैं जिन्हें 'मोड्यूल' कहते हैं। पहला खंड 'कमान मोड्यूल' है, जिसमें तीनों अन्तरिक्ष यात्रियों के रहने के लिए स्थान बने होंगे, साथ ही वे उपकरण तथा नियन्त्रण-यन्त्र होंगे जिनकी आवश्यकता उन्हें जीवित रहने और यान को संचालित करने के लिए पड़ेगी।

दूसरा खंड 'सर्विस मोड्यूल' है जिसमें वायुमंडल में पुनः प्रवेश को छोड़कर शेष उड़ान के लिए आवश्यक राकेट इंजन, ईंधन, विद्युदाण्विक उपकरण एवं अन्य सामग्री होगी। 'कमान मोड्यूल' के वायुमंडल में पुनः प्रवेश करने के ठीक पहले 'सर्विस मोड्यूल' को उससे पृथक कर दिया जायेगा।

तीसरा खंड 'लूनर मोड्यूल' है। यह अन्तरिक्षयान का वह भाग है जिसमें तीन अन्तरिक्षयात्रियों में से दो सवार हो जायेंगे। जब दोनों अन्तरिक्षयात्री इस खंड में पहुंच जायेंगे, तो इसे मुख्य यान से पृथक कर दिया जायेगा, ताकि वह चन्द्रमा की सतह पर उतर सके। इस बीच तीसरा अन्तरिक्षयात्री 'कमान मोड्यूल' और 'सर्विस मोड्यूल' के साथ चन्द्रमा की कक्षागत परिक्रमा करता रहेगा। आगे चलकर चन्द्रमा की सतह पर उतरने वाले अन्तरिक्षयात्री 'ल्यूनर मोड्यूल' का प्रयोग करके पुनः परिक्रमा कर रहे 'मोड्यूलों' से आकर मिल जायेंगे।

एक नयी किस्म का अन्तरिक्षयान

अपोलो अन्तरिक्षयान एक पूर्णतया नयी किस्म का अन्तरिक्षयान है। यह जेमिनी यानों की अपेक्षा बहुत बड़ा तथा अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्रमा के तल पर अनुसन्धान में संलग्न अन्तरिक्ष यात्री (एक कल्पित रेखाचित्र)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जटिल और विकसित यान है। इसमें तीन अन्तरिक्षयात्रियों के रहने के लिए पर्याप्त स्थान है। इसमें तीनों में से प्रत्येक अन्तरिक्षयात्री को अपने शरीर के अवयवों को हिलाने-डुलाने और चलाने के लिए जितनी जगह उपलब्ध है उतनी एक यात्री के लिए मरकरी यान में तथा दो यात्रियों के लिए जेमिनी यान में उपलब्ध नहीं थी।

उड़ान चालू रहने की स्थिति में तीनों अन्तरिक्षयात्री जिन गद्दियों पर बैठेंगे, उनके नीचे दो शयन-स्थल हैं। शयन-स्थल ऐसी बर्थें हैं जिन पर दो अन्तरिक्षयात्री पांव फैलाकर लेट सकते हैं, जबकि तीसरा अन्तरिक्षयात्री चालक की सीट पर बैठा रहेगा। इस अन्तरिक्षयान की अनेक सुविधाओं में एक यह भी है कि इसमें अन्तरिक्षयात्रियों को ठंडा और गरम पानी उपलब्ध होगा।

अपोलो यान वस्तुतः मरकरी और जेमिनी यान की भांति प्रयोगात्मक यान नहीं है। इसका निर्माण पृथ्वी से चलकर अन्तरिक्षयात्रियों को अन्य ग्रहों, विशेष रूप से चन्द्रमा तक पहुंचाने के लिए हुआ है।

चालक

उस प्रथम समानव एवं कक्षागत अपोलो उड़ान के लिए चालकों का चुनाव हो गया है। चालकों को इस समय प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इस टोली के नेता, कमान चालक वर्जिल आई. ग्रिसम होंगे। ग्रिसम को इससे पूर्व की दो सफल अन्तरिक्षयात्राओं का अनुभव प्राप्त है। उन्होंने प्रथम बार १९६१ में १६ मिनट की उपकक्षागत समानव मरकरी उड़ान सम्पन्न की थी, और दूसरी बार २३ मार्च, १९६५ को प्रारम्भ प्रथम समानव जेमिनी उड़ान में भाग लिया था। यह उड़ान ५ घंटे की ३ परिक्रमाओं वाली थी। अपोलो उड़ान पूरी हो जाने पर वे विश्व के प्रथम व्यक्ति होंगे जिसे तीन अन्तरिक्षयात्राएं पूरी करने का गौरव प्राप्त होगा।

टोली के दूसरे अन्तरिक्षयात्री जिनका पद वरिष्ठ चालक का होगा, एडवर्ड एच. ह्वाइट होंगे। यह उनकी दूसरी अन्तरिक्षयात्रा होगी। वे जून १९६५ में सम्पन्न ६२ परिक्रमाओं वाली जेमिनी-४ उड़ान के द्वितीय चालक रह चुके हैं। उस उड़ान के दौरान वे अन्तरिक्षयान से बाहर निकलकर अन्तरिक्ष में पैदल संचरण करने वाले प्रथम अमरीकी बने थे।

टोली के तीसरे सदस्य रोजर बी. चैफी हैं। वे प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे अन्तरिक्ष यात्री हैं। यह उनकी पहली अन्तरिक्ष उड़ान होगी।

यह ऐसी उड़ान होगी जिसमें पहले से इस बात का निर्धारण नहीं किया जायेगा कि यात्रा किस समय समाप्त होगी। यह तब तक जारी रहेगी, जब तक अन्तरिक्षयान के महत्त्वपूर्ण कल-पुरजे ठीक तरह कार्य करते रहेंगे और अन्तरिक्षयात्री स्वस्थ बने रहेंगे।

इतिहास के पृष्ठों पर एक चमत्कारपूर्ण घटना

अन्तरिक्ष अधिकारियों का विश्वास है कि वे अनुभवों और वैज्ञानिक प्रयोगों के रूप में इस उड़ान से अधिकतम परिणाम प्राप्त करने में समर्थ होंगे। यदि अन्तरिक्षयान की यन्त्र प्रणालियां सही-सही काम करती रहीं तो वह सम्भवतः दो सप्ताह या उससे कुछ अधिक समय तक अन्तरिक्ष में रहेगा, बशर्ते कि ईंधन और अन्य सामग्रियां पहले न खत्म हो जायें।

इस प्रारम्भिक कक्षागत उड़ान के बाद इस प्रकार की कई अन्य उड़ानें भी सम्पन्न होंगी जिनके दौरान विभिन्न परीक्षणों की पुनरावृत्ति होगी और नये परीक्षण किये जायेंगे। अन्त में, कक्षा में चन्द्र-यात्रा की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथासम्भव सही-सही नकल करने का प्रयत्न किया जायेगा।

फिर किसी समय १९६९ में वह समय आयेगा जब अपोलो अन्तरिक्षयान को चन्द्रमा तक जाने और वहां से पृथ्वी पर वापस आने वाली ५ लाख मील की लम्बी यात्रा पर भेजा जायेगा। यह पहला अवसर होगा जब मनुष्य पृथ्वी के निकटवर्ती वातावरण से वस्तुतः पृथक होकर पहली बार सही अर्थ में सृष्टि के अन्तराल में पहुंचेगा। निश्चय ही यह सफलता इतिहास के पृष्ठों पर २०वीं शताब्दी की चमत्कारपूर्ण घटना के रूप में अंकित होगी।

जीव वैज्ञानिक भू-उपग्रह का अन्तरिक्ष में रहस्यपूर्ण अन्त

अमरीका के प्रथम जीव वैज्ञानिक उपग्रह का जिसे गत १४ दिसम्बर को अन्तरिक्ष में प्रक्षिप्त किया गया था, अत्यन्त रहस्यपूर्ण ढंग से अन्त हो गया। यह उपग्रह जीव-वैज्ञानिक प्रयोगशाला था जिसमें हजारों कीड़े-मकोड़े, एक-कोषीय जीव और पौधे भरे थे। उसे इस बात का पता लगाने के लिए छोड़ा गया था कि जीवों और पौधों के इन नमूनों पर अन्तरिक्ष यात्रा का क्या प्रभाव पड़ता है।

इस योजना की सफलता उस खोल के पुनर्ग्रहण में निहित थी, जिसमें ये जीव-जन्तु भरे थे। इसे तीन दिनों की कक्ष गत उड़ान के अन्त में हवाई के निकट पुनः ग्रहण करना था। किन्तु इसके बजाय भू-उपग्रह अन्तरिक्ष में विलीन हो गया और उसे पुनः ग्रहण करना सम्भव न हुआ।

७ फुट लम्बा और आधे टन वजन का यह अन्तरिक्षयान केप केनेडी से एक डेल्टा राकेट द्वार प्रक्षिप्त किया गया था। यह १९६६ का ३९वां और अन्तिम प्रक्षेपण था। प्रक्षेपण द्वारा उसे योजनानुसार पृथ्वी से १९९ मील की ऊँचाई पर एक वृत्ताकार कक्षा में पहुंचा दिया गया था।

भू-उपग्रह में जिन नमूनों को रखा गया था, उनकी सूची में फलों पर बैठने वाली १० हजार मक्खियां, १,००० गोबरैले, मेंढक के ५६० अंडे, ८७५ भ्रूण, १३०० कीटाणु-कोष, गेहूँ के ७८ अंकुर, काली मिर्च के ९ पौधे और लाखों जीवाणु सम्मिलित थे।

उड़ान का मुख्य उद्देश्य इस बात का पता लगाना था कि भारहीनता अकेले तथा विकिरण के प्रभाव से युक्त होकर जन्तुओं और पौधों के विकास, आकार और वंश को किस प्रकार प्रभावित करती है। इस प्रकार की जानकारी से ग्रहों तक की समानव उड़ानों के लिए जीव-वैज्ञानिक संकटों का मूल्यांकन करने में सहायता मिलेगी।

उदाहरण के लिए काली मिर्च के पौधों को इस तरह स्थापित किया गया ताकि प्रति १० मिनट पर उनका फोटो खींचा जा सके। उद्देश्य इस बात का निर्धारण करना था कि भारीहनता वाले अन्तरिक्ष में पौधों की पत्तियां चौड़ाई में बढ़ेंगी या नहीं, जैसा कि पृथ्वी पर गुरुत्वाकर्षण के खिचाव के कारण बढ़ती हैं। पौधों की जड़ों का भी अध्ययन इस बात का निर्धारण करने के लिए किया जाने वाला था कि वे नीचे की ओर बढ़ती हैं या किसी अन्य दिशा में।

जिस समय भू-उपग्रह अन्तरिक्ष में परिक्रमा कर रहा था, उस समय उसके किसी पुरजे में विकार का कोई लक्षण नहीं दिखायी पड़ा था। किन्तु ४७वीं परिक्रमा के अन्त में वह अचानक विलुप्त हो गया।

सम्भवतः रेट्रो राकेटों ने भू-उपग्रह को कसी अन्य कक्षा में पहुंचा दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्षणीय प्रकार के क्षत्रक की नयी कृषि

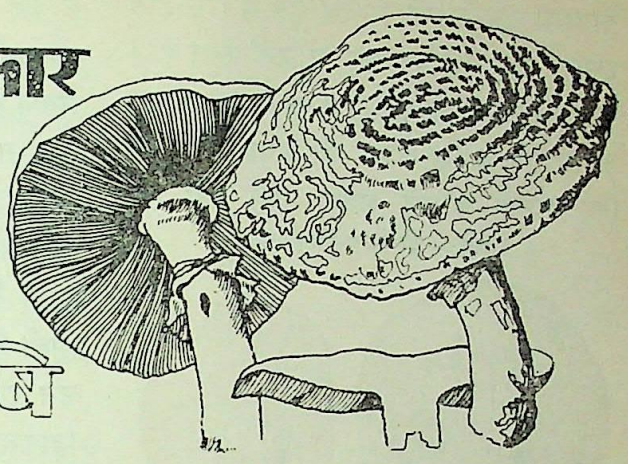

रतनकुमार टण्डन, एम.एस-सी.

उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा प्रान्त में क्षत्रक बहुतायत से पैदा होती है जिसे वहां के निवासी बड़े चाव से खाते हैं। निर्यात की दृष्टि से इसका महत्त्व देखते हुए विवेकानन्द अनुसन्धानशाला को उत्तर प्रदेशीय सरकार ने १९६५-६६ में भक्षणीय प्रकार के क्षत्रक की खेती के लिए १५,००० रुपये का अनुदान दिया जिससे इस ओर वैज्ञानिक प्रयोग किये जा रहे हैं। यह उल्लेखनीय है कि सफलता के परिणाम भी मिले हैं। इनको उगाने के लिए लकड़ी के बक्सों में क्षत्रक की एक विशेष खाद भरकर इसके बीज (जिन्हें स्पान कहते हैं) बोकर एक ठंडे कमरे में (तापमान १६-१८° सेंटीग्रेड) रखकर बराबर पानी देते रहते हैं। जल्दी ही क्षत्रक सभी बक्सों में उग जाते हैं और दिन-प्रतिदिन बड़े होते जाते हैं। जब ये काफी बड़े हो जाते हैं, तो इन्हें तोड़कर बेच देते हैं। क्षत्रक लगभग १० रुपये प्रति किलो के आसानी से बेचे जा सकते हैं। कोई भी व्यवसायी इन्हें इस प्रकार उगाकर एक लघु गृह उद्योग स्थापित करके लाभ उठा सकता है। अमरीका में तो इस प्रकार के लकड़ी के बक्से (१६ × १२ × ७ इंच) लगभग छह डालर प्रति बक्स के हिसाब से बेचे जाते हैं। इन बक्सों को बराबर पानी देना होता है, तथा इन्हें ठंडे कमरे में रखने की आवश्यकता होती है।

एक उत्तम खाद की खोज

साधारण खाद क्षत्रक की कृषि के लिए उपयुक्त नहीं होती। इसके लिए विशेष प्रकार की खाद की जरूरत होती है। विवेकानन्द अनुसन्धानशाला ने इसके लिए एक उत्तम खाद की खोज की है जिसमें घोड़े की लीद इस्तेमाल नहीं की जाती, क्योंकि इस प्रकार की खाद को भक्षणीय प्रकार के क्षत्रक की कृषि के लिए उपयोग करने में लोगों को एतराज होता था, और गन्दगी की वजह से भी इसे उपयुक्त नहीं समझा गया। खाद को पहले कीटाणुरहित कर लिया जाना चाहिये, ताकि क्षत्रक में जहरीला पदार्थ पैदा न हो सके, अन्यथा क्षत्रक भी जहरीले पैदा होंगे जो खाने के प्रयोग में नहीं आ सकते।

यह एक अविश्वसनीय तथ्य है कि केवल जरमनी ने १९६३ ई. में ८०० किलोग्राम क्षत्रक विदेश से मंगायी थी। क्षत्रक का निर्यात देखते हुए इस दिशा में काफी प्रोत्साहन मिला है। आगे चलकर यह एक लाभदायक कुटीर उद्योग साबित हो सकता है।

क्षत्रक ईसा से १००० वर्ष पूर्व भी एक स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ समझा जाता था। इसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस समय लोग पकाकर खाते थे। रोम के निवासी इसे काफी महत्त्व देते थे। उन्होंने इसका नाम 'ईश्वर का भोजन' रखा था। जूलियस सीजर के शासन काल में ऐसे कानून बनाये गये थे कि क्षत्रक को केवल राजा की सन्तान और बड़े-बड़े लोग ही खा सकते थे लेकिन अब ऐसा कोई बन्धन नहीं है। इन्हें कोई भी उगाकर खा सकता है।

(क) जरमनी के बड़े क्षत्रक, (ख) तथा (ग) क्षत्रक—दो भिन्न-भिन्न काट

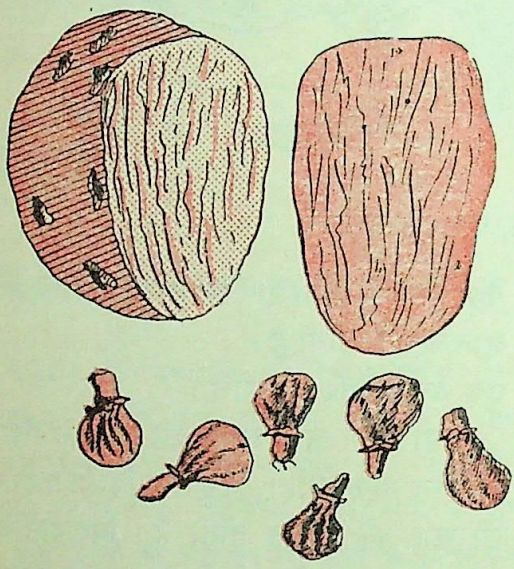

(क)

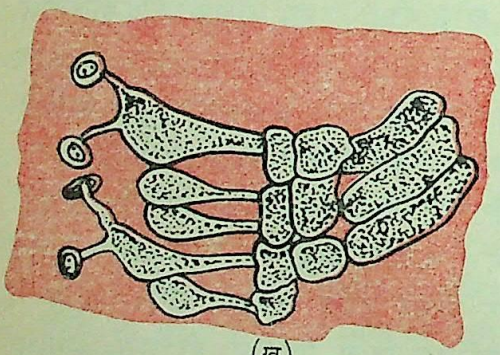

(ख)

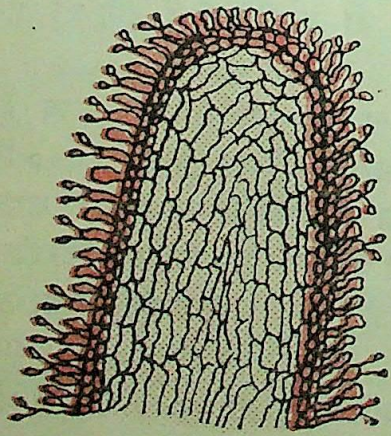

(ग)

लवण और प्रोटीन की सर्वाधिक मात्रा

सब्जियों के विटामिन और प्रोटीन की मात्रा की तुलना करते हुए क्षत्रक में लवण और प्रोटीन की प्रतिशत मात्रा सबसे अधिक होती है, और विटामिन की मात्रा भी काफी होती है। इसमें 'स्टार्च' नहीं होता जिससे यह उन रोगियों के लिए भी फायदेमन्द है जिन्हें 'डायबटीज' है।

क्षत्रक जहरीले और भक्षणीय दोनों प्रकार के होते हैं। इनके चुनाव में विशेष जानकारी आवश्यक है, अन्यथा भयंकर परिणाम हो सकने की सम्भावना रहती है।

बड़े पैमाने पर क्षत्रक उगाने के लिए बड़े-बड़े कमरे बनाकर उनमें तापमान और नमी पर नियन्त्रण रखकर क्षत्रक उगाये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त खाद बनाने के लिए भी ऐसे ही दूसरे कमरे बनाने पड़ते हैं। इनके स्पान (बीज) पैदा करने के लिए भी कमरे बनाने पड़ते हैं।

लन्दन में १९४५ से क्षत्रक उगाने वालों की एक संस्था स्थापित है जिसका कार्यालय एग्रीकलचर हाउस, नाइट ब्रजेस में है। संसार के ४० देशों के लगभग ७५ सदस्य इस संस्था से सम्बद्ध हैं। यह संस्था एक मासिक पत्रिका प्रकाशित करती है। क्षत्रक उगाने के लिए प्रति वर्ष यह संस्था एक प्रदर्शनी और सभा का आयोजन करती है। निस्सन्देह यह संस्था इस दिशा में बड़ा उपयोगी कार्य कर रही है।

क्षत्रक की विभिन्न जातियां

क्षत्रक की एगैरिकस जाति में करीब ७० उपजातियां पायी जाती हैं, जो वर्षा ऋतु में लड़की पर, पेड़ों के तनों पर या सड़ती-गलती चीजों पर उगती देखी जा सकती हैं। इसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिरिक्त भक्षणीय प्रकार के क्षत्रक की लग-
२० उप-जातियां पायी जाती हैं। बहुत-
ऐसी भी किस्में हैं जो जहरीली हैं और
में से १२ जातियां तो अत्यन्त विषैली हैं।
रिकस जाति के क्षत्रक से बिलकुल मिलती-
ती जाति एमैनिटा अत्यन्त विषैली होती
। इसकी पहचान करना कठिन होता है।
ताकि विषैली जाति के निचले भाग में एक
ाले के आकार का अंग होता है, जिसे
ाल वैज्ञानिक ढूंढ़ सकता है।

एक बार चीन की एक सर्कस पार्टी
ारत के कुमाऊं क्षेत्र में अपना खेल दिखाने
ायी थी। उन लोगों में क्षत्रक की तरकारी
ाने का रिवाज था। गलत किस्म में विषैले
त्रक खाने की वजह से उस पार्टी के सैकड़ों
ादमी मृत्यु के शिकार हो गये। इसलिए
हें खाने के पहले भलीभांति पहचान लेना
ावश्यक है।

त्रक की संरचना

भूमि में क्षत्रक पतले-पतले धागे की
ल की जड़ों द्वारा जकड़े रहते हैं। भूमि के
र इनके जो अंग दिखायी देते हैं, वे इनके
ल हैं। इन्हीं को खाया भी जाता है। इनमें
हिस्से होते हैं—एक छोटा-सा डंठल होता
और दूसरा हैट-जैसा छातेनुमा भाग ऊपर
ा दिखायी देता है। जब क्षत्रक छोटा
ता है, तब एक बटन-जैसा गोल या अंडे
शक्ल का होता है। छाते या हैट-जैसे
ग के निचले भाग के नीचे सैकड़ों प्लेट-
े अंग लटकते प्रतीत होते हैं, जो प्रति
त्रक में ३००-६०० की संख्या में होते हैं।
हें गिल्स कहते हैं। इनकी रचना सूक्ष्मदर्शी
रा ही समझी जा सकती है। इसके
तिरिक्त इन प्लेटों के दोनों किनारों पर
ख्य अंडेनुमा स्पोर लगे रहते जो हैं बाद
दूसरे क्षत्रक पैदा करने में सहायक होते हैं।

पश्चिमी जरमनी के क्षत्रक आकार में

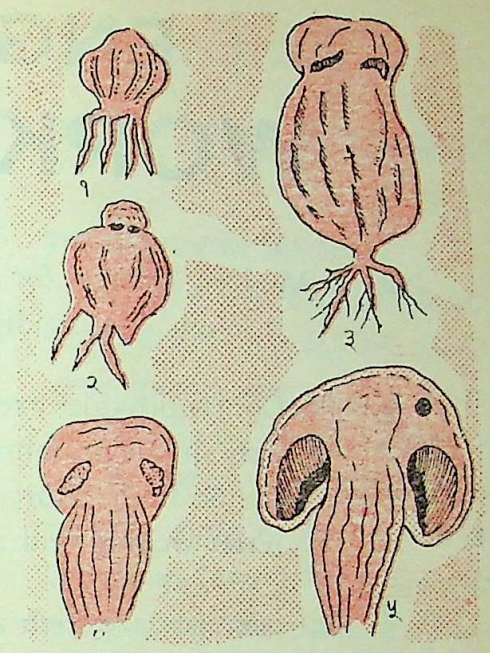

(क)

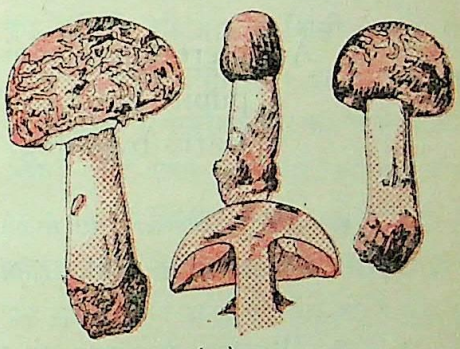

(ख)

(क) क्षत्रक के क्रमिक विकास की विभिन्न अवस्थाएं; (ख) पूर्ण विकसित क्षत्रक

काफी बड़े होते हैं। भारत में पात गोभी जितने बड़े क्षत्रक भी उगाये जाते हैं।

क्षत्रक को आसानी से काटा, उबाला और घी में तला जा सकता है। विदेशों में, विशेषकर पश्चिमी जरमनी में तो यह भोजन की एक शानदार प्लेट समझी जाती है।

उगने के समय क्षत्रक एक छोटा, गोल (नाशपाती की शक्ल का) रूप धारण करता है जिसमें से डंठल और हैट-जैसे अंगों को पृथक नहीं किया जा सकता। धीरे-धीरे बाढ़ आती है और बाद में यह पूर्ण क्षत्रक का रूप धारण कर लेता है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupil how to write sentences correctly. He learns by doing, and by doing *correctly*.
- Exercises are so arranged that even a slow child is sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The Work Books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I.....Price : Re. 0·80
Book II.....Price : Re. 1·00
Book III ... .Price : Re. 1·20

For further enquiries please write to :

SRI RAM MEHRA & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA-3

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिच्छू
भयंकर और संकटकारी जीव

सुरजीत

'आवश्यकता है १०,००० जीवित और विषैले बिच्छुओं की। क्या आप इस सम्बन्ध में कुछ सहायता कर सकते हैं ?' यह विज्ञापन १९५१ की वसन्त ऋतु में अरीजोना के एक प्रसिद्ध पत्र 'डेली सिटीजन' में प्रकाशित हुआ। यह घोषणा अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त डाक्टर हर्बर्ट एल. स्टानक की ओर से की गयी थी जो उन दिनों विषनाशक पर अन्वेषण कर रहा था।

तेईस वर्ष के कठोर परिश्रम के बाद डाक्टर स्टानक ने अरीजोना के सदियों पुराने रोग का इलाज खोज लिया था जिसने लाखों-करोड़ों माता-पिताओं की मानसिक शान्ति छीन ली थी। अब इस इलाज को सर्वविदित करने के लिए डाक्टर स्टानक ने यह विज्ञापन दिया था।

अरीजोना उत्तरी अमरीका में स्थित है। यहां बिच्छुओं की बहुत अधिकता है। अनुमान है कि यहां प्रत्येक वर्ष तीन हजार व्यक्तियों को बिच्छू डंस लेते हैं। यहां बिच्छू की चालीस से अधिक किस्में पायी जाती हैं।

डाक्टर स्टानक १९२८ में शिकागो से स्थानान्तरित होकर अरीजोना में रहने लगा। एक वर्ष के बाद उसने वहां शादी कर ली और धीरे-धीरे उन्नति के चरणों को पार करता हुआ अरीजोना स्टेट कालेज में जीव-विज्ञान-विभाग का अध्यक्ष बन गया।

अरीजोना के लोगों की नजर में डाक्टर स्टानक एक सम्माननीय व्यक्ति था, क्योंकि वह बेहद परिश्रमी था। उसने अरीजोना स्टेट कालेज में एक साधारण-सी प्रयोगशाला बना ली थी।

डाक्टर स्टानक का विनाषशक

डाक्टर स्टानक ने बिच्छुओं के डंसने की घटनाएं बहुत सुन रखी थीं। जब उसका अपना बच्चा तीन-चार साल का हुआ, तो स्टानक को हर समय यह विचार चिन्तातुर करने लगा कि कहीं उसके बच्चे को भी कोई बिच्छू डंस न ले। डाक्टर स्टानक ने दृढ़ निश्चय कर लिया कि वह बिच्छू के विष का नाशक अवश्य खोजेगा, किन्तु डाक्टर स्टानक की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी, और कालेज की व्यवस्थापक समिति की ओर से किसी धन के प्राप्त होने की आशा नहीं थी। डाक्टर स्टानक ने अपने हाथों से प्रयोगशाला का सामान तैयार किया और रात-रात भर जागकर जिन्दा और विषैले बिच्छुओं पर प्रयोग किये, और अन्ततः तीस वर्ष के कठोर परिश्रम के पश्चात् वह इस भयंकर जन्तु के विष का नाशक ढूंढ़ने में सफल हो गया।

सबसे पहले उसने यह पता किया कि जीवित बिच्छुओं की दुम से विष को कैसे निचोड़ा जा सकता है। विष निचोड़ लेने के बाद उसने उसे जमाने और फिर उसे द्रव्य में परिवर्तित करने के प्रयोग किये। उसके बाद उसने इस विष को कशीदा पानी में मिलाकर बिल्ली के रक्त में धीरे-धीरे प्रविष्ट किया, यहां तक एक समय ऐसा आया जब बिल्ली पर उसके विष का कुछ प्रभाव न पड़ा। फिर उसने बिल्ली का रक्त निकाला और कई जटिल रासायनिक प्रक्रियाओं से गुजारकर रुधिर-द्रव्य (serum) तैयार किया। यह बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआ। अब उसे जीवित बिच्छुओं और धन की आवश्यकता थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९५१ में उसने लोगों के सामने अपने अन्वेषणों का वर्णन किया। अरीजोना के प्रसिद्ध दैनिक 'डेली सिटीजन' ने डाक्टर स्टानक को पूर्ण सहयोग दिया, और उसके विचारों और प्रयोगों को प्रकाशित करके सामान्य जनता तक पहुंचाया। उसी दैनिक ने यह विज्ञापन भी छापा कि डाक्टर स्टानक को धन की आवश्यकता है जिससे वह और सामान खरीदकर बिच्छू के विष का नाशक तैयार कर सके।

विज्ञापन निकलने की देर थी कि चारों ओर से बिच्छुओं से भरे हुए डिब्बे और बोतलें डाक्टर स्टानक की प्रयोगशाला में आने लगीं। २६ जून १९५१ को 'डेली सिटीजन' के सम्पादक ने डाक्टर स्टानक को अपने दफ्तर में बुलाया और ४,५०० डालर का चैक पेश किया। दो दिन के बाद वहां के विधान-निर्माण संस्थान ने १,००० डालर की अमूल्य ग्रांट दी। इस प्रकार डाक्टर स्टानक के पास अच्छा-खासा धन एकत्र हो गया।

इस उदारतापूर्ण आर्थिक सहायता के बदले में डाक्टर स्टानक ने विष-नाशक की बोतलें टस्कन के हैल्थ-सेंटर को भेज दीं। तीन दिन के बाद एक ऐसी चार वर्षीया बच्ची को उस हैल्थ-सेंटर में लाया गया जिसे बिच्छू ने डंस लिया था। डाक्टर स्टानक के तैयार किये हुए विष-नाशक ने उस बच्ची के प्राण बचा लिये।

आजकल डाक्टर स्टानक की तैयार की हुई विषनाशक की बोतलें अरीजोना के प्रत्येक अस्पताल में प्रयुक्त की जाती हैं। बिच्छुओं के विष का नाशक खोजा जा चुका है।

दस इंच लम्बे बिच्छू

जन्तु,जगत में बिच्छू भूमंडल का सबसे प्राचीन वासी हैं। बिच्छू का सम्बन्ध चींटियों-जैसे छोटे-छोटे कीटों और अन्य आठ टांग वाले जीवों के परिवार से है। सारे संसार में उसकी पांच सौ से अधिक विभिन्न किस्में पायी जाती हैं। यद्यपि आकार की ओर से इनमें भेद होता है, किन्तु आकृति में ये एक-से होते हैं। कई बिच्छू तो झींगा मछली से गहरी एक-रूपता रखते हैं।

बिच्छू बड़ा ही भयंकर और संकटकारी होता है। यद्यपि उसके डंसने से मौत तो नहीं होती, किन्तु असहनीय पीड़ा उठानी पड़ती है। एक दुर्बल व्यक्ति शायद उसके डंक से मर भी जाय। बिच्छू की कई किस्मों में से सबसे खतरनाक, विषैला और भयंकर 'काला बिच्छू' होता है जिसकी लम्बाई ६-१० इंच तक होती है और रंगत बहुत स्याह। कहा जाता है कि यह बिच्छू यदि सांप को काट ले, तो वह भी इसके विष से मर जायगा।

सामान्य बिच्छू मटियाले रंग का होता है। उसके मुंह के सामने दो मजबूत और शक्तिशाली अंग शिकंजे की शक्ल के नजर आते हैं, जिन्हें वह सदा ऊपर और सामने भाले की तरह ताने रखता है। ये दोनों अंग झींगा मछली के पंजों से बहुत सीमा तक मिलते-जुलते हैं। बिच्छू का शरीर दो भागों में विभाजित होता है। पहले भाग को उदर का अगला भाग और दूसरे भाग को उदर का पिछला भाग कहते हैं। उसके शरीर की लम्बाई २-६ इंच तक होती है। आकार और लम्बाई की ओर से बिच्छू की हर किस्म में पर्याप्त अन्तर होता है। कई किस्में १३ मिली-ग्राम, (साढ़े तीन इंच) और कुछ १७५ मिलीग्राम (लगभग सात इंच तक) होती हैं। मध्य अमरीका में पाये जाने वाले बिच्छू (९५ मिलीग्राम) की लम्बाई पौने चार इंच होती है। अफ्रीका और दक्षिणी अमरीका में दस इंच की लम्बाई वाले बिच्छू भी देखने में आये हैं।

विष का भंडार दुम के अन्तिम भाग में

उदर का अगला भाग उसका सिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जुड़ा हुआ भाग सीना होता है जिसमें सात वृताकार भाग होते हैं। उदर का पिछला भाग वृत्ताकार टुकड़ों में बंटा हुआ और दुबला-पतला होता है। उदर के पिछले भाग में उसकी दुम होती है, जिसके अन्तिम सिरे पर एक छोटी-सी विष की थैली होती है। उस थैली के मुंह पर एक सख्त झुकावदार और नुकीला कांटा होता है, यही डंक है। इसका झुकाव इस प्रकार का होता है कि जब तक बिच्छू अपने उदर के पिछले भाग को ऊपर न उठाये, डंक काम नहीं देगा। डंक मारने के लिए उसे अपने शरीर के पिछले भाग को ऊपर उठाकर आगे फेंकना पड़ता है। उसके डंक में एक छोटा-सा सूराख होता है जिसके द्वारा वह अपने शिकार के शरीर में विष को प्रविष्ट कर देता है। विष का भंडार दुम के अन्तिम भाग में एकत्र होता है। उसके गलफड़ों के ढकने के पीछे कंघियों का एक जोड़ा होता है। यह अंग बिच्छू के सिवा किसी अन्य जीव में नहीं देखा गया। उदर के अगले भाग में २-५ और कई परिस्थितियों में ८ आंखें होती हैं। उसका मुंह मेदे की ओर, अगले और पिछले होंठों के बीच होता है। उसके मुंह के सामने जो दो अंग शिकंजे के रूप में होते हैं, उनके द्वारा वह अपना भोजन ढूंढ़ता है।

बिच्छू की आठ टांगें होती हैं। टांगों के पहले चार जोड़े प्लेटों के रूप में होते हैं। जब बिच्छू कुछ खाना चाहता है, तो सबसे पहले अपने शिकार को शिकंजे रूपी अंगों से मजबूती से जकड़ लेता है। फिर उसे मारना शुरू कर देता है और उसे अपने खोल के नीचे लेकर खूब जोर से रगड़ता है, यहां तक कि वह शिकार दुर्बल हो जाता है। उसके बाद बिच्छू शिकार के शरीर में जख्म पैदा करता है और फिर रासायनिक प्रक्रिया पैदा करने वाले प्रोटीन प्रविष्ट करता है। इन प्रोटीनों के प्रभाव से शिकार का शरीर बिलकुल द्रव्यावस्था में बदल जाता है। उसके बाद बिच्छू अपने गले से हवा निकालता है जो उस द्रव्य को खुश्क और ठोस बना देती है। उसके बाद वह उसे खा जाता है। इस सम्बन्ध में सबसे रोचक बात यह है कि बिच्छू का गला पम्प अर्थात हवा खारिज करने और छलनी (अर्थात साफ करने) के काम भी आता है। इस छलनी के द्वारा वह शिकार के उस प्रत्येक भाग को पेट में प्रवेश करने नहीं देता जो उसकी पाचन व्यवस्था में खराबी पैदा करने का कारण हो। हड्डियों के सिवा बिच्छू अपने शिकार का सारा शरीर चट कर जाता है। मेदे में प्रवेश करने के बाद भोजन को कई पड़ावों से गुजरना पड़ता है। सबसे पहले यह भोजन अंतड़ियों में जाता है। इस पड़ाव पर बिच्छू की पाचन-व्यवस्था की ग्रन्थियां और विशेष रगें उसमें रासायनिक प्रक्रिया पैदा करने वाले प्रोटीन शामिल करके भोजन को पाचनीय बना देते हैं। फ़ालतू भोजन विष्ठा के रास्ते जो दुम के अन्त पर डंक से जरा आगे होता है, निकलता रहता है।

भूखे रहने का आदी

छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़े बिच्छू का प्रिय भोजन हैं। चींटियां और घास के नन्हे-मुन्ने कीड़े भी उसका मन-भाता खाना हैं। यह बात मानी हुई है कि बिच्छू भूखे रहने का बहुत आदी है। एक अनुमान के अनुसार बिच्छू एक वर्ष से अधिक समय तक बिना किसी आहार के जिन्दा रह सकता है। जो बिच्छू नमी वाले प्रदेश में रहते हैं उन्हें पानी की अधिक आवश्यकता होती है, पर जंगल में पाये जाने वाले बिच्छू पानी के बिना कई-कई महीनों तक जीवित रह सकते हैं।

प्राय: बिच्छू स्वभाव से बड़ा लजीला,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकान्त-प्रिय, समझौता-प्रेमी और रात को घूमने-फिरने का आदी होता है। दिन के समय विश्रामप्रिय और आलसी बन जाता है। उसकी नेत्र-शक्ति कमजोर पड़ जाती है। शिकार की खोज में वह रात के समय निकलता है। दिन के समय वह अंधेरे और मलीन स्थानों में सिर छुपाकर बैठा रहता है।

यूरोप में कई ऐसे देश हैं जहां मकानों के इर्द-गिर्द चारदीवारी नहीं होती। वहां पर बिच्छू रात को कमरों में प्रवेश कर जाते हैं और छोटी-छोटी दरारों, तकियों के नीचे या जूतों में घुस जाते हैं। वहां के लोग हर समय उनसे भयभीत रहते हैं। कई बार तो वे चारपाई पर लेटे हुए व्यक्ति को डंक मार देते हैं।

तरल और शीत स्थान तो बिच्छू के मनचाहे स्थान हैं। शुष्क ऋतु या ग्रीष्म ऋतु में वे जमीन के अन्दर सूराख करके मौन और शान्त जीवन बिताते हैं तथा बहुत कम देखने में आते हैं। जैसे ही वर्षा ऋतु आरम्भ होती है, वे जमीन की सतह पर प्रकट होने लगते हैं। छोटे-छोटे पत्थरों के नीचे छिपकर शिकार की घात में बैठ जाते हैं।

अत्यन्त सादा सामान्य जीवन

बिच्छू का सामान्य जीवन बड़ा सादा होता है। सभी जातियों में आपसी मेल-जोल के सम्बन्ध बिलकुल नहीं पाये जाते। हर बिच्छू आत्मनिर्भर और स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करता है और दूसरों से मिलते हुए लजाता और झिझकता है। कभी-कभार एक-दूसरे से उनका आमना-सामना हो जाय, तो वे लड़ने लगते हैं। लड़ाई के बाद विजेता अपने पराजित को हड़प जाता है। किन्तु यदि उनमें कुछ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध पाये जाते हों, तो वे अजीब बेढंगेपन से एक-दूसरे को 'हेलो' कहकर हाथ भी मिलाते हैं। हाथ मिलाने के लिए उनके मुंह के आगे लगे हुए शिकंजे के रूप के अंग काम देते हैं। बड़े-बड़े पिंजरों में बहुत से बिच्छू रखे जा सकते हैं, बशर्ते कि उनमें से कोई बिच्छू दूसरे बिच्छू की 'सीमा' में हस्तक्षेप न करे। यदि पिंजरा छोटा हो, तो एक समय में एक ही बिच्छू रखा जा सकता है, नहीं तो एक दूसरे से लड़-भिड़कर समाप्त हो जायेंगे, और वही बिच्छू जीवित बचेगा जो उनमें से अधिक शक्तिशाली होगा। बिच्छुओं के समाज में 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का विधान लागू होता है।

बिच्छू जैसे ही युवावस्था में पहुंचता है, उसका खोल उतरने लगता है। इसे पूर्ण पतन कहा जाता है। यह पूर्ण पतन टांगों, सिर, मुंह और सीना, सारांश यह कि शरीर के सभी भागों पर होता है। बिच्छू के वयस्क होने पर ही उसका लिंग पहचाना जा सकता है। नर बिच्छू की दुम लम्बी और शरीर दुबला-पतला होता है। इसके प्रतिकूल मादा की दुम छोटी और शरीर अपेक्षाकृत स्थूल होता है। नर बिच्छू के मेदे के नीचे दो अंग होते हैं। ये अंग बिच्छू को उलटा करके देखे जाते हैं। सम्भोग के तुरन्त बाद मादा नर पर हमला कर देती है और यदि नर दुम दबाकर भाग न जाये, तो वह उसे हड़प जाती है। सम्भोग के कुछ घंटों के बाद मादा के पेट में छोटे-छोटे अंडे पैदा होने लगते हैं, जिनसे सप्ताह के अन्दर छोटे-छोटे जीवित बच्चे जन्म लेते हैं। उनकी संख्या ३०-६० तक होती है। इन बच्चों में जन्म के समय से ही वे सभी गुण पाये जाते हैं, जो बिच्छू में होते हैं, पर इनका आकार अपने माता-पिता से भिन्न होता है। इस पड़ाव में इन बच्चों के गले में अंडे की जर्दी-जैसा लसदार पदार्थ पाया जाता है जिसके कारण वे न तो खा-पी सकते हैं, और न उन्हें खाने की आवश्यकता होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

70253

बहुत नाजुक और बेबस होते हैं। जन्म के बाद उनकी मां बहुत सावधानी बरतती है और उन्हें अपनी कमर पर एक सप्ताह तक लटकाये फिरती है। उसकी कमर के ऊपर एक थैली-सी बनी होती है जिसमें बच्चे रहते हैं और एक सप्ताह तक वे गले में पड़े हुए रसदार पदार्थ पर गुजारा करते हैं। सरसरी नजर में ये बिच्छू उस थैली में से नजर नहीं आते पर उनकी टांगें और शिकंजे-जैसे अंग देखे जा सकते हैं। उस एक सप्ताह के मध्य में उनकी मां उन्हें कुछ खिलाती-पिलाती है। पहले पूर्ण पतन के साथ ही जो एक सप्ताह के बाद आरम्भ होता है, उनका शरीर एक वयस्क बिच्छू का निकल आता है और उसके बाद वे अपनी मां की पीठ पर से सदा के लिए उतर आते हैं और स्वतन्त्र जीवन जीना आरम्भ कर देते हैं। इस समय वह रसदार पदार्थ समाप्त हो चुका होता है। अब उन्हें भूख अनुभव होती है। वे अपने आहार ढूंढने के लिए मारे-मारे फिरने लगते हैं।

बिच्छू धूप और गरमी से घबराते हैं

काले बिच्छू के डंसने के बाद मनुष्य के अंग ढीले और नीले पड़ जाते हैं और कई बार मौत भी हो जाती है।

बिच्छू से उसका शुद्ध विष विद्युत द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। यह विष पानी या ग्लिसरीन में घुलाया जा सकता है। उत्तरी अफ्रीका के एक बिच्छू के विष में ०-२५ प्रतिशत तक ऐसा पदार्थ होता है जो खुश्क होने पर ठोस बन जाता है। यह ठोस पदार्थ न प्रोटीन से मिलता-जुलता है, न मोम से। यदि इसे आध घंटे तक उबाला जाय तो सभी विषैले कीटाणु नष्ट हो जाते हैं।

बिच्छू के डंस लेने का असर यह होता है कि डंसी हुई जगह पर तेज दर्द होता है और वह जगह बिलकुल सुन्न हो जाती है। कई बार वहां पर जलन भी होती है, और वह जगह पत्थर की तरह कठोर हो जाती है। उसका दर्द 'भंवर' की अवस्था में होता है।

स्थानीय विष वाले बिच्छू का दर्द चौबीस घंटे तक रहता है पर उस जगह की सूजन और जलन दो घंटे में खत्म हो जाती है। इस प्रकार के बिच्छू के डंक से मानवीय जीवन को, बस, इतना ही संकट होता है, जितना एक भिड़ के काट लेने से।

बिच्छू धूप और गरमी से बहुत घबराते हैं और यदि कभी किसी ऐसे डब्बे में उन्हें बन्द कर दिया जाय जिसमें गरमी हो तो ये तुरन्त ही मर जायेंगे। चिल-चिलाती धूप में उसे कुछ मिनट रखने से उसकी मौत हो जाती है। प्रायः यह देखने में आया है कि जब उसे धूप में रखते हैं, तो पहले-पहल वह इधर-उधर भागने का प्रयत्न करेगा, ताकि कहीं कोई शीतल छाया मिल जाय, पर थक-हारकर वह उन्मत्तता से अपने-आप पर डंक

मादा की पीठ पर सवार हर सन्तान मानव-शत्रु है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारने लगता है और सदा-सदा के लिए समाप्त हो जाता है।

यद्यपि बिच्छू मनुष्य और कई जानवरों का शत्रु है पर प्रकृति ने उसके भी बहुत से शत्रु पैदा कर रखे हैं जो उसे मार डालते हैं। मैक्सीको के गरम जंगलों और मध्य अमरीका में चींटियों की सेना की सेना उन पर पिल पड़ती है और क्षण भर में बिच्छू तितर-बितर हो जाते हैं। अफ्रीका के बन्दर उनकी दुम को अलग करके शेष शरीर को मजे लेकर हड़प लेते हैं। अल्जीरिया में कुछ लोग जिन्दा बिच्छू बड़े शौक से खाते हैं। एरीजोना में मुरगी के चूजे अपनी चोंच से बिच्छुओं को मार डालते हैं। काली चींटी उसकी सबसे बड़ी शत्रु है। यद्यपि बिच्छू कभी उसके काबू में नहीं आता पर भूले से यदि वह उसके हत्थे चढ़ जाय, तो फिर उसका बच निकलना कठिन हो जाता है।

कृत्रिम बिच्छू

'कृत्रिम बिच्छू' बनाना हो, तो उसके लिए बहुत ही दिलचस्प और आसान तरीका यह है कि थोड़ी सी गोबर और लस्सी मिलाकर उसे एक बरतन में डाल लें। फिर उस बरतन का मुंह अच्छी तरह बन्द करके गोबर के ढेर में दफ्न कर दें। एक सप्ताह के बाद उस बरतन को निकाल लें। यह बिच्छुओं से भरा होगा।

बिच्छू के विष के इलाज का सबसे अच्छा नुसखा यह है कि कुछ जिन्दा या मुरदा बिच्छुओं को सरसों के तेल में डालकर एक बोतल में बन्द कर रखें और जिस जगह बिच्छू ने काटा हो, वहां पर यह तेल लगा दें। तुरन्त यह महसूस होगा, मानो किसी ने बर्फ की पट्टी लगा दी है। यह प्रक्रिया दोहराने से पीड़ा में सन्तोषजनक कमी हो जायेगी। इसके अलावा नीबू का सत पानी में मिलाकर बिच्छू की काटी हुई जगह पर लगाने से भी काफी फायदा हो जाता है।

इसका सर्वोत्तम इलाज तम्बाकू की राख, द्रव्यावस्था में नौसादर, पिघली हुई चर्बी, नीबू का सत या पोटाशियम परमेंगनेट हैं। इन सभी वस्तुओं में से जो भी उपलब्ध हो, उसे बिच्छू के डंसे हुए स्थान पर लगाने से ठंड पड़ जाती है।

अमोनिया सुंघाने से भी रोगी को पीड़ा में कमी महसूस होती है। बिच्छू के डंसे हुए जख्म से विष निकालने के लिए लोहे की बड़ी-सी चाबी या पिस्तौल की नाली को उस स्थान पर जोर से मलना चाहिये। इससे भी विष की तीव्रता कम हो जाती है।

चिपकने वाले प्लास्टिक

अमरीका में एक ऐसी प्रक्रिया के बारे में प्रयोग किये जा रहे हैं जिससे कुछ किस्म के प्लास्टिकों को चिपकाने वाले पदार्थ का इस्तेमाल करके दूसरे पदार्थों के साथ मजबूती से जोड़ा जा सके। इस प्रक्रिया से यह ज्ञात हुआ है कि चीजें आपस में कैसे जुड़ती हैं।

टेलीफोन और पालिथिलीन-जैसे बहुत से चिकने प्लास्टिक इस नयी प्रक्रिया से चिपकने लायक बनाये जा सकते हैं। इस तरह के प्लास्टिक किसी चीज में मुश्किल से चिपकते हैं। उन्हें किसी भी लेसदार पदार्थ के जरिये किसी दूसरी वस्तु में तब तक ठीक से नहीं चिपकाया जा सकता जब तक कि वे उसके लिए रासायनिक ढंग से तैयार न किये जायें।

यह उल्लेखनीय है कि इस प्रकार की तैयारी से प्लास्टिक के रूप-गुण में अन्तर आ जाता है।

विज्ञान-लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धान

भारत का प्रमुख खाद्यान्न

नरेन्द्र छाबड़ा

धान भारत का मुख्य खाद्यान्न है। भारत की तीन-चौथाई जनसंख्या इस पर निर्भर है। संसार भर में धान की पैदावार में भारत का प्रमुख स्थान है और लगभग ३१६ लाख हेक्टर (७८२·८३ लाख एकड़) भूमि में यह उगाया जाता है, दूसरे शब्दों में यह कि संसार भर की लगभग ३० प्रतिशत पैदावार अकेले इस देश में होती है।

धान हमारे देश की दूसरी प्रमुख फसल है, पहला स्थान गेहूं का है। फिर भी हमारे देश में धान की कमी है, यही कारण है कि हमें चावल दूसरे देशों से मंगवाना पड़ता है। हमारे देश में चावल बहुतायत से खाया जाता है। पश्चिमी बंगाल, मद्रास, केरल, आंध्र प्रदेश, असम, मध्य प्रदेश और बिहार के लोगों का तो यह मुख्य भोजन है। यह उल्लेख्य है कि धान की पैदावार हमारे देश में निरन्तर बढ़ रही है, जैसे गत वर्ष अर्थात् १९६५ में धान की कुल पैदावार ३ करोड़ ८७ लाख टन थी, जब-कि १९५१ में केवल २ करोड़ ६ लाख टन थी। कुल मिलाकर पिछले कई वर्षों में धान की खेती के क्षेत्रफल में १७ प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस समय भारत में एक हेक्टर भूमि में १०७४ किलोग्राम धान की उपज होती है। यह आंकड़ा अनुमानित है।

धान भारत ही नहीं, संसार की अधिकांश जनसंख्या का मुख्य आहार है। लगभग १ अरब १० करोड़ लोग चावल खाकर जीते हैं। संसार भर में लगभग २६६० लाख एकड़ भूमि में धान की खेती होती है और करीब १३०० लाख टन चावल (polished rice) खाने के लिए प्रति वर्ष प्राप्त होता है। धान मुख्यतः एशिया की फसल है—वह भी दक्षिण-पूर्वी एशिया की, और इसकी पैदावार का क्षेत्र भारत-पाकिस्तान से लेकर जापान तक फैला हुआ है। मुख्य देश हैं—भारत, चीन, पाकिस्तान, इंडोनेशिया, थाइलैंड, बर्मा, जापान, ताइवान, मलेशिया, कोरिया। अन्य देश हैं—मिस्र, इटली, स्पेन, अमरीका, इत्यादि। भारत-जैसे एशिया के कई देश धान का घर होते हुए भी चावल की कमी अनुभव करते रहते हैं। परन्तु बर्मा, इंडोचीन और थाइलैंड इतना धान पैदा कर लेते हैं कि वे अपनी जरूरत पूरी करने के बाद उसमें से कुछ निर्यात भी कर लेते हैं। इंडोनेशिया, मलेशिया और ताइवान केवल अपनी जरूरत पूरी कर लेते हैं। परन्तु भारत में धान की उपज आवश्यकता से कम होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धान : एक उष्णकटिबन्धीय (tropical) फसल

धान मुख्य रूप से एक उष्ण-कटिबन्धीय फसल है, पर इसके उगने के लिए अति गरम (high temperature) और तर मौसम (humidity) चाहिये। भारत में यह फसल समुद्र तट के प्रदेशों से लेकर हिमालय पर्वत के ढालों पर ३,००० फुट से ५,००० फुट तक की ऊंचाई पर उगायी जाती है। इस के लिए पर्याप्त जल की आवश्यकता होती है। हमारे देश में लगभग सभी राज्यों में धान उगाया जाता है, परन्तु प्रमुख क्षेत्र आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, महाराष्ट्र, केरल, मध्य प्रदेश, मद्रास, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश और पश्चिमी बंगाल में नदियों की घाटियां आदि हैं। कश्मीर की घाटी में भी अच्छी किस्म का चावल उगाया जाता है। सम्पूर्ण देश में सर्वाधिक पैदावार पश्चिमी बंगाल और उसके बाद मध्य प्रदेश में होती है।

धान मुख्यत: पानी की फसल है। धान के पौधों के उगने और बढ़ने के लिए खेत में पानी भरा रहना जरूरी है। यही कारण है कि अधिकांश फसल मानसून की वर्षा पर निर्भर करती है। जहां वर्ष-भर में ८० इंच से अधिक वर्षा होती है, वहां धान की फसल सर्वोत्तम और भरपूर होती है। पर जिन प्रदेशों में वर्षा ३० इंच से कम होती है, वहां यह फसल सिंचाई पर आश्रित होती है। धान के लिए भारी दुमट (heavy loamy) मिट्टी सर्वोत्तम पायी गयी है। ऐसी मिट्टी में पानी सोखने की शक्ति होती है, जो धान के लिए लाभदायक रहती है। देश के विभिन्न मौसमों स्थानीय तापमान और वर्षा के अनुपात के अनुसार धान की फसल की तीन बुआइयां (sowings) और तीन कटाइयां (harvastings) की जाती हैं। पहली बुआई अप्रैल-जून में और कटाई अगस्त-नवम्बर में की जाती है। दूसरी (शीतकालीन) बुआई जून-अगस्त और कटाई अक्तूबर-जनवरी में और तीसरी (ग्रीष्मकालीन) बुआई नवम्बर-जनवरी में की जाती है। फसल मार्च-अप्रैल में पकती है। धान की फसल प्राय: ९० दिनों से १६० दिनों में पककर तैयार हो जाती है। फिर भी यह अवधि मुख्यत: धान की किस्म और बुआई के तरीकों पर निर्भर करती है।

पानी से भरे खेत में हल चलाकर बीज बोते हैं

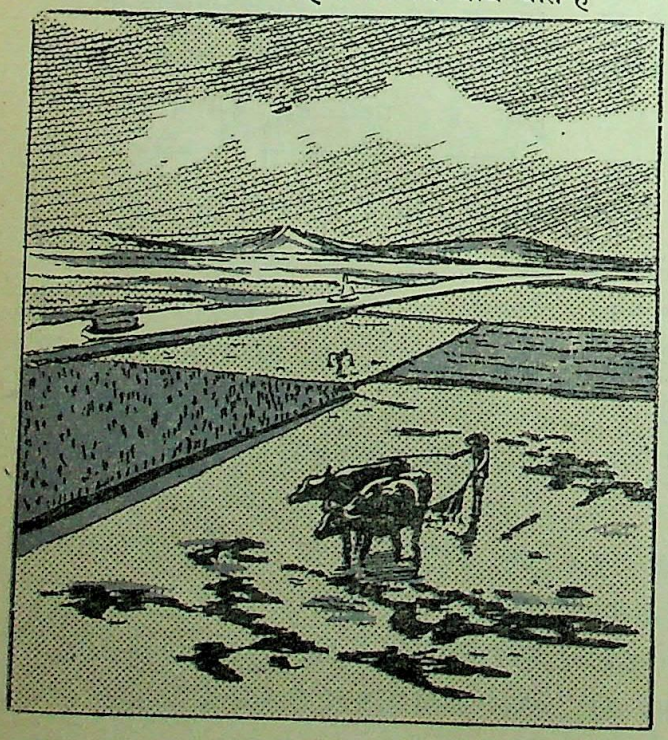

धान बोने के कई तरीके हैं। पानी से भरे खेत में हल चलाकर और बीज छिटककर बोना (broad-casting method) भी एक महत्त्व-पूर्ण तरीका है। एक अन्य तरीके में पहले नर्सरियों में (nurseries) में पौद (seedlings) उगाते हैं, फिर उस पौद को हल चले खेतों में कतारों में रोपा जाता है। इसे रोपाई विधि (transplanting method) कहते हैं। रोपाई के तरीके से उगायी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व के विभिन्न देशों में धान उत्पन्न करने वाले क्षेत्र

यी फसल भरपूर होती है। इसमें पौधों और तारों के बीच ६ × ६ इंच का फासला खा जाता है।

धान की अच्छी पैदावार के लिए इसकी सलों में हरी खादों (green manures) और रासायनिक खादों (fertilizers) का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए नत्र-जनीय खादें (nitrogenous fertilizers & manures) विशेष उपयोगी सिद्ध हुई हैं। एक एकड़ में औसतन ४० पौंड खाद डाली जाती है। केन्द्रीय चावल अनुसन्धानशाला, कटक (उड़ीसा) में परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि अमोनियम सल्फेट के प्रयोग से फसल को पर्याप्त लाभ पहुंचता है। हरी खादें (हरी झाड़ियां, पत्ते, ढेंचा, सैनहैंप आदि से बनी खाद) और अमोनियम सल्फेट के प्रयोग से भूमि को नत्रजन पहुंचता है जो धान की फसल की बढ़वार के लिए अति उपयोगी है। बम्बई और मैसूर के कुछ जिलों में सूखा गोबर, पेड़ों के पत्ते, शाखाएं, झाड़ियां आदि खेत में जलाकर उनकी राख को खाद के रूप में खेतों में डालते हैं। कहीं-कहीं हड्डी का चूरा भी खाद के रूप में डाला जाता है।

पकी फसल की पहचान यह है कि जब धान की बालियां (ears) पक जायें और पौधे जरा हलके हरे हों, ऐसी अवस्था में फसल की कटाई कर लेनी चाहिये। यदि धान के दाने खेत में ही खड़े-खड़े बिलकुल पक जायें, तो उनको हानि पहुंचने की सम्भावना रहती है। धान की फसल दातृओं (sickles) से काटी जाती है। फिर तीन-चार दिन तक खेत में ही सुखायी जाती है। इसके बाद एक-दो सप्ताह तक गहाई के स्थान पर पड़ी रहने दी जाती है, फिर गट्ठों को लकड़ी के फट्ठों पर फटकारा जाता है या बैलों के पैरों के नीचे रौंदा जाता है। इस प्रकार गहाई करके चावल के दाने और भूसी अलग कर ली जाती है। इस काम के लिए आजकल बिजली के उपकरणों का प्रयोग होने लगा है। भूसीयुक्त धान को अच्छी तरह सुखाकर पटसन के बोरों में या सुथरी खत्तियों में या कमरों में भर देते हैं। पड़े-पड़े धान की कोटि उत्तम और खुशबूदार हो जाती है। इस तरह प्राप्त चावल स्वादिष्ट होता है। बुआई के लिए भी धान हवाबन्द कमरों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धान की पौध हल-चले खेतों में कतारों में रोपी जाती है

में रखना चाहिये और दो महीने की अवधि के बाद उन्हें धूप में सुखाते रहना चाहिये।

चावल का इतिहास

संसार में उगाये जाने वाले खाद्यान्नों में शायद धान सबसे प्राचीन है। धान भारत ही नहीं, समस्त एशिया की एक प्रमुख खाद्य फसल (food crop) है। भारत में धान की खेती प्राचीनकाल से की जा रही है। इस कथन की पुष्टि में अनेक पुरातत्त्वीन प्रमाण प्रस्तुत किये जाते हैं तथा बहुत से प्राचीन हिन्दू ग्रन्थों, धर्मशास्त्रों और पुरातन काल के संस्कृत साहित्य में इसका उल्लेख मिलता है। विविध ऐतिहासिक स्थानों की खुदाइयों से प्राप्त पुरातत्त्व सामग्री से भी प्रमाणित होता है कि धान का मूलस्थान भारत है, और चीन में भी चावल भारत से ही पहुंचा था। हस्तिनापुर (उत्तर प्रदेश) में की गयी खुदाई में प्राप्त अवशेषों में धान के जले दानों से स्पष्ट हो जाता है कि आज से लगभग २६५०-३००० वर्ष पूर्व चावल की पैदावार भारत में हुई। धान के ये नमूने संसार-भर में सबसे पुराने माने गये हैं।

ऋग्वेद भारतीय संस्कृति का प्राचीनतम ग्रन्थ समझा जाता है। धारणा है कि आज से लगभग ३४६६ वर्ष पूर्व इसकी रचना हुई थी। इसमें भी धान की खेती के सम्बन्ध में अनेक उद्धरण मिलते हैं। वैदिक संस्कृति के अन्तर्गत जन्म, विवाह, मृत्यु आदि अवसरों पर सदियों से धान के प्रयोग की पुरातन परम्परा चली आ रही है।

'शुश्रुतसंहिता' में धान की विभिन्न किस्मों का उल्लेख मिलता है। यह भारत का एक प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रन्थ है। यहां तक कि यूनानियों को भी धान का पता सिकन्दर महान के भारत आक्रमण के बाद हुआ, और यूनानी (greek) लेखकों ने भी इस तथ्य को स्वीकारा है कि भारत ही धान का उत्पत्ति-स्थान है। यह भी सम्भव है कि जो अरबी सौदागर पश्चिमी-तट के मार्ग से भारत आते रहे वे सीधे द्रविड़ लोगों के सम्पर्क में आकर धान की फसल के बारे में जानकारी प्राप्त करके यूनान ले गये। विश्वास किया जाता है कि चीन में धान की खेती २८०० ईसा पूर्व के आसपास होने लगी थी। लेकिन ऊपर दिये गये अनेक प्रमाणों के आधार पर तथा आधुनिक इतिहासकारों और कृषि-विशेषज्ञों की खोज के अनुसार यह कहा जा सकता है कि धान का मूल स्थान भारत ही है।

धान-अनुसन्धान

धान को अंगरेजी में राइस (rice) कहते हैं और इसका वानस्पतिक नाम ओरिजा सतीवा एल (*oryza sativa L*) है। भारत में धान पर सर्वप्रथम वाट (Watt) ने १८९१ में अनुसन्धान कार्य आरम्भ किया था। तब से अब तक इसकी किस्मों, जातियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

species) तथा उत्पादन-वृद्धि के लिए पर्याप्त अनुसन्धान-कार्य हो चुका है। अनेक कृषि अनुसन्धान केन्द्र खोले जा चुके हैं। १९३८ में रामानुजम् तथा १९४० में पाठक ने देश के धान पर विशेष अनुसन्धान कार्य किये। इस तरह पिछले ५०-६० वर्षों में धान-अनुसन्धान के विभिन्न पहलुओं पर पर्याप्त कार्य किया जा चुका है।

इस समय भारत में धान की ६२८ से अधिक किस्में उगायी जाती हैं। इसके अतिरिक्त बहुत-सी नयी और उन्नत किस्मों का भी विकास किया गया है। इस दिशा में केन्द्रीय चावल अनुसन्धानशाला, कटक ने बहुत लाभदायक अनुसन्धान-कार्य किया है तथा राज्यों के कृषि विभागों ने भी धान की पैदावार की वृद्धि में भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद्, नयी दिल्ली के सहयोग से विशेष योगदान दिया है। धान की मुख्य किस्मों के नाम हैं—बासमती, असकटा, बंकुरा, कादो-५६, एच. आर. ८, अम्बेमोहर-१५७, जी ई बी २४, रामज्वाइन, पालमन सफेद-७२ और पतासा आदि। कुछ नयी, उन्नत किस्मों के नाम हैं—ताइयुंग नेटिव-१, ताइनान-३, ताइयुंग-६५ और ए डी टी-२७। ये उपयोगी किस्में खूब पैदावार देती हैं। इनमें ताइयुंग किस्म के परिक्षणों में पाया गया है कि एक एकड़ भूमि में ४,००० पौंड उपज प्राप्त हुई है, जबकि एक अच्छी देसी किस्म से ९०० पौंड प्रति एकड़ से अधिक उपज नहीं मिलती। ये उन्नत किस्में ताइवान से लायी गयी हैं।

भोजन के रूप में चावल

चावल भोजन के रूप में कई तरीकों से खाया जाता है। आम प्रचलित तरीका तो यह है कि चावल को उबालकर खाते हैं या घी, तेल में पकाकर। मटर, गोभी या मांस-मछली के साथ पकाकर इसका पुलाव बनाकर भी खाते हैं। उबले चावलों की मांड (starch) निकालकर और गरम चावलों में रसदार, मसालों वाली सब्जियां, मांस मिलाकर खाते हैं। चावलों का पुलाव पकाकर उसमें किस्म-किस्म के सुगन्धित मसाले तथा सूखे मेवे (काजू, बादाम, किशमिश आदि) भी मिलाकर खाते हैं। चीनी, शक्कर और घी में पकाकर मीठे चावल तो सभी का मन भाता भोजन है। इसे मीठा पुलाव कहते हैं। बड़ी-बड़ी दावतों में मीठे चावल और नमकीन पुलाव जिसमें घी, जीरा, मोटी इलाइची, दालचीनी आदि डालते हैं, विशेष भोजन के रूप में परोसे जाते हैं। दूध में डालकर चावलों की स्वादिष्ट खीर और फिरनी भी बनाते हैं। दाल-चावल मिलाकर बढ़िया खिचड़ी भी बनती है जो घी में छौंक ली जाती है। दक्षिण भारत में पुत्तु, दोसा, इडली, उपमा और आपम चावल के बने विशेष भोजन हैं। वैसे वहां उबालकर भी चावल खाते हैं।

चावल की घटिया किस्मों से विशेष मांड (starch) भी तैयार किया जाता है जो लांड्रियों में धुले कपड़ों को कड़ा करने के काम में आती है। धोबी भी इसका प्रयोग करते हैं। (परन्तु चावल की अधिक खपत के कारण आजकल मांड बहुत कम बनायी जाती है।) व्यापारिक रूप से चावल से मुरमुरे, चिउड़ा, और खील बनायी जाती है, जो बड़े स्वाद से खायी जाती है।

चावल में पोषक तत्त्व

पोषक खनिज तत्त्व भी इसमें पर्याप्त मात्रा में हैं। चावल में प्रोटीन की मात्रा आमतौर पर ५-६ प्रतिशत तक पायी गयी है। इसमें बी-ग्रुप के विटामिन पूरी मात्रा में पाये जाते हैं। हमें अपने दैनिक जीवन में जितनी कैलोरी (calories) और प्रोटीन की आवश्यकता है, सभी अनाजों की अपेक्षा उसका आधे से अधिक भाग चावल से प्राप्त हो सकता है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेत्र की नियन्त्रण-विधि

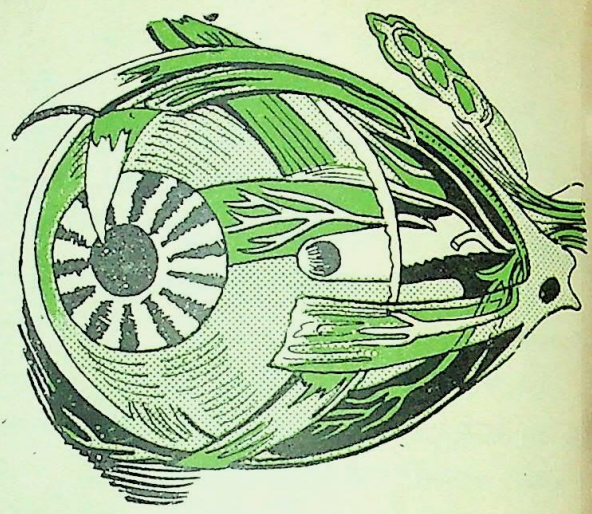

मौजमसिंह राजपूत, एम. एस-सी.

जब कोई जीव-विज्ञानवेत्ता शरीर के किसी अंग की कार्य-विधि को समझाने की कोशिश करता है, तो वह उसे कई भागों में बांट लेता है और उसके विभिन्न भागों के अन्त:सम्बन्धों को ज्ञात करता है। किन्तु इस प्रकार का अध्ययन कुछ अंगों के लिए लाभदायक नहीं है। ये अंग बाह्य निरीक्षण से अच्छी तरह देखे जा सकते हैं और इनकी कार्य-विधि समझी जा सकती है। अध्ययन-कर्ता किसी साधारण उत्तेजना के लिए इसकी प्रतिक्रिया देखता है, और उस उत्तेजना और प्रतिक्रिया के बीच सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा करता है। इस अध्ययन से अंग विशेष की मौलिकता का भी पता चल सकता है, और इसी अध्ययन से जीव-विज्ञानवेत्ता सम्बन्धित अंग की कार्य-विधि का अनुमान लगाते हैं।

निम्नांकित पंक्तियों में यह समझाने का प्रयत्न किया गया है कि बाह्य उत्तेजना से मानव दृष्टि-नियन्त्रण-विधि का किस प्रकार अध्ययन किया जा सकता है। मुख्य रूप से उस विधि को समझाने की चेष्टा की गयी है जिसमें नेत्र वस्तुओं को अपनी दृष्टि-सीमा के भीतर देखता है तथा उन्हें अनुभव करता है। इस सन्दर्भ में हम नेत्र को एक कैमरा नहीं समझेंगे, वरन एक यान्त्रिक संस्थान, एक सर्वोसंस्थान के रूप में इसका अध्ययन करेंगे। यह ज्ञातव्य है कि इंजीनियर सर्वो संस्थान उस नियन्त्रण-विधि को कहते हैं जो एक बदलती हुई भौतिक वस्तु को विशेष प्रकार से नियन्त्रित करती है। उस भौतिक वस्तु के वास्तविक मान की किसी विशिष्ट मान से तुलना करते हैं। इसमें दोनों मानों का अन्तर एक कार्य परिणितक (actuator) को चालित करता है जो बाद में उस बदलती हुई वस्तु को उस तुलनाकारक के साथ बदलती है। तुलनाकारक वस्तु उस यन्त्र का प्रेषक होता है तथा जो वस्तु नियन्त्रित की जाती है वह परिणाम होती है। सर्वोक्रिया का मुख्य सिद्धान्त फीडबैक (Feedback) सिद्धांत है, जो पृ. ४० के चित्र में निर्देशित है।

मानव शरीर : अनेक सर्वोक्रियाओं का योग

सर्वोक्रिया अपनी कार्य विधि को स्वयं नियन्त्रित करती है और प्रेषक में परिवर्तन के लिए या परिणाम में बाह्य परिवर्तन के लिए सुधार करती है। मोटरों का शक्ति-नियन्त्रक पहिया (steering wheel) सर्वोसंस्थान का एक उचित उदाहरण है। प्रेषक संकेत नियन्त्रक पहिये से मिलता है तथा परिणाम सम्मुख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहियों की स्थिति से मिलता है। जब प्रेषक संकेत तथा परिणाम भिन्न होते हैं, तो उनका अन्तरजलीय प्रभाव सम्मुख पहियों को घुमाता है। जब ड्राइवर शक्ति नियन्त्रक पहिये को घुमाता है तो पहिये एक नवीन स्थिति ले लेते हैं। जब कोई गड़बड़ी पहियों को मोड़ देती है, तो सर्वोक्रिया द्वारा वे अपनी स्थिति पर आ जाते हैं।

मानव शरीर भी अनेक सर्वोसंस्थानों का योग है। फीडबैक नियन्त्रण संस्थान शरीर का तापमान नियन्त्रित रखते हैं। वे शरीर के विभिन्न अंगों में रक्त के संचार वेग को बदलते हैं, तथा सांस लेने की क्रिया एक निश्चित सीमा में रखते हैं। अस्थि-जोड़ एक विशेष गुण रखते हैं जो अंगों के मोड़ को नापते हैं और संवेदना को मस्तिष्क की आज्ञा के अनुसार पीछे से संवेदित करते हैं। संवेदना को पीछे से पहुंचाने वाला संस्थान शरीर के बाहर भी पूरा हो जाता है। उदाहरण के तौर पर एक आदमी जो एक वस्तु को उठाना चाहता है, अपनी आंख से वस्तु और हाथ के बीच के अन्तर को देखता है। दृष्टि ज्ञान उन दोनों स्थितियों के बीच के अन्तर को नापता है। अन्तर का आभास होते ही मस्तिष्क-आज्ञा से हाथ उस अन्तर को समाप्त करके वस्तु को उठा लेता है।

एक कठिनाई

किन्तु ये सभी जीवन-संस्थान इतने अधिक विस्तृत रूप से अध्ययन नहीं किये जा सकते हैं। संस्थानों के विश्लेषण के लिए एक प्रेषक बिन्दु होना चाहिये, जहां पर कोई संवेदना दी जा सके तथा एक परिणाम-द्योतक बिन्दु भी होना चाहिये जहां से परिणाम की संवेदनाएं नापी जा सकें। साथ ही यदि इस संस्थान में कई स्थिर फीडबैक जाल हों, तो उस अंग की गतिविधियों को सूक्ष्मतापूर्वक नियन्त्रित किया जा सकता है। इस प्रकार के संस्थानोंमें उलटे तथा सीधे फीडबैक से संस्थान के विश्लेषण में सफलता प्राप्त की जा सकती है। इन्हीं सीमाओं ने संस्थान-विश्लेषण के उपयोग को कुछ निश्चित अंगों के अध्ययन के लिए ही सीमित कर दिया है। उन संस्थानों में जहां संवेदना-सूत्र से गतिज क्रिया की जा सकती है, वहीं इसका उपयोग किया जा सकता है। अनेक वैज्ञानिकों ने फीडबैक जाल-पद्धति से, भुजाओं की नियन्त्रण शक्ति, आंख द्वारा मानसिक गतियों का नियन्त्रण तथा विशेषतया आंख द्वारा आंख ही की गतियों के नियन्त्रण का अध्ययन किया है।

आंख के प्रकाशीय अंग बाह्य वस्तु का बिम्ब रेटिना पर बनाते हैं। प्रकाश-शक्ति नेत्र के एक संज्ञाशील परदे पर पड़ती है, जहां पर वह वात नाड़ी की अन्तर्प्रेरणा में परिवर्तित हो जाती है। रेटिना पर के ग्राहक तन्तु समान रूप से वितरित नहीं होते हैं। शंकुकार तन्तु जो विशेषत: दिन के प्रकाश तथा वर्ण दृष्टि के लिए होते हैं, संख्या में अनेक होते हैं, तथा फोबिया में घने भरे रहते हैं। फोबिया रेटिना में एक गट्ठे की शक्ल में होता है। यह रेटिना का वह अंग है जिसकी दृष्टि सबसे तेज होती है। अंगूठे के नाखून का एक फुट की दूरी से बना बिम्ब उसे पूरी तरह ढंक लेता है। किसी वस्तु को पास से देखने के लिए मनुष्य अपनी आंख को घुमाता है, ताकि वहां उस वस्तु का बिम्ब दोनों आंखों के फोबिया के क्षेत्र में ही बने।

सर्वोक्रिया से तुलना

मांसपेशियों के तीन जोड़े आंख को अक्षिकूप में घुमाते हैं। सर्वोक्रिया के परिणामस्वरूप ही मांसपेशियां इस प्रकार का नियन्त्रण करती हैं कि वस्तु का बिम्ब फोबिया पर ही बनता है। बिम्ब के एक विशेष भाग के अनुसार प्रत्येक मांसपेशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का जोड़ा फोबिया से संवेदनाएं प्राप्त करता है। मांसपेशियां तब नेत्र गेंद को इस प्रकार घुमाती हैं कि यह अन्तर बिलकुल समाप्त हो जाता है। रेटिना पर बिम्ब के विस्थापन की नेत्र-क्रिया एक फीडबैक का कार्य करती है।

फीडबैक नियन्त्रण संस्थान ही सब कुछ है जो वस्तु की गहराई का अनुमान कराता है। उदाहरण के लिए, वस्तुओं के बिम्ब दोनों ओर रेटिना के समवर्ती भागों में बनते हैं। आंख को केन्द्रीभूत करने के कोण पर ठीक साधने के लिए एक संस्थान होता है। यह संस्थान दृष्टि नियन्त्रण के संस्थान से बिलकुल भिन्न है, किन्तु यह भी उन्हीं मांसपेशियों द्वारा नियन्त्रित होता है। यह आवश्यक है कि बिम्ब बिलकुल रेटिना पर ही केन्द्रीभूत हो। चूंकि लेंस तथा रेटिना के बीच की दूरी निश्चित है, इसलिए किरणों को रेटिना पर केन्द्रित करने के लिए लेंस की मोटाई बदली जाती है और उसका नाभ्यान्तर भी। यहां पर भी एक फीडबैक नियन्त्रण संस्थान है जो लेंस की सुविधाजनक स्थिति को सन्तुलित रखता है।

एक विशेष बात

केन्द्रीभूत करने तथा सुविधाजनक स्थिति को सन्तुलित करने के संस्थानों में एक विलक्षण सम्बन्ध है। शायद कोई यह सोच सकता है कि केन्द्रीभूत करने का कोण ही दृष्टि संस्थान को वस्तु की दूरी समझने की सूचनाएं देता है और बाद में लेंस के नाभ्यान्तर को निश्चित करता है। नेत्र की साधक क्रिया लगातार होती है जिससे लेंस का नाभ्यान्तर कम तथा अधिक होता है। दृष्टिगोचर वस्तु की स्थिति के अनुसार इस दिशा में इस प्रकार के परिवर्तन वस्तु के बिम्ब को केन्द्रीभूत करने में सहायक होते हैं, तथा दूसरी दिशा में परिवर्तन बिम्ब की स्थिति को खराब कर देते हैं। इस प्रकार की सूचना नियन्त्रक संस्थान को पुनः प्रेषित की जाती है। कई बार इस प्रकार की क्रिया के बाद जब लेंस की ठीक मोटाई प्राप्त हो जाती है, तब इसके बारे में सूचनाएं केन्द्रीभूत कारक संस्थान को दे दी जाती हैं। दोनों संस्थान बिलकुल भिन्न होते हैं। वास्तव में अपने नियन्त्रण कार्य में भी भिन्न होते हैं। किन्तु दोनों ही एक दूसरे से मिले होते हैं तथा एक संस्थान द्वारा प्राप्त

सर्वोसंस्थान का सिद्धान्त

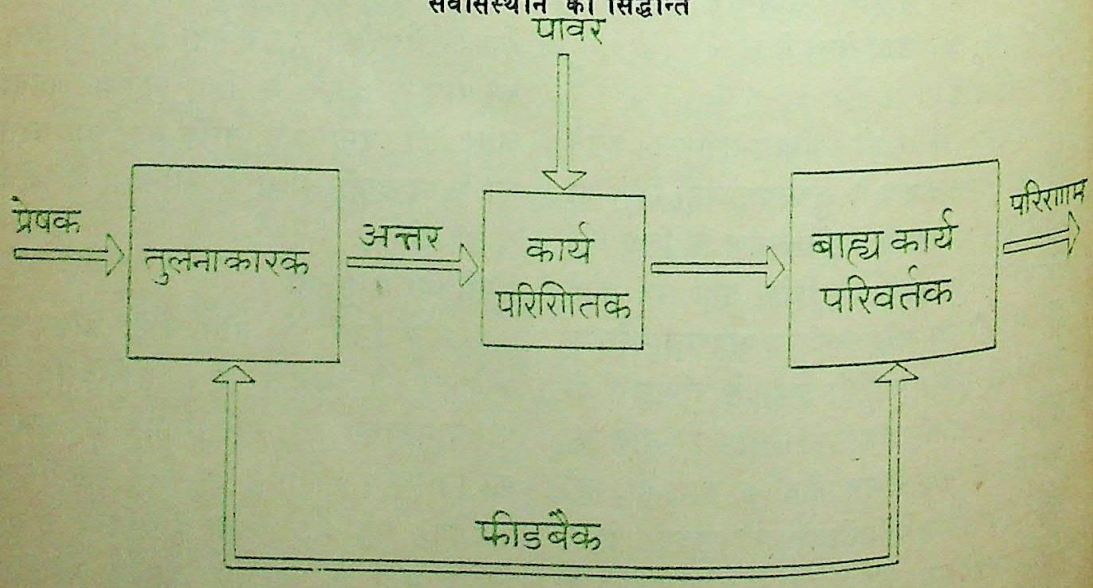

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

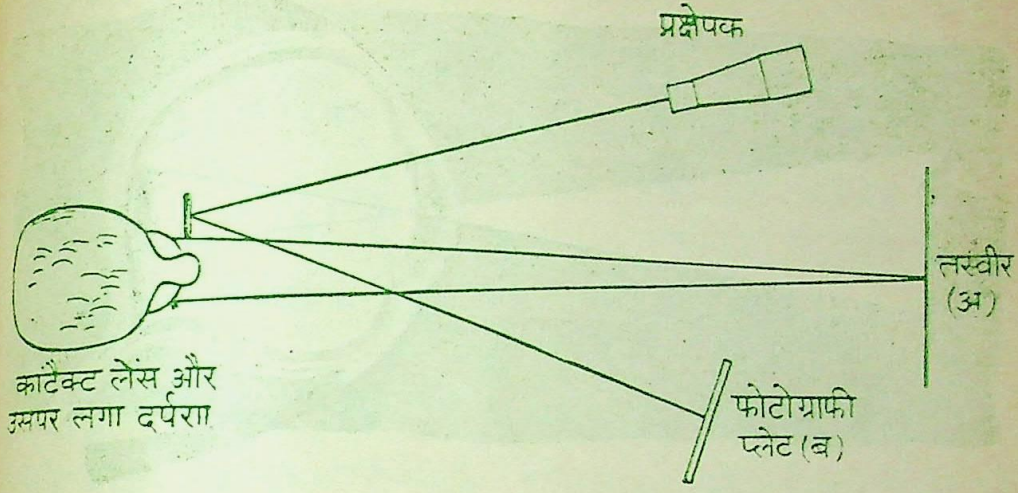

सूचनाएं दूसरे को दे दी जाती हैं।

एक और फीडबैक क्रिया आंख के तारे (pupil) के व्यास को बदलती है। यह रेटिना की औसतन चमक को नापती है तथा आयरिस (iris) की मांसपेशियां रेटिना को क्रियाशील करती हैं। बिम्ब की चमक के घटने-बढ़ने को कम करने के लिए यही क्रिया फिर साधक संस्थान से जुड़ती है, क्योंकि जब लेंस का नाभ्यान्तर बढ़ता है, तब बिम्ब की चमक को स्थिर रखने के लिए तारा आकार में बढ़ता है। अन्त में एक सम नियन्त्रक परिपथ है जो नेत्र की पलकों को बाहर की ओर घुमाता है जिससे दृष्टि ऊपर को उठायी जाती है। इस अवस्था में दृष्टि-परिपथ आपस में जुड़े अनेक फीडबैक संस्थानों का बना होता है। प्रत्येक संस्थान अलग-अलग वस्तुओं को अलग-अलग देखते हैं।

आंख चित्र के ऊपर घूमती है तथा निश्चित स्थानों पर पड़ती है। दर्पण दृष्टि की दिशा के अनुसार घूमता है। इस प्रकार उन्हीं निश्चित स्थानों के चित्र फोटोग्राफी की प्लेट पर बनते हैं। इस भांति बने धब्बों से विभिन्न क्षेत्रों में दृष्टि-ध्यान का अनुमान लगाया जाता है—(अ) तस्वीर, (ब) फोटोग्राफी की प्लेट

नवीन प्रयोग

आंख की बिम्ब स्थापना और ताकने की क्रिया को विस्तारपूर्वक समझने के लिए वैज्ञानिकों ने अनेक यन्त्र तथा विधियां निकाली हैं। आंख की कार्य-प्रणाली को समझने के लिए डेलावेयर ने अपनी आंख पर एक प्लास्टिक का बहुत हलका लीवर लटकाया और उसकी गति से आंख की गति का अध्ययन किया। किन्तु अब कुछ सामान्य विधियां भी ज्ञात हो गयी हैं जिनमें सिर्फ नेत्र के तल पर से टकराकर लौटने वाले प्रकाश के फोटोग्राफ लेने से आंख की गति का अध्ययन किया जा सकता है। एक दूसरी विधि के अन्तर्गत नेत्र गोलक का आवेश नापा जाता है। चूंकि नेत्र गोलक में कुछ आवेश होता है, अतः इसकी धीमी गति को एक विद्युत उग्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

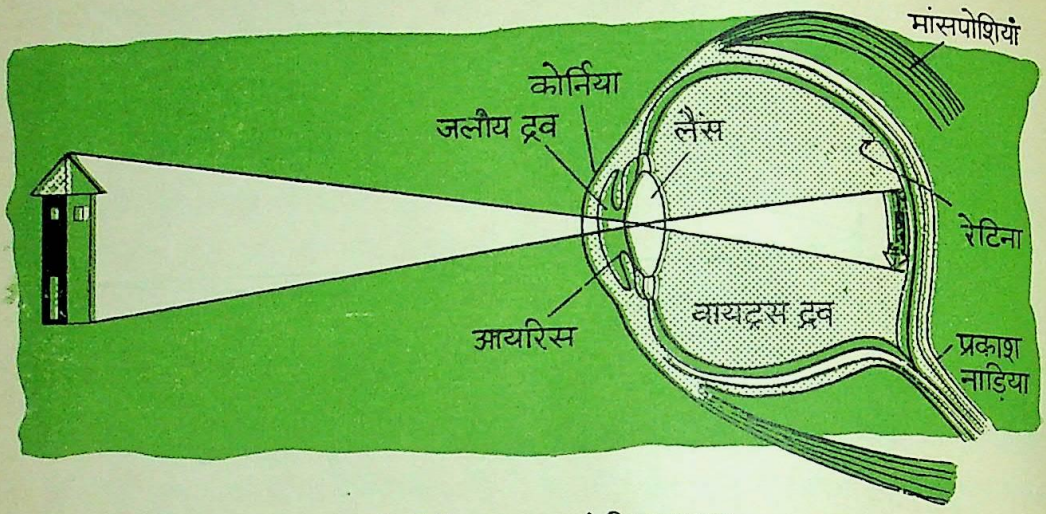

नेत्र के विभिन्न भाग एवं बिम्ब-रचना

(electrode) से नापा जा सकता है। इसे नेत्र कूप के आस-पास रखते हैं। किन्तु कम परेशानी की विधियों में आंख के ऊपर दर्पण लगाया जाता है, जिसके नीचे रबर का एक चूषक प्याला लगा रहता है जिससे दर्पण द्वारा परावर्तित प्रकाश नेत्र गोलक के हिलने-डुलने पर नेत्र के प्रकाश-अंग कीअवस्था बता सके। आधुनिक प्रयोगों में यह दर्पण नेत्र-लेंस से चिपटाकर लगाये गये चश्मे (contact lens) पर लगाया जाता है। इस पर रबर के चूषक प्याले की आवश्यकता नहीं रहती। इस प्रकार के दर्पण पर एक प्रक्षेपक होता है। फोटोग्राफी से यह पता चल जाता है कि आंख किस प्रकार वस्तु को देखती है। आंख चित्र के ऊपर घूमती है, तथा वह निश्चित स्थानों पर पड़ती है। दर्पण दृष्टि की दिशा के अनुसार घूमता है। इस प्रकार उन्हीं निश्चित स्थानों के चित्र फोटोग्राफी की प्लेट पर बनते हैं। इस प्रकार बने धब्बों से विभिन्न क्षेत्रों में दृष्टि-ध्यान का अनुमान लगाया जाता है।

यद्यपि इस प्रकार के प्रयोग अब भी अपूर्ण अवस्था में हैं, किन्तु इन प्रयोगों से मिली सूचनाओं से यह सिद्ध हो रहा है कि नेत्र के सम्बन्ध में जो पुरानी धारणा है (कैमरे से आंख की समता है) नितान्त सही नहीं है। नेत्र-नियन्त्रक संस्थान बिम्ब रचना में काफी महत्त्व रखते हैं। शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में की गयी प्रगति के आधार पर यह तथ्य अब विवाद से दूर होता जा रहा है।

लेसर द्वारा भूकम्प की भविष्यवाणी

अमरीका में भूकम्प-सम्बन्धी पूर्व सूचना पाने की एक नयी प्रणाली की जांच लेसर की मदद से की जा रही है। यह एक ऐसा उपकरण होता है जिससे पेंसिल के बराबर पतली एक शक्तिशाली किरणावलि फेंकी जाती है। यह किरणावलि काफी दूर तक जाकर भी उतनी ही पतली बनी रहती है और उसकी रोशनी सामान्य प्रकाश की भांति बिखरती नहीं।

भूकम्प की पूर्व सूचना देने वाले यन्त्र के रूप में लेसर अपनी किरणावलि को मीलों दूर पर लगे रिफ्लेक्टर पर भेजता है। दूसरे अति संवेदनशील यन्त्र उस लौटती किरणावलि के कक्ष अध्ययन में भू-प्रदेश के हलके से हलके कम्पन को भी अंकित कर लेते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक महान सम्भावना की स्थापना

क्या लुई पाश्चर निर्मूल धारणाओं का शिकार था?

डा. हर्ष प्रियदर्शी

लुई के शत्रुओं को व्यक्तिगत दुःख महज उसकी ख्याति के कारण नहीं था; इसके और भी कारण थे। इनमें प्रमुख कारण था लुई की चुनौती देने की प्रवृत्ति। लुई अपने लेखों और व्याख्यानों के माध्यम से दूसरों की प्रतिभा और व्यक्तित्व की खुली आलोचना करता था। यही कारण था कि उसके मित्र कम थे और शत्रु अधिक। वास्तविक बात यह थी कि लुई को शब्द-युद्ध से प्यार था। वह हर किसी से, किसी भी विषय पर शब्द-युद्ध करने के लिए तत्पर रहता था।

सड़े हुए मक्खन की दुर्गन्ध

अनेक लोगों ने लुई की इस प्रवृत्ति का विरोध किया; कुछ समकालीन वैज्ञानिकों ने सैद्धान्तिक रूप से भी उसका विरोध किया। हालांकि लुई के प्रयोग अद्भुत थे, पर उनमें एक अधूरापन भी था। जब कभी लुई ने अपने दण्डाकार प्राणी-कणों की सहायता से किण्वन द्वारा दही के अम्ल का सृजन करने की चेष्टा की थी, उसे अपनी बोतलों में सड़े हुए मक्खन की दुर्गन्ध प्राप्त हुई थी। सड़े हुए मक्खन की इस दुर्गन्ध ने उसे निराशा की गहराइयों में डुबा दिया था। इसी दुर्गन्ध के कारण उसे अपने उन प्रयोग-पात्रों में जिनमें वह दण्डाकार प्राणी कणों तथा दही के अम्ल की बूंदों की अपेक्षा करता था, कुछ नहीं प्राप्त होता था। लेकिन लुई निराशा से कुण्ठित नहीं हुआ। वह परेशानी में डूबा रहकर भी समस्या की दीवार से अपना सिर तोड़ लेना नहीं जानता था। वह गम्भीरता से समस्या का अध्ययन करता था। वह हमेशा नयी खोज में लगे रहने का आदी था।

लुई के मस्तिष्क में हमेशा यह नया प्रश्न कौंधता रहा कि प्रयोग-पात्रों में कभी-कभी दही के अम्ल की बूंदों की जगह दुर्गन्धमय मक्खन के अम्ल की बूंदें कहां से आ जाती हैं?

एक दिन उसने अपने प्रयोग-पात्र में एक नये, सूक्ष्म प्राणी को देखा। इस नये प्राणी को देखते ही वह सहसा चीख पड़ा: 'ये नये प्राणी कौन हैं? ये तो मेरे दण्डाकार यीष्ट कणों की अपेक्षा आकार में बहुत बड़े हैं। ये नये प्राणी वास्तव में बहुत बड़े हैं। निश्चय ही ये दूसरे प्रकार के जीवाणु हैं।

नये प्राणी कहां से आ गये?

लुई इन अद्भुत प्राणियों को देखता रहा। आतुर दृष्टि से वह उनका सर्वेक्षण करता रहा और मन ही मन सोचता रहा कि मेरे इन प्रयोग-पात्रों में ये नये प्राणी कहां से आ गये? वह इन नये जीवाणुओं को दण्डाकार प्राणियों से विलग करने के अनेक उपाय सोचता रहा। लेकिन जब-जब वह महसूस करता कि दण्डाकार प्राणी कणों वाले प्रयोग पात्रों से उसने इन्हें विलग कर लिया है तो पुनः उन्हीं प्रयोग-पात्रों में उन्हें वह देख लेता।

एक दिन सहसा उसके मन में यह विचार आया कि जिन प्रयोग पात्रों में ये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नूतन जीवाणु उपलब्ध हो जाते हैं, उन्हीं में से सड़े हुए मक्खन की दुर्गन्ध आने लगती है।

लुई ने जीवाणु-जीवन का एक नया परिणाम घोषित किया

अपने इस नये विचार के साथ-साथ उसने जीवाणु-जीवन का एक नया परिणाम घोषित किया कि ये नये जीवाणु एक अन्य प्रकार के खमीर हैं जो चीनी से दुर्गन्धयुक्त मक्खन के अम्ल का सृजन करते हैं। किन्तु इतने पर भी लुई निश्चिन्त नहीं हो पाया था, इसलिए वह अपने प्रयोगों को बार-बार दोहराता रहा। प्रयोगों को दुहराने की इस प्रक्रिया में लुई ने जीवाणु जीवन-सम्बन्धी एक महत्त्वपूर्ण तथ्य का पता लगाया कि वायु इन प्राणियों को मार देती है। अपनी इस उपलब्धि को उसने अकादमी को बताया। उसने यह घोषित किया : 'मैंने एक नये प्रकार के जीवाणुओं का आविष्कार किया है जो वायु के बिना जीवित रहते हैं। बिना वायु के जीवित रहने वाले जीवाणुओं का यह प्रथम उदाहरण है।'

वस्तुतः स्थिति यह नहीं थी। कीटाणु विज्ञान के इतिहास में लुई वह प्रथम व्यक्ति नहीं था जिसने बिना वायु के जीवित रहने वाले जीवाणुओं का पता लगाया था। जीवाणु-विज्ञान के इतिहास में लुई से सैकड़ों वर्ष पूर्व इस प्रकार के जीवाणुओं का पता लिवानहुक और स्पैलेंजनी को लग चुका था। इस घटना के सौ वर्ष पूर्व ही एक दिन इटली के इतिहास में स्पैलेंजनी भी इसी प्रकार बिना वायु के जीवित रहने वाले जीवाणुओं को देखकर चौंक पड़ा था। किन्तु सम्भवतः लुई को अपने इन पूर्वजों का जान नहीं था, नहीं तो वह इस प्रकार की घोषणा कभी नहीं करता। तथ्य जो कुछ भी हों, यह तो सत्य है ही कि लुई की इस घोषणा का तात्कालिक विज्ञान की दुनिया पर गहरा प्रभाव पड़ा। लुई ने एक बार पुनः सारी दुनिया को इस महान तथ्य से अवगत करा दिया कि जीवाणु मानवता के अत्यन्त भयंकर शत्रु हैं। महज इतना ही नहीं, अपनी इस घोषणा के प्रमाण में लुई ने लोगों को यह बताया कि जीवाणु ही गोश्त या अन्य पदार्थों को उठाकर वस्तुओं में परिवर्तित करते हैं। इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि जीवाणु-जीवन के इस विनाशकारी तथ्य का सर्वप्रथम आविष्कार वैज्ञानिक स्वान ने लुई से काफी पूर्व कर लिया था।

लुई एक अजीब व्यक्तित्व था। वह क्या था? कौन था? इतिहास के पृष्ठों पर रहस्यमयता छायी हुई है

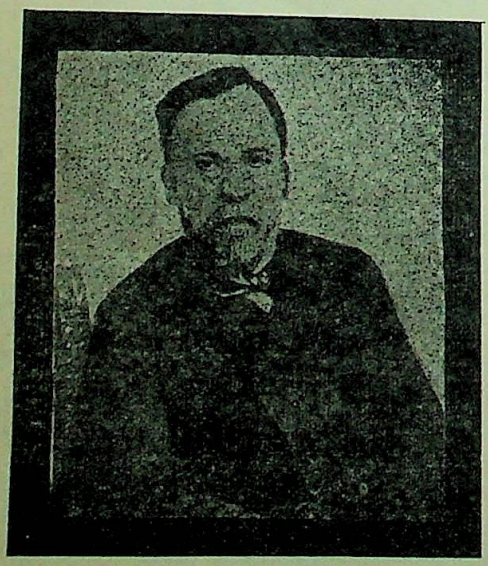

महान तथ्य की घोषणा

अपनी इस उपलब्धि के साथ-साथ लुई ने अकादमी में अपने इस महान तथ्य की घोषणा लैवोजियर महान के एक वाक्य के साथ की। वह वाक्य था : 'जनहित और जन कल्याण के लिए जो कार्य किया जाता है, वह त्याग और पीड़ा से पूर्ण होता है। इन जन-कल्याणकारी कार्यों की दूरदर्शिता केवल उन महान प्रतिभाशाली व्यक्तियों में होती है जो हर बाधा को जीत लेते हैं।' इन्हीं वाक्यों के साथ उस दिन पेरिस की वैज्ञानिक अकादमी में लुई ने एक महान सम्भावना की स्थापना की।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

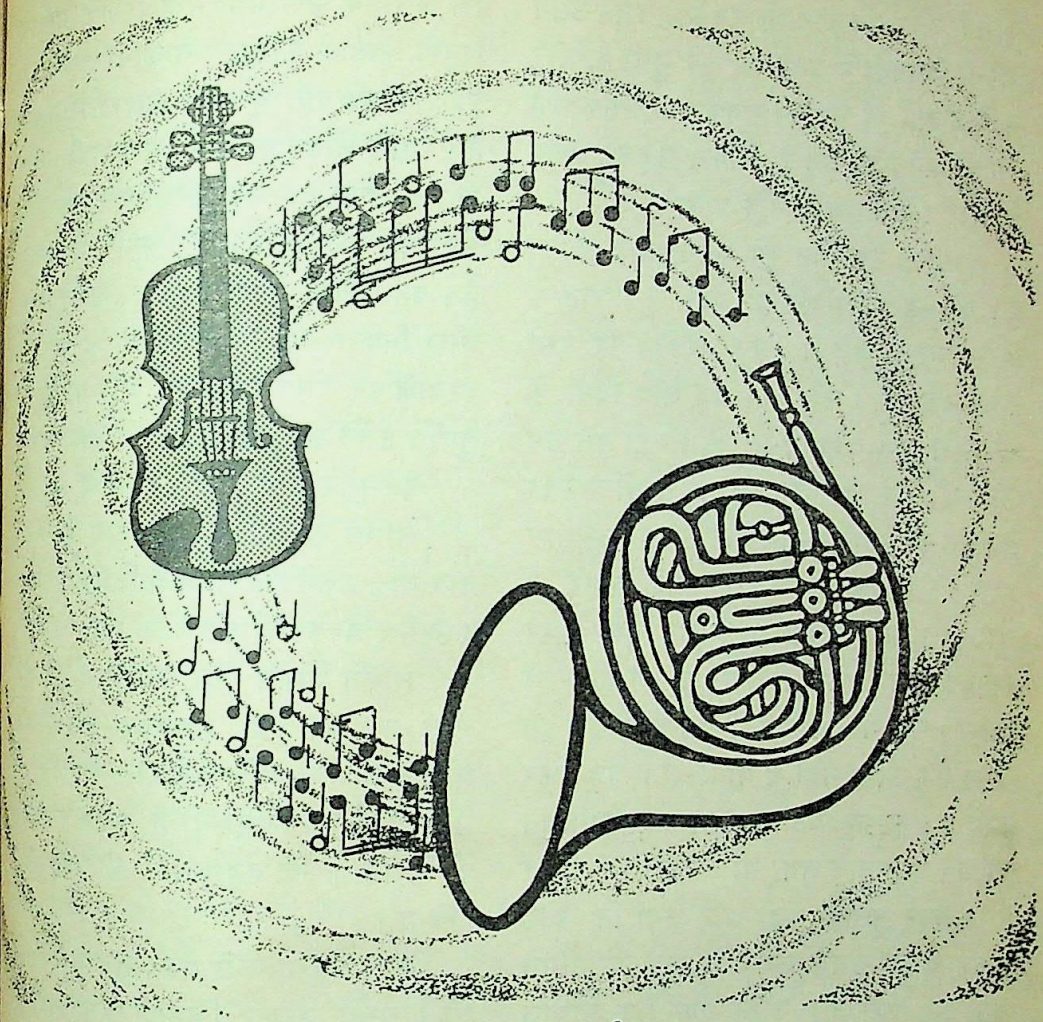

प्राणों का मोह

रामनाथ थडानी

भार्गव ने पीछे की खिड़की खोल दी। आज फिर वही संगीत। कौन हो सकता है? वायलिन और ट्रामबोन की मिलीजुली स्वर-लहरी। वह रोज की तरह विमोहित हो गया। उसने चाहा कि वह खिड़की से हट आये; पलंग पर आकर लेट जाय, लेकिन उसके पैर जैसे रुक-से गये थे। उसने पास ही पड़ी कुर्सी सरका ली और उस पर बैठ गया। यह क्या हो जाता है? वह नहीं जानता कि इन दो साजों को बजाने वाले कौन-सा राग बजाते हैं, फिर भी इस संगीत में एक कशिश है जो उसे अपनी ओर खींच लेती है। तमाम दिन का थका हुआ वह दफ्तर से रात में घर लौटता है, और इस स्वर-लहरी को सुनकर अपनी थकान भुला बैठता है। वह नहीं जानता, संगीत कब तक उसके कानों में इसी तरह पड़ता रहता है और उसकी पलकें अपने-आप बन्द हो जाती हैं।

खिड़की जिधर खुलती है, उधर बहुत बड़ा अहाता है जो रात के अंधेरे में डूबा रहता है। अहाते के उधर, यानी जो सामने चार-पांच मकान हैं, वहीं कहीं इन साजों पर लोग अजीब किस्म की धुन बजाते हैं। भार्गव ने कई बार चाहा कि उधर जाय और यह मालूम करने की कोशिश करे कि वे लोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन हैं और यह कौन-सी धुन बजाते हैं। उसने अपनी जिन्दगी में बहुत-सी धुनें सुनी हैं, और कहीं बजती हुई धुन को सुनकर बता सकता है कि यह कौन-सी धुन है, लेकिन यह धुन अजब है, और इसे वह जान नहीं पाता।

भार्गव उस दिन की घटना याद करता है, तो वह रोमांचित हो जाता है। रात के करीब बारह बजे थे। वह खिड़की पर इसी तरह बैठा था। उस दिन वह और दिनों के मुकाबले कुछ परेशान-सा था। यही धुन उस रोज भी बज रही थी। वह खुद साजों के स्वर के साथ गुनगुनाने लगा। तभी उसे यह अहसास हुआ कि पायल की झंकार उसके कमरे में गूंजी है। वह परेशान-सा होकर इधर-उधर टहलने लगा। फिर भी कमरे में उसे कोई नहीं दिखा। क्या यह भ्रम था ? वह आज तक इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाया है। वह फिर कुर्सी पर आकर बैठ गया था और उसी धुन को खुद गुनगुनाने लगा था। उसे फिर पायल की झंकार सुनायी पड़ी और लगा कि कोई नाचने वाली उसके कमरे में ही है जो सामने नहीं आ रही है। उसने एक बार आवाज लगायी, 'कौन ?' पर कोई उत्तर नहीं मिला।

वह फिर कुर्सी पर आकर बैठ गया। उसके दिमाग में सिर्फ यही बात थी कि यह उसका वहम था, और अपने मन को कड़ा करके इस वहम से वह छुटकारा पा सकता है। उसने सभी भयानक विचार अपने मस्तिष्क से निकाल दिये और फिर उसी धुन में डूब गया।

लेकिन वह डर गया जब सामने दीवार की आलमारी अपने-आप खुल गयी। वह नहीं समझ पा रहा था कि यह क्या हो रहा है। वह उठकर आलमारी के निकट गया पर वहां कोई नहीं था। वह कमरे में चहलकदमी करने लगा। उसे स्पष्टतः भय लग रहा था।

वह आलमारी के पास खड़ा था और खिड़की से आती स्वर-लहरी सुन ही रहा था कि अचानक उसे महसूस हुआ कि यह स्वर-लहरी खिड़की के बाहर से आनी बन्द हो गयी है, और अब वही धुन आलमारी में बज रही है। उसने कांपते हाथों से आलमारी बन्द कर दी। पर फिर वह सहम गया जब उसने पाया कि उसी धुन की गूंज पूरे कमरे में भर गयी है। वह पागल-सा होने लगा। उसके मुंह से चीख निकल गयी, 'बचाओ।' उसने बाहर दरवाजे पर लोगों की दस्तक और फुसफुसाहटें सुनी। उसने उठकर दरवाजा खोल दिया।

ढेर-सारे लोग वहां इकट्ठे थे।

लेकिन उस रात भार्गव सब कुछ छिपा गया था। उसने बहाना बना दिया था कि वह दरअसल चक्कर खाकर गिर गया था।

लेकिन भार्गव फिर सावधान हो गया। आज वह डर नहीं सकता। उसे अभी से आभास हो रहा है कि उस रात-जैसी ही आज भी कोई घटना घट सकती है, पर उसे इस बात का भरोसा है कि वह अपने को बहकने से रोकेगा।

स्वर-लहरी उसी तरह सुनायी पड़ रही थी। उसने उठकर खिड़की बन्द कर दी। लेकिन यह क्या ? वही स्वर-लहरी जैसे कमरे में कैद होकर रह गयी है। बिलकुल वही पिच और बिलकुल वही लय और स्वरों की बिलकुल वही गहरायी। वह समझ नहीं पा रहा है। ऐसा आखिर क्यों है ? क्या वह उस रात की तरह ही पागल हो गया है। लेकिन नहीं, वह आज काफी सख्त है और किसी भी स्थिति को झेल सकता है। वह आज उस रात की तरह बहक नहीं सकता। किसी भी तरह नहीं। ऐसा नहीं हो सकेगा। नहीं, बिलकुल नहीं।

पर वह क्यों तो चीखना चाहता है। पता नहीं क्यों ? क्या वह पागल हो जायेगा ? उसका गला सूख रहा है। यह कैसा परिवर्तन ? वह क्या आज की रात मर जायेगा ? उसने सोचा कि उसे सख्ती से काम लेना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह अभी चीख-चीखकर लोगों को जगा देगा। वह लोगों को पुकारेगा और उनसे कहेगा कि यह क्या हो रहा है ? निश्चय ही कोई ऐसी साजिश इस इलाके में हो रही है जिसके अन्तर्गत उसे मार डालने की योजना बनी है, और वह यदि सावधान नहीं रहा, तो मार डाला जायेगा। पर वह आज रात सावधान रहेगा।

लेकिन दरवाजे पर का परदा क्यों हिल रहा है ? क्या परदे के पीछे कोई छिपा है ? कौन हो सकता है ? यहां इस समय कौन ? वह आवाज देता है, "कौन ? सामने आओ, नहीं तो गोली मार दूंगा।" लेकिन वह अपनी ही मूर्खता पर हंसता है, क्योंकि उसके पास पिस्तौल नहीं है और निरर्थक ही उसने उस सम्भावित व्यक्ति को गोली मार देने की धमकी दी।

और अब भार्गव फर्श पर बैठ गया था। लेकिन उसकी टांगें अकड़ने लगी थीं। वही संगीत-लहरी, फिर वही समां। वही सब कुछ, लेकिन आज की रात क्या हो सकता है ? भार्गव सोचने लगा। उसे भय है, कहीं उसकी मृत्यु न हो जाय। लेकिन ऐसा वह नहीं होने देगा। पर उसके पैर क्यों तो सुन्न पड़ते जा रहे हैं।

लेकिन भार्गव बहुत-सी बातें सोच गया। क्या यह उसका आखिरी समय आ गया है ? यदि ऐसा हुआ तो यह बहुत बुरी बात होगी पर वह इस सबके अतिरिक्त और कुछ सोचता है। यदि यही आखिरी समय है, तो उसने अपनी जिन्दगी में क्या किया ? क्या किया उसने ? और इस तरह की निर्जनता में उसके जीवन का अन्त हो जायेगा ! पर वह खामोश रह जाना ही बेहतर समझता है। उसके दोनों पैर सुन्न हो गये हैं और वह अपनी चेतना को खोता जा रहा है। लेकिन वह अपनी चेतना को खोने नहीं देगा, क्योंकि मरने से पहले वह और बहुत-सी बातें सोच लेना चाहता है। वह यह सोच लेना चाहता है कि वायलिन और ट्रेम्बोन की इस स्वर-लहरी में कौन-सा जादू है जो उसे अपनी ओर खींच ले रहा है और उस जादू के प्रभाव से वह अपने को भूलता जा रहा है। वह क्या इस रहस्य को जानने से पहले ही मर जायेगा ? क्या ऐसा ही होगा।

अब उसकी बाहें सुन्न पड़ती जा रही हैं। उसकी चेतना आधी से अधिक लुप्त हो चुकी है, और शायद उसकी जिन्दगी का दीपक जल्द ही बुझ जायगा। पर यह कैसे हो सकता है ? वह यह सोच लेना चाहता है कि वह क्या है ? दुनिया में उसके आने का प्रयोजन क्या है ? पर शायद यह वह नहीं सोच सकेगा, क्योंकि वह मृत्यु की दिशा में बहुत आगे निकल आया है। और वह अब पीछे लौट नहीं सकता। कैसे वह पीछे लौटे ? कैसे ?

धीरे-धीरे भार्गव की सभी ज्ञानेन्द्रियां सुन्न पड़ गयी हैं और वह निश्चेष्ट-सा फर्श पर लेट गया है। वह अब अन्तिम समय के बिलकुल निकट है। वह कुछ भी नहीं समझ पा रहा है। कुछ भी नहीं। यह सब कैसे हो गया ? कैसे हो रहा है ? वह सिर्फ उस स्वर लहरी को महसूस कर रहा है और परदे की ओर देख रहा है। वह उसी तरह हिल रहा है। वह अब चीख नहीं सकता, वह अब यह नहीं कह सकता कि कौन है ? मैं गोली मार दूंगा। वह यह सब नहीं कर सकता। उसे केवल मर जाना है और वह एक विचित्र मौत मर रहा है। लेकिन क्या कभी उसने इस मौत के बारे में सोचा था ? एक घृणित मौत ! एक निकृष्ट मौत ! और वह यह मौत मरेगा।

क्रमशः स्वर-लहरी तेज होती जा रही है और वह पा रहा है कि यह एक नैसर्गिक संगीत है जिसकी ओर उसके प्राण खिंचे जा रहे हैं। वह अपने प्राणों को रोकना चाहता है कि उधर न खिंचे, पर वह पाता है, ऐसा कर पाना उसके वश की बात नहीं है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोरियम चक्र

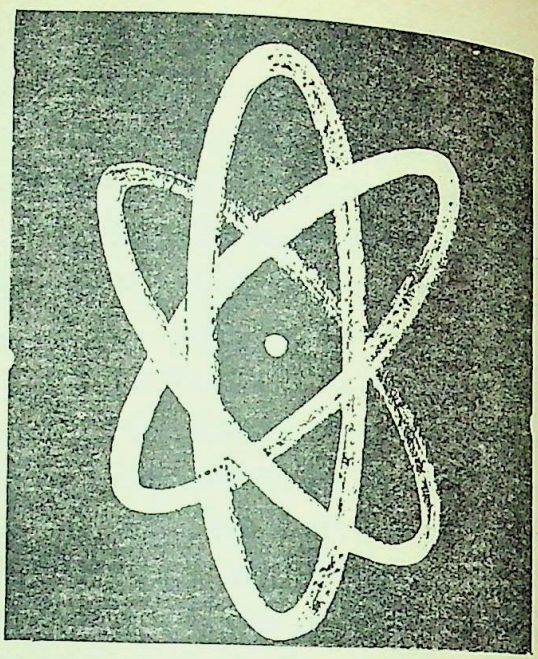

क्या थोरियम यूरेनियम-२३३ में बदला जा सकता है ?

सन्तोषकुमार

थोरियम शब्द 'थोर' शब्द से लिया गया है जो कि नार्वे की भाषा में गर्जन के देवता को कहते हैं। थोरियम तत्त्व की खोज १८२८ में बर्जेलियस ने की थी। इसकी खोज के समय बर्जेलियस को स्वयं इसके अन्दर निहित असंख्य शक्ति का अनुमान नहीं था। नाभिकीय विज्ञान तथा तकनीकी के क्षेत्र में की गयी खोजों के आधार पर यह सिद्ध हो गया है कि इसके अन्दर वे ही गुण निहित हैं जो इसके देवता के हैं, जिनके नाम पर यह बना है। चूंकि 'आकाशीय गर्जन' विद्युत् चमक के साथ जोर की आवाज को कहते हैं, अनुभवी लोगों का अनुमान है कि भविष्य में थोरियम से विशाल विद्युत् शक्ति पैदा की जा सकती है, किन्तु इस स्थिति के आने से पूर्व अनेक समस्याओं का सुलझना आवश्यक है।

भारतीय मोनाजाइट में ९% थोरियम

भारत में मोनाजाइट सबसे अधिक मात्रा में पाया जाता है। भारतीय मोनाजाइट में ९% थोरियम होता है, जो कि विश्व का सबसे बड़ा प्रतिशत (%) है। मोनाजाइट आदिकाल को रवेदार चट्टानों में पाया जाता है। शताब्दियों के बाद मानसूनों तथा बदलते तापमानों से इकट्ठी चट्टानें टूट गयीं तथा बहकर नदियों के किनारों पर जम गयीं। ये खनिज अधिकांशतः मध्य बिहार तथा केरल के तट पर पाया जाता है। अनुमान लगाया जाता है कि लगभग ५० लाख टन थोरियम निकालने योग्य अवस्था में है। प्रत्येक टन थोरियम की सामर्थ्य लगभग ३० लाख टन अच्छी किस्म के कोयले के बराबर होती है। यही कारण है कि भारतवर्ष थोरियम को अपना न्यूक्लियर तत्त्व बना रहा है। जो दो प्राकृतिक तत्त्व न्यूक्लियर ईंधन में परिवर्तित किये जा सकते हैं उनमें से थोरियम एक है। दूसरा तत्त्व यूरेनियम-२३८ है। चूंकि प्राकृतिक यूरेनियम में कुछ भाग विस्फोटनशील यूरेनियम-२३५, और प्राकृतिक थोरियम में ऐसा कोई भी भाग नहीं होता है, इस कारण प्राकृतिक थोरियम न्यूक्लियर क्रियाकारक (nuclear reactor) के ईंधन के रूप में सीधा इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। उपयोग करने से पूर्व उसको विस्फोटनशील तत्त्व में परिणित किया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत में प्राकृतिक यूरेनियम काफी मात्रा में पाया जाता है

थोरियम का विस्फोटनशील यूरेनियम-२३८ में परिवर्तन सिर्फ यूरेनियम-२३५ या प्लूटोनियम से ही सम्भव है। भारत में प्राकृतिक यूरेनियम काफी मात्रा में पाया जाता है। इसमें लगभग ७% विस्फोटनशील यूरेनियम-२३५ होता है। चूंकि यूरेनियम-२३८ और यूरेनियम-२३५ दोनों एक-से रासायनिक पदार्थ हैं, अतः उन दोनों को आपस में एक-दूसरे से अलग करना एक कठिन कार्य है। अलग करने के लिए बड़े लम्बे-चौड़े गैसीय प्रस्युन्दन कक्षों की आवश्यकता है और काफी विद्युत् की मात्रा इन कक्षों को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक होती है। अमरीका में ऐसे तीन गैसीय प्रस्युन्दन कारखाने हैं जिनकी अनुमानतः लागत १६ अरब रुपये है तथा इन्हें चलाने के लिए इतनी विद्युत् की आवश्यकता होती है जितनी पूरे फ्रांस में कल-कारखानों को चलाने के लिए काम आती है।

दूसरा उपाय

जहां तक भारत का सम्बन्ध है, इस प्रकार के गैसीय प्रस्युन्दन कक्ष लगाने का प्रश्न ही व्यर्थ है। इसलिए दूसरा उपाय ही सम्भव है कि वह प्राकृतिक यूरेनियम से चलाये जाने वाले न्यूक्लियर क्रियाकारकों से प्लूटोनियम बनाये और इस प्रकार बने प्लूटोनियम से थोरियम को यूरेनियम-२३३ में बदले। प्लूटोनियम प्राकृतिक अवस्था में नहीं पाया जाता है, वह सिर्फ न्यूक्लियर क्रियाकारक में ही बनता है। शुरू में तो क्रियाकारक द्वारा प्लूटोनियम की पैदावार उसमें लगाये गये यूरेनियम से कम होती है, किन्तु बाद में वह बढ़ जायगी। जितना यूरेनियम-२३३ उसे चलाने के लिए आवश्यक होता है, उससे अधिक कुछ समय बाद पैदा होना शुरू हो जाता है। जब यह स्थिति आ जायगी। तब भारतवर्ष शक्ति के क्षेत्र में स्वावलम्बी हो जायगा।

एक शक्ति-क्रियाकारक

क्रिया-चक्र शुरू करने के लिए यह आवश्यक नहीं था कि प्रथम शक्ति-क्रियाकारक (power reactor) स्थापित किया जाता और उससे प्लूटोनियम प्राप्त किया जाता। इस कार्य के लिए अगस्त १९६३ में अमरीकी सरकार से एक सन्धि की थी जिसके अनुसार अमरीका भारत के प्रथम शक्ति-क्रियाकारक के लिए शुरू में चलाने के लिए शक्ति-ईंधन देगा। यह शक्ति क्रियाकारक १९६८ में तारापुर में कार्य करने लगेगा। इसकी कार्यक्षमता ३८० मेगावाट होगी। क्रियाकारक की राख से प्लूटोनियम अलग करने का कारखाना ट्रौम्बे में भारतीय वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों की सहायता से पहले ही बनाया जा चुका है। इस कारखाने में कोई भी विदेशी सहायता नहीं ली है तथा यह कारखाना एशिया में अपनी प्रकार का पहला कारखाना है।

स्वावलम्बन

इस प्रकार के चक्र को चालू करके ट्राम्बे के वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों ने अपने प्रयत्नों से भारत भूमि पर वे सभी सामग्रियां उपलब्ध कर दी हैं जो थोरियम चक्र से सम्बन्ध रखती हैं। इस क्षेत्र में काफी तरक्की की जा चुकी है। सभी सम्भावित प्रश्नों को सरल किया जा चुका है। मोनाजाइट से फिर से शुरू करने पर पता चलता है कि प्रकृति ने भी इस तत्त्व को अलग करने में काफी योग दिया है। दक्षिणी भारत के काले रेत में ५% मोनाजाइट पाया जाता है। ट्रावनकोर में इस खनिज से मोनाजाइट को अलग किया जाता है। यहां पर ९९% तक की शुद्धता का मोनाजाइट प्राप्त किया जाता है।

मोनाजाइट में ९% थोरियम तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

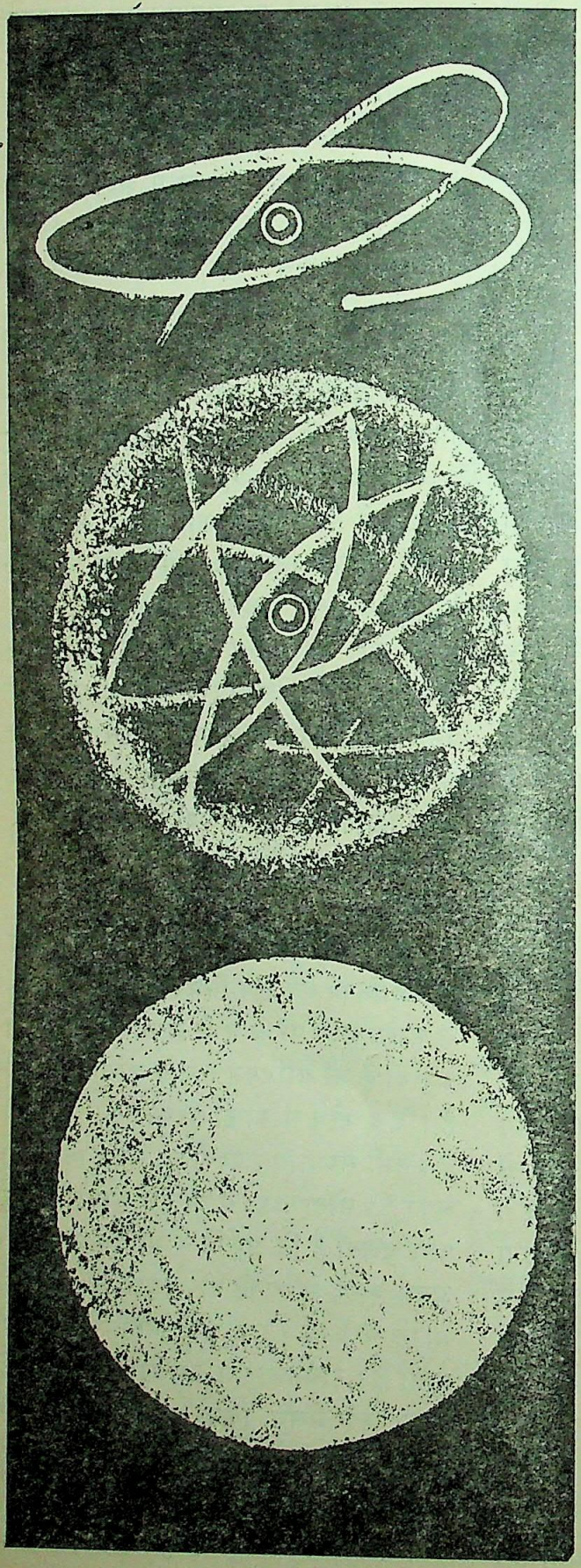

३५% यूरेनियम होता है। इसलिए दूसरा कदम यह होता है कि इस खनिज से इन दोनों तत्त्वों को अलग किया जाय। इन दोनों तत्त्वों को अलग करने का कार्य आलवे (केरल) के कारखाने में होता है और सभी दुष्प्राप्य तत्त्व (rare earth elements) भी इससे अलग किये जाते हैं। सभी कुछ अलग करने पर बची वस्तु थोरियम हाइड्रोआक्साइड होती है। इसी में अधिकांश यूरेनियम होता है।

शोधन क्रिया की तृतीय क्रिया ट्राम्बे स्थित थोरियम कारखाने में ही सम्पन्न की जाती है। यह थोरियम शोधन का कारखाना एशिया में अपने प्रकार का सबसे बड़ा कारखाना है। यहां पर यथोचित क्रियाकारकों की सहायता से थोरियम हाइड्रोक्साइड को थोरियम नाइट्रेट में परिवर्तित किया जाता है। यहीं पर अन्तिम शोधन किया जाता है। यही थोरियम नाइट्रेट पूरे भारतवर्ष की गैस मेटल व्यवसाय की आवश्यकताओं को पूरा करता है। यहां से प्राप्त हुआ यूरेनियम क्लोराइड ट्राम्बे के ही यूरेनियम कारखाने में भेज दिया जाता है जहां पर उसमें से न्यूक्लियर किस्म का यूरेनियम बनाया जाता है।

हाइड्रोजन के परमाणु में इलेक्ट्रान अत्यन्त तीव्रता से चक्कर लगाता है। यही कारण है कि हाइड्रोजन का परमाणु ठोस लगता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोरियम आक्साइड

अन्त में न्यूक्लियर शुद्धता की कुछ थोरियम आक्साइड की मात्रा न्यूक्लियर क्रियाकारकों में बनायी जाती है। 'सायरस' (cirus) क्रियाकारक (ट्राम्बे स्थित कनाडा-इण्डिया क्रियाकारक) में शोधकार्य हेतु तथा यूरेनियम-२३३ में परिवर्तन हेतु थोरियम आक्साइड रखा जाता है। ट्राम्बे संस्थान में ही थोरियम आक्साइड को थोरियम धातु में अवकृत किया जाता है। इस प्रकार के कार्य परमाणु शक्ति संस्थान के धातु-विज्ञान विभाग में होते हैं।

लाभ-हानि

यूरेनियम-२३८ के स्थान पर थोरियम के उपयोग में कुछ लाभ तथा कुछ हानियां हैं। यूरेनियम-२३३ के उपयोग के साथ सबसे बड़ी कमी यह है कि इसके उपयोग के साथ कुछ रेडियोधर्मिता में काम करना पड़ता है। क्रियाकारक से जब थोरियम को यूरेनियम-२३३ में बदलते हैं तब कुछ भाग यूरेनियम-२३२ भी बनता है। यूरेनियम-२३२ से बड़ी तीव्र गामा-किरणें निकलती हैं। चूंकि यूरेनियम-२३२ और यूरेनियम-२३३ दोनों एक से ही तत्त्व हैं, अतः उन्हें अलग करना सरल कार्य नहीं है। इसलिए यूरेनियम २३३ के प्रयोग के लिए या तो यूरेनियम-२३२ को बनने ही न दिया जाय अर्थात क्रियाकारक में से थोरियम को जल्दी निकाल लिया जाय, या क्रिया को दूर से नियन्त्रित किया जाय, ताकि कार्यकर्ता पर कड़ी गामा-किरणें न पड़ सकें। ●

हाईस्कूल और हायर सेकण्डरी कक्षाओं के लिए हमारे उपयोगी प्रकाशन

१. **जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ३·००

२. **वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ३·००

३. **प्रारम्भिक भौतिकी**—दयाप्रसाद खण्डेलवाल — मूल्य : ३·५०

४. **प्रेक्टिकल जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : २·००

५. **प्रेक्टिकल वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : २·००

६. **सामान्य विज्ञान**—मेहरोत्रा, विद्यार्थी, खण्डेलवाल — मूल्य : ६·२५

७. **सरल माध्यमिक जीव-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ५·००
(हायर सेकंडरी की कक्षा ९ और १० के लिए)

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा – ३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

तुमने यह चाहा है कि मैं अपने इस पत्र में अधिक से अधिक स्थान तुम्हारे पत्रों को दिया करूं। भविष्य की बात तो नहीं कह सकती, पर इस बार तुम्हारी बात जरूर मान रही हूं। ये रहे तुम्हारे पत्र—

ज्ञानरंजन (वाराणसी) : अक्तूबर अंक की सभी रचनाएं प्रभावशाली थीं। **'आंवला'** (शशिभूषण शलभ) में एक विशेष पादप के बारे में प्रामाणिक जानकारी मिलती है। **'मकड़े, मकड़ियां और बिच्छू'** (कुमारी प्रमिला) में अरैक्निडा वर्ग के जन्तुओं पर पर्याप्त प्रकाश पड़ा है। **'प्रेरणाएं'** (डा. महेश्वरसिंह सूद) बहुत पसन्द आया। इस मास की वैज्ञानिक कहानी **'वह रहस्यमय जेटयान'** (अनीता सहगल) आकर्षित करती है। भविष्य में भी ऐसी ही कहानियां दिया करें।

प्रमोदकुमार (कलकत्ता) : अक्तूबर अंक की वैज्ञानिक कहानी **'वह रहस्यमय जेटयान'** (अनीता सहगल) बहुत पसन्द आयी। **'क्षय एक घातक रोग'** (रमेशप्रसाद शर्मा) में क्षय के विषय में काफी जानकारी मिलती है। **'ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व'** (अशोककुमार चौबे) सूचना-प्रधान है। **'गोबर की खाद'** (सत्यकुमार) का सामायिक महत्त्व है।

जीवनकुमार (गाजीपुर) : **'लाख का कीड़ा और उसका पालन'** (यमुनाधर पाण्डेय) सूचना-प्रधान है। **'ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व'** (अशोककुमार चौबे) रोचक लगा। अन्य लेखों में **'गोबर की खाद'** (सत्यकुमार) **'प्रेरणाएं'** (डा. महेश्वरसिंह सूद) पठनीय हैं। वैज्ञानिक कहानी **'वह रहस्यमय जेटयान'** (अनीता सहगल) रोचक है।

और अब एक उपयोगी तथा दिलचस्प पत्र—

विनोद (गोरखपुर) : पढ़ने-लिखने के सम्बन्ध में आपके विचार बहुत उपयुक्त लगे। मेरा खयाल है, इससे अनेक सदस्य लाभ उठायेंगे। मेरा एक और मत है। मैंने सुन रखा है कि रुचि को मौलिक रूप में छोड़ देना चाहिये। जबर्दस्ती किसी विषय में रुचि पैदा की जा सकती है, लेकिन क्या इससे बालक का मौलिक विकास रुक नहीं जायेगा ?

···जहां तक बालक के मौलिक विकास का प्रश्न है, यह बात विचारणीय है। परन्तु सीखने की प्रक्रिया में जो सामान्य बातें हैं, उनमें एक यह भी है कि कुछ विषयों में रुचि पैदा करनी पड़ती है। तुम वैज्ञानिक होना या साहित्यकार चाहो, तुम्हें माध्यम के रूप में कोई भाषा तो सीखनी ही पड़ेगी। सबसे पहले यह भी आवश्यक है कि भविष्य में क्या करना है, इसकी रूपरेखा बना ली जाय। समय-समय पर मैं तुम्हें इस बारे में बताती रहूंगी।

सस्नेह तुम्हारी,
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ८० के विजेता

प्रथम पुरस्कार

कृष्णकुमार (१३३१९) मेरठ।

द्वितीय पुरस्कार

रघुवीरसिंह (१३८६९) पटना।

तृतीय पुरस्कार

अनूपकुमार (१२५८४) सागर।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ८२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

महेन्द्र
(स.सं. १८९२०)

विक्रमसिंह
(स.सं. १८९२३)

इन्द्रजीत
(स.सं. १८९३०)

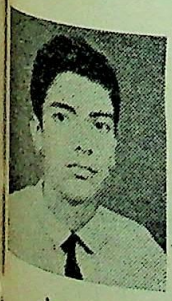

पंकज
(स.सं. १८९४४)

१२६९९ विजयकुमार (१८) टीकमगढ़, १२७०० विजयमोहन (१३) इलाहाबाद, १२७०१ देवेन्द्रकुमार (१७) इलाहाबाद, २ सुशीलकुमार (१५) इलाहाबाद, ३ मुहम्मद शरीफ (१५) रांची, ४ महेन्द्रसिंह (२१) रतलाम, ५ अभय (१७) पटना, ६ संघासिंह (१८) जमशेदपुर, ७ अशोककुमार (१५) मेरठ, ८ श्रीकान्त (१३) कासगंज, ९ बालकृष्ण (१९) सिरोज, १० प्रभाकर (१६) रांची ११ शोभनायक (१६) सारन, १२ अशोककुमार (१८) सागर, १३ सुरेशकुमार (१४) झाड़ोल, १४ संजीवलोचन (१६) मुरादाबाद, १५ अशोककुमार दुबे (१८) इन्दौर, १३ दीनानाथ (१७) पटना, (१७) गौरीशंकर (१४) दिल्ली, १८ अखिलकुमार (१६) अलीगढ़, १९ कु. शैल मालवीय (१९) इटारसी, १० २० ओमप्रकाश (१७) रांची, २१ सुरेशनन्द (१५) रांची, २२ अब्दुल मतीन (१७) आमला, २३ अब्दुल जलील (१९) आमला, २४ हर्षवर्धन (२०) गुरुदासपुर, २५ ओमप्रकाश (१६) अम्बाला, २६ विजयकुमार (१७) बदायूं, २७ रामगोपाल (१६) अहमदाबाद, २८ कुटुवा (१७) हजारीबाग, २९ शरद (१९) जबलपुर, ३० कृष्णगोपाल (१७) कटनी, ३१ भोलाशंकर पाण्डेय (१८) कटनी, ३२ दयाराम (२०) कटनी, ३३ प्रदीपकुमार (१४) रांची, ३४ राजेन्द्रकुमार (१३) जयपुर, ३५ नरेन्द्रकुमार (१३) पटना ३६ विजयकुमार (१७) इलाहाबाद, ३७ तमालकुमार (१२) इलाहाबाद, ३८ सत्यनारायण (१६) इटारसी, ३९ अनीता सहगल (१३) आगरा, ४० मनजीतसिंह (१८) पानीपत, ४१ अंजनीकुमार (१६) रांची, ४२ रमेशचन्द्र जैन (२२) इन्दौर ४३ श्रीकृष्ण (१८) अजमेर, ४४ अशोककुमार (१६) उरई, ४५ जगतमोहन (१६) सहारनपुर, ४६ पी. के. (१९) विदिशा, ४७ गुरमीत (८) इटारसी, ४८ प्रेमस्वरूप (१४) बयाना, ४९ जसवन्तसिंह (१६) नयी दिल्ली, ५० ज्ञानप्रकाश (१७) आगरा, ५१ कु. मंजुला (१८) मेरठ, ५२ कुलदीप (१७) बीकानेर, ५३ लक्ष्मीनारायण डमाम (२३) नादेड, ५४ किरोड़ीमल (२१) सीतापुर, ५५ रामलाल यादव (१८) वाराणसी, ५६ देवेन्द्रसिंह (१३) इटारसी, (५७) अनिलकुमार (१५) इटारसी, ५८ उदयशंकर (१७) पिटोरी ५९ तपनकुमार (१९) पुर्णिया, ६० शरदचन्द्र (१५) इलाहाबाद, ६१ देजेन्द्रसिंह (१७) बिलासपुर, ६२ सुरेन्द्रमोहन (१२) श्रीगंगानगर, ६३ नरेन्द्रमोहन (१६) संगरूर, ६४ रिखबचन्द (१७) सियाणा, ६५ पूर्णिमा (१७) फैजाबाद, ६६ सुरेन्द्रकुमार (२७) सिरसा, ६७ आर. एस. गुप्ता (१६) छिवरामहू, ६८ रविप्रकाश श्रीवास्तव (१७) हरदोई, ६९ नरेन्द्रकुमार (१७) ग्वालियर, ७० अशोककुमार (१७) गुड़गांव, ७१ अशोककुमार (१७) मेरठ कैंटे, ७२ रमेशचन्द्र (१८) उज्जैन, ७३ जैनेन्द्र (१२) मुकुन्दपुर, ७४ रविन्द्रसिंह (१३) झांसी ७५ महेशप्रसाद धनबाद, ७६ ओमप्रकाश सलूजा (१९) पानीपत, (७७) कु. स्नेह (१८) मेरठ, ७८ अजीतकुमार (१५) रांची, ७९ इन्द्रसागर (१९) जुन्नारदेव, ८० सुमनेन्द्र नारायण (१६) नाबतपुर, ८१ राजनकुमार (१४) सहारनपुर, ८२ ओमप्रकाश शर्मा (१५) झांसी, ८३ पुरुषोत्तमनारायण (१८) झांसी, ८४ बसंतकुमार (१८) नरसिंहपुर।

सुशील
(स.सं. १८९५०)

बद्रीनाथ
(स.सं. १८९५२)

राधेमोहन
(स.सं. १८९५८)

चन्द्रप्रकाश
(स.सं. १८९६२)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८२

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : ७ मार्च

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५२ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो—

कृष्णा दीदी, संचालिक, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८२ के उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर ७ मार्च तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८२ के प्रश्न

१. १७२६ में अंगरेज ज्योतिर्विद ब्रैडले ने तारों पर एक परीक्षण करके प्रकाश के वेग का अधिक सही मान निकाला। उसके अनुसार प्रकाश का वेग क्या है ?

२. जीन जुवेन्स कौन था ?

३. विश्व के किस पुस्तकालय की पुस्तकें आज से हजारों वर्ष पूर्व सूरज की रोशनी में सुखाने के बाद भट्ठी में पकायी जाती थीं ?

४. पोलियों के टीके का सामान्य प्रयोग कब से प्रारम्भ हुआ ?

५. यह किसका आविष्कार है कि शिराओं में नन्ही-नन्ही कपाटिकाएं होती हैं ?

६. काक कौन था ?

७. सब पदार्थ किन सूक्ष्म इकाइयों के बने हुए हैं ?

८. तुल्यकालिक कक्षा अन्तरिक्ष में पृथ्वी से कितनी दूरी पर है ?

९. अनुरेखन कार्यों के लिए मुख्यतः किन उपकरणों का प्रयोग किया जाता है ?

१०. अनुसूर्य बिन्दु (Perihelion) किसे कहते हैं ?

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८० के प्रश्नों के उत्तर

१. ज्वार-भाटा सिद्धान्त।

२. सिलुरियन युग (Silurian Era) में।

३. कोलम्बस के।

४. प्रसिद्ध नक्शा-शास्त्री था।

५. हां, इस तरह उस फसल में कुछ समय बाद कीड़े लगने लगते हैं।

६. लगभग एक चौथाई।

७. समुद्र की गहराई में उतरने का एक उपकरण।

८. हां।

९. बृहस्पति (Jupiter)।

१०. बाष्प पम्प (Steam pump)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

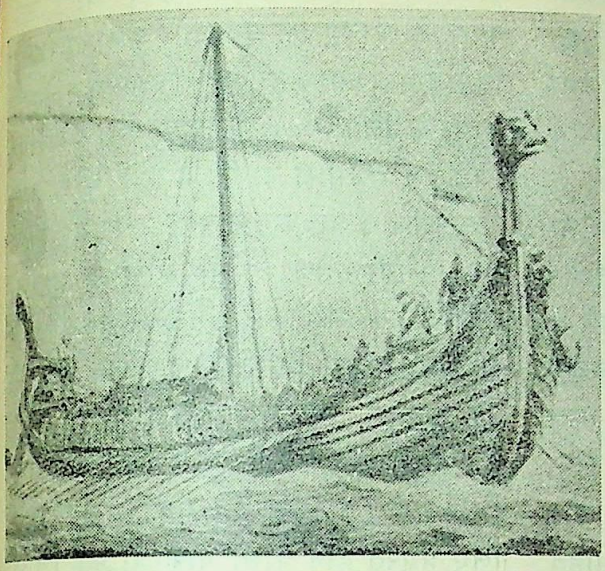

तुम्हारी कलम से

अतीत के पृष्ठों पर भारतीय नाविक

बिजयकुमार जैन (स. सं. ७७८८)

भारत जहाजरानी का आदि गुरु है, इस कथन की पुष्टि के लिए हमें अतीत की गहराइयों में उतरना पड़ेगा तथा प्राचीन काल में लिखे गये ग्रन्थों से संकलित तथ्यों की ओर ध्यान देना होगा क्योंकि भारत के प्राचीन ग्रन्थों में वेदों को बड़ा महत्त्व दिया गया है। ऋग्वेद सबसे पुराना ग्रन्थ है। ऋग्वेद में जलयात्रा का बड़ा ही मनोहर विवरण मिलता है। ऋग्वेद-काल में जलयात्रा का एक मात्र साधन नाव या जहाज था। ऋग्वेद में एक स्थान पर ऋषि अपने इष्टदेव से प्रार्थना करते हुए कहता है, 'हे देव, हमारे आनन्द एवं कल्याण के लिए हमें जहाज द्वारा समुद्र-पार ले चलो।'

ऋषि जहाज द्वारा समुद्र पार क्यों जाना चाहता था, यह प्रश्न हमारे सामने उठ खड़ा हुआ! जबकि इतना बड़ा भारत भू-खण्ड अछूता पड़ा था, तब जल-यात्रा की आवश्यकता क्यों पड़ी? इसका एक मात्र कारण था भारतीय संस्कृति का अन्य देशों में प्रसार एवं प्रचार। संस्कृति के प्रचार एवं प्रसार के लिए उस युग के लोगों ने जलयात्रा की उपयोगिता समझी।

उनके इस निर्णय में दूरदर्शिता झलकती है। उन्होंने विदेश-यात्रा का महत्त्व समझा। अन्य देशों की यात्रा करने तथा अपनी संस्कृति द्वारा उन्हें प्रभावित करने से सांस्कृतिक लाभ के साथ-साथ आर्थिक लाभ का महत्त्व भी भारतीयों को सुविदित था! अतः सुदूर देशों की यात्रा के लिए उन्होंने नये-नये समुद्री मार्ग की खोज की और अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए समुद्र का हृदय नौकाओं और जहाजों द्वारा मथ डाला! कठिनाइयां आयीं, उनका दृढ़ता के साथ सामना किया। उनके सुदृढ़ अध्यवसाय के कारण भारत शताब्दियों तक संसार के व्यापार का आकर्षण केन्द्र बना रहा।

विश एवं उनके विशाल जलयान

सुदूर पूर्व एवं पश्चिमी देशों में भारत के नेतृत्व की धाक जमी रही। व्यापार-विनिमय के लिए विश् (पणि या व्यापारी) विशाल जहाजों में यात्रा करते थे! उनकी यह यात्रा काफी लम्बे समय के लिए हुआ करती थी। लोभी व्यापारी की निन्दा करते हुए ये शब्द वेद में लिखे गये हैं: 'ये (व्यापारी) धन के लालच में अपने द्वारा सम्पूर्ण समुद्र को मथ डालते हैं।' भारतीय व्यापारियों की इन लम्बी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यात्राओं द्वारा यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अवश्य ही भारतीय व्यापारियों का सम्बन्ध चाल्डिया, मिस्र एवं बेबीलोन से रहा होगा, क्योंकि उस समय मिस्र की सभ्यता एवं सुमेरी सभ्यता उन्नत थी।

वैदिक काल एवं महाकाव्य युग में भी भारतीयों द्वारा जलयात्रा का वर्णन मिलता है। महाकाव्य युग की सर्वोत्तम कृति रामायण में जलयात्रा का वर्णन है। उसके किष्किन्धा-कांड में सुग्रीव सीता की खोज करने वाले वानरों को आदेश देते हैं कि वे कोषकार द्वीप, यव द्वीप (जावा) एवं सुवर्ण द्वीप (सुमात्रा) की भी यात्रा करें। उसी आदेश में लोहित सागर जाने का आदेश भी दिया था। उस समय का लोहित सागर आधुनिक लाल सागर का नाम है।

जलयानों द्वारा मिस्र से व्यापार

इस काल में उपयोग में आने वाले जहाज के परिमाण एवं आकार का विवरण बौद्ध साहित्य से उपलब्ध है। ई. पू. ४०० के लगभग सिंहल द्वीप (लंका) का युवराज विजय ६०० व्यक्तियों के साथ एक पोत में यात्राकर बंगाल के सिंहबाहु के यहां आया था। उसके साथ १५,००० व्यक्ति थे। अतः जहाज के आकार का अनुमान लगाया जा सकता है। मौर्य शुंग काल (३०० ई. पू. से १०० ई. पू.) में जलयात्रा की सीमा और विस्तृत हो गयी। मिस्र के शासक ने पूर्वी देशों से व्यापार बढ़ाने के उद्देश्य से स्वेज नहर का मार्ग खोल दिया, जिससे भारत पश्चिमी देशों को माल लाल सागर के मार्ग से निर्यात करने लगा।

गुप्त काल में भारत का नाम विदेशों में बड़ा ही उन्नत था। विदेशी यात्रियों ने भारतीयों के जलयात्रा प्रेम, व्यापार कुशलता एवं समृद्धिका वर्णन अपने यात्रा-विवरणों में किया है। स्ट्रोबो नामक यूनानी यात्री ने अरब और फारस के किनारे से मिस्र की ओर जाते १२० पोतों का जहाजी बेड़ा देखा था। उस काल में भारत से जहाजों एवं नौकाओं का निर्यात भी किया जाता था। निअर्कस ने अपनी यात्रा के लिए २,००० नौकाएं तैयार करायीं जिन पर ८ सहस्र यात्री, सहस्रों घोड़े तथा अन्य सामान लादकर काफी दूर की यात्रा पर गये। मेगस्थनीज ने मौर्यकाल के जहाज-निर्माता के समूह का उल्लेख किया है। प्राचीन काल में निर्मित गुफाओं की दीवारों पर उत्कीर्ण विशाल जहाज प्रमाण-स्वरूप हैं। मदुरा के एक मन्दिर में विशाल जहाज चित्रित है। अजन्ता की गुफा में बिहार के लिए प्रयुक्त होने वाली नौकाओं का चित्रण है।

जहाजी यात्रा के लिए मानसून होना आवश्यक है। यूरोपीय मान्यता के अनुसार मानसून की खोज का श्रेय हिपलास को है। यह बात यूरोपियों के लिए ठीक है परन्तु हिपलास से २०० साल पूर्व अर्थात् १२० ई. पू. में भारतीय नाविक लालसागर की यात्रा पर जाया करते थे। अरब सागर में चलने वाले दक्षिण-पश्चिमी मानसून हजारों साल तक व्यापारिक पोतों का मार्गदर्शन करते रहे। इसी मानसून के कारण एशियाई नाविक अरब सागर तथा लालसागर के मार्ग से भारतीय बन्दरगाह तक की यात्रा करते थे। कुछ तो मानसून के कारण एवं कुछ सभ्यता के विकास के कारण हिन्द महासागर समुद्री यात्रा का आकर्षक केन्द्र बना रहा।

गुप्तकाल के पश्चात् मध्यकाल में भी व्यापार एवं जलयात्रियों के आकर्षण का केन्द्र भारत ही रहा।

लगभग १,००० वर्ष पूर्व परमार नरेश भोज ने युक्ति कल्पतरु नामक ग्रन्थ की रचना करवायी थी। इस ग्रन्थ में जहाज निर्माण के प्रत्येक पहलू का विशद् वर्णन है। जहाज एवं नौका का परिमाण एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

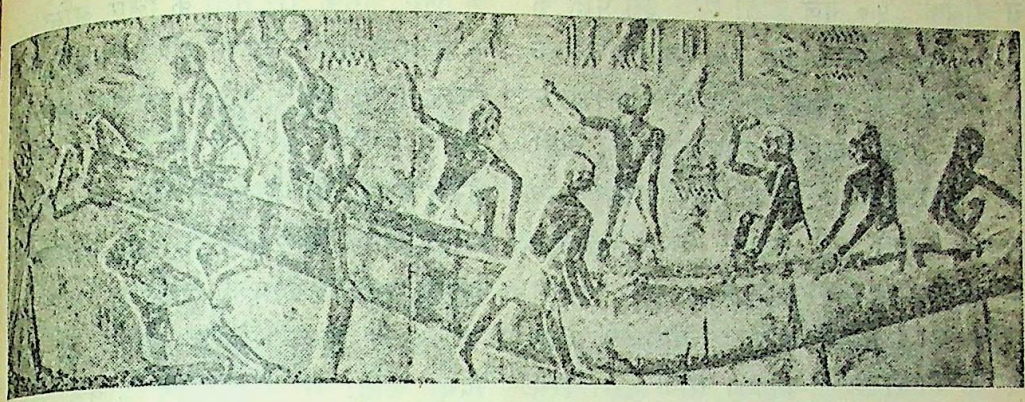

मिस्र के शासक ने पूर्वी देशों से व्यापार बढ़ाने के उद्देश्य से स्वेज नहर का मार्ग खोल दिया। (चित्र) मिस्री नाविक (एक प्राचीन कलाकृति)

आकार किस प्रकार का होना चाहिये, यह भी मिलता है।

कौन-सी लकड़ी हलकी होती है एवं कौन-सी लकड़ी कड़ी होती है आदि अनेक बातों का वर्णन मिलता है जिससे उस समय के भारतीय मस्तिष्क के वैज्ञानिक विकास का पता चलता है तथा महसूस होता है कि उस समय पोतनिर्माण कला शैशाववस्था में नहीं थी। उस समय वह प्रौढ़ता की ओर अग्रसर होती जा रही थी।

अनोखे जलयान

मुगल काल में भी भारतीयों की रुचि परिस्कृत होती रही। मार्कोपोलो, ओडरिक (१३२१), इब्नबतूता (१३२५-४७) तथा अब्दुर्रज्जाक ने अपने-अपने यात्रा विवरण में भारतीयों की व्यापार कुशलता, समृद्धि एवं अतुल जहाजी शक्ति का वर्णन किया है। मार्कोपोलो ने अपने यात्रा-संस्मरण में लिखा है कि इस जहाज में १६० कमरे थे, जिसका उपयोग काली मिर्च ढोने के लिए किया जाता था। इसमें ८०० यात्री यात्रा भी कर सकते थे। भारतीय जहाज मजबूत तथा विशाल होते थे। एक-एक जहाज में ५ मस्तूल एवं ५ पालों की व्यवस्था होती थी। अहमदाबाद, विशालगढ़ एवं गुजरात के नृपतियों के पास जलसेना थी। अतः ये जलसम्राट के नाम से जाने जाते थे। इनका काफी प्रभाव था।

भारत की अतुल जहाजी शक्ति का उपयोग एवं उसका संगठन मराठा काल (१७२५-१८००) के योग्य मराठा शासकों द्वारा किया गया। जहाजी शक्ति का उपयोग व्यापारिक कार्यों के लिए न कर, साम्राज्य की रक्षा के लिए शिवाजी, कान्होजी अंगिरा एवं शम्भूजी द्वारा किया गया। १६वीं शताब्दी में आन्ध्र की जनभाषा में लिखी गयी पुस्तक पाइका खेड़ा [पइका संस्कृत भाषा के शब्द पदाति का अपभ्रंश रूप है; खेड़ा= खजूर के समान नुकीली पत्ती (आन्ध्र की जन भाषा में अर्थ)] में युद्ध में उपयोग आने वाले जहाजों का वर्णन है। उस पुस्तक में जहाज के अनेक आकार-प्रकार एवं विभिन्न नाम दिये गये हैं। इस पुस्तक में १२ अध्याय हैं जिनमें कुछ अध्यायों के नाम निम्नांकित हैं—(१) व्यवस्था, (२) सैनिकों की भरती, (३) साहसिक यात्रा के लिए मंगलकारी दिन, सैनिकों की पोशाक एवं अस्त्र-शस्त्र, (४) झण्डा का महत्त्व, (५) अस्त्र-शस्त्र, (६) किलाबन्दी, (७) समुद्री संग्राम, (८) युद्ध करने वाली सेना।

युद्धपोत

युद्ध पोतों में प्रमुख पोत चातुरी है। गंगाप्रसाद नामक पोत भी प्रमुख है। चातुरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से अधिक ३५० गज होता था। इस पोत के नामक पोत कम से कम ३० गज एवं अधिक ४ खंड होते थे। प्रथम खंड में धौंकनी (Bellows) द्वारा अग्नि प्रज्वलित की जाती थी, तथा पोत में संचित जल राशि द्वारा बाष्प उत्पन्न की जाती थी। चालक पहिये का सम्बन्ध बाष्प से कर दिया जाता था, जिससे पहिया घूमता था और पानी को तेजी से काटता था। इस तरह जहाज में गति (तीव्रता) आ जाती थी और वह पहले की अपेक्षा तेजी से चलने लगता था।

गंगा प्रसाद नामक नाव दो नावों के मेल से बनती थी। एक प्रमुख नाव पर दूसरी नाव उलटी रखी जाती थी। प्रमुख नाव के ४ खंड होते थे जिनमें क्रमशः युद्धोपयोगी शस्त्रों के लिए, कुमुक और नेता के लिए, अन्तिमखंड पीछे आने वाली टुकड़ी की गतिविधियों पर नजर रखने एवं तत्काल कारवाई करने हेतु तैयार सैनिकों के लिए सुरक्षित था। उस समय दुश्मन के पोतों को नष्ट करने के लिए अग्नि लगाने वाले हथगोला का निर्माण एवं प्रयोग समुद्री संग्राम में होता था। शत्रु पोत को फन्दों द्वारा अथाह सागर में डुबा दिया जाता था। इसलिये प्रत्येक पोत के प्रथम खंड में हथगोले एवं फन्दे अवश्य रखे जाते थे।

उपरोक्त तथ्यों द्वारा यह सिद्ध होता है कि भारत जहाजरानी का आदि गुरु है। ३री सदी से (जब से लिखित प्रमाण उपलब्ध हैं) १६वीं सदी तक भारत का समुद्र पर एकछत्र साम्राज्य स्थापित रहा।

यहां से काटिए

विज्ञान क्लब सदस्यता, विज्ञान-लोक

कृष्णा दीदी,

जन्म-दिन _____ आयु _____

नाम _____

घर का पता _____

_____

_____

स्कूल का नाम _____

शिक्षा _____ रुचि _____

यहां से काटिए

यहां से काटिए

यहां से काटिए

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैंक, किसे कहते हैं, डैडी !

जहां, हम अपना रुपया जमा करते हैं और जरुरत पर निकाल लेते हैं।

आप रुपया घर में ही क्यों नहीं रखते ?

रुपया घर में रखना सुरक्षित नहीं है। घर से रुपया चोरी हो सकता है, चूहे काट सकते हैं अथवा दीमक लग सकती है। रुपया अनावश्यक चीजों पर भी खर्च हो सकता है। बैंक में हमारा रुपया हर समय सुरक्षित रहता है। और फिर बैंक हमारे रुपये पर ब्याज भी तो देता है। इससे हमारा धन भी बढ़ता है।

यह तो कमाल की बात है डैडी। आपका कौनसा बैंक है ?

पंजाब नेशनल बैंक, बेटा। यह देश के सबसे पुराने और सबसे बड़े बैंकों में से एक है। देश भर में इसकी ४७५ से अधिक शाखाएं हैं।

पंजाब नेशनल बैंक

PC-PNB-5622 H-1

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Price : 75 paise November 1966 Regd. No. L 1410
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीहारिका

कहानी मासिक

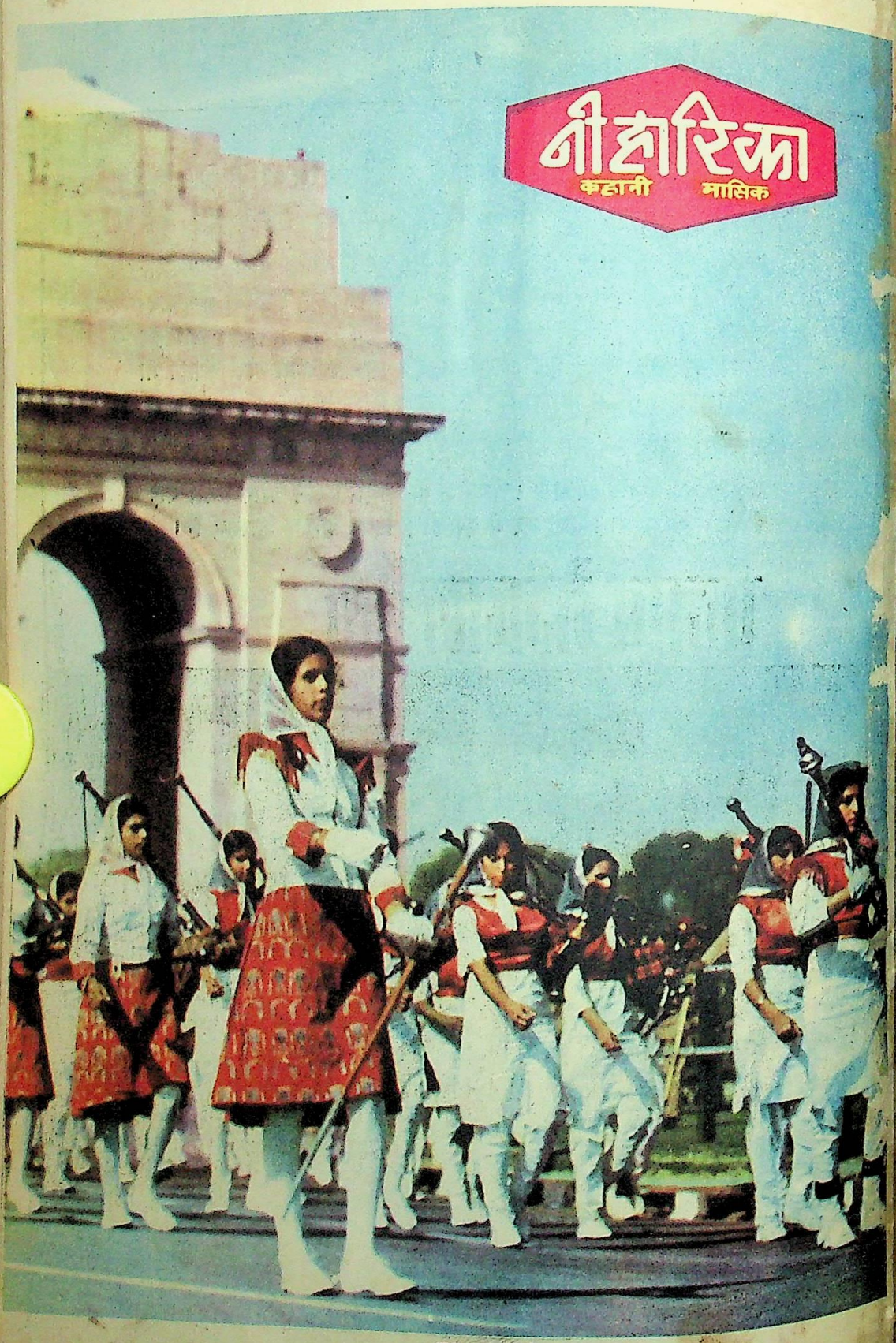

जनवरी अंक

अब सब जगह उपलब्ध है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

अन्तरिक्ष से धरती की खोज ३
—वाल्टर फ्रोहलिच

सौर-यन्त्र ११
—आदित्यपालसिंह आर्य

अनजान दूरी तक फैले वृत्त २१
—निरंजन पाल

एक अद्भुत प्याली २७
—अशोककुमार चौबे

विज्ञान का महत्त्व ३२
—डा. ग्लेन टी. सीबर्ग

भारत के परमाणु क्रियाकारक ३५
—एस. पी. मिश्र

चूहे ४३
—यमुनाधर पाण्डेय

स्वतोजनन ४८
—डा. हर्ष प्रियदर्शी

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां ९
विचित्र संसार ४२
विज्ञान-क्लब ५१
इनाम लो ५४
तुम्हारी कलम से ५५

अपनी बात

आधुनिक विज्ञान के इस युग में व्यक्ति की शिक्षा तब तक अपूर्ण है जब तक वह विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के प्राथमिक ज्ञान तथा उनके ऐतिहासिक विकास से अवगत नहीं है। यह आवश्यक है कि कल के वैज्ञानिकों की पीढ़ी जो आज नयी है, प्रकृति के सिद्धान्तों से पूरी तरह अवगत हो जाय। इन सिद्धान्तों में सापेक्षता का सिद्धान्त प्रमुख है।

सामान्यजन की धारणा है कि सापेक्षता का सिद्धान्त कठिन है, किन्तु यह कठिन इसलिए है कि इसके निष्कर्षों पर सरलता से विश्वास नहीं होता। यदि नयी पीढ़ी अपने विकास की प्रक्रिया के अन्तर्गत सापेक्षता के सिद्धान्त से अवगत होती है, तो यह एक उपयुक्त बात होगी।

सापेक्षता के सिद्धान्त के परिपार्श्व में जो तथ्य एवं निष्कर्ष हैं, वे अत्यन्त रोमांचक हैं और उनकी विशेषता यह है कि अनेक सिद्धान्त उनसे जुड़े हुए हैं, लेकिन उनमें एक विलक्षण असहमति है।

सापेक्षता के सिद्धान्त के ऐतिहासिक विकास का अध्ययन करें, तो पाते हैं कि दिक् और काल हमारे लिए अद्भुत हैं। हम भविष्य में विज्ञान-लोक में इस विषय पर एक सर्वथा नवीन सामग्री देने का प्रयत्न करेंगे जो कुछ नयी मान्यताओं का सन्दर्भ सुलभ करेगी और अविश्वसनीय तथ्यों को प्रकाश में लायेगी।

वर्ष ७ अंक ११

विज्ञान लोक

एक प्रति : ७५ पैसे
वार्षिक : ९ रुपये

सम्पादक : शंकर मेहरा
प्रकाशक : मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा-३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तरिक्ष से धरती की खोज

वाल्टर फ्रोहलिच

इसे भले ही विरोधाभास क्यों न समझा जाय किन्तु यह सत्य है कि आज मनुष्य अन्तरिक्ष से धरती का सूक्ष्म निरीक्षण करने में व्यस्त है। अन्तरिक्ष में सैकड़ों मील की ऊंचाई से खींची गयी तस्वीरों के जरिये वह धरती के उस रूप को अनावृत्त कर रहा है जिसे उसने कभी नहीं देखा है।

ज्यों-ज्यों अन्तरिक्ष में समानव उड़ानों की अवधि बढ़ती जायेगी, अन्तरिक्ष यात्रियों को अपनी कक्षागत तुंगता से इस ग्रह का निरीक्षण करने और इसकी तस्वीरें उतारने के लिए अधिक समय मिलता जायेगा।

अन्तरिक्ष की समानव उड़ानों के परिणामस्वरूप अन्तरिक्ष से खींची गयी पृथ्वी की ये तस्वीरें निश्चय ही बहुत उपयोगी होंगी।

भौमिकीय मानचित्रों को बनाने में कक्षागत उड़ानों के दौरान खींची गयी तस्वीरों का उपयोग शुरू किया जा चुका है।

अन्तरिक्ष से खींची गयी तस्वीरें

इन मानचित्रों की मदद से भूगर्भित खनिज भण्डारों का पता लगाया जा सकता है। इनसे इस प्रकार के ऐसे क्षेत्रों का भी पता लगाये जाने की आशा है जो अभी तक सुदूर और अज्ञात हैं और जहां अभी तक खोजकर्ताओं की टोलियां नहीं पहुंच सकी हैं। इस प्रकार की खोजों से अन्ततः ऐसे क्षेत्रों का लाभप्रद विकास भी होगा।

अन्तरिक्ष से खींची गयी तस्वीरों से वैज्ञानिकों को ज्वालामुखियों और हिम नदियों की स्थिति आंकने में सहायता मिलती है। वे इनके अध्ययन के आधार पर ज्वालामुखियों के फूटने तथा हिम नदियों के धावन के बारे में अपेक्षाकृत सही भविष्यवाणियां कर सकते हैं। अन्तरिक्ष से खीचीं गयी तस्वीरों से जंगलों में लगने वाली आग, बाढ़ से होने वाली क्षति, फसलों और जंगलों की बीमारियों तथा बड़े पैमाने पर कीट रोगों के प्रसार क पता लगाया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

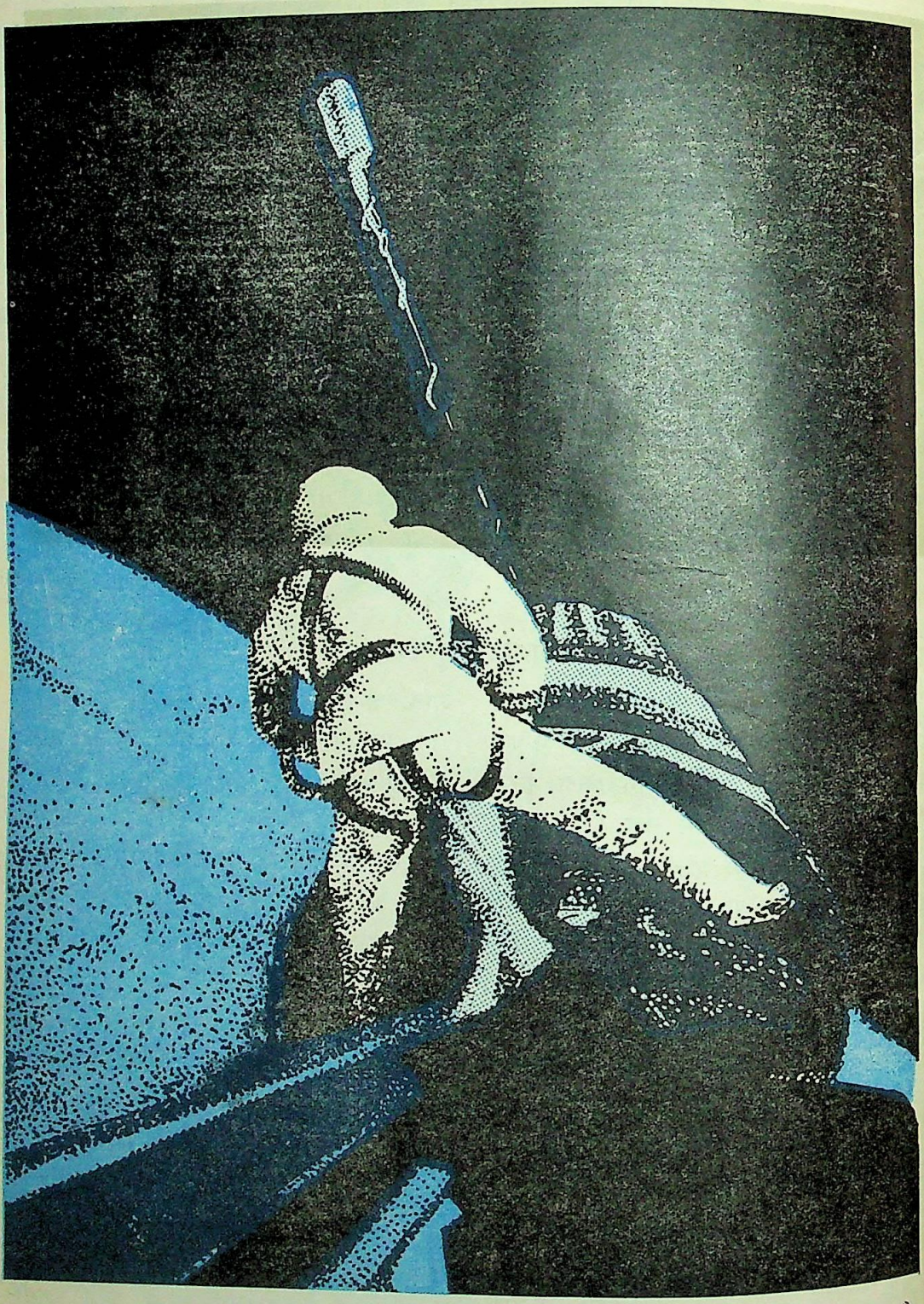

अन्तरिक्ष में स्वतन्त्र रूप से तैरता हुआ अन्तरिक्षयात्री सरलतापूर्वक पृथ्वी का निरीक्षण कर सकता है

सभी महाद्वीपों की तस्वीरें एक साथ खिंचती हैं

कक्षा में घूमते हुए अन्तरिक्षयान की तीव्रगति और उसकी अत्यधिक ऊंचाई के कारण सभी देशों और महाद्वीपों की तस्वीरें लगभग एक साथ ही खिंचती हैं। इसलिए इन तस्वीरों के तुलनात्मक अध्ययन से धरती की

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीव्र गति से बदलने वाली स्थितियों, जैसे रेत के टीलों का स्थानान्तरण, सूखा, सूखती हुई हरियाली, पथ-परिवर्तन करती हुई नदियां आदि के बारे में जानकारी हासिल की जा सकती है।

यह जानकारी बाढ़, सूखा और मनुष्य की गतिविधियों को प्रभावित करने वाले दूसरे अनेक प्राकृतिक तत्त्वों के बारे में पूर्वानुमान घोषित करने में सहायक सिद्ध हो सकती है।

इसी प्रकार एक विशेष प्रविधि द्वारा जिसे हीट फोटोग्राफी कहते हैं, अन्तरिक्ष से खींची गयी तस्वीरें वैज्ञानिकों को भूगर्भ-सम्बन्धी स्थितियों की जानकारी प्रदान करती हैं जिनसे उन्हें खनिज पदार्थों के सम्भावित भण्डारों का पता भी चल सकता है।

अत्यधिक ऊंचाइयों से इस प्रकार के निरीक्षण करने के ये प्रयास नये नहीं हैं। इनका प्रारम्भ बहुत पहले गुब्बारों तथा प्रारम्भिक विमानों के जरिये किया जा चुका है। तो भी आज के अत्यधिक विकसित विमान के ऊपर से भी धरती के अपेक्षाकृत बहुत छोटे क्षेत्र की तस्वीरें ही खींची जा सकती हैं।

उदाहरण के तौर पर १००-२०० मील की ऊंचाई पर जहां अब तक समानव अन्तरिक्ष उड़ानें की गयी हैं, १: २०००००० के अनुपात से लिये गये ९ इंच लम्बे तथा ९ इंच चौड़े चित्र में ८१,००० वर्ग मील क्षेत्र—प्रत्येक ओर से २८४ मील लम्बा क्षेत्र—आ जाता है।

वायुयानों से चित्र लेने में बाधा उपस्थित होती है

इसके विपरीत बहुत ऊंचाई पर उड़ने वाले वायुयान को १: ४०,००० के अनुपात से उतने ही क्षेत्र का चित्र लेने के लिए २,५०० चित्र लेने पड़ेंगे जो ३७·५ फुट में फैलाये जा सकते हैं।

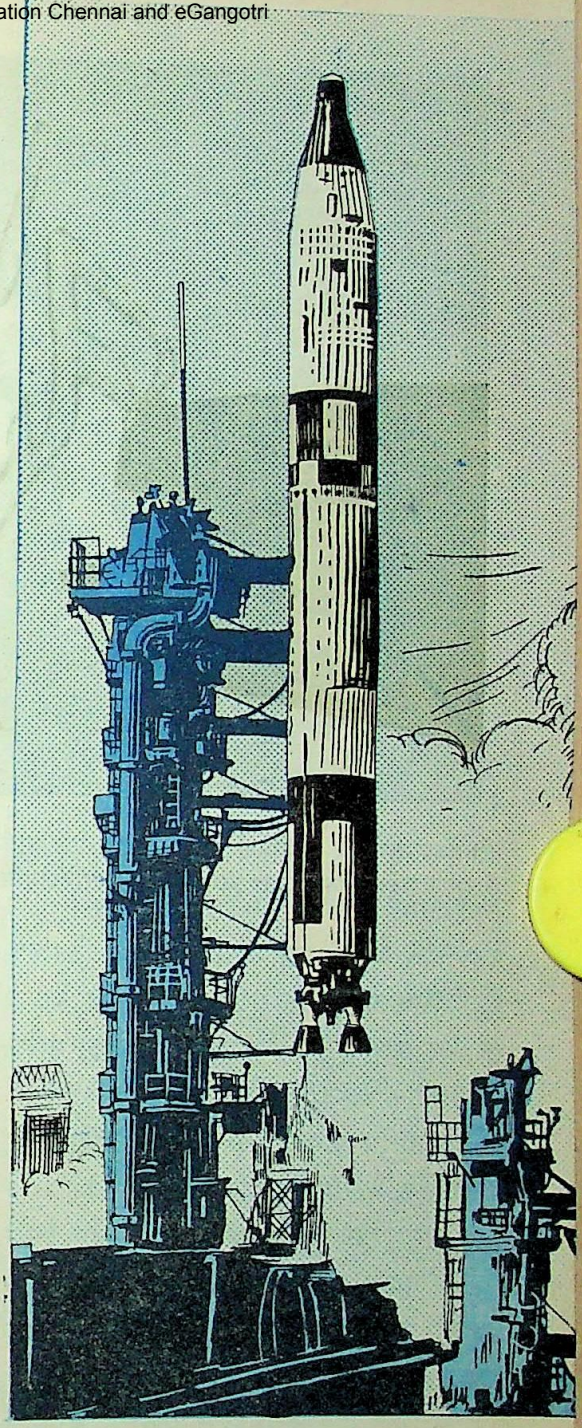

बड़े-बड़े अन्तरिक्षयानों में बैठकर अन्तरिक्षयात्री आज अन्तरिक्ष से धरती का सूक्ष्म निरीक्षण करने में व्यस्त हैं

इस प्रकार चित्रों को जोड़कर महत्त्वपूर्ण भौगोलिक रहस्यों की व्याख्या करना एक प्रकार से असम्भव होगा। इस दशा में उतनी अच्छी तरह से भौगोलिक रहस्यों का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

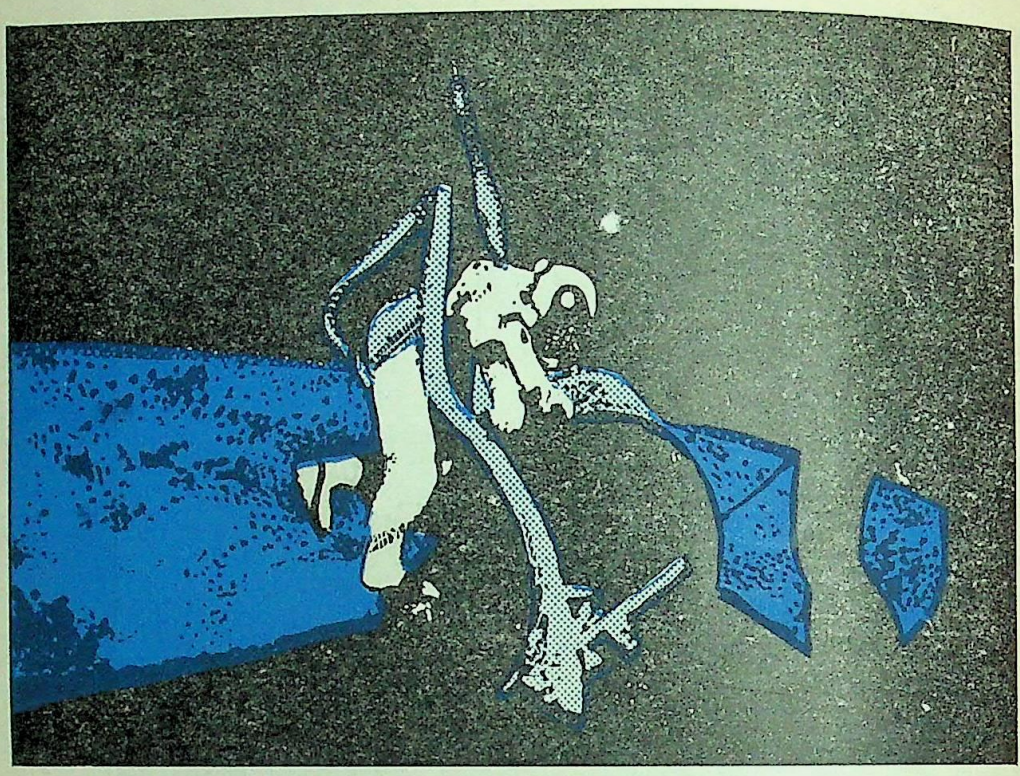

वैज्ञानिक समानव अन्तरिक्ष उड़ान के एक ऐसे कार्यक्रम को तैयार करने की योजना बना रहे हैं जिसका मुख्य उद्देश्य चित्र लेना होगा ताकि अन्तरिक्षयान चालक समूचा समय चित्र लेने में व्यतीत कर सके

पता नहीं चल सकता जैसा कि एक ही चित्र में विविध प्रकार के सूक्ष्म दृश्यों को देखने से पता चलता है। निस्सन्देह अधिक मात्रा में ईंधन न ले जा सकने, मौसम की स्थितियों और राष्ट्रीय सीमाओं के कारण वायुयानों से चित्र लेने में बाधा उपस्थित होती है।

अन्तरिक्ष में कक्षा में घूमते हुए चित्र लेने में एकमात्र महत्त्वपूर्ण बाधा बादल हैं जो बहुधा पृथ्वी के आधे से अधिक भाग पर छा जाते है।

जिस प्रकार वायुमण्डल पृथ्वी से आकाश की ओर देखने वाले पर्यवेक्षकों के आगे एक आवरण प्रस्तुत कर देता है, ठीक उसी प्रकार वह अन्तरिक्ष से पृथ्वी पर देखने वालों के आगे भी एक आवरण प्रस्तुत कर देता है। इन बाधाओं पर आंशिक रूप से फिल्टरों तथा ऐसी प्रक्रियाओं द्वारा काबू पाया जाता है, जैसे वायुमण्डल के कारण उत्पन्न होने वाली बाधा को कम करने के लिए लम्ब रूप में चित्र लेना।

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् विशाल अनुसन्धानात्मक राकेटों पर कैमरे

द्वितीय युद्ध की समाप्ति के कुछ ही समय पश्चात् विशाल अनुसन्धानात्मक राकेटों पर स्थित कैमरों द्वारा अन्तरिक्ष के चित्र लिया जाना प्रारम्भ हो गया था। उसके पश्चात् १९६१ में अमरीका के मौसम-सम्बन्धी कृत्रिम भू-उपग्रहों ने पृथ्वी के ऊपर छाये बादलों के चित्र लिये।

किन्तु इन स्वचालित कृत्रिम भू-उपग्रहों से लिये गये चित्र यद्यपि मौसम-सम्बन्धी विश्लेषण के लिए अत्यन्त लाभदायक हैं, रेडियो द्वारा पृथ्वी पर भेजे जाते हैं। इस प्रकार उनकी बहुत-सी बारीकियां नष्ट हो जाती हैं। उनमें इतने स्पष्ट दृश्य नहीं दिखायी देते हैं जितने स्पष्ट अन्तरिक्षयान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चालकों द्वारा भेजे गये चित्रों से दिखायी देते हैं।

इसके अलावा प्रशिक्षण-प्राप्त अन्तरिक्ष-यान चालक अपने विवेक से काम लेकर और कुशलतापूर्वक अपने कैमरों का प्रयोग करके भू-उपग्रहों द्वारा भेजे जाने वाले चित्रों की अपेक्षा अधिक उपयोगी चित्र पृथ्वी पर ला सकते हैं।

प्रारम्भिक समानव अन्तरिक्ष उड़ानों की अवधि केवल कुछ ही घण्टों की होती थी और अन्तरिक्षयान चालक उड़ान-सम्बन्धी मूल काररवाइयों को सम्पन्न करने में इतना अधिक व्यस्त रहते थे कि उन्हें सावधानी के साथ चित्र लेने के लिए बहुत कम समय मिलता था। फिर भी अमरीका की प्रथम समानव अन्तरिक्ष उड़ान के दौरान, मई १९६३ में मरकरी-९ कार्यक्रम के अन्तर्गत एक व्यक्ति ने ३४ घण्टे में पृथ्वी की २२ परिक्रमा करके अन्तरिक्षयान चालक एल. गोर्डन कूपर ने पृथ्वी के २९ उत्कृष्ट चित्र लिये थे। उन चित्रों से बड़ा लाभ हुआ है और उनसे यह सिद्ध हो गया है कि कूपर एक कुशल शौकिया चित्रकार है।

भावी अन्तरिक्षयात्राओं का प्रमुख उद्देश्य

उसके बाद से दो व्यक्तियों की समस्त अन्तरिक्ष उड़ानों में विभिन्न क्षेत्रों के उत्कृष्ट चित्र लिये गये हैं। उन्हें इस क्रिया से बड़ी सहायता मिली है जिसके अन्तर्गत एक अन्तरिक्षयान चालक अन्तरिक्षयान का संचालन करता है तथा उसे अभीष्ट स्थिति में रखता है, जबकि दूसरा अन्तरिक्षयान चालक चित्र लेता रहता है।

वैज्ञानिक समानव अन्तरिक्ष उड़ान के एक ऐसे कार्यक्रम को तैयार करने की योजना बना रहे हैं जिसका मुख्य उद्देश्य चित्र लेना होगा ताकि अन्तरिक्षयान चालक समूचा समय चित्र लेने में व्यतीत कर सके।

निश्चय ही पृथ्वी का अन्तरिक्ष से सर्वेक्षण भावी अन्तरिक्ष-यात्राओं का प्रमुख उद्देश्य है।

[मुखपृष्ठ की पारदर्शी : अपोलो योजना के अन्तर्गत एक प्रयोगात्मक उड़ान से पूर्व का दृश्य। यू. एस. आई. एस., नयी दिल्ली के सौजन्य से प्रस्तुत।]

नकली चमड़े के वस्त्र

हाल ही में बुडापेस्ट के एक प्रसिद्ध होटल में नकली चमड़े के वस्त्रों की प्रदर्शनी हुई। इस प्रदर्शनी में टोपी, कोट, परिधान, जूते, हैण्डबैग, बच्चों के रंग-बिरंगे कपड़े, युवकों के चुस्त जीन प्रदर्शित हुए। सभी वस्त्र नकली चमड़े के बने हुए थे।

नकली चमड़े के ऐसे बने-बनाये वस्त्र हंगरी की मोडेक्स कम्पनी निर्यात करेगी।

हंगरी में नकली चमड़ा कुछ वर्षों से बन रहा है और उसका काफी मात्रा में निर्यात हो रहा है। पिछले वर्ष लगभग ३० लाख वर्गमीटर चमड़ा २४ देशों को भेजा गया।

तुनीसिया में तेल के कुएं

तुनीसिया की एक रासायनिक तेल कम्पनी ने कसेरिन के निकट एक तेल-स्रोत पा लिया है। इस तेल कम्पनी का फ्रांस की एक तेल कम्पनी से साझा है।

तुनीसिया में यह दूसरा तेल स्रोत पाया गया है। इससे पहले पिछले वर्ष इटली की एक तेल कम्पनी ने तेल-स्रोत खोजा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupil how to write sentences correctly. He learns by doing, and by doing *correctly*.
- Exercises are so arranged that even a slow child is sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The Work Books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I....Price : Re. 0·80
Book II....Price : Re. 1·00
Book III....Price : Re. 1·20

For further enquiries please write to us:

SHRI RAM MEHRA & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA-3

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

सौ रुपये से भी कम लागत में फिल्म प्रोजेक्टर

दिल्ली स्थित राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला में देशी सामानों से एक फिल्म प्रोजेक्टर १०० रुपये से भी कम लागत में तैयार किया गया है। इस प्रोजेक्टर में दो तत्त्वों द्वारा निर्मित एक प्रोजेक्शन लेंस, तीन लेंसों के संयोग से निर्मित एक संघनक तथा एक उन्नतोदर दर्पण है। इन लेंसों के निर्माण में प्रयुक्त क्राउन कांच का निर्माण कलकत्ते में स्थित कांच और सेरामिक अनुसन्धान संस्थान में किया गया है। यह प्रोजेक्टर घरेलू विद्युत शक्ति अथवा एक बैटरी से चलाया जा सकता है। चूंकि प्रोजेक्टर निम्न सामर्थ्य की विद्युत् शक्ति द्वारा चलाया जा सकता है, इसलिए इसमें जटिल संरचना वाले अन्य प्रोजेक्टरों की भांति शीधक व्यवस्था की आवश्यकता नहीं पड़ती। शिक्षा कार्यों के लिए यह प्रोजेक्टर काफी उपयोगी प्रमाणित हुआ है। प्रोजेक्टर का यह डिजाइन व्यावसायिक प्रयोग के लिए उपलब्ध है।

देशी पदार्थों से प्रकाशीय छन्नों का निर्माण

वर्णपट की दृश्य परास ४००-७०० मिली माइक्रान तथा प्रकाश विद्युत कैलोरीमीटर में प्रयोग किये जाने वाले प्रकाशीय छन्नों को अभी तक बाहर से आयात किया जाता रहा है। अब कलकत्ते में स्थित प्रायोगिक चिकित्सा विज्ञान का भारतीय संस्थान में किये गये प्रयोगों के परिणामस्वरूप देशी पदार्थों से ऐसे प्रकाशीय यन्त्रों का निर्माण किया गया है जिनकी कीमत आयात किये गये छन्नों की कीमत के केवल एक चौथाई है। इसके निर्माण के लिए दो चिकनी कांच की प्लेटों के बीच जिलेटिन की एक पतली फिल्म रखी जाती है। विभिन्न प्रकार के अधिकतम तरंग-लम्बाई का प्रेषण प्राप्त करने के लिए विभिन्न रंगों और रासायनिक मिश्रणों का प्रयोग किया जाता है। इस फिल्म की सान्द्रिता एवं मोटाई द्वारा प्रेषण गुणक को नियन्त्रित करता है। इन छन्नों के परीक्षण द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि ये छन्ने आयात किये जाने वाले छन्नों ही के समान हैं। सर्वेक्षण द्वारा यह भी ज्ञात हुआ है कि १२ महीने के बाद भी इन पर फफूंदी आदि का कोई असर नहीं पड़ा।

जल की शुद्धता की जांच

पानी में कई खनिज पदार्थ मिले रहते हैं। इनमें से अनेक मनुष्य के लिए हानिकारक साबित हो सकते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि जंगल में या पहाड़ों पर झरने या सोते का जल पीने से पहले उसकी जांच कर लेनी चाहिये। एक शिकारी, सैनिक या सैलानी के लिए न तो यह सम्भव होता है, और न उपयुक्त ही कि पहले वह जल का नमूना रासायनिक परीक्षण के लिए किसी प्रयोगशाला में भेजे और तब उस जल को पिये। इसी लिए अमरीका में इस कार्य के लिए प्लास्टिक के कुछ कार्डों का प्रयोग किया जाता है। इन कार्डों में ठोस रासायनिक पदार्थ छिपे रहते हैं जो जल को अशुद्ध बनाने वाले खनिज पदार्थों से क्रिया करके विशेष प्रकार के लक्षण प्रकट करते हैं। इस प्रकार जल की शुद्धता की जांच के लिए मनुष्य यह सूक्ष्म प्रयोगशाला अपनी जेब में एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जा सकता है।

एक नया उपकरण

स्वीडन में प्लास्टिक का एक नया उपकरण निर्मित किया गया है जो किसी भी रक्तवाहिनी नलिका में सरलतापूर्वक बिना किसी कष्ट के घुमाया जा सकता है। सलाई के आकार का यह उपकरण रक्तवाहिनी की विभिन्न शाखाओं में से होकर गुजारा जा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता है। इसके संचालन पर नियन्त्रण रखने के लिए इसमें विशेष प्रबन्ध होता है। इस उपकरण में छोटे-छोटे पहियों पर फिट किया हुआ एक हैण्डिल होता है जिसे स्प्रिंग के तार से एक स्टील का तार साथ जोड़ा जाता है। इसकी सहायता से प्लास्टिक सलाई की रक्त-वाहिनी में घुसी हुई नोक को इच्छित दिशा में आसानी से झुकाया या मोड़ा जा सकता है। अब तक इस तरह की जो प्लास्टिक सलाइयां बनी थीं वे केवल रक्तवाहिनी की किसी एक शाखा में ही ले जायी जा सकती थीं, किन्तु यह नया उपकरण रक्तवाहिनियों की कई शाखाओं में आसानी से ले जाया जा सकता है और इसका संचालन एक बाहरी उपकरण द्वारा किया जा सकता है।

वायुयान चालकों के लिए नयी पोशाक

वायुयानों को ऊपर उड़ाते समय तथा उन्हें नीचे उतारते समय वायुयान चालकों के बैठने के स्थान पर काफी उष्मा उत्पन्न होती है। कभी-कभी तो यह उष्मा असह्य हो जाती है। इस उष्मा से बचाव के लिए विमान चालक विशेष प्रकार की पोशाक पहनते हैं जो बाष्पन द्वारा ठण्डक उत्पन्न करती है। यह पोशाक सूती या नाइलान के वस्त्रों की बनी होती है जो पाली विनाइल क्लोराइड वाहक तन्त्र से युक्त होते हैं। इस वाहक तन्त्र में छोटे-छोटे छेद होते हैं। ये छेद इस प्रकार व्यवस्थित होते हैं कि सन्तुलित वायु शरीर पर समान रूप से सब स्थानों पर पहुंचती रहती है। तकनीकी विकास और उत्पादन निदेशालय एवं वायु संचालित पोशाक निदेशालय द्वारा विकसित वायु संचालित पोशाक के कार्यकण का प्रतिरक्षा प्रयोगशाला, जोधपुर में परीक्षण किया गया। परीक्षणों के परिणाम-स्वरूप यह पता चला कि वाष्पन द्वारा शरीर में शीतन उत्पन्न करने की दृष्टि से वायुयान चालकों की देशी पोशाक की क्षमता आयनित पोशाक ही के समान है। देशी पोशाक में नायलान के स्थान पर सूती वस्त्रों का प्रयोग किया जाता है।

जपान का अद्वितीय टेलीविजन सेट

जापान में एक ऐसा टेलीविजन सेट बनाया गया है जिसे संसार में अद्वितीय कहा जाता है।

यह सेट अभी एक मशीन डिजाइन प्रदर्शनी में दिखाया गया था। इस टेलीविजन सेट में ऐसी व्यवस्था भी है कि रंगीन टेली-विजन युग के प्रारम्भ होने पर उसमें छोटा-सा परिवर्तन कर देने पर रंगीन चित्र भी देखे जा सकते हैं।

इस टेलीविजन सेट को १०० वाट की घरेलू विद्युत् पर चलाया जा सकता है और १२ वाट की मोटर की बैटरी या साधारण बैटरी पर भी चलाया जा सकता है।

इस प्रतियोगिता में दूसरा स्थान एक छवि प्रसारण यन्त्र के निर्माता को मिला है। इस यन्त्र में बीस स्लाइडें लगायी जा सकती हैं और वे स्वतः ही बदल-बदलकर परदे पर दिखायी देती हैं।

जापान में मशीनी डिजाइन की प्रतियो-गिता हर वर्ष होती है। इस वर्ष फिर १६२ डिजाइन बनाने वालों ने भाग लिया। उनमें से ८० प्रतिशत २०-३० वर्ष की आयु के थे। इसके बाद ३०-४० वर्ष के लोगों का स्थान आता है, और उसके पश्चात २० वर्ष से कम आयु के लोगों का।

डिजाइन और मशीन बनाने वालों में अधिकांश वे थे जो व्यवसाय के तौर पर यही काम करते हैं और उनके बाद प्रतियोगी थे विद्यार्थी।

फिर १५८ मशीनों का वहां प्रदर्शन हुआ, उनमें से अभी कोई बाजार में नहीं आयी है।

इस सन्दर्भ में यह उल्लेख है कि बहुधा ऐसी प्रतियोगिता के चार-पांच वर्ष बाद ये वस्तुएं बाजार में आया करती हैं। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदित्यपालसिंह आर्य

वस्तुतः पृथ्वीस्थ मनुष्यों के लिए नभ-मण्डल में विशेष आकर्षण का एक मात्र केन्द्र सूर्य ही रहा है। वैज्ञानिकों ने जो अनुसन्धान किया है और उन्होंने जो परिणाम निकाले हैं उन्हें मैंने स्वरूपांकित सौर-यन्त्र द्वारा मूर्त रूप दिया है।

इस यन्त्र में निम्न विशेषताएं रखी गयी हैं।

सूर्य पृथ्वी के दीर्घ वृत्ताकार मार्ग की एक नाभि पर स्थित रहकर अपनी धुरी पर घूमता हुआ प्रकाशित होगा।

पृथ्वी ३६५·२५ दिन में सूर्य के चारों ओर एक दीर्घ वृत्ताकार मार्ग में चक्कर लगायेगी और वह ऊर्ध्वाधर तल से २३·५° एक ही दिशा में झुकी रहकर सर्वदा ध्रुव तारे की ओर संकेत करती हुई अपनी धुरी पर भी २४ घण्टे में एक चक्कर लगायेगी।

चन्द्रमा पृथ्वी के चारों ओर २९·५३ दिन में चक्कर लगायेगा और उसका एक पक्ष ही पृथ्वी पर से सदा दिखायी दे सकेगा।

पृथ्वी के चारों ओर तारा-मण्डल रहेगा जिसमें मुख्य-मुख्य तारे और उनके समूह दिखाये जायेंगे और उनकी स्थिति पृथ्वी की अपेक्षा से निरन्तर उसी प्रकार बदलती रहेगी जैसे कि नभ-मण्डल में एक दिन में और एक वर्ष में बदलती है।

सौर-यन्त्र से समय और तिथियों की भी जानकारी प्राप्त हो सकेगी, अस्तु अब ऐसे सौर यन्त्र के अवयवों का विवरण निम्नलिखित पंक्तियों में प्रस्तुत है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चालक घड़ी

चित्र में यह चालक घड़ी (चा. घ.) से निर्देशित की गयी है। यह एक साधारण विद्युत घड़ीवत् ही होगी तथापि उसमें ऐसी व्यवस्था होगी कि वह अपने सम्पर्क से आधार चक्र (आ. च.) को घुमा सके। इस आधार चक्र की परिधि पर तिथियों के चिह्न बने होंगे जिन्हें इस घड़ी के ऊपर स्थित एक सूचक (सू.) की सीध में पढ़ा जा सकेगा। सूचक की चार विभिन्न स्थितियों (४, १, २ व ३) में रख सकने की भी व्यवस्था की गयी है ताकि लौंध के वर्ष में तथा अन्य तीन वर्षों में उसे उन-उन वर्षों के लिए निश्चित की गयी स्थिति में खिसकाकर ठीक-ठीक तिथि पढ़ी जा सके और इस प्रकार प्रति चौथे वर्ष फरवरी मास २९ दिन का हो जाया करे। यह व्यवस्था तिथि-दर्शक (ति. द.) के रूप में चित्र के नत-प्रक्षेप में बढ़ाकर भी प्रदर्शित की गयी है।

अधार चक्र

चित्र में यह आधार चक्र (आ. च.) से निर्देशित किया गया है जो धातु का बना एक वृत्ताकार पहिया होगा, जिसमें परस्पर लम्बवत चार आरे रहेंगे और उसके केन्द्र स्थान पर एक इतना बड़ा छिद्र रहेगा कि उसमें अचल चक्र (अ. च.) की धुरी भली प्रकार स्थित हो सके। इसकी परिधि को १४६१ समान भागों में विभक्त किया जायेगा। इन भागों में से चार-चार भागों के अन्तर से घड़ी की सूइयों के घूमने की दिशा में बढ़ती हुई वर्ष भर की समस्त तिथियां अंकित की जायेंगी। इसकी परिधि इस प्रकार रखी जायेगी कि चालक-घड़ी जितने समय में ८,७६६ घण्टे चले उतने समय में इसका एक चक्र पूरा हो। इस पहिये के चारों ओर बने दांतुओं के कारण ही यह पहिया चालक घड़ी के सम्पर्क से घड़ी की सूइयों के घूमने की विपरत दिशा में घूमेगा।

इस पहिये के चार आरों में से एक में एक चूल्हे के आकार की खांच रहेगी जिसमें भ्रमणशील दीर्घ और लघु चक्रों (भ. दी. च.) और (भ. ल. च.) के आधार (क और ख) उसके केन्द्र की ओर अथवा उससे परे आवश्यकतानुसार खिसक सकें। ये आधार एक छड़ ($छ_१$) द्वारा परस्पर सम्बद्ध बने रहेंगे और उनका ऐसा खिसकना दूसरी ओर स्थित कमानों ($क_१$) द्वारा संभव हो सकेगा तथा अन्य तीन आरे या तो ठोस होंगे अथवा इनमें भी पटरी (प.) के दीर्घ वृत्ताकार होने की स्थिति में पटरी पर चलने वाले पहियों ($प_१$, $प_२$ व $प_३$) के शीर्षों ($शी_१$, $शी_२$ एवं $शी_३$) के खिसकने की व्यवस्था की जायेगी।

अचल चक्र

चित्र में यह अचल चक्र (अ. च.) से निर्देशित किया गया है। यह चक्र वृत्ताकार अथवा आवश्यकतानुसार दीर्घ वृत्ताकार भी रखा जा सकता है। यह भी धातु का बनाया जायेगा किन्तु केन्द्रवर्ती छिद्र में ऐसा पदार्थ भरा जायेगा जिससे कि उसमें होकर विद्युत तार जा सकें ओर उनका सम्पर्क अचल चक्र के धातु वाले भाग से न हो सके। इसमें भी परस्पर लम्बवत् चार ही आरे होंगे और इसकी परिधि के चारों ओर दातुएं रहेंगे। इस चक्र का आधार ($आ_१$) नीचे के धरातल से सम्बद्ध रहेगा और उसकी बनावट चित्र में दर्शाये अनुसार ही रखी जायेगी। यह चक्र आधार चक्र के केन्द्रवर्ती छिद्र में स्थित किया जायेगा। अनवरुद्ध और सरल गति के लिए अचल चक्र के आधार और आधार चक्र के बीच में दो स्थानों पर छर्रों की भी व्यवस्था की गयी है।

भ्रमणशील दीर्घ चक्र

चित्र में यह भ्रमणशील दीर्घ चक्र (भ. दी. च.) से निर्देशित किया गया है। यह एक धातु का बना वृत्ताकार चक्र होगा जिसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिधि अचल चक्र की परिधि के तुल्य ही होगी। इसके मध्य में एक छिद्र रहेगा जो ऊपर की ओर एक बेलनाकार लम्बे खोल (खो) में खुला रहेगा। यह चक्र-आधार चक्र के एक ओर बनायी गयी चूल्हे के आकार की खांच में स्थित इसके आधार (क.) पर छर्रों की सहायता से सरलता से घूम सकेगा। इस चक्र में भी परस्पर लम्बवत् चार ही आरे होंगे और उसके चारों ओर अचल चक्र के समान ही दांतुएं होंगे।

भ्रमणशील लघु चक्र

चित्र में यह भ्रमणशील लघु चक्र (भ. ल. च.) से निर्देशित किया गया है। यह एक धातु का वृत्ताकार लघु चक्र होगा जिसके चारों ओर अचल चक्र और भ्रमणशील दीर्घ चक्र के समान ही दांतुएं रहेंगे, तथा यह चक्र इन दोनों चक्रों के मध्य में ही इस प्रकार स्थित रहेगा कि आधार चक्र की घड़ी की सूइयों के घूमने की विपरीत दिशा में घूमने से जब यह चक्र अचल चक्र के सम्पर्क से घड़ी की सूइयों के घूमने की विपरीत दिशा में घूमे तब भ्रमणशील दीर्घ चक्र घड़ी की सूइयों के घूमने की दिशा में घूम सके।

इस चक्र की धुरी ($धु_1$) आधार चक्र के एक ओर में बनायी गयी चूल्हे के आकार की खांच में स्थित उसके आधार (ख) में ठहरेगी। इस चक्र के ऊपरी सिरे से एक मध्यम प्रकार का गिर्रीनुमा धातु का चक्र ($च_1$) सम्बद्ध रहेगा जो रबर की एक माल ($मा_1$) की सहायता से सूर्य को घुमायेगा।

सूर्य

अचल चक्र के केन्द्र स्थान अथवा आवश्यकतानुसार नाभि स्थान पर एक धातु की नली ($न_1$) जिसके अन्दर से होकर विद्युत के तार जायेंगे, जोड़ दी जायेगी। नली के ऊपरी सिरे पर एक बल्ब (ब) रहेगा। जो विद्युत अथवा बैटरी (ब) की सहायता से ज्योतित हो सकेगा। बल्ब के चारों ओर कांच का एक दो गोलार्द्धों से जुड़कर बना बड़ा गोलक रहेगा जो अन्दर से दूधिया रंग दिया जायेगा और उस पर उचित स्थानों पर अन्दर से ही काले धब्बे डाल दिये जायेंगे जो सूर्य कलंक (सू.क.) के रूपमें बल्ब के ज्योतित होने पर दिखायी पड़ेंगे। यह गोलक भी धातु की एक दूसरी नली ($न_2$) पर ही स्थित रहेगा जो बल्ब की नली ($न_1$) के चारों ओर रहेगी। इस नली ($न_2$) के नीचे भी एक गिर्रीनुमा धातु का लघु चक्र ($च_2$) रहेगा जो भ्रमणशील लघु चक्र से सम्बद्ध निर्रीनुमा मध्यम प्रकार के धातु चक्र ($च_1$) से रबर को माल ($मा_1$) द्वारा सम्बद्ध किये जाने पर घूम सकेगा। इस प्रकार आधार चक्र के पूर्वोक्त प्रकार से घूमने पर सूर्य घड़ी की सूइयों के घूमने की विपरीत दिशा में घूम सकेगा। रबर की माल का उपयोग यहां इसलिए किया गया है ताकि अचल चक्र और पटरी के दीर्घ वृत्ताकार होने और सूर्य के अचल चक्र की नाभि पर स्थित होने की स्थिति में वह आवश्यकतानुसार घट-बढ़ सके।

पृथ्वी

भ्रमणशील दीर्घ चक्र के केन्द्र स्थान पर स्थित ऊर्ध्वाधर बेलनाकार लम्बे खोल (खो) के ऊपरी सिरे से कुछ नीचे एक ओर एक चपटी छड़ ($छ_2$) उससे ११३·५ का कोण बनाती हुई लगी रहेगी और यही छड़ पृथ्वी और चन्द्रमा के लिए आधार बनेगी तथा दूसरी ओर एक अन्य वृत्ताकार छड़ ($छ_3$) का दूसरा सिरा पृथ्वी के उत्तरी ध्रुव के ऊपर तक पहुंचेगा। छड़ ($छ_2$) बेलनाकार लम्बे खोल (खो) के सन्धि स्थान से आवश्यकतानुसार हटकर एक छेद ($छे_1$) में पृथ्वी की धुरी ($धु_2$) का निचला सिरा और छड़ ($छ_3$) के अन्तिम सिरे पर दूसरा सिरा रहेगा। पृथ्वी इस प्रकार स्थित की जायेगी कि वह ऊर्ध्वाधर तल से २३·५° झुकी रहे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

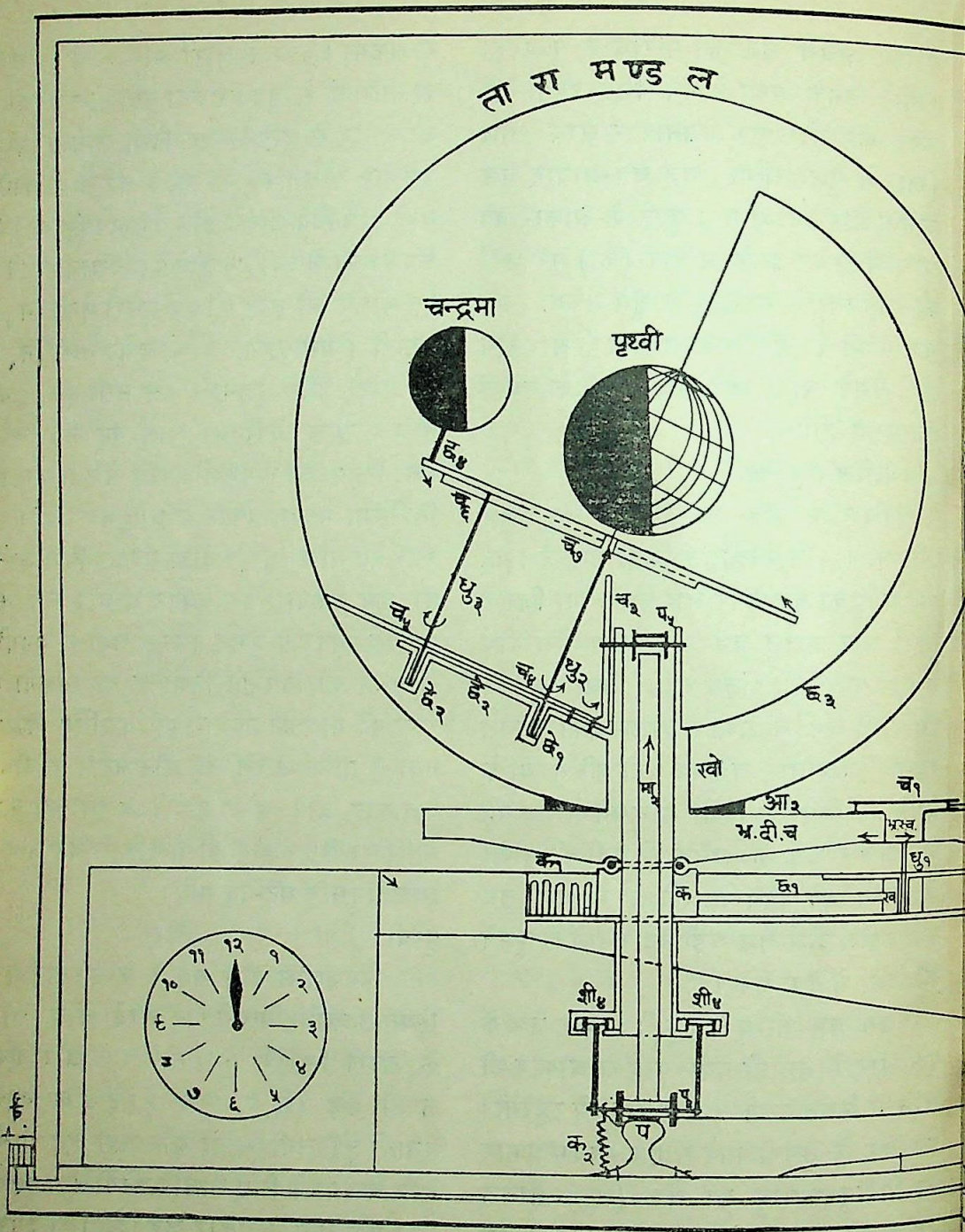

सौर-यन्त्र से समय और तिथियों की भी जानकारी प्राप्त की ज

पृथ्वी की धुरी के निचले सिरे से दांतुएदार छोटा चक्र (च$_4$) इस प्रकार सम्बद्ध रहेगा कि उसके घूमने से उसके केन्द्र स्थान पर सम्बद्ध पृथ्वी की धुरी और उससे पृथ्वी घूमने लगे। यह छोटा चक्र (च$_4$) कुछ दीर्घ आकार वाले एक ऊर्ध्वाधर दांतुएदार चक्र (च$_3$) की सहायता से घूम सकेगा। यह ऊर्ध्वाधर चक्र भी एक क्षैतिज गिर्रीनुमा पहिये (प$_5$) की सहायता से घूमेगा जो स्वयं भी रबर की एक माल (मा$_2$) की सहायता से वृत्ताकार अथवा दीर्घ वृत्ताकार पथ पर चलने वाले एक दूसरे गिर्रीनुमा पहिये (प$_4$) की सहायता से घूमेगा। चक्र (च$_3$) और (च$_4$) की दांतुए समान आकृति की होंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

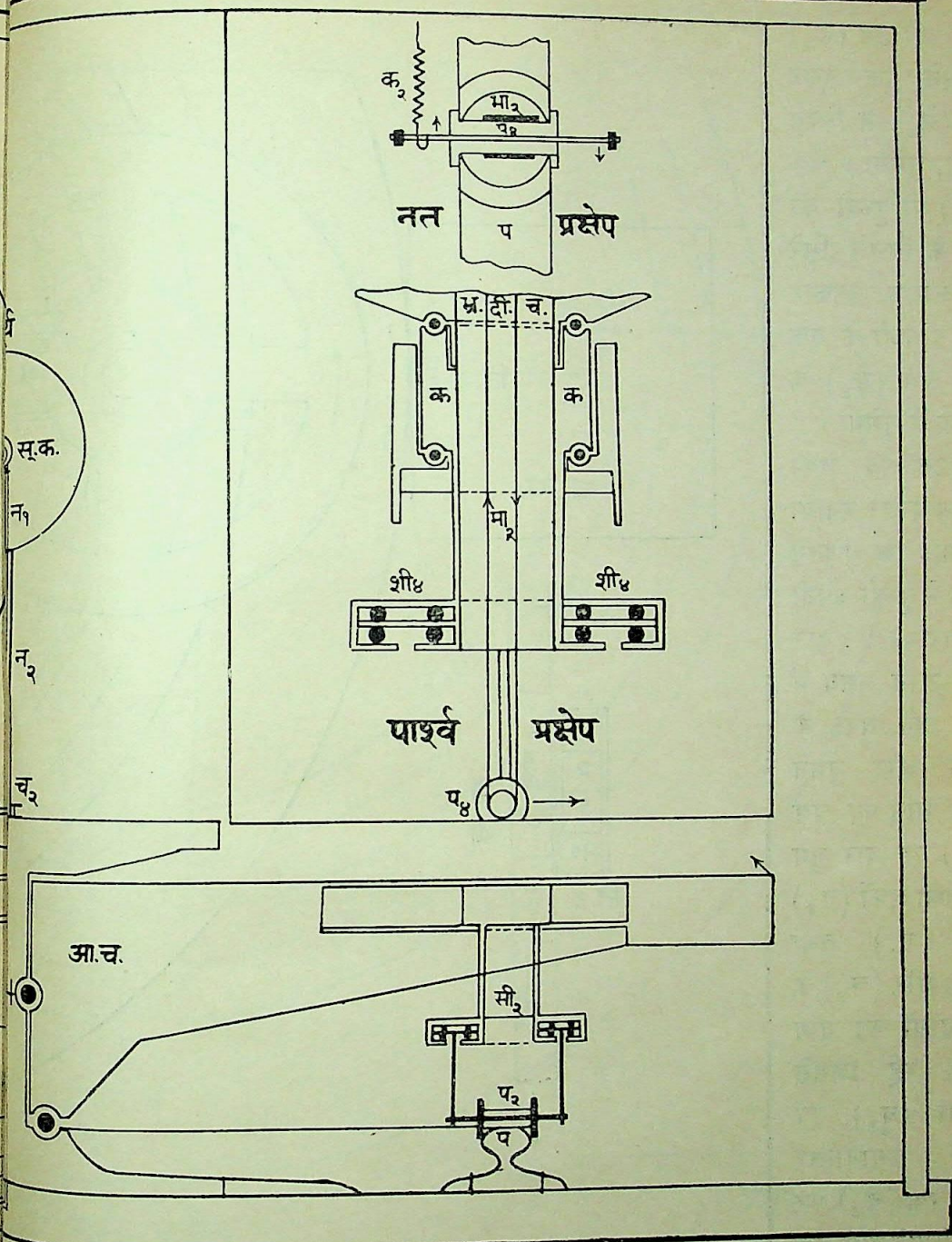

पना नयी है, पर इसके साथ अनेक सम्भावनाएं जुड़ी हुई हैं

पृथ्वी काष्ठ की बनायी जा सकती है जिसमें अक्षांश और देशान्तर रेखाएं तथा पृथ्वी और समुद्र का मार्ग चित्रित किया जा सकता है तथा वह ध्रुवों पर कुछ चपटी भी रखी जा सकती है।

चन्द्रमा

पृथ्वी की धुरी के चारों ओर घूमने वाले धातु का चक्र ($च_७$) रहेगा जिसके सम्पर्क में एक लघु चक्र ($च_६$) रहेगा। इन दोनों चक्रों में समान आकृति वाले दांतुए रहेंगे। इस प्रकार यह चक्र ($च_७$) और उसके ऊपर चिपटा दीर्घ चक्र लघु चक्र ($च_६$) की सहायता से घूम सकेगा। चक्र ($च_६$) दूसरे दांतुएदार चक्र ($च_५$) और धुरी ($धु_३$) की सहायता से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो चपटी छड़ ($छ_२$) में बने एक दूसरे छेद ($छे_२$) में स्थित रहेगी, घूमेगा। चक्र ($च_५$) भी पृथ्वी की धुरी के निचले सिरे पर समान आकार वाले दांतुओं के एक अन्य चक्र ($च_४$) के सम्पर्क से घूमेगा।

इन सब चक्रों को इस प्रकार बनाया जायेगा कि जितने समय में पृथ्वी अपनी धुरी पर २९·५३ बार घूमे, उतने समय में पृथ्वी की धुरी के चारों ओर घूमने वाला धातु का चक्र ($च_७$) एक बार घूम सके तथा चक्रों ($च_६$) और ($घ_७$) तथा ($च_५$) और ($च_४$) के अर्द्धव्यासों का योग समान रहे जिससे धुरियां ($धु_३$) एवं ($धु_२$) समानान्तर रहें। चक्र ($च_७$) पर ऊपर चिपटे दीर्घ चक्र के एक ओर सीधी खड़ी एक अन्य छड़ ($छ_४$) के ऊपरी सिरे पर कांच का बना एक छोटा गोलक रहेगा जो अन्दर से पालिश किया हुआ होगा जिससे जब उस पर सूर्य का प्रकाश पड़े तो वह प्रकाश को परावर्तित कर सके। वह गोलक ही चन्द्रमा का कार्य करेगा। चन्द्रमा के धरातल पर भी धब्बे बनाये जा सकेंगे।

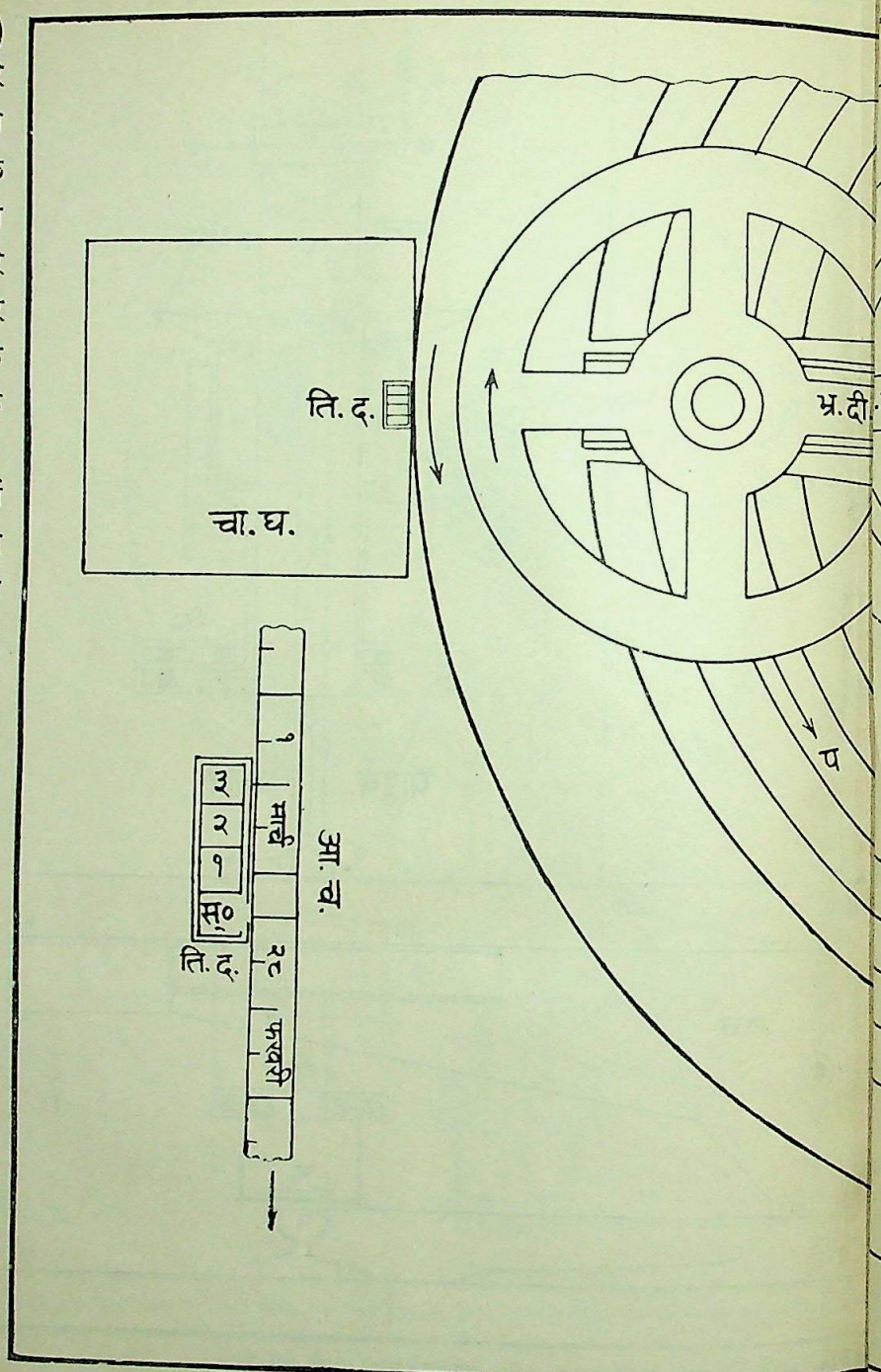

सौर-यन्त्र का नत-प्रक्षेप—सम्भव है यह सौर-यन्त्र सूर्य, चन्द्र तथा

तारा मण्डल

भ्रमणशील दीर्घ चक्र के ऊपर और पृथ्वी तथा चन्द्रमा के चारों ओर एक नीले कांच का बड़ा, दो गोलार्धों से जुड़कर बना गोलक रहेगा जिसमें मुख्य-मुख्य तारों और उनके समूहों की स्थितियां एक ऐसे चमकीले पदार्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

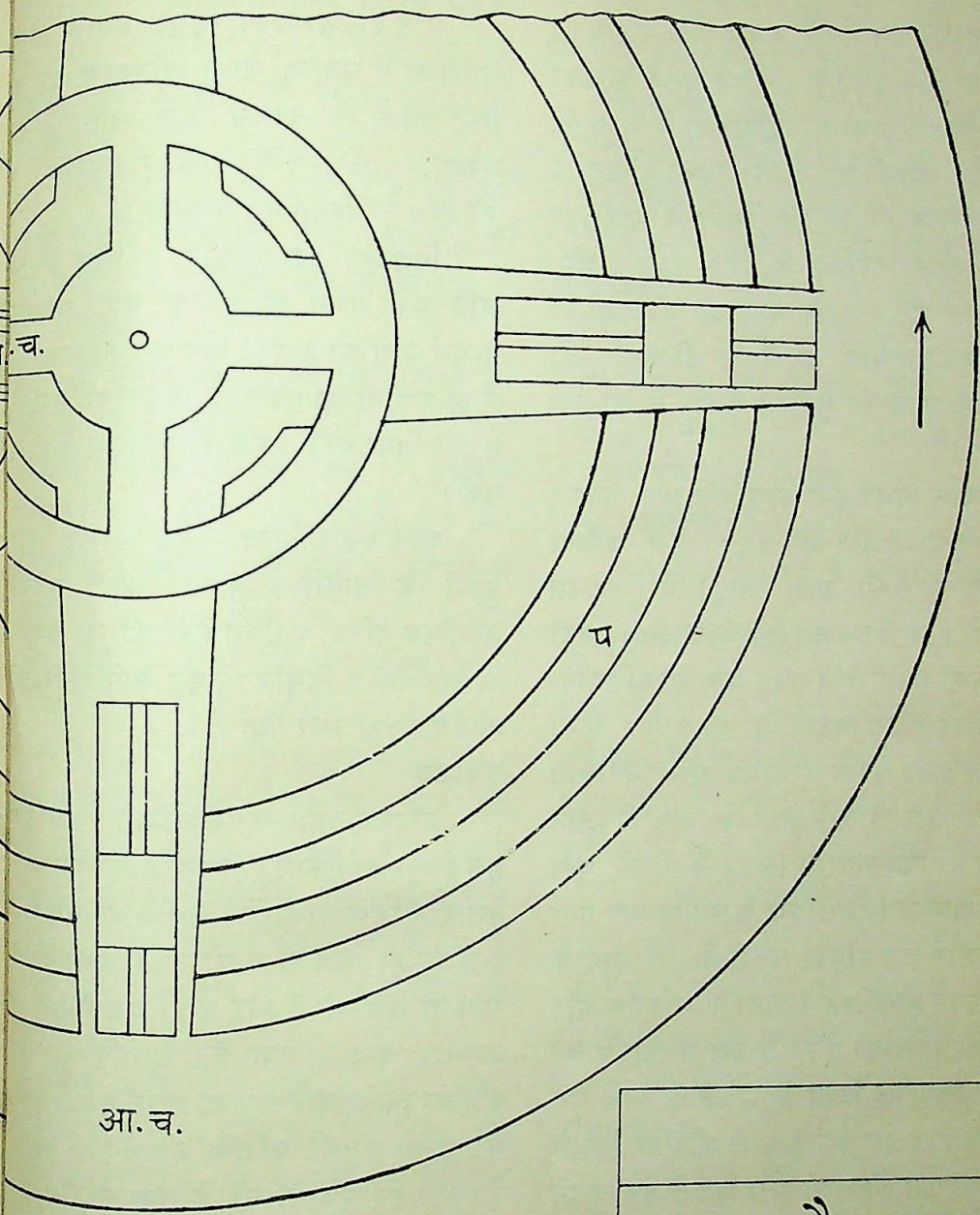

नत-प्रक्षेप

सौर-यन्त्र

स्थितयों का ज्ञान देता हुआ एक नया ही रहस्य सम्मुख करे

से अंकित की जायेंगी जो बल्ब के प्रकाश से चमक उठे और इस प्रकार पृथ्वी के चारों ओर तारा-मण्डल की रूप-रेखा प्रस्तुत हो जाय। यह गोलक भ्रमणशील दीर्घ चक्र के ऊपर आधार (आ$_2$) पर स्थित किया जायेगा।

पटरी और उस पर घूमने वाले पहिये

भ्रमणशील दीर्घ चक्र के केन्द्र के ठीक नीचे रहने वाली वृत्ताकार अथवा आवश्यकतानुसार दीर्घ वृत्ताकार एक पटरी (प) रहेगी जिसके सम्पर्क से आधार चक्र के चारों आरों पर लगे गिर्रीनुमा पहिये (प$_1$, प$_2$

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प$_3$ और प$_4$) अपनी-अपनी धुरियों के चारों ओर घूम सकें। पटरी अचल चक्र के समरूप ही होगी और दोनों के केन्द्र एक-दूसरे के ऊपर रहेंगे जिससे दोनों की परिधियों के मध्य की दूरी सब स्थानों पर समान रहेगी। पटरी के दीर्घ वृत्ताकार होने की स्थिति में पटरी पर घूमने वाले पहियों के शीर्ष (शी$_1$, शी$_2$ शी$_3$ एवं शी$_4$) उसके केन्द्र की ओर अथवा आवश्यकतानुसार आरों में खिसक सकें, ऐसी भी व्यवस्था पूर्वोक्त प्रकार से की जा सकेगी।

चूंकि भ्रमणशील दीर्घ चक्र एक चक्कर में अपने चारों ओर भी ३६०° घूम जायेगा जिससे रबर की माल (मा$_2$) में ऐंठन आ जायेगी। इस ऐंठन को छुड़ाने के लिए पटरी के उसकी मुटाई के बराबर भाग को दो स्थानों पर काटकर शेष पटरी से अलग कर दिया जायेगा। जब पटरी पर घूमने वाला गिर्रीनुमा पहिया (प$_4$) इस भाग के पास में आने लगेगा तो एक कमानी (क$_2$) में उसकी धुरी अटक जायेगी जिससे एक आकर्षण बल पैदा होगा और जब पहिया पटरी के इस भाग के ठीक ऊपर होगा तब कमानी के आकर्षण और रबर की माल की ऐंठन के बल के कारण वह ३६०° विपरीत दिशा में झटके के साथ घूम जायेगा और इस प्रकार माल की ऐंठन निकल जायेगी। इस व्यवस्था और पटरी पर चलने वाले पहियों के शीर्षों की व्यवस्था को विस्तृत रूप से सम्मुख-प्रक्षेप में प्रदर्शित किया गया है। पटरी पर घूमने वाले पहिये (प$_4$) का व्यास इस प्रकार रखा जायेगा कि वह पटरी का एक चक्कर लगाने में पृथ्वी को ३६५.२५ बार घुमा दे।

बाह्याकार

आवश्यकतानुसार सम्पूर्ण यन्त्र लकड़ी के एक गोल अथवा वर्गाकार तख्ते पर स्थित किया जा सकता है और एक कांच के ढक्कन से ढंका जा सकता है।

यदि इस यन्त्र को विशद रूप में वेधशालाओं में बनाया जाना आवश्यक हो तो फिर कांच का ढक्कन नहीं लगाया जा सकेगा, तथा तख्ते के स्थान पर सम्पूर्ण यन्त्र को भूमि पर स्थित करना होगा।

विद्यालयों के उपयोग के लिए बनाये जाने वाले यन्त्रों में चालक घड़ी हटाकर सम्पूर्ण यन्त्र को हाथ व हत्थे की सहायता से शीघ्र घुमाया जा सकता है जिससे वर्ष भर की सभी गतियां थोड़े समय में प्रदर्शित की जा सकें।

चूंकि एक ही यन्त्र में सूर्य, चन्द्रमा और पृथ्वी के सापेक्षिक आकार और उनकी सापेक्षिक दूरियां प्रदर्शित नहीं की जा सकती हैं, अतः यन्त्र निर्माण में इस सापेक्षिता को दृष्टिगत नहीं रखा गया है।

रूपांकन

अन्य व्यावहारिक कठिनाइयों को बाद में हल किया जा सकेगा। सौर-यन्त्र आवश्यकतानुसार विभिन्न आकारों के बनाये जा सकते हैं इसलिए ही चित्र में न तो उसके अवयवों के माप ही दिये गये हैं और न ही वह पैमाने के अनुसार बनाया गया है। तथापि कल्पना कीजिए कि आधार चक्र का व्यास ९३.०१ से. मी. तथा उसकी परिधि ९३·०१ × ३५५/११३.२९२·२० से. मी. है तथा परिधि पर दो-दो मि. मी. के बराबर भाग किये गये हैं जिससे उस पर १४६१ खाने बन गये हैं।

अचल चक्र और भ्रमणशील दीर्घ चक्र में से प्रत्येक का व्यास २८ से. मी. और भ्रमणशील लघु चक्र का व्यास २·४३७५ से. मी. लीजिए।

अतः पटरी का व्यास २(१४+२·४३७५+१४)=६०·८७५ से. मी. होगा तथा बाहरी घेरा ६०·८७५ × ३५५/११३= १९१·२४४४ से. मी. होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब पटरी पर चलने वाले पहिये ($प_४$) का व्यास १ से. मी. लीजिये जिससे उसकी परिधि १ × ३५५/११३ = ३·१४१६ से. मी. होगी। इसी आकार का पहिया ($प_५$) भी लीजिए।

चक्र ($च_३$) का व्यास ८.५९४३ से. मी· और परिधि २७ से. मी. तथा चक्र ($च_४$) का व्यास १·४३२३ से. मी. और परिधि ४.५ से. मी· लीजिए।

इस प्रकार चक्र ($च_४$) चक्र ($च_३$) की अपेक्षा से २७/४.५ = ६ गुना तेज घूमेगा जिसका अर्थ यह हुआ कि पहिया ($प_५$) अपनी धुरी पर और पहिया ($प_४$) पटरी पर जब एक चक्कर लगायेगा तो पृथ्वी ६ बार घूम जायेगी।

चूंकि ३·१४१६ से. मी. पहिये ($प_४$) की परिधि पटरी की परिधि १९१·२४४४ से.मी.से १९१·२४४४/३·१४१६ = ६०·८७५ गुना कम है, इसलिए पहिया ($प_४$) पटरी का एक चक्कर करने में ६०·८७५ बार घूमेगा जिसका अर्थ यह हुआ कि पहिया ($प_४$) के पटरी पर एक चक्कर लगाने के समय में पृथ्वी ६०·८७५ + ६ = ३६५·२५ बार घूम जायेगी।

अब चूंकि चक्र ($च_३$) का व्यास ८·५९३४ से. मी. और चक्र ($च_४$) का अर्द्ध व्यास ०·७१६१ से. मी. है इसलिए दोनों के बीच का कोण ६६·५० होने की स्थिति में पृथ्वी की धुरी क्षैतिज तल से २३·५० झुकी हुई लगाना सम्भव नहीं होगा, अतः चक्र ($च_३$) और चक्र ($च_४$) के मध्य में दो १·५ से. मी. व्यास वाले तथा समान आकार के दांतुओं वाले दो चक्र और लगाने पड़ेंगे जिससे कि चारों चक्र पारस्परिक सम्पर्क से घूम सकें और पृथ्वी के घूमने की दिशा न बदलने पाय। ऐसी स्थिति में (०·७१६१ + १·५ + १·५) ब्युकोज्या ६६·५° = ९·२० से. मी. दूरी चक्र ($च_३$) के ८·४०४३ से. मी. व्यास से अधिक होने से पृथ्वी को उसकी निश्चित स्थिति में लगाना सम्भव हो सकेगा।

अब चक्र ($च_५$) का व्यास १३·६०७७ से. मी. तथा परिधि ४२·७५ से. मी. चक्र ($च_६$) का व्यास ३·६६०५ से. मी. तथा परिधि ३५·७५ से. मी. इस प्रकार लीजिए कि चक्र ($च_४$) और ($च_५$) तथा चक्र ($च_६$) और (च७) के अर्द्धव्यासों का योग ०·७१६१५ × ६·८०३८५ = ७·५२ से. मी. तथा १.०३०२५ + ५.६८०७५ = ७५२ से. मी. परस्पर समान रहे जिससे धुरियां ($धु_३$) और ($धु_२$) समानान्तर रह सकें।

अब जितनी देर में चन्द्रमा एक बार घूमेगा उतनी देर में पृथ्वी $\frac{३५७५}{११.५} \times \frac{४२·७५}{४.५}$ बार अर्थात २०·५३ बार घूम जायेगी जिसका अर्थ यह हुआ कि चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा २०५ दिन में करेगा। अतः हमारे द्वारा चुनी गयी चक्रों की उक्तपरिधियां ठीक हैं।

सूर्य, पृथ्वी और चन्द्रमा के व्यास क्रमशः १२ से. मी., १० से. मी. और ६ से.मी. तथा पृथ्वी और चन्द्रमा के मध्य की दूरी १२ से. मी. लीजिए। तारामण्डल के गोलक का व्यास ४४ से. मी. लिया जा सकता है।

कार्यप्रणाली

चालक घड़ी (चा. घ.) के नियमित और निरन्तर घूमने से उसके सम्पर्क से आधार चक्र (आ. च.) घड़ी की सूइयों के घूमने की विपरीत दिशा में घूमेगा जिससे पहिया ($प_४$) भी पटरी पर उसी दिशा में लुढ़केगा। यह पहिया माल ($मा_२$) की सहायता से पहिया ($प_५$) को घुमायेगा जिससे चक्र ($च_३$) ($च_४$), ($च_५$), ($च_६$) तथा (च७) इस प्रकार परस्पर सम्पर्क से घूमेंगे कि पृथ्वी और चन्द्रमा भी आधार चक्र के घूमने की दिशा में क्रमशः अपनी धुरी पर और पृथ्वी के चारों ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घूमने लगें। और वे क्रमशः २४ घण्टों तथा २९·५३ दिन में एक चक्कर पूरा करें। पृथ्वी एक वर्ष में आधार चक्र के एक बार घूमने से सूर्य का एक चक्कर लगा लेगी।

अब चूंकि भ्रमणशील दीर्घ चक्र(भ.दी च.) और भ्रमणशील लघु चक्र(भ.ल.च.)को आधार चक्र (आ.च.) के आरे के साथ-साथ आगे बढ़ना है, जब कि अचल चक्र (अ.च.) स्थिर है। इसलिये भ्रमणशील लघु चक्र और दीर्घ चक्र क्रमशः घड़ी की सूइयों को घूमने की विपरीत दिशा में तथा अनुकूल दिशा में घूमने लगेंगे। पुनः चूंकि भ्रमणशील दीर्घ चक्र तथा अचल चक्र की परिधियां सामान हैं, इसलिए आधार चक्र के एक बार घूमने से भ्रमण शील दीर्घ चक्र भी विपरीत दिशा में एक बार घूम जायेगा। इस प्रकार पृथ्वी का झुकाव सर्वदा एक ही ओर रहेगा तथा तारामण्डल भी सर्वदा ज्यों का त्यों बना रहेगा।

भ्रमणशील लघु चक्र के घूमने से चक्र ($च_1$) और चक्र ($च_2$) घूमेंगे जिससे सूर्य भी अपनी धुरी पर घूमने लगेगा। ●

ग्राहकों से निवेदन

विज्ञान-लोक की एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे है। एक वर्ष का शुल्क ९ रुपये, दो वर्ष का ६ रुपये तथा तीन वर्ष का २० रुपये (विशेष रियायत) है।

पत्र-व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें। विज्ञान-लोक जिस लिफाफे में आपके पास आता है, उसी पर आपकी ग्राहक संख्या आपके पते के ऊपर लिखी रहती है।

पता बदलने की सूचना हमें एक मास पूर्व प्राप्त होनी चाहिये। इसके लिए नया और पुराना, दोनों पते भेजें। यदि छह मास से कम के लिए पता बदलवाना हो, तो कृपया अपने डाकखाने से इसकी व्यवस्था कर लें।

नये ग्राहकों को मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा किस अंक से विज्ञान-लोक भेजा जाय, यह अवश्य लिखना चाहिये।

पुराने ग्राहक अपनी सदस्यता का नवीयन (renewal) कराते समय मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा ग्राहक संख्या लिखने की कृपा करें।

विक्रय-व्यवस्थापक * विज्ञान-लोक * हास्पिटल रोड, आगरा–३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनजान दूरी तक फैले वृत्त

निरंजन पाल

एक प्रमुख दैनिक समाचारपत्र के सम्पादक को पत्र लिखकर डाक्टर मानिक ने यह घोषणा की थी कि उन्होंने स्वनिर्मित एक विशेष उपकरण की सहायता से आकाश में अनन्त दूरी तक फैले हुए वृत्तों को लक्ष्य किया है। इन रहस्यमय वृत्तों के सम्बन्ध में वे शीघ्र ही बतायेंगे।

दरअसल वृत्तों वाली यह बात कुछ अजीब थी, और प्रायः सभी आश्चर्य कर रहे थे कि ये वृत्त क्या हो सकते हैं और इनका प्रयोजन क्या है? उन्हीं दिनों उस समाचारपत्र ने डाक्टर मानिक का विशेष इण्टरव्यू छापा था। मानिक ने यह स्वीकार किया था कि निश्चय ही ये वृत्त रहस्यपूर्ण हैं और इनका अनन्त दूरी से पृथ्वी तक फैलते आने का एक प्रयोजन भी है, किन्तु इस पर वे इस समय कुछ नहीं कह सकते, क्योंकि वे दुनिया को अपना अनुसन्धान पूरा करके ही निष्कर्ष से अवगत कराना चाहते हैं। एक प्रश्न के उत्तर में डाक्टर मानिक ने बताया था कि वृत्तों की यह रहस्यमयता मानव जाति को अवश्य ही प्रभावित करेगी, और कर भी रही है, जैसे सूखा पड़ना या अन्य प्राकृतिक प्रकोप।

डाक्टर मानिक के इण्टरव्यू के प्रकाशन के बाद समाचार जगत तथा सामान्य जन में उत्सुकता बढ़ गयी थी कि आखिर ये वृत्त कैसे हैं। लेकिन डाक्टर मानिक किसी को इण्टरव्यू देना तो दूर, मिलते तक न थे। उनका सहायक मिलने पर यही बताता था कि वे खुद चाहेंगे तभी प्रेस को रिलीज देंगे।

मैंने डाक्टर मानिक को फोन किया, तो उनके सहायक ने बताया कि वे अभी डेढ़-दो हफ्ते तक किसी से नहीं मिल सकेंगे। मैंने उससे कहा कि दरअसल फारेन प्रेस के लिए ही मैं उनसे मिलना चाहता हूं। उसने कहा कि मैं उसे अगले दिन फोन कर लूं।

मुझे उम्मीद हो चली थी कि विदेशों में अपनी लोकप्रियता को ध्यान में रखकर डाक्टर मानिक मुझे इनकार नहीं करेंगे। लेकिन मेरे ताज्जुब की सीमा तब न रही जब उन्होंने कहलवा दिया कि मैं पब्लिसिटी का भूखा नहीं हूं। झुंझलाकर मैंने रिसीवर रख दिया और मन में यह सोचा कि इस डाक्टर के बच्चे के बारे में अपने अखबार को कभी कोई डिस्पैच भेजूंगा ही नहीं।

उसी शाम जब मैं काफी हाउस में बैठा था, तो ठण्डे दिमाग से सोचने पर मैंने पाया कि वास्तव में वैज्ञानिकों की अपनी पब्लिसिटी में रुचि नहीं होती। वे भी तो एक तरह के दार्शनिक होते हैं। और मुझे डाक्टर मानिक की बात का बुरा न मानकर एक बार फिर उनसे अनुरोध करना चाहिये और यह प्रयत्न करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये कि उनसे मेरी मुलाकात हो जाय।

काफी समय तक इस विषय पर सोचने के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यहां अखबार वाले की अकड़ नहीं चल सकती। मुझे उनसे अनुमति कुछ सैद्धान्तिक वादविवाद के लिए लेनी चाहिये। मैं अखबारों की दुनिया में आने से पहले आक्सफोर्ड में भौतिक-विज्ञान का अध्यापक था। और मुझे यह अच्छी तरह मालूम था कि डाक्टर मानिक भले ही ज्ञान के मामले में मुझसे काफी आगे बढ़े हुए हों, पर मेरा ज्ञान इतना तो है ही कि उनसे बात-चीत कर सकूं।

मैंने इस बार फोन पर उनके सहायक से कहा, "क्या डाक्टर मानिक वृत्तों की समस्या पर सैद्धान्तिक आधार लेकर मुझसे बातचीत करने के लिए कुछ समय निकाल सकेंगे। हां, इस बात का मैं उन्हें यकीन दिलाता हूं कि जब तक वे नहीं कहेंगे, मैं प्रेस को कुछ भी नहीं दूंगा।"

उनके सहायक ने कहा, "आप अपना फोन नम्बर दे दीजिए। पूछकर मैं आपको खबर कर दूंगा।"

मैंने अपना फोन नम्बर दे दिया।

अगले दिन मैं व्यग्रता से डाक्टर मानिक के फोन की प्रतीक्षा करता रहा। जब भी घण्टी बजती थी, मैं यही सोचता था कि डाक्टर मानिक के यहां से फोन होगा। लेकिन ऐसा नहीं हुआ।

दो दिन और बीत गये। तीसरे दिन फोन आया। उनका सहायक बोल रहा था। उसने कहा, "आप रविवार को दस बजे सुबह आ जाइए। डाक्टर मानिक आपसे बात करने के लिए तैयार हैं।"

मैं जब पहुंचा, डाक्टर मानिक लान में बैठे धूप सेंक रहे थे।

हैट उतारकर मैंने उनका अभिवादन किया, फिर उनके पास ही खड़ा हो गया। पास पड़ा कुर्सी की ओर इशारा करते हुए उन्होंने कहा, "मिस्टर स्मिथ, हैव सीट। बैठिए, बैठिए। लेकिन एक बात कहना चाहूंगा, इफ यू डोण्ट माइण्ड। दरअसल हमारे देश में जाड़े के दिनों में हैट की कोई जरूरत नहीं।"

"दैट आइ नो।" मैंने मुस्कराकर कहा।

फिर डाक्टर मानिक ने एक जोरदार ठहाका लगाया। मुझे उनकी खुशमिजाज तबीयत बहुत अच्छी लगी।

डाक्टर मानिक ने फिर कहा, "क्या मैं आपकी पूरी तारीफ जान सकता हूं, मेरा मतलब है कि आपकी ऐस्ट्रानामी में कैसे रुचि हो गयी?"

मैंने उनको अपने पिछले जीवन का संक्षिप्त परिचय दिया और बताया कि भौतिक-विज्ञान मेरा प्रिय विषय था। मैं आक्सफोर्ड में पांच वर्षों तक मास्टरी भी कर चुका हूं। लेकिन अमरीका जाने का मुझे मौका लगा और फिर वहां साइंस करेस्पाण्डेण्ट बनकर अखबारों की दुनिया की ओर खिंच गया।"

उन्होंने कहा, "यह भी बुरा नहीं है। साइन्स न्यूज देने के लिए रिलायबल आदमी का होना जरूरी है। और मुझे इस बात की खुशी है कि आपके अखबार का साइंस करेस्पाण्डेण्ट एक वैज्ञानिक है।"

हम अभी इधर-उधर की बातें करते रहे, तभी दो गिलासों में हमें पीने के लिए शरबत आया। मैंने इस बार चुटकी लेते हुए कहा, "डाक्टर मानिक, मैं यह नहीं समझा जाड़े में किसी हाट ड्रिंक के बजाय यह कोल्ड ड्रिंक क्यों?"

उन्होंने मुस्कराकर कहा, "यह हाट ड्रिंक आपके यहां की परम्परा है। हम कभी हाट नहीं होते, हमेशा कोल्ड रहते हैं। कोल्ड में कोल्ड, हाट में कोल्ड। वी आर आलवेज कोल्ड।"

इसके बाद उन्होंने फिर जोरदार ठहाका लगाया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी उन वृत्तों के विषय में फिर बातचीत शुरू हो गयी। डाक्टर मानिक ने बताया, "ये वृत्त अब तक मेरे लिए भी आश्चर्यजनक बने हुए हैं, हालांकि उनका बहुत कुछ सैद्धान्तिक पक्ष मेरे हाथ में आ गया है। जरा कल्पना करो, स्मिथ, आकाश में अनजान दूरी से प्रकाश के वृत्तों का फैलाव जो पृथ्वी की तरफ हो, क्या आश्चर्यजनक नहीं लगेगा? और ये वृत्त दूरी पर छोटे होते गये हैं, लेकिन ऐसा केवल दूरी के कारण लगता है। वृत्त एक ही आकार के हैं। ये प्रकाश के वृत्त वर्णक्रम के सात रंगों के बने हैं। यानी सात वृत्तों का एक क्रम और उसके बाद फिर दूसरा क्रम और इसी तरह तीसरा, चौथा और पांचवा। लेकिन मिस्टर स्मिथ, आप वायदा कर चुके हैं, अखबार में यह सब कुछ नहीं देंगे। मैं अभी बहुत-सी बातें गुप्त रखना चाहता हूं।"

मैंने कहा, "आप निश्चिन्त रहिए, डाक्टर मानिक।"

डाक्टर मानिक ने कहना जारी रखा, "आप विश्वास करें या न करें, अनन्त अन्तरिक्ष में ऐसे बहुत से पिण्डों के होने की सम्भावना है जहां सभ्यता का विकास हमारी सभ्यता के विकास से आगे की सीमा तक पहुंचा हुआ होगा। मेरा मत है कि ये वृत्त उस पिण्ड तक फैले हुए हैं और वास्तव में यह कहना ज्यादा अच्छा रहेगा कि इन वृत्तों का फैलाव उस पिण्ड से हमारी पृथ्वी तक है। उस पिण्ड के मानव जिन्हें अति मानव कहना ठीक होगा, ऐसी प्रकाश व्यवस्था का विकास कर चुके हैं जो दूसरे ग्रहों से सम्पर्क स्थापित कर उन्हें सब सूचनाएं तो देती है, साथ ही उस ग्रह के वायुमण्डल को भी नियन्त्रित करती है..."

मैंने कहा, "माफ कीजिएगा, क्या यह सम्भव नहीं हो सकता कि यह प्रकाश-व्यवस्था सामान्य हो, या कोई ऐसा पिण्ड अनन्त दूरी पर से गुजर रहा हो, जिसके शक्तिशाली सूर्य के प्रकाश के परावर्तन से ये वृत्त बने हों, और उस सूर्य के प्रकाश का वही वर्णक्रम हो जो हमारे सूर्य के प्रकाश का है?"

डाक्टर मानिक ने कहा, "यह बात मैं मान नहीं सकता हूं। पहले मेरा भी यही खयाल था, लेकिन अब जब काफी कुछ जानकारी हासिल कर चुका हूं, यह नहीं मान सकता। मैंने प्रकाश को स्थिति बदलते हुए अनुभव किया है और वृत्तों को छोटा-बड़ा होते हुए देखा है। यह सब बिलकुल जासूसी की तरह लगता है।"

"जासूसी कैसी, डाक्टर मानिक?" मैंने पूछा।

"आप यही समझिए कि हम खुद अपनी कोई प्रकाश व्यवस्था विकसित कर लेते हैं और उस व्यवस्था में यह प्रबन्ध है कि हम किसी ग्रह के वायुमण्डल को भेदकर वहां के लोगों के फोटो फोटान कणों की सहायता से लेते हैं; या यह कि वहां के वायुमण्डल को संचालित करते हैं, तो क्या यह जासूसी नहीं कहलायेगी?"

मैंने कहा, "तो क्या, डाक्टर मानिक, आप यह भी मानते हैं कि वहां के लोगों को विपरीत पदार्थ का भी पता चल चुका है?"

"मैंने कहा न कि वह एक अतिविकसित सभ्यता है और उन्हें वह सब जानकारी हो सकती है जो हमें है। यह भी हो सकता कि वे विपरीत पदार्थ के बिना ही फोटोन कणों को उपलब्ध कर लेते हों।"

"तो क्या, डाक्टर मानिक, यह सही है कि वे लोग हमारे वायुमण्डल को नियन्त्रित कर रहे हैं और प्राकृतिक प्रकोप उन्हीं के कारण हैं।"

डाक्टर मानिक ने निश्चयात्मक ढंग से कहा, "बिलकुल। इसमें जरा भी शक नहीं।"

"तो इससे बचने का उपाय क्या है? क्या हम भी उनके वृत्तों के ही सदृश कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृत्त समूह उस ग्रह पर भेज सकते हैं ?"

डाक्टर मानिक ने कहा, "यह मुमकिन नहीं है कि हम भी कोई वृत्त-समूह उस पिण्ड पर भेजें। दरअसल ऐसा कर पाना हमारे लिए मुमकिन इस तरह नहीं होगा कि वे सब विधियां हमारी जानकारी में नहीं हैं जिनके जरिये फोटोन कणों को इतनी दूरी तक भेजा जा सके।"

"मैंने कहा कि यह सही बात है, पर क्या यह सम्भव होगा कि आप मुझे अपने उस विशेष यन्त्र से वह वृत्तों वाली शृंखला दिखायें। मुझे यह सब रहस्यपूर्ण लग रहा है, फिर भी आपकी खोज दुनिया में अनूठी है। कम से कम इस दृष्टि से कि यह सब दुनिया में एक नयी बात है।"

उन्होंने कहा, "तुम खाना खाने के लिए रुक जाओगे और आज की रात मेरे साथ रहोगे। मिस्टर स्मिथ, आपने मुझसे वायदा किया है। और आप मेरे मेहमान हैं। मैं वह सब कुछ आपको बताऊंगा। लेकिन मेरा समय हो गया है और अब मैं स्टडी में जाऊंगा। खाने पर फिर आपसे मुलाकात होगी।"

फिर डाक्टर मानिक चले गये।

डाक्टर मानिक के जाने के बाद एक दूसरा आदमी आया जो मुझे ड्राइंगरूम में ले गया। वहां मैंने काफी पी। काफी पीकर मैं आराम से बैठा यह सोचने लगा, क्या यह सब इतना रहस्यपूर्ण है ? क्या उस अजनबी ग्रह के अतिमानव हमारी सभ्यता मिटाना चाहते हैं और इसी लिए हमारे वायुमण्डल को नियन्त्रित कर रहे हैं। अचानक मेरे खयाल में पिछले दस वर्ष घूम गये। कितना अधिक प्राकृतिक प्रकोप, और कितनी हानि ! यह सब क्या है ? क्या ये सब ऐसी बातें हैं जिनका सम्बन्ध उन वृत्तों से ही है ? तो यह बड़ी विचित्र बात है, लेकिन ऐसा क्यों, किस लिए ? वे ऐसा क्यों चाहते हैं ? क्या अतिमानव ऐसा ही चाहा करते हैं ? और क्या हम लोग भी किसी दिन अतिमानव हो जायेंगे? लेकिन ऐसा क्यों होता है ? क्यों ?

और मैं नहीं जानता, मुझे यह सब सोचते-सोचते कब नींद आ गयी।

मेरी आंख खुली तो देखा, मुझे जगाया जा रहा है। एक काला-सा आदमी मेरे साथ खड़ा था। उसने कहा कि डाक्टर आपका ड्राइनिंगरूम में इन्तजार कर रहे हैं। मैंने कहा कि अभी मैं बाथरूम जाना चाहूंगा और मेरे लिए थोड़ा गरम पानी का इन्तजाम हो सकेगा ? मैं हाथ मुंह धोना चाहता हूं। मैंने उसकी तरफ देखा।

वह आदमी बोला, "आप आ जाइए।"

मैं उसके पीछे-पीछे चलने लगा। उसने टाइल्ज के एक कमरे की ओर इशारा करके कहा, "यह रहा बाथरूम और बगल की इन सीढ़ियों पर से आप ऊपर डाइनिंगरूम में पहुंच जायेंगे। कृपया जल्दी करें, आपका डाक्टर मानिक इन्तजार कर रहे हैं।"

वास्तव में डाक्टर मानिक डाइनिंगरूम में मेरा इन्तजार कर रहे थे। पहुंचा, तो मुझे देखते ही उन्होंने कहा, "आओ भई स्मिथ। तुमने काफी देर कर दी।"

मैंने कहा, "डाक्टर साहब, दरअसल मैं सो गया था।"

उन्होंने मुस्कराकर कहा, "क्या तुमने सोये-सोये कोई सपना देखा ?"

मैंने बताया, "डाक्टर साहब, दरअसल मैंने कोई सपना नहीं देखा, लेकिन सोये-सोये ही मेरे दिमाग में एक बात कौंध गयी कि वे अतिमानव कैसे होंगे और क्या हम लोग भी अतिमानव बनना चाहते हैं ?"

डाक्टर मानिक ने कहा कि मनुष्य का भाग्य उसे अतिमानव जरूर बनायेगा। यह एक ऐसी बात है जिसे हम और तुम इनकार कर सकते हैं, लेकिन यही सच्चाई है। और दरअसल जो सच्चाई है उसे इनकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

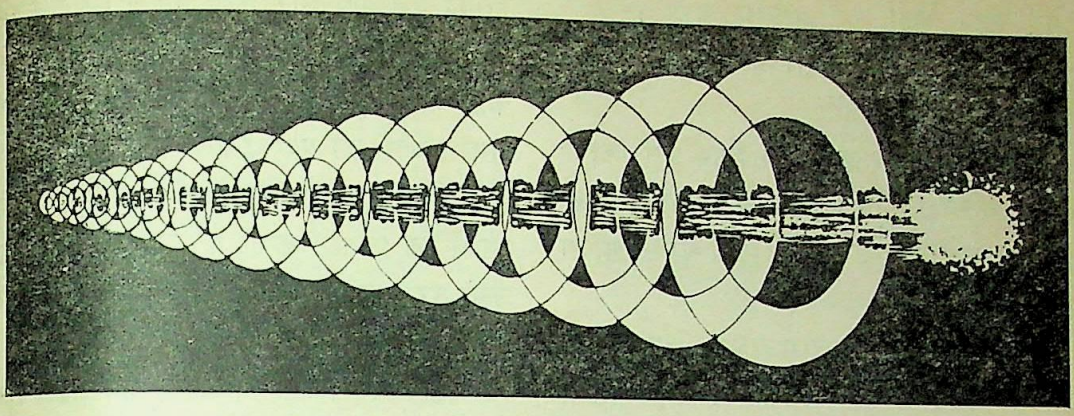

ओह ! यह रहस्यमयता ! अनन्त तक फैले वृत्त । आखिर यह सब क्या है ?

करना ठीक नहीं होगा। तुम यह सोचो कि हम लोग जो कुछ भी करते हैं, वह इसलिए ही कि उन्नति के शिखर पर पहुंचे। आखिर क्यों ऐसा चाहते हैं? क्या तुम बता सकते हो?"

मैंने कहा, "यही हमारा स्वभाव है।"

डाक्टर मानिक मुस्कराकर बोले, "तो क्या यह मुमकिन है कि हम अपने स्वभाव से छुटकारा पा जायेंगे?

मैंने कहा, "नहीं। यह मुमकिन नहीं लगता। हां, एक तरह से मुमकिन हो सकता है, जब हम यह सोच लें कि हम अपना सब कुछ बदल सकते हैं।"

"तो क्या तुम यह सोचते हो कि जो कुछ प्राकृतिक है उसे बदला जा सकता है?"

"हां और नहीं, दोनों बातें हैं।"

डाक्टर मानिक बोले, "लगता है हम विज्ञान से हट रहे हैं। अरे, भई, तुम्हें तो अभी रात भर रुकना है और तुम उन वृत्तों को भी अभी देखोगे। फिर हम बहुत-सी बातें करेंगे। क्यों ठीक है न?"

और हमने खाना शुरू किया।

खाना खाने के बाद डाक्टर मानिक फिर अपने स्टडी में चले गये और कह गये, "रात के खाने के बाद हमारी मुलाकात होगी और उसके बाद मैं तुम्हें वहां ले चलूंगा, जहां से वे वृत्त नजर आते हैं।"

मैं फिर ड्राइंगरूम में आ गया।

इस समय मैं बिलकुल अकेला था और उसी समस्या पर फिर से सोच रहा था। यह समस्या बहुत अजीब थी और मैं बड़ी बेसब्री में कुछ घण्टे गुजार रहा था।

लेकिन मैं अतिमानवों की समस्या नहीं सुलझा पा रहा था। क्या एक समय ऐसा आ सकता है जब इस पृथ्वी पर हमला हो जायेगा और हमला करने वाले क्या किसी और ग्रह के प्राणी होंगे? तब हमारी पृथ्वी पर की लड़ाइयों का क्या होगा? लेकिन यह वृत्तों की समस्या? यह क्या बात है? पर कुछ ही समय बाद रहस्य से मैं परिचित हो जाऊंगा। तब?

रात का खाना खाने से पहले मैं सो गया था। और नींद के बाद मैं उठा तो मेरा दिमाग कुछ हलका हो चुका था। लेकिन डाइनिंगरूम में जब मेरी मुलाकात डाक्टर मानिक से हुई तो मैंने पाया कि वे काफी गम्भीर हैं। खाने पर हमारी कोई विशेष बात नहीं हुई। प्रायः हम चुप ही रहे। एक-दो बार अमरीका के शहरों के बारे में उन्होंने पूछा, फिर वही मौन।

जब हम खाना खा चुके, तो डाक्टर मानिक ने कहा, "मैं इस समय जरा लान में कुछ देर टहलता हूं। यदि तुम चाहो तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे साथ चलो, या आराम करो।"

मैंने कहा, "यह तो अच्छा है कि हम थोड़ी देर टहल ले।"

हम लान में आ गये। फिर हम काफी देर तक टहलते रहे। हममें से किसी ने किसी से कुछ नहीं कहा। यहां भी मौन का साम्राज्य रहा।

लान के करीब पचास चक्कर लगा लेने के बाद डाक्टर मानिक बोले कि ठण्ड तो काफी बढ़ गयी है, फिर भी मैं तुम्हें अपनी आबजर्वेटरी में ले चलूंगा जो छत पर है।

मैंने कहा, "ठण्ड की कोई बात नहीं। हम दोनों ओवरकोट पहने हुए हैं। क्या वहां काफी समय लगेगा?"

उन्होंने कहा, "हो सकता है। पर जब तुम आ गये हो, तो समय का क्या सवाल है। तुम तो उन वृत्तों को देखोगे ही।"

"निश्चय ही। ऐसी कोई बात नहीं है।" मैंने कहा।

उस बड़े लान के कई चक्कर लेने के बाद डाक्टर मानिक मुझे छत पर ले गये जहां उन्होंने अपनी आब्जर्वेटरी बना रखी थी। दूरबीन-जैसा एक बहुत बड़ा उपकरण वहां रखा था। उसके पास ही कई और उपकरण थे। डाक्टर मानिक ने दूरबीन-जैसे उस उपकरण को घुमाकर आकाश की ओर किया। उन्होंने एक बटन दबाया तो उस उपकरण में लगी कई बत्तियां जल गयीं। फिर कुतुबनुमा-जैसी एक डिबिया में देखते हुए उन्होंने कहा, "अभी पांच डिग्री का फर्क है।"

फिर उन्होंने एक हैण्डिल घुमाकर उपकरण को ठीक किया। उपकरण के आई-पीस में झांकते हुए बोले, "अब ठीक हो गया है।"

मेरी ओर घूमकर डाक्टर मानिक बोले, "मिस्टर स्मिथ, यह मेरा टेलिस्कोप अनोखा है। यह और कुछ नहीं देख सकता, क्योंकि इसकी बनावट दूसरे तरह की है। यह केवल फोटान कणों को देख सकता है। अन्तरिक्ष में कहीं भी फोटान कण हों, यह उन्हें लक्षित कर लेगा। वृत्तों की यह शृंखला फोटान कणों की है, लेकिन एक सिद्धान्त मेरी समझ में नहीं आया कि फोटान कणों के समूह में भी क्या उसी तरह वर्णक्रम होता है जिस तरह सामान्य प्रकाश में।"

डाक्टर मानिक ने फिर मुझसे आई-पीस में से झांकने के लिए कहा। मैंने देखा। ओह! यह रहस्यमयता। अनन्त तक फैले वृत्त। आखिर यह सब क्या है। मैं चौक गया। डाक्टर मानिक को पुकारकर कहा, "अन्तरिक्ष में वृत्तों का यह अन्तहीन फैलाव! और इसकी खोज! निश्चय ही आप दुनिया के पहले व्यक्ति हैं जिसने कुछ अजीब समस्याओं को सामने रख दिया है।"

"मैं हट गया। मानिक ने उपकरण को बन्द कर दिया। मुझसे बोले, "आओ नीचे चलें।"

मैं उनके साथ नीचे आया।

फिर विदा होते हुए बोला, "डाक्टर मानिक, मैं आपका बहुत शुक्रगुजार हूं कि आपने निजी तौर पर मुझे मौका दिया और अपनी खोज को मेरे सामने रखा।"

लान के गेट तक वे मुझे छोड़ने आये। उन्होंने कहा, "तुमने वायदा किया है, प्रेस में कुछ भी नहीं दोगे।"

"दैट आई रिमेम्बर।" मैंने कहा और चला आया।

लेकिन मैं जानता हूं, डाक्टर मानिक मुझ पर नाराज हुए होंगे। मैं प्रेस के प्रति हमेशा से ईमानदार रहा हूं। इतनी रहस्य-मयता मैं अपने अखबार के लाखों पाठकों से छिपा नहीं सकता था। यह मेरे लिए असम्भव था। मैं डाक्टर मानिक से फिर मिलने जाऊंगा। देखूंगा, वे क्या कहते हैं। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक अद्भुत प्याली

अशोककुमार चौबे, एम. एस-सी.

विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसन्धान-कार्य किये जाते हैं। सभी अनुसन्धानों का एक निश्चित उद्देश्य होता है। धातु-विज्ञान भी ऐसा ही क्षेत्र है जिसमें होने वाले अनुसन्धान बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। धातु-विज्ञान के अनुसन्धानों का मुख्य उद्देश्य उद्योगों के लिए नयी-नयी धातुएं प्राप्त करना, उनके गुणों का अध्ययन तथा उनके गुणों में कुछ और उन्नति करना है। धातु-विज्ञान में अनुसन्धान के लिए विज्ञान की अन्य शाखाओं तथा यान्त्रिकीय-विज्ञान से सम्बन्ध स्थापित करना पड़ता है।

एक पूर्ण प्याली की आवश्यकता

धातुओं के इस अध्ययन में धातुओं को तरल बनाना आवश्यक होता है। धातुशोधन, धातु युग्मीकरण तथा धातु के मीणभीकरण के लिए भी उच्च-तापक्रम पर धातुओं को गलाना होता है। उद्योग तथा अनुसन्धानों में धातुओं के द्रवीकरण के समय धातु की शुद्धता का भी विशेष ध्यान रखना होता है। जिस प्याली में रखकर धातुएं गरम की जाती हैं, उस प्याली का पदार्थ भी पिघलकर धातुओं में लग जाता है तथा धातुएं विदेशी तत्त्वों से मिश्रित हो जाती हैं। अतः इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए एक पूर्ण प्याली की अत्यधिक आवश्यकता है—ऐसी प्याली जो उच्च तापक्रम तक अपनी मूल स्थिति में बनी रहे तथा उसमें रखकर धातुओं का द्रवीकरण किया जा सके।

धातु-विज्ञान में काम आने वाली प्यालियां अधिकतर ऐसे तत्त्वों की बनायी जाती हैं जो रासायनिक तथा भौतिक गुणों में अपनी मूल अवस्था में बनी रहें। ज्वाला से जो ताप प्याली पर डाला जाता है, वह उसके बाह्य सतह पर डाला जाता है, तथा ताप प्याली के शारीरिक ढांचे में होता हुआ उस पदार्थ को मिलता रहता है जो द्रवीकरण के हेतु प्याली में रखा रहता है। प्याली का तापक्रम भी धातु के तापक्रम के समान ही हो जाता है। प्याली किस धातु की हो, यह उसमें द्रवीभूत धातु के द्रवणांक पर निर्भर करता है, तथा इस बात पर भी निर्भर करता है कि वह धातु रासायनिक रूप से क्रियाशील तो नहीं है। बहुत-सी ऐसी धातुएं भी हैं जिनके द्रवीकरण के लिए कोई प्याली उपलब्ध नहीं है।

द्रवीकरण की विधि

धातुओं के द्रवीकरण की एक विधि तो यह है कि किसी भी प्याली का प्रयोग नहीं किया जाय तथा विद्युत-चुम्बकीय क्षेत्रों का प्रयोग करके धातुओं का द्रवीकरण किया जाय। इस कार्य के लिए एक विद्युत् धारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

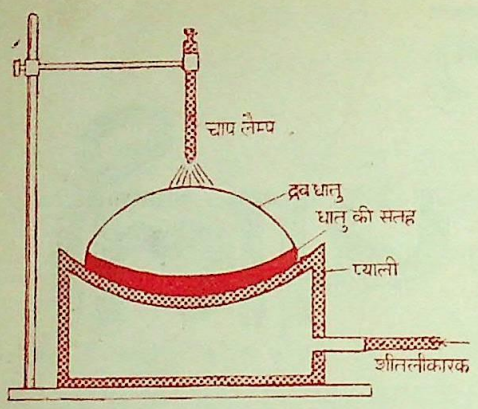

चांदी की प्याली तथा धातु में चलने वाली विद्युत् धाराओं की दिशा एक-दूसरे के विपरीत होती है। ये धाराएं ही धातु का द्रवीकरण करती हैं और धातु तथा प्याली को पृथक-पृथक रखती हैं

द्वारा प्रेरण विधि से धातु में विद्युत्-तरंगें पैदा की जाती हैं। ये विद्युत्-तरंगें ही धातु का द्रवीकरण करती हैं। उत्पन्न हुई विद्युत् धारा तथा प्रारम्भिक विद्युत् धारा (जो धातु में प्रेरण द्वारा विद्युत् उत्पन्न करती है) के बीच जो विद्युच्चुम्बकीय बल कार्य करते हैं, वे इस द्रवीभूत धातु को उर्ध्वाधर बल में सन्तुलित किये रहते हैं, तथा यह एक स्थान पर स्थित रहती है। द्रवीकरण की इस क्रिया में किसी भी प्याली का उपयोग नहीं किया जाता, लेकिन यह विधि पूर्ण रूप से सफल नहीं हो सकती, क्योंकि पृथ्वी के आकर्षण के विरुद्ध धातु सन्तुलित करने के लिए प्रयुक्त विद्युच्चुम्बकीय क्षेत्रों की बहुत ही सही गणना की जानी चाहिये। विद्युत धारा के मान में थोड़ा भी परिवर्तन आ जाय, तो सम्पूर्ण क्रिया नष्ट हो जायेगी और द्रवीभूत धातु नीचे गिर जायेगी।

दूसरी विधि में धातु एक छड़ के रूप में ली जाती है और वह स्वयं ही पिघली हुई धातु के लिए प्याली का कार्य करती है। द्रव का तल बहुत ही कम होता है, और तल-तनाव के बल के कारण यह नीचे नहीं गिरता है। द्रव एक रूप से तैरता रहता है और द्रव का एक मण्डल बन जाता है। इस विधि को 'तैरने वाले द्रव-मण्डल का निर्माण' भी कहते हैं। इसमें भी धातुओं को प्रेरण द्वारा, इलेक्ट्रान किरणों अथवा इन्फ्रारेड रश्मियों द्वारा गरम किया जाता है। पिघली हुई धातु द्रव के रूप में एक सिरे से दूसरे सिरे तक बहकर जाती है तथा अपने साथ अशुद्धियों को भी लेती जाती है। दूसरे सिरे पर सभी अशुद्धियां एकत्र होती रहती हैं। इस बात का ध्यान रखना होता है कि धातु छड़ के रूप में कोई परिवर्तन न आ जाये। जिन धातुओं का घनत्व अधिक होता है उनके लिए इस विधि का उपयोग नहीं हो सकता, क्योंकि ऐसी धातुओं का तल-तनाव बहुत ही कम होता है, फिर भी इस विधि का उपयोग बहुत किया जाता है।

धातु द्रवीकरण की इन दोनों विधियों में ही प्याली का प्रयोग नहीं किया जाता। ये विधियां इसलिए बनायी गयीं, क्योंकि धातुओं को रखने के लिए कोई आदर्श प्याली प्राप्त नहीं थी। किसी तरह की प्याली ली जाय लेकिन फिर भी धातु द्रव में वह प्याली का तत्त्व मिल ही जाता है। पिछले वर्षों में एक ऐसी विधि का प्रयोग होता रहा है जिसमें धातु द्रव तथा प्याली को अलग-अलग रखा जा सकता था। एक प्याली में धातु को रखकर रेडियो आवृत्ति तरंगों वाले प्रेरण कुण्डल से धातु को गरम किया जाता है। इस प्रकार प्याली की निचली सतह नहीं गरम हो पाती तथा धातु भी पूर्ण रूप से नहीं पिघलती। प्याली तथा धातु द्रव के बीच धातु की एक छोटी-सी परत बन जाती है। और यह विशेष रूप से ठण्डी भी होती है तथा धातु द्रव को प्याली तत्त्व से मिलने के लिए रोकती भी है। धातु शोधन तथा मणिभीकरण में यह विधि पूर्ण रूप से सफल नहीं। यदि धातु का एक मणिक बनाना हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब उसके लिए पिघली हुई धातु का ही एक छोटा-सा कण धातु द्रव में डुबा दिया जाता है, फिर उसके ऊपर ही धातु के अन्य कण भी जमने लगते हैं और धातु मणि प्राप्त हो जाती है। मणिभीकरण के लिए जिस स्थान पर छोटा-सा कण डुबाया जाता है उस स्थान पर ताप का नियन्त्रण करना आवश्यक होता है। तापक्रम का एक निश्चित मान उस स्थान पर होना चाहिये जिससे धातु का मणिभीकरण हो सके। साथ ही साथ धातु को द्रव रूप में भी रखना होता है। यह ठण्डा तथा गरम करने की दोनों क्रिया में एक ही साथ करना अत्यन्त कठिन है। इसके फलस्वरूप धातु के बहुत से अवांछनीय मणिभ भी प्राप्त हो जाते हैं।

एक नवीन प्रणाली

हम जानते हैं कि प्रेरण कुण्डल अधिकतर तांबे की नलियों के बने होते हैं, तथा ये नलियां पानी द्वारा ठण्डी की जाती हैं। २०००° सें. तक धातुओं को गरमकरने के पश्चात् भी ये नलियां ठण्डी बनी रहती हैं। इन नलियों को ठण्डी उर्जा प्रदान करने के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। इस विचार को ध्यान में रखते हुए एक ऐसी प्याली का निर्माण किया गया जिसमें प्याली को ही प्रेरण कुण्डल का रूप दिया गया। इस सिद्धान्त का प्रयोग करके चांदी की प्याली का निर्माण किया गया।

इस प्याली को रेडियो तरंगों के क्षेत्र में रख दिया गया तो इसने ही ट्रांसफारमर के द्वैतिक वेष्ठन का कार्य किया। प्याली की बाह्य सतह में लगभग १०० एम्पीयर की धारा प्रवाहित की जाती है। यह धारा द्रवीकरण के हेतु लायी गयी धातु में धारा प्रेरित करती है। प्रेरित धारा धातु का द्रवीकरण करती है।

प्राथमिक वेष्ठन चांदी की प्याली में उच्च धारा प्रेरित करता है तथा प्याली धातु में धारा प्रेरित करती है जो धातु को द्रवीभूत करती है। प्याली की सतह पर तथा धातु में चलने वाली धाराओं की दिशा एक-दूसरे के विपरीत होती है। इस कारण से प्याली और धातु के बीच एक प्रति-आकर्षण का बल कार्य करता है। यह बल धातु को प्याली से अलग, ऊपर की ओर उठाये रहता है। प्राथमिक कुण्डल तथा धातु में एक बल नीचे की ओर कार्य करता है तथा धातु का भार भी नीचे की ओर कार्य करता है। इन दोनों का बल तथा पहले वाला बल एक-दूसरे के विपरीत होते हैं। इन बलों के कारण ही धातु प्याली से दूर सन्तुलित अवस्था में बनी रहती है।

धातु द्रवीकरण की यह क्रिया अक्रियाशील वातावरण में होती है। अतः कोई यह कह सकता है कि पिघली हुई धातु तथा प्याली के बीच के स्थान में वायुमण्डलीय गैसें भरी जानी चाहिये। लेकिन वास्तव में पिघली हुई धातु प्याली में इस प्रकार रखी होती है, जैसे किसी शीशे की बोतल में पारा रखा जाता है। पारा बोतल से लगता नहीं,

द्रव धातु तथा प्याली के बीच ठोस धातु की सतह जम जाती है जो द्रव तथा प्याली को पृथक रखती है जिससे द्रव में अशुद्धि नहीं मिल पाती

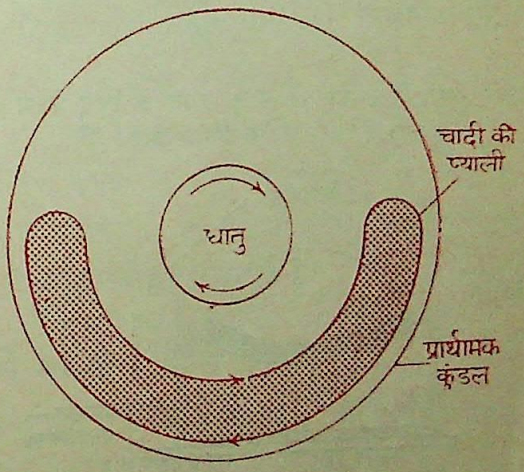

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे पृथक भी रहता है तथा उसमें रखा भी रहता है। ठीक इसी प्रकार इस नवीन प्याली में द्रवीभूत धातु रखी होती है। प्याली की बाह्य सतह विद्युत धारा के वहन के कारण गरम हो जाती है। पानी द्वारा इसे ठण्डा करना होता है। इस नवीन, अद्भुत प्याली की बाह्य सतह ऐसी धातु की होनी चाहिये जो विद्युत तथा ताप दोनों ही की पूर्ण सुचालक हो। इससे यह लाभ होगा कि धातु में विद्युत का प्रेरण पूर्ण रूप से हो जायगा। चांदी के स्थान पर तांबा तथा एल्युमीनियम धातु का उपयोग भी बाह्य सतह के रूप में हो चुका है।

इस अद्भुत प्याली का उपयोग करके बहुत-सी धातुओं का द्रवीकरण किया जा सकता है। नीओबियम (२५००°सें. द्रवणांक), मोलीब्डनम (२६२०°सें.) तथा टैण्टुलम (२९९७°सें.) और वे धातुएं भी जिनके द्रवणांक २०००°सें. से नीचे हैं, जैसे जिन्कोनियम तथा टाइटेनियम धातुएं जिन्कोनियम डाइवोराइड तथा टाइटेनियम कारवाइड-जैसे धातुयुग्मों का भी द्रवीकरण किया जा सका है। इनके मणिभ भी प्राप्त किये जा सके हैं। इन धातुओं के द्रवणांक ३०००°सें. से भी ऊपर हैं। इतनी सुगमता से इन धातुओं का द्रवीकरण करके शोधन हो जाता है कि धातु-विज्ञान तथा ठोस भौतिक-विज्ञान (Solid State Physics) में धातु द्रवीकरण के लिए यह प्याली एक महत्त्वपूर्ण उपकरण बन गयी है। शीघ्र ही अमरीका में बेल टेलीफोन प्रयोगशाला में बैनेडियम सिलिसाइड की परम चालक छड़ों का निर्माण करने के लिए इसी विधि का निर्माण किया गया है। इसी विधि द्वारा इटीरियम, लैंथेनम तथा सीरियम धातुओं का भी द्रवीकरण किया जाता है। सभी द्रवीकरण क्रियाओं में शून्य प्रतिशत भी कोई अशुद्धि नहीं आयी। ट्रेसर विधि द्वारा इन धातुओं का परीक्षण किया गया लेकिन फिर भी अशुद्धियों की कोई भी मात्रा प्राप्त नहीं हुई और धातुओं के आदर्श नमूने प्राप्त हुए।

आर्क लैम्प के स्थान पर धातु द्रवण के लिए प्रेरण कुण्डल का भी प्रयोग किया जाता है

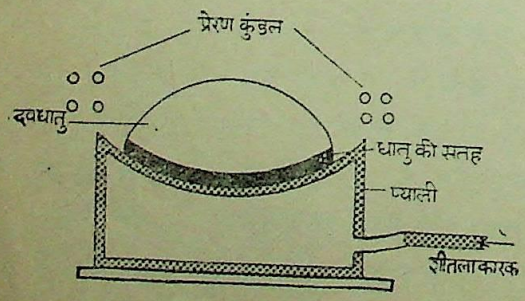

धातुओं के एक मणिभ का निर्माण

मणिभीकरण के लिए जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है, पिघली हुई धातु में उसी धातु का एक छोटा-सा कण डुबा दिया जाता है। धातुओं के अन्य कण इसी कण पर एकत्र होते रहते हैं और वे धातु के एक मणिभ का निर्माण करते हैं। मणिभीकरण के लिए ऊपर बतायी गयी अद्भुत प्याली का भी उपयोग किया गया। प्याले के आकार के रूप में बहुत-सी चांदी की नलियां लगा दी गयी थीं, प्राथमिक वेष्ठन से इन नलियों में धारा प्रेरित की गयी। एक सिरे पर सभी नलियां आपस में मिली हुई थीं। छोटी-छोटी बहुत-सी नलियां इस लिए लगायी गयी थीं जिससे धारा प्याली की आन्तरिक सतह पर प्रवाहित हो। इन नलियों की सभी धाराओं ने मिलकर द्रवीभूत होने वाली धातु में तीव्र धारा का प्रेरण कर दिया, जिससे धातु पिघल सके और प्याली से पृथक भी रह सके। इस विधि द्वारा सिलिकन तथा मोलीब्डनम के एक-एक मणिभ प्राप्त किये गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ और उपयोग

धातुओं के अतिरिक्त वे सभी तत्त्व जिनमें प्रेरण द्वारा विद्युत उत्पन्न की जा सकती है, इस नवीन अद्भुत प्याली द्वारा द्रवीभूत किये जा सकते हैं। कुछ ऐसे पदार्थ भी हैं जो कमरे के तापक्रम पर विद्युत के कुचालक होते हैं तथा कुछ गरम किये जाने पर उनकी सुचालकता बढ़ती जाती है। लाल और सफेद गरम होने पर तो विद्युत के पूर्ण सुचालक हो जाते हैं। ऐसे तत्त्वों को प्रथम उष्मा ऊर्जा द्वारा गरम करके विद्युत का सुचालक बना लिया जाता है। उसके पश्चात् नवीन प्याली द्वारा द्रवीकरण किया जाता है। जब इन पदार्थों में प्रेरण द्वारा विद्युत उत्पन्न हो जाती है, उस समय इनका तापक्रम और भी अधिक बढ़ जाता है और विद्युत प्रतिरोध कम हो जाता है। इस कारण से विद्युत विधि द्वारा इनको द्रवणांक तक और भी सरलता से गरम किया जा सकता है।

अद्भुत प्याली की यह विधि विभिन्न धातुओं के लिए प्रयुक्त की जा सकती है। सम्पूर्ण धातु को गरम न करके धातु के किसी विशेष भाग को भी इस विधि द्वारा गरम किया जा सकता है। इस विधि द्वारा एक इंच व्यास की टैण्टुलम तथा दो इंच व्यास की टाइटैनियम की छड़ों को आपस में छोड़ा गया तथा इस क्रिया में कोई भी विदेशी तत्त्व नहीं आ सके। अधिक शक्ति वाले उपकरणों का प्रयोग करके और भी मोटी छड़ों को जोड़ा जा सकता है, तथा धातु छड़ों की शुद्धता भी बनी रहेगी।

प्रत्येक विधि में कुछ न कुछ सीमाएं

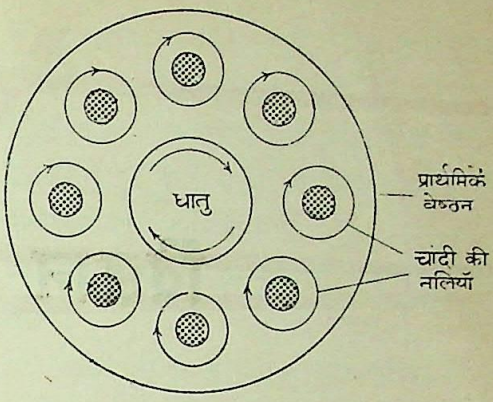

चांदी की सभी नलियां प्रेरण द्वारा धातु में धारा प्रेरित कर देती हैं। यह धारा धातु का द्रवीकरण करती है

तथा दोष होते हैं। प्याली तथा द्रवीभूत धातु के तापक्रम में बहुत अन्तर होता है फिर भी यह विधि उस समय असफल होगी जब शीतलीकारक पानी में हवा के बुलबुले अधिक मात्रा में उपस्थित हों। ३०००°सें. से ऊपर प्रयोग करते समय रेडियो आवृत्ति वाले विद्युत क्षेत्र की विद्युत अवस्थाओं में कुछ परिवर्तन आ जाने पर भी यह विधि असफल हो गयी है।

द्रवीकरण के साथ-साथ जिन पदार्थों का बाष्पन भी होने लगता है उन पदार्थों की शुद्धता को बनाये रखते हुए द्रवीकरण सम्भव नहीं, क्योंकि बाष्पित होकर ये पदार्थ प्याली की आन्तरिक सतह पर जमकर अशुद्धियों को ले लेता है।

इन सभी त्रुटियों के होते हुए भी धातु की यह नवीन प्रणाली बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। उच्च तापक्रम पर धातुओं के शोधन, मणिभीकरण तथा द्रवीकरण के लिए यह अद्भुत प्याली अद्वितीय है। ●

बिना सिलाई के पोशाक तैयार करने वाली मशीन

लन्दन में एक ऐसी मशीन का आविष्कार किया गया है जो बिना सिलाई के स्त्री-पुरुषों के कपड़े सीती है। इस मशीन में लेसर किरणों का प्रयोग होता है जिससे कपड़ा स्वतः ही जुड़ता जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान का महत्त्व

डा. ग्लेन टी. सीबर्ग (अध्यक्ष, अमरीकी अणुशक्ति आयोग)

यह बात क्यों महत्त्वपूर्ण है कि लोग विज्ञान के विषय में कुछ न कुछ जानकारी अवश्य प्राप्त करें ? उनके लिए यह जानना क्यों आवश्यक है कि वैज्ञानिक क्या करता है, उसकी प्रेरणा का स्रोत क्या है और वैज्ञानिक परिणामों में गूढ़ार्थ क्या है ?

दो प्रमुख और परस्पर सम्बद्ध लक्ष्य हैं। प्रथम लक्ष्य दार्शनिक है जिसका सम्बन्ध मानव जीवन के गुण और गरिमा से तथा मानव द्वारा अपनी क्षमताओं के पूर्णतम उपयोग, संक्षेप में मानव के महत्त्व में वृद्धि-से है।

प्राचीन से अर्वाचीन तक, बौद्धिक विपन्नता से सम्पन्नता तक, अनावश्यक भय और अन्धविश्वास से सापेक्ष ज्ञान के सापेक्ष संरक्षण तक संस्कृतियों का विकास—ये अग्रमुखी प्रगति की प्रवृत्तियां ज्ञान के कष्टप्रद आरोहण-सम्बन्धी चरण-चिह्नों से पूरित हैं।

बिजली और भूचाल के मूल स्रोतों की जानकारी तथा इस बात के ज्ञान से कि सृष्टि का केन्द्र होने के बजाय पृथ्वी असीम विराट की झांकी में एक नन्हा बिन्दु मात्र है, मानव-जीवन को श्रेष्ठतर बनाने में योग मिला है।

यह जानकारी कि तृण हरा-भरा क्यों है, तथा वह सूर्य की ऊर्जा को किस प्रकार ग्रहण व आत्मसात करता है, एवं उसके द्वारा विकसित होता है, मानव की सम्पन्नता को बढ़ाती है।

एक अद्भुत वैज्ञानिक क्रान्ति

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यह सभी जानकारी मानव को आगे बढ़ाती है। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, तारों-भरी रात, लहकते वन प्रदेश या इन्द्रधनुष का सौन्दर्य उनके सम्बन्ध में सच्ची जानकारी प्राप्त होने की स्थिति में और बढ़ जाता है। मेरा मत है कि वैज्ञानिक जानकारी से कवि के गीत, संगीतकार की स्वर लहरी या चित्रकार के दृश्यपट की सरारना में ह्रास नहीं होता।

द्वितीय प्रमुख लक्ष्य का सम्बन्ध क्रान्तिकारी सामाजिक परिवर्तन की अवधि में स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण बने रहने तथा लोकतन्त्रीय सरकार के अधिकतम प्रभावकारी ढंग पर क्रियाशील रहने से है।

इस क्रान्ति का नाम वैज्ञानिक क्रान्ति उचित ही है, क्योंकि इसे उत्प्रेरित करने वाले यत्र-विज्ञान और प्रौद्योग हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिछली तीन दशाब्दियों में विज्ञान जो किसी समय कुछ बुद्धजीवियों तक ही सीमित था, अन्तर्राष्ट्रीय मामलों के क्षेत्र में केन्द्रीय शक्ति के रूप में विकसित हुआ है।

इस क्रान्ति की रूपरेखा का निर्माण अनेक विचारशील व्यक्तियों ने किया है। इंजीनियरिंग और आविष्कार द्वारा विदोहित ज्ञान ही इस क्रान्ति की पूंजी है। विज्ञान को आज की जनता का जितना समर्थन प्राप्त है, उतना सम्भवतः इतिहास में किसी भी अन्य समय की जनता का समर्थन उसे प्राप्त नहीं रहा। निश्चय ही इसका प्रमुख कारण इसके व्यावहारिक उपयोग की आशा है।

एक दशाब्दी पूर्व कोई अस्तित्व नहीं

अपनी ओर से विज्ञान ने ज्ञान के ऐसे स्रोत को प्रवाहित किया है जो अपूर्व है।

आज निरन्तर विकासशील उद्योग जिनमें हजारों व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त है, ऐसे ज्ञान पर आधारित हैं जिसका प्रायः एक दशाब्दी पूर्व कोई अस्तित्व नहीं था। विज्ञान और प्रौद्योग मानव-जीवन के भौतिक गुण को सुधारने के साधन हैं।

इसके अतिरिक्त मानव इस प्रकार के समाज को निरन्तर बनाये रखने के उद्देश्य से जिसमें वह रह रहा है, विज्ञान और प्रौद्योग पर ही आश्रित है। यदि उसे भावी विश्व की वृहत्तर जनसंख्या के लिए रहन-सहन की वर्तमान और शायद श्रेष्ठतर स्थितियां प्राप्त करनी हैं, तो उसे इन प्रयासों में दुगुनी वृद्धि करनी पड़ेगी।

विज्ञान को अपनी सफलताओं के लिए पर्याप्त श्रेय प्राप्त होता है। किन्तु यह उन लोगों के तीव्र प्रहारों का भी शिकार है, जो मानव के विनाशक शस्त्रास्त्रों का एक सरल स्पष्टीकरण ढूंढ़ना चाहते हैं।

उदाहरण के लिए यह सही है कि आण्विक शास्त्रास्त्र नवीन वैज्ञानिक ज्ञान के परिणाम थे। किन्तु आण्विक न्यष्टिप्रतिक्रियावाहक भी तो उसी का परिणाम है, जिसमें एक ऐसी प्रौद्योग-प्रधान सभ्यता को सतत सजीव बनाये रखने की सम्भावना निहित है, जो बहुत बड़ी मात्रा में विद्युत् शक्ति के उत्पादन पर निर्भर है।

विज्ञान-सम्बन्धी जानकारी का निम्नतम स्तर

अन्य शब्दों में ज्ञान का उदय नैतिक गुणों के बिना ही होता है। ज्ञान का प्रयोग तो मनुष्य करता है और वह यह प्रयोग व्यवहार-सम्बन्धी अपने वर्जित ढांचे के अनुसार करता है। अस्तु हिंसा का कारण ज्ञान नहीं बल्कि मनुष्य है।

कुछ ऐसी आधारभूत धारणाएं हैं जिन्हें वस्तुतः नागरिक ग्रहण कर सकता है; और विज्ञान-सम्बन्धी जानकारी का वही निम्नतम स्तर है जिसे साधारण जन उपार्जित कर सकता है। मेरी समझ में इस निम्नतम स्तर को विश्व भर में सर्वत्र प्राप्त किया जा सकता है, और उसके अन्तर्गत यह जानकारी सम्मिलित है कि विज्ञान और प्रौद्योग क्या हैं और दोनों के बीच अन्तर क्या है?

विज्ञान प्रकृति के विषय में नयी जानकारी की खोज है। सामान्यतः इसका कोई तत्कालोपयुक्त व्यावहारिक लक्ष्य नहीं होता, हालांकि कभी-कभी इसके व्यावहारिक उपयोग की पूर्व कल्पना बहुत आसान होती है।

इसके विपरीत, प्रौद्योग अथवा अधिक सामान्य रूप में इंजीनियरिंग-सम्बन्धी प्रगति का सम्बन्ध आधारभूत विज्ञान से प्राप्त ज्ञान को उपयोगी वस्तुओं में रूपान्तरित करने से होता है।

रेडियो, टेलीविजन सेट, मोटर गाड़ियां, कृत्रिम रेशे और प्लास्टिक, आण्विक न्यष्टिप्रतिक्रियावाहक और चन्द्र राकेट, ये सभी रसायन-शास्त्रियों और भौतिक वैज्ञानिकों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा निर्मित आधारभूत ज्ञान के गगनचुम्बी प्रासादों से प्रादुर्भूत इंजीनियरिंग-सम्बन्धी पूर्ण प्रगतियों के प्रतीक हैं।

विज्ञान : प्रौद्योगिक भविष्य का बीज

विज्ञान और प्रौद्योग के बीच ये अन्तर अत्यन्त साधारण या प्रारम्भिक किस्म के होंगे।

फिर भी हो सकता है कि वह किसान जो यह जानता है कि उसे अपनी फसल का कुछ भाग अगले वर्ष के लिए बीज के रूप में रख छोड़ना चाहिये, यह न जान पाये कि विज्ञान प्रौद्योगिक भविष्य का बीज है।

अनेक नागरिकों को जो भूतकाल की वैज्ञानिक खोज और आज की जीवन-प्रणाली के बीच विद्यमान सम्बन्ध को समझ सकते हैं, आज के सैद्धान्तिक अध्ययन के आधार पर कल के एक अकल्पनीय परिणाम तक पहुंचने में कठिनाई होती है।

सामान्य रूप में मानव के लिए अमूर्त भविष्य को समझ पाना सदैव कठिन सिद्ध हुआ है।

किन्तु भविष्य इस अवस्था पर निर्भर करता है कि विज्ञान की प्रगति में इतिहास की पुनरावृत्ति होगी; कि प्रकृति ने अपने अधिकतम आधारभूत सिद्धान्तों का रहस्योद्घाटन करना अभी प्रारम्भ किया है; और यह कि नये ज्ञान द्वारा मानव जाति कल के विश्व-सम्बन्धी अपने स्वप्न को साकार करने में समर्थ होगी।

विज्ञान में जो बातें आज अमूर्त हैं, वे कल के प्रौद्योग को वास्तविकताएं देती हैं। ●

हाईस्कूल और हायर सेकण्डरी कक्षाओं के लिए हमारे उपयोगी प्रकाशन

१.	**जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : ३·००
२.	**वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : ३·००
३.	**प्रारम्भिक भौतिकी**—दयाप्रसाद खण्डेलवाल	मूल्य : ३·५०
४.	**प्रेक्टिकल जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : २·००
५.	**प्रेक्टिकल वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : २·००
६.	**सामान्य विज्ञान**—मेहरोत्रा, विद्यार्थी, खण्डेलवाल	मूल्य : ६·२५
७.	**सरल माध्यमिक जीव-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी (हायर सेकण्डरी की कक्षा ९ और १० के लिए)	मूल्य : ५·००

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा – ३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत के परमाणु क्रियाकारक

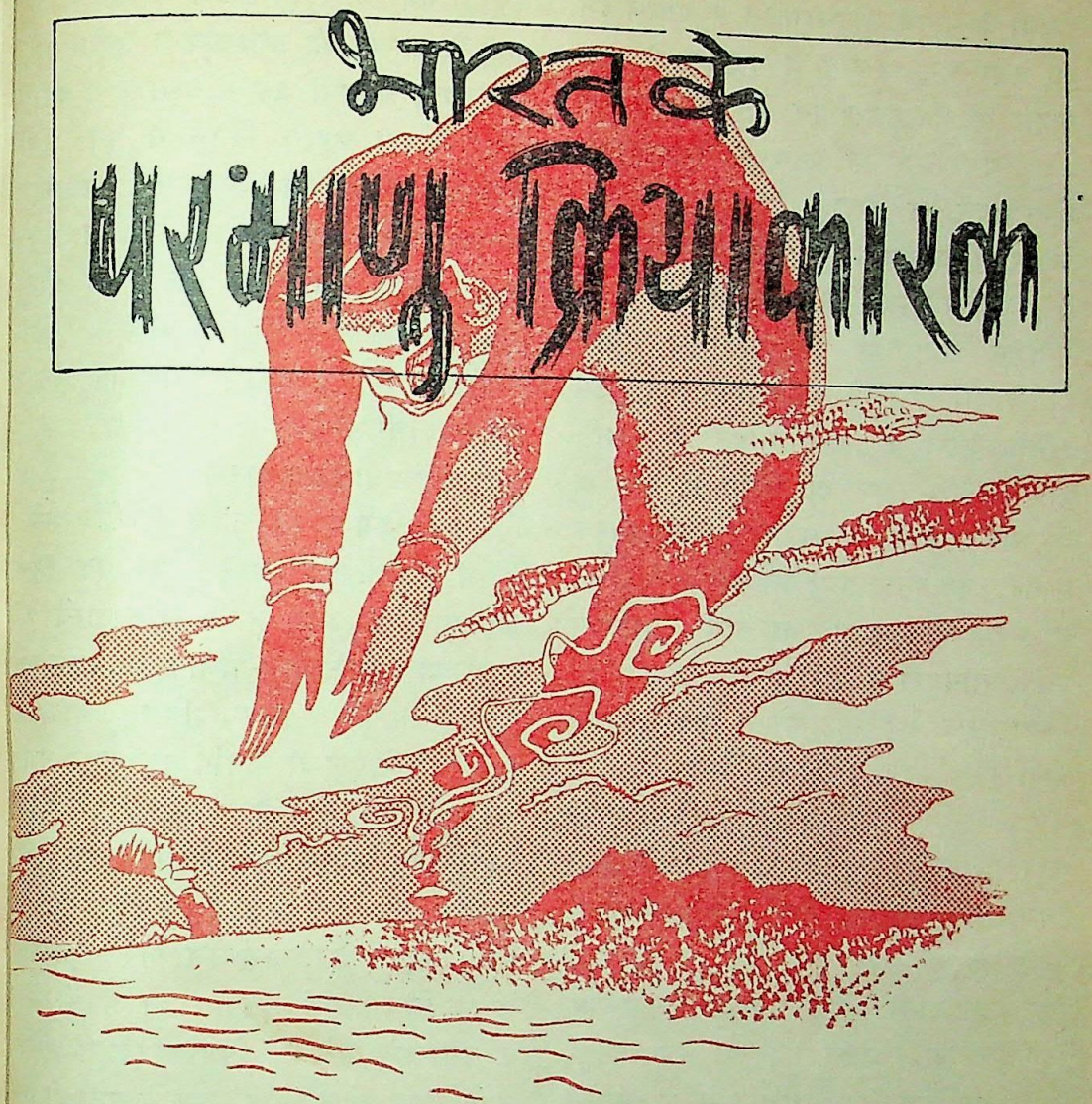

एस. पी. मिश्र, एम. एस-सी.

भारत १९४७ में स्वतन्त्र हुआ। उसी वर्ष भारतीय परमाणु आयोग का गठन हुआ और भारत ने परमाणु शक्ति की दिशा में पदार्पण किया। परन्तु भारतीय परमाणु ऊर्जा परियोजना का प्रारम्भ वास्तव में १९५४ में हुआ जब एटामिक एनर्जी इस्टैब्लिशमेण्ट, ट्राम्बे एवं परमाणु ऊर्जा विभाग की स्थापना हुई। कालान्तर में ट्राम्बे इस्टैब्लिशमेण्ट के सभी विभागों का विकास हुआ एवं अप्सरा, कनाडा इण्डिया-रिएक्टर और जरलीना रिएक्टर की स्थापना हुई। फिर भारत ने परमाणु ऊर्जा के शांतिकालीन उपयोगों के अन्तर्गत उसे विद्युतोत्पादन हेतु उपयोग में लाने के सम्बन्ध में सोचा जिसके परिणामस्वरूप तारापुर (महाराष्ट्र), राणा प्रताप सागर (राजस्थान) एवं कल्पक्काम् (मद्रास) परमाणु विजलीघरों की स्थापना हो रही है। परमाणु ऊर्जा से उत्पन्न विद्युत् अन्य विधियों की अपेक्षा काफी सस्ती होती है। इस बात को एवं सीमित भारतीय-कोयला भण्डार को ध्यान में रखते हुए डा. होमी जहांगीर भाभा ने २६ सितम्बर १९६३ को वियेना में अन्तरराष्ट्रीय एटामिक एनर्जी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एजेंसी के सातवें महासम्मेलन में भाषण देते हुए कहा था, 'सम्भव है १९६६ के बाद भारत को विद्युतोत्पादन हेतु प्रतिवर्ष एक २०० मेगावाटस के परमाणु क्रियाकारक की स्थापना करनी पड़े।'

अप्सरा क्रियाकारक

वृहत्तर बम्बई के अन्तर्गत ट्राम्बे की मनोरम पहाड़ियों में एटामिक एनर्जी इस्टैब्लिशमेंट, ट्राम्बे की स्थापना हुई। इस इस्टैब्लिशमेंट के साउथ-साइट के उत्तरी-पश्चिमी सिरे पर डा. भाभा की देख-रेख में भारत के प्रथम परमाणु क्रियाकारक अप्सरा की स्थापना ४ अगस्त, १९५६ को हुई। यह अधिकांशतः भारतीय वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों के परिश्रम से बना है। यह क्रियाकारक ८½ फुट मोटी कंकरीट की दीवारों से घिरा, ४५ फुट लम्बा, २७ फुट चौड़ा और २८ फुट ऊंचा है। क्रियाकारक कोर के उत्तर उससे सटे ही एक कक्ष में स्वचालित नियन्त्रक मशीन है। कण्ट्रोल-पेनल से ही क्रियाकारक की प्रत्येक बातें मालूम हो जाती हैं एवं उन पर आवश्यक नियन्त्रण किया जाता है। पूरा भवन शीत-ताप नियन्त्रित है। अप्सरा ने ४ अगस्त १९६६ को अपनी दसवीं वर्षगांठ मनायी है, एवं इसके दस वर्षों की सन्तोषजनक सेवाओं पर सन्तुष्टि व्यक्त की गयी है। इसके द्वारा तीन मुख्य उद्देश्यों की पूर्ति होती रही है—नाभिकीय भौतिकी में शोधकार्य, क्रियाकारक परिचालन की देख-भाल एवं ट्रेनिंग तथा रेडियो आइसोटोपों का उत्पादन।

१९५६ में रूस के अलावा सम्पूर्ण एशिया में सिर्फ अप्सरा ही एक क्रियाकारक था। इस क्रियाकारक में यूरेनियम (U-२३५ संवृद्धि) छड़ों का उपयोग ईंधन के रूप में होता है। भारत-ब्रिटेन सरकारों के एक समझौते के अन्तर्गत ये छड़ें ब्रिटेन से मंगायी गयी थीं। १९६४ के अन्त में इन छड़ों के बदलने की आवश्यकता प्रतीत हुई। फलस्वरूप जनवरी' ६५ से अप्सरा में काम-बन्दी करना पड़ा। ब्रिटेन से पुनः नयी यूरेनियम ईंधन छड़ें प्राप्त की गयीं और अप्सरा लगभग जून' ६५ तक पुनः चालू हो गया। पुरानी ईंधन छड़ें ब्रिटेन को लौटा दी गयीं। काम-बन्दी की अवधि में क्रिया-कारक की विभिन्नताओं में आवश्यक सुधार एवं तबदीली भी हुई।

कनाडा-इंडिया क्रियाकारक

यह क्रियाकारक ट्राम्बे इस्टैब्लिशमेंट (नार्थ साइट) में स्थित है जिसके एक तरफ अरबसागर है और दूसरी तरफ ट्राम्बे की पहाड़ियां। इसकी अर्द्ध-गोलाकार इमारत एवं गगनचुम्बी सुरक्षा चिमनी विशेष आकर्षक है। समुद्र में एक-दो फर्लांग तक ऊपर-ऊपर पाइप लाइन बिछी है जिससे समुद्री पानी क्रियाकारक में कूलेंट हेतु आता है और पुनः समुद्र में फेंक दिया जाता है। दूर से देखने पर क्रियाकारक की अर्द्धगोलाकार इमारत, सुरक्षा चिमनी एवं पाइप-लाइन अपनी ओर बरबस खींच लेते हैं। क्रियाकारक के उत्तर तरफ मुख्य सड़क है एवं सड़क से सटी ही एक बड़ी-सी गोलाकार टंकी है। इस टंकी और रिएक्टर में जमीन के अन्दर-अन्दर बिछी पाइप द्वारा सम्बन्ध स्थापित है। टंकी में भारी पानी भरा रहता है, जो क्रियाकारक के अन्दर माडरेटर के रूप में उपयोग किया जाता है।

कनाडा इण्डिया क्रियाकारक के अन्दर एवं बाहर के वायुदाबों में थोड़ा अन्तर रखा गया है जो सदैव स्थिर रहता है। यह अन्तर विकिरण-सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए किया गया है। मुख्य द्वार के खुलने एवं बन्द होने की प्रणाली स्वचालित है। अन्दर घुसते समय दो फाटक मिलते हैं जो लगभग १०-१५ फुट के अन्तर पर हैं। दोनों फाटक स्वचालित रूप में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

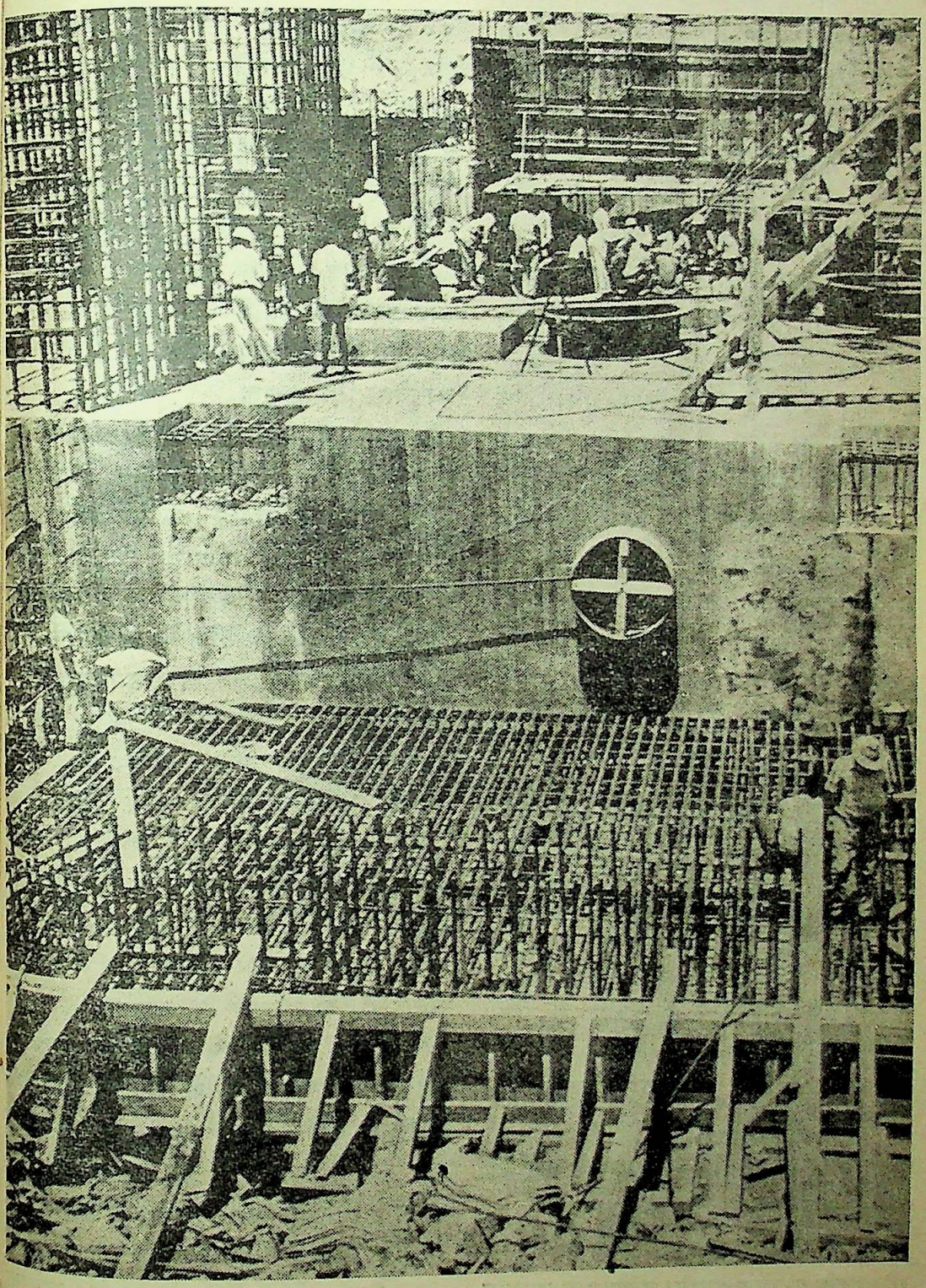

तारापुर परमाणु बिजलीघर के निर्माण का एक आंशिक दृश्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारी-बारी खुलते हैं ताकि क्रियाकारक के अन्दर और बाहर के वायुमंडलीय दावों में जो अन्तर आवश्यक है वह बना रहे। यह प्रणाली कौतूहल उत्पन्न करती है। क्रियाकारक की सभी इमारतें वातानुकूलित हैं। विकिरण-सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए क्रियाकारक के अन्दर वायु-फिल्टर्स लगे हैं जो भीतर की हवा को छानकर सुरक्षा चिमनी के जरिये ऊंचे गगन में प्रसारित करते हैं। क्रियाकारक कोर के ऊपर ईंधन-छड़ों के नियन्त्रण आदि के लिए एक स्वचालित ट्राली है जो नियन्त्रक कक्ष से संचालित होती है। क़ोर के आस-पास तमाम छेद हैं जिनमें रेडियो आइसोटोपों के उत्पादन, वस्तुओं पर विकिरण प्रभाव एवं शोधकार्यों हेतु नमूने रखे जाते हैं। इस क्रियाकारक में प्राकृतिक यूरेनियम ईंधन, भारी पानी माडरेटर और सामान्य पानी कूलेंटो के रूप में प्रयोग किया जाता है। क्रियाकारक से सटे उत्तर तरफ एक कक्ष में मास्टर-स्लेव-मैनीपुलेटर स्थित है जिसमें कृत्रिम हाथों की सहायता से क्रियाकारक से उत्पन्न रेडियो आइसोटोपों को सम्हाला जाता है। क्रियाकारक को रबिल्डिग में घुसते समय मुख्य द्वार के दाहिनी तरफ नियन्त्रक कक्ष है जिसके द्वारा क्रियाकारक की हर बातों का नियन्त्रण किया जाता है। क्रियाकारक के अन्दर की कोई भी गड़बड़ी फौरन मालूम हो जाती है और घंटी बज उठती है। पेनल पर तैनात व्यक्ति फौरन उस गड़बड़ी को हटाने के लिए नियन्त्रक पेनल के स्विचों आदि में कुछ हेर-फेर करते हैं और गड़बड़ी हट जाती है। उसके बाद पेनल पर गड़बड़ी के हट जाने का संकेत भी मिल जाता है। नियन्त्रक कक्ष की कार्य-प्रणाली काफी कौतूहलपूर्ण लगती है।

इस क्रियाकारक का निर्माण कोलम्बो-योजना के अन्तर्गत कनाडा सरकार के सहयोग से हुआ और इसी लिए इसका नाम कनाडा क्रियाकारक रखा गया। यह क्रियाकारक विश्व के सबसे बड़े रेडियोआइसोटोप उत्पादक क्रियाकारकों में से एक है। इस क्रियाकारक में १९२ यूरेनियम ईंधन-छड़ों की व्यवस्था है। इन समस्त छड़ों के पूर्णरूपेण कार्यरत होने पर ४० मेगावाट्स की शक्ति प्राप्त होती है। क्रियाकारक की प्रारम्भिक अवस्था में आधी ईंधन-छड़ें कनाडा से मंगायी गयी थीं और आधी छड़ें ट्राम्बे के फैब्रिकेशन प्लांट में निर्मित हुई थीं। धीरे-धीरे कनाडा की ईंधन-छड़ें भारतीय छड़ों से बदल दी गयीं और अगस्त १९६३ से यह क्रियाकारक सिर्फ भारतीय छड़ों से ही कार्य कर रहा है।

जरलीना क्रियाकारक

जरलीना क्रियाकारक भी नार्थ-साइट में स्थित है। जरलीना (*Zerlina*—Zero Energy Reactor for Lattice Investigations and Nuclear Assembly) परमाणु ऊर्जा के शान्तिकालीन उपयोगों के विकास हेतु एक प्रायोगिक क्रियाकारक है। तमाम नाभिकीय ईंधनों और द्रव-माडरेटरों के सम्भावित उपयोगों की दिशा में यह क्रियाकारक एक तरह का प्रायोगिक क्षेत्र है। प्रोजेक्ट '*Nuhmoc*' के अन्तर्गत प्राकृतिक यूरेनियम ईंधन, भारी पानी माडरेटर तथा कार्बनिक यौगिक कूलेंट के रूप में प्रयुक्त होते हैं। इस दिशा में जरलीना द्वारा कई सफल प्रयोग किये जा चुके हैं, और आशा की जाती है कि भविष्य के भारतीय परमाणु बिजली घरों में उन तमाम सफल प्रयोगों का उपयोग होगा। अप्सरा की ही तरह इसमें भी नियन्त्रक मशीनें क्रियाकारक कोर से सटे ही एक कक्ष में स्थित हैं। इस क्रियाकारक की भी पूरी बिल्डिग एयरकण्डीशंड है।

तारापुर परमाणु बिजलीघर

१९५८ में भारत सरकार ने परमाणु ऊर्जा के शान्तिकालीन उपयोगों की दिशा में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक और कदम बढ़ाया। विद्युतोत्पादन हेतु इस ऊर्जा के उपयोग की दिशा में सोचा गया, और विचार हुआ कि महाराष्ट्र-गुजरात प्रदेशों के पश्चिमी इलाकों में कई बातों को ध्यान में रखते हुए तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत एक परमाणु बिजलीघर की स्थापना की जाय। योजना आयोग ने स्वीकृति दे दी। तकनीकी बातों को ध्यान में रखते हुए। बम्बई से ६२ मील उत्तर, समुद्र के किनारे ताड़ वृक्षों की कतारों एवं हरी-हरी घासों से घिरे तारापुर (महाराष्ट्र) को इस बिजलीघर के लिए उपयुक्त समझा गया। तारापुर परमाणु बिजलीघर का निर्माण अमरीकी सरकार के सहयोग से हो रहा है। मई, ६४ में इण्टरनेशनल जनरल इलेक्ट्रिक कम्पनी (अमरीका) को इस बिजलीघर के निर्माण की जिम्मेदारी सौंपी गयी। तभी से वहां बड़े जोर-शोर से निर्माण कार्य चल रहा है। अभी हाल ही में अमरीका से क्रियाकारक कोरवेसेल आदि वस्तुएं इस बिजलीघर हेतु पहुंची हैं। ये वस्तुएं इतनी वजनी थीं कि इनके तारापुर पहुंचने की स्वयं एक समस्या थी। अन्ततः तारापुर में ही एक बन्दरगाह बनाना पड़ा। अधिकांश निर्माण-कार्य समाप्त हो चुका है, एवं आशा की जाती है कि इस बिजलीघर से अक्तूबर ६८ के उपरान्त बिजली प्राप्त होने लगेगी।

तारापुर परमाणु बिजलीघर में १९०-१९० मेगावाट, (विद्युतीय) के दो क्रिया-कारक होंगे, अर्थात् इस बिजलीघर की क्षमता ३८० मेगावाट विद्युतीय होगी। इस पर लगभग ५० करोड़ रुपये खर्च होंगे। यह बिजलीघर तैयार हो जाने पर संसार में अपने तरीके के बिजलीघरों में से एक होगा एवं एशिया में अपने तरीके का सबसे बड़ा शक्ति का स्रोत। इससे उत्पन्न बिजली महाराष्ट्र एवं गुजरात प्रदेशों के जरूरतमन्द इलाकों को प्राप्त हो सकेगी।

इस बिजलीघर के दोनों क्रियाकारकों में यूरेनियम नाभिकों के विखण्डन से प्राप्त उष्मा ऊर्जा पानी को भाप में परिणित करेगी और वही भाप दो टरबाइनों को चलाकर बिजली बनायेगा। क्रियाकारक ईंधन के रूप में प्रति वर्ष २५ टन यूरेनियम आक्साइड (U–२३५ संवृद्धि २०%) की छड़ें इस्तेमाल की जायेंगी। प्रारम्भिक अवस्था में सभी की सभी ईंधन छड़ें अमरीका से मंगायी जायेंगी। बाद में सम्भवतः इन छड़ों को भारतीय छड़ों द्वारा बदल दिया जाय। उपरोक्त २५ टन ईंधन छड़ों पर लगभग ढाई करोड़ रुपया लगेगा। ज्ञातव्य है कि तारापुर इलाके में यदि इसी रूप में एक तापीय बिजली घर की स्थापना की जाती, तो लगभग ४,००० टन कोयला प्रतिदिन लगता जिस पर लगभग ५ करोड़ रुपया प्रतिवर्ष का खर्च बैठता। तारापुर परमाणु बिजलीघर से उत्पन्न विद्युत् की कीमत लगभग ३ पैसे (कोयले से : ३·६९ पैसे) प्रति किलोवाट-घंटे होगी। पांचवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत इस बिजलीघर को दुगुना करने का विचार है।

राणाप्रताप सागर परमाणु बिजलीघर

तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ही २०० मेगावाट (विद्युतीय) के एक और परमाणु बिजलीघर की स्थापना का विचार पारित किया गया। उपयुक्त स्थान राणाप्रताप सागर (राजस्थान प्रदेश) चुना गया। उपरोक्त बिजलीघर में चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत एक और २०० मेगावाट (विद्यु-तीय) क्रियाकारक की स्थापना का विचार पारित हुआ। राणाप्रताप सागर राजस्थान-गुजरात सीमा से लगभग १५० मील की दूरी पर है। इस बिजलीघर से उत्पन्न विद्युत् राजस्थान की आवश्यकताओं की पूर्ति करेगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही अतिरिक्त विद्युत् गुजरात को भी मिल सकेगी।

राणाप्रताप सागर बिजलीघर प्रेसराइज्ड भारी पानी क्रियाकारक (Phwr) तरीके का होगा। इसी तरीके का एक बिजलीघर कनाडा (इगलस प्वाइंट रिएक्टर) में भी बन रहा है। राणाप्रताप सागर बिजलीघर पूर्णतया भारतीय वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों द्वारा तैयार किया जायगा। सिर्फ क्रियाकारक डिजाइन कनाडा सरकार से प्राप्त की जायगी। इस बिजलीघर में प्रतिवर्ष २६ टन प्राकृतिक यूरेनियम ईंधन के रूप में इस्तेमाल होगा। प्रारम्भिक अवस्था में आधी ईंधन छड़ें कनाडा सरकार देगी। बाद में सभी ईंधन छड़ें ट्राम्बे स्थित यूरेनियम मेटल एवं फैब्रिकेशन प्लांट्स द्वारा पूरी की जायेंगी। इस बिजलीघर के बनने में लगभग ६० करोड़ रुपये लगेंगे। इस बिजलीघर से उत्पन्न विद्युत् की कीमत २·६४-२·८ पैसा (कोयला से : ३·६४ पैसा) प्रति किलोवाट घण्टे होगी। यहां पर एक वर्कशाप एवं अन्य प्रारम्भिक आवश्यकताओं वाली वस्तुओं का निर्माण हो गया है। निर्माण कार्य काफी प्रगति पर है एवं आशा है कि यह बिजलीघर १९७१ तक पूरा हो जायगा। पांचवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत इस बिजलीघर को भी दुगुना करने का विचार है।

कल्पक्काम परमाणु बिजलीघर

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत तीसरे परमाणु बिजलीघर के लिए उपयुक्त जगह कल्पक्काम (मद्रास प्रदेश) चुना गया। यह स्थान मद्रास से दक्षिण लगभग २० मील दूर महाबलीपुरम् के पास है। इस इलाके में भी तापीय बिजलीघर की असुविधाओं को ध्यान में रखकर ही परमाणु बिजलीघर की स्थापना की बात सोची गयी। इस परमाणु बिजलीघर में दो २००-२०० मेगावाट (विद्युतीय) क्षमता के क्रियाकारक होंगे। यह बिजलीघर अधिकांश रूप में तारापुर परमाणु बिजलीघर से मिलता-जुलता होगा। इस बिजलीघर के निर्माण में लगभग ६० करोड़ रुपये खर्च होंगे जिसमें लगभग २० करोड़ के विदेशी सामान आयेंगे। इसका निर्माण पूर्णतया भारतीय वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों द्वारा होगा। आशा की जाती है कि यह बिजलीघर भी १९७१ तक पूरा हो जायगा। इससे उत्पन्न विद्युत की कीमत २·६४ पैसे (कोयले से : ३·८४ पैसे) प्रति किलोवाट घण्टे होने की आशा है।

भविष्य की झांकी

भारत में मोनाजाइट भंडार का बाहुल्य है जो विश्व में सबसे अधिक है। मोनाजाइट के स्रोत केरल, मद्रास के पश्चिमी समुद्री कछारों में एवं रांची (बिहार) तथा बिहार-बंगाल की सीमा पर काफी पाये गये हैं। मोनाजाइट से थोरियम-२३३ उत्पन्न होता है जो नाभिकीय ईंधन के रूप में तो इस्तेमाल नहीं हो सकता परन्तु परमाणु क्रियाकारक में विकिरीत होने पर यूरेनियम-२३३ में परिणित हो सकता है जो नाभिकीय ईंधन के रूप में इस्तेमाल हो सकता है। द्रुत क्रियाकारकों में यूरेनियम-२३३ का उपयोग ईंधन के रूप में हो सकता है। भारतीय परमाणु ऊर्जा प्रोग्राम का यह भी एक विशेष अंग है एवं इस पर प्रोग्राम का भविष्य काफी हद तक निर्भर है। थोरियम-२३३—यूरेनियम-२३३ मिश्रण को भविष्य के द्रुत क्रियाकारकों में ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जायगा, जिसमें थोरियम-२३३, यूरेनियम-२३३ में परिणित होता रहेगा और ईंधन का काम करता रहेगा।

प्रोजेक्ट फोनिक्स के अन्तर्गत ट्राम्बे में बने प्लूटोनियम प्लांट का उद्घाटन स्व.श्री लालबहादुर शास्त्री ने २२ जनवरी'६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को किया। इस प्लांट में क्रियाकारकों के अन्दर न्यूट्रान-विकिरीत यूरेनियम ईंधन छड़ों से प्लूटोनियम-२३९ (यूरेनियम-२३८ न्यूट्रान——→प्लूटोनियम-२३९) अलग किया जाता है जिसका उपयोग भविष्य के परमाणु बिजलीघरों में होगा।

हम देख रहे हैं कि भारतीय परमाणु ऊर्जा प्रोग्राम का अंतिम लक्ष्य आत्म-निर्भरता है। यूरेनियम-२३५ ईंधन के बजाय भारत यहां से प्राप्त होने वाले ईंधनों (यूरेनियम-२३३, प्लूटोनियम-२३९) के ही ऊपर निर्भर होने की दिशा में सोच रहा है। आर्थिक आंकड़ों को ध्यान में रखते हुए यह निर्विवाद कहा जा सकता है कि परमाणु ऊर्जा से प्राप्त होने वाली बिजली तापीय ऊर्जा की अपेक्षा काफी सस्ती है। साथ ही तापीय बिजलीघरों के लिए कोयला ईंधन के रूप में इस्तेमाल होता है जिसका भंडार असीमित नहीं है। अतः परमाणु बिजलीघरों का निर्माण अच्छे भविष्य का निर्माण है। इन्हीं सब बातों की सूझ-बूझ को लेकर स्व. डा. भाभा ने २६ सितम्बर, ६३ के अपने भाषण में इस बात की आशा व्यक्त की थी कि सम्भव है भारत को १९६६ के बाद प्रतिवर्ष एक २०० मेगावाट (विद्युतीय) क्षमता के परमाणु बिजलीघर की स्थापना करनी पड़े।

भारत के मछली उद्योग में नाखे का योगदान

भारत में मछली उद्योग को विकसित करने के लिए भारत और संयुक्त राष्ट्र संघ के बीच जो वार्ता प्रारम्भ हो रही है उसमें नाखे की ओर से नाखे के भारत स्थित राजदूत हाकुन नादे प्रतिनिधि होंगे।

अनुमान है कि मछली उद्योग को विकसित करने के लिए नाखे अगले पांच साल में लगभग ४ करोड़ रुपये की सहायता प्रदान करेगा। इस धनराशि द्वारा उद्योग का विकास होगा, तटवर्ती क्षेत्रों के अतिरिक्त गहरे समुद्र में मछलियां पकड़ी जायेंगी और उद्योग को विकसित करने के लिए शिक्षण तथा प्रशिक्षण दिया जायेगा।

नाखे की सहायता से इस समय भी केरल, मद्रास और मैसूर में मछली उद्योग के प्रोजेक्ट चल रहे हैं। नाखे इस दिशा में १९५१ से सहायता देता आया है और अत तक सात करोड़ रुपये से ऊपर की सहायता प्रदान कर चुका है।

स्मरणीय है कि नाखे उत्तरी-पश्चिमी यूरोप का एक छोटा-सा देश है। इसका क्षेत्रफल ३ लाख वर्गमील तथा आबादी ३६ लाख है।

शराब के गोदाम

शराब को सुरक्षा के साथ रखने की व्यवस्था भी आवश्यक होती है। स्टुटगार्ड में शराब का कई मंजिला टैंकनुमा गोदाम बनाया गया है, जिसे देखने में चाहे कोई रोमांस न हो, लेकिन बात अनोखी है।

प्राचीन काल में शराब को सुरक्षित रखने के जो तरीके प्रचलित थे, उनमें और आज के इस आधुनिक तरीके में जमीन-आसमान का अन्तर है। पश्चिम जरमनी में शराब उत्पादकों ने अपनी सहकारी समितियों का निर्माण कर लिया है। बड़े-बड़े औद्योगिक कारखानों ने पाइन-प्रेसिंग तथा स्टोरेज का प्रबन्ध अपने हाथों में ले लिया है जिससे शराब की क्वालिटी में जरा भी अन्तर नहीं पड़ता। शराब के बर्तन बड़े-बड़े कण्टेनर बनाये गये हैं जिसमें से प्रत्येक में २००,००० लीटर शराब रखी जा सकती है। स्टुटगार्ट में ९० लाख लीटर सफेद व लाल शराब को रखने की व्यवस्था है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचित्र संसार

कमीज बनाने वाले युवक की कविता पर सवा लाख रुपये का पुरस्कार

लन्दन के टोनी ब्रैडले नामक एक १७ वर्षीय युवक को अमरीका की 'कविता संघ' नामक संस्था ने उसकी एक कविता के लिए सवा लाख रुपये का पुरस्कार देने का निर्णय किया है।

ब्रैडले कमीज बनाने के एक कारखाने में सिलाई का काम सीख रहा है।

इससे पूर्व आयरलैण्ड में एक कविता प्रतियोगिता हुई थी। उसमें ब्रैडले की कविता को जिसका शीर्षक 'मेरी मां' था, प्रथम पुरस्कार मिला था जो दो हजार रुपये का था।

अंगुश्ताने के बराबर रडार

लन्दन के सरकारी रडार प्रतिष्ठान ने सिलाई के समय अंगुली में पहने जाने वाले अंगुश्ताने के बराबर का रडार सेट बनाया है।

इसके प्रयोग से अंधे व्यक्ति, पुलसमैन, सुरक्षा सैनिक तथा मोटर चालक अंधेरे में देख सकेंगे।

इस रडार का और छोटा नमूना बनाने का यत्न किया जा रहा है। अगर इसे रोगी निगल लेगा तो डाक्टर को उसके शरीर की प्रतिक्रियाओं के बारे में पूरी-पूरी जानकारी मिल सकेगी।

संसार का सबसे छोटा स्कूल

संसार का सबसे छोटा स्कूल जरमनी में है।

यह स्कूल ग्रोडे नामक द्वीप पर है। अब तक इसमें केवल एक छात्र था, अब उसकी छह वर्षीया बहन भी इसमें भरती हो गयी है जिससे इस स्कूल की छात्र-संख्या दो हो गयी है।

इस द्वीप पर केवल ९ प्राणी रहते हैं। इसके बावजूद ग्रोडे में एक नियमित स्कूल है।

तीन वर्ष का बच्चा स्कूल में

पश्चिम जरमनी के डुयुएसबर्ग नगर के ४३ वर्षीय शिक्षाधिकारी कार्ल हैंज वाल्टर ने प्राथमिक स्कूल में एक नया परीक्षण प्रारम्भ किया है जिसमें बालकों का एक विशेष समूह पढ़ता है।

इनकी आयु ३-५ वर्ष तक की है। लड़के और लड़कियां दोनों मिलाकर इनकी संख्या १२ है।

इस स्कूल में जो शिक्षा-पद्धति अपनायी गयी है वह बिलकुल नयी है और अमरीका के हाल के मनोवैज्ञानिक तथा शैक्षणिक अनुसन्धान परिणामों पर आधारित है। नियमित पाठों की अपेक्षा बालक खेल-खेल में ही शिक्षा प्राप्त करेंगे। खेलते-खेलते वे पहले समग्र-शब्द-पद्धति से उसे पढ़ना सीखेंगे तथा बाद में उसे लिखेंगे। वाल्ट का विश्वास है कि कोई भी बच्चा जो लिखित शब्द को पढ़ने में सक्षम है, शब्द लिख भी सकता है। वे लेख को ही पढ़ने का अंग समझते हैं।

प्रारम्भ में एक वर्षीय पाठ्यक्रम की व्यवस्था की गयी है।

जरमन अनिवार्य शिक्षा कानून में ६ वर्ष से कम आयु के बच्चों को स्कूल जाने की मनाही है।

पर परीक्षण के तौर पर उक्त स्कूल को छूट दी गयी है। ज्ञातव्य है कि यदि योजना सफल रही तो कानून में संशोधन करना पड़ेगा। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

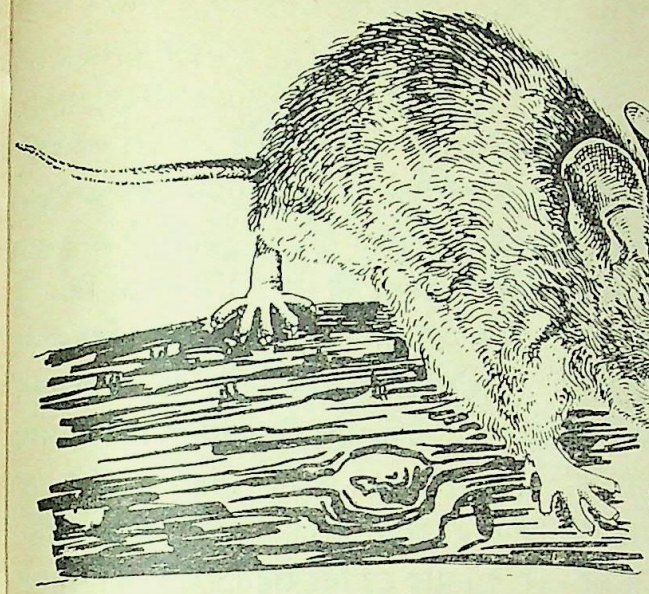

चूहे

हमारे प्रमुख शत्रु उनकी रोकथाम

यमुनाधर पाण्डेय, एम. एस-सी.

चूहे मानव के प्रमुख तथा खतरनाक शत्रु हैं। ये जमीन में बिल बनाकर रहते हैं और फसल पकने पर खाद्यान्नों को बिलों में ले जाकर जमा कर देते हैं जो उपभोग के योग्य नहीं रह जाता है। फसल जब खलिहानों में रखी जाती है, वहां भी ये शीघ्र ही बिल बनाकर अनाज को नष्टकर हानि पहुंचाते हैं। खेतों में ये पौधों की जड़ों को भी कुतर देते हैं, और विशेषकर गन्ने की फसल को अधिक हानि पहुंचाते हैं। गोदामों तथा घरों में संगृहीत खाद्यान्न को चूहे भारी मात्रा में नष्ट करते हैं। साधारणतया एक चूहा प्रति वर्ष लगभग १० किलोग्राम अनाज खा जाता है। इसके अतिरिक्त ये अनाज को बिखेरकर, उसमें मल-मूत्र इत्यादि मिलाकर खाद्यान्न की कीमत कम कर देते हैं। यों चूहों की ठीक संख्या तो नहीं ज्ञात है लेकिन ऐसा अनुमान है कि ये मानव की संख्या से कहीं अधिक हैं। खाद्यान्न की हानि के अतिरिक्त चूहे गम्भीर रोगों (जैसे प्लेग) को भी फैलाते हैं जिससे धन तथा जन, दोनों की भारी क्षति होती है।

रोकथाम

चूहों की चतुराई, स्वयं को वातावरण के अनुकूल बना लेने की क्षमता तथा अधिक सन्तान पैदा करने का गुण आदि ऐसी बातें हैं जिनके कारण इनकी रोकथाम करना कठिन है। मादा २-३ महीने की आयु से ही बच्चे देने लगती है और हर बार ८-१० बच्चे देती है। यह अनुमान किया गया है कि चूहे का एक जोड़ा साल भर में ६००-८०० बच्चे दे सकता है। अतः प्रभावशाली रोकथाम के लिए यह आवश्यक है कि 'चूहा-विरोधी अभियान' लम्बे पैमाने पर संगठित रूप से किया जाय, क्योंकि छोटे स्तर पर रोकथाम करने से ये एक स्थान से दूसरे स्थान को स्थान्तरित हो जाते हैं।

किसी भी प्रकार की रोकथाम करने से पहले यह जानना आवश्यक है कि कौन सी बिलों में चूहे रहते हैं। इसके लिए चूहा-ग्रस्त स्थानों का निरीक्षण करना चाहिये। पहले दिन सब बिलों को गीली मिट्टी से बन्द कर देना चाहिये। दूसरे दिन जो बिल खुलें, केवल उन्हीं बिलों में ओषधि का प्रयोग करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमुखतः रोकथाम की निम्नलिखित चार विधियां प्रचलित हैं—

शिकार करना

इस विधि में चूहों की बिलों को खोदकर उन्हें बाहर निकालते हैं और प्रशिक्षित कुत्तों अथवा बिल्लियों द्वारा उनका शिकार करवाते हैं। यह विधि छोटे स्तर पर तथा जहां श्रम सस्ता हो, प्रयोग की जा सकती है। जहां पानी की सुविधा हो, बिलों में पानी भरकर भी चूहों को बिलों के बाहर निकाला जा सकता है और उनका शिकार करवाया जा सकता है।

चूहेदानी का प्रयोग

यह विधि घरों में सुगमता से प्रयोग की जा सकती है। आजकल बाजारों में विभिन्न प्रकार की चूहेदानियां उपलब्ध हैं। इन पिंजरों के अन्दर रोटी अथवा बिस्कुट रख देते हैं। चूहे इन पिंजरों के अन्दर आकर फंस जाते हैं। प्रायः ऐसा देखा गया है कि पहले के कुछ दिनों तक तो चूहे फंसते हैं, लेकिन उसके बाद आना बन्द कर देते हैं।

विषैले प्रलोभक पदार्थों का प्रयोग

चूहों को नष्ट करने के लिए विषैले प्रलोभक पदार्थों का प्रयोग अधिक लाभकारी होता है। इस विधि में चूहा-नाशक रसायनों को कुछ प्रलोभक पदार्थों के साथ मिलाकर प्रयोग करते हैं। चूहे इन पदार्थों की ओर आकर्षित होते हैं, इन्हें खाकर मर जाते हैं। इन प्रलोभक पदार्थों का सतर्कतापूर्वक प्रयोग करना चाहिये।

विष प्रयोग करने से पहले कुछ दिनों तक बिना विष मिलाये प्रलोभक पदार्थ रखते हैं और इस प्रकार चूहे प्रतिदिन अपने प्रिय पदार्थों को खाने के लिए आते हैं। प्रलोभक पदार्थ दो प्रकार के होते हैं—तरल (दूध, तेल आदि) तथा सूखे पदार्थ (आटा, बिस्कुट, सूखी मछली आदि)। गोदामों में चूहे प्रायः तरल प्रलोभक पदार्थ पसन्द करते हैं, क्योंकि वहां पानी की कमी होती है। प्रलोभक पदार्थ रखने के तीसरे या चौथे दिन विष-युक्त प्रलोभक पदार्थ प्रयोग करते हैं। ये पदार्थ बिलों के अन्दर, जमीन पर बरतनों में रख देते हैं या फर्श पर फैला देते हैं। बिलों के अन्दर विष-युक्त प्रलोभक पदार्थों के रखने के बाद उनका मुंह बन्द कर देते हैं। विषों को बरतनों में रखना बिखेरने की अपेक्षा अधिक सुरक्षात्मक है। विष-युक्त प्रलोभक पदार्थों के कुछ दिन तक प्रयोग करने के बाद एक बार फिर बिना विष-मिलाये प्रलोभक पदार्थ रखने चाहिये। इससे यह ज्ञात हो जाता है कि सब चूहे मर गये हैं या नहीं। यदि इन विषरहित पदार्थों को चूहों ने खाया हो, तो यह समझना चाहिये कि चूहों को पूर्णरूपेण नष्ट करने में अभी सफलता नहीं मिली है और ऐसी दशा में विष अथवा प्रलोभक पदार्थ को बदलकर प्रयोग करना चाहिये।

अधिक प्रचलित तथा प्रभावशाली चूहा-नाशक रसायन तथा उनमें प्रलोभक पदार्थ मिलाने की विधि निम्नलिखित प्रकार है:

जिंक फास्फाइड

चूहों को मारने के लिए सबसे अधिक प्रयोग इसी रसायन का होता है। यह गहरे भूरे रंग का चूर्ण पानी में अघुलनशील तथा लहसुन की गन्ध वाला रसायन है। जब यह वातावरण की नमी के सम्पर्क में आता है तो इससे फास्फीन गैस निकलती है। इससे बनाया गया प्रलोभक कुछ दिनों तक धूप तथा वायु के सम्पर्क में रहने पर अपना विषैलापन खो देता है, अतः इसको कागज में लपेटकर चूहे की बिलों में ३-४ इंच भीतर रखकर बिल के मुंह को बन्द कर देना चाहिये। सूखे तथा नम प्रलोभकों में इस रसायन की मात्रा क्रमशः ५ तथा २ प्रतिशत होती है। प्रलोभक रखने के स्थान से कुछ ही दूर पर बरतन में पानी रख देना चाहिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri 70253

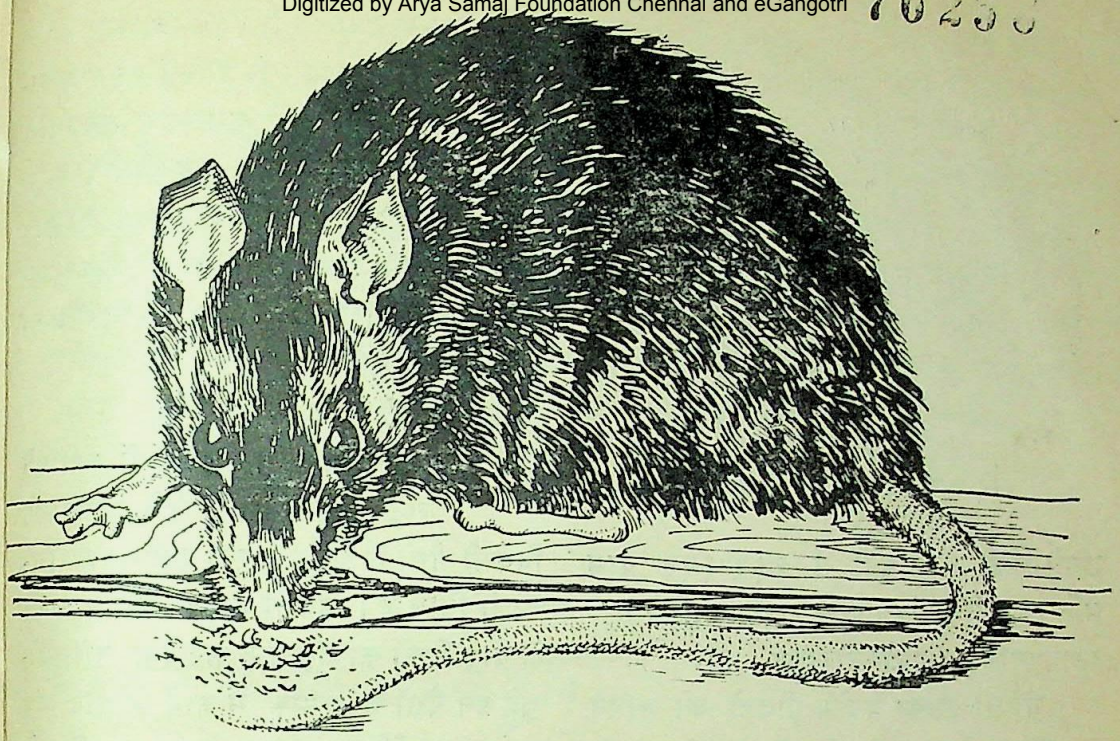

चूहों को मारने के लिए सबसे अधिक उपयोग रसायनों का होता है

क्योंकि इस विष को खाने के बाद चूहों को प्यास लगती है, और पानी पीने के बाद विष का प्रभाव अधिक शीघ्र होता है।

विष प्रलोभक तैयार करने की विधि

सुबह से शाम तक गेहूं के आटे को अथवा अन्य प्रलोभक पदार्थ (१/२ पौंड) को नम रखना चाहिये। इसके बाद जिंक फास्फाइड (औंस) मिलाकर गोलियां बना-लेनी चाहिये। इस मात्रा से लगभग १०० गोलियां बन जायेंगी। चूहे की प्रत्येक बिल पर शाम के समय दो-दो गोलियां रख देनी चाहिये।

बेरियम कार्बोनेट

यह स्वादहीन, रंगहीन, पानी में अघुलन-शील, श्वेत रंग का चूर्ण है और अपेक्षाकृत चूहों के लिए कम विषैला है, अतः यह विष जिंक फास्फाइड से अधिक मात्रा में मिलाया जाता है। सूखे प्रलोभकों की अपेक्षा तरल प्रलोभकों का प्रयोग अधिक प्रभावशाली है। बेरियम कार्बोनेट और बाजरा के आटे को १ : ५ में मिलाते हैं। विष-प्रलोभक तैयार करने की विधि जिंक फास्फाइड-जैसी ही है।

वारफेरीन

यह हलका, सफेद दाने वाला चूर्ण, पानी में कम लेकिन नमक में पर्याप्त घुलनशील रसायन है। यह रसायन चूहों द्वारा बहुत पसन्द किया जाता है, अतः प्रलोभक पदार्थों को चुनने में विशेष सावधानी की आवश्यकता नहीं पड़ती है। यह बहुत विषैला होता है, अतः विष की मात्रा बहुत कम प्रयोग की जाती है। बाजार में ०·५% वारफेरीन मिला हुआ विष-प्रलोभक तैयार मिलता है। इस विष को आटे या किसी अन्य उपयुक्त प्रलोभक में मिलाकर प्रयोग करते हैं। इस चूहा-नाशक ओषधि को खेतों में प्रयोग करना लाभदायक नहीं है, क्योंकि यह बहुत महंगा पड़ता है। अतः इसका प्रयोग घरों तथा गोदामों तक ही सीमित रखना चाहिये। वारफेरीन के विष-प्रलोभक को बिलों के अन्दर न रखकर मिट्टी या लोहे की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

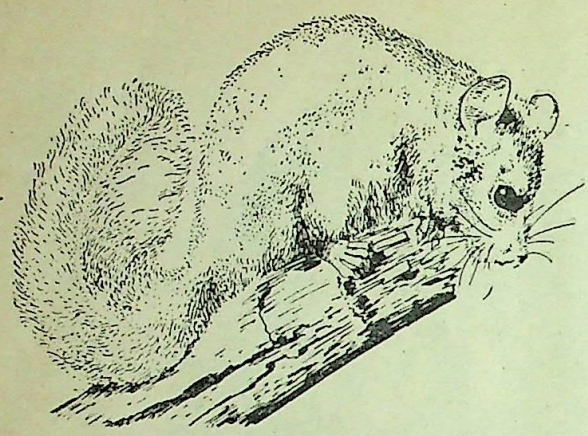

चूहे भयानक रोग भी फैलाते हैं

छोटी-छोटी तश्तरियों में ११५-१२० ग्राम प्रति तश्तरी के हिसाब से रखना चाहिये।

स्ट्राइक्नाइन हाइड्रोक्लोराइड

यों तो इसका प्रयोग गीदड़ों को मारने के लिए गोश्त में मिलाकर होता है, लेकिन यह रसायन सीमित दशाओं में चूहों को मारने के लिए भी प्रयोग किया जाता है। यह रसायन क्षाराभ है जो पौधों को निचोड़कर निकाला जाता है। स्वाद में यह तीखा तथा स्तनधारियों के लिए बहुत विषैला और शीघ्र प्रभावकारी होता है। इसका तीखा स्वाद गुड़ या शीरा मिलाकर कम करते हैं। प्रलोभक पदार्थों में ०.१२५% मिलाकर प्रयोग करते हैं।

तैयार करने की विधि

१ औंस विष को २ औंस गरम पानी में घोलना चाहिये। ४ औंस गुड़ को १ औंस पानी में गरम करके गाढ़ा घोल बना लेते हैं। दोनों घोलों को अच्छी प्रकार मिलाकर १२ घंटे पहले से भीगे हुए ३० पौंड चनों में मिला देते हैं।

प्रत्येक बिल के अन्दर ½ औंस विष-प्रलोभक रखना चाहिये और बिल को कीचड़ या गीली मिट्टी से बन्द कर देना चाहिये।

कुचला के बीज

५ औंस बीजों को ४ पौंड पानी में उबालना चाहिये। उबालने से ये बीज मुलायम हो जाते हैं। इन मुलायम बीजों को कुचलकर तब तक उबलने देते हैं जब तक घोल ४ औंस न हो जाय। यह घोल विष है, और इससे विष प्रलोभक स्ट्राइक्नाइन हाइड्रोक्लोराइड वाली विधि से बना लेते हैं।

बिलों का धूमन

खेतों तथा गोदामों में चूहों को नष्ट करने के लिए उनके बिलों को विषैली गैसों से धूमन करना अत्यन्त प्रभावशाली विधि है। विषैली गैस का प्रयोग करने के बाद बिलों का मुंह बन्द कर देना चाहिये। चूहे इन गैसों के सम्पर्क में आने के बाद मर जाते हैं। कैल्शियम सायनाइड का जिससे हाइड्रोसायनिक एसिड गैस निकलती है, चूहों के बिलों के धूमन करने के लिए बहुत प्रयोग होता है। इस कार्य के लिए आजकल बाजार में दो प्रचलित धूमक उपलब्ध हैं—साइमैग और साइनोगैस-ए। दोनों ही धूमन के रूप में होते हैं। ये चूर्ण जब वातावरण की नमी के सम्पर्क में आते हैं, तो इनसे विषैली गैस निकलने लगती है। ३०-४० ग्राम विष एक बिल के धूमन करने के लिए पर्याप्त है। यह विष बिलों के अन्दर चूहा-धूमन-पम्प अथवा लकड़ी के लम्बे चम्मच द्वारा प्रविष्ट करायी जाती है। इसके बाद बिल के छिद्र को गीली मिट्टी से बन्द कर देते हैं। चूहे बिलों के अन्दर ही मर जाते हैं।

सावधानियां

उपरोक्त पंक्तियों में उल्लिखित विष चूहों के अतिरिक्त मानव तथा पशुओं के लिए भी अत्यन्त विषैले हैं। अतः इनका प्रयोग करने में पर्याप्त सावधानी रखनी चाहिये। प्रयोग करने के बाद बचे हुए विष को पूर्ण रूप से नष्ट कर देना चाहिये। धूमक को सूंघना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणघातक है। प्रयोग में लाये गये बरतनों को भी अच्छी प्रकार साफ कर लेना चाहिये। विषों को प्रयोग करने से पहले पड़ोस के लोगों को भी सूचना दे देनी चाहिये जिससे वे सतर्क हो जायें।

विषों के प्रयोग के बाद बिलों के छिद्रों को अच्छी प्रकार से बन्द कर देना चाहिये। कभी-कभी ऐसा होता है कि एक ही बिल कई स्थानों पर खुलता है, अतः यह आवश्यक है कि एक छिद्र को छोड़कर शेष सब छिद्रों को पहले से ही बन्द कर दिया जाय और विष-प्रयोग करने के बाद उस छिद्र को भी बन्द कर दिया जाय।

मरे हुए चूहों को इधर-उधर नहीं फेंकना चाहिये नहीं तो ये बिल्लियों तथा चिड़ियों द्वारा कुछ तो खाये जायेंगे तथा कुछ यों ही दुर्गन्ध फैलायेंगे और प्लेग जैसी गम्भीर बीमारी को फैलाने में सहयोग देंगे। अतः यह आवश्यक है कि मरे हुए चूहों को या तो जला दिया जाय या जमीन के अन्दर गाड़ दिया जाय।

अण्डों के परिरक्षण की नयी विधि

भारत में अण्डा उत्पादन के मुख्य केन्द्र केरल, पंजाब, आन्ध्र और महाराष्ट्र में है। इनमें से अकेले केरल देश के विभिन्न भागों को ३-५ लाख अण्डे प्रतिदिन भेजता है। अण्डों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने में ५-१० प्रतिशत अण्डे रास्ते में ही खराब हो जाते हैं और ताप तथा नमी के कारण शेष अण्डों पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

इस कमी को दूर करने के लिए केन्द्रीय खाद्य औद्योगिक अनुसन्धान संस्थान में अण्डों के परिरक्षण के लिए एक नयी विधि विकसित की गयी है। इस विधि के अन्तर्गत विशेष रूप से निर्मित बांस या तार की एक टोकरी में रखे अण्डों को ५-१० सेकण्ड के लिए एक विशेष प्रकार के तेल में डुबाया जाता है, इसके पश्चात् टोकरी को एक घण्टे के लिए ऊपर लटका दिया जाता है जिससे इस तेल की एक तह अण्डे पर जम जाती है और टपकने वाला तेल फिर से उपयोग करने के लिए एकत्र कर लिया जाता है। पंखा चलाकर इसे जल्दी ही सुखाया जाता है। देश के विभिन्न भागों में परीक्षण करके देखा गया है कि इस प्रकार कमरे के ताप ५५° फा. तथा १००° फा. के तापों पर अण्डों को क्रमशः ४ सप्ताह, १२ सप्ताह और १० दिन तक पूर्ण रूप से सुरक्षित अवस्था में रखा जा सकता है।

स्वीडन का भूकम्प अंकन केन्द्र

पश्चिमी स्वीडन के हागफोर्स नामक स्थान पर ९० लाख रुपये की लागत पर एक भूकम्प अंकन केन्द्र स्थापित किया जा रहा है। इस केन्द्र में भूतल से ६६ फुट नीचे १८ मील के वृत्ताकार व्यास में १६ भूकम्प लेखी स्थित होंगे। यह केन्द्र भूतल के नीचे किये जाने वाले परमाणु-परीक्षणों के सम्बन्ध में जानकारी देगा, और अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत उन्हें रोकने का प्रयत्न करेगा।

इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि ऐसे भूकम्प अंकन केन्द्रों से जहां भूकम्प-विषयक सही-सही जानकारी प्राप्त होगी, वहां भूतल के नीचे किये जाने वाले परमाणु परीक्षणों की प्रतिक्रिया का भी ज्ञान मिलेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतोजनन

निराशा के क्षण : असफलता के दायरे

डा. हर्ष प्रियदर्शी

लुई एक महान सम्भावना के लिए तीन वर्षों तक संघर्षरत रहा। वह तीन वर्षों तक निरन्तर अद्भुत प्रयोगों की श्रृंखला का सृजन करता रहा—श्रृंखला जिसके सृजन के लिए उसने फ्लास्कों में थोड़ा दूध और थोड़ा मूत्र भरा और कुछ फ्लास्कों को पानी में खौलाया। तदुपरान्त उन फ्लास्कों की ग्रीवा को अग्नि-शिखा में पिघलाकर उन्हें सीलकर दिया और वर्षों तक उन फ्लास्कों की वह रक्षा करता रहा। और तब एक दिन, वर्षों के उपरान्त उसने इन सुरक्षित फ्लास्कों की सील तोड़ी, सिर्फ यह दिखलाने के लिए कि उबाले गये फ्लास्कों के अन्दर का दूध और मूत्र ज्यों का त्यों सुरक्षित पड़ा हुआ है और फ्लास्कों में उपस्थित ओषजन ज्यों की त्यों है। इन उबाले हुए फ्लास्कों में कीटाणुओं ने जन्म नहीं लिया और न ही प्रजनन कर वृद्धि की। किन्तु जब लुई ने उन फ्लास्कों की सील तोड़ी जिन्हें उसने उबाला नहीं था, तो उसे उन फ्लास्कों में ओषजन नहीं प्राप्त हुई। इसका अर्थ लुई ने सीधा यह निकाला कि इन न उबाले गये फ्लास्कों के ओषजन का कीटाणुओं ने उपयोग कर लिया है। इस प्रयोग-परिणाम की श्रृंखला के पूर्ण हो जाने पर लुई एक नयी, अनोखी कल्पना में खो गया। यह कल्पना थी कीटाणुविहीन सृष्टि की—एक ऐसी दुनिया जिसमें मृत व्यक्तियों, और वनस्पतियों का ढेर लगा हो और जहां के वातावरण में ओषजन पूर्ण मात्रा में हो किन्तु वातावरण में कीटाणु न हों। जानते हैं क्या होगा ? कीटाणु-विहीन इस सृष्टि में मृत्त प्रणियों के ढेर के ढेर लगते जायेंगे क्योंकि कीटाणुओं की अनुपस्थिति में न तो ये सड़ेंगे और न इनके कणों का विनाश होगा। लुई क्षण भर को अपनी ही कल्पना पर भयभीत हो गया—ऐसी सृष्टि होगी मुर्दों की सृष्टि !

मुर्दों-भरी दुनिया की कल्पना के बाद

मुर्दों-भरी इस दुनिया की कल्पना के उपरान्त लुई कीटाणु विषयक उस प्रश्न पर लौट आया जिस प्रश्न को लेकर एक सदी पूर्व स्पैलेंजेनी अन्धविश्वासी वैज्ञानिकों से जूझा था—वह प्रश्न जो एक दिन मानव के आदिम पूर्वज आदम के सम्मुख कौंधा था, जिसे बाइबिल के पन्नों में आदम सुलझा न सका था, और जिसे सुलझा न सकने की विवशता में आदम ने भगवान के सामने घुटने टेक दिये थे। बाइबिल के प्रथम उपाख्यान में ही विश्व के और सृष्टि के सृजन की कथा आती है कि प्रभु की इच्छा से दस हजार प्राणियों के साथ आदम का जन्म हुआ था। प्राणियों का जन्म प्रभु की इच्छा से शून्य में से हुआ। किन्तु लुई की वैज्ञानिक आत्मा इस कथा को सत्य मानने से इनकार कर गयी। उसकी एक-एक रग स्वतोजनन सिद्धान्त को मानने से इनकार कर उठी। लुई का कहना था कि जीवन का जन्म जीवन से हुआ है, शून्य से नहीं और न ही प्रभू की इच्छा से। किन्तु प्रश्न तो था प्रमाण का।

लुई के विरोधियों ने लुई से सीधा तर्क किया कि यदि स्वतोजनन मिथ्या है; प्रभु की सत्ता एक कल्पना है तो तुम प्रमाण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो, कैसे इन कीटाणुओं का जन्म होता है ? ये कीटाणु जो प्रतिवर्ष-प्रतिदिन लाखों की संख्या में दुनिया के हर कोने में किण्वन करते हैं, मदिरा का सृजन करते हैं, कहां से आते हैं ? कहां से आते हैं ये प्राणी···कहां से आते हैं··· कहां से···कहां से ?

लुई के मस्तिष्क पर विरोधियों के प्रश्न के कुहासे की चादर घिरने लगी, किन्तु लुई विचलित न हुआ । स्पैलेंजेनी की तरह वह भी स्वतोजनन के मिथ्या बोध को स्वीकार न कर पाया कि कीटाणुओं का जन्म मृत वस्तुओं से होता है, दूध अथवा मक्खन से होता है । हालांकि लुई स्वतः एक धार्मिक प्रवृत्ति का इनसान था, किन्तु वह कट्टरपंथी धार्मिक नहीं था । धर्म में उसका अस्थायी विश्वास था । जिन दिनों लुई के सम्मुख स्वतोजन का प्रश्न आया था, उन दिनों तमाम यूरोप में युवा विद्रोहियों का वर्ग तैयार हो चुका था जो अन्धविश्वास के विरोध में आन्दोलन कर रहा था । वास्तविकता तो यह थी कि उन दिनों की नयी पीढ़ी जो जीव-विज्ञान से सम्बन्धित थी डरविन के विकासवादी दर्शन से प्रभावित हो चुकी थी । और विकासवादी दार्शनिक इस सिद्धान्त को मानते थे कि जीवन का जन्म और उसकी गति जीवन से ही होती है, प्रभु की इच्छा से नहीं ।

अकादमी के सम्मुख लुई का दर्शन

नयी पीढ़ी के इन्ही संघर्षमय दिनों में एक दिन लुई ने अकादमी के सम्मुख अपना दर्शन रखा : 'मेरा दर्शन दिल का है दिमाग का नहीं, और मैं समर्पित हूं उन भाननाओं को, उन महान प्राणों को जो बताते हैं कि सृष्टि सहज घटनाओं के सम्मिलन का फल मात्र नहीं है; सृष्टि मात्र गतिशील यन्त्र नहीं है, यह इसके अतिरिक्त भी कुछ और है । एक ऐसे शिशु के सिराहने आप बैठ जाइए जो मृत्य के आगोश में जा रहा हो, तो सम्भवतः अनन्त के विषय में आप के मन में कुछ भावनाएं उठ सकेंगी और मैं उन्ही भावनाओं को स्वीकार करता हूं ।' किन्तु लुई जानता था कि दर्शन के इन खोखले उपाख्यानों से इस अन्धविश्वास का खण्डन नहीं किया जा सकता कि स्वतोजनन एक मिथ्या बोध है । इन्हीं कारणों से लुई दर्शन के नीरस और उलझे हुए उपाख्यानों को छोड़कर प्रयोगों के धरातल पर उतर आया—वह धरातल जिसका अर्थ होता है सिद्ध सत्य ।

एक अजीब शुरुआत

लुई ने स्वतोजनन को मिथ्या सिद्ध करने के लिए शुरू किया प्रयोग । इन प्रयोगों को करते समय एक बात स्पष्ट रूप से लुई के दिमाग में स्थापित थी कि कीटाणु हवा में से आते हैं । हालांकि कीटाणुओं के विषय में यह तथ्य अन्य कीटाणु वैज्ञानिकों के भी मस्तिष्क में था और उन लोगों ने हवा में भी कीटाणुओं की उपस्थिति दिखलायी थी किन्तु लुई ने इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए कई मशीनों का आविष्कार किया तथा इस तथ्य को हमेशा हमेशा के लिए सिद्ध कर दिया था । उसने स्पैलेंजेनी के सारे पुराने प्रयोगों को पुनः दुहराया; लुई ने स्पैलेंजेनी की ही तरह एक गोल और लम्बी, पतली ग्रीवा वाली बोतल ली और इस बोतल में थोड़ा-सा यीस्ट रस रखकर इसकी पतली ग्रीवा को अग्नि शिखा की लौ पर पिघलाकर सील कर दिया और तब पूरी बोतल को कुछ क्षणों तक गरम पानी में उबालता रहा । इस उबाली गयी बोतल में लुई को कभी किसी कीटाणु की उपलब्धि नहीं हुई । अपने इस परिणाम की लुई ने घोषणा की किन्तु उसके विरोधियों, स्वतोजनन के समर्थकों ने उसके इस तथ्य को यह कहकर झुठला दिया कि फ्लास्क में यीस्ट रस उबालते समय तुमने प्राकृतिक हवा को भी गरम कर दिया जो कीटाणुओं को जन्म देती है, इसलिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Hardwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हें इन फ्लास्कों में कीटाणुओं की उपलब्धि नहीं हुई।

स्वतोजनन सिद्धान्त के समर्थकों के ऐसा कहने पर लुई ने उन उपायों को खोजने की चेष्टा की जिन उपायों द्वारा यीस्ट के उबाले हुए रस में ठण्डी हवा प्रवेश कर सके तथा वातावरण कीटाणुविहीन रहे। लुई ने इन उपायों को खोजने के लिए ढेर-सारे बेतुके प्रयोग कर डाले। इन प्रयोगों को करते समय लुई हमेशा गम्भीर बना रहा। कारण, अब लुई की ओर राजकुमारों और अध्यापकों तथा विद्वानों का वर्ग आकर्षित हो उठा था। राजकुमारों, अध्यापकों और विद्वानों का यह वर्ग लुई के चमत्कारों की ओर आंख लगाये बैठा था। अधिकारियों ने भी लुई को अधिक सुविधाएं प्रदान करनी प्रारम्भ कर दी थी। अब लुई को एक नयी, साफ-सुथरी प्रयोगशाला मिल गयी थी जहां बैठकर उसने इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न को सुलझाने की चेष्टा की कि कीटाणुओं का जन्म कीटाणुओं से ही होता है—स्वतोजनन सिद्धान्त के आधार पर नहीं होता। स्वतोजनन की गुथ्थी सुलझाने में लुई अधिक से अधिक जटिल होता चला गया, उसके सीधे-सादे सरल प्रयोग अधिक से अधिक पेचीदा होते चले गये, किन्तु सफलता उसके हाथ न लगी। क्षण भर को लुई निराश हो गया···

घोर निराशा के इन्हीं क्षणों में जब लुई अपनी प्रयोगशाला में उदास मन थकाहारा बैठा था, एक दिन आशा की सुनहली किरण के रूप में उसकी प्रयोगशाला में प्रोफेसर बलार्ड ने प्रवेश किया। (क्रमशः)

निर्जीव प्रतिरूप या जीवित मनुष्य ?

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों द्वारा सुझाये गये डिजाइन पर लास एंजल्स काउण्टी जनरल अस्पताल में मनुष्य का एक ऐसा प्रतिरूप तैयार किया जा रहा है जिसमें जीवित मनुष्य की भांति रक्त-संचार होगा। यह प्रतिरूप अपनी पलकें उठा-गिरा सकेगा, खांस सकेगा, गले से विभिन्न प्रकार की आवाजें निकाल सकेगा तथा गिरगिट की तरह गुलाबी से नीला तथा फिर मटमैला रंग बदल सकेगा। बेहोश करने वाली दवा देने पर जीवित मनुष्य की भांति इस प्रतिरूप पर भी प्रभाव पड़ेगा। यह सांस लेगा तथा इसकी हृदय और नाड़ी की गति भी सरलतापूर्वक नापी जा सकेगी। बस, अन्तर केवल यह होगा कि इसकी प्रत्येक गति शिक्षक द्वारा नियन्त्रित की जा सकेगी। इसका मुख्य उपयोग चिकित्सा-विज्ञान के विद्यार्थियों को ओषधियों के कारण मनुष्य के शरीर पर होने वाली क्रियाओं की जानकारी कराना होगा।

टूटी हुई हड्डी को जल्दी ठीक करने का तरीका

साधारणतया हड्डी टूट जाने के बाद ठीक होने में लगभग पांच सप्ताह का समय लगता है, परन्तु बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के विज्ञान कालेज के एल. उड़प्पा तथा एल. पी. गुप्ता द्वारा किये गये अनुसन्धानों द्वारा पता चला है कि कुछ विशेष ओषधियों के प्रयोग द्वारा टूटी हुई हड्डी को केवल ढाई-तीन सप्ताहों में ही ठीक किया जा सकता है। ये औषधियां हैं—एनाबोलिक हारमोन, एस्कानिक अम्ल (विटामिन-सी) और कैल्शियम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

यह प्रसन्नता का विषय है कि विज्ञान-लोक में तुम्हारी रुचि दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही। शायद इसी कारण तुमने चाहा है कि अपने इस पत्र के माध्यम से तुम्हें कैंसर के विषय में कुछ बताऊं।

आज से दस वर्ष पूर्व तक कोई भी ओषधि कैंसर को नष्ट करने में समर्थ नहीं हुई थी, हालांकि कुछ ओषधियां उसकी प्रगति को धीमा करने तथा रोगी को राहत देने में सफल हो पायी थीं। फिर वैज्ञानिकों ने पाया कि मेशोट्रेक्सेट नामक ओषधि चेरियोकार्सीनोमा नामक कैंसर से पीड़ित बहुत से रोगियों को चंगा करने में समर्थ है।

उसके बाद से इसके साथ मिलाकर कई ओषधियों का प्रयोग ल्यूकेमिया में किया जा रहा है। इससे ल्यूकेमिया के प्रसार को रोकने में सफलता मिली है।

ल्यूकेमिया रक्त का कैंसर है और प्राय: बच्चों में होता है। इस घातक कैंसर से कुछ ही महीने के भीतर रोगी मौत के मुंह में समा जाता है।

इस समय जिन ओषधियों का परीक्षण हो रहा है उनमें शरीर के स्वस्थ अंगों को विकिरण द्वारा क्षत होने से बचाने वाली ओषधियां सम्मिलित हैं। अन्य प्रकार की ओषधियां कैंसर-ग्रस्त अंग पर केन्द्रित होती हैं जिससे इन अंगों को विकिरण द्वारा नष्ट करना अधिक आसान हो जाता है।

इसी बीच जीव-विज्ञान के अनुसन्धान-कर्ता इस बात का पता लगाने के लिए प्रयत्नशील हैं कि शरीर के स्वस्थ कोष क्यों और कैसे कैंसरग्रस्त हो जाते हैं। निस्सन्देह इन प्रयोगों से हमारी जानकारी बढ़ रही है।

मैं समय-समय पर कैंसर से सम्बन्धित नयी-नयी खोजों से तुम्हें अवगत कराती रहूंगी।

सस्नेह तुम्हारी,
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ८१ के विजेता

प्रथम पुरस्कार

कुलदीपकुमार (८५८१) आगरा, महेन्द्रकुमार (९३२७) लदाना।

द्वितीय पुरस्कार

कमलेन्द्र पाल (४७८२) मैनपुरी, आनन्दप्रकाश (१२१९३) आगरा, बसन्तकुमार (१६००७) बिलासपुर।

तृतीय पुरस्कार

गोविन्दस्वरूप (११७५३) अजमेर, अशोककुमार (११९५१) मन्दसौर, सुभाषचन्द्र (१०८४०) बम्बई, सन्तकुमार (१०७८९) इलाहाबाद, सत्यप्रकाश (१४१०) रायसेन, अरविंद (५६३३) इलाहाबाद, विद्यानन्द करण (१०७२०) हजारीबाग, राजेन्द्रस्वरूप भटनागर (१२४६८) सुकेता।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ८३

नाम.....

सदस्य संख्या.....स्थान.....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A Painstaking, Well Documented Study Tracing the Development of the Movement of Muslim Regeneration Started by Sir Sayyid Ahmed Khan

the aligarh movement

(A UNIQUE PUBLICATION OF INTERNATIONAL INTEREST)

by **M. S. Jain,** M.A., Ph.D., Reader in History,
Tribhuvan University, Kathmandu

Foreword by **A. L. Srivastava,** M.A., Ph.D., D.Litt. (Agra), D.Litt. (Luck.)
Professor Emeritus of History, Agra College, Agra

* First attempt to analyze the specific philosophy underlying the origin of MUSLIM SEPARATIST IDEOLGY.
* A thorough exploration presenting historically accurate and socially significant panorma of an IDEOLOGICAL MOVEMENT. Is it still at work?
* An authentic research monograph based on scientific study of original contemporary sources and UNPUBLISHED LETTERS of Sir Sayyid Ahmed Khan.

Price : **INDIA—Rs. 20: U.S.A–$ 4: U.K. 25s**

(*Full cloth bound*)

(*Please send Rs.* 20 *by M. O. to get the book by Registered Post, or write to us to send it by V.P.P. for Rs.* 21.00 *including Postage*)

For further enquiries please write to—

SRI RAM MEHRA & COMPANY
HOSPITAL ROAD, AGRA–3 (INDIA)

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

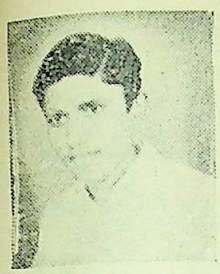

इकबाल अहमद
(स.सं. १८८२६)

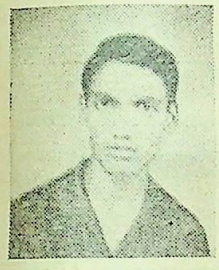

सुभाषचन्द
स. सं. १८८३०

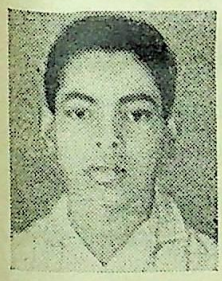

दिपेन्द्रपाल
स. सं. १८८४१

भगतसिंह
स. सं. १८८४५

१२७८४ मृगेन्दप्रतापसिंह (१६) चितवाड़ा गांव, ८६ दीपक (१०) रेणुकूट, ८७ आर. सुब्रहमन्यम (१७) भद्रक, ८८ इन्द्रजीत (१८) जुन्नारदेव, ८९ कुमारी उर्मिला (१४) अनुग्रहपुरी, ९० कुमारी निर्मला (१२) अनुग्रहपुरी, ९१ तारणजी (१७) अनुग्रहपुरी, ९२ जनार्दनजी (१५) अनुग्रहपुरी, ९३ राकेशकुमार, (१८) अनुग्रहपुरी, ९४ किशानचन्द (१८) बुदनी, ९५ भूपेन्द्रसिंह (१८) रुड़की, ९६ अजयकुमारसिंह (१८) नेतरहाट, ९७ अमरावसिंह (१७) सुजानगढ़, ९८ भगवानदास (१७) रायगढ़, ९९ दिनेशचन्द (१६) सिवनी, १२८०० मधुसूदन (१२) कटनी, ८०१ चन्द्रहास (१५) हरीगंज, ८०२ सुभाषचन्द्र (१८) सहारनपुर, ८०३ राजेन्द्रप्रसाद (१८) सहारनपुर, ८०४ पूर्ति (१०) भागलपुर, ८०५ सावर मल (१८) भवन, ८०६ निर्मलकुमार (१३) कृष्ण पथ, ८०७ सत्येन्द्रसिंह (१४) लक्ष्मणगढ़, ८०८ मनीषी (१६) १४ जार्ज टाउन, ८०९ कान्तीलाल सूरजमल (२७) रतलाम, ८१० विशम्भरप्रसाद (१९) इलाहाबाद, ८११ कु. मीता (१६) मेरठ कैण्ट, ८१२ शंकरलाल (१९) कटनी, ८१३ अशोककुमार (१७) नीर निला, ८१४ राजीवकुमार (१८) मझोलिया, ८१५ उषा (१५) पटना, ८१६ प्रताप राजसिंह (२३) सीतापुर, ८१७ विनयकुमार (१५) मुगलसराय, ८१८ देवेन्द्रकुमार (८) गंगेया, ८१९ श्यामनन्दनसिंह (१५) गंगेया, ८२० नत्थीलाल (२२) आगरा, ८२१ अजयकुमार (१४।१।२) अलीगढ़, ८२२ महेन्द्रसिंह (१७) छिन्दवाड़ा, ८२३ भगतराम (२१) सहारनपुर, ८२४ मुकेशकुमार (१२) सहारनपुर, ८२५ राधेश्याम (२०) जगदलपुर, ८२६ कमलकुमार (१५) चीनाखान, ८२७ विजय (१६) चमचम गंज सीपरी, ८२८ राजेन्द्र (१९) मकूनमा, ८२९ सत्यदेव (१८) किशनगंज, ८३० सत्यप्रकाश (१७) कटनी, ८३१ रच्छादेवी (१८) जवाहर नगर, ८३२ कौशलकुमार (१२) लाजपत नगर, ८३३ रोशनलाल (१८) सबलगढ़, ८३४ यतीन्द्रमोहन (२७ देहरादून, ८३५ अशोकराज (१६) सुजानगढ़, ८३६ जयनारायन (१९) शाहजांहपुर, ८३७ जगमोहनसिंह (१५) जीवागंज, ८३८ देवेन्द्रकुमार (१४) झालवाड़ा, ८३९ जीवनलाल (१९) भोपाल, ८४० विजयसिंह (१६) रोशनपुरा नाका, ८४१ विपिनकुमार (१३) बाबू पुरवा, ८४२ प्रदीपकुमार (१६) अलीगढ़, ८४३ अर्चना (१५) लखनऊ, ८४४ रणवीरसिंह (१९) रोहतक, ८४५ मोहनलाल (१८) कटरा बाजार चांदीगंज, ८४६ मोतीलाल (१७) मिरजापुर, ८४७ केशवकुमार (१९) मारवारी, ८४८ रामलखन (१७) कदम कुआं, ८४९ आलोककुमार (१६) सहरसा, ८५० देवेशकुमार (२०) शोरों कटरा शाहगंज, ८५१ रामकृष्ण (१९) महू, ८५२ अमरजीत (१७) महोवा, ८५३ तिमिर वरन राय (१८) टैगोर नगर, ८५४ बसन्तकुमार (१२) जबलपुर, ८५५ राजेन्द्रकुमार (१६) मोती नगर, ८५६ अशोककुमार (१६) इटावा, ८५७ उमेशचन्द (१५) इटारसी, ८५८ राजेन्द्र (१६) कानपुर, ८५९ रंजना (१६) बरेली, ८६० बिनोदिनी कुमारी (१८) गुलजार बाग, ८६१ अशोककुमार (१७) बरेली कैण्ट।

देवेन्द्रकुमार
स. सं. १८८४६

भारतभूषण
स. सं. १८८४९

मदनलाल
स. सं. १८८५०

अजयकुमार
स. सं. १८८५१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८३

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : ७ अप्रैल

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५१ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो—

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८३ के उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर ७ अप्रैल तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुँच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८३ के प्रश्न

१. जवानों के लिए शीतकालीन पोशाक का निर्माण भारत में कहां हुआ है ?

२. स्मृति के स्थानान्तरण से सम्बन्धित हाल ही में एक प्रयोग किया गया है। किस देश में ?

३. गत वर्ष ब्रिटेन की स्मिथसोनियन ज्योतिर्भौतिकी प्रयोगशाला ने एक नये पुच्छल तारे की खोज की घोषणा की। किस तारीख को ?

४. क्या लाल मणि से लेसर किरणें उत्पन्न की जा सकती हैं ?

५. 'बृहस्पति ग्रह पर जीवन के सर्वथा भिन्न रूप में उत्पन्न होने की सम्भावना है···' यह कथ्य किसका है ?

६. क्या कृत्रिम मेरुप्रभा का प्रदर्शन सम्भव है ?

७. प्रथम विद्युत् रेलगाड़ी के आविष्कारक का क्या नाम है ?

८. किसी भी साधारण टेलीफोन पर ध्वनि-संकेतों द्वारा चित्र सम्प्रेषित किये जा सकते हैं। यह आविष्कार किस देश में हुआ है ?

९. ओमेगा नामक प्रणाली क्या है ?

१०. पिछला अन्तर्राष्ट्रीय भूकम्प-विज्ञान सम्मेलन कहां हुआ था ?

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८१ के प्रश्नों के उत्तर

१. धमनी से आने वाला रक्त रुक-रुककर आता है, जबकि शिरा से आने वाला रक्त एक झटके के साथ आता है।

२. क्योंकि प्रेशर कूकर में दबाव साधारण वायुदाब से बहुत अधिक हो जाता है जिससे उष्मा बढ़ जाती है।

३. बर्फ के टुकड़े द्वारा हटाया गया अल्कोहल बर्फ की मात्रा से कम होता है, अतः वह डूब जाता है।

४. गरमी के कारण धातु में प्रसार होने लगता है, अतः पेण्डुलम वाली घड़ियां बढ़ जाती हैं तथा साधारण घड़ियों में चक्र तथा अन्य पुरजे बढ़ जाते हैं।

५. घर्षण के कारण।

६. प्रकाश के पूर्ण परावर्तन के कारण।

७. अति प्राचीन जन्तु या वनस्पति जिसने धीरे-धीरे पाषाण का रूप धारण कर लिया है।

८. लगभग ८ प्रतिशत।

९. वाशर और पम्प के बाहरी खोल के घर्षण के कारण।

१०. प्रजनन के उद्देश्य से कीटों को आकर्षित करने के लिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुद्र में ओषधियों की खोज

ज्ञानरंजन (सं. सं. १८८३०)

मानव आज नयी-नयी ओषधियों की खोज के लिए समुद्रों का मन्थन कर रहा है। समुद्रों के गर्भ से अब तक जो नये-नये उपहार प्राप्त हुए हैं उनमें अनेक रोगाणुनाशक ओषधियां, पीड़नाशक ओषधियां और यहां तक कि कैंसरनाशक ओषधियां भी शामिल हैं। समुद्र के गर्भ से प्राप्त होने वाले ये उपहार किसी दिन मानव के रोगोपचार की दिशा में एक क्रान्ति उपस्थित कर सकते हैं।

समुद्र-गर्भ से ओषधियों की प्राप्ति नयी और अनोखी बात नहीं है। कई शताब्दियों से एलगी और समुद्री मछलियों द्वारा मानव रोगों का सफल उपचार होता रहा है। कुछ समुद्री जीव तो ऐसे विलक्षण हैं कि ऐसा लगता है जैसे उनकी उत्पत्ति किसी अन्य ग्रह पर हुई होगी। पृथ्वी पर जितने जीवों का अस्तित्व है उसका ४-५ भाग समुद्रों के गर्भ में विद्यमान है। यही नहीं, पृथ्वी की अधिकांश वनस्पति भी समुद्र के ही गर्भ में उगती है। लेकिन ओषधियों का यह सम्भावित भण्डार अभी तक अछूता पड़ा है।

समुद्री जीवाणुओं और वनस्पतियों का अध्ययन

अब यह स्थिति तेजी के साथ बढ़ रही है। वैज्ञानिक अब इस बात का पता लगाने के लिए विभिन्न प्रकार के समुद्री जीवाणुओं और वनस्पतियों का अध्ययन कर रहे हैं कि इनमें से कौन जीवाणु-विज्ञान की दृष्टि से अधिक सक्रिय पदार्थों अथवा तत्त्वों से युक्त हैं। आजकल वैज्ञानिक भांति-भांति की रोग-नाशक ओषधियों से लेकर कैंसर निरोधक ओषधियों तक की परीक्षा इन जीवों पर कर रहे हैं।

समुद्री जीवों का अध्ययन करने वाली कैलिफोर्निया की एक संस्था वर्ल्ड लाइफ रिसर्च इंस्टीट्यूट में शोध-कार्य करने वाले वैज्ञानिकों ने एक ऐसा मिश्रण शोधा है जो रक्त जमने की क्रिया में काफी कमी कर देता है। इस कार्य के लिए समुद्री फर्मों के विष का उपयोग किया गया है।

न्यू जर्सी की एक फर्म मैरीन कोलाइडिस के अनुसन्धानकर्ताओं ने एक ऐसा रासायनिक पदार्थ तैयार किया है जो मानव-शरीर को स्ट्रोण्टियम-९० से मुक्त कर देता है। इस रसायन का निर्माण समुद्र में उगने वाली भूरे रंग की सेवार से किया जाता है।

बारह जोड़े गलफड़े

सैन डियागो, कैलिफोर्निया स्थित 'स्क्रिप्स इंस्टीट्यूट आव ओशनोग्राफी' के डा. डेविड जेनसन ने प्रशान्त महासागर में पायी जाने वाली हेगफिश में दिलचस्पी लेना प्रारम्भ कर दिया। यह मछली १-१½ फुट तक लम्बी होती है। इसमें बारह जोड़े गलफड़े तथा कांटेदार पीले रंग के दांतों की दो कतारें पायी जाती हैं। इसके शरीर में तीन हृदय होते हैं जो एक-दूसरे से स्वतन्त्र होते हैं। तीसरे दिल का मछली के शरीर के तन्तुओं से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
08067
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

अतल गहराइयों में वनस्पतियां भी हैं, जन्तु भी हैं

डाक्टर जेनसन यह पता लगाना चाहते हैं कि तन्तुरहित यह हृदय किस प्रकार दो अन्य हृदयों के साथ-साथ धड़कता है। अत्यन्त सावधानी से गहन अनुसन्धान कर उन्होंने अपने प्रश्न का उत्तर खोज निकाला। इसका कारण एक जीव-रसायन था जिसे उन्होंने एप्टाट्रेटिन का नाम दिया। प्रयोगशाला में ऐसे पशुओं के शरीर में इस रसायन का प्रवेश होने पर जिनके कार्डियो नर्व सेण्टर क्षतिग्रस्त थे, हृदय की धड़कनें शुरू हो जाती थीं और नियमित रूप से कई घण्टों तक लगातार जारी रहती थीं।

एक अत्यन्त प्रभावशाली रोगाणुनाशक ओषधि की सम्भावना

अमरीकन हार्ट असोसियेशन इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि एप्टाट्रेटिन नामक इस रसायन का उपयोग उन रोगियों के हृदय की धड़कनों को नियमित करने के लिए किया जा सकता है जिनके हृदय के तन्तु क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। हैगफिश के कारण अब वह दिवस निकट प्रतीत होने लगा है जब क्षतिग्रस्त तन्तुओं वाले हृदयों की धड़कन को जारी रखने के लिए विद्युत् स्पन्दन उत्पन्न करने वाले यन्त्र को शरीर में लगाने की आवश्यकता नहीं रहेगी, और केवल गोली खाकर ही हृदय की धड़कनों को नियमित रखा जा सकेगा।

न्यूयार्क मरुस्थलशाला की प्रयोगशाला के डा. सौफी जेकोठास्की का कहना है कि मृत जीवों के शरीर के गलने पर आस-पास का जल दूषित हो जाता है, किन्तु स्पंजों के पास मृत जीवों के शरीरों के गलते रहने पर उनके चारों ओर का जल स्वच्छ बना रहता है। उन्होंने सोचा, शायद स्पंजों से अथवा उनके अन्दर मौजूद सूक्ष्म जीवाणुओं से ऐसा कोई पदार्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकलता रहता है जो जल को दूषित करने वाले कीटाणुओं का नाश कर देता है। यदि यह अनुमान सही है तो यह पदार्थ एक अत्यन्त प्रभावशाली रोगाणुनाशक ओषधि सिद्ध हो सकता है।

आज समुद्र में पाये जाने वाले तत्त्वों से निर्मित ओषधियों को विशेष महत्त्व प्राप्त है। भूमि-स्थित स्रोतों से विकसित ओषधियां कई प्रकार के रोगाणुओं पर नियन्त्रण प्राप्त करने में अधिक प्रभावशाली सिद्ध नहीं हुई हैं। इसके अलावा कई प्रकार के घातक रोगाणुओं की ऐसी नयी किस्में पैदा हो गयी हैं जो पेनी-सीलिन-जैसी चमत्कारी ओषधियों के प्रभाव को व्यर्थ करने में सक्षम हैं।

एक नये युग का प्रारम्भ

एक ऐसी रोगाणुनाशक ओषधि का विकास जिसकी आज काफी आवश्यकता है, नेशनल इंस्टीट्यूट आव हेल्थ के डा. दूरी जी.जी. कर रहे हैं। पाओलिन-२ नामक यह ओषधि समुद्री जीवों, जैसे सीप और घोंघों के शरीर में पाये जाने वाले द्रवों के संयोग से तैयार की जा रही है।

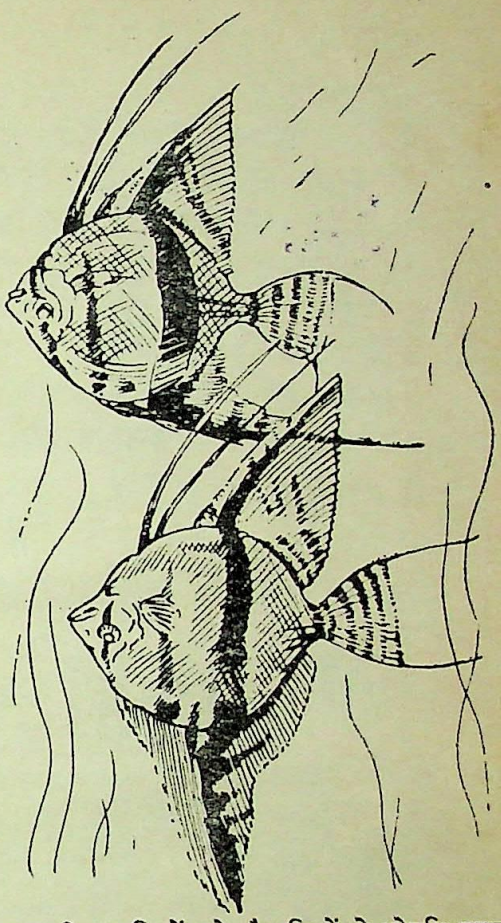

बहुत-सी मछलियों को वैज्ञानिकों ने ओषधि प्राप्त करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण पाया है···

···और आशा है, अभी कितनी ही नयी मछलियों का पता चलेगा

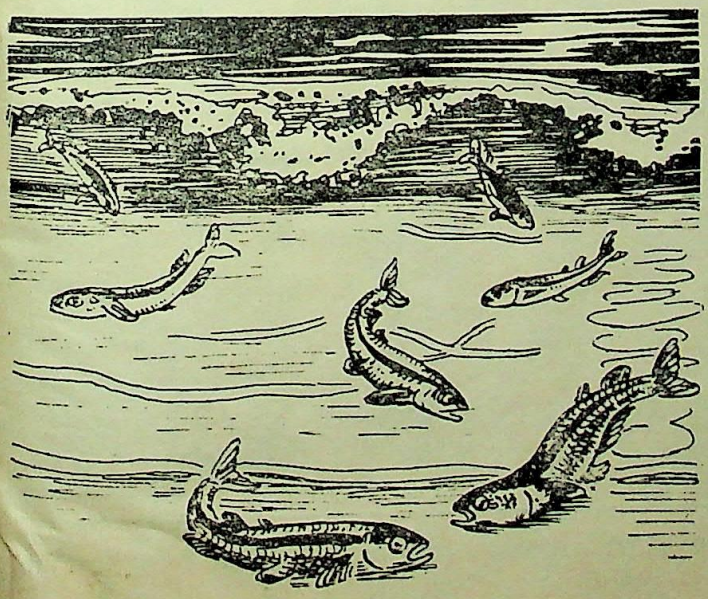

साउथ कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय की प्रयोगशालाओं के वैज्ञानिकों ने एक ऐसे तत्त्व का पता लगाया है जो जीवों के उच्च रक्तचाप को कम करने की क्षमता रखता है और जिसे हृदय-रेनशन-जैसे रोगों की चिकित्सा के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। यह तत्त्व स्टोनफिश द्वारा उगले जाने वाले विष को शोधकर तैयार किया गया है।

इसी प्रकार एक अन्य समुद्री पौधे द्वारा निस्सृत विषैले रस से एक ओषधि तैयार की गयी है जिसे दोलों न्यूरिन कहते हैं। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डैडी आप कह रहे थे बैंक में धन बढ़ता है। यह कैसे होता है ?

मेरी ही तरह अनेक व्यक्ति बैंक में अपना रुपया जमा रखते हैं। बैंक में बहुत सा रुपया इकट्ठा हो जाता है। उस रुपये को बैंक दुकानदारों, कारखानों और सरकार को उधार दे देती है। कुछ समय बाद बैंक को अपना रुपया ब्याज सहित वापस मिल जाता है क्योंकि बैंक हमारे रुपये का उपयोग करती है, इसलिए उसमें से कुछ ब्याज हमें भी दे देती है। इससे हमारा रुपया बढ़ता है। यदि हम रुपये को बैंक में जमा न करेंगे, तो वह कैसे बढ़ेगा ?

ठीक है ! आप अपना रुपया तो पंजाब नेशनल बैंक में ही जमा रखते हैं ना ?

हाँ, बेटा। वही मेरा बैंक है। यह देश के सबसे पुराने और सबसे बड़े बैंकों में से एक है। देश भर में इसकी ४७५ से अधिक शाखाएं हैं।

पंजाब नेशनल बैंक

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Completed
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri